'मजदूर' तथा 'नवीन' के काव्य

का

तुलनात्मक अध्ययन

शोध प्रबन्ध : किशोरीलाल की गौड़ एम. ए.

उपाधि के लिए लिखित शोध-प्रबन्ध

Bound at
Broca's Press
Srinagar.

'सूर' तथा 'नवीन' के काव्य

का

तुलनात्मक अध्ययन

तथा कश्मीर विश्वविद्यालय की पीएच. डी. की
उपाधि के लिए प्रेषित शोध-प्रबन्ध

निर्देशक:—
डा० रमेश कुमार,
अध्यक्ष,
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, कश्मीर मण्डल
जम्मू तथा कश्मीर विश्वविद्यालय
अमरसिंहबाग, (कश्मीर)

प्रेषक:—
भूषणलाल कौल एम. ए.,
प्राध्यापक,
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, कश्मीर मण्डल
जम्मू तथा कश्मीर विश्वविद्यालय,
अमरसिंहबाग, श्रीनगर, कश्मीर,

प्रसिद्धकार एवं राजनीतिक-योद्धा

पूज्य बाबूजी स्वर्गीय राम शर्मा (सम्पादक - विशाल भारत)

को

श्रद्धांजलि के रूप में सादर-समर्पित

भूषणलाल कौल

दो-शब्द

सन् १९६२ में एम० ए० पूर्वार्द्ध की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर मैंने गुरुजनों की सम्मति से उत्तरार्द्ध की कक्षा में सप्तम् प्रश्न-पत्र के विकल्प में एक शोध-प्रबन्ध लिखने का निश्चय किया। उन दिनों 'नवीन' जी के विषय में पत्र-पत्रिकाओं में लेख छपते रहते थे। इससे पूर्व मैंने 'उर्मिला' महाकाव्य एवं उनकी अन्य कुछ कवितायें पढ़ी थीं और सौभाग्यवश 'कुंकुम', काव्य-संग्रह की प्रति मेरे हाथ लगी थी। श्रीनगर में इस पुस्तक की एक-मात्र प्रति प्रो० पृथ्वीनाथ 'पुष्प' के पास थी, बाद में मैंने देखा कि श्रीनगर ही क्या, सारे भारतवर्ष में इस पुस्तक की कोई प्रति प्राप्त करना असम्भव नहीं, तो कठिन बहुत है। 'कुंकुम' को पढ़ते-पढ़ते मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, मानो मैं कश्मीर के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि 'महजूर' की कविताओं का हिन्दी रूप पढ़ रहा हूँ। कश्मीरी-भाषा एवं साहित्य का एक तुच्छ पाठक तथा सेवक होने के नाते मुझे 'महजूर' एवं उनकी समकालीन काव्य-प्रवृत्तियों (कश्मीरी-साहित्य में) का ज्ञान था, अतः मेरे मन में यह इच्छा तीव्र हो उठी कि 'नवीन' जी एवं 'महजूर' के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये। मैंने उस समय 'नवीन' जी की दूसरी कृति 'अपलक' को ढूँढ़ना आरम्भ किया, परन्तु दुर्भाग्यवश श्रीनगर एवं जम्मू में मुझे वह प्राप्त नहीं हुई। मैंने हिम्मत नहीं हारी और अनेकों कठिनाइयों का सामना करने के पश्चात् एम०ए० की परीक्षा के लिये विशेष प्रबन्ध श्रीमान पण्डित जगन्नाथ तिवारी (अध्यक्ष - हिन्दी विभाग, श्रीनगर) के निर्देशन में लिखा। मेरे इस प्रयास से परीक्षक -

महोदय प्रभावित हुए और इस प्रबन्ध के विषय में उन्होंने अनेक सुझाव दिए। सन् १९६३ में मैंने एम० ए० की परीक्षा पास की और इसी वर्ष नवम्बर में मुझे पीएच०डी० करने की अनुमति विश्वविद्यालय के उपकुलपति महोदय से मिली और विश्वविद्यालय के 'बोर्ड आफ रिसर्च स्टेडीज़' ने मेरे इस विषय को स्वीकार किया।

मैंने क्षेत्र-कार्य आरम्भ किया। कश्मीरी भाषा एवं साहित्य का अध्ययन करने के लिये मुझे उर्दू-भाषा भी सीखनी पड़ी, क्योंकि ९९ प्रतिशत कश्मीरी-साहित्य फारसी लिपि में ही लिखा गया है। उर्दू हमारे प्रदेश की राज्य-भाषा है जिस कारण हिन्दी को कोई भी विशेष प्रोत्साहन कश्मीर में नहीं मिलता और मुझ जैसे हिन्दी के शोधार्थी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

जम्मू-कश्मीर विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, केन्द्रीय सूचना विभाग के पुस्तकालय, जम्मू व कश्मीर रिसर्च-लाइब्रेरी, जम्मू-कश्मीर-ललित-कला अकादमी एवं श्री प्रतापकालेज के पुस्तकालयों से मुझे 'महजूर' तथा कश्मीरी-साहित्य से सम्बन्धित कुछ सामग्री प्राप्त हुई। इसके अतिरिक्त अमरसिंह कालेज तथा 'पबलिक' लाइब्रेरी से भी मुझे कुछ पत्रिकाओं की पुरानी फाइलें (संचिकाएँ) प्राप्त हुईं। 'महजूर' की रचनाओं का संकलन करने में मुझे उनके सुपुत्र श्री मुहम्मद-अमीन ने विशेष सहायता की, जिसके लिए मैं उनका सदा आभारी रहूँगा। 'तामीर' पत्रिका में 'महजूर' पर जितने भी आलोचनात्मक लेख प्रकाशित हुये, वे भी सब अप्राप्य थे, उनकी पूरी 'फाइल' मुझे प्रोफेसर रहमान 'राही' से प्राप्त हुई और कुछ रचनाएँ भी उन्होंने मुझे दीं। शोध-विषय पर अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये मुझे कई सज्जनों से एक या अनेक बार भेंट करनी पड़ी और सच मानिये तो कभी-कभी एक-एक 'इंटरव्यू' के लिये कई-कई सप्ताह भटकना भी पड़ा। मुख्य रूप से जिन महानुभावों से मैं इस विषय में मिला हूँ, वे हैं :-

१. प्रो० पृथ्वीनाथ `पुष्प` - निदेशक जम्मू-कश्मीर-ललित कला अकादमी । (सन् १९६३ से सन् १९६७ तक कई बार उनसे मिला)

२. डा० पद्मनाथ गुँजू - श्रीनगर के एक प्रसिद्ध डाक्टर हैं, जिनसे सन् १९६५ तथा सन् १९६६ में मैंने `इँटरव्यू` लिया ।

३. श्री मुहम्मद अमीन - (सुपुत्र `महजूर`) - पाँच वर्षों (१९६३-१९६७) में अनेक बार उनसे उनके पूज्य-पिताजी के काव्य एवं व्यक्तित्व के विषय में वार्तालाप हुए ।

४. प्रो० रहमान `राही` - आपने शोध-प्रबन्ध लिखने में मेरी सहायता की है । (कश्मीरी-कवि तथा विश्वविधालय में फारसी के प्राध्यापक) (जून १९६७ में मैंने इनसे `इन्टरव्यू` लिया)

५. डा० काशीनाथ पण्डिता - जून सन् १९६७ में मैंने इनसे इन्टरव्यू लिया । (कश्मीर - विश्वविधालय में फारसी के प्राध्यापक)

६. श्री गुलाम हसन बेग `आरिफ` सन् १९६४ में कई बार इनसे भेंट की (प्रसिद्ध-कश्मीरी-कवि)

७. पण्डित राम जू - (पुस्तकालय - अध्यक्ष) रिसर्च लाइब्रेरी, श्रीनगर ।

८. स्वर्गीय मास्टर ज़िन्दा कौल - कश्मीर के प्रसिद्ध कवि ।

९. पण्डित दीनानाथ `नादिम` - कश्मीर के प्रसिद्ध कवि ।

१०. डा० शम्स-उद्दीन अहमद - अध्यक्ष, फारसी-विभाग, श्रीनगर विश्वविधालय ।

११. डा० हबीब उल्ला `हामिदी` - प्राध्यापक, उर्दू-विभाग, कश्मीर-विश्वविधालय।

१२. स्वर्गीय प्रो० जियालाल कौल ।

इसके अतिरिक्त सामग्री-संकलन करते समय मुझे कश्मीर के कई गाँवों में भी जाना पड़ा, विशेषकर `मित्रगाम` , `महजूर` जहाँ के निवासी थे। `मित्रगाम` में कई ग्रामवासियों से मिला और `महजूर` के विषय में कई तथ्यों की खोज की।

सन् १९६३ में बालकृष्ण शर्मा `नवीन` के साहित्य का संकलन करना सचमुच एक टेढ़ी खीर थी। `कुंकुम` के विषय में आरम्भ में ही मैंने संकेत किया है। उनकी एक-एक काव्य-कृति को प्राप्त करने में मुझे भारत के २०० से भी अधिक पुस्तक विक्रेताओं एवं प्रकाशकों से पत्र-व्यवहार करना पड़ा। प्राय: निराशा ही होती थी। `रश्मि-रेखा` मुझे विश्वविद्यालय के विभागीय-पुस्तकालय से मिली और कई दिन बैठकर मैंने स्वयं हाथ से इसकी प्रति बना ली। इसी प्रकार `कुंकुम` की भी हाथ से प्रतिलिपि करनी पड़ी। अन्य पुस्तकें सन् १९६५-१९६६ में प्राप्त हुईं। अन्त में `भारतीय ज्ञान-पीठ` द्वारा प्रकाशित `हम विषपायी जन्म के` प्राप्त हुई, जिससे मेरा कार्य सुगम बन गया।

श्रीनगर में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की पुरानी `फाइलें` तथा हिन्दी की श्रेष्ठ पुस्तकें ढूँढ़ना रेत में तेल निकालने के समान है। अहिन्दी सीमा-प्रान्त होने के कारण यहाँ हिन्दी ने अभी भी कोई विशेष उन्नति नहीं की है। ९० प्रतिशत मुसलमान जन-संख्या कश्मीर में है और उनमें से आज तक एक भी व्यक्ति कालेज में या विश्वविद्यालय में हिन्दी नहीं पढ़ता है। यही कारण है कि मुझे कई बार भारत के विभिन्न प्रदेशों में जाना पड़ा और लम्बी-लम्बी यात्राओं के पश्चात् अनेकों ठोकरें खाने के-बाद मुझे अपनी इच्छित वस्तु मिल पाई।

जनवरी सन् १९६५ में मैं शोध-सम्बन्धी सामग्री-संकलन करने के उद्देश्य से आगरा पहुँचा। मेरे श्रद्धेय गुरु एवं अग्रज डा० रमेश-कुमार शर्मा ने मेरे रहने की सुचारु व्यवस्था की और मैं डेढ़ मास-आगरा में रहा। यहीं पर सर्वप्रथम मेरी

भेंट स्वर्गीय पण्डित श्रीराम शर्मा से हुई जो 'नवीन' जी के अन्तरंग मित्र, स्वतंत्रता-संग्राम के निस्वार्थ-योद्धा, साथी एवं समकालीन साहित्यकार थे। कई बार उनसे भेंट हुई और 'नवीन' जी के विषय में अनेक नवीन एवं अज्ञात बातों का ज्ञान प्राप्त हुआ। बाबूजी के पुत्रवत स्नेह एवं प्रोत्साहन (encouragement) ने मुझे इस विषय पर काम करने के लिये नवीन स्फूर्ति एवं प्रेरणा प्रदान की। इन्हीं दिनों मेरी भेंट 'नवीन' जी के एक अन्य मित्र पंडित श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी से हुई, जिनसे मैंने ३ घण्टे 'नवीन' जी के विषय में 'इन्टरव्यू' लिया। पण्डित श्रीराम जी के घर से मुझे 'विशाल भारत' पत्रिका की पुरानी 'फाइलें' प्राप्त हुईं और 'नवीन' जी के सम्मान में प्रकाशित 'नर्मदा' पत्रिका का 'नवीन' - विशेषांक' तथा 'गणेशशंकर विद्यार्थी-विशेषांक' भी प्राप्त हुआ। आगरा में रहकर वास्तविक अर्थों में मेरी आँखें खुल गईं। 'नागरी-प्रचारिणी-सभा-पुस्तकालय' आगरा में मैंने तीन सप्ताह निरन्तर काम किया, क्योंकि वहाँ पर मुझे अनेक हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं की पुरानी 'फाइलें' प्राप्त हुईं और इस प्रकार अध्ययन का तथा 'नवीन' जी को साहित्यकार तथा राजनीतिक व्यक्ति के रूप में समझने का अवसर मिला। आगरा कालेज, एवं आगरा-विश्वविद्यालय के पुस्तकालयों से भी मुझे कई अत्यन्त अप्राप्य पुस्तकें एवं पत्रिकाएँ प्राप्त हुईं। 'साहित्य-सन्देश' के कार्यालय से इस पत्र की पुरानी प्रतियाँ मिलीं और इस प्रकार सामग्री-संकलन करता हुआ मैं दिल्ली पहुँच गया। 'दिल्ली विश्वविद्यालय' के पुस्तकालय से भी विशेष सामग्री प्राप्त हुई। सुश्री कृष्णा चतुर्वेदी का वह विशेष-प्रबन्ध भी विश्व-विद्यालय के पुस्तकालय में देखने को मिला, जो उन्होंने १९६० में 'नवीन' जी के काव्य पर लिखा था। कई विद्वानों से भेंट का सौभाग्य मिला, जिनमें सर्वश्री डा० नगेन्द्र, डा० विजयेन्द्र स्नातक एवं डा० ओमप्रकाश उल्लेखनीय हैं। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' की कुछ पुरानी प्रतियाँ प्राप्त करने के लिये मैं उसके कार्यालय में पहुँचा, पूछताछ की और अन्त में ३५ नए पैसे की एक प्राचीन प्रति

('नवीन'-विशेषांक) १६ रुपये में बेच कर उन्होंने अहिन्दी प्रान्त के एक शोधार्थी का स्वागत किया । जून सन् १९६६ में डा० नगेन्द्र से मैंने श्रीनगर में २ घण्टे 'नवीन' एवं उनके काव्य के विषय में एक 'इन्टरव्यू' लिया, जिसके लिये मैं उनका बहुत ही आभारी हूँ । जुलाई सन् १९६६ में स्वर्ग-भूमि में रहने वाला श्रीनगर का एक २५ वर्षीय नवयुवक पुन: अपनी ज्ञान की पिपासा को शान्त करने के लिये भारत-यात्रा पर चल पड़ा । 'भयानक' शब्द के वास्तविक अर्थ का तब मुझे कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ तथा सच्चे अर्थों में अनुभव भी हुआ जब जुलाई मास की भयानक गर्मी में पंजाब, राजस्थान, दिल्ली, आगरा, इलाहाबाद, बनारस, कानपुर एवं लखनऊ पहुँचा । कुरुक्षेत्र विश्वविधालय में मैंने अध्यक्ष महोदय आचार्य विनय मोहन शर्मा एवं विश्वविधालय में हिन्दी-विभाग के रीडर डा० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' से 'नवीन' एवं उनके काव्य के विषय में 'इन्टरव्यू' लिये । उनसे इस विषय पर काफी विचार-विनिमय हुआ । चन्डीगढ़ में दुर्भाग्य-वश मेरी भेंट आचार्य द्विवेदी जी से न होसकी, यधपि विश्वविधालय के पुस्तकालय में मैंने कई दिन काम किया । यहाँ से मैं जयपुर चला गया । जयपुर-विश्वविधालय में हिन्दी के अध्यक्ष आचार्य डा० सत्येन्द्र जी से मेरी भेंट हुई, उन्होंने जो सद्भाव मेरे प्रति व्यक्त किया, उसके लिये मैं उनका सदा आभारी रहूँगा । २३ जुलाई १९६६ को जयपुर विश्वविधालय के हिन्दी-विभाग में उनसे तीन घण्टे 'नवीन' जी पर बात होती रही और कई नवीन तथ्य प्रकाश में आ गये । सत्येन्द्र जी ने अपनी सन्तुलित दृष्टि से 'नवीन' जी को परखा और सच्चाई तथा ईमानदारी के साथ उनकी साहित्यिक प्रतिभा पर प्रकाश डाला । कुछ मार्मिक संस्मरण भी बताये । यहाँ से मैं पुन: दिल्ली आया और फिर इलाहाबाद-विश्वविधालय में कुछ दिन काम करता रहा । इलाहाबाद-विश्वविधालय में अपना कार्य समाप्त करने के पश्चात् मैं बनारस-विश्वविधालय पहुँचा, जहाँ पर श्री कोल, पुस्तकालय-अध्यक्ष ने मेरी विशेष सहायता की । विश्वविधालय में हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शर्मा जी से भी भेंट हुई। बनारस में काम करने के पश्चात्

में `नवीन` जी की `कर्म-भूमि` `कानपुर` पहुँचा। यहाँ पर श्री नरेश चन्द्र चतुर्वेदी से मेरी भेंट हुई। `चतुर्वेदी` जी ने जो स्वागत मेरा किया, उसके लिये मैं आजन्म उनका आभारी रहूँगा। `चतुर्वेदी` जी साहित्यकार होने के साथ-साथ एक प्रतिष्ठित राजनीतिक कार्यकर्त्ता भी हैं और कांग्रेस के सदस्य भी। स्वतंत्रता पूर्व के राष्ट्रीय-संघर्ष में वे `नवीन` जी के साथ रहे और उनका सम्बन्ध `नवीन` जी से काफी समय तक रहा है। उन्होंने मुझे अमूल्य संस्मरण बताये। दो दिन उनसे बातें होती रहीं और `नवीन` जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विचार-विनिमय होता रहा। मेरी तीव्र इच्छा यह थी कि `प्रताप-कार्यालय` तथा `प्रताप` की प्राचीन फाइलें देखूँ, परन्तु कार्यालय पर `सरकारी` ताला लगा हुआ देखकर मेरी आशाओं पर पानी फिर गया। इन्हीं दिनों आगरा में मेरी भेंट डा० माताप्रसाद गुप्त से भी हुई।

२१ सितम्बर सन् १९६६ को डा० रामधारीसिंह `दिनकर` जी से श्रीनगर के सरकारी अतिथि-गृह में भेंट की और `नवीन` जी पर ४५ मिनट तक विचार-विनिमय होता रहा। इसके अतिरिक्त अपने विभाग के अध्यक्ष तथा इस शोध-कार्य के निर्देशक डा० रमेशकुमार शर्मा से भी समय-समय पर `नवीन` जी के विषय में काफी जानकारी प्राप्त हुई क्योंकि `नवीन` जी का उनके परिवार के साथ काफी घनिष्ठ सम्बन्ध रहा था। `नवीन` जी की पत्नी श्रीमती सरलादेवी से मैं मिल न सका, क्योंकि न तो उन्होंने मेरे पत्रों का उत्तर ही दिया और न ही भेंट का सुअवसर। इस बात का खेद अवश्य रहा।

शोध-कार्य करते समय कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मेरा पत्र-व्यवहार भी होता रहा, जिनमें उल्लेखनीय हैं – स्वर्गीय आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, स्वर्गीय पं० श्रीराम शर्मा, श्री नरेश चतुर्वेदी, डा० पद्मसिंह शर्मा `कमलेश`, डा० शशिभूषण सिंहल एवं श्री पृथ्वीनाथ `पुष्प`, आदरणीय गुरु जी पण्डित जगन्नाथ तिवारी (भूतपूर्व अध्यक्ष - हिन्दी विभाग, कश्मीर-मण्डल। आजकल कश्मीर विश्वविद्यालय के जम्मू-मण्डल में हिन्दी के अध्यक्ष हैं) से मुझे

समय-समय पर अमूल्य सूचनायें एवं सुझाव प्राप्त हुए हैं। उनकी सद्भावना, सहृदयता एवं आशीर्वाद के परिणामस्वरूप-ही आज मेरा यह शोध-प्रबन्ध पूरा हो रहा है। पिछले चार वर्षों में उन्होंने निरन्तर अपनी शुभकामनाओं द्वारा मुझे प्रोत्साहित किया है।

तुलनात्मक अध्ययन करते समय मैंने साम्य एवं वैषम्य पर समान रूप से प्रकाश डाला है। यद्यपि दोनों कवि समकालीन थे, लगभग समान परिस्थितियों के शिकार थे तथापि दोनों में काफी अन्तर भी पाया जाता है। प्रादेशिक-वातावरण (राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं आर्थिक) ने `महजूर` को सीमित-क्षेत्र में बद्ध रखा और अपनी मातृ-भाषा में ही उन्होंने सब कुछ लिखा। तुलनात्मक-अध्ययन के लिये कश्मीरी-भाषा एवं साहित्य का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य था, जिसके आधार पर ही `महजूर` को एक कवि के रूप में समझा और परखा जा सकता था। कश्मीर में शोध की कोई भी सुविधा प्राप्त न होने के कारण ही मुझे इस कार्य को सम्पन्न करने में पाँच वर्ष लग गये।

समस्त शोध-प्रबन्ध में केवल पाँच अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय तीन भागों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में दोनों कवियों की जीवनी, व्यक्तित्व एवं कृतित्व का मौलिक, प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है और उसके पश्चात् तुलनात्मक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण निष्कर्ष दिये गये हैं। द्वितीय अध्याय में मैंने कश्मीरी-साहित्य की संक्षिप्त तथा मौलिक रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जो कि हिन्दी-भाषा में यह प्रथम-प्रयास है। परन्तु `नवीन` जी के विषय में हिन्दी-साहित्य की संक्षिप्त-रूपरेखा नहीं दी गई है, क्योंकि वह मात्र पिष्ट-पेषण होता और उससे कोई भी नवीन तथ्य प्रकाश में न आता। यहाँ पर `नवीन` जी के युग को समझने के लिये उनकी युगीन परिस्थितियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है क्योंकि उस युग की परि-

स्थितियों का प्रभाव `नवीन` जी पर सबसे अधिक पड़ा है। तृतीय अध्याय में दोनों कलाकारों के प्रेम-काव्य एवं चतुर्थ अध्याय में उनके राष्ट्रीय-काव्य का सम्यक् विवेचन किया गया है। पंचम अध्याय एवं अन्तिम अध्याय में कलात्मक उपलब्धियों के दृष्टिकोण से वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

शोध-प्रबन्ध के परिशिष्ट के चार भाग भी मेरे विचार से उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि उसके विभिन्न अध्याय। परिशिष्ट नं० १ में `नवीन` जी के प्रसिद्ध `महाकाव्य - `उर्मिला` का विवेचन वैज्ञानिक दृष्टि से किया गया है। परिशिष्ट नं० २ में कश्मीरी-काव्य का मूल-रूप क्रम से लिपिबद्ध है। इस मूल-रूप को देवनागरी लिपि में लिखते समय मैंने कुछ विशेष ध्वनि-चिह्नों और मात्राओं का सहारा लिया है। परिशिष्ट नं० ३ में `महजूर` एवं `नवीन` से सम्बन्धित ग्रंथों की सूची एवं परिशिष्ट नं० ४ में पत्र-पत्रिकाओं की सूची दी गई है।

प्रत्येक अध्ययन के अन्त में तुलनात्मक निष्कर्ष दिये गये हैं। इस प्रकार से यह शोध-प्रबन्ध आधुनिक-कश्मीरी साहित्य के एक प्रसिद्ध कलाकार एवं युग-निर्माता तथा हिन्दी काव्यजगत के `मस्त-मौला-फकीर बादशाह` सबके दादा `नवीन` जी के काव्य एवं व्यक्तित्व को समझने में सहायक हो सकता है।

शोध-कार्य करने में मेरे अग्रज डा० रमेशकुमार शर्मा ने मेरी जो सहायता की, जिस प्रकार मेरा पथ-प्रदर्शन किया और जो व्यक्तिगत रुचि मेरे कार्य के प्रति दिखाई उसके लिये आभार प्रकट करने के लिये मुझ अकिंचन के पास शब्द कहाँ ? मैं तो यही कहूँगा कि आज जो कुछ मैं प्रेषित कर रहा हूँ, यह उन्हीं के निरन्तर परिश्रम, सूझ-बूझ, पैनी दृष्टि एवं विलक्षण बुद्धि का परिणाम है। निर्देशक के अतिरिक्त एक भाई के कर्त्तव्य को उन्होंने खूब निभाया। विभिन्न अध्यायों में सुझाव देने में तथा शोध-प्रबन्ध को व्यवस्थित रूप देने में उनका महत्वपूर्ण, स्मरणीय तथा प्रशंसनीय योगदान रहा है।

शोध-प्रबन्ध के कश्मीरी-भाग के विषय में `राही` साहब ने मेरी विशेष सहायता की है, जिसके लिये मैं उनका आजन्म आभारी रहूँगा । इस दिशा में `पुष्प` जी स्वर्गीय प्रो० ज्यालाल कौल तथा प्रो० काशीनाथ दर ने भी मेरी जो सहायता की है उसके लिये मैं उनका सदा ऋणी रहूँगा ।

अन्त में अपनी मुँह बोली छोटी बहन वीणा हुल्लू (हिन्दी उत्तरार्द्ध १९६७-१९६८) को कभी भूल नहीं सकता हूँ, जिसने राखी बाँधकर केवल एक औपचारिकता को ही नहीं निभाया अपितु बहन का जो कर्त्तव्य होता है उसे वास्तविक रूप में पूरा करके भी दिखाया । सारे शोध-प्रबन्ध की स्वच्छ-प्रतिलिपि उसने की और टंकित प्रतियों को भी दुहराने में विशेष सहायता दी । आज उसी के जन्म-दिवस पर मैं, पाँच-वर्ष के निरन्तर परिश्रम के पश्चात् संचित एवं अर्जित प्रिय पूंजी को प्रस्तुत कर रहा हूँ । धूल भरे हीरों को पोंछने में मुझे कहाँ तक सफलता मिली है, इसका निर्णय विद्वान् भली-भाँति कर सकते हैं क्योंकि राजहंस ही नीर-क्षीर विवेचन करने में समर्थ होता है ।

कार्तिक शुक्ल पक्ष अष्टमी
९ दिसम्बर, १९६७.

(भूषणलाल कौल)
भूषणलाल कौल
प्राध्यापक, तुलनात्मक हिन्दी-विभाग
जम्मू कश्मीर विश्वविद्यालय
श्रीनगर

विषय-सूची

प्रथम अध्याय : जीवन-परिचय पृ० १ -१३७

जीवनी, व्यक्तित्व एवं कृतित्व :

(अ) `महजूर` - `जीवनी`

१. जन्म एवं माता-पिता, आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा, लाहौर पंजाब-यात्रा, फारसी-काव्य, विवाह एवं राज-कर्मचारी, उर्दू-काव्य, लेखपाल एवं कश्मीरी-काव्य, महाकवि टैगोर एवं अन्य महानुभावों से संसर्ग, कवि-सम्मेलन, जन-आन्दोलन १९३१ , नया-कश्मीर , सन् १९४७ के पश्चात्, `महजूर`-दिवस , अन्तिम-यात्रा ।

२. व्यक्तित्व – शारीरिक संगठन एवं वेशभूषा, ग्रामीण जीवन का प्रभाव, विनोद-प्रिय, निर्भीक एवं साहसी, महानुभावों के सम्पर्क में, संगीत-प्रेम, मित्र-मण्डल एवं गार्हस्थिक जीवन, विशेष रुचि, (पुस्तक-संग्रह), स्वभाव, पत्रकार-जीवन ।

३. कृतित्व – फारसी एवं उर्दू काव्य, कश्मीरी-काव्य, कलाम-ए-महजूर, पयाम-ए-महजूर , सलाम-ए महजूर, अप्रकाशित रचनायें, (गद्य एवं पद्य)।

(आ) पं० बालकृष्ण शर्मा `नवीन` - जीवनी

१. जन्म एवं माता-पिता, बाल्यकाल, आरम्भिक-शिक्षा-दीक्षा, लखनऊ-कांग्रेस एवं गणेश शंकर विद्यार्थी से परिचय, कानपुर प्रस्थान, साहित्यिक-जीवन, असहयोग-आन्दोलन, जेल-यात्रा, पत्रकार जीवन, गार्हस्थिक जीवन, स्वतंत्रता के पश्चात् गार्हस्थिक जीवन, वृद्धावस्था- दुखान्त जीवन,अन्तिम-यात्रा, कुछ स्मरणीय श्रद्धांजलियाँ, अभिनन्दन-समारोह एवं राष्ट्रीय सम्मान, राष्ट्र-भाषा-प्रेम ।

२. व्यक्तित्व – शारीरिक संगठन एवं वेशभूषा, विद्यार्थी परिवार एवं महानुभावों का प्रभाव, भावुक, सहृदय एवं महान् त्यागी, निर्भीक ,साक्षी एवं स्पष्ट-वक्ता, मित्र मण्डली, विनोद-प्रियता, संगीत-प्रेम, ओघड़ दानी-फकीर बादशाह, मस्त-स्वभाव (अक्खड़ एवं अल्हड़) ।

३. कृतित्व – `कुंकुम` , `रश्मि-रेखा` , `अपलक` , `क्वासि` , `विनोबा-स्तवन` , `उर्मिला` , `प्राणार्पण` एवं `हम विषपायी जन्म के` , गद्य-साहित्य ।

४. तुलनात्मक निष्कर्ष ।

द्वितीय अध्याय : काव्य-प्रवृत्तियाँ एवं युग परिचय पृ० १३८-२३७

(अ) कश्मीरी काव्य की मुख्य-प्रवृत्तियाँ , लोक-गीत, रस्यवादी काव्य, शृंगारिक काव्य , लीला एवं भक्ति-काव्य, चरित-काव्य, वीर एवं राष्ट्रीय काव्य ।

(आ) युग - परिचय (`महजूर` का युग) – राजनीतिक परिस्थितियाँ , सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ , धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ, मूल्यांकन ।

(इ) युग-परिचय (`नवीन` जी का युग) – राजनीतिक परिस्थितियाँ, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ , धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ , मूल्यांकन ।

(ई) तुलनात्मक-निष्कर्ष ।

तृतीय अध्याय : प्रेम-काव्य पृ० २३८-४०७

(अ) `महजूर` का प्रेम-काव्य -- पूर्व-पीठिका, संयोग-वर्णन, वियोग-वर्णन , सखि-वर्णन, प्रकृति का आधार, प्रेम-काव्य पर स्थानीय प्रभाव, प्रतीकात्मकता, व्यंग्य एवं उपालम्भ,आशा, प्रतीक्षा एवं विनति, मूल्यांकन ।

(आ) `नवीन` जी का प्रेम-काव्य — पूर्व-पीठिका, संयोग-वर्णन, वियोग-वर्णन, सखि-वर्णन, स्मृति-तत्व, प्रकृति का आधार, मानलीला, प्रतीकात्मकता, आशा, प्रतीक्षा एवं विनति, प्रेम का उन्मादक रूप (हालावाद का प्रभाव), मूल्यांकन ।

(इ) प्रेम-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन ।

चतुर्थ अध्याय : राष्ट्रीय-काव्य पृ० ४०८-६३७

(अ) `महजूर` का राष्ट्रीय काव्य — पूर्व पीठिका, स्वर्णिम अतीत का गौरव गान, वर्तमान दुर्दशा, देशभक्ति की कविता, (बलिदान की भावना), पीड़ित कृषकों एवं श्रमिकों का चित्रण, राष्ट्रीय-काव्य में संकेतात्मकता, शख्सी-राज्य पर आक्रोश, (जागरण-गीत), वीर-पूजा, राष्ट्रीय-काव्य में आशावादी -- सन्देश , क्रान्तिकारी काव्य, भविष्य-निर्माण एवं समाज-सुधार के संकेत, मूल्यांकन ।

(आ) `नवीन` जी का राष्ट्रीय काव्य — पूर्व-पीठिका, स्वर्णिम-अतीत का गौरव-गान, वर्तमान-दुर्दशा, देशभक्ति की कविता, पीड़ित कृषकों का चित्रण, विदेशी शासन पर आक्रोश (जागरण-गीत), वीर-पूजा एवं बन्दी-जीवन, सामाजिक सुधार - भविष्य-निर्माण के संकेत, राष्ट्रीय-काव्य में प्रतीकात्मकता, राष्ट्रीय-काव्य में आशावादी सन्देश, क्रान्तिकारी काव्य एवं विप्लवधारा, मूल्यांकन ।

(इ) राष्ट्रीय-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन ।

पंचम अध्याय : कलात्मक उपलब्धियाँ पृ० ६३८-८०४

(अ) `महजूर` की काव्य-कला — भूमिका, गज़लगो एवं गीतकार, काव्य-भाषा, संगीतात्मकता, अलंकारों का प्रयोग, गुण, आत्म-अभिव्यंजना (यथार्थ - चित्रण), प्रकृति-चित्रण, स्थानीय-प्रभाव, प्रतीकात्मकता, निष्कर्ष ।

(आ) 'नवीन' जी की काव्य-कला — भूमिका, विभिन्न काव्य-प्रयोग एवं गीत-काव्य, काव्य-भाषा, संगीतात्मकता, अलंकारों का प्रयोग, गुण, आत्म-अभिव्यंजना (यथार्थ-चित्रण) प्रकृति-चित्रण, संकेतात्मकता, नाद-सौन्दर्य ~~कलावंत एवं मुहावरें~~, निष्कर्ष ।

(इ) तुलनात्मक निष्कर्ष ।

परिशिष्ट नं० १ : 'उर्मिला' (एक विवेचन) पृ० १ -५२

आरम्भ, कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, विरह-वर्णन, सांस्कृतिक-संदर्भ, कलागत-विशेषताएँ ।

परिशिष्ट नं० २ : 'कश्मीरी-काव्य' - मूल रूप पृ० ५३-१३५

परिशिष्ट नं० ३ : सहायक ग्रन्थ-सूची पृ० १३६-१४३

(अ) कश्मीरी कवि 'महजूर' के काव्य का अध्ययन करने में सहायक ग्रन्थ ।

(आ) हिन्दी-कवि- 'नवीन' के काव्य का अध्ययन करने में सहायक ग्रन्थ ।

परिशिष्ट नं० ४ : सहायक पत्र-पत्रिकाएँ पृ० १४४-१४६

(अ) 'महजूर' के काव्य का अध्ययन करने में सहायक पत्र-पत्रिकाएँ ।

(आ) 'नवीन' के काव्य का अध्ययन करने में सहायक पत्र-पत्रिकाएँ ।

--

अध्याय १.

जीवनी , व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अध्याय १.

जीवनी, व्यक्तित्व एवं कृतित्व

'महजूर' - जीवन-परिचय :

कश्मीर को प्रकृति ने अपने अनुपम सौन्दर्य का वरदान दिया है। इसका कण कण सुन्दरता से ओतप्रोत है और यहां की शस्य-श्यामला धरती, घने व सुन्दर वन, गगन चुम्बी व हिमाच्छादित पर्वत शृंखलाएँ, कल कलकरती नदियां, गहन गम्भीर झीलें और अलौकिक जलवायु, अधिक क्या, यहां की प्रत्येक वस्तु में आपको सुन्दरता की झलक मिलेगी।[१] भारत के शीर्ष पर हिमगिरि की श्रेणियों से वेष्टित इसी कश्मीर-भूमि में समय-समय पर ऐसे रत्न उत्पन्न हुए जिन्होंने अपनी सच्ची लगन से इस 'भू-स्वर्ग' की सेवा करके इसकी कीर्तिलता को सारे संसार में फैलाया है। वामन, रुद्रट, मम्मट[२], जोनराज एवं श्रीवर[३] जैसे संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित,

---

१. 'अनुपम सौन्दर्य का स्वामी' - ऐतिहासिक कश्मीर' (अंग्रेज़ी) - 'योजना' अगस्त-सितम्बर १९६२, पृ० ३।

२. 'इनसाइड कश्मीर' - पी०एन० बजाज, पृ० १० - वामन (७५० ई०), रुद्रट (८२५ ई०), मम्मट (११५० ई०)।

३. 'आधुनिक कश्मीरी कविता' - योजना, दिसम्बर १९६० , पृ० १८।

ज़ैनुलाबदीन (बड़शाह)[१], ललितादित्य[२] एवं अवन्तिं वर्मन्[३] जैसे गौरवपूर्ण तथा प्रजा-रक्षक राजा एवं श्री भट्ट जैसे लोक-हितैषी इस देश में हुए हैं जिन्होंने तन, मन एवं धन से देश की सेवा की है। पण्डित कल्हण[४] जैसे इतिहासकार, विष्णु गुप्त जैसे कहानीकार, सुय्या जैसे प्रसिद्ध इन्जीनियर, ताहिर गनी एवं मुंशी भवानीदास काचरू[५] जैसे फ़ारसी के विद्वान, हलमत रैना तथा ताज़ी भट्ट जैसे वीर सैनिक; रानी दिद्दा[६] एवं हब्बा खातून जैसी बुद्धिमान एवं विचारशील रानियाँ ; मकबूल शीरवानी, मास्टर अब्दुल अज़ीज़ एवं पुष्करनाथ ज़ाडू[६] जैसे देशभक्त- जिन्होंने अपने रक्त से मातृभूमि को सींचा - इसी प्रदेश में उत्पन्न हुए। ललद्यद, अरणिमाल, शम्स फकीर, रसूलमीर एवं `महजूर` जैसे लोकप्रिय कवि इसी देश में उत्पन्न हुए जिन्होंने अपनी कविता रूपी अर्चना के पुष्प मातृभूमि पर चढ़ाकर न केवल मातृभूमि के प्रति उऋण होने का प्रयास किया अपितु कश्मीरी साहित्य की श्रीवृद्धि भी की है। इन धूल भरे हीरों में श्री गुलाम अहमद `महजूर` का नाम प्रशंसनीय है जिन्होंने आधुनिक युग में कश्मीरी साहित्य का नेतृत्व करके इसे एक नवीन दिशा की ओर मोड़ दिया।

---

१. `कश्मीर का परम्परित इतिहास` योजना - अगस्त-सितम्बर १९६२, पृ० ४४ - (१४२०-१४७० ई०)।

२. वही , पृ० ४६ (६६९ ई० से ७३६ ई० तक)।

३. वही , पृ० ४६ (८५५ ई० से ८८३ ई० तक)।

४. वही , पृ० ४० (११८४- ई० पू०)।

५. 'इनसाइड कश्मीर'- पी० एन० बजाज , पृ० २१ —भवानीदास काचरू (१८०० ई० के आसपास)।

६. १९४७ ई० में देश की रक्षा करते हुए देश पर हुए बलिदान वीर सपूत।

जन्म एवं माता-पिता

`महजूर` की जन्म-तिथि के विषय में विभिन्न लेखकों में मतभेद है । श्री पृथ्वीनाथ कौल `बामज़ई` के मतानुसार उन का जन्म मित्रीगाम में सन् १८८८ में हुआ ।[१] श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ इनके मत से सहमत हैं ।[२] श्री पृथ्वीनाथ `पुष्प` `महजूर` का जन्म ३ सितम्बर १८८५ मानते हैं ।[३] स्वर्गीय अब्दुल अहद `आज़ाद` ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक `कश्मीरी भाषा और शायरी` के तृतीय भाग में लिखा है — `- - - - - मित्रगाम में १२ शिवाल १३०५ हिजरी को वीरवार के दिन ग्यारह बजे रात को `महजूर` उत्पन्न हुए ।`[४] यह मत डा० पद्मनाथ गौंजू को समीचीन दीख पड़ता है ।[५] परन्तु १२ शिवाल १३०५ हिजरी अंग्रेज़ी में २२ जून सन् १८८८ को पड़ता है और वह भी शुक्रवार के दिन , वीरवार को नहीं जैसा कि

---

१. 'Born in a middle class family of Pirs at the village of Matrigam in 1888, ...'

- A History of Kashmir By P.N.K. Bamzai - Page 739.

२. 'He was born in a middle class family of Pirs at the village Matrigam in 1888 A.C.

- Struggle for freedom in Kashmir - Prem Nath Bazaz, P.294

३. `महजूर` - पृथ्वीनाथ `पुष्प` ।(जम्मू व कश्मीर कलचरल अकादी द्वारा प्रकाशित पुस्तक) ।

४. `कश्मीरी भाषा और शायरी` - `आज़ाद` - तृतीय भाग, पृ० १६० ।

५. 'What Azad has said about him should be taken more or less the mearer approximate because he was digging

(शेष अगले पृष्ठ पर)

स्वर्गीय आज़ाद ने लिखा है ।[१] इससे यह स्पष्ट होता है कि उनका कथन भी भ्रामक है । श्री शिवदान सिंह चौहान `महजूर` का जन्म सन् १८८७ में मानते हैं ।[२] स्वर्गीय `महजूर` के सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन इस मत को प्रामाणिक मानते हैं । अपनी एक भेंट में उन्होंने मुझे बताया - ` यह एक विवादास्पद प्रश्न है । इस विषय में स्वयं उन्हें भी सन्देह था । क्योंकि सम्पूर्ण लिखित रिकार्ड नष्ट हो गया था । मेरी दादी फारसी भाषा की विदुषी थी उन्होंने एक पुस्तक में अपने पुत्र की जन्मतिथि लिखी थी परन्तु वह पुस्तक भी इस समय अप्राप्य है । मैंने स्वयं अपने पूज्य पिताजी के साथ इस विषय में उनकी मृत्यु से छ: मास पूर्व वाद-विवाद किया क्योंकि मैं यह नहीं चाहता था कि उनके जन्म के विषय में भ्रान्ति फैले । इसके अतिरिक्त मैं (श्री अमीन साहब ने) ने उनके समवयस्क मित्रों से भी बातचीत की, गांव के कुछ वृद्ध जनों से मिला जो कि मेरे पूज्य पिताजी और हमारे परिवार से परिचित थे और अन्त में यह निश्चित हुआ कि उनका जन्म सन् १८८७ में हुआ था । स्वयं `महजूर` साहब ने यह स्वीकार किया था ।`[३] इस मत की पुष्टि करते हुए

(पिछले पृष्ठ का शेष)

deep in the small details of Mahjoor particularly and in this connection he had the benefits of innumerable interviews with Mahjoor. He used to discuss each and every point with him" ३०-५-६५` को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात ।

१. `तक्वीम हिजरी व ईसवी` - श्री मुहम्मद खालदी , प्रकाशक - अंजुमन-ए-तरक्की-ए - उर्दू दिल्ली, १९३९- पृष्ठ ६६ ।

२. `प्रगतिवाद` - शिवदान सिंह चौहान, पृष्ठ १७८ ।

३. `२६-५-६५` को श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात ।

श्री अमीन ने कुछ और प्रमाण दिए जिनसे सिद्ध होता है कि कवि `महजूर` का जन्म सन् १८८७ में हुआ था।[१]

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि यद्यपि उनके जन्म के विषय में काफी मतभेद रहा है परन्तु ऊपर किए गए विवेचन से स्पष्ट होता है कि उनका जन्म सन् १८८७ में हुआ था जो कि स्वयं उन्हें भी मान्य था।

यह बात निर्विवाद है कि आप का जन्म कश्मीर के प्रसिद्ध तहसील पुलवामा के मिश्री गाम नामक गाँव में हुआ था। यह गाँव श्रीनगर से २५ मील दूर है। आपके पिता श्री अब्दुल्लाह शाह अरबी एवं फ़ारसी के प्रसिद्ध

---

१. इस तिथि को प्रामाणिक मानने का एक और कारण यह है कि स्वयं `महजूर` ने इस बात को स्वीकार किया था कि वे केवल दस मास के थे जबकि उनकी माता का देहान्त हुआ था और उनकी मृत्यु का कारण हेज़ा था। इस तथ्य का प्रमाण मुझे गाँव के कुछ ऐसे व्यक्तियों द्वारा भी मिला जो `महजूर` की माँ से अच्छी तरह परिचित थे। मैंने इस बात की खोज की कि कश्मीर में किस किस वर्ष में हेज़ा की महामारी फैली। खोज करते करते मैंने पाया कि सन् १८८८ के मध्य में भी यह बीमारी फैली थी। विशेष कर पुलवामा और इसके आसपास के गाँवों में। इस रोग के कारण अनेकों नर-नारियों की मृत्यु हुई थी। इन्हीं दिनों `महजूर` की माता जी का भी स्वर्गवास हुआ होगा। उस समय `महजूर` की आयु १० मास थी तो स्पष्ट है कि उनका जन्म सन् १८८७ में हुआ है।

(२-६-६५ को `महजूर` के पुत्र श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात)

विद्वान थे । आप की माता अख्तर सैयदा बेगम भी सुशिक्षित थीं ।[१] पिता पीरज़ादा थे जिनकी छोटी सी खेती भी थी ।[२] आज से २४० वर्ष पूर्व सोपोर के प्रसिद्ध कस्बे से एक विधायी मीर अहमद शेख याकूफ सफी के परिवार में घर-दामाद बनाकर लाया गया । इनके परिवार की तीसरी पीढ़ी में पीर अब्दुल्लाह शाह युवावस्था में ही एक पुत्र गुलाम मही - उलदीन छोड़कर मर गया । इन्हें शेख तोयुब रफीकी ने पाला और उन्हीं की अन्तिम इच्छानुसार गुलाम मही-उलदीन श्रीनगर छोड़कर तहसील बड़गाम के नोबुग गाँव में रहने लगा । पीर गुलाम मही-उलदीन के तीसरे पुत्र पीर अब्दुल्ला शाह का विवाह मित्रीगाम गाँव में एक प्रसिद्ध घराने में हुआ । यह परिवार विद्या, संगीत-प्रेम और सुलेखन-कला के लिए विशेष प्रसिद्ध है । इसी परिवार के अन्तिम सुलेखक बाबा हजूर अल्लाह की नवासी सैयदा बेगम के साथ अब्दुल्लाशाह नोबुग का विवाह सम्पन्न हुआ ।[३] यही `महजूर` के माता-पिता थे । सैयदा बेगम को फ़ारसी का अच्छा ज्ञान था और सुलेखन-कला में भी पूर्ण दक्ष थी । पीर होने के कारण `महजूर` के पिता जी की अच्छी आय थी । परन्तु यह बात ध्यान देने योग्य है कि वे आरम्भ से ही `महजूर` के विषय में (उनके भावी जीवन के विषय में) एक सुनिश्चित मत लेकर चले थे । वे अपने पुत्र को एक सुयोग्य एवं उच्चकोटि का पीर (मौलवी) बनाना चाहते थे ।[४]

---

१. `महजूर` - पृथ्वीनाथ `पुष्प` , पृ० ५ ।

२. `कश्मीर भाषा का राष्ट्रीय कवि - `महजूर` (लेख) - श्री निवास लाहोटी `तामीर` - 'महजूर' विशेषांक , अप्रैल १९५७ , पृ० १७ ।

३. `कश्मीरी भाषा और शायरी` - तृतीय-भाग , `आज़ाद` , पृ० १९० ।

४. `महजूर` - 'पुष्प' , पृ० ५ ।

`महजूर` केवल दस मास के थे जब उनकी माँ परलोक सिधारी।[१] माँ की गोद में दुध पीना, हठ करना, तुतलाना, रोना और सोना - उनके भाग्य में अधिक समय के लिए नहीं लिखा था। घर में नानी थी अत: बच्चे को उसने पाला।[२]

अत: हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि यद्यपि `महजूर` की माँ समयानुकूल एक विदुषी थी परन्तु `महजूर` के जीवन पर उनका कोई प्रभाव न पड़ सका।

आरम्भिक शिक्षा:

पूज्य पिता के शिक्षित होने के फलस्वरूप `महजूर` को अल्प आयु में ही घर पर शिक्षा मिलने लगी। चार वर्ष की आयु में स्वयं उनके पिता ने उन्हें अरबी एवं फारसी का अक्षर-बोध कराया। बालक बहुत बुद्धिमान था अत: थोड़े ही समय में उन्हें कुरानशरीफ का अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया।[३] १३ वर्ष की आयु में शाह साहब ने अपने पुत्र को त्राल[४] में मौलाना अली गनाई `आशिक` के मक्तब (पाठशाला) में प्रविष्ट कराया। स्वर्गीय `आशिक` एक प्रसिद्ध कवि थे और फारसी में कविता करते थे।[५] उनका उपनाम `आशिक` था और गनाई[६] परिवार के थे। कवि `आज़ाद` ने उनके विषय में लिखा है-

---

१. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (२६-५-६५)।
२. `कश्मीरी भाषा और काव्य` - `आज़ाद`, पृ० १६१।
३. वही।
४. पुलवामा तहसील का प्रसिद्ध गाँव।
५. `साहित्यानुशीलन` - शिवदानसिंह चौहान, पृ० ११२।
६. कश्मीरी मुसलमानों की एक जाति।

`परगना त्राल में उनकी टक्कर का कोई फ़ारसी अध्यापक नहीं था ।- - - - - `महजूर` कश्मीरी ने आरम्भिक शिक्षा उन्हीं से प्राप्त की है ।`[१] कवि `आशिक` उन दिनों अरबी एवं फ़ारसी की शिक्षा छात्रों को दे रहे थे और इस्लामी धर्म-सिद्धान्तों का प्रचार एक सुव्यवस्थित ढंग से कर रहे थे । उन्हीं के मक्तब में `महजूर` ने फ़ारसी एवं अरबी में तीन वर्ष तक शिक्षा ग्रहण की । 'आशिक'साहब उन दिनों मक्तब की उच्च कक्षाओं में `पंजगंज निज़ामी`[२] पढ़ाते थे और उन्होंने `महजूर` को भी उसी कक्षा में शिक्षा दी । `आशिक` के कवि व्यक्तित्व की छाप `महजूर` पर पड़ी और काव्यगत भावों ने उनके हृदय-सागर में हिलोरें उत्पन्न कीं । इसके अतिरिक्त कहा जाता है

---

१. `कश्मीरी भाषा और काव्य` - द्वितीय भाग, `आज़ाद`, पृ० ३५० ।

२. Khamsa - i - Nizâmî

'The Khamsah, or complete five epic poems, the so called 'five treasures' of Jamâladîn Abû Muhammad Ilyâs bin Yûsuf bin Mûayyad Nizamaldîn, with the takhallus Nizâmî, of Ganja, who was born A.H.535(A.D.1140-41), and died probably A.H.598 or 599'A.D. 1202, 1203)".

Catalogue of Persian Manuscripts By Hermann ETHE
Volume I, 1903 - Page 972.

"The Khamsah of Nizāmī, which is often called Panj Ganj, 'the five treasures' has been lithographed in Bombay, 1834 and 1838, and in Teheran, A.H. 1261."

"Catalogue of the Persian Manuscripts"
in the British Museum

- By Charles Rien, Ph.D. - Vol. II - Page 564.

'आशिक' महोदय को आध्यात्मिक एवं दिव्य दृष्टि का कुछ अनुभव हो चुका था अत: उन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि यह छात्र निकट भविष्य में एक उच्च कोटि का कवि होगा।[१] बालक को बुद्धिमान एवं विद्याप्रेमी देखकर एवं अपने अनुभव के बल पर 'आशिक' महोदय ने ऐसी भविष्य वाणी की होगी।

फ़ारसी भाषा का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके गुलाम अहमद को उर्दू पढ़ने की इच्छा हुई। अत: अपने पिता से आज्ञा लेकर श्रीनगर आए और 'मदरस्सा नसुर-उल-इस्लाम' में प्रविष्ट हुए।[२] यहाँ उस समय के प्रसिद्ध विद्वान मौलवी हसन शाह ज़ीरक से आपने उर्दू एवं फ़ारसी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। गुलाम अहमद ने अब समयानुकूल अच्छी शिक्षा प्राप्त कर ली थी और उनके पिता अब अपने परिवार का बोझा उन पर डालना चाहते थे क्योंकि गुलाम अहमद उनके एकमात्र पुत्र थे। परम्परा से चलता हुआ यह पीर-परिवार आगे के लिए भी उसी परम्परा को अपनाये – इस दृष्टि से शाह साहब ने अपने पुत्र को पीर-मुरीदी का कार्य संभालने के लिए कहा। परन्तु इधर गुलाम अहमद के हृदय में कुछ और ही उथल-पुथल मची हुई थी। व्यक्तिगत हानि-लाभ की अपेक्षा उनके हृदय में सामूहिक हित की भावनाएँ अंकुरित हो रही थीं। स्वयं उन्होंने अन्त में पिता जी से कहा – 'मैं स्वस्थ हूँ, स्वयं धन कमा सकता हूँ। मुझे ईश्वर ने बुद्धि दी, आपने विद्या दी। क्या इसलिए कि मैं दूसरों का दान लूं ? मोटे घोड़े पर चढ़ कर अपने सेवक समेत किसी गरीब के घर कबाब और मुर्ग़ खाना मैं नहीं चाहता। मैं चार पैसे की नौकरी इस से कहीं अधिक अच्छी समझता हूँ।'[३] श्री शिवदान सिंह

---

१. कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि 'महजूर' - श्री निवास लाहोटी, पृ० १७
'तामीर' - महजूर विशेषांक १९५७।

२. कश्मीरी भाषा और काव्य - तृतीय भाग - 'आज़ाद', पृष्ठ १९२।

३. वही।

चौहान ने अपनी पुस्तक 'साहित्यानुशीलन' में लिखा है – 'शिक्षा-प्राप्त करके जब 'महजूर' घर वापस लौटे तो माँ-बाप[१] ने परम्परागत पीरी-मुरीदी का पेशा संभालने का आग्रह किया, परन्तु 'महजूर' को किसी भी रूप में अन्य के आगे हाथ फैलाने से घृणा हो चुकी थी । वाल्देन को अपने बेटे की स्वतन्त्र प्रकृति पसन्द न आई और 'महजूर' को कच्ची उम्र में ही घर छोड़ कर भाग निकलना पड़ा ।'[२]

लाहौर-पंजाब यात्रा

पिता-पुत्र में कुछ अनबन हुई और 'महजूर' को विवश होकर १७ वर्ष की आयु में ही घर छोड़ना पड़ा ।[३] अभी श्री गुलाम अहमद ने मिडिल - परीक्षा भी पास नहीं की थी कि व्यवसाय की टोह में इधर-उधर भटक कर वे १९०५ ई० में लाहौर पहुंचे । लाहौर से अमृतसर चले गए और अपने मित्र सैयद अब्दुल्ला शाह[४] के यहाँ ठहरे । यहाँ 'महजूर' को लेखन-विज्ञान सीखने की इच्छा हुई[५] अत: अमृतसर के प्रसिद्ध (केलिग्राफिस्ट) सुलेखक गुलाम अली के यहाँ छ: मास तक इस कला को सीखते रहे । इन्हीं दिनों वे पंजाब के प्रसिद्ध कवियों से मिले, क्योंकि कविता के प्रति उन्हें बचपन से ही अनुराग था । श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने अपनी पुस्तक 'स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन कश्मीर' में लिखा है :-

---

१. उनकी माँ पहले ही स्वर्ग सिधारी थी, केवल पिताजी घर पर थे ।

२. 'साहित्यानुशीलन' - चौहान, पृ० ११२ ।

३. कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि 'महजूर' - श्रीनिवास लाहोटी - 'तामीर' - 'महजूर' - विशेषांक, १९५७ , पृ० १७ ।

४. इस परिवार का 'महजूर' के परिवार के साथ निकट का सम्बन्ध था ।

५. 'प्रगतिवाद' - चौहान, पृ०१७८ ।

"After receiving education in Persian and Arabic in a 'Maktab' young Gh. Ahmad travelled outside Kashmir for some time where he came in touch with Scholars and poets and desire to compse was aroused in him.[1]

यहीं पर महजूर को मौलाना बिस्मिल की साहित्यिक गोष्ठियों में बैठने का अवसर मिला।[२] मौलाना बिस्मिल इस नवयुवक से परिचय प्राप्त करके इसकी विलक्षण बुद्धि पर मुग्ध हो गए और जब वे कादयान में अध्यापन कार्य करने गए तो गुलाम अहमद को भी वहीं बुलाया और एक समाचार-पत्र (अलबदर) में नौकरी दिलवाई। अमृतसर में ही उनका परिचय उर्दू-फारसी के प्रसिद्ध महाकवि शिबली से हुआ।[३] उनके सत्संग के फलस्वरूप `महजूर` के मन:स्थित भावों ने अंगड़ाइयाँ लेनी आरम्भ कीं। भावनाएं तीव्र रूप धारण करने लगीं, हृदय व्यथित होने लगा और अंत में शब्दों के ताने बाने से कविता फूट पड़ी।

फारसी-काव्य :-

आरम्भ में गुलाम अहमद फारसी में कविताएँ लिखने लगे क्योंकि जिन महानुभावों के सम्पर्क में आप आए वे या तो फारसी में कविता लिखते थे या उर्दू भाषा में।[४] स्वयं गुलाम अहमद फारसी भाषा के पूर्ण ज्ञाता थे।

---

१. Struggle for freedom in Kahmir - Mr.F.N. Bazaz - Page-294.
२. `महजूर` - `पुष्प`, पृ० ५।
३. `महजूर` - `मेरी दृष्टि में `(लेख)- `पुष्प`- तामीर - 'महजूर'-विशेषांक, पृ० १०।
४. इस विषय में महाकवि शिबली एवं मौलाना बिस्मिल विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपकी प्रथम फ़ारसी कविता के विषय में स्वर्गीय आज़ाद ने लिखा है- `काव्य प्रतिभा ईश्वर प्रदत्त गुण है। गुलाम अहमद में यह गुण आरम्भ से ही विद्यमान था परन्तु इस जलाशय के उफनने को सुअवसर प्राप्त नहीं होता था। सन् १९०५ के आरम्भ में गुलाम अहमद एक मित्र को पत्र लिखने बैठे। उस मित्र को अपनी विद्वता पर अभिमान था। अत: आपने एक विशेष ढंग से कविता में पत्र लिखा। - - - - इस घटना के पश्चात् सात वर्ष तक गुलाम अहमद फ़ारसी में कविता लिखते रहे।`[१]

यहाँ पर यह तथ्य स्पष्ट होता है कि गुलाम अहमद ने सन् १९१२ तक फ़ारसी में रचनाएं कीं उसके बाद आपने अपना उपनाम `महजूर` (विरही कवि) रखा। गुलाम अहमद ने अपना उपनाम `महजूर` क्यों रखा - इस विषय में सभी आलोचक मूक हैं। स्पष्ट है उस समय `महजूर` अपनी मातृभूमि से दूर अपनी युवावस्था के दिन व्यतीत कर रहे थे। समय समय पर उन्हें अपने देश की मधुर परन्तु हृदय पर चोट करने वाली स्मृति आती रही होगी। कवि-हृदय होने के नाते यह स्मृति उन्हें अधिक सताती रही होगी। अत: अपना उपनाम `महजूर` रखा। महाकवि शिबली ने जब उनसे एकबार यह पूछा कि आप का विरह किसके प्रति है तो `महजूर` ने उत्तर में कहा था - `अपने मादर-ए-वतन[२] से।` जब कभी महाकवि शिबली `महजूर` की फ़ारसी रचना सुनते थे तो वे प्रसन्न होकर उन्हें प्रोत्साहन देते थे और उनकी कविताओं का यथासम्भव संशोधन भी करते थे क्योंकि ये सब `महजूर` के आरम्भिक प्रयास थे। महाकवि शिबली ने भी `महजूर` के विषय में एक उच्चकोटि का कवि होने की भविष्यवाणी की थी।[३]

---

१. `कश्मीर भाषा और शायरी` - आज़ाद - तृतीय भाग, पृ० १९६।
२. `साहित्यानुशीलन` - चौहान, पृ० ११२।
३. `प्रगतिवाद` - चौहान, पृष्ठ १७९।

विवाह एवं राज्य-सेवा :

सन् १९०७ में 'महजूर' कश्मीर वापिस लौट आए और यहाँ उनका विवाह सम्पन्न हुआ। परिवार का उत्तरदायित्व उन पर आ पड़ा, अत: नौकरी के लिए काफी चिन्तित रहने लगे। इन्हीं दिनों चौधरी खुशी मुहम्मद 'नाज़िर' से आपका परिचय हुआ। चौधरी साहब बन्दोबस्त-विभाग में एक उच्च कर्मचारी थे[१] परन्तु साथ साथ कविताएँ भी लिखते थे। 'महजूर' ने अपना विनय-पत्र कविता में लिखा और इसे चौधरी साहब पढ़कर अत्यन्त प्रभावित हुए। तरुण-कवि की प्रतिभा पर मुग्ध होकर चौधरी साहब ने इन का विनय-पत्र स्वीकृत किया। 'महजूर' को लेख-पाल नियुक्त करके लद्दाख भेजा गया। वेतन ८ रुपए प्रतिमास निश्चित हुआ।[२] पिताजी ने जाने की आज्ञा नहीं दी परन्तु 'महजूर' ने उनकी एक न सुनी और इस कठिन यात्रा पर चल पड़े। अभी दो वर्ष भी पूरे न हुए थे कि आपके पिता का देहान्त हो गया।[३] अवकाश लेकर आप श्रीनगर आए। पारिवारिक झंझटों के कारण आप पुन: निश्चित समय पर लद्दाख नहीं पहुँच पाए। कुछ समय और अवकाश मिला परन्तु अन्त में नौकरी से हाथ धोना पड़ा। नौकरी छूट गयी और विपत्तियों का पहाड़ उन पर टूट पड़ा। श्री 'आज़ाद' ने लिखा है - " कुछ समय दौड़-धूप करने के पश्चात् आपको पुन: लेखपाल नियुक्त किया गया। संकट के दिनों में आपने अनेक कष्टों को सहन किया और अन्त में पुन: अपने परिवार की दशा सुधार ली।"[४] थोड़े दिनों के

---

१. 'कश्मीर का राष्ट्रीय कवि' (लेख) - श्रीनिवास लाहोरी - तामीर - 'महजूर-विशेषांक', पृष्ठ १७।

२. 'महजूर' - 'पुष्प', पृष्ठ ६।

३. डा० पद्मनाथ गोंजू से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (३०-५-१९६५)।

४. 'कश्मीर भाषा और शायरी', पृ० १९४ - 'आज़ाद'।

पश्चात् आपने टंकी कदल (हब्बा कदल के निकट) के पास श्रीनगर में एक छोटा-सा मकान बना लिया और फिर वहीं पर रहने लगे , यद्यपि कभी-कभी अपने गाँव में भी रहते थे । आज भी उनके सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन टंकी-कदल में उसी मकान में रहते हैं ।

उर्दू-काव्य :

फ़ारसी के साथ साथ अब `महजूर` उर्दू भाषा में भी कविता करते थे । उस समय कश्मीर में फ़ारसी का स्थान उर्दू भाषा ले रही थी । परिणामस्वरूप `महजूर` ने भी अपनी भावनाओं को उसी भाषा में व्यक्त किया जो सभ्य जनता के लिए ग्राह्य थी ।[१] सन् १९२४ तक `महजूर` उर्दू भाषा में ही काव्य रचना करते रहे ।[२] यह वास्तव में परिवर्तित परिस्थितियों का परिणाम था । परन्तु हम यह निष्कर्ष कदापि नहीं निकाल सकते कि `महजूर` ने पूर्णरूपेण फ़ारसी भाषा को त्याग कर उर्दू भाषा को अपनाया । `महजूर` ने सन् १९२४ तक उर्दू एवं फारसी में समान रूप से रचनाएँ लिखीं यद्यपि सन् १९१२ के पश्चात् प्रमुखता उर्दू की रही ।

लद्दाख से लौट कर सन् १९१२ में `महजूर` पुन: पंजाब की ओर चल पड़े और लुधियाना पहुँच कर आफत लुधियानवी से परिचय प्राप्त किया ।

---

१. `महजूर` ने अपने काव्य का आरम्भ फ़ारसी कविताओं से किया । परन्तु फारसी भाषा अपने प्राचीन महत्व को खो चुकी थी और उस का स्थान उर्दू एवं अंग्रेज़ी ले रही थी । जिसका स्पष्ट संकेत `महजूर` से पहले `फिरदोसी ए-कश्मीर` वाहबपरे ने किया था । ऐसी परिस्थितियों में `महजूर` ने भी उर्दू भाषा में कविताएं लिखना आरम्भ किया ।`

- महजूर का काव्य एवं व्यक्तित्व`(लेख) श्री अमीन `कामिल` `तामीर` - `महजूर`-विशेषांक, पृ० २२ ।

२. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य`↓- `आज़ाद` , पृ० १९८ ।

यह तो `महजूर` का सौभाग्य था कि समय समय पर उन्हें ऐसे महानुभावों से परिचय प्राप्त हुआ जिन्होंने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व की अमिट छाप उन पर छोड़ी । श्री आफत लुधियानवी के सम्पर्क में आकर `महजूर` ने अपनी प्रथम उर्दू कविता लिखी ।[१] आफत लुधियानवी के सभापतित्व में आयोजित एक साहित्यिक-गोष्ठी में `महजूर` ने अपनी पहली उर्दू रचना सुनाई जिसकी दो प्रसिद्ध पंक्तियाँ उद्धृत हैं :-

उजड़े गारों में रहा करते हैं रहज़न कुछ के
दिले मुज़तिर ही में दिलबर का कयाम अच्छा है ।

लेखपाली एवं कश्मीरी-काव्य :

पुन: लेखपाल नियुक्त होकर `महजूर` अब कश्मीर घाटी के विभिन्न भागों में रहने लगे । ग्रामीण जीवन से अधिकाधिक सम्बन्धित रहने के कारण वे उस जीवन को निकट से देख सके तथा उसकी समस्याओं का गम्भीर अध्ययन कर सके । तत्कालीन कृषक-जीवन की असहनीय वेदना को देखकर वे मूक कैसे रह सकते थे । उनके हृदय में उस दूषित-समाज के प्रति विद्रोह की भावना मधुर उभार के साथ जाग उठी । श्री पी० एन० कौल बमजई ने लिखा है - "His profession as a Patwari brought him in close touch with the village folk. Their hopes and fears, their simple life and the hardships and miseries that they had to undergo in earning a meal for themselves and their children touched the chords of his sympathetic heart".[२]

---

१. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` तृतीय भाग - `आज़ाद`, पृ० १६७-१६८ ।
२. `ए हिस्ट्री आफ कश्मीर` - पी० एन० बमजई कौल, पृ० ७३६-७४० ।

कश्मीर में रहकर अब उनमें अपनी भाषा एवं साहित्य के प्रति प्रेम बढ़ने लगा । इधर गाँव का विषैला वातावरण उनके हृदय पर नित नई चोट करता था । उधर अशिक्षित जनता उनके फ़ारसी एवं उर्दू काव्य को समझ नहीं सकती थी । श्री चौहान ने लिखा है – 'जिनके बीच में वे रहते थे उनके लिए इनके काव्य-कौशल का कोई मूल्य न था । अत: काव्य के आकाश-महल से उन्हें अपने वतन की ज़मीन पर उतरना पड़ा ।'[१] श्री चौहान ने जब 'महजूर' से यह प्रश्न किया था कि फ़ारसी एवं उर्दू को छोड़कर आप कश्मीरी में क्यों लिखने लगे तो 'महजूर' ने उत्तर दिया था – 'उस वक्त क़ौमी ज़हनियत मेरे अन्दर पुख्ता शक्ल अख़्तियार कर चुकी थी । मैंने अपनी मादरी ज़बान को बेबसी की हालत में पड़ा हुआ देखा । मेरे ज़मीर ने मुझे मलामत की कि मैं अपनी मादरी ज़बान को छोड़कर ग़ैर ज़बानों की ख़िदमत करूँ । और मुझे गुज़िश्ता तारीखी वाक़यात ने यह बता दिया कि मौजूदा पसमन्दा कश्मीरी ज़बान ने आज से सदहा साल पेश्तर बड़े बड़े अहले-कमाल पेश किये थे । मगर आज इस ज़बान से न सिर्फ़ ग़ैरों को नफ़रत बल्कि खुद अहले-काश्मीर इससे नफ़रत करते हैं । और मैंने अहद किया कि मैं अपनी मादरी ज़बान की ही ख़िदमत करूँगा और इसे फिर ज़िन्दा बना दूँगा ।'[२] 'महजूर' को अब प्रतीत हुआ कि आजतक वे पराया घर सजा रहे थे ।[३] इस प्रकार वे विवश होकर अपने शीशमहल से जनता के मध्य उतर आए और जन-भाषा में जनता के विचार जनता तक पहुँचाने का प्रयत्न करने लगे । कश्मीरी अशिक्षित जन-समुदाय में उनका काव्य प्रिय हो गया । अपनी आशातीत सफलता का अनुभव उन्हें हुआ और वे दिन-प्रति-दिन अपनी भावनाओं को

---

१. 'साहित्यानुशीलन' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० ११३ ।
२. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८०-१८१ ।
३. 'जब मैंने स्वर्गीय 'महजूर' से इस विषय में प्रश्न पूछा था तो उन्होंने कहा था- 'यह ऐसी ही बात है कि मानो मैं अब तक किराये के मकान में रंग और रोगन कर रहा था । किसी पराये का घर सजा रहा था और अपने घर की ओर उपेक्षा की दृष्टि से देख रहा था ।'
- डा० पद्मनाथ गुंजू से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (३०-५-१९६५)

स्पष्ट अभिव्यक्ति देने लगे । श्री पी० एन० बज़ाज़ ने लिखा है :-

He first tried to compose verses in urdu but this brought him neither peace of mind nor fulfilment of ambition. He could neither express himself fully nor appropriately. Besides he could also not spread his ideas among the illiterate masses whose liberation was the passion of his life. He turned towards Kashmiri deriving inspiration from Rasul Mir and other poets of early times."[1]

बहुत समय तक उनके हृदय में यह संघर्ष चलता रहा । अन्त में देश-प्रेम ने विजय पाई और 'महजूर' ने कश्मीरी भाषा को अपनाया । पहले उन्होंने लोक-गीतों एवं लोक-कहानियों का आधार लिया क्योंकि उस समय लोक-गीत एवं लोक-कहानियाँ ही कश्मीरी जनता में प्रचलित थीं । स्वयं 'महजूर' ने श्री 'पुष्प' जी को बतलाया था - ' बचपन में मुझे मकबूल शाह क्रालवारी की 'गुलरेज़' में राजकुमार अजबमलिक एवं कुमारी नोशलब का प्रेम-वर्णन अत्यन्त रुचिकर प्रतीत हुआ । उसके पश्चात् महमूद गामी और उससे अधिक रसूल मीर के काव्य ने मुझे अत्यन्त प्रभावित किया ।'[2] इसके अतिरिक्त उन पर हब्बा खातून के काव्य का भी प्रभाव पड़ा । इस प्रकार सुप्रसिद्ध शृंगारिक कवि रसूलमीर एवं विरहिणी कवयित्री हब्बा खातून का प्रभाव 'महजूर' की प्राथमिक कविताओं में स्पष्ट झलकता है । स्वयं उन्होंने श्री चौहान से कहा

---

१. 'इनसाइड कश्मीर' - पी० एन० बज़ाज़, पृ० २६४ ।

२. 'तामीर' - महजूर विशेषांक - लेख ('महजूर' - मेरी दृष्टि में) पृ० ११

था – ' मैंने कश्मीर के गुज़िश्ता शायर रसूल मीर और हब्बाखातून की तर्ज़ पर गज़लें लिखनी शुरू की और मैंने देखा कि थोड़े ही दिनों में मेरी गज़लें मक़बूले-आम हो गईं।'[१] कुछ कश्मीरी आलोचकों[२] का कथन है कि हब्बाखातून से भी अधिक, 'महजूर' की आरम्भिक कविताओं पर रसूल मीर का प्रभाव है। क्योंकि 'महजूर' ने कश्मीरी कविता का आरम्भ प्रेम-काव्य से किया और उस समय तक कश्मीर में प्रसिद्ध शृंगारिक कवि रसूल मीर ही हुआ था जिस की तुलना हम हिन्दी के रीतिकालीन कवि बिहारी से कर सकते हैं।

श्री 'पुष्प' जी के कथनानुसार[३] 'महजूर' ने प्रथम कश्मीरी कविता सन् १९१८ में लिखी थी जिस पर स्पष्ट रूप से रसूल-मीर की शृंगार परक रचनाओं का प्रभाव है :-

"वनुति हये व्यूसि बेवफ़ाई शेव्ये दिलदार क्या ?"[४]

(हे सखि ! ज़रा बता तो दे, क्या प्रियतम का काम केवल धोखा देना ही है!)

श्री अब्दुल अहद 'आज़ाद' ने अपनी पुस्तक 'कश्मीरी भाषा और काव्य' में लिखा है कि 'महजूर' ने सर्वप्रथम कश्मीरी रचना सन् १९२३ में लिखी है।[५] और १९२३ से १९२६ तक केवल मात्र दो गज़लें लिखीं थीं।

---

१. 'साहित्यानुशीलन' - श्री चौहान, पृ० ११३-११४।
२. श्री अमीन 'कामिल' - 'महजूर का काव्य एवं व्यक्तित्व' - 'तामीर' 'महजूर'-विशेषांक, पृ० १२।
३. 'महजूर' - पृथ्वीनाथ 'पुष्प', पृ० ७।
४. 'कलाम महजूर' नं० १ - गज़ल - १, पृ० १।
५. 'कश्मीरी भाषा और काव्य' - 'आज़ाद', पृ० २०३।

इधर 'पुष्प' जी ने लिखा है कि सन् १६१८ से १६२६ तक केवल दो कश्मीरी गज़लें उन्होंने लिखीं ।[१] सुश्री कृष्णा कौल ने अपने एक लेख 'महजूर-एक अध्ययन' में लिखा है कि 'महजूर' ने अपनी पहली कश्मीरी रचना सन् १६१७ में लिखी।[२] अपनी एक प्रत्यक्ष भेंट में 'महजूर' के सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन ने इस मत का समर्थन किया ।[३] यही मत हमें भी समीचीन दीख पड़ता है । श्री 'पुष्प' जी के मत में भी कुछ तथ्य है । सम्भव है 'महजूर' ने सन् १६१७ में प्रथम कश्मीरी कविता को लिखा होगा और सन् १६१८ में प्रकाशित करवाया होगा ।

सन् १६२६ में 'महजूर' एक दिन जब प्रकृति-निरीक्षण में मस्त थे तो कहीं से स्त्रियों के मधुर-स्वर में गाने की आवाज़ आई । ग्रामीण युवतियाँ हब्बाखातून के इस प्रसिद्ध गीत को गा रहीं थीं -

(मैं तेरे लिए कुंजों में बैठने का स्थान बनाऊँगी । मेरे साजन ! तू ज़रा कुछ समय के लिए आ ।' परि(२) क्रं०१)

श्री 'पुष्प' इस घटना का वर्णन करते हुए लिखते हैं — ' एक दिन सन् १६२६ में 'महजूर' अपने गाँव में चिनार की घनी छाँव तले बैठ प्रकृति सौन्दर्य का निरीक्षण कर रहा था कि अकस्मात् जंगली घास चुनने वाली ग्रामीण युवतियों के मधुर एवं हृदय आकर्षक कंठ से हब्बाखातून का यह गीत सुनाई पड़ा ।'[४]

---

१. 'महजूर' - श्री 'पुष्प', पृ० ७ ।

२. 'योजना' (मासिक पत्रिका) मार्च १६६२ -(लेख)- 'महजूर एक अध्ययन' सुश्री कृष्णा कौल ।

३. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१६६५ द्वारा ज्ञात ।

४. 'महजूर' - श्री 'पुष्प', पृ० ७ ।

वास्तव में `महजूर` अपने गाँव में नहीं अपितु लेखपाल के रूप में `सुरस` गाँव (बड़गाम तहसील) में थे और एक दिन दूध-गंगा नदिया के किनारे जब कहीं जा रहे थे तो दूर से ग्राम्य-युवतियों के मधुर कंठ से यह गाना सुनाई दिया ।[१] श्री अब्दुल अहद `आज़ाद` ने भी इस घटना का वर्णन इसी प्रकार किया है ।[२] `महजूर` बहुत समय तक यह गीत गुनगुनाते रहे और अन्त में इसी गीत के आधार पर अपनी इस प्रसिद्ध रचना को लिख डाला :-

(`मेरे प्रियतम ! मुझ से रूठ कर क्यों चले जा रहे हो । जब मैंने तुम्हें दूर से ही देखा तब से मैं स्वर्ग की अप्सरा, तुम्हारे लिए कराह रही हूँ और कहीं चोरी छिपे चुपके चुपके रोती रहती हूँ । अब अधिक मत तड़पाओ । ज़रा कुछ समय के लिए दर्शन तो देते जाओ ।` - परि(२)क्रं०२)

`महजूर` की इस गज़ल की आधार हब्बाखातून की वह गज़ल है जिसका पहले उल्लेख किया गया । हब्बा खातून ने उस गज़ल को विशेष परिस्थितियों

---

१. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट (२६-५-१९६५) द्वारा ज्ञात ।

२. सन् १९२६ में एक दिन बसंत-ऋतु में `महजूर` दूध-गंगा के किनारे प्रसन्न चित जा रहे थे कि कुछ युवतियाँ जंगल से लकड़ियाँ लाने के लिए किनारे किनारे चल रही थीं । वे सब सहगान रूप में हब्बाखातून का यह गीत गा रही थीं । - - - - - बसन्त-ऋतु, दूध-गंगा का झूमता हुआ किनारा, हब्बाखातून की हृदयाकर्षक गज़ल, युवतियों की सुरीली तान और वन का वातावरण - `महजूर` सुनकर अत्यन्त प्रभावित हुआ ।`

- कश्मीरी भाषा और काव्य` - तृतीय भाग, `आज़ाद`

पृ० २०२-२०३ ।

में लिखा था जब कि उस का पति यूसुफ शाह चक अकबर के द्वारा बन्दी बनाया गया था और पुन: उसके लौट आने की कोई सम्भावना नहीं थी। उसका सौतेला पुत्र याकूब शाह भी मारकाट में व्यस्त था, फलत: हब्बाखातून की ओर कोई ध्यान देने वाला न था। अपने प्रियतम के असह्य विरह में हब्बाखातून ने यह गज़ल लिखी थी। `महजूर` ने ठीक इसी के आधार पर अपनी प्रथम लोकप्रिय कविता को लिखा है। जब महमूद शहरी[१] ने `महजूर` की इच्छानुसार इस रचना को गा कर जनता को सुनाया तो इसकी धूम चारों ओर फैल गई। हर स्थान पर इसकी प्रशंसा हुई। श्री `आज़ाद` ने लिखा है – ` यहाँ तक कि कुछ देशवासी व्यापार करने के लिए कश्मीर के बाहर जाते तो यह रचना उनके साथ रहती और इस तरह यह सारे भारत में पहुँची।`[२]

जिस समय `महजूर` ने कश्मीरी भाषा को अपनाया उस समय इस भाषा का साहित्य ह्रासोन्मुख था। स्वयं कश्मीरी जनता इसे उपेक्षा की दृष्टि से देख रही थी। वे इस भाषा में काव्य-रचना करना हेय समझते थे। वास्तव में कश्मीर की शिक्षित जनता अभी भी गहरी निद्रा में पड़ी हुई थी और इस अज्ञान की निद्रा को भंग करने का प्रयास सर्वप्रथम आधुनिक युग में `महजूर` ने किया। श्री 'पुष्प' ने लिखा है – ` वैसे तो `महजूर` की पहली पद्य रचना[३] हब्बाखातून के एक गीत से प्रेरित है और मकबूल की `गुलरेज़` ने भी उसे कश्मीरी काव्य की ओर खींचा है, पर जिस समय उसने

---

१. उस समय का एक प्रसिद्ध कश्मीरी गायक।

२. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` - 'आज़ाद', तृतीय भाग, पृ० २०६।

३. `पहली पद्य रचना` से `पुष्प` जी का अभिप्राय उसी कविता से है जिसका विवेचन पहले किया गया है।

कश्मीरी भाषा को अपनाया, उस समय कश्मीरी कविता में ठहराव सा आ गया था।[१] यहाँ के संस्कृत पण्डितों एवं फ़ारसी विद्वानों का भी यही हाल था। वे अपने पाण्डित्य-प्रदर्शन के मोह में स्वयं अपनी सभ्यता एवं संस्कृति से विमुख हो रहे थे। स्वयं 'महजूर' ने श्री चौहान को बताया था कि आज इस भाषा को विदेशी ही नहीं अपितु यहाँ की जनता भी घृणा की दृष्टि से देखती है।[२] अतः 'महजूर' के सम्मुख उस समय ज्वलन्त समस्या यह थी कि कश्मीरी जनता का ध्यान अपनी भाषा की ओर आकृष्ट किया जाय - विशेषकर शिक्षित वर्ग का।[३]

महाकवि टैगोर से परिचय :

'महजूर' अब नियमित रूप से कश्मीरी भाषा में उच्चकोटि की रचनाएँ लिखते थे परन्तु यहाँ की जनता के सामने उसका कोई मूल्य न था। धूल भरे हीरे को पहिचानने की आवश्यकता थी। इन्हीं दिनों कश्मीरी-साहित्य के एक प्रसिद्ध विद्वान और म्युनिसिपल बोर्ड के भूतपूर्व चेयरमैन पण्डित आनन्द कौल ने 'महजूर' के एक प्रसिद्ध गीत 'पोरो मति जानानो' का अंग्रेज़ी अनुवाद 'विश्वभारती' पत्रिका में प्रकाशित करवाया। इसे पढ़कर शिक्षित वर्ग में एक हलचल सी मच गई।[४] श्री शिवदानसिंह चौहान अपनी पुस्तक 'साहित्यानुशीलन' में लिखते हैं — 'रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इसकी प्रशंसा करते हुए 'महजूर'

---

१. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य', लेखक 'पुष्प' (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा प्रकाशित, पटना-३), पृ० १६।

२. 'प्रगतिवाद' - चौहान, पृ० १८१।

३. 'महजूर -मेरी दृष्टि में' (लेख)- पी०एन० 'पुष्प' - 'तामीर' 'महजूर'-विशेषांक पृ० ११।

४. 'कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि' (लेख)- श्रीनिवास लाहोटी, 'तामीर' 'म०'-अंक, पृ० १८।

को लिखा कि मैंने आपकी कविता देखी । मेरे विचार और आपके विचार मिलते-जुलते हैं । यदि आप अंग्रेज़ी या बंगला जानते होते तो मैं सन्देह करता कि आपने मेरे विचार लिये हैं । मैं आपकी कविता से बहुत प्रसन्न हूँ ।'[१] दूसरे वर्ष जब श्री कौल ने `ग्रीस कूर` (किसान लड़की) का अनुवाद `विश्वभारती` में प्रकाशित करवाया तो स्वर्गीय टैगोर उसे पढ़ कर अत्यंत प्रभावित हुए थे और `महजूर` को एक पत्र में लिख दिया - ` तुम कश्मीर के वर्डसवर्थ हो ।'[२] यही वह समय था जब कश्मीरी जनता अपनी गहरी निद्रा से जाग पड़ी और `महजूर` की कविता का वास्तविक मूल्य समझने लगी । यह अज्ञान की निद्रा थी जिसे महाकवि टैगोर के उपर लिखित शब्दों ने भंग किया । श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है –

"It so happened that soon after the elemental upsurge some of his ballads were brought to the notice of Poet Tagore who spoke about them in appreciative terms. xxx Encouraged by the praise of of Tagore and others he burst forth in composing moving songs"[3]

कवि-सम्मेलन :

सन् १९३४ में श्रीनगर में एक कवि-सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें सम्मिलित होने के लिए, सर्वप्रथम कश्मीरी-भाषा के एक कवि `महजूर` को भी निमन्त्रण दिया गया । सम्मेलन में `महजूर` को एक उर्दू रचना के

---

१. `साहित्यानुशीलन` - शिवदानसिंह चौहान, पृ० ११४ ।
२. `कश्मीरी भाषा और काव्य` - आज़ाद , तृतीय भाग, पृ०२०८ ।
३. `स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन कश्मीर` - पी० एन० बज़ाज़, पृ० २९४ ।

साथ ही एक कश्मीरी रचना पढ़ने की आज्ञा दी गई क्योंकि सम्मेलन में उर्दू, फ़ारसी एवं पंजाबी भाषाओं के कवि ही एकत्रित हुए थे। कवि-सम्मेलन १५ सितम्बर सन् १९३४ को करनल भोलानाथ के सभापतित्व में आयोजित हुआ। `महजूर` ने कविता-पाठ करने से पूर्व एक छोटा-सा भाषण देते हुए कहा – `वास्तव में यह महाकवि टैगोर की महानता है कि उन्होंने एक शब्द कहकर मेरे देशवासियों को मेरे अस्तित्व का बोध कराया।`[१] महमूद शहरी से उन्होंने अपनी कश्मीरी कविता `बाग़ि निशाति के गुलो` पढ़वाई। इस कविता की सरलता, सरसता एवं संगीतमयता के कारण समस्त श्रोतागण रसभोर हुए और `महजूर` की प्रशंसा करने लगे। इस अद्वितीय सफलता के परिणामस्वरूप `महजूर` अब नियमित रूप से कविता करने लगे और महमूद शहरी सन् १९३७[२] तक अपनी माधुर्यपूर्ण वाणी द्वारा उनकी रचनाओं को जन-गण के सम्मुख प्रस्तुत करता रहा।

देवेन्द्र सत्यार्थी एवं बलराज साहनी से परिचय :

देवेन्द्र सत्यार्थी सर्वप्रथम सन् १९२७ में कश्मीर आए। यहाँ वे `महजूर` के गीतों की लोकप्रियता से प्रभावित हुए और कुछ ग़ज़लों का अंग्रेज़ी अनुवाद कराके लौट गए। सन् १९३४ में वे पुन: काश्मीर आए और इसी वर्ष उन्होंने `माडर्न रिव्यू` में `महजूर` पर एक लेख लिखा। पण्डित आनन्द कौल साहब के घर पर सत्यार्थी जी का परिचय `महजूर` से हुआ।[३] और यहीं पर

---

१. `कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि` (लेख) - श्री निवास लाहोटी - `तामीर` - 'महजूर'-अंक, पृ०१८-१९।

२. महमूद शहरी की मृत्यु युवावस्था में ही सन् १९३७ में हुई।

३. श्री मुहम्मद अमीन (सुपुत्र `महजूर`) से प्रत्यक्ष भेंट ३०-५-१९६५ द्वारा ज्ञात।

उन्होंने `महजूर` की कई कविताओं का अंग्रेज़ी रूपान्तर सुना । कविताओं का अनुवाद कराने में उन्होंने विशेष रुचि प्रकट की । इसके पश्चात् श्री बलराज साहनी[१] ने `विश्व भारती` (त्रैमासिक पत्रिका, शान्ति निकेतन द्वारा प्रकाशित) में कवि `महजूर` एवं उनके काव्य पर दो लेख प्रकाशित किए । पहला लेख सन् १९३८ में और दूसरा लेख सन् १९३९ में प्रकाशित हुआ । कवि की लोकप्रियता पर आश्चर्य प्रकट करते हुए उन्होंने लिखा है – `यदि `महजूर` आज एक कविता लिखते हैं, तो एक पखवारे के अन्दर ही वह सर्वसाधारण की ज़बान पर होती है । बालक स्कूल जाते हुए, युवतियाँ धान कूटते हुए, माझी डांगा खेते हुए, मज़दूर अपने अविराम श्रम में लगे हुए – सबके सब उस कविता को गाने लगते हैं । एक अशिक्षित प्रदेश में, जहाँ ऐसी चीज़ों को छपाकर यदि बेचा जाय तो दसप्रतियों से अधिक न बिकें, उनकी कविता को विस्तारित करने की इस विधि को एक करिश्मा ही कह सकते हैं ।`[२] बलराज साहनी ने इन दो लेखों में `महजूर` की काव्यकला पर काफी प्रकाश डाला है । इन लेखों में `महजूर` की विलक्षण-बुद्धि, भाव गाम्भीर्य, तीव्र अनुभूति, एवं अद्भुत विचार क्षमता का परिचय मिलता है ।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आरम्भ में `महजूर` की काव्य-प्रतिभा का आभास हमें ग़ैर कश्मीरी (अर्थात् जम्मू-कश्मीर प्रदेश से बाहर) साहित्यकारों एवं विद्वानों द्वारा मिलता है । कश्मीरी जनता की साहित्यिक-अकर्मण्यता का इससे बढ़कर और कोन उदाहरण दिया जा सकता है ।

---

१. आजकल हिन्दी चित्र-पट के प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय अभिनेता ।

२. साहित्यानुशीलन - शिवदानसिंह चौहान, पृ० ११४ ।

जन-आन्दोलन — सन् १९३१

सन् १९१४ के पश्चात् (प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर) पश्चिमी साम्राज्यवाद के विरुद्ध भारत में स्वतंत्रता-आन्दोलन अधिक ज़ोर पकड़ने लगा। सन् १९३१ में यहाँ भी डोगरा राज्य के विरुद्ध आन्दोलन उग्र रूप धारण कर गया। श्री प्रेमनाथ कौल ने अपने इतिहास में लिखा है -

"Historically the 13th July, 1931, is a land mark in the annals of modern Kashmir. It was on that day that open demonstrations against the despotic rule of Maharaja took place. It is from that day that the people took upon themselfes the task of securing for themselves the right of democratic self-rule"[1]

इस जन-आन्दोलन का प्रभाव `महजूर` की कविता एवं उनके व्यक्तित्व — दोनों पर पड़ा। उन्हें यहाँ के फूलों में घाव दीख पड़े और यहाँ के सेबों की लालिमा से ख़ून टपकता दिखाई दिया। उनके काव्य का विषय परिवर्तित हुआ। ज्यों ज्यों जन-आन्दोलन गाँव और क़स्बों में ज़ोर पकड़ता गया, त्यों त्यों `महजूर` की कविता में भी परिवर्तन होने लगा। साहित्य में इस आन्दोलन का नेतृत्व उन्होंने किया और अनेकों उभरते साहित्यकारों का पथ-प्रदर्शन किया। राष्ट्रीय-भावना को जनता के सम्मुख, जनता की भाषा में प्रस्तुत करने में उन्हें अद्वितीय सफलता मिली। जुलाई सन् १९३१

---

१. 'A History of Kashmir ' - P.N.K. Bamzai - Page 657.

में केन्द्रीय कारागृह श्रीनगर में जन-समूह पर गोली चलाई गई[१] और अनेकों निरीह व्यक्तियों की हत्या की गई। इस हत्या-कांड का प्रभाव 'महजूर' पर अत्यधिक पड़ा। वे हृदय मसोस कर रह गये। इस प्रकार हम देखते हैं कि परिस्थितियां बदल गईं और परिवर्तित परिस्थितियों के परिणाम-स्वरूप 'महजूर' की कविता का विषय भी बदल गया। श्री फारूक कुरेशी ने लिखा है—"Mahjoor typified the feelings of the people."[२] उनके हृदय में क्रान्तिकारी भावनाएँ जागृत हुईं और अपनी कविताओं द्वारा वे अपने विचारों को जनता तक पहुँचाने लगे। आरम्भ में 'महजूर' ने राष्ट्रीय काव्य लिखने में संकेतात्मकता का अधिक सहारा लिया। फूल और बुलबुल की ओट में वे देशवासियों को सचेत रहने की चेतावनी दे रहे थे। राज्य-कर्मचारी होने के कारण वे अभी स्पष्ट रूप में जनता के विरुद्ध नहीं लिख सकते थे। सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है—'इस युग में 'महजूर' के पुष्पों की महक तथा बुलबुल की चहक में प्रणय की भावना न रही,' यहाँ उनका बुलबुल स्वतंत्रता का गाहक और बागवान जनता का शुभचिन्तक है। 'महजूर' एक क्रांति चाहते हैं, परिवर्तन चाहते हैं और चाहते हैं लोक-कल्याण। जिस के लिए उन्होंने बुलबुल को स्वतंत्रता का दूत बनाया।[३] सन् १९३३ में पुनः राज्य के विरुद्ध आन्दोलन तीव्र गति से बढ़ने लगा। सन् १९४२ में जब भारत में अंग्रेज़ी-राज्य के विरुद्ध असहयोग-आन्दोलन ज़ोर पकड़ने लगा तो कश्मीर में

---

१. 'तामीर' - महजूर अंक -(लेख)(महजूर का काव्य एवं व्यक्तित्व) - श्री अमीन कामिल, पृ० २७।

२. 'कश्मीर' - मई १९५८, पृ० १३९ - 'सिंगर आफ कश्मीरी फ्रीडम' - फारूख ए० कुरेशी।

३. 'योजना' - मार्च १९६२, पृ० २४ - 'महजूर' - एक अध्ययन - सुश्री कृष्णा कौल।

भी नवीन उत्साह के साथ जनता संघर्ष-क्षेत्र में कूद पड़ी ।[१] धीरे धीरे `महजूर` स्पष्ट शब्दों में अब विदेशी राज्य के विरुद्ध क्रान्तिकारी भावनाओं से ओतप्रोत कविताएँ लिखने लगे । उन्होंने स्पष्ट रूप में स्वतंत्रता की मांग की और क्रान्ति के लिए जनता का आवाहन करते रहे ।

नया-कश्मीर :

भारतीय असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर, कश्मीर के राजनीतिक नेताओं ने `नये कश्मीर` की योजना जनता के सामने रक्खी और सन् १९४६ में `कश्मीर छोड़ दो` का आन्दोलन आरम्भ हुआ ।[२] `महजूर`

---

1. "The 'Quit India' movement launched by the Indian National Congress in 1942, which resulted in the arrest of the leaders of the Congress and the consequent turmoil deeply moved the politically awakened people of the State".

   - 'A History of Kashmir' - P.N.K. Bamzai - Page 665.

2. "Following the 'Quit India' movement, in 1942, the Jammu and Kashmir National Conference prepared the people for the launching of 'New Kashmir Plan'. This brought the people in clash with Maharaja's Government. The awakening to a new social and economic freedom is remarkably mirrored by Mahjoor who was optimistic about the struggle.

   - 'Kashmir' - May 1958 - P.146 - Singer of Kashmir's Freedom - By Farooq A. Qureshi.

ने आन्दोलन को सफल बनाने के लिए पूरा सहयोग दिया यद्यपि उन्हें अनेकों कठिनाइयों को झेलना पड़ा।[१] इस समय उनकी लेखनी नये डगर पर काफी आगे बढ़ चुकी थी। सन् १९४२-४६ तक 'महजूर' ने ओजपूर्ण कविताएँ लिखीं। उन कविताओं में बदलते हुए वातावरण का एक नया परन्तु आशापूर्ण सन्देश पाया जाता है। उन्होंने अपने काव्य में 'नये कश्मीर' के विषय में एक ऐसे उपवन की कल्पना की जिसमें बुलबुल का राज्य हो। जिस में बसन्त के मधुर-भाषी पक्षी सदा अपनी मीठी तान सुनाते हों, जिसमें फूल अपनी सौन्दर्य-छटा और सौरभ बिखेरते हों।[२] 'महजूर' भविष्य में कश्मीर को एक ऐसा ही उपवन बनाना चाहते थे। श्री 'पुष्प' ने लिखा है –

"This background to the New Kashmir idea is clearly mirrored by the poets of the period; and Mahjoor, the foremost among them, waxed eloquent over the theme"[३].

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि 'महजूर' अपनी प्राचीन काव्य-परम्पराओं से बाहर निकल कर प्राचीन प्रतीकों के द्वारा ही जनता को नवीन सन्देश देने लगे।

---

१. राजनीतिक नेताओं को बन्दीगृह में बन्द करने के पश्चात् डोगरा सरकार कुछ राज्य-कर्मचारियों पर सन्देह करने लगी और कई व्यक्तियों को जेल में बन्द कर दिया गया। 'महजूर' भी इन्हीं राज्य-द्रोहियों में पकड़े गये और एक मास तक उन्हें जेल में बन्द रखा गया। इसके अतिरिक्त एक बार उन्हें कश्मीर से बाहर भी मुज़फ्फराबाद तबदील किया गया। गुप्तचर विभाग को उनपर हर समय सन्देह रहता था अतः उन्हें कई बार उनका कोपभाजन बनना पड़ा।

- श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात।

२. 'साहित्यानुशीलन' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० ११८।

३. 'Kashmir Today' - Sep.1957 - 'New Kashmir in Kashmiri Verse' - 1, P.N. Pushp - Page 1.

सन् १९४७ (स्वतंत्रता) के पश्चात्

सन् १९४७ में भारत स्वतंत्र हुआ परन्तु थोड़े ही समय के पश्चात् कश्मीर घाटी में पाकिस्तानी सेना एवं कबाइली चढ़ आए । जगह जगह मारकाट हुई । युद्ध में सहस्रों लोग काम आए । महाराजा देश छोड़ कर चले गए और राज्य लोगों के द्वारा चुने हुए नेताओं के हाथ में आया । इन दिनों `महजूर` ने अधिक नहीं लिखा । राजनीतिक नेताओं की असफलताओं पर उनकी निराशा दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी । उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ मानो `नया कश्मीर` का स्वप्न पूरा नहीं होगा । अपनी एक प्रत्यक्ष भेंट में डा० पद्मनाथ गुंजू ने मुझे बताया - ` जब उन्होंने देखा कि नेतागण व्यक्तिगत लाभ-हानि के लिए ही प्रयत्नशील हैं और साधारण जन-समुदाय की आवश्यकताओं की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है, जनता की आर्थिक दशा दयनीय हो रही है, पार्टी के कर्मचारी सरकारी कामों में हस्तक्षेप कर रहे हैं तो वे क्रुद्ध हो उठे, परन्तु शारीरिक अस्वस्था के कारण इसका विरोध करने की सामर्थ्य उनमें न थी; फलत: उनका हृदय निराशा का केन्द्र बन कर रह गया ।[१] युद्ध के कारण लोगों की आर्थिक दशा बहुत बिगड़ चुकी थी और अशिक्षा के कारण वे किंकर्त्तव्य विमूढ़ बन गये थे । राजनीति के दाव-पेच एवं कुचक्रों को देखकर वे बहुत ही खिन्न हो उठे ।[२] नौकरी से अवकाश-ग्रहण करके `महजूर` अपने गाँव मात्रि-गाम में रहते थे परन्तु निराशा

---

१. डा० पद्मनाथ गुंजू से प्रत्यक्ष भेंट ३०-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

२. Mahjoor washeld in high esteem by the nationalists, and he too was their great admirer. But in the political crisis of October, 1947 the poet wavered. He had consistently supported the Nationalists but was now stunned to find where the leadership had brought Kashmir". - Struggle for freedom in Kashmir" - By P.N. Bazaz - Page 298.

एवं असंतोष ने उनके हृदय को छलनी कर दिया था । श्री 'पुष्प' जी ने लिखा है – `सन् १९४९ के ग्रीष्म में मैंने कवि-महोदय को देखा । लेख-पाल की नौकरी से अवकाश-ग्रहण किए हुए चार-पाँच वर्ष हुए थे । मैंने कवि को बहुत निराश पाया । उस समय उनकी पेंशन १९ रुपए थी ।`[१] मानसिक अशान्ति एवं शारीरिक अस्वस्था के कारण `महजूर` अब कविता रचने में असमर्थ थे । यदि कभी लिखते भी थे तो बहुत कम यहाँ तक कि सन् १९५० से आगे उन्होंने नहीं के बराबर लिखा है ।[२]

`महजूर` ने काफी अनुसन्धान के पश्चात् `कश्मीरी कवियों का इतिहास` नामक ग्रन्थ के कुछ भाग लिखे थे । उनकी प्रबल इच्छा इस पुस्तक को पूरा करने की थी परन्तु यह उनके भाग्य में न लिखा था और न ही वे इसको प्रकाशित करवा सके । अपनी एक भेंट में उन के सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन ने मुझे बताया - `यह पुस्तक उर्दू भाषा में लिखी गई है परन्तु अपूर्ण एवं अप्रकाशित रूप में इसकी हस्तलिखित प्रति मेरे पास सुरक्षित है । स्वर्गीय `महजूर` ने इसके तीन सौ पृष्ठ लिखे थे ।`[३] पुस्तक-सम्बन्धी आवश्यक सामग्री संकलन करने में उन्होंने काफी परिश्रम से काम किया था और कई प्रदेशों का भ्रमण भी किया था । उन्हीं से प्रेरणा पाकर उनके शिष्य स्वर्गीय अब्दुल अहद `आज़ाद` ने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` लिखा था । परन्तु वे भी अपने जीवन-काल में इसे प्रकाशित नहीं करवा सके ।

---

१. `तामीर` - 'महजूर'-अंक - `महजूर - मेरी दृष्टि में` , 'पुष्प' , पृ० १२ ।
२. `महजूर` - 'पुष्प' , पृष्ठ ९ ।
३. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

महजूर-दिवस :

२३ सितम्बर सन् १९५० को श्रीनगर में बड़ी धूमधाम से 'महजूर-दिवस' मनाया गया। इस शुभावसर पर वे स्वयं श्रीनगर आए और इस उत्सव में सम्मिलित हुए। कश्मीर के प्रसिद्ध कवियों, लेखकों, साहित्यकारों एवं विद्वानों ने इस में भाग लिया। जम्मू कश्मीर राज्य के वित्त-मन्त्री श्री गिरधारीलाल डोगरा इस साहित्यिक गोष्ठी के सभापति थे और उनके अतिरिक्त स्वर्गीय प्रेमनाथ 'परदेसी', श्री दीनाथ 'नादिम', मास्टर जिन्दा कौल, श्री शिवदानसिंह चौहान तथा अन्य महानुभाव भी इस समारोह की शोभा थे।[१] गोष्ठी में अपना भाषण देते हुए श्री 'महजूर' ने कहा था - 'आज मैं अपने उपवन में अनेकों कलियों को खिलता हुआ देख रहा हूँ। जो कार्य मैंने आज से ३० वर्ष पूर्व आरम्भ किया था उसको आगे ले जाने वालों की कमी नहीं।'[२] आकाशवाणी के श्रीनगर केन्द्र से उन्होंने अपनी नयी कविता 'वलो हा पोशनुलो' पढ़कर सुनाई। उनके सारे काव्य पर एक रेडियो-रूपक प्रसारित किया गया। वास्तव में यह एक संगीत-रूपक था। रेडियो-विभाग की ओर से उन्हें एक थैली भी भेंट की गयी।[३] उस समय 'महजूर' की आयु पैंसठ वर्ष की थी। अगले दो वर्षों में उन्होंने अधिक नहीं लिखा। शारीरिक रुग्णता के कारण वे साहित्य देवी की अधिक पूजा नहीं कर सके।

अन्तिम-यात्रा :

जीवन के अन्तिम दो वर्षों में 'महजूर' अत्यधिक अस्वस्थ रहे। मृत्यु

---

१. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात।
२. 'महजूर' - 'पुष्प', पृ० ९।
३. 'तामीर' - 'महजूर' विशेषांक - 'महजूर - मेरी दृष्टि में', -'पुष्प', पृ० १२।

से छ: मास पूर्व उन पर पुन: रोग का भयंकर आक्रमण हुआ ।[१] अधिक रक्त-चाप के कारण जब उन्हें पक्षाघात का आक्रमण हुआ तो डाक्टरों ने येनकेन प्रकारेण उन्हें कुछ ठीक कर दिया । अपनी एक भेंट में डा० पद्मनाथ गुंजू ने मुझे बताया - "I have treated Mahjoor, both, in his first and last illness. He had a stroke of Paralysis due to high blood-pressure six months before his death. At that time I set him rightbut the second stroke proved fatal for him and took his life".

उन्हीं दिनों जब 'महजूर' की प्रसिद्धि दूर दूर तक फैली तो कश्मीर की सरकार ने 'महजूर' को साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष में आजीवन १०० रुपए वज़ीफा स्वीकृत किया । ८ अप्रैल सन् १९५२ को प्रात: 'महजूर' पुलवामा अपनी पेंशन (Pension) लेने गए थे । सायम् वहाँ से लौटते समय वे कुछ अस्वस्थ थे । कुछ मित्रों ने साथ देकर मात्रिग्राम पहुँचाया । रोग बढ़ने लगा और कुछ ही समय के पश्चात् ज़बान बन्द हो गई और ९ अप्रैल प्रात: वे स्वर्ग सिधारे । श्रीनगर में यह समाचार १० अप्रैल को पहुँचा तो दुख और शोक के बादल चारों ओर छा गए । श्री गुलाम मही-उद्दीन 'मजबूर' ने लिखा है- '१० अप्रैल सन् १९५२ प्रात:काल का समय था । ऐसी ही सुबह जैसी हर दिन हुआ करती है परन्तु फिर भी यह सुबह कितनी भिन्न थी । यह अपने साथ राष्ट्रकवि 'महजूर' की मृत्यु का सन्देश लाई थी ।'[३] गाँव के लोगों ने 'महजूर'

---

१. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २९-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।
२. डा० पद्मनाथ गुंजू से प्रत्यक्ष भेंट ३०-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।
३. 'ताबीर' - 'महजूर'-विशेषांक - 'महजूर की अन्तिम-यात्रा' - गुलाम मही - उल्लदीन 'मजबूर' , पृ० ५४ ।

के शव को पास के कबरिस्तान में `अमानती-दफन`[१] कर दिया। परन्तु दूसरे ही दिन जब लोग काफी संख्या में वहाँ पहुँचे तो यह समाचार उनके लिए अधिक शोकास्पद सिद्ध हुआ। प्रदेश के तत्कालीन उपप्रधान मन्त्री श्री बखशी गुलाम मुहम्मद भी मात्रिगाम पहुँचे। चिनारों की छाँव तले एक शोक-सभा हुई और बखशी साहब ने अन्य महानुभावों से मिल कर यह निश्चित कराया कि `महजूर` का शव श्रीनगर लाया जाए और राजकीय-सम्मान सहित `अथवाजन` में हब्बाखातून के `मज़ार` में दफन किया जाए। गाँव वालों ने पहले इसका विरोध किया परन्तु बखशी साहब के समझाने पर सहमत हुए और `महजूर` का शव रात में ही श्रीनगर पहुँचाया गया।[२] लोगों के दर्शन के लिए उनका शव `खानकाह-मोला` श्रीनगर में रक्खा गया। सहस्रों नगर एवं ग्राम वासियों ने अपने राष्ट्रीय-कवि को श्रद्धा के पुष्प अर्पित किए। श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है –

Mahjoor died in June, 1952 at the age of sixty four when a public mourning was observed throughout the valley. The Kashmir government declared the day of his death as a public holiday and gave him an official burial beside the grave of Habba Khatoon.[3]

---

१. इसलाम धर्म के अनुसार ताबूत के साथ दफनाया जाता है जिसे `अमानती-दफन` कहते हैं।

२. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात।

३. 'Struggle for freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz, Page 299.

११ अप्रैल २ बजे निमाज़ के पश्चात् `महजूर` का शव `खानकाह मोला` से अमीरा कदल पहुँचाया गया । उनकी अन्तिम-यात्रा में सहस्रों लोग सम्मिलित हुए । अमीरा कदल में फूलों से सजी हुई गाड़ी पर उनका शव रखा गया और ३ बजे के आसपास अथवाजन पहुँचाया गया । उनके ताबूत पर निम्न-लिखित दो काव्य-पंक्तियाँ लिखी हुई थीं :-

`मृत्यु से क्या डरना, मृत्यु तो एक खिलवाड़ है । मृत्यु के पश्चात् पुन: जीवन का संचार होता है । अत: मृत्यु का भय छोड़ दे ।`

(परि (२) क्रं० ३)

अथवाजन में कश्मीर के प्रसिद्ध साहित्यकारों एवं कवियों ने उनकी अर्थी को कन्धा दिया और फिर उन्हें दफन किया गया । यहाँ बख्शी गुलाम मुहम्मद ने भाषण देते हुए कहा था - `महजूर` मरा नहीं जीवित है । क्योंकि उन्होंने जिन गीतों का दीपक-राग गाया है वे उस समय तक जीवित रहेंगे जिस समय तक मनुष्य के हृदय में जीवन के सौन्दर्य के प्रति आकर्षण एवं स्नेह रहेगा ।`[1] `महजूर` जम्मू-कश्मीर प्रदेश के प्रथम कवि हुए हैं जिन का अन्तिम संस्कार इतने सरकारी सम्मान के साथ हुआ है । श्री फारूक कुरेशी ने लिखा है - "The poet is now dead. We mourn his departure, but the world he left us, the world of his mind, is permanently with us and our children."[2]

---

१. `तामीर` - `महजूर - विशेषांक` - `महजूर की अन्तिम यात्रा` -गुलाम महीउद्दीन `मजबूर` , पृष्ठ ५५ ।

२. 'Kashmir' - May 1958 - 'Singer of Kashmir's Freedom - Farooq, A. Qureshi - Page 146.

वास्तव में यह 'महजूर' की लोकप्रियता एवं साहित्य सेवा का ही परिणाम था कि देश के कोने कोने में अब भी परिचित अपरिचित उनके प्रति श्रद्धा रखते हैं। उन की मृत्यु पर शोक और करुणा के चित्र चारों ओर दिखाई देते थे। श्री गुलाम महीउद्दीन ने लिखा है - ' जब हम 'महजूर' की मृत्यु का अशुभ समाचार सुनकर पुलवामा से उनके गाँव की ओर पैदल जा रहे थे तो मार्ग में एक चरवाहा 'महजूर' का एक विरही गीत गाते हुए मिला था। उस गीत को सुनकर न जाने क्यों हम में से बहुतों के आखों से आंसू आए।'[१]

मास्टर जी[२] ने उनकी मृत्यु पर श्रद्धांजलि के पुष्प चढ़ाते हुए लिखा है:-

' फूलों के प्रिय उसी समय चले गए जब कि बसंत में चारों ओर फूल खिलने लगे थे। मैंने हर पंक्ति में उनके लिए फूलों का प्रयोग किया है और आज उनका मज़ार भी फूलों से युक्त रहेगा। फूलों के प्रिय 'महजूर' हम से सदा के लिए चले गए।'[३] (परि (२) क्रं०४)

श्री दीनानाथ 'नादिम' ने महान कवि की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए लिखा है :-

' चारों ओर से 'महजूर' की मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया। आवाज़ आई — महजूर कहाँ गया ? कहाँ गया ? फिर आवाज़ आई और पहले प्रश्न का उत्तर देते हुए बोली — 'महजूर' यही है। वह कहीं नहीं गया। 'महजूर' जीवित है। उसे कोई मार नहीं सकता। कवि की मृत्यु कदापि नहीं होती।

---

१. 'तामीर' - 'महजूर' अंक - 'महजूर' की अन्तिम यात्रा - गुलाम महीउद्दीन 'मजबूर', पृ० ५४।

२. 'मास्टर जिन्दा कौल वर्तमान काल के कश्मीरी भाषा के एक प्रसिद्ध कवि एवं लेखक थे। भारतीय साहित्य अकादमी द्वारा उन्हें 'सुमरण' नामक पुस्तक पर पुरस्कार भी मिला था।

३. 'तामीर' - 'महजूर' विशेषांक, पृ० ७४।

उसका काव्य ही उसे सदा अमर बना के रखेगा । कवि मर कर भी अमर रहता है ।"[१]
(परि (२) क्रं०५)

उनकी मृत्यु से नवयुवक कवियों एवं साहित्यकारों का पथ-प्रदर्शक उनसे बिछुड़ गया । एक युग-निर्माता अपने युग का उज्ज्वल निर्माण करके चला गया । भविष्य में यहाँ के साहित्यकार उन्हें अपने गुरु के रूप में याद करेंगे । श्री अमीन कामिल ने `महजुर` के प्रति श्रद्धाँजलि अर्पित करतेहुए लिखा है :-

" `महजूर` हमारे हैं और हम उनके । उनके साथ साथ ललद्यद, महमूद गामी एवं रसूल मीर हमारे साहित्य के उज्ज्वल नक्षत्र हैं और हम उन्हीं की सन्तान हैं । हमें जीवन को सफल बनाना है, और एक संघर्ष-शील प्राणी के समान अपने समुदाय-सहित संघर्ष में रत रहना है । हमें जीवन का सन्देश चारों ओर पहुँचाना है और ऐसा करने से हमें कोई रोक नहीं सकता है । यह सन्देश हमें महान कवियों ने सुनाया है जो कि सदा अमर रहेंगे ।"[२]
(परि (२) क्रं० ६)

`महजूर` का सम्पूर्ण जीवन एक योद्धा का जीवन था । राजनीतिक दासता के विरुद्ध, साहित्यिक रूढ़ियों के विरुद्ध एवं धार्मिक संकीर्णता के विरुद्ध वे सदा लड़ते रहे । उन्हें जीवन का अनुभव था और उसी अनुभव के आधार पर उन्होंने अपनी मान्यताएं स्थिर की थीं । लेखपाल होने के नाते

---

१. `तामीर` - 'महजूर' - विशेषांक, पृष्ठ २७ ।
२. `तामीर` - `महजूर अंक` , पृ० ३८ `आह महजूर` (श्रद्धांजलि की कुछ पंक्तियाँ) ।

सामान्य जनता से उनका अधिक सम्पर्क रहा और उनकी समस्याएँ समझने तथा उन्हें वाणी देने में वे सदा सफल रहे हैं। वास्तव में उनका जीवन एक पथ-प्रदर्शक का जीवन रहा है जो भावी पीढ़ियों के लिए एक जलती मशाल है।

(आ) व्यक्तित्व

शारीरिक-संगठन एवं वेश-भूषा :

महाकवि 'महजूर' का व्यक्तित्व बड़ा ही प्रभावशाली एवं आकर्षक था। वे बहुत ही गम्भीर व्यक्तित्व वाले थे। श्रीनिवास लाहोटी ने लिखा है – 'लम्बा कद, गोरा रंग, आँखें छोटी छोटी और मुँह पर सदा मुस-कुराहट खेलती रहती थी।'[१] यद्यपि माँ का दूध पीना उनके भाग्य में अधिक समय के लिए नहीं लिखा था परन्तु उनके पिता ने बालक को स्वस्थ एवं सुदृढ़ बनाने के लिए विशेष ध्यान दिया। उन्हें धन की कोई विशेष चिन्ता नहीं थी। पीर-मुरीदी से सहस्रों की आय होती थी और गुलाम अहमद उनका एकमात्र पुत्र था अत: उनका शारीरिक विकास स्वस्थ रूप से हुआ। बचपन में गाँव के समव्यस्क बालकों के साथ स्वच्छन्द वातावरण में गुलाम अहमद खूब खेला-कूदा है। खेतों की मेंढ पर, चिनारों की छाँव तले एवं बलखाती नदियों के किनारों पर उनका मन खूब रमा था। कश्मीर की स्वास्थ्य-वर्धक जलवायु ने उनके शारीरिक गठन में काफी योग दिया था। यही कारण है कि अन्तिम समय तक 'महजूर' मृत्यु से संघर्ष करते रहे। श्री 'पुष्प' जी ने सन् १९४१ में 'महजूर' को देखा था। उन्होंने लिखा है - 'सर पर भारी भरकम सफेद पगड़ी, झुर्रियों से पूर्ण माथा, भौहों के नीचे चमकती

---

१. 'कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि' - श्रीनिवास लाहोटी, 'तामीर' 'महजूर-विशेषांक', पृ० १७।

आंखें और मुँह पर कटी छटी मूछें बहुत शोभा पाती थीं ।'[१]

पीर-परिवार से सम्बन्धित होने के कारण उनकी वेश-भूषा बड़ी आकर्षक होती थी । वे मलमल की पगड़ी सर पर बाँधते थे, कभी 'फिरन'[२] और कभी कोट पहनते थे । स्वच्छ वस्त्र पहनने की उन्हें सदा इच्छा रहती थी ।[३]

ग्रामीण जीवन का प्रभाव :

'महजूर' के व्यक्तित्व पर ग्रामीण जीवन का अत्यन्त प्रभाव पड़ा है । 'महजूर' का जन्म गाँव में हुआ, आरम्भिक शिक्षा गाँव में हुई, विवाह गाँव में हुआ और इस के अतिरिक्त जीवन का अमूल्य समय उन्होंने गाँव में ही व्यतीत किया । ग्रामीण जीवन उनके जीवन के साथ घुल मिल गया था । उनकी अनेकानेक समस्याएँ 'महजूर' की अपनी समस्याएँ थीं । ग्रामीण जीवन की सरलता ने उन्हें आकर्षित किया था, नगरों की कृत्रिमता से दूर भाग कर उन्हें जीवन-सौन्दर्य का अनुभव गाँव के स्वच्छन्द वातावरण में ही होता था। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है – 'उनका अधिकांश जीवन किसानों के बीच गुज़रा है । वे कश्मीर के बनों और घाटियों में घूमे हैं । इन लोगों के हर्षोल्लास, वेदना-व्यथा, आशा-निराशा का उन्होंने निकट से अनुभव किया है । उनकी सुप्त चेतना में जीवनाकांक्षा, आत्म-विश्वास, मुक्ति-कामना , उन्नति-विकास की आशा के कणों को जीवन की सर्वग्राही-विडम्बनाओं की राख में मुख दबाये पड़ा पाया है ।'[४] वे इस तथ्य से भली भांति परिचित

---

१. 'महजूर - मेरी दृष्टि में' (लेख) - 'पुष्प' - 'तामीर' - 'महजूर'-विशेषांक ,पृ० १० ।

२. 'फिरन' कश्मीर वासियों की विशेष वेशभूषा है । इसे सर्दियों में पहना जाता है ।

३. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

४. ~~'कश्मीरी भाषा और काव्य' तृतीय भाग – 'आज़ाद', पृ० १९३ ।~~
'साहित्यानुशीलन' – शिवदान सिंह चौहान – पृ० – ११७

थे कि कश्मीर की अधिकाश जनता गाँव में रहती है, अत: जब तक इन ग्राम-वासियों की आर्थिक एवं सामाजिक दशा का सुधार न होगा तब तक समस्त कश्मीर को अत्याचारियों के राजनीतिक हथकण्डों से छुड़ाना असम्भव है। ग्रामीण वातावरण की छाप उनके व्यक्तित्व पर स्पष्ट झलकती है। उनका सजीव, मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी प्रकृति-चित्रण भी इस तथ्य का स्पष्ट प्रमाण है।

विनोदप्रिय, निर्भीक एवं साहसी :

'महजूर' बड़े ही विनोद-प्रिय, निर्भीक एवं साहसी थे। वे बड़े स्पष्ट वक्ता थे। सच्ची बात मुँह पर कह डालते थे चाहे उसका परिणाम कुछ भी क्यों न हो। अपने पूज्य पिता से उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था- 'उस आय का क्या नाम है जो गरीबों का रक्त चूस कर एकत्र की गई हो। मैं ऐसी आय पर थूकता हूं।'[१] वे बड़े साहसी थे। इस बात का परिचय हमें तब मिलता है जब वे पिता की आज्ञा के विरुद्ध लद्दाख की यात्रा पर निकल पड़े और पैदल वहाँ जा पहुँचे। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था - 'पूर्ण स्वतंत्रता केवल सरकारी कर्मचारी के पद से अलग होकर मिल सकती है परन्तु जीवित रहने का और कोई उपाय नहीं। यह पद मेरी निजी आवश्यकताओं को पूरा करता है। मेरे मित्र मुझे नौकरी छोड़ने के लिए कहते हैं परन्तु मुझे भय है कि कहीं इससे मेरी आत्म-निर्भरता नष्ट न हो जाए। मेरा निजी मत है कि कवि जीविका के लिए न अधिक चिन्तित हो और न ही वह अधिक धनाढ्य हो। इस से उसके काव्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।'[२] उनकी निर्भीकता का ज्वलन्त उदाहरण उनका क्रान्तिकारी काव्य है। इसके अतिरिक्त

---

१. 'कश्मीरी भाषा और काव्य' तृतीय भाग - 'आज़ाद', पृ० १६३।
२. वही, पृष्ठ २१६-२०।

`महजूर` सत्यवादी थे । सचाई को वे जीवन का अमूल्य रत्न समझते थे । इसके लिए वेअपना सर्वस्व होम करने के लिए सदा तत्पर रहते थे । श्री शिवदान सिंह चौहान ने लिखा है – ` गुलाम अहमद `महजूर` काश्मीरी अत्यन्त सरल प्रकृति के, विनयशील, गम्भीर पर विनोदप्रिय व्यक्ति हैं । औसत क़द, गोरा रंग, छोटी पैनी आंखें, कटी छटी मूछें, अधपके बाल, हँसमुख चेहरा – इस सीधे-सादे व्यक्ति का केवल इतना ही वैशिष्ट्य है । अपने ऐतिहासिक महत्व के अहंकार का बोझ वे सिर पर लाद कर नहीं फिरते । जब वे प्रथम-बार मुझ से मिलने आये तो चन्द मिनटों में ही घनिष्ठ हो गये । मेरे प्रश्नों का उत्तर देते समय जब मुहम्मद गामी के पश्चात् कश्मीरी कविता में फ़ारसी शब्दों के बहुल प्रयोग का प्रसंग आया तो वे सरल भाव से कह गये, `इस सैलाब को रोकने के लिए कुदरत ने मुझ को पैदा किया ।` स्वर में दम्भ का लेश न था, बल्कि मुख पर विनम्रता कुछ और प्रकट हो गई थी । इस वक्तव्य में आत्म-श्लाघा न थी, केवल सत्य कथन था ।`[१]

संगीत-प्रेम :

कश्मीरी भाषा में रचनाएँ लिखकर `महजूर` की यह प्रबल इच्छा थी कि कोई उनके गीतों को संगीत की मधुर तान में गा सके ताकि जन-सामान्य पर इन का कुछ प्रभाव पड़े । हकीम गुलाम अहमद शाह[२] ने अमीराकदल के एक नवयुवक गुलाम मुहम्मद बट्ट का आपके साथ परिचय कराया । गुलाम मुहम्मद का कण्ठ मधुर था । `महजूर` ने इस नवयुवक का नाम महमूद शहरी रखा और राग रागनियों से इन्हें परिचित कराने लगे । महमूद शहरी के कण्ठ-माधुर्य से `महजूर` के गीतों में नवीन प्राणों का संचार हुआ और थोड़े ही दिनों में

---

१. `साहित्यानुशीलन` - शिवदानसिंह चौहान , पृ० १११ ।

२. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट १६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

उनकी लोकप्रियता अधिकाधिक बढ़ने लगी । प्रो० मुहम्मद युसूफ ने लिखा है- `संगीत एवं काव्य का जितना निकट सम्बन्ध `महजूर` की कविता में मिलता है वह संसार के कुछ ही महाकवियों के काव्य में पाया जाता है ।`[१] लोक-गीतों का प्रभाव भी उनके काव्य पर पड़ा है अत: लोक-संगीत की मधुर गूँज भी हमें उनके काव्य में मिलती है ।

मित्र मंडल एवं गार्हस्थ जीवन :

`महजूर` का गार्हस्थ जीवन संतोषजनक था । उनकी विधवा पत्नी अभी भी जीवित है और अपने एक मात्र पुत्र श्री मुहम्मद के साथ रहती है ।[२] श्री मुहम्मद अमीन आजकल अनुसन्धान-विभाग में कर्मचारी हैं । उन का अध्ययन अत्यन्त विस्तृत है एवं कश्मीरी भाषा तथा काव्य पर उन्होंने कुछ शोध-कार्य भी किया है ।

कवि `महजूर` बड़े मिलनसार थे । मित्रों के प्रति उनका व्यवहार बड़ा स्नेहपूर्ण होता था । वे मित्र-मण्डली में मस्त होकर व्यंग्य-विनोद करते थे ।[३] उनकी मैत्री केवल मात्र मौखिक नहीं थी । वे मित्रों के दु:ख में दु:खी एवं सुख में सुखी रहते थे । उनके मित्रों में स्वर्गीय `आज़ाद` , डा० पद्मनाथ गुंजू, मास्टरजी, स्वर्गीय `परदेसी`, श्री `आरिफ`, श्री शम्सुद्दीन `हैरत` विशेष उल्लेखनीय हैं ।

---

१. `महजूर की शायरी में अबदी अनासिर` (लेख) प्रो० मुहम्मद युसूफ-`तामीर` `महजूर-विशेषांक`, पृ० ६६ ।

२. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

३. He was both humorous and witty in his conversation among friends. Of course, he was a man who could be called one with a sense of humour.

डा० पद्मनाथ गुंजू से २८-५-१९६५ को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात ।

तह्सील पुलवामा में `महजूर` के एक अंतरंग मित्र ख्वाजा अकबर डार रहते थे।[१] श्रीनगर के अन्य मित्रों में मुफ्ती रशीद उद्दीन[२], हकीम अली[३], पण्डित रघुनाथ मट्टू[४], श्री गुलाम कादिर बेग[५] एवं मुहम्मद-उल-दीन फोक विशेष उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त आपकी मैत्री सब से अधिक घाटी के साधारण कृषकों के साथ थी जिनके जीवन के `महजूर` एक अभिन्न अंग बन गये थे। वे दरिद्र कृषकों के प्रति सबसे अधिक सहानुभूतिशील थे।

विशेष रुचि-पुस्तक संग्रह :

`महजूर` एक अध्ययनशील प्राणी थे। उन्हें अध्ययन एवं वाद-विवाद

---

१. `ख्वाजा अकबर डार `दूरबुगोम्` पुलवामा तह्सील में रहते थे। उन्होंने `महजूर` से कई बार कहा था कि सरकारी नौकरी छोड़कर आप केवल साहित्य-सेवा का पुनीत कार्य ही सम्पन्न करें, मैं अपनी आधी सम्पति आपको दूँगा। इसके अतिरिक्त वे हर समय `महजूर` से एक प्रश्न पूछते थे कि `आप को कहाँ दफन किया जाए`। कई बार `महजूर` ने इस प्रश्न को टाल दिया परन्तु डार साहब उनका पीछा ही नहीं छोड़ते। भाग्य की विडम्बना। वे सन् १९४४ में `महजूर` से पहले ही स्वर्गवासी हुए।`

- श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात।

२. अवकाश प्राप्त राजस्व-विभागके अधिकारी।

३. अवकाश प्राप्त निदेशक, रेशम-विभाग।

४. अवकाश प्राप्त डिप्टी कमिश्नर।

५. अवकाश प्राप्त रजिस्ट्रार क्वापरेटिव।

में विशेष रुचि थी । सभा गोष्ठियों में उनकी विद्वता का परिचय उनके तर्क-वितर्क के द्वारा लगता था । उन्होंने अपने पुस्तकालय में कई प्रकाशित एवं अप्रकाशित पाण्डुलिपियों को एकत्रित किया था । पुस्तकों के संग्रह करने में उन्हें विशेष आनन्द आता था । उनके पुस्तकालय में ४०० से अधिक प्रकाशित पुस्तकें एवं २०० से अधिक पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं[१] । कश्मीर के विषय में जो कुछ लिखा गया है वह सब उनके पास था और कुछ पुस्तकें अंग्रेज़ी[२] में भी थीं । संस्कृत भाषा की कुछ ऐसी पुस्तकें उनके पुस्तकालय में सुरक्षित हैं जो कि इस समय संसार में नहीं के बराबर मिलती हैं ।[३] भोज-पत्रों पर लिखी चार पाँच पुस्तकें भी उन्होंने सुरक्षित रखी थीं । फारसी भाषा की कुछ प्राचीनतम हस्तलिखित पुस्तकें भी उन्होंने एकत्रित की थीं जो कि उत्तरी भारत में कहीं भी नहीं पाई जाती हैं ।[४] ये पुस्तकें हिजरी सन् ६०६ (१२०६ ई०)

---

१. श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

२. 'अंग्रेज़ी का उन्हें बहुत कम ज्ञान था । जब उन्हें आवश्यकता पड़ती थी, मैं ही उन्हें अंग्रेज़ी पुस्तकें पढ़ कर सुनाता था । लारेंस महोदय द्वारा लिखित 'वैली आफ कश्मीर' मैंने कई बार उन्हें पढ़कर सुनाई थी ।'

- श्री अमीन से ज्ञात ।

३. ८वीं शताब्दी ई० में कश्मीर में संस्कृत के एक प्रसिद्ध विद्वान श्री उत्पल हुए हैं । उन्होंने स्वयं अपनी कई पुस्तकों पर टीकाएँ लिखी हैं जिनमें एक टीका-ग्रन्थ केवल मात्र 'महजूर' के पुस्तकालय में सुरक्षित है । ऐसा श्री अमीन का कथन है ।

- श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात ।

४. श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट ३१-५-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

में लिखी गयी हैं। इसके अतिरिक्त १४वीं एवं १५वीं शताब्दी के फारसी नुस्खे भी उनके पुस्तकालय में सुरक्षित हैं। कई आलोचकों का मत है कि 'महजूर' को संस्कृत का ज्ञान नहीं था परन्तु जिन अमूल्य संस्कृत पुस्तकों को उन्होंने एकत्रित किया है उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें संस्कृत का कुछ न कुछ ज्ञान अवश्य था और इस भाषा के साहित्यिक महत्व से वे पूर्ण परिचित थे। ३०० से अधिक प्राचीन सिक्के भी उन्होंने एकत्रित किए जो कि समय समय पर कश्मीर में पाए जाते थे।[१] कुछ कला कृतियाँ एवं प्राचीन चित्र भी उनके पुस्तकालय में मिलते हैं। महान साहित्यकारों के हस्ताक्षर भी उनके पास सुरक्षित थे। महमूद गामी एवं मकबूल शाह क्रातवारी के हस्ताक्षर उनके पास सुरक्षित थे। इतिहास सम्बन्धी कुछ पुस्तकें भी उनके पास थीं।[२]

आज पुस्तकालय की सारी पुस्तकें श्री अमीन के पास हैं। कश्मीर साहित्य अकादमी से इस विषय में उनका पत्र-व्यवहार चल रहा है, क्योंकि अनुसन्धान-विभाग उन सब पुस्तकों को अध्ययन एवं निरीक्षण के लिए अपने विभाग में रखना चाहता है। इधर श्री अमीन भारतीय साहित्य अकादमी से भी इस विषय में पत्र-व्यवहार कर रहे हैं। आशा है कि निकट भविष्य में यह अमूल्य शोध-विषयक सामग्री विद्वानों के सम्मुख आएगी।

स्वभाव :

'महजूर' का स्वभाव अत्यन्त सरल था। श्री शिवदानसिंह चौहान

---

१. श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट (३१-५-१९५२) द्वारा ज्ञात।

२. श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट (३१-५-१९५२) द्वारा ज्ञात।

ने लिखा है — 'निश्चय ही उनकी सरलता से मैं प्रभावित हुआ।'[१] छल-कपट से वे कोसों दूर थे। उनके जीवन में कृत्रिमता का लेशमात्र भी नहीं था। वे कृत्रिमता के घोर विरोधी थे। पीड़ितों, दलितों एवं दुखियों के प्रति वे सदा सहानुभूतिशील थे। वे सरल प्रकृति के, शुद्ध विचारों से युक्त एक भावुक प्राणी थे। श्री 'पुष्प' जी ने लिखा है — 'महजूर का व्यक्तित्व आकर्षक था। वे सदा प्रसन्न चित् रहते थे तथा नम्र एवं कोमल-हृदयी होने के साथ साथ सहानुभूतिशील प्राणी थे।'[२] अन्याय को सहन नहीं कर सकते थे यही कारण है ज्यों ज्यों डोगरा-राज्य की निर्दयता बढ़ती गयी त्यों त्यों उनका काव्य अधिक उग्र रूप धारण करता गया। 'महजूर' का व्यक्तित्व इतना महान था कि 'आज़ाद' जैसे उच्चकोटि के राष्ट्रीय कवि के व्यक्तित्व को उभरने का अवसर ही नहीं मिला।[३] जो कुछ उन्होंने अपनी आंखों से देखा, उसी को उन्होंने अपना काव्य-विषय बनाया। यही स्वाभाविकता उनके व्यक्तित्व की भी एक विशेषता थी। उनके व्यक्तित्व पर आध्यात्मिक शक्तियों का भी प्रभाव पड़ा है।

पत्रकार :

सन् १९४० में जब स्वर्गीय अब्दुल कलाम आज़ाद कश्मीर आए तो यहाँ की भाषा की अवनत अवस्था को देखकर वे खिन्न हुए। उस समय कश्मीरी में कोई पत्रिका नहीं थी। यहाँ के राष्ट्रीय नेताओं से उन्होंने पत्रिका प्रकाशित कराने के लिए कहा जिसे राजनीतिक आन्दोलन को आगे बढ़ाने में सहयोग मिले

---

१. 'साहित्यानुशीलन' - सौहान - पृ० १११
२. 'पुष्प' - 'महजूर', पृ० ६।
३. 'महजूर की कविता एवं व्यक्तित्व' (लेख) - अमीन कामिल - 'तामीर' 'महजूर-विशेषांक', पृ० ६६।

और कश्मीरी जनता जाग्रत हो। राजनीतिक नेताओं ने इस विषय में 'महजूर' से बात की और कुछ ही समय के पश्चात् उनके संरक्षण में साप्ताहिक पत्रिका 'गाश' प्रकाशित होने लगी।[१] तीन वर्ष तक यह पत्रिका चलती रही परन्तु द्वितीय महायुद्ध में कागज़ के अभाव के कारण यह बन्द हो गई। इस पत्रिका की कुछ लिपियाँ अनुसन्धान-पुस्तकालय में सुरक्षित हैं जिनके अध्ययन से तत्कालीन राजनीतिक, साहित्यिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का काफी ज्ञान प्राप्त होता है।

(इ) कृतित्व

फारसी एवं उर्दू काव्य :

मौलाना बिस्मिल एवं महाकवि शिबली की साहित्यिक गोष्ठियों में बैठ कर 'महजूर' ने सर्वप्रथम फारसी में काव्य लिखा। उन्होंने फारसी भाषा में ७० के आसपास कविताएँ लिखीं।[२] परन्तु ये कविताएँ कहीं भी पुस्तकाकार में प्रकाशित नहीं हुई हैं। इस विषय में श्री मुहम्मद अमीन ने एक भेंट में मुझे बताया – " ये कविताएँ कहीं भी पुस्तकाकार में प्रकाशित नहीं हुई हैं यद्यपि कहीं-कहीं पत्र-पत्रिकाओं में इन्हें स्थान मिला है। ये कविताएँ प्रगतिवादी विचारधारा से ओतप्रोत हैं और साथ ही इनमें कश्मीर का प्रकृति-चित्रण भी मिलता है।"[३] सन् १९१२ में श्री आफत लुधियानवी द्वारा आयोजित कवि-

---

१. श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (२६-५-१९६५)।
२. 'कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि' (लेख) श्री निवास लाहोटी - 'तामीर' - 'महजूर-विशेषांक', पृ० १८।
३. 'योजना' - मार्च १९६२ - 'महजूर- एक अध्ययन' सुश्री कृष्णा कौल, श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात। पृ० २२।

सम्मेलन में `महजूर` ने सर्वप्रथम अपनी उर्दू रचना पढ़ कर सुनाई । क्योंकि उस समय उन्हें यह अनुभव हुआ था कि देश में अब फारसी का स्थान उर्दू एवं अंग्रेज़ी ले रही है । फलत: उन्होंने भी उर्दू में लिखना आरम्भ किया । सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है – ` आरम्भ में यह फ़ारसी और उर्दू में कविता करते थे । फ़ारसी गीतों में `बेवसीला` और `गुल-ए-वीराना` प्रसिद्ध हैं । इनकी उर्दू कविताओं में `खताबे-मुसलिम-कश्मीर` और `मैं कौन हूं` प्रसिद्ध हैं ।`[१] उर्दू भाषा में `महजूर` ने कुछ सुन्दर गज़लें एवं गीत लिखे हैं । श्री `आज़ाद` ने लिखा है - `उस समय `महजूर` की उर्दू एवं फारसी रचनाएँ विदेशी पत्रों में छपती थीं । उनमें से कुछ रचनाएँ नष्ट हो गयीं । कुछ रचनाएँ प्रो० सत्यार्थी अपने साथ ले गये ।`[२] श्रीनगर के कवि-सम्मेलन में `महजूर` ने सर्वप्रथम जो उर्दू कविता पढ़ी थी उसकी कुछ पंक्तियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं –

`गिरी है जिस पर कल बिजली वह मेरा आशयाँ क्यों हो
दिल दरद आशना मेरा किसी का हमज़बान क्यों हो ,
अयां अंजाम हो जिसका वह मेरी दास्तान क्यों हो ।
न सोचा पहले क्या अंजाम होगा दिल के सौदों का -
दम हंगामा आराइ गम सौदोज़यान क्यों हो ।`[३]

इसी वर्ष होली के पवित्र त्योहार पर नवरोज़ एवं ईद के त्योहार पड़ते थे, आपने निशात बाग में बैठकर एक गज़ल यों लिखी -

---

'योजना' — मार्च १९६२ — 'महजूर - एक अध्ययन' - सुश्री कृष्णा कौल - पृ० २२

१. ~~`महजूर का व्यक्तित्व एवं काव्य` (लेख) श्री अमीन कामिल — `तामीर` `महजूर-अंक` , पृ० २२ ।~~

२. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` - तृतीय भाग - `आज़ाद` , पृ० २१६ ।

३. वही ।

अब के आया मोसिम गुल लेके पैगाम-ए-निशात
ईद है, नवरोज़ है, होली है अंजाम-ए-निशात । [१]

कश्मीरी-काव्य :

'महजूर' ने अपनी कश्मीरी रचनाएँ तीन शीर्षकों के अन्तर्गत प्रकाशित कीं - (१) कलाम-ए-महजूर, (२) पयाम-ए-महजूर, (३) सलाम-ए-महजूर। सन् १६२६ तक 'महजूर' ने कश्मीरी भाषा में केवलमात्र दो गज़लें लिखी थीं, परन्तु फिर सन् १६५१ तक नियमित रूप से कश्मीरी भाषा की सेवा में ही रत रहे। उन्होंने कश्मीरी भाषा में गीत और गज़ल दोनों लिखे हैं और साथ साथ समय आने पर प्रकाशित भी करवाते रहे। रचनाओं को प्रकाशित कराने का केवल मात्र उद्देश्य यही था कि जन-समुदाय की अज्ञान की निद्रा भंग हो जाए। धन-प्राप्ति या यश-प्राप्ति का मोह उनमें लेशमात्र भी नहीं था।[२] श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है - "Mahjoor's works have been published under two titles[3] - (1) Payam - i - Mahjur (in six parts) and Kalam-i-Mahjur (in nine parts)[4]. There is hardly

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - तृतीय भाग - 'आज़ाद', पृ० २१६।
२. 'आरम्भ में उन्हें इस बात का बिल्कुल भी ज्ञान न था कि कविताओं से धन भी कमाया जा सकता है। उन्होंने कभी इस दृष्टिकोण से कविताओं को प्रकाशित नहीं करवाया।'
- श्री अमीन से प्रत्यक्ष भेंट ३०-५-१६६५ द्वारा ज्ञात।
३. कुछ समय के पश्चात् 'सलाम-ए-महजूर' शीर्षक के अन्तर्गत एक पुस्तिका प्रकाशित हुई है।
४. अब इसके ११ भाग प्रकाशित हुए हैं।

any home in valley where his songs are not sung. He is equally popular among Hindus and Muslims, young and old, men and women. More than a lakh copies of his booklets have been sold and the demand is still there.[1]

कलाम-ए-महजूर :

`कलाम-ए-महजूर` के अन्तर्गत उन्होंने ११ पुस्तिकाएँ प्रकाशित कीं । यह पुस्तिकाएँ फारसी एवं देवनागरी दोनों लिपियों में प्रकाशित हुई थीं । इन पुस्तिकाओं में विभिन्न प्रकार की रचनाएँ पाई जाती हैं । (१) शृंगार-परक रचनाएँ - जिन में संयोग एवं वियोग दोनों प्रकार की कविताएँ सम्मिलित हैं । (२) प्रकृति चित्रण सम्बन्धी रचनाएँ , (३) कश्मीर के सौन्दर्य-वर्णन सम्बन्धी रचनाएँ, (४) किसान बालिका के सम्बन्ध में रचनाएँ एवं मुगल बागों से सम्बन्धित रचनाएँ - इन पुस्तिकाओं में मिलती हैं । इन सब कविताओं का अध्ययन हम अगले पृष्ठों में सम्यक् रूप से करेंगे । यहाँ परिचय मात्र देना ही काफी होगा । कश्मीरी भाषा का एक सुनिश्चित एवं विकसित तथा उन्नत रूप हमें इन रचनाओं में मिलता है ।

पयाम-ए-महजूर :

`पयाम-ए-महजूर` शीर्षक के अन्तर्गत उन्होंने छः पुस्तिकाएँ प्रकाशित करवाईं । इस शीर्षक के अन्तर्गत उन्होंने देश-प्रेम सम्बन्धी गीत, राष्ट्रीय गीत, क्रान्तिकारी गीत, गुल (पुष्प) और बुलबुल के माध्यम से संकेतात्मक गीत एवं

---

१. "Struggle for Freedom in Kashmir" - By P.N. Bazaz, Page(297-298).

देशवासियों की करुण दशा चित्रित करने वाले गीत रखे हैं। इन गीतों में उनकी देश-भक्ति स्पष्ट झलकती है। कश्मीरी जनता को नवीनपथ की ओर अग्रसर करने में इन कविताओं का विशेष स्थान है।

सलाम-ए-महजूर

`सलाम-ए-महजूर` पुस्तिका महजूर ने सन् १९४८ में प्रकाशित करवाई। इसमें भक्तिपरक एवं आध्यात्मिक कविताएँ संग्रहीत हैं। आदरणीय शेख नूर-उल-दीन एवं सैयद मुहम्मद आली साहब पखरपोरा[१] के प्रति दो श्रद्धापूर्ण रचनाएँ इसमें मिलती हैं।

`महजूर` लेखपाल थे। इस कार्य में वे पूर्ण दक्ष थे। उन्होंने `लेख-पाल` एक पुस्तक उर्दू भाषा में लिखी और प्रकाशित करवाई जिसमें लेखपाल के लिए आवश्यक तत्वों को सरल तथा सुबोध भाषा में लिखा गया है। अपने जीवन अनुभव के आधार पर लिखी हुई इस पुस्तक में `महजूर` को विशेष सफलता है। इस पुस्तक की भाषा परिमार्जित, सुव्यवस्थित एवं बोध-गम्य है। उनकी सरल प्रकृति एवं स्पष्टवादिता की छाप इस पुस्तक पर सर्वत्र दिखाई देती है। कहीं कहीं इसमें व्यंग्यात्मक भाषा का भी प्रयोग किया गया है।

अप्रकाशित रचनाएँ - गद्य एवं पद्य :

इन पुस्तिकाओं के अतिरिक्त `महजूर` की अनेक स्फुट रचनाएँ अप्रकाशित हैं – विशेषकर उर्दू एवं फारसी में। इनमें से तो कुछ नष्ट हो गई और कुछ उनके सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन के पास सुरक्षित हैं। `महजूर` ने `कश्मीरी कवियों का इतिहास` नामक ग्रन्थ भी लिखा है परन्तु इसको वे पूरा नहीं कर सके। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है – `उन्होंने उर्दू में प्रारम्भ से

---

१. कश्मीर के दो माने हुए कृषि।

लेकर अब तक के कवियों का इतिहास 'तवारीख-ए-शोरार काश्मीर' भी लिखा है। यह ग्रन्थ लगभग ३००० पृष्ठों का है, आठ सौ वर्षों का इतिहास है। सभी हिन्दू-मुस्लिम कवियों की जीवनी, उनका कलाम, उनपर तनकीद आदि इसमें दी गई है। डा० इकबाल ने भी इसके कई भाग देखे थे। अभी तक यह ग्रन्थ अप्रकाशित पड़ा है।[१] इस ग्रन्थ के विषय में कुछ आवश्यक तथ्य मुझे श्री मुहम्मद अमीन ने अपनी एक भेंट में बताये। उनकी अप्रकाशित कश्मीरी कविताएं पाँच आठ से अधिक नहीं। सन् १९५१ में उन्होंने अपनी अन्तिम कश्मीरी कविता लिखी जो कि अप्रकाशित है।

काव्य लिखने की इच्छा उन्हें हर समय होती थी परन्तु सरकारी कर्मचारी के नाते समय बहुत कम मिलता था और अपनी वृद्धावस्था के कारण वे अन्तिम वर्षों में बहुत कम लिख सके। वास्तव में 'महजूर' की कहानी कश्मीर के स्वतंत्रता संग्राम की कहानी है। 'महजूर' का जीवन संघर्षों में व्यतीत हुआ। जीविका-प्राप्ति के लिए उन्हें देश के कोने कोने में घूमना पड़ा। जीवन के स्कूल में उन्होंने काफी शिक्षा ग्रहण की थी। उन्हें जीवन का गहरा अनुभव था और उसी अनुभव के आधार पर वे कविता लिखते थे।

---

१. 'यह ग्रन्थ मेरे पूज्य पिताजी ने सन् १९१९ में लिखना आरम्भ किया। परन्तु यह इतिहास कश्मीर के फारसी कवियों के सम्बन्ध में है। यद्यपि आरम्भ में भूमिका-स्वरूप प्राचीन कवियों का भी परिचय मिलता है। श्री अब्दुल अहद 'आज़ाद' 'महजूर' एवं उनके काव्य पर एक ग्रन्थ लिखना चाहते थे, परन्तु 'महजूर' ने उन्हें कश्मीर के कश्मीरी कवियों के विषय में इतिहास लिखने के लिए प्रेरित किया। वही इतिहास आज तीन भागों में उपलब्ध है। 'महजूर' ने अपने इतिहास में ३०० से अधिक कवियों का आलोचनात्मक परिचय दिया है। भाग्य की विडम्बना। इस ग्रन्थ को वे पूरा न कर सके।
- श्री मुहम्मद अमीन से प्रत्यक्ष भेंट २६-५-१९६५ द्वारा ज्ञात।

बालकृष्ण शर्मा `नवीन` - जीवन-परिचय

पौराणिक समुद्र-मंथन के बाद भी भारत में कई समुद्र-मंथन हुए। हमारे युग में, बीसवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में भी यह कल्प घटित हुआ, जो अनवरत पच्चीस-तीस वर्षों तक चलता रहा। सदियों के दुर्दमनीय दमन से हीन-वीर्य परवशता का विष जब फेनिल आवेश के साथ उमड़ा तो नवीन नीलकंठ का आवरण हुआ, गांधी के रूप में। इस नीलकंठ के गणों के हिस्से में भी हलाहल की कुछ बूंदें पड़ीं, जिन्हें वे प्रसाद समझ कर पी गए, जिससे भावी पीढ़ियों के लिए सुधा सुरक्षित रह सके। पं० बालकृष्ण शर्मा `नवीन` उस दुर्धर्ष नीलकंठ के प्रमुख विषपायी गणों में से एक थे।[१] भारतीय स्वतंत्रता संग्राम एवं आधुनिक हिन्दी-साहित्य के इतिहास का अध्ययन करते समय हम 'नवीन' जी की अमूल्य देश-सेवाओं से परिचित होते हैं। जितना कार्य उन्होंने राजनीतिक क्षेत्र में किया उससे कहीं अधिक प्रशंसनीय एवं प्रौढ़ काम उनकी लेखनी ने साहित्यिक क्षेत्र में कर दिखाया।

जन्म एवं माता-पिता :

मालवा भारत का एक प्रसिद्ध प्रदेश है। प्राचीन समय से आजतक अनेक साहित्यकार यहाँ उत्पन्न हुए जिन्होंने यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य के गीत मुक्त-कण्ठ से गाए। श्री प्रभाकर माचवे ने लिखा है - `डग-डग रोटी, पग-पग नीर` वाला मालवा (मध्य भारत) कालिदास के ज़माने से आजतक साहित्यिक प्रतिभाओं की बड़ी सरस उपजाऊ भूमि रही है। इसी भूमि से पुष्पदन्त जैसे अपभ्रंश कवि मिले। आधुनिक काल में मराठी कवि तांबे, स्व० रमाशंकर शुक्ल `हृदय` इसी भूमि के रत्न थे। हिन्दी काव्य-क्षेत्र को इसी

---

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - २० मई, १९६२, पृ० ८ - (लेख) - पण्डित बालकृष्ण शर्मा `नवीन` लेखक - डा० शिवमंगलसिंह `सुमन`।

भूमि के कई कवियों ने सींचा है - - - - इन सब में अन्य हैं 'नवीन-जी'।[१] मालवा का ही एक छोटा-सा गाँव है - भयाना जो कि भूतपूर्व ग्वालियार राज्य के शुजालपुर परगने में स्थित है।[२] 'नवीन' जी का जन्म विक्रम सं० १९५४ मार्ग शीर्ष-पूर्णिमा तदनुसार (८ दिसम्बर, १८९७ई०) के दिन भयाना गाँव में हुआ था। स्वयं 'नवीन'जी ने लिखा है - " मेरा जन्म ग्वालियार राज्य के शुजालपुर नामक परगने के भयाना नामक गाँव में हुआ था।[३] अब यह मध्य प्रदेश राज्य के अन्तर्गत है।[४] अपने जन्म दिन के विषय में '४६ वें वसन्त के दिन " नामक कविता में 'नवीन' जी ने लिखा है :-

मार्ग शीर्ष की सेन पूर्णिमा को जीवन में आया ,
किन्तु रही जीवनभर मेरे संग-संगतम की छाया ।
अब तो अरुणाभा फैला दो, हरो तमिस्रा-माया,
निज स्मयमान वदन-किरणों से तिमिर-निकन्दन कर दो,
प्रियतम, आज यही बस वर दो।[५]

आपके पिता पण्डित जमनादास शर्मा वल्लभ सम्प्रदाय के कट्टर अनुयायी, पक्के वैष्णव और 'भोजनाच्छादने-चिन्ता वृथा कुर्वन्ति वैष्णवा:'[६] मंत्र के कट्टर उपासक थे। स्वर्गीय जमनादास साधारण पढ़े लिखे थे परन्तु

---

१. 'व्यक्ति और वांग्मय' - प्रभाकर माचवे - लेख ('नवीन') , पृ० ९९ ।
२. 'नवीन' और उनका काव्य'- जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १ ।
३. 'नर्मदा' नवीन विशेषांक १९६३ - 'मेरे जीवन की कहानी' - 'नवीन', पृ० ४९ ।
४. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य, डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, पृ० ३९ ।
५. 'अपलक' (काव्य संग्रह 'नवीन'), पृ० १६-१७ ।
६. 'रेखाचित्र' - श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० १९८ ।

जीवन का अनुभव उन्हें काफी था । साधु-संन्यासियों के सत्संग में बैठ कर उन्होंने बहुत-सी ज्ञान की बातें ग्रहण की थीं । वल्लभ सम्प्रदाय पर उनका अडिग विश्वास था । छलकपट से कोसों दूर भागते थे एवं सदा भगवद् भजन में लीन अपने विश्वासों पर अटल रहते थे । भागवत एवं भगवद् गीता का भी उन्हें सम्यक् ज्ञान था ।[१] उनकी इस धर्म-परायणता का प्रभाव उनके एक-मात्र पुत्र पर पड़ा । 'नवीन' जी की माता श्रीमती राधाबाई भगवद्-भक्त एवं गुण-सम्पन्न नारी थी जिन्होंने अपनी साधुता एवं सच्चरित्रता की छाप अपने बालक पर छोड़ दी । कवि-माता भी अपने पति के समान सगुणोपासिका थी एवं धर्म का पालन नियमित रूप से करती थी । डा० लक्ष्मी सागर दुबे ने लिखा है - 'नवीन' जी की माता अत्यन्त स्नेहमयी, पतिव्रता, पवित्र आचरण वाली एवं धर्मनिष्ठ महिला थीं । वे छूत छात का बहुत अधिक विचार करती थीं । शुजालपुर आने पर वे 'नवीन' जी को गो-मूत्र छिड़क कर, पवित्र करके, फिर चरण-स्पर्श करने देती थीं । वे रसोई को देखने भी नहीं देती थीं । वे नल का पानी नहीं पीती थीं ।[२]

यह परिवार अत्यन्त गरीब था और दरिद्रता ने अपना विकराल रूप इसी घर में फैलाया था । स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है - 'मेरी माता कहा करती हैं कि गायों के बांधने का एक बाड़ा मेरे ताऊजी के घर में था । उसी में अपने राम ने जन्म लिया । वहाँ गायों ने कितने ही बछड़ों को जन्म दिया होगा । मेरी जननी ने उसी गोशाला में मुझे भी जना ।[३] जिस परिवार में बच्चा एक चम्मच दुध के लिए तड़प तड़प कर सो जाए, जहाँ तन ढांपने के लिए

---

१. 'नर्मदा' 'नवीन विशेषांक' (लेख)- 'नवीन जी के पूर्वज तथा पिता', पृ०७५।
२. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य , डा० दुबे , पृ० ८० ।
३. 'मैं इन से मिला' (दूसरी किस्त) - श्री पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश', पृ०४२।

गज़ भर कपड़ा प्राप्य न हो, जहाँ पुत्र का जन्म गोशाला में हो, उस परिवार की आर्थिक दशा कितनी दयनीय थी - यह अनुमान लगाना अधिक कठिन न होगा। स्वयं 'नवीन' जी के शब्दों में - " मेरे मातापिता बहुत गरीब थे - नि: साधन, किन्तु भगवद् भक्त ब्राह्मण। अत: जन्म के वक्त सिवा थाली बजने के और कुछ धूमधाम न हुई। गाँव का सादा जीवन, गरीबी और अर्था-भाव, ये मेरे चिर परिचित मित्र हैं।"[१] माँ घंटों चक्की पीस कर अपने पुत्र के लिए एक प्याली दूध का प्रबन्ध करती थी। कितना परम साहस एवं दृढ़ निश्चय उस माँ में थे जिस ने अपने पसीने की कमाई से अपने हृदय के टुकड़े को पाला। बच्चे का रोना और तड़पना उससे सहा न जाता था। माँ का असहाय प्यार शक्ति बन हाथों में उभर आता और घंटों चक्की पीस कर अर्जित पैसों से बालक के लिए दूध जुटाता।[२] श्री मन्मथनाथ गुप्त ने लिखा है - "उन्होंने अपने परि-वार के सम्बन्ध में बहुत थोड़े में लिखा है जो 'साहित्यकारों की आत्म-कथा' नामक पुस्तक में मिल सकता है। उस में उन्होंने अपने परिवार का जो चित्रण किया है, वह बहुत कुछ चन्द्रशेखर आज़ाद के परिवार से मिलता है।"[३]

नवजात शिशु का नाम माता-पिता ने बालकृष्ण रखा। सम्भवत: गोशाला में उत्पन्न होने के कारण उनका नाम बालकृष्ण रखा गया होगा।[४] परन्तु यह भी सम्भव है कि श्रीमद् वल्लभाचार्य के वैष्णव-सम्प्रदाय के अनुयायी होने के कारण पिता ने उनका नाम बालकृष्ण रखा हो।

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' 'नवीन'-विशेषांक (३ जुलाई, १९६०), पृ०५, 'मेरे जीवन की कहानी' - 'नवीन'।

२. 'नवीन'-दर्शन - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० १।

३. 'कृति' मई १९६०, 'नवीन श्रद्धांजलि परिशिष्ट', पृ० ६७।

४. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० ४०।

बाल्यकाल :

आरम्भ से ही माँ अपने बच्चे को श्री कृष्ण के बाल्यकाल एवं जसोदा के वात्सल्य वर्णन की हृदय-आकर्षक कहानियाँ सुनाती थीं । इस प्रकार वैष्णवभक्ति की ओर बालक का मन प्रवृत्त हो गया । स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है – " जब मुझे कुछ होश हुआ तब, मुझे इतना याद पड़ता है, मैं कोई साढ़े तीन वर्ष का रहा हूँगा - मेरी माता मुझे गोद में लिटाकर, मीठे-मीठे विहाग के स्वरों में अष्टछाप के पदों को गाकर मुझे लोरियाँ सुनाती और सुलाया करती थी । लोरी के एक पद की कड़ी मुझे अभी तक याद है और याद है अपनी माँ का वह वात्सल्य और कम्पित कंठ स्वर । माँ गाती थी -

"पौढ़ि रहो घनश्याम बलैयां ले हौं, पौढ़ि रहो घनश्याम ।
अति श्रम भयो बन गौवें चरावत , घोंस परत है घाम ।
बलैयां ले हौं, पौढ़ि रहो घनश्याम ।"[१]

माँ अपने पुत्र का विशेष ध्यान रखती थी क्योंकि पिता को पूजा पाठ एवं भगवद्भक्ति से अवकाश ही नहीं मिलता था । अत: गार्हस्थ जीवन की अनेक कठिनाइयों का सामना भी माँ को ही करना पड़ता था । चार पाँच वर्ष का बालक गाँव के अन्य समव्यस्क बालकों के साथ खेतों की मेड़ों पर एवं नदी के किनारे खेला करता था । गाँव की स्वच्छन्द प्रकृति एवं मस्त वातावरण का 'नवीन' जी पर प्रभाव पड़ा और अन्त में स्वच्छन्दता एवं मस्ती उनके व्यक्तित्व में देखने को मिलती है । कुछ समय के पश्चात् उनके पिता जी

---

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ३ जुलाई १९६० , पृ० ५ ।

नाथद्वारे[१] में पुरोहित का कार्य करने के लिए चले गए। माँ के साथ बालक भी वहाँ चला गया और तीन वर्ष तक वहीं रहा। यहाँ शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था। इसके पश्चात् ग्यारह वर्ष की आयु में बालकृष्ण की शिक्षा का क्रम आरम्भ हुआ।[२] इससे पहले तीन वर्ष वे नाथ द्वारे में रहे अत: यह बात स्पष्ट होती है कि लगभग आठ वर्ष की आयु में सन् १९०५ के आसपास उनके पिता नाथद्वारे आए थे। नाथद्वारेमें बिताए जीवन के विषय में उन्होंने स्वयं लिखा है – 'नाथद्वारे की गलियों और मन्दिरों के विशाल प्रांगणों में मैं काफी दिनों तक 'धमाचौकड़ी' मचाता रहा।'[३] अंत में जब उनकी माँ ने देखा कि यहाँ बच्चे के लिए शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं है तो अपने पति से सम्मति लेकर वे बालक को शाजापुर लायीं और यहाँ नियमित रूप से बालक बालकृष्ण की शिक्षा एक अंग्रेज़ी मिडल स्कूल में आरम्भ हुई। यहाँ से बाल-कृष्ण के जीवन का एक नवीन अध्याय आरम्भ हुआ। स्कूल में शिक्षा पाने के साथ साथ बालकृष्ण की माँ[४] उन्हें स्वयं भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता से परिचित कराती थी एवं धर्म ग्रन्थों की शिक्षा भी देती थी। स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है – 'नाथद्वारे में मैं काफी दिनों रहा, लेकिन वहाँ पढ़ाई का कोई प्रबन्ध नहीं था। इसलिए मेरी दूरदर्शिनी माताजी ने पिताजी से कहा कि यहाँ लड़का आवारा हो जाएगा और वे मुझे लेकर ग्वालियार

---

१. नाथद्वारा प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर उदयपुर के नाथद्वारा स्टेशन से पश्चिम में आरावली की पर्वत शृंखला के मध्य अवस्थित पुष्टिमार्ग का आकर्षण केन्द्र और राजस्थान का किरीट-मणि है।

– 'नर्मदा' – 'नवीन' – विशेषांक, पृ० ६१.

२. 'व्यक्ति और वांग्मय' – प्रभाकर माचवे, पृ० १११।

३. 'मैं इन से मिला' दूसरी किस्त – 'कमलेश', पृ० ४३।

४. कवि माता को गुजराती भाषा के 'वल्लभाख्यान' और हिन्दी के भ्रमर-गीत, रस पंचाध्यायी आदि कंठस्थ थे।'

– 'नवीन': व्यक्ति और काव्य – डा० दुबे, पृ०८१.

राज्य के शाजापुर नामक कस्बे में चली आईं।'[१]

आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा :

शाजापुर आकर 'नवीन' जी की माता की यह परम इच्छा थी कि उनका एकमात्र पुत्र विद्या सम्पन्न हो। जिस माता ने बचपन में लोरियाँ सुनायीं उसी ने बालकृष्ण के लिए सरस्वती की साधना का साधन भी जुटाया।[२] शाजापुर में उन्हें अपने पूज्य पिता के एक मित्र सेठ भगवानदास जी फलानी के परिवार का आश्रय मिला। सेठ जी के तीन पुत्र सर्वश्री जमनादास फलानी, दामोदरदास फलानी एवं गोपालदास फलानी का 'नवीन' जी के आरम्भिक जीवन पर काफी प्रभाव पड़ा। श्री दामोदर फलानी ने तो विशेषरूप से 'नवीन' जी की शिक्षा दीक्षा का भार अपने ऊपर लिया था। इस विषय में 'नवीन' जी ने स्वयं लिखा है – 'मेरे परम सौभाग्य से मुझे यहाँ मेरे पिता के पुरातन मित्र सेठ भगवानदास जी फलानी के परिवार का आश्रय मिल गया। उनके पुत्र दामोदरदास जी फलानी की मुझ पर विशेष कृपा रही है। इन्हीं की वत्सलता से मैं पढ़-लिख सका। वे मेरे कौमार्य जीवन के सखा, मार्ग-दर्शक और तत्व दीपक रहे।'[३]

यहाँ बालकृष्ण जी साहस एवं उत्साह के साथ अध्ययन में व्यस्त रहे। यद्यपि उन्हें फलानी परिवार की ओर से काफी सहायता मिली परन्तु फिर भी उन्हें आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। यहीं से अंग्रेज़ी

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' 'नवीन' विशेषांक, पृ० ५।
२. 'कल्पना' पत्रिका - सितम्बर १९६० -(लेख) 'हुतात्मा' लेखक शान्तिप्रिय द्विवेदी।
३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', ३ जुलाई १९६०, पृ० ५।

मिडिल परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात् हाई स्कूल की शिक्षा के लिए वे उज्जैन चले आये और यहाँ पर माधव कालेज नामक शिक्षा संस्था में उनकी शिक्षा होने लगी । यहाँ पर बालकृष्ण को दो मित्र मिले – 'सन्तू'[१] एवं 'छोटे'[२] । परन्तु दोनों की मृत्यु युवावस्था में ही हुई । अपने प्राण-प्रिय मित्रों के असमय देहान्त से बालकृष्ण का हृदय विह्वल हो उठा । उन्हें जीवन की निस्सारता का भान हुआ । स्वयं उन्होंने लिखा है – 'मेरे यह दोनों मित्र मुझे दगा दे कर चले गए । दोनों बड़े मेधावी थे । बड़े तेज़, बड़े सूझ-बूझ वाले और बहुत स्नेही। सन्तू को प्लेग ने खा लिया । उसे बुखार आया। उसके घर वाले वहाँ नहीं थे । मैंने दिन-रात लगा कर सेवा की, पर बचाने की सब कोशिशें बेकार हुईं । सन्तू चल दिया । उस की मृत्यु से मेरे जीवन में एक रिक्ति हो गई, वह नहीं भरी । 'छोटे' सन् १९१८ के युद्ध-ज्वर का ग्रास बना । उस समय मैं कानपुर में था । जब उसकी मृत्यु की सूचना मिली , तब मैं एकान्त में गंगा तट पर जाकर खूब रोया' ।[३] 'नवीन'जी ने अपने दोनों मित्रों की स्मृति में दो कहानियाँ लिख डाली जिनका विवेचन हम अगले पृष्ठों पर करेंगे । सन् १९१७ में इसी कालेज से उन्होंने एन्ट्रेंस की परीक्षा पास की । 'नवीन'जी के स्कूली जीवन के विषय में श्री प्रभाकर माचवे ने लिखा है – 'नवीन जी स्कूली विधार्थी के नाते बड़े नटखट, शरारती और मेधावी व्यक्ति थे, ऐसा मुझे पता चला है ।'[४]

---

१. खंडवा के 'स्वराज्य' के सम्पादक पण्डित सिद्धनाथ जी के छोटे भाई जिनका प्यार का नाम 'सन्तू' था ।

२. ग्वालियार राज्य के प्रसिद्ध पुस्तक-व्यवसायी एवं स्कूलों के इन्स्पेक्टर स्वर्गीय मुंशी चतुर बिहारीलाल के सुपुत्र भाई हरिशरण, जिन्हें बालकृष्ण उन के घरेलू नाम 'छोटे' लेकर पुकारते थे ।

३. 'साहित्यकारों की आत्मकथा' - सम्पा० देवव्रत शास्त्री, पृ० ९१-९२ ।

४. 'व्यक्ति और वांग्मय' - प्रभाकर माचवे -(लेख)- 'नवीन', पृ० १११ ।

लखनऊ-कांग्रेस एवं गणेशशंकर विद्यार्थी :

सन् १९१६ 'नवीन' जी के जीवन में एक महत्वपूर्ण वर्ष था।[१] लखनऊ-कांग्रेस में सम्मिलित होने के लिए जब 'नवीन' जी लखनऊ गए तो उन का परिचय सर्वश्री माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त एवं गणेश शंकर विद्यार्थी से हुआ। बम्बई में लोकमान्य तिलक ने एक प्रभावशाली भाषण दिया जिस में उन्होंने सामान्य भारतीय जनता को लखनऊ के वार्षिक अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित किया। उनके भाषण के कुछ अंश 'प्रताप' में प्रकाशित हुए और बालकृष्ण ने उन सबको पढ़ा। लखनऊ-कांग्रेस में सम्मिलित होने की दृढ़ इच्छा उन्हें हुई परन्तु आर्थिक कठिनाइयाँ उन का मार्ग रोके खड़ी थी। बालक के हृदय में उथल पुथल मच गई। अन्त में अपने मित्रों से कुछ रुपए उधार लेकर नंगे पैर यह विद्यार्थी कांग्रेस देखने चला गया। दिसम्बर की ठिठुरन और भयंकर शीत 'नवीन' के उत्साह को कम न कर सके।[२] लखनऊ कांग्रेस उनके राष्ट्रीय जीवन का बीज रूप थी। राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए सर्वस्व होम करने की दृढ़-प्रतिज्ञा उन्होंने यहीं पर की थी। शताब्दियों से दासता की जंजीरों में जकड़ी भारतीय जनता का पुनोंद्धार करने के लिए 'नवीन' जी तत्पर हुए।

राष्ट्र नेता तिलक के आह्वान पर अनेकों नवयुवक कांग्रेस में सम्मिलित होने के लिए लखनऊ आ रहे थे। रेल के डिब्बे में एक सज्जन[३] इस दीन हीन

---

१. 'सन् १९१६ में, जब मैं दसवें दर्जे में था, एक ऐसा योग आया, जिसके कारण मेरा समूचा जीवन बदल सा गया।'

- 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक, पृ० ५१.

२. 'नवीन'-दर्शन - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० २।

३. 'मुझे वे सन् १९१६ में रेल के एक डिब्बे में दिसम्बर महीने में लखनऊ कांग्रेस जाते समय मिले थे।' - 'सरस्वती' - जून १९६०, पृ० ३७९ - (लेख) 'त्याग का दूसरा नाम - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - श्री माखनलाल चतुर्वेदी।

विद्यार्थी के उत्साह एवं राष्ट्र-प्रेम से अत्यधिक प्रभावित हुआ और लखनऊ पहुँचने पर इसे अपने साथ ठहराया।[१] अपने अपरिचित हितैषी से बालकृष्ण ने परिचय पूछा और उत्तर मिला - माखनलाल चतुर्वेदी, प्रभा कार्यालय, खंडवा। इसके पश्चात् चतुर्वेदी जी ने ही बालकृष्ण का परिचय गणेश जी से कराया। 'प्रताप' के यशस्वी सम्पादक का नाम सुनते ही बालकृष्ण के हृदय में उनके दर्शन की तीव्र लालसा जाग्रत हुई थी। उस समय भी बालकृष्ण 'प्रताप' के ग्राहक थे।[२] अत: गणेश जी की राष्ट्रीय-सेवाओं से भलीभांति परिचित थे। लखनऊ पहुँचने पर वे चतुर्वेदी जी के साथ गणेश जी से मिलने के लिए गए। अपने मन में गणेश जी का जो चित्र 'नवीन' जी ने खींचा था बिल्कुल उसके विरुद्ध उन्हें वहाँ देखने को मिला। स्वयं उन्होंने लिखा है - " मैंने अपने मन में 'प्रताप सम्पादक' की एक तस्वीर बना रखी थी। उनके लेख पढ़ कर वह तस्वीर बनाई थी। सोचा था - छ: साढ़े छ: फुटा जबान होगा। विशाल साफा बांधता होगा। हाथ में एक भारी लठ लिए रहता होगा। मुंछें महाराणा प्रताप की तरह ऐंठी हुई होंगी। - - - - - - नाम के आगे विद्यार्थी देखकर यह अनुमान कर लिया था कि गणेशशंकर वाकई में स्टूडेंट होगा और बी० ए० के बाद एम० ए० क्लास में पढ़ता होगा। यह थी मेरे मन में गणेश जी की तस्वीर। - - - - - - गणेश जी निकले निहायत ही, मंझले या ठिगने कद के दुबले-पतले युवक।[३] सम्पूर्ण राजसत्व को चुनौती देने वाले विद्यार्थी जी के सम्मुख बालकृष्ण नत-मस्तक हुए। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है - " श्री गणेशशंकर जी विद्यार्थी गृहस्थी वेश में रहते हुए भी सच्चे रूप में चिताभस्म से अपने आप को

---

१. 'श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का निधन' - श्री वेंकटेश नारायण तिवारी, 'सरस्वती' जून १९६० , पृ० ३८५।

२. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक, पृ० ५२।

३. 'साप्ताहिक-हिन्दुस्तान', ३ जुलाई १९६० , पृ० ६।

अलंकृत कर चुके थे । वे अपने मंडल के रुद्र थे । जटाएं बिखरा कर खड़े हुए तापस के समान वे हिमालय के समान ऊंचे व्यक्तित्व से अनेकों को अपनी ओर खींच रहे थे । 'नवीन' जी उनके प्रदक्षिण आवर्त में खिंच आए और जो उन्होंने एक बार उस दिगम्बर यतिमण्डल में दीक्षा ली तो कालिदास के शब्दों में जन्म पर्यन्त 'अकिंचनुत्वं मखजेव्यनक्ति' के रूप बन गए ।[१]

'नवीन' जी लखनऊ कांग्रेस देखने के बहुत इच्छुक थे परन्तु उनके पास कोई टिकट नहीं था । दर्शकों का टिकट आकाश-कुसुम होने लगा था ।[२] अन्त में गणेश जी ने दस रुपए का टिकट उन्हें दिया और तब वे कांग्रेस अच्छी प्रकार देख पाए । यहीं पर बालकृष्ण का परिचय गुप्त जी से हुआ । लखनऊ कांग्रेस की समाप्ति पर 'नवीन' जी एवं विद्यार्थी जी की आपस में कुछ घनिष्ठता हुई । जाते समय वे जब गणेश जी से विदा लेने गए तब उन्हें 'नवीन' जी की वास्तविक स्थिति का ज्ञान हुआ और उनकी देश-भक्ति पर गणेश जी आकृष्ट हुए । गणेश जी युवक विद्यार्थियों को सदैव ही सहायता एवं प्रोत्साहन दिया करते थे ।[३] राष्ट्रनेता होने के नाते वे इस तथ्य से पूर्ण परिचित थे कि आज के युवक ही निकट भविष्य में राष्ट्र के निर्माता होते हैं । बालकृष्ण के स्वालम्बन से विद्यार्थी जी प्रभावित हुए । स्वयं उनके शब्दों में — ' जब मैं प्रणाम करके चलने लगा तब बोले - 'आप से मिलकर बहुत खुशी हुई, इसे आप

---

१. 'विशाल भारत' (संख्या १-६) जनवरी - जून १९६० ई० , 'स्वर्गीय नवीन जी' -(लेखक) डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० ४७३ ।

२. 'नवीन'-दर्शन - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ४ ।

३. 'त्यागी' देशभक्त और सहृदय' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी - सा० हि० , 'नवीन'-विशेषांक, पृ० ३९ ।

लोकाचार न समझें, मेरे लायक सेवा लिखते रहें।"[१]

कानपुर-प्रस्थान :

सन् १९१७ में 'नवीन' जी मैट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। उन्हें आगे पढ़ने की इच्छा थी परन्तु परिवार की बिगड़ती दशा के कारण माँ ने उन्हें आगे पढ़ने का परामर्श नहीं दिया।[२] आर्थिक कठिनाइयों का पहाड़ उन पर टूट चुका था। परन्तु वे आगे पढ़ने का दृढ़ निश्चय कर चुके थे। अभी भी उनके मस्तिष्क में गणेश जी के वे अन्तिम शब्द गूज रहे थे जो कि उन्होंने लखनऊ कांग्रेस की समाप्ति पर उनसे कहे थे। कुछ पुस्तकें साथ लेकर वे सीधे कानपुर पहुँचे और 'प्रताप' के कार्यालय में गणेश शंकर विद्यार्थी से भेंट की। विद्यार्थी जी ने बालकृष्ण को क्राइस्ट चर्च कालेज कानपुर में प्रविष्ट कराया और साथ ही २० रुपए मासिक के कुछ 'ट्यूशनों' की व्यवस्था भी कराई और इस प्रकार अध्ययन की गाड़ी अध्यापन के सहारे आगे बढ़ चली।[३] पण्डित श्रीराम शर्मा ने मुझे इस विषय में बताया कि - 'स्वर्गीय गणेश शंकर मानवता प्रिय प्राणी थे। बालकृष्ण के अध्ययन का पूर्ण प्रबन्ध करके उन्होंने अपने कर्त्तव्य को निभाया। मानवता की दृष्टि से मैं स्वर्गीय जवाहरलाल जैसे राष्ट्रीय नेता को भी विद्यार्थी जी से नीचा समझता हूं।'[४]

---

१. 'मैं इन से मिला' (दूसरी किस्त) - 'कमलेश', पृ० ४७।
२. 'वीणा' - सम्पादकीय, अगस्त-सितम्बर, १९६०, पृ० ४५८।
३. 'नवीन'-दर्शन - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ७।
४. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के प्रिय मित्र एवं 'विशाल भारत' के सम्पादक पण्डित श्रीराम शर्मा से ७-२-१९६५ को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात।

श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है – " गणेश शंकर जी विद्यार्थी उनके अभिभावक और सहायक थे । प्रताप प्रेस उनका घर था । 'प्रताप' के निडर वातावरण और गणेश जी की निर्भीकता का पूरा प्रभाव उन पर पड़ा ।"[१]

इस प्रकार उनका आरम्भिक जीवन गणेश जी की देखरेख में आगे बढ़ा। उन्हें गणेश जी का सान्निध्य और स्नेह प्राप्त हो गया था । पथ-प्रदर्शक के रूप में गणेश जी ने उनके जीवन को एक नवीन दिशा की ओर मोड़ दिया। उनके निराश एवं अन्धकारपूर्ण जीवन में गणेश जी ने आशा का दीपक जलाया। उन्हें निश्चित पथ पर चलना सिखाया । इस तथ्य को स्वयं 'नवीन' जी ने स्वीकार किया है ।[२] इस प्रकार 'नवीन' जी जहाँ एक ओर अमर शहीद गणेश शंकर विद्यार्थी के संरक्षण में देश की राजनीतिक, साहित्यिक एवं सामाजिक गतिविधियों से परिचित हो रहे थे वहाँ कालेज में सुयोग्य, सुसंस्कृत एवं महानुभावों की छत्रछाया में रहकर आत्म-निर्भरता एवं कर्तव्य परायणता का पाठ पढ़ रहे थे ।

साहित्यिक-जीवन :

'नवीन' जी ने अपना साहित्यिक जीवन कहानीकार के रूप में आरम्भ

---

१. 'आजकल' पत्रिका, अप्रैल १९६४ -(लेख)- बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १७ ।

२. 'मेरे जीवन में लखनऊ कांग्रेस की मेरी यात्रा और परीक्षा के बाद कानपुर की वह यात्रा बहुत महत्वपूर्ण साबित हुई उन्होंने मेरे जीवन का प्रवाह एकदम बदल दिया । पहली यात्रा में गणेश जी, माखनलाल जी आदि गुरुजनों के दर्शन मिले, उनसे परिचय हुआ । दूसरी यात्रा में गणेश जी का आश्रय मिला, दुनिया को देखने का अवसर मिला और राजनीति तथा साहित्य में थोड़ा बहुत प्रवेश करने एवं कार्य करने की प्रेरणा मिली ।' -'साप्ताहिक-हिन्दुस्तान','नवीन'-विशेषांक, पृ०७.

किया । माधव कालेज उज्जैन में 'नवीन' जी ने सन् १९१७ में अपनी प्रथम कहानी 'सन्तू' लिखी । एक वेदना भरे सन्देश ने बालकृष्ण को लेखनी का आश्रय लेने को बाध्य कर दिया ।[१] परम मित्र सन्तू के असमय निधन पर 'नवीन' जी के शोकाकुल हृदय की वेदना मुखरित हो उठी । यह कहानी 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी । श्री वेंकटेशनारायण तिवारी ने लिखा है — जब कहानी की पांडुलिपि सम्पादक जी (आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी) के पास पहुँची , तब सहायक सम्पादक (श्री हरिभाऊ उपाध्याय) ने लिख कर उनसे पूछा कि किस बंगाली कहानी का यह अनुवाद है ? उत्तर में 'नवीन' जी ने लिखा कि यह कहानी मेरी लिखी हुई है, अनुवाद नहीं । इस पर 'सरस्वती' के तत्कालीन सम्पादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने स्वयमेव बालकृष्ण को एक कार्ड भेजा, जिसमें लिखा हुआ था - 'महोदय ! कहानी मिली - छापूँगा । म० प्र० द्विवेदी ।'[२] 'नवीन' - दर्शन के लेखक प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने इस कहानी को अपनी पुस्तक के परिशिष्ट में प्रकाशित किया है । अपने दूसरे मित्र 'छोटे' की मृत्यु पर 'नवीन' जी ने एक और कहानी लिखी जिसका शीर्षक 'छोटे' था । गणेश जी के सम्पर्क में आने से 'नवीन' जी का मानसिक विकास दिन प्रति दिन बढ़ता गया और सन् १९१८ के आसपास उन्होंने अपनी प्रथम कविता 'जीव ईश्वर वार्तालाप' लिखी । इसके विषय में स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है — ' पहली कविता मैंने भंग पीकर लिखी थी। - - - - मित्रों को सुनाई और उन्हें पसन्द आई और उन्होंने समझा कि मैं लिख सकता हूँ । होते होते मैं कवि बन गया ।'[३] दिन प्रति दिन लिखने

---

१. 'नवीन'-दर्शन - केशवदेव उपाध्याय, पृ० ५ ।

२. 'सरस्वती' जून १९६० - श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का निधन - श्री वेंकटेशनारायण तिवारी, पृ० ३८६ ।

३. 'मैं इन से मिला'- दूसरी-किस्त - 'कमलेश', पृ० ४८ ।

का क्रम व्यवस्थित हो रहा था । 'प्रताप' सम्पादक उभरते लेखकों को सदा उत्साहित करते थे । उनके सान्निध्य में 'नवीन' जी की लेखनी पुष्ट हुई । उन्हें लिखने की प्रेरणा मिली । वास्तव में उनके साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ एवं विकास श्री गणेशशंकर विद्यार्थी की छत्र-छाया में हुआ । कवि, लेखक और पत्रकार के रूप में उनकी साहित्यिक प्रतिभा 'प्रताप' के माध्यम से मुखरित हुई । स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है – ' लिखने की ओर जो मेरी प्रवृत्ति हुई उसका श्रेय भी पूज्य गणेश जी को ही है । यों तो बहुत पहले से लिखने की ओर रुचि थी । पर प्रेरणा गणेश जी की ही थी । अगर मैं यों कहूँ कि उन्होंने मुझे कलम पकड़ कर लिखना सिखलाया तो अत्युक्ति न होगी ।'[१]

'नवीन' जी , पं० कृष्णदत्त पालीवाल जी एवं पण्डित श्रीराम शर्मा , गणेश जी को अपना गुरू मानते थे ।[२] 'प्रताप' प्रेस के निर्भीक एवं निष्कपट वातावरण का प्रभाव 'नवीन' जी की लेखनी पर भी पड़ा । स्पष्टवादिता का गुण उनमें बढ़ने लगा और उनकी लेखनी दिन प्रतिदिन परिपक्व होने लगी । श्री हरिशंकर शर्मा ने श्रद्धांजलि भेंट करते हुए लिखा है :-

निर्भय गति-मति कल्याणी थी,
निष्पक्ष लेखनी, वाणी थी,
गान्धी-गरिमा-अनुरक्त रहे ;
गुरुवर गणेश के भक्त रहे ;
सौजन्य - स्नेह - विनयावतार -
कवि, सम्पादक , साहित्यकार ।[३]

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान'–३ जुलाई १९६० , पृ० ७ ।
२. पण्डित श्रीराम शर्मा से प्रत्यक्ष भेंट १७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात ।
३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १० जुलाई १९६० , पृ० २७ ।

साहित्य के विषय में 'नवीन' जी आरम्भ से ही एक सुदृढ़ धारणा लेकर चले थे । वे सत्साहित्य का सृजन करना चाहते थे । जिसको पढ़कर मनुष्य सुसंस्कृत हो और व्यक्तिगत दोषों एवं दुर्बलताओं से ऊपर उठकर समाज का और समाज में रहने वाले व्यक्तियों का , कल्याण और मंगल करे । डा० हरिवंशराय `बच्चन` ने लिखा है - ` उन्होंने कविता केवल इसलिए लिखी कि जग और जीवन के अनुभवों ने उनके हृदय में कुछ ऐसी हलचल मचा दी थी कि वह लिखने को, अपने को अभिव्यक्ति देने को विवश थे । उन्होंने तभी लिखने के लिए लेखनी उठाई जब किसी गहन, गम्भीर, तीव्र , तीक्ष्ण अनुभूति ने उन्हें विचलित कर दिया ।`[१] धीरे धीरे 'नवीन' जी `प्रभा` एवं `प्रताप` में नियमित रूप से लिखने लगे और जनता इस महान् साहित्यकार की वाणी से परिचित होने लगी ।

कानपुर में 'नवीन' जी का परिचय अनेक साहित्यकारों से हुआ । विशेषकर `प्रताप` कार्यालय से सम्बन्धित रहने के कारण उन्हें अनेक साहित्यिक गोष्ठियों में सम्मिलित होने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ । उच्च कोटि के साहित्यकारों के सम्पर्क में आकर 'नवीन' जी तत्कालीन साहित्यिक गतिविधियों से परिचित होने लगे । अपने गुरुजनों के निकट बैठ कर 'नवीन' जी ने नवीन विषयों का अध्ययन किया ।

बालकृष्ण ने अपना उपनाम `नवीन` रखा । यह उपनाम सर्वप्रथम उनकी प्रसिद्ध कहानी `सन्तू` में प्रकाशित हुआ था ।[२] इसके पश्चात् उन्होंने एक

---

१. `वह योद्धा के समान जिए और योद्धा के समान मरे भी` - डा० हरिवंश राय `बच्चन` - नर्मदा - १९६३ ,'नवीन'-अंक , पृ० ९७ ।

२. पण्डित श्रीराम शर्मा से भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

कविता 'तारा' लिखी और इसे 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित करवाया। इसमें भी उन्होंने अपने नाम के साथ 'नवीन' लिखा है।[१] धीरे-धीरे साहित्य जगत में वे इसी नाम से प्रसिद्ध हुए। डा० दुबे ने लिखा है - 'बालकृष्ण ने अपना यह कवि-नाम एक युग-विशेष की काव्यधारा से अपनी पृथकता व नव्यता प्रकट करने के लिए रखा था।[२] वास्तव में जिस युग में 'नवीन' जी साहित्य-जगत में आए उस समय हिन्दी साहित्य में विभिन्न वादों की होड़ लगी थी। वे किसी वाद-विशेष के कटघरे में नहीं आना चाहते थे। अत: स्वच्छन्द रूप में उन्होंने कविताएँ लिखीं और अपना कविनाम 'नवीन' रखा। डा० 'बच्चन' ने लिखा है - 'किसी प्राचीन के साथ अपना साम्य न देखकर ही उन्होंने अपना उपनाम 'नवीन' रखा होगा। 'निराला' जी ने भी कुछ ऐसी ही परिस्थिति में अपने को 'निराला' कहा होगा। वास्तव में बीसवीं सदी के नवजागरण के साथ हिन्दी के प्राय: सभी नवयुवक कवियों ने अपने को अजनबी पाया होगा। समाज से अपने को अलग करना चाहा होगा, किसी ने नया नाम लेकर, किसी ने नया रूप बनाकर, बाल बढ़ाकर, किसी ने नया परिधान धारण कर।[३]

असहयोग-आन्दोलन :

अखिल भारतीय कांग्रेस का एक विशेष अधिवेशन लाला लाजपतराय के सभापतित्व में सितम्बर सन् १९२० को कलकत्ते में हुआ। इससे पूर्व सन् १९१९ की घटनाओं के मामले में उक्त दोनों सरकारों[४] ने पंजाब की बेकसूर जनता की

---

१. पण्डित श्रीराम शर्मा से भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।
२. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० ४९।
३. 'नये पुराने झरोखे' - हरिवंशराय 'बच्चन' 'नवीन-एक संस्मरण', पृ०२२।
४. भारत तथा ब्रिटेन दोनों देशों की सरकार।

रक्षा करने में और अफसरों को सज़ा देने में घोर लापरवाही की है , इस लिए जब तक उक्त भूलों का सुधार न हो जाए और स्वराज्य की स्थापना न हो जाए, भारतवासियों के लिए इसके सिवा और कोई मार्ग नहीं है कि गान्धी जी द्वारा संचालित क्रमिक अहिंसात्मक असहयोग की नीति को स्वीकार करें और अपनायें ।'[१] वाद-विवाद के पश्चात् प्रस्ताव पास हुआ और देश में चारों ओर असहयोग आन्दोलन की लहर फैल गई । सन् १९२१ में आन्दोलन ने उग्र रूप धारण किया । इधर सत्याग्रही अपने पथ पर अडिग एवं अपने प्रण पर अटल थे उधर अंग्रेज़ सरकार उन्हें कारावास में धकेल कर उनके साथ नीचता का व्यवहार कर रही थी । 'नवीन' जी के मन पर असहयोग आन्दोलन का तीव्र प्रभाव पड़ा । देश की विकट परिस्थितियों से वे परिचित होने लगे और अंग्रेज़ों की कूटनीति को भांप गए । उन दिनों 'नवीन' जी बी० ए० फाइनल में पढ़ते थे । अपने अन्य अंतरंग मित्रों के साथ पूर्ण रूप से सोच विचार करने के पश्चात् उन्होंने पढ़ाई छोड़ दी और स्वातंत्र्य समर में कूद पड़े । श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है —

'असहयोग आन्दोलन में जब इन के थोड़े से साथियों ने कालेज छोड़ने का निश्चय किया, तो डगलस साहब ने उन्हें बहुत समझाया । उनकी देश - भक्ति की प्रशंसा भी की और पढ़ाई छोड़ने के उनके निश्चय को गलत भी बतलाया । किसी विवाद के सन्दर्भ में बालकृष्ण ने यहाँ तक कह दिया कि यदि देश-हित में यह निश्चय हुआ कि अंग्रेज़ों को गोली मारी जाए तो मैं स्वयं आपके ऊपर गोली से प्रहार करूँगा , यद्यपि मैं आपका बड़ा आदर करता हूँ ।'[२] वास्तव में उन के हृदय में देशप्रेम की बाढ़ आई थी जिसे कोई भी सेतु

---

१. 'संक्षिप्त कांग्रेस का इतिहास' - डा० बी० पट्टाभिसीतारामय्या, पृ० ११०।

२. 'आजकल' (अप्रैल १९६४) - 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १७ ।

रोक नहीं सकता । उनकी लेखनी ने भी उग्र रूप धारण कर लिया और 'प्रताप' एवं 'प्रभा' में उनके जोशीले एवं क्रान्तिकारी लेख प्रकाशित होने लगे । जिन्होंने अग्नि के लिए घृत का काम किया । श्री वृन्दावनलाल वर्मा ने लिखा है - 'असहयोग आन्दोलन के छिड़ने पर उन्होंने पढ़ना छोड़ दिया। तब से स्वर्ग यात्रा पर्यन्त उनका जीवन त्याग, तपस्या, साहित्य-सेवा और कला-साधना की बड़ी सुन्दर और चमत्कारपूर्ण गुत्थी बना रहा ।'[१] इस प्रकार उन्होंने दासत्व की शृंखला में जकड़ी हुई असहाय भारतीय जनता में नवीन प्राण फूंक दिए । स्वाधीनता के युद्ध में एक वीर सिपाही की भांति उन्होंने भाग लिया और देश के लिए मर मिटने की प्रत्येक बेला में उन्होंने अपना योग दिया । गरीब, मजदूर, कर्मचारी तथा किसानों पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध वह लड़े और मानव अधिकारों के लिए सामाजिक पाखण्ड से भी जूझने में वह पीछे नहीं रहे ।[२] उन्होंने निस्वार्थ रूप से देश-सेवा का पुनीत कार्य आरम्भ किया और तन मन से मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने लगे । डा० 'बच्चन' ने लिखा है - 'आज़ादी की लड़ाई के लिए जिस प्रकार के सैनिक की आवश्यकता थी । 'नवीन' जी उसके लिए बिल्कुल फिट थे ।'[३] जान हथेली पर लेकर बालकृष्ण असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े और विदेशी सरकार के कुचक्रों एवं कुनीतियों पर कठोर प्रहार करने लगे । श्री लालबहादुर शास्त्री ने लिखा है - ' - - - - मैं ने अभी तक मुशकिल से ही कोई ऐसा आदमी पाया है इतना भावुकता से भरा हुआ , और जब

---

१. 'अनेक स्मृतियां हैं' - लेख - वन्दावनलाल वर्मा -'नर्मदा'-'नवीन'-विशेषांक १९६३ , पृ० १३१ ।

२. 'त्यागी, देशभक्त और सहृदय' - लेख - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी - सा० हि०, ३ जुलाई १९६०, पृ० ३९ ।

३. "कविवर 'नवीन' जी" - डा० हरिवंशराय 'बच्चन' - नर्मदा-'नवीन'-विशेषांक, पृ० ११५ ।

वे ऐसे व्यक्ति थे तो यह असम्भव था कि गान्धी की आवाज़ पर वे पीछे रह जाते और आज़ादी के मैदान में न उतर आते।"[१] गान्धी जी के असहयोग आन्दोलन ने नवयुवकों को अत्यधिक प्रभावित किया। पण्डित श्रीराम शर्मा के शब्दों में - 'चढ़ती उमर में व्यक्ति भावना प्रधान होता है। बालकृष्ण नवयुवक था अत: उन पर गान्धी जी का जादू अधिक असर कर गया।'[२]

निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते हैं कि बालकृष्ण का राजनीतिक जीवन गणेश शंकर की छत्रछाया में त्याग और बलिदान से आरम्भ हुआ और गान्धी जी द्वारा संचालित असहयोग-आन्दोलन ने उनको विस्तृत क्षेत्र प्रदान किया।

जेल-यात्रा :

'नवीन' जी को अपने जीवन का अमूल्य समय जेल में व्यतीत करना पड़ा। कारागृह की अंधेरी कोठरियों से वे परिचित थे। अपनी प्रथम जेल यात्रा के विषय में उन्होंने लिखा है - " पहली मर्तबा जब मैं डेढ़ वर्ष के लिए सन् १९२१ के दिसम्बर में जेल गया तब सौभाग्य से जवाहर भाई का साथ हो गया। मैं इलाहाबाद में पकड़ा गया था। वहाँ प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की मीटिंग हो रही थी। वह संस्था गैर कानूनी घोषित कर दी गई थी। मैं प्रान्तीय कमेटी का मेम्बर था। हम लोग ५५ आदमी गिरिफ्तार किए गए थे।"[३] इलाहाबाद से उन्हें बनारस केन्द्रीय कारागृह पहुँचाया गया और वहाँ से लखनऊ। लखनऊ बन्दी जीवन के विषय में 'नवीन' जी ने 'ऊर्म्मिला' महा-

---

१. धर्मयुग - ५ जुलाई १९६४, पृ० १३ - 'हम विषपायी जन्म के' : ग्रन्थ विमोचन समारोह।

२. पण्डित श्रीराम शर्मा से प्रत्यक्ष भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।

३. साहित्यकारों की आत्मकथा - देवव्रत शास्त्री, पृ० १०७।

काव्य के आरम्भ में लिखा है – 'लखनऊ में सात बन्दी भयानक समझे गए। उनके नाम यह हैं – जवाहरलाल नेहरू, स्वर्गीय जाज़ेंजोज़ोफ, स्वर्गीय महादेव देसाई, पुरुषोत्तमदास टण्डन, देवदास गान्धी, परमानन्दसिंह (बलिया) और बालकृष्ण शर्मा। अत: ये सब एक छोटी घुड़साल में बन्द कर दिए गए। सब से अलग। - - - - जवाहर भाई हमलोगों (बालकृष्ण एवं देवदास गान्धी) को अंग्रेज़ी तथा भूमिति (ज्योमेट्री) पढ़ाया करते थे। हमलोगों ने वहाँ जवाहरभाई से मैकबेथ (शेक्सपियर का दुखान्त नाटक) आद्योपान्त पढ़ा।'[१] प्रथम बार 'नवीन' जी डेढ़ वर्ष तक कारावास में रहे और यही उनके जीवन की सबसे बड़ी परीक्षा थी। सन् १९३० में 'नवीन' जी को दो बार छ: छ: मास का कारावास दण्ड मिला और सन् १९३१ के दिसम्बर मास में ढाई वर्ष का कारावास दण्ड 'नवीन' जी को मिला।[२] कारावास में ही 'नवीन' जी को अधिकांश रचनाएँ लिखने का अवसर मिला। जेल के बाहर 'नवीन' जी अधिक नहीं लिख पाए। उनकी अधिकांश कविताएँ कारागृह के शून्य कक्ष में ही लिखी गई थीं।[३] इसके पश्चात् सन् १९४१ में 'नवीन' जी को पुन: एक बार जेल जाना पड़ा और उन्हें नैनी कारागृह में रखा गया। श्री मनमथनाथ गुप्त नैनी कारावास में बन्दी जीवन का चित्र खींचते हुए लिखते हैं – 'हमलोग नैनी जेल की गोरा बैरक के पीछे के हिस्से में रखे गए थे और हम में से प्रत्येक की एक-एक कोठरी थी जो सेन्टर की तरफ खुलती थी। - - - - - खाने के समय जब लोग एकत्र होते थे, उस समय खाने की मेज़ पर 'नवीन' जी की बातचीत, संस्मरण आदि सुनना उनके सौभाग्यवान साथियों के लिए एक

---

१. 'उर्म्मिला' - 'नवीन' - श्री लक्ष्मणचरणार्घ्यमस्तु, पृ० (ख)।
२. वही वही, पृ० (ग)।
३. 'नवीन दर्शन' - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ६।

बहुत बड़ी नियामत होती थी ।[1] 'नवीन' जी जेल में भी नियमित रूप से जीवन व्यतीत करते थे । अन्य सत्याग्रहियों के साथ वे स्नेहपूर्ण व्यवहार करते थे । वे सबसे विशिष्ट सभ्यता और शिष्टाचार के साथ व्यवहार करते थे । कारागृह में अन्य अनेक राजबन्दियों के साथ 'नवीन' जी साहित्य के विभिन्न विषयों पर एवं राजनीतिक समस्याओं पर वाद-विवाद करते थे और कभी कभी कविता-पाठ भी करते थे । श्रीरामशरण विद्यार्थी ने लिखा है — "जेल में शर्मा जी के भाषण और कविताएँ सुनने तथा उनसे वार्तालाप करने का प्राय: नित्य ही अवसर मिलता था । उनके भाषणों में ओज और विद्वता होती थी, कविता में चेतना और शक्ति , वार्ता में स्नेह और उपदेश । उनके भाषणों में जो सिंह गर्जना होती थी, उनकी कविताओं में वीररस और भावुकता की जो लहर होती थी, उन के उपदेशों में सत्य और अनुभव का जो पुट होता था वह क्या कभी भुलाया जा सकता है ?"[2] जेल में वे सदा नवयुवक सत्याग्रहियों को अनुशासन का पाठ पढ़ाते थे और उनके उछलते उत्साह को संयम में रखने का प्रयत्न करते थे । अन्तिम जेल-यात्रा के समय उन्हें केन्द्रीय कारागृह बरेली भेजा गया । यहाँ पर उनका सम्पर्क उच्चकोटि के विद्वानों एवं राजनीतिज्ञों से हुआ ।[3] 'नवीन' जी कुल छ:

---

१. "कृति" - मई १९६० - "मिला दो मृत्यु गीत के स्वर से" मनमथनाथ गुप्त, पृ० ६६।

२. "मेरे जेल के साथी" - रामशरण विद्यार्थी - सा० हि०, ३जुलाई १९६०, पृ०२६।

३. "सन् १९४३ की बात है । हमलोग केन्द्रीय कारागृह" बरेली में थे । साथ में बहुत से गुरुजनों एवं मित्रों का आवास था । श्रद्धेय बाबू पुरुषोत्तमदास जी टंडन, श्री रफीअहमद किदवई, स्वर्गीय भाई रणजीत सीताराम पण्डित, मान्यवर सम्पूर्णानन्द जी, श्री गंगाधर गणेश जोग, डा० मुरारीलाल, डा० जवाहरलाल आदि बन्धु-बान्धव वहाँ एक ही बैरक में थे ।" - "विनोबा-स्तवन" - "नवीन" , पृ० ६.

बार जेल गए । इनमें सन् १९२१ (डेढ़ वर्ष), सन् १९३१ (ढ़ाई वर्ष) एवं सन् १९४२ (दो वर्ष से अधिक समय) के जेल यात्राएँ मुख्य हैं । श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है - `जीवन का श्रेष्ठतम और अधिक से अधिक मूल्यवान भाग उन्हें जेलों में बिताना पड़ा ।`[१]

पत्रकार के रूप में :

माधव कालेज उज्जैन में बालकृष्ण नियमित रूप से समाचार पत्रों का अध्ययन करते थे । उन दिनों भी वे `प्रभा` एवं `प्रताप` के ग्राहक थे ।[२] अपने कानपुर-निवास में बालकृष्ण पहले `प्रताप` के सम्पादकीय-विभाग में कार्य करते थे और अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा जनता की करुण दशा का चित्रण बड़ी ही सफलता से करते थे । कुछ समय के पश्चात् `प्रताप` के सह-सम्पादक बने और तब अग्रलेख एवं सम्पादकीय-टिप्पणियाँ लिखने लगे । श्री गौरीशंकर द्विवेदी `शंकर` ने लिखा है - ` `प्रताप` के सहकारी सम्पादक के पद पर रह कर वर्षों कठिन-परिश्रम करके उन्होंने अपना ऐसा स्थान बना लिया कि अमर शहीद श्री विद्यार्थी जी के निधन के पश्चात् वे ही प्रताप के प्रधान सम्पादक बने । उनने प्रताप के स्तर और विद्यार्थी जी की शैली को सुरक्षित रखकर दिन-रात कठोर साधनाएँ कीं; जिससे प्रताप उत्तरोत्तर आगे बढ़ता गया और वे भी नागरिकों के विशेष श्रद्धा-भाजन बन गए ।`[३] आरम्भ में अपने अल्हड़

---

१. `आजकल` - दिसम्बर १९५७ -(लेख)- बालकृष्ण शर्मा `नवीन` , लेखक- भगवतीचरण वर्मा ।

२. 'साहित्यकारों की आत्मकथा'- देवव्रत शास्त्री, पृष्ठ ६७ ।

३. 'विलक्षण साधक श्री बालकृष्ण `नवीन`'-(लेख)- गौरीशंकर द्विवेदी `शंकर` नर्मदा -'नवीन'-विशेषांक , पृ० ६७ ।

स्वभाव के कारण उन्हें इस दिशा में विशेष सफलता नहीं मिली है जिस कारण उनके गुरुजन एवं मित्र उनके प्रति निराश ही रहते थे ।[१] परन्तु समय आने पर 'नवीन' जी ने अपनी योग्यता एवं लेखन-शक्ति का ऐसा परिचय दिया कि अन्य भाषाओं के पत्र-पत्रिकाओं में भी उनकी चर्चा होने लगी ।[२] गणेश शंकर विद्यार्थी के मार्ग-दर्शन का सौभाग्य प्राप्त कर 'नवीन' जी की लेखनी धीरे धीरे प्रखर रूप धारण करने लगी । विदेशियों की कूटनीति को समझने में आपके अग्रलेखों ने विशेष कार्य किया । इन लेखों में 'नवीन' जी की ओजस्वी वाणी विद्रोह एवं युग-परिवर्तन के लिए ललकार रही थी । आपके प्रसिद्ध अग्रलेख `शिमला सम्मेलन में निराशा का अवतरण` `मुसलमान भाईयों की खिदमत में`, `तुम्हारे उपवास की चिन्ता` आदि प्रताप की फाइलों में सुरक्षित हैं ।

---

१. ` सम्पादक की हैसियत से गणेश जी और मैं दोनों ही बालकृष्ण से निराश थे । वह कवि-हृदय युवक इतना अलहड़ था कि लिफाफों की कौन कहे महीने महीने भर तो अपने नाम आए हुए तारों को भी नहीं खोलता था ।`

- `युवक` - जून १९६० - लेख (भाई बालकृष्ण) लेखक - श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, पृ० १७ ।

२. ` सन् १९२० तक जिस बालकृष्ण की ओर से हम पत्र-कारिता की दृष्टि से निराश थे, वही बालकृष्ण परम प्रसिद्ध पत्रकार हो गया । उसके लेखों की धाक थी । अंग्रेज़ी के अच्छे-अच्छे दैनिक पत्रों में भी बालकृष्ण के लेखों की चर्चा होती थी ।`

- `युवक` - जून १९६० - लेख (भाई बालकृष्ण) लेखक - श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, पृ० १७ ।

'प्रभा' का 'झंडा अंक' पत्रकारिता के आकाश में एक नए स्पन्दन वाला नक्षत्र है।[१] उनके अग्र लेखों के कारण 'प्रताप' पर कई बार मुकद्दमा चलाया गया और बहुत सी यातनाएँ सहनी पड़ी। राय-बरेली मुकद्दमा इनमें से विशेष प्रसिद्ध है। जिसके कारण प्रथम बार गणेश शंकर विद्यार्थी को जेल जाना पड़ा। सन् १९३१ में जब गणेश जी शहीद हुए तो 'नवीन' जी पर मानो वज्रपात हुआ। उनका राजनीतिक गुरू, देश का प्रसिद्ध पत्रकार, मातृभूमि का एक वीर सपूत, भारत माँ का लाड़ला बेटा हिन्दू-मुस्लिम झगड़े में संकीर्ण-हृदयी विद्रोहियों द्वारा मारा गया। यह अशनीय दुर्घटना सारे देश के लिए वेदनामय थी। अपनी एक प्रत्यक्ष भेंट में पण्डित श्रीराम शर्मा ने मुझे बताया - 'गणेश जी की मृत्यु पर महात्मा गान्धी की ओर से बालकृष्ण के नाम एक तार आया। मैं भी वहीं पर था और सर्वप्रथम तार मैंने ही लिया उसमें लिखा था - 'ऐसी मृत्यु मुझे हो तो क्या कहना।'[२] 'प्रताप' के सम्पादन का कार्य 'नवीन' जी के कन्धों पर आ पड़ा और वे बड़ी योग्यता एवं परिश्रम से 'प्रताप' का सम्पादन करने लगे। विदेशी राज्य के शोषण के विरुद्ध लिखते लिखते उनकी लेखनी कभी थकने का नाम नहीं लेती थी। पत्रकार के नाते वे मुक्त कण्ठ से अन्य उभरते साहित्यकारों की प्रशंसा करते थे।[३] वे उनका मार्ग-निर्देशन करते थे एवं प्रोत्साहन देते थे। वास्तव में पत्रकारों के तो वे गुरू, बन्धु, सहायक एवं पथ-प्रदर्शक सभी कुछ थे।

---

१. 'नवीन और उनका काव्य' - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १०।

२. पण्डित श्रीराम शर्मा से प्रत्यक्ष भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।

३. 'हरिशंकर जी विद्यार्थी की लेखनी उन्हें बहुत रुचती थी। वह उनकी लेखनी का बड़ा आदर भी करते थे, साथ ही सब मित्रों से कहते कि 'भाई मेरा यार हरि इतना अच्छा लिखता है कि मैं तो वर्षों, इसकी शागिर्दी करूँ तब भी ऐसा नहीं लिख पाऊं। अपने बाप से भी बढ़ गया।'
-'नवीन जी एक विलक्षण व्यक्तित्व'- श्री पन्नालाल त्रिपाठी - सा० हि०, १० जुलाई १९६०, पृ० १९।

'नवीन'जी के सम्पादकीय-लेख कहीं भी पुस्तकाकार में प्रकाशित नहीं हुए हैं। अत: बहुत कम लोग उन लेखों से परिचित हैं। जो कुछ भी उन्होंने लिखा आज उस सबका ऐतिहासिक महत्व है। उन लेखों के द्वारा विदेशी सरकार की दुरंगी चाल को समझने में हमें काफी सहायता मिलती है। स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास में उनका अपना एक विशिष्ट स्थान है।[१] स्वर्गीय रामानन्द बाबू[२] का उनपर काफी प्रभाव था।[३] रामानन्द जी तत्कालीन पत्रकार-जगत में एक प्रतिभाशाली (पत्रकार) व्यक्ति थे। भावुक होने के कारण'नवीन'जी कभी कभी अपने गद्य-लेखों में सन्तुलन खो बैठते थे। सम्पादकीय टिप्पणियों में जो एक उच्चकोटि का सन्तुलन होना चाहिए। कभी-कभी हमें उनके लेखों में नहीं मिलता।[४]

गार्हस्थ जीवन :

यह बात बहुत कम लोगों को ज्ञात है कि'नवीन'जी का पहला विवाह बहुत पहले किशोरावस्था में हुआ था। परन्तु थोड़े ही समय के पश्चात् प्लेग की भयंकर चपेट में आकर उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई थी।[५] द्विरागमन के पूर्व ही यह दुर्घटना हुई और इस प्रकार यद्यपि बालकृष्ण बाल-विधुर थे तथापि उन्हें अविवाहित ही माना जाएगा।[६] इसके पश्चात् उन के जीवन में पुन: एक

---

१. `कृति` - मई १९६०, पृ० ७०।

२. `माडर्न रिविय्यू` के सम्पादक (मृत्यु सन् १९४५)।

३. पण्डित श्रीराम शर्मा से भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।

४. वही।

५. पण्डित श्रीराम शर्मा से भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।

६. `किन्तु गौना भी नहीं हो पाया था कि प्लेग की महामारी'नवीन'जी की पत्नी को मैके ही में खा गई।`

`नवीन`-दर्शन - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० १२.

प्रेम-प्रसंग आया परन्तु उसमें भी उन्हें सफलता नहीं मिली ।[१] इसके पश्चात् 'नवीन'जी ने प्रण किया कि जब तक देश स्वतंत्र नहीं होगा, विवाह नहीं करूँगा । श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने लिखा है – `आज के दिनों में कौन ऐसा युवक मिलेगा, जो प्रतिज्ञा करेगा कि जब तक - `यह न होगा तब तक मैं शादी न करूँगा ।' 'नवीन'जी ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक देश स्वतंत्र न होगा, मैं शादी नहीं करूँगा - भारत को गुलाम संतान की भेंट नहीं दूँगा ।[२] इस प्रकार उन्होंने अपना समस्त यौवन देश की स्वाधीनता को अर्पण कर दिया और देश स्वतंत्र होने पर उन्होंने ५१ वर्ष की अवस्था में विवाह किया । एक सिन्धी युवती 'नवीन'जी के गुणों पर मुग्ध हुई जिसका वर्णन श्री कन्हैयालाल मिश्र `प्रभाकर` ने यों किया है — `गान्धी जी की अस्थियों का कलश लेकर संगम में प्रवाहित करने इलाहाबाद गए, तो अपार भीड़ उमड़ पड़ी । एक सैनिक ट्रक पर अस्थि-कलश रखा गया । आगे पण्डित जवाहरलाल नेहरू बैठे, पीछे 'नवीन' जी । जलूस संगम की ओर बढ़ने लगा । बहुत अच्छी व्यवस्था थी, पर

---

१. `कानपुर में ही एक लड़की से कभी उनका प्रेम हुआ था । दोनों ने विवाह करके देश-सेवा का संकल्प किया था, पर लड़की के पिता ने लड़की को सुख के सब्ज बाग दिखाकर एक धनी युवक से विवाह करने को राज़ी कर लिया था । सुनकर 'नवीन' जी उससे मिले और वायदों की याद दिलाई तो उसने कहा - `तुम तो रोज़ जेल काटते फिरोगे, मैं क्या घर बैठी भाड़ झोकूंगी ।` और `नवीन` उल्टे पैर वहाँ से लौट आये ।`

-'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० ६८ ।

२. `नवीन जी गए क्या, जीवन से नवीनता चली गई` - हरिभाऊ उपाध्याय, 'नर्मदा'- नवीनांक, पृ० १२२ ।

भीड़ का कहीं अन्त न था । एक जगह भीड़ ने रस्से तोड़ दिए और घच्च-पच्च मच गई । 'नवीन' जी ने देखा एक सुकुमार युवती भीड़ के रेले को सहने में असमर्थ गिरा चाहती है । मनुष्य में उनकी अथाह दिलचस्पी थी, वह गान्धी जी की मृत्यु के दु:खपूर्ण वातावरण से भी ऊपर उठ गई और 'नवीन' जी ने अपनी अल्हड़ टोन में उस युवती को पुकारा - `कमआन डीयर ।` युवती ट्रक के पास बढ़ आई और 'नवीन' जी ने उसे अपनी लम्बी, सुन्दर और बलिष्ठ भुजा का सहारा दे, ट्रक पर चढ़ा लिया । - - - - संगम पर उतरते समय युवती ने 'नवीन' जी का परिचय पूछा और कुछ दिन बाद दिल्ली में उन्हें उस युवती का पहला पत्र मिला , जिसमें उन्हें धन्यवाद दिया गया था, पर इस धन्यवाद में एक विशेष स्पर्श था ।[१] कुछ समय पश्चात वह युवती अपने पिता के साथ दिल्ली आई और उन्होंने 'नवीन' जी के सामने विवाह का प्रस्ताव रक्खा । 'नवीन' जी ने युवती का हृदय टटोला और कुछ मर्म-स्पर्शी प्रश्न किए परन्तु उस भारतीय ललना ने अपने दृढ़ चरित्र के परिणाम-स्वरूप हृदय को व्यथित कर देने वाले उत्तर दिए ।[२] और अन्त में विवाह निश्चित हुआ । इस सिन्धी युवती का

---

१. `अनवरत संघर्ष के प्रतीक : 'नवीन' जी - कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'` सा० हि० - १० जुलाई १९६० , पृ० १२ ।

२. `लम्बी बातचीत में उन्होंने अपना अग्निबाण छोड़ा - ' मैं तुम्हारी पिता की उम्र का हूँ, अपने भविष्य की दृष्टि से इस पर भी तो विचार करो ।' वह जैसे इसके लिए तैयार थी, उसने करुणास्त्र छोड़ा - 'क्या आप को विश्वास नहीं कि यदि कोई दुर्घटना हो जाए, तो मैं एक हिन्दू विधवा की तरह अपना शेष जीवन व्यतीत कर सकती हूँ ?'`

- सा० हि० - १० जुलाई १९६० , पृ० ११.

नाम सरला देवी है । श्रीमती सरला सुशिक्षित हैं और इस समय नौकरी में है । उनकी एक छोटी बच्ची है, वह स्कूल जाती है ।[१]

'नवीन' जी का वैवाहिक जीवन अल्प समय का रहा । विवाह उन्होंने इसलिए किया था कि अब जीवन सुख से कटेगा परन्तु यह उनके भाग्य में न लिखा था । एक सद्गृहस्थ के आवश्यक गुण उनमें न थे, गार्हस्थ जीवन की अनेक समस्याओं को वे सुलझा न सके जिस कारण उनके जीवन में कटुता ने प्रवेश किया। श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है — 'नवीन' एक सद्गृहस्थ नहीं बन सके थे । - - - उनकी उदारता का असंयम उनके गृहस्थ-जीवन में हमेशा बाधक रहा । गृहस्थ जीवन में उन्हें जो समझौते करने पड़े, उन समझौतों ने उन्हें बुरी तरह तोड़ दिया ।"[२] जीवन कुसुम प्राप्त करने पर उनकी आन्तरिक व्यथा और भी बढ़ जाती है :-

मैंने तोड़ा जो पुल्ल कुसुम तो क्या देखा ?
उसके अन्तर में एक भयंकर तड़ाक है ।
मैंने सोचा : मैंने कब कृषि अपमान किया ?
जो मुझ को मिला परीक्षित - जीवन-झड़ाक है ।[३]

गृहस्थ को सुख शान्ति से चलाने के लिए धन संचय अत्यन्तावश्यक है । 'नवीन' जी ने जीवन-पर्यन्त धन संचित नहीं किया था तो आज उनसे यह कैसे सम्भव होता।

---

१. 'जिजीविषा के चार वर्ष' - 'दिनकर' - 'नर्मदा' 'नवीन'-विशेषांक, पृष्ठ ७२ ।
२. 'कादम्बिनी' - नवम्बर १९६० - श्रद्धांजलियाँ - भगवतीचरण वर्मा, पृ० २०।
३. 'जीवन घटता रहा - कला पनपती रही ,(लेख)- महावीरप्रसाद 'वही' 'नर्मदा'- पृ० १३४ -'नवीन'-विशेषांक ।

श्री रामधारीसिंह दिनकर ने लिखा है – `दानी बन कर जीने में जो गौरव और आत्म संतोष है वह परिग्रह अपनाकर जीने वालों को नहीं मिलता। किन्तु, हम गृहस्थ जानते हैं कि यह साधना कितनी दु:साध्य कितनी कठोर है। आप घूमते घामते गृहस्थ के दायरे में आ तो गये थे, लेकिन गृहस्थी कभी आपको बांध नहीं सकी। संचय के नाम से आपको घृणा थी। धन तो क्या, आप पत्रों और पुस्तकों का भी संचय नहीं करते थे।'[१] ~~एक गृहस्थ में पति-पत्नी के मध्य जो~~ जीवन के अन्तिम वर्षों में 'नवीन' जी के हृदय पर उदासीनता का अन्धकार छाया हुआ था।

स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीतिक-जीवन :

स्वराज्य प्राप्त होने पर सन् १९४८ में देश की संविधान परिषद् के वे सदस्य मनोनीत हुए।[२] इसके अतिरिक्त 'नवीन' जी संविधान परिषद की गृह-मन्त्रालय सम्बन्धी समिति, सूचना एवं प्रसार मंत्रालय की समिति और रेलवे की वित्त-समिति के सदस्य भी रहे।[३] भारत की ओर से भेजे गए सांस्कृतिक शिष्ट मंडल के सदस्य होकर उन्होंने पश्चिमी देशों की यात्रा की। एक दूसरे शिष्टमंडल का सदस्य बनाकर उन्हें चीन भेजा जा रहा था परन्तु उसे उन्होंने कुछ कारणों से अस्वीकार कर दिया था।[४] सन् १९५२ में वे कांग्रेस टिकिट पर कानपुर से भारतीय लोक सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। यहाँ आकर उनमें असंतोष की भावना दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। स्वतंत्र भारत का जो स्वप्न

---

१. `वट-पीपल` - रामधारीसिंह `दिनकर` , पृ० ३७।
२. `त्यागी, देशभक्त और सहृदय` -(लेख)नरेशचन्द्र चतुर्वेदी- सा० हि० , ३ जुलाई १९६३ , पृ० ३९।
३. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० ६६।
४. सा० हि० -३जुलाई १९६३ , पृ० ३९।

उन्होंने देखा था, भारत के भविष्य की जो महान कल्पना उन्होंने की थी वह पूरी न हुई। फलत: उनके चित्त में अशान्ति और निराशा बढ़ने लगी। पंडित श्रीराम शर्मा ने प्रत्यक्ष भेंट में मुझे बताया - 'जिस स्वराज्य की कल्पना हमने की थी उसके लिए आवश्यक सच्चाई, ईमानदारी, और जन-सेवा थी परन्तु राजनीति में वे लोग चढ़ बैठे जिन का कोई आदर्श न था।'[१] आज के युग की शक्ति-सूचक रस्साकशी और धक्कमपेल से वे निरन्तर बचते रहे। वह महान व्यक्ति सब कुछ देखता रहा, सब कुछ समझता रहा, और सब कुछ सहता रहा।[२] स्वयं उन्होंने लिखा है - ' जीवन में आज भी असंतोष है। जिस ज्वलन्त आदर्श को लेकर जीवन में पदार्पण किया था वह आज धूमावृत हो रहा है। देश की वर्तमान परिस्थिति ने चित्त में एक उद्भ्रान्ति उत्पन्न कर दी है। राष्ट्रीय यज्ञ में विघ्न आ रहे हैं। वैमनस्य और विद्वेष की होली जल रही है।'[३] प्रथम गणतन्त्रीय कांग्रेस मन्त्री मंडल में उन्हें श्री नेहरू ने उप-मन्त्री बनने को आमंत्रित किया था परन्तु 'नवीन' जी जैसे आत्माभिमानी पुरुष के लिए इस पद को स्वीकार करना असम्भव था। श्री पालीवाल जी ने लिखा है - 'लेकिन सत्ता की राजनीति कितनी हृदयहीन है। जो जन-नायक नेहरू जी स्वाधीनता संग्राम के सेनानी बालकृष्ण पर छोटे भाई की तरह प्यार करते थे, वे ही स्वाधीन भारत के प्रधान मन्त्री होने पर अपने छोटे भाई बालकृष्ण के साथ न्याय नहीं कर सके। वरिष्ठता, तप-त्याग, बलिदान, चरित्र और योग्यता सब दृष्टियों से बालकृष्ण से छोटे व्यक्ति नेहरू मन्त्रि मण्डल के माननीय मिनिस्टर बने लेकिन बालकृष्ण ?'[४] इसके पश्चात् उनके मन्त्री होने की बात जब भी उठी, उन्होंने

---

१. पण्डित श्रीराम शर्मा से प्रत्यक्ष भेंट ७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।

२. 'आजकल' - जून १९६० - श्रद्धांजलियाँ, पृ० ४५।

३. 'साहित्यकारों की आत्म कथा' - देवव्रत शास्त्री, पृ० ११०।

४. 'युवक' जून १९६० - 'भाई बालकृष्ण' - श्री कृष्णदत्त पालीवाल, पृ० १७।

स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया ।[१]

राजभाषा-आयोग के सदस्य निर्वाचित होने पर आपको श्री दिनकर एवं अन्य सदस्यों के साथ भारत के कई प्रदेशों की यात्रा करनी पड़ी । इन्हीं दिनों आप कश्मीर भी आए और यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य से अत्यन्त प्रभावित हुए । यहाँ के रमणीय-स्थल, हिनाच्छादित पर्वत-शृंग एवं पहाड़ी नदियाँ आपके आकर्षण की विशेष केन्द्र रही । सन् १९५७ के द्वितीय आम-निर्वाचन में आप राज्य सभा के सदस्य चुने गए और सन् १९६० में पुन: राज्य-सभा के लिए निर्वाचित किए गए ।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि स्वतंत्रता पश्चात् 'नवीन' जी का राजनीतिक जीवन अशान्ति और निराशा की अवस्था में व्यतीत हुआ । स्वराज्य-प्राप्ति से पूर्व जो वीर-सैनिक हर आन्दोलन में जान हथेली पर लेकर आगे-रहता था , वही स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् पीछे पड़ गया । भारत का भविष्य उन्हें अन्धकार पूर्ण दीख पड़ा । वे हर समय सत्ताधारियों का विरोध करते रहे । कभी कभी क्रोध में आ कर खद्दर-धारी डोंगी नेताओं की खूब खिल्ली उड़ाते थे । उनकी यह मानसिक वेदना तब तक बाहर फूटती रही जब तक वे सिंह की तरह गरजते थे । वाणी के मूक होने पर यह गरल वे अन्दर ही अन्दर पीते रहे :

---

१. 'उनके मिनिस्टर होने की बात तीन बार उठी , किन्तु उन्होंने स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया और सदा वे यही कहते रहे कि 'मिनिस्टर के गुण आचार मुझ जैसे आज़ाद विचार के व्यक्ति में न हैं और न मैं उस पद का निर्वाह ही कर सकूँगा ।'

'सरस्वती' - दिसम्बर १९६० - 'नवीन जी के जीवन की कुछ अमिट घटनाएं' - पन्नालाल त्रिपाठी, पृ० ४०१ ।

` हम विषपायी जन्म के सहे अबोल-कुबोल ,
मानत नेकु न अनख कहुँ , जानत आपन मोल ।`

वृद्धावस्था- दुखान्त जीवन :

द्वितीय विवाह के थोड़े ही समय के पश्चात् 'नवीन' जी अस्वस्थ रहने लगे । मानसिक अशान्ति के साथ साथ शारीरिक अस्वस्थता से वे क्षीण हो उठे । भयानक रोगों ने उनके शरीर में घर कर लिया । लखनऊ में सर्वप्रथम उन पर हृदय रोग का आक्रमण हुआ ।[१] श्री 'दिनकर' ने लिखा है - `जब आयोग (राजभाषा) पटने आया । मैंने अपने नगर के हृदय-रोग-विशेषज्ञ डाक्टर श्रीनिवास से 'नवीन' जी की पूरी जाँच करवाई, उनका विधिवत काडियोग्राम भी करवाया, फिर भी कोई खास बात नहीं पाई गई । केवल रक्तचाप में थोड़ा दोष था । - - - - - सन् १९५६ में जब उन्हें यह आभास होने लगा कि कोई प्रचण्ड रोग उनकी घात में है, तब वे उससे जूझने को तैयार हो गए । खान-पान में कठोर संयम बरतने के साथ वे शाम को घूमने भी लगे थे ।[२] परन्तु उनके भाग्य में कुछ और ही लिखा था । इसी वर्ष पक्षाघात का भयानक आक्रमण उनपर हुआ । उनके लौह-शरीर पर यह द्वितीय चोट थी । कई मास

---

१. `नवीन जी पर कोरोनरी थ्राम्बासिस का एक आक्रमण सन् १९५० या ५१ ई० में ही हो चुका था , जब वे लखनऊ गए थे । किन्तु इस आक्रमण से वे सकुशल बच निकले । सन् १९५२ ई० में जब मैं राज्य सभा का सदस्य होकर दिल्ली आया , तब नैसर्गिक सिंह - जीवन वीरता से जी रहे थे ।`
- जिजीविषा के चार वर्ष ` - `दिनकर` - `नर्मदा`-`नवीन` विशेषांक , पृ० ७० ।

२. `मृत्यु के साथ वीरतापूर्ण संघर्ष की मार्मिक कहानी` (लेख)- `दिनकर` सा० हि० ,'नवीन'-विशेषांक, पृ० ६ ।

अस्पताल में रहने के पश्चात् वे घर लौट आए परन्तु अब उन में वह सिंहनाद कहाँ, वाणी की वह स्फूर्ति कहाँ और सुडौल शरीर की वह चाल कहाँ। सन् १९५९ में उनकी शारीरिक दशा फिर बिगड़ गई और एक दिन संसद के सेन्ट्रल हाल में ही उन पर द्वितीय पक्षाघात हुआ। इस चोट ने 'नवीन' जी के शरीर को जर्जरित कर दिया। कमज़ोर होने के कारण अनेक भीषण रोगों ने उनके शरीर पर आक्रमण किया।[१] श्री हरगोविन्द गुप्त ने आपकी रुग्णावस्था का चित्रण बड़ी ही मार्मिक काव्य-पंक्तियों में किया है:-

देखा जिस क्षण पुरुषसिंह का मैंने करुणा-कलित कलेवर,
उस क्षण उसके अटपट स्वर सुन काँप गया मेरा परमेश्वर ।
और याद आ गए अचानक तत्क्षण वे बीते बिसरे दिन ,
जब कि फड़क उठते थे जन-गण सुन उसका गर्वीला गर्जन ।
वज्रपाणि जो ताल ठोंक कर ललकारा करते थे यम को ,
काल-चक्र की गति की इंगिति आज कर रहे थे वे हमको ।
सोचा, वह कवि तान कहाँ अब जिससे उथल पुथल मच जाए ,
द्रष्टा का वह ज्ञान कहाँ अब , जो तम में नव ज्योति जगाए ।'[२]

'नवीन' जी फिर स्वस्थ हुए और अस्पताल से घर लौट आए परन्तु वर्षान्त में उनका स्वास्थ्य फिर गिर गया और पुन: अस्पताल में चिकित्सा के लिए

---

१. 'अनेक भीषण रोगों ने मिलकर उनपर प्रहार किये - हृदय -रोग, रक्त-चाप, पक्षाघात, अर्श और अन्त में कदाचित फेफड़े का कैन्सर।'
'आजकल' - मार्च १९६१ -'दादा: बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - डा० नगेन्द्र , पृ० ९ ।

२. 'नवीन' जी से साक्षात्कार' - हरगोविन्द गुप्त - सा० हि० - १० जुलाई १९६० , पृ० २६ ।

लाये गये । अब उन की दशा बिगड़ने लगी और कुछ ही दिनों में वे वाणी-हीन हो गए । श्री श्रीनरेश मेहता ने लिखा है – 'जिन्होंने 'नवीन' जी को उस विवशता में देखा है वे ही जानते हैं कि उनकी वाणी हीनता की स्थिति वैसी ही थी जैसे हिमालय से निकलने वाली सारी नदियाँ हठात निकलना बंद हो जाएँ तो हिमालय के अन्तर में कैसा ज्वार फूट उठे, बस वही उन दिनों 'नवीन' जी की स्थिति थी ।'[१] रुग्णावस्था में वाणी का कुंठित होना उनके लिए असहनीय था । वाणी के साथ साथ 'नवीन' जी की स्मृति शक्ति भी चली गई और फिर वे बड़ी कठिनाई से किसी को पहचान सकते थे । अब तक वे अपने मानसिक बल के आधार पर मृत्यु से संघर्ष कर रहे थे । शारीरिक पीड़ा से जर्जर होने पर मनुष्य किस प्रकार मानसिक बल पर जीवन बिता सकता है, इसी का नमूना 'नवीन' जी थे ।[२] उन दिनों उनका विश्वसनीय महाराज दिन-रात उनकी सेवा सुश्रूशा में लगा रहता था । महाराज ने अन्तिम दिनों में सच्ची लगन से मालिक की सेवा की और उनके निधन पर फूट फूट कर रोया ।[३]

---

१. 'अमरी के पृष्ठ और अमलतास के फूल' - श्रीनरेश मेहता, लेख , 'कृति' मई १९६० , पृ० ६३ ।

२. 'राष्ट्रवाणी' - जून १९६०-'स्व० नवीन जी' : कुछ संस्मरण- गो०प०नेने, पृ० ८७ ।

३. 'उनका विश्वसनीय महाराज, जिसने निरन्तर उनकी सेवा की थी, उनके पास था । - - - शव को मोटर में चढ़ाते समय महाराज अपनी हिचकियां न रोक सका । अवश्य ही हम दर्शकों को महाराज उनका इतना आत्मीय जान पड़ा मानो सर्वाधिक नुकसान उसी का हुआ हो ।'

-सा० हि० - १५ मई १९६० - 'जीता जागता पौरुष या सांसों की घौंकनी' (लेख) - जगदीश गोयल , पृ० ५ ।

सन् १९५६ से लेकर १९६० तक रोगों से वे डट कर लड़े थे । मृत्यु से पहले तीन-साढ़े-तीन वर्षों में आधी दर्जन बार वे अस्पताल में दाखिल हुए और बाहर निकले ।[१] उनके दु:खान्त जीवन का वर्णन श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने इस प्रकार किया है - 'अपनी बीमारी के अन्तिम दिनों में एक रात को जब उनकी तबीयत बहुत खराब हो गई थी , उनके एक प्रेमी भक्त ने उनसे पूछा - ' किसी को कुछ कहना तो नहीं है ?'नवीन'जी ने लड़खड़ाती ज़बान में कहा था - 'मेरा कोई नहीं' । इन तीन शब्दों में उस महाकवि और सहृदय मानव के दु:खान्त जीवन की एक झलक स्पष्टत: दीख पड़ती है ।[२]

अन्तिम-यात्रा :

सन् १९६० में उनकी शारीरिक दशा इतनी बिगड़ गई कि डाक्टरों ने अब उनके पुन: स्वस्थ होने की आशा पूर्ण रूप से छोड़ दी । मुख तथा शरीर के अन्य अंगों पर शोथ के लक्षण प्रकट हो गये । अब उनसे कुछ खाया भी नहीं जाता था और अन्तिम दिनों में तो उनके कण्ठ से नीचे कुछ उतरता ही नहीं था । यह तो उनके चल-चलाव के दिन थे ।[३] श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है - 'सन् १९४८ से १९६० - कुल बारह वर्ष । यह बारह वर्ष का काल ही 'नवीन' के लिए वास्तविक संघर्ष का काल रहा है । इन बारह वर्षों में मैंने

---

१. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक - ' वे योद्धा के समान जिए और योद्धा के समान मरे भी' । - डा० 'बच्चन', पृ० ६२ ।

२. 'विशाल भारत' -'स्व० बालकृष्ण 'नवीन' का जीवन चरित'- बनारसी दास चतुर्वेदी , पृ० ४४७ ।

३. 'एक दिन रात को जब मैं गया तो बोले कि अब तो चल चलाव के दिन हैं ।' मार्च १९६१ - 'आजकल' -'दादा : बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - डा० नगेन्द्र , पृ० ६ ।

एक महान सेनानी को टूटते हुए देखा है।"[१] इस प्रकार मृत्यु से निरन्तर लड़ते रहने के पश्चात् १६ अप्रैल १६६० को नई दिल्ली के विलिंगडन अस्पताल में उनका देहान्त हुआ और माँ भारती का लाड़ला पुत्र सदा के लिए हम से छिन गया।

"कैसा मरण-संदेशा आया ?
किसके कंठाभरण स्वरों ने लय-संगीत सुनाया ?
देह थकी, जर्जरित हो गया, बिगड़ गया कुछ खटका,
संज्ञा-शून्य शरीर हो गया, लगा मृत्यु का झटका,
देख लुप्त होते जीवन को, मन संभ्रम में अटका,
जीवन का रहस्य यह क्या है? क्या यह मृण्मय माया
कैसा मरण-संदेशा आया ?"[२]

सारे भारतवर्ष में उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया। उसी दिन उनका शव उनके निवास-स्थान पर लाया गया। देश के मूर्द्धन्य नेता श्रद्धाँजलि अर्पित करने के लिए उन के घर पर आए।[३] उनका अन्तिम संस्कार उनकी कर्मभूमि कानपुर में हुआ। १६ अप्रैल १६६० रात के आठ बजे उनका शव दिल्ली से

---

१. 'कादम्बिनी' - नवम्बर १६६० - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - श्रद्धाँजलि, भगवतीचरण वर्मा, पृ० २०।

२. 'कृति' - मई १६६० - प्रयाण - वेला - (कविता) - 'नवीन', पृ० ३।

३. 'उनकी मृत्यु पर महामहिम राष्ट्रपति, युगनेता प्रधानमन्त्री, और शक्ति-स्तम्भ गृहमन्त्री स्वयं उनके शव तक पहुँचे और उन्होंने उनकी चिता पर अपने अपने प्रतिनिधि द्वारा माला समर्पित की।'
- सा० हि० - १० जुलाई १६६० - 'अनवरत संघर्ष के प्रतीक-'नवीन' जी' - क० ला० मिश्र प्रभाकर, पृ० १२।

कानपुर के लिए एक विशेष रेलगाड़ी में ले जाया गया । प्रात:काल शव कानपुर पहुँचा । यहाँ की असंख्य जनता स्टेशन पर उमड़ पड़ी थी । शव पर अनेक महानुभावों ने श्रद्धाँजलि के पुष्प चढ़ाए । मध्याह्न १२।। बजे 'नवीन' जी का शव चिता की लपटों में समा गया । डा० हरिवंशराय 'बच्चन' ने लिखा है – 'मरते तो सभी हैं, पर एक मरकर मर जाता है और एक मर कर अमर हो जाता है। भेद है मरने के अन्दाज़ में । १६ अप्रैल को दिल्ली में जिसने अपना शरीर छोड़ा और कानपुर में जिसकी चिता जली, निस्सन्देह वह नर-नाहर मरकर अमर हो गया ।'[१] अपनी अमूल्य साहित्यिक सेवाओं के आधार पर उनका नाम सदा अमर रहेगा । भारतीय जनता का पथ-प्रशस्त करके एवं पत्रकारिता-जगत में यशस्वी कार्य करके वे इस नश्वर संसार से चल दिए । उन के चले जाने से हमारे देश, समाज और साहित्य का एक हार्दिक सम्बल चला गया । देश में नेताओं, सुधारकों और कवियों की कमी नहीं है, किन्तु इन सब व्यक्तियों से ऊपर 'नवीन' जी सचमुच एक मनुष्य थे ।[२]

आज भारतीय जनता को राष्ट्रीय संग्राम के एक वीर योद्धा, परिचितों एवं अपरिचितों के सहायक, हिन्दी के एक महान कवि एवं कानपुर के जन-नायक की स्मृति बरबस हृदय को व्यथित कर देती है । श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने लिखा है :-

ज़िन्दगी और ज़िन्दगी की यादगार
पर्दा और पर्दे पे कुछ परछाइयाँ ।[३]

---

१. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक -'वह योद्धा के समान जिए और योद्धा के समान मरे भी' - डा० 'बच्चन' , पृ० ६२ ।
२. 'कल्पना' - सितम्बर १६६० -(लेख)- 'हुतात्मा' - शान्तिप्रिय द्विवेदी पृ० २५ ।
३. 'कृति' - मई १६६० - संस्मरण - 'अश्क' , पृ० ५६ ।

कुछ स्मरणीय श्रद्धांजलियाँ :

'नवीन' जी के निधन पर अनेक साहित्यकारों, महान कवियों एवं राजनीतिज्ञों ने उनके प्रति श्रद्धाँजलि के पुष्प अर्पित किए। इन श्रद्धांजलियों के अध्ययन से उनके जीवन से सम्बन्धित अनेक तथ्य प्रकाश में आते हैं तथा उनकी महानता का भी परिचय मिलता है। राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने सर्वप्रथम अपनी श्रद्धाँजलि प्रकट की और साथ ही उनकी काव्य-प्रतिभा की प्रशंसा भी की।[१] श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने 'नवीन' जी के जीवन को संघर्ष, त्याग और अविराम साधना का जीवन कहा है। पन्त जी के कथनानुसार बालकृष्ण एक सच्चे तपस्वी थे।[२] श्रीमती महादेवी वर्मा उन्हें अपना भाई

---

१. 'मैं सोचता था कि बालकृष्ण मेरी निधन सभा में मुझे अच्छी श्रद्धांजलि प्रदान करेंगे। परन्तु प्रभुचेतो के आगे नर चेती नहीं होता -

कहाँ आज वह बन्धु हमारा
नित 'नवीन' जिसकी रस धारा -
आलोड़ित करती थी हमको ;
उससे श्रद्धांजलि की आशा -
रखती थी मेरी अभिलाषा ,
अनहोनी ही प्रिय है यम को।

'सरस्वती' - जून १९६० -(लेख) बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'-श्री मैथिली-शरण गुप्त.

२. 'नवीन' जी उन वरद् पुत्रों में थे जिनकी रस-सिद्ध तप: पूत आत्मा को मृत्यु स्पर्श नहीं कर सकती। - - - - इस युग ने जिन अनेक तपस्वियों को जन्म दिया, उनमें एक सच्चे तपस्वी 'नवीन' जी भी थे।'

- 'कृति' - मई १९६० -(लेख)-'स्वर्गीय नवीन जी' - श्री सुमित्रानंदन 'पन्त', पृ० ५२।

मानती थीं । उनके शौर्य एवं आत्म-त्याग के विषय में उन्होंने लिखा है : 'कवि 'नवीन' के रूप में इस धरती ने हमें जो धरोहर दी थी, उसे हमें आज लौटा देना पड़ा, परन्तु लौटाया तो पात्र ही जा सकता है । उसमें जो अमृत भरा रहता है, उसे नहीं लौटाया जा सकता । वह हमारे जीवन का रस बन कर हमारी शिराओं में प्रवाहित है । एक क्रान्तिकारी का आत्म-त्याग, एक योद्धा का शौर्य और एक कवि की भावुकता - ये ही ऐसे तत्व हैं, जिन्हें एक साथ रखना सम्भव नहीं होता । परन्तु उनके जीवन में, उनके चरित्र में इन तीनों ही विशेषताओं ने एक त्रिवेणी बना दी थी ।'[१]

आपके प्रकट होने से घोर अन्धकार ज्योति-निधि में परिवर्तित हुआ। यह अन्धकार राजनीतिक क्षेत्र में भी था और साहित्यिक क्षेत्र में भी । श्री बालस्वरूप 'राही' ने लिखा है –

'अद्भुत प्रतिभा उससे अधिक तपस्या, श्रम,
तुम उगे ज्योतिनिधि ! पिघल गया सम्भ्रम का तम,
उपमान कौन-सा चुनूँ तुम्हारे हित कविवर ।
तुम अग्नि शिखा थे, या गुलाब थे, या शबनम ?'[२]

प्रसिद्ध राजनीतिक नेताओं ने भी उनके निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करते हुए श्रद्धांजलियाँ अर्पित की हैं । इनमें भारत के राष्ट्रपति स्व० राधाकृष्णन , महाराष्ट्र के तत्कालीन राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश एवं वर्तमान केन्द्रीय सरकार के पुनर्वास मन्त्री श्री महावीर त्यागी द्वारा अर्पित श्रद्धांजलियाँ विशेष प्रसिद्ध

---

१. 'कृति' - मई १९६० -(लेख) 'स्वर्गीय नवीन जी'- महादेवी वर्मा,पृ०५२।
२. सा० हि० -'नवीन'-विशेषांक -'श्रद्धांजलि के तीन छन्द सुमन'- बाल-स्वरूप 'राही' , पृ० १ ।

हैं । श्री महावीर त्यागी ने लिखा है - "'नवीन' जी के साथ रहने वाले ही अनुभव कर सकते हैं कि 'नवीन' जी का जीवन क्या था । बड़ा मुश्किल है उनका परिचय देना । पर मैं थोड़े शब्दों में यह कह सकता हूँ कि उनका जीवन इस देश में ऐसा था, जैसे किसी बगीचे में तितली का जीवन होता है । हर समय खुशी, हर समय प्रसन्न, हर व्यक्ति के साथ प्यार ।"[१]

अभिनन्दन-समारोह एवं राष्ट्रीय-सम्मान :

दिल्ली के प्रतिष्ठित साहित्यकारों ने 'नवीन' जी के ६३वें वर्ष गांठ पर एक अभिनन्दन-समारोह का आयोजन किया था । डा० रामधारीसिंह 'दिनकर' श्री मैथिलीशरण गुप्त, डा० नगेन्द्र, आचार्य चतुरसेन शास्त्री एवं अन्य अनेक साहित्यकार इस समारोह में सम्मिलित हुए । समारोह का सभा-पतित्व श्री मैथिलीशरण गुप्त ने किया और अभिनन्दन पत्र महाकवि दिनकर ने पढ़ा । उन्होंने लिखा है - "जिस दिन मैंने 'नवीन' जी के लिए अभिनन्दन-पत्र पढ़ा, रोना मुझे उस दिन भी आगया था । अभिनन्दन पत्र पढ़ते-पढ़ते मेरे भीतर यह भाव जागा, हो न हो, देवता की आज यह अन्तिम पूजा है, अब और पूजा लेने को वह नहीं टिकेगा ।"[२] इस समारोह का वातावरण भी करुणाजनक एवं हृदय विधारक था ।[३] अभिनन्दन-पत्र में 'नवीन' जी की

---

१. 'धर्मयुग' - ५ जुलाई १९६४ , पृ० १३ - " हम विषपायी जन्म के " ग्रन्थ विमोचन समारोह ।

२. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक , पृ० ७३ -(लेख)- 'जीजी विषा के चार वर्ष' - 'दिनकर' ।

३. 'इस अभिनन्दन में उल्लास का वातावरण नहीं था - एक विषाद की छाया, मैं कहना चाहूँगा कि आसन्न मृत्यु की छाया सर्वत्र विद्यमान थी। - -- - वास्तव में कवि की स्थिति उस समय ऐसी थी कि उसे देखते हुए शतायु की कामना आत्म-प्रवंचना मात्र होती ।
'आजकल' -मार्च १९६१ -'दादः बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'-डा० नगेन्द्र, पृ० ९ ।

अमूल्य राष्ट्रीय एवं साहित्यिक सेवाओं को सराहा गया और निश्छल एवं त्यागी देश-भक्त के रूप में श्रद्धा के पुष्प उन्हें अर्पित किए गए ।[१]

दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य-सम्मेलन ने इस अभिनन्दन-समारोह की सारी व्यवस्था की थी । समारोह में गुप्त जी ने अपना आशीर्वाद देते हुए कहा –

> भला तुम्हारा प्रेम मधु , हो जितना प्राचीन ।
> रहो क्षेम से तात , निज में नित नवीन ।[२]

साहित्य एवं राष्ट्रीय सेवाओं के उपलक्ष में भारत के राष्ट्रपति महोदय ने 'नवीन' जी को पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित किया ।[३] डा० दुबे ने लिखा है - ' इस उपाधि का प्रमाण-पत्र और स्वर्ण-पदक कवि को अपनी मृत्यु के सिर्फ तीन दिन पूर्व (२६ अप्रैल १९६० ई०) को प्राप्त हुए थे ।[४]

---

१. 'आपका अभिनन्दन हम उस निर्भीक योद्धा के रूप में करते हैं जिसने हमेशा स्वतंत्रता-संग्राम की अगली पंक्ति में रहकर सारी यातनाएँ झेली और स्वाधीनता के बाद भी , जो अपनी निष्ठा पर चट्टान के समान अडिग खड़ा रहा है ; और सब से बढ़कर, आपका अभिनन्दन हम उस परम त्यागी देशभक्त के रूप में करते हैं जिसने देश को अपना सर्वस्व तो दे डाला किन्तु बदले में, अक्षत और रोली के सिवा और कोई वस्तु नहीं ली ।'
-'वट-पीपल'- रामधारी सिंह 'दिनकर', पृ० ३२ ।

२. 'दैनिक हिन्दुस्तान' १०-१२-१९५९ ।

३. 'कवि-समीक्षा' - प्रो० श्यामला कान्त वर्मा, पृ० २२९ ।

४. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य'- डा० दुबे , पृ० ७४ ।

इसके अतिरिक्त 'नवीन' जी ने अपने जीवनकाल में अनेक साहित्यिक-मण्डलियों, संस्थाओं एवं कवि सम्मेलनों का सभापतित्व किया है। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के तीन प्रदेश अधिवेशनों के वह अध्यक्ष भी चुने गये थे।[१] ब्रज-साहित्य मण्डल एवं मध्य भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अतिरिक्त 'नवीन' जी का सम्बन्ध बंगीय साहित्य परिषद् से भी रहा है। आकाशवाणी से ब्रजभाषा का कार्यक्रम आरम्भ कराने का श्रेय भी 'नवीन' जी को ही है।[२] ब्रज-साहित्य मण्डल के छठवें अधिवेशन के सभापति 'नवीन' जी ही चुने गए थे।[३] इसके अतिरिक्त वे अनेक कवि सम्मेलनों की शोभा रहे हैं। सन् १९४९ में आकाशवाणी दिल्ली केन्द्र पर एक कवि-सम्मेलन का आयोजन हुआ। जिसमें सर्वश्री उदयशंकर भट्ट, रामकुमार वर्मा, 'बच्चन', श्री नारायण चतुर्वेदी, सुमित्राकुमारी सिनहा, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' एवं सोहनलाल द्विवेदी ने भाग लिया। इस कवि-सम्मेलन के सभापति 'नवीन' जी थे।[४]

राष्ट्र-भाषा हिन्दी प्रेम :

स्वर्गीय पुरुषोत्तमदास टंडन के साथ साथ पं० बालकृष्ण शर्मा ने

---

१. 'सर्वप्रथम काशी और दूसरी और तीसरी बार क्रमशः बस्ती और फर्रुखाबाद के प्रान्तीय साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन उनकी अध्यक्षता में हुए।'
-सा० हि० -'नवीन'-विशेषांक - त्यागी, देशभक्त और सहृदय - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ४०।

२. पण्डित श्रीराम शर्मा द्वारा ७-२-१९६५ को ज्ञात।

३. 'कादम्बिनी' - नवम्बर १९६० - 'नवीन (श्रद्धांजलियाँ) - कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', पृ० २२।

४. 'सरस्वती' - जून १९६० (पृ० २९ के साथ लगा हुआ चित्र)।

हिन्दी भाषा की जो सेवा की है वह सदा स्मरणीय रहेगी । वे हिन्दी आन्दोलन के प्रहरी थे । इसे वे राष्ट्र सेवा का अंग मानते थे ।[१] उन्होंने हिन्दी को राष्ट्र-भाषा बनाने के लिए अथक प्रयत्न किए हैं । स्वतंत्रता के पश्चात् हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन मेरठ में हुआ । इसमें 'नवीन' जी ने सर्वप्रथम एक प्रस्ताव रखा कि भारत के समस्त विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो और हाई कोर्टों में भी हिन्दी भाषा का प्रयोग किया जाए । प्रस्ताव यद्यपि पहले उत्साह और हर्ष के साथ स्वीकृत किया गया तथापि कुछ अंग्रेज़ी-भक्त शिक्षकों द्वारा आपत्ति उठाने पर पुन: विचार के लिए रखा गया । इस मौके पर 'नवीन' जी सर्वथा मौन रहे । नया प्रस्ताव सीमित किया गया और वह हिन्दी भाषी जगत से ही अनुरोध करके रह गया । जयपुर-कांग्रेस में हिन्दी के प्रश्न पर 'नवीन' जी ने सर्वप्रथम पण्डित

---

१. 'कट्टरता से हिन्दी की भक्ति उनमें थी । राष्ट्रियता के गढ़ने वाले विधान में हिन्दी का मंत्र उनके मन में समा गया था । - - - - - हिन्दी ने उनके जीवन में पर्याप्त स्थान ले लिया था । उनके चारों ओर हिन्दी का वातावरण बना रहता । हिन्दी साहित्य-सेवियों के बड़े परिवार के वे अंग ही बन गए । - - - - हिन्दी के लिए संघर्ष भी करते तो विवेक और संतुलन का पथ अपनाए रहना 'नवीन' जी की विशेषता थी ।'

- विशाल भारत (संख्या १-६)(जनवरी-जून १९६०)
स्वर्गीय 'नवीन' जी - वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० ४७६ ।

नेहरू का विरोध किया । यह वास्तव में उन्हीं का साहस था ।[१] 'नवीन' जी संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के पक्षपाती थे और हिन्दी भाषा से उर्दू एवं फारसी के शब्दों को चुन-चुन कर निकाल देते थे । कहते हैं इस विषय पर भी उन्होंने पण्डित नेहरू को ललकारा था ।[२] लोकसभा में भी हिन्दी के प्रश्न पर 'नवीन' जी ने नेहरू जी की कड़ी आलोचना की थी ।[३] हिन्दी के विरोध में अकारण बोलने वाले सदस्यों पर बालकृष्ण सदा क्षुब्ध रहते थे और बड़ी ही ओजस्वी वाणी में उन्हें डाँटते थे । श्री 'दिनकर' ने लिखा है - 'राजभाषा-आयोग में जब एक विरोधी ने यह झगड़ा खड़ा किया कि हिन्दी के आने से हिन्दुस्तान की एकता का नाश होगा, तब 'नवीन' जी, वनराज की भांति, गरज उठे ,

---

१. 'जयपुर कांग्रेस में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का शीघ्र ही रूप देने के सम्बन्ध में कुछ विचार चल पड़ा । पंजाब में हिन्दी आन्दोलन तीव्र गति से चल रहा था । गिरिफ्तारियाँ तक हो रही थीं । पण्डित जवाहरलाल नेहरू को किसी सही कार्य के लिए हठधर्मी स्वीकार नहीं थी । हिन्दी के संबंध में अपने भाषण में उन्होंने कई आक्षेप किए । वे कहने लगे, 'हिन्दी के हिमायती यह नहीं समझते कि हिन्दी ही सब कुछ नहीं है ।' आदि । शर्मा जी को यह सहन न हुआ । - - - - वे तुरंत ही बोल उठे, 'जवाहर भाई, आप हिन्दी के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानते और मैं आप से ज़्यादा समझता हूँ - आपकी आलोचना बिल्कुल पॉच है ।'

- 'सरस्वती' - दिसम्बर १९६० - 'नवीनजी के जीवन की कुछ अमिट घटनाएँ' (लेख)- पन्नालाल त्रिपाठी, पृ० ४०१ ।

२. 'कहते हैं, संविधान-परिषद् के समय पार्टी की एक सभा में उन्होंने प्रधान-मन्त्री को यह कह कर निस्तब्ध कर दिया था कि 'ब्राह्मण हो कर आप यह कहते हैं कि उर्दू आप पर लादी नहीं गयी । वह आप की मातृभाषा है ? उर्दू आपके पूर्वजों पर लादी गयी थी ।'

- 'नवीन और उनका काव्य' - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १२ ।

३. पण्डित श्री कृष्णदत्त पालीवाल से प्रत्यक्ष भेंट १८-२-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

"यदि हिन्दी हमारी राष्ट्रीय एकता में बाधक हुई, तो मैं उसे पांच फैदम नीचे गाड़ दूँगा ।"[१]

इन्हीं दिनों भारतवर्ष में हिन्दी-हिन्दुस्तानी का विवाद आ खड़ा हुआ । कई नेता हिन्दुस्तानी (हिन्दी-उर्दू मिश्रित) के पक्ष में थे परन्तु 'नवीन' जी अपने पथ पर अडिग रहे । यहीं पर उन्होंने महात्मा गान्धी का विरोध किया ।[२] और राजकृष्ण टंडन जी के साथ आ खड़े हुए । यहाँ 'नवीन' जी ने अपने मित्र श्री बनारसीदास चतुर्वेदी का भी घोर विरोध किया और उन्हें हिन्दी-हत्या-प्रचार-सभा का सदस्य कहा है ।[३] उनके एक अभिन्न मित्र श्री श्रीकृष्णदत पालीवाल ने मुझे बताया कि - " सन् १९४६ में जब हिन्दी-उर्दू के विषय में बहस चल रही थी तो मैंने हिन्दुस्तानी का पक्ष लिया । उससमय बालकृष्ण ने क्रुद्ध होकर मुझे कहा था -'You are a traitor!' यही उनके वचन थे ।"[४] हिन्दी-प्रेम के कारण ही बालकृष्ण को अपने जीवन में महान

---

१. 'वट-पीपल' - रामधारीसिंह 'दिनकर' , पृ० ३०-३१ ।

२. 'रेखाचित्र' - श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० २०८ ।

३. 'आप हिन्दुस्तानी प्रचार सभा से सम्बद्ध हैं । रहें । बापू से बांह छुड़ाना कोई सरल काम नहीं है । पर, मेरा यह विश्वास दृढ़ से दृढ़तर होता जा रहा है कि आप सब लोग हिन्दुस्तानी के नाम पर उर्दू का प्रचार बढ़ाने तथा हिन्दी का अहित करने का काम अनजाने ही कर रहे हैं और करते जायेंगे । As I have said, Hindustani is Unadulterated Vulgarity. वह हमारी राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती । - - - आप को पूर्ण स्वतंत्रता है कि आप अनजाने हिन्दी-हत्या-प्रचार-सभा के सदस्य बने रहें ।"
'नवीन' के 2 'नवीन' विशेषांक - १९६३ - पृ० ५

४. श्री कृष्णदत पालीवाल से आगरा में प्रत्यक्ष भेंट १८-२-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

त्याग करना पड़ा । उनका स्वर्णिम भविष्य अन्धकारमय बन गया परन्तु उन्होंने कभी उसकी चिन्ता नहीं की । हिन्दी भाषा के परिमार्जन एवं विकास में भी उनका योगदान प्रशंसनीय है । उनके द्वारा अनेक नवोदित साहित्यकारों को प्रेरणा मिली । श्री वेंकटेश नारायण तिवारी ने लिखा है कि - ' संविधानिक परिषद् के दिनों में हिन्दी के प्रति उनकी भक्ति और श्रद्धा को जिन्होंने देखा, वे ही इस बात का अनायास अनुमान कर सकते हैं कि उनका हिन्दी प्रेम कितना गहरा, कितना विस्तृत और कितना व्यापक था । हिन्दी की रक्षा में वे सदा प्रयत्नशील रहे ।'[१] उनके निधन से संसद में हिन्दी भाषा निरालम्बा सरस्वती[२] हो गयी है । वास्तव में वे हिन्दी भाषा के लिए ही जिये और उसी के लिए मरे ।

(आ) व्यक्तित्व

'नवीन'जी का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली एवं आकर्षक था । अनेक गुणों का समन्वय हमें उनके व्यक्तित्व में मिलता है । उनका व्यक्तित्व सदा आकर्षण का केन्द्र रहा है । डा० वासुदेवशरण अग्रवाल - 'उनकी सुजनता, सुहृदयता और वीरता के साथ कवि की आदर्शवादिता और भावुकता का चोचक्क मेल बैठ गया और एक विचित्र व्यक्तित्व उभर आया ।'[३]

---

१. 'श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का निधन' (लेख) - वेंकटेशनारायण तिवारी - 'सरस्वती' - जून १९६० , पृ० ३८३ ।

२. 'सरस्वती' - जून १९६० (लेख) - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - श्री मैथिली शरण गुप्त, पृ० ३७८ ।

३. 'विशाल-भारत'(संख्या १-६) जनवरी - जून १९६० ई० -(लेख/'स्वर्गीय नवीन जी'- डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० ४७९ ।

शारीरिक संगठन एवं वेशभूषा :

दिसम्बर सन् १९१६ में 'नवीन' जी का परिचय सर्वप्रथम रेल के डिब्बे में पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी से हुआ । उस समय उनके व्यक्तित्व एवं वेशभूषा का सजीव चित्र चतुर्वेदी जी ने अपने एक लेख में बड़े ही आकर्षक ढंग से खींचा है ।[१] तरुण सुलभ वीरता और अधीरता दोनों उन में स्पष्ट दिखाई देती थी। धीरे धीरे उनका शारीरिक विकास होने लगा । कालेज में नित व्यायाम एवं डण्ड पेलने से उन का शरीर बलिष्ठ एवं स्वस्थ बना । श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी ने लिखा है – 'रामायण की यह पंक्ति उनके बलिष्ठ और आकर्षक व्यक्तित्व में भी प्रत्यक्ष हुई थी - 'वृषभ स्कन्ध केहरि ठवनि बलनिधि बाहु विशाल ।'[२] उनकी विशाल भुजाओं में अनेक दुखी जनों के हृदय की व्यथा एवं खिन्नता का उपचार भरा था । उन भुजाओं द्वारा कभी अन्याय एवं शोषण नहीं हुआ है अपितु सदा अन्याय एवं शोषण का दमन हुआ है । उनका स्वरूप बहुत सुन्दर

---

१. 'उघाड़ा सिर, उन्नत ललाट, साधारण और बेतरतीब पहिने कपड़े, हाथ में कान तक जाने वाली लाठी, उबाहने पैर, अपने जीवन की परवाह न करने वाला शरीर और तेजस्वी आंखें, यही उस समय का बालकृष्ण जी का अवतार था । नये उठते हुए लड़कों में आसपास के वातावरण को तुच्छ समझने की जो भावना थी, वह तो बालकृष्ण में उस समय न थी, किन्तु श्रद्धापूर्वक भी वे किसी की श्रेष्ठता में विश्वास न करते थे ।

- 'सरस्वती' - जून १९६० -'त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० ३७९ ।

२. 'कल्पना' - सितम्बर १९६० -(लेख)('हुतात्मा')- शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृष्ठ २६ ।

था । डा० शिवमंगलसिंह 'सुमन' ने लिखा है - '५ फीट १० इंच ऊंचा कद, गौर वर्ण, प्रशस्त ललाट, उत्तुंग आर्य नासिका, वृषभ स्कन्ध और दीर्घ रतनारे नयन । उस पर शुभ्र-श्वेत कर्पूरी केशों की फबन का तो क्या कहना, हजारों की समागोष्ठी में भी आँख अटक अटक जाए ।'[१] उनका लम्बा कद, भरी गठी देह, गौर वर्ण , उन्नत ललाट, सिर पर घुंघराले केशों का गुच्छा एवं विशाल नेत्र किसी भी सुहृदय व्यक्ति को आकर्षित करते थे । डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'इस कवि की शरीर-सम्पति आकर्षक थी, उसे देखकर अनायास ही कामायनी की पंक्तियों का स्मरण हो आया :-

'अवयव की दृढ़ मांस-पेशियां ऊर्जस्वित् था वीर्य अपर
स्फीत शिराएं स्वच्छ रक्त का होता था जिनमें संचार ।'[२]

उनके व्यक्तित्व में मानसिक संतुलन के साथ साथ शारीरिक सौन्दर्य का अपूर्व संयोग था । उनकी छाती पुष्ट व सुडौल थी । देखने वाले को ऐसा लगता था मानो पौरुष का पुंज उनकी छाती में संचित था । श्री हरिशंकर शर्मा ने लिखा है :-

सुन्दर - सुपुष्ट तन, संयत मन ;
था त्याग तपस्या अक्षय धन ,
आदर्श कर्म - मय जन-जीवन ,
निस्पृह, निरीह , शुभ शुचि चिन्तन ।[३]

---

१. सा०हि०- २० मई १९६२ ,(लेख)-'पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - डा० शिवमंगलसिंह 'सुमन', पृ० ६ ।

२. 'आजकल' मार्च १९६१,(लेख)-'दादा बालकृष्ण शर्मा 'नवीन',-डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ८ ।

३. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक - श्रद्धांजलि - हरिशंकर शर्मा, पृ० १३० ।

राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश करने के पश्चात् 'नवीन' जी ने गान्धी टोपी को नियमित रूप से पहनना आरम्भ किया। उनके सिर पर तिरछी गान्धी टोपी और उसके बाहर श्वेत बालों का एक गुच्छा दर्शकों का मन मोहित कर देता था। श्री रामइकबाल सिंह 'राकेश' ने लिखा है - 'उनकी स्वच्छ धवल गान्धी टोपी की तिरछी कोर दुरभिमानी जनों की आंखों में शूल के समान चुभती थी।'[१] उनके केश समय से पहले ही पक गए थे।[२]

'नवीन' जी को स्वच्छ वस्त्र पहिनने की विशेष रुचि थी। काली सिली हुई शेरवानी, चूड़ीदार पाज़ामा, धोती कुर्ता और कभी कभी मस्ती में केवल मात्र जांघिया पहनते थे। 'नवीन' जी कभी कभी सजधज कर कपड़े पहनते थे और आंखों पर चश्मा भी लगाते थे। श्री पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ने लिखा है - " उस समय वे ढीला पाजामा और कुर्ता, जिस पर सिल्कन जाकट थी, पहने थे, पैरों में साबर के श्वेत पठानी चप्पल थे और सिर पर टेढ़ी गान्धी टोपी - - - - - । आंखों पर चश्मा था जिसके भीतर से रस मग्न आंखें लबालब भरे प्याले सी छलक रही थीं।"[३]

'नवीन' जी हंसमुख थे। मुसकान उनके मुख पर सदा विद्यमान रहती थी।

---

१. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - (लेख)- 'पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - श्री रामइकबाल सिंह 'राकेश', पृ० ५६।

२. 'बाल समय से पहले पके हुए, लेकिन खिचड़ी नहीं - चांदी के तारों जैसे- जिनके बावजूद वे युवा लगते थे, और वे रजत केश उनके चेहरे पर बड़े ही सजते थे।'

- 'कृति' - मई १९६० - 'साहित्यकार' - उपेन्द्रनाथ 'अश्क', पृ० ५८।

३. 'मैं इनसे मिला' - दूसरी किस्त - श्री 'कमलेश', पृ० ४१।

इस विषय में पन्त जी की यह उक्ति - 'खिंची सखी सी साथ ।' उन पर चरितार्थ होती है । सात्विक एवं पौष्टिक भोजन 'नवीन' जी चाव से खाते थे । उनकी वेशभूषा एवं शारीरिक संगठन का समग्र चित्र कई महान कलाकारों ने अपनी लेखनी द्वारा खींचा है जिनमें सर्वश्री मैथिलीशरण गुप्त,[१] माखनलाल चतुर्वेदी[२], वेंकटेशनारायण तिवारी[३] एवं रामइकबालसिंह 'राकेश'[४] विशेष उल्लेखनीय हैं । रुग्णावस्था में बालकृष्ण का शरीर जर्जरित हुआ । उनका लम्बा, बलिष्ठ एवं सुदृढ़ शरीर सूख कर कांटा हो गया । श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने लिखा है - 'बीमारी किसी को इतना कमज़ोर भी कर सकती है - इसकी कभी कल्पना न की थी - देह एकदम कृश हो गई थी, रंग काला पड़ गया था और चेहरे पर वह लम्बी नाक ही बताती थी, कि ये 'नवीन' जी हैं ।'[५]

विद्यार्थी परिवार एवं अन्य महानुभावों का प्रभाव :

'नवीन' जी के व्यक्तित्व पर गणेशशंकर विद्यार्थी, महात्मा गान्धी एवं अन्य महानुभावों का प्रभाव पड़ा है । कानपुर में वे विद्यार्थी परिवार के एक सदस्य बन गए थे । गणेश जी को वे अपना अग्रज समझते थे ।[६] डा०ज्ञानवती

---

१. 'क्या कहना है उनके व्यक्तित्व का । क्या रूप, क्या वर्ण और क्या बोलचाल ; उनका सब कुछ आकर्षक था - - - । जब जिस वेष में वे रहते थे वही उन्हें फबता था ।'

- 'सरस्वती' - जून १९६० , पृ० ३७७.

२. 'सरस्वती' जून १९६० , पृ० ३८१ ।

३. वही वही , पृ० ३९३ ।

४. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक १९६३, पृ० ५७ ।

५. 'कृति' - १९६०मई - (लेख) 'साहित्यकार' ३-उपेन्द्रनाथ 'अश्क', पृ० ५८ ।

६. 'स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी से शर्मा जी का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है और उनके परिवार को शर्मा जी ने अपना परिवार ही माना। लक्ष्मण की तरह, 'नवीन' जी अपने श्रद्धेय अग्रज की और उनकी मृत्यु के बाद उनके परिवार की सेवा में रत रहे ।' - 'नवनीत' (हिन्दी डाइजेस्ट) अक्टूबर १९६०- 'नवीन जी' - वेंकटेशनारायण तिवारी , पृ० ९५ ।

दरबार ने लिखा है – 'गणेशशंकर विद्यार्थी के जीवनकाल में ही लोग बालकृष्ण को उनका उत्तराधिकारी कहने लगे थे।'[१] 'नवीन' जी को राजनीतिक क्षेत्र में लाने का श्रेय भी स्वर्गीय गणेश जी को ही है। उन्होंने 'नवीन' जी को एक नवीन दिशा की ओर मोड़ दिया। उनके अनेक गुणों का समावेश बालकृष्ण के व्यक्तित्व में हुआ था। श्री मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है - 'गणेशशंकर में जैसे अपना लेने की सहज शक्ति थी, वैसे ही बालकृष्ण में अपना हो जाने की। आत्मीयता दोनों का नैसर्गिक गुण था। एक में स्वीकरण की क्षमता थी, दूसरे में समर्पण की ममता।'[२] 'नवीन' जी अपने को गान्धी जी का गधा कहा करते थे।[३] गान्धी जी से उन्होंने अहिंसा, सहनशीलता एवं मानवता का पाठ पढ़ा। उनके निष्कपट एवं त्यागमय जीवन का बालकृष्ण पर इतना प्रभाव पड़ा था कि विरोध करते हुए भी वे गान्धी जी का सदा सम्मान करते थे। अपनी कविता 'श्री गुरुदेव गान्धी' में उन्होंने लिखा है –

'हे विशुद्ध, हे पूर्ण बुद्ध, सुनिरुद्ध तृष्णा हे सन्यासी,
हे ज्वलन्त, हे सन्त, शान्त हैं, हे अनन्त के अभ्यासी,
मानवता की तुम प्रहेलिका, जगती के तुम अचरज हे,
हे विकास की विकट समस्या, श्रेष्ठज हे, जय अन्त्यज हे,
योग युक्त हे, शोक मुक्त हे, यज्ञ मुक्त हे बलिदानी,
हे अपमानित, हे सम्मानित, श्री गुरुदेव परम ज्ञानी।'[४]

---

१. 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा' - डा० ज्ञानवती दरबार, पृ० ३७७।
२. 'सरस्वती' - जून १९६० , पृ० ३७७ ।
३. 'सरस्वती' - जून १९६० -(लेख)- 'त्याग का दूसरा नाम बालकृष्णदास शर्मा 'नवीन'' - पं० प्रभाकर माचवे चतुर्वेदी , पृ० ३८१ ।
४. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक, पृ० ३६।

बालगंगाधर तिलक के प्रति 'नवीन' जी किशोरावस्था से ही श्रद्धा-भरित थे और इसके साथ साथ आर्य समाज के सिद्धान्तों से भी आकृष्ट हुए थे । पंडित जवाहरलाल नेहरू, आचार्य विनोबा भावे, सरदार पटेल, स्वर्गीय रफीअहमद किदवई एवं पण्डित मोतीलाल नेहरू जैसे उच्च कोटि के राजनीतिक नेताओं के सम्पर्क में रहकर उन्हें राजनीति के क्षेत्र में ठोस कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ । निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि बालकृष्ण का व्यक्तित्व अनेक महानुभावों की छत्र-छाया में विकसित हुआ ।

भावुक, सहृदय एवं महान त्यागी :

'नवीन' जी अत्यन्त भावुक एवं कोमल हृदयी थे । कोई भी हृदयस्पर्शी या करुण दृश्य देखने पर उनकी आंखों से आँसू बहने लगते । दूसरों की पीड़ा उनसे सही न जाती थी, अत: एकदम भावावेश में आकर स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करते थे । भावावेश में आकर उनका क्रोध बड़ा भयानक लगता था और क्रोध-भाजन एकदम सहम जाता था । श्री मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है - "एक दिन हम दोनों संध्या समय संसद के सदस्यों की बस्ती नार्थ एवेन्यू में टहल रहे थे । सहसा एक ओर से एक बच्चे का चीत्कार सुनाई दिया, जिसे अपने पिता अथवा अभिभावक का कोपभाजन बनना पड़ा था । बालकृष्ण पिटने वाले का करुण क्रन्दन सुनकर पीटने वालेको बरजते हुए गरज उठे और उस ओर झपटे । मैं हत-प्रभ सा हो गया, और उनके साथ सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर पहुँचा । उनका उग्र रूप देखकर ताड़क ही नहीं ताड़ित भी सहम गया ।"[१] स्वयं कविता पाठ करते समय या किसी कवि-जन की उच्च काव्य-रचना सुनते समय उनके नेत्र अश्रुओं का व्यापार करते थे । श्री दिनकर ने लिखा है - "साहित्यिक विदग्धता से

---

१. 'सरस्वती' - जून १९६० -(लेख)- 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - श्री मैथिली शरण गुप्त, पृ० ३७८-३७९ ।

युक्त कोई भी वाक्य-खण्ड सुनते ही 'नवीन' जी की आँखें सजल हो जाती हैं और सजी हुई वाक्यावली अथवा कोई अच्छी कविता तो वे रोये बिना सुन ही नहीं सकते। 'नवीन' जी के अश्रु करुण रस के ही अधीन नहीं हैं। कविता चाहे किसी भी रस की हो, कवित्व का अभिनन्दन वे हमेशा आँसुओं से करते हैं।[१] वे सहृदय प्राणी थे। कोई भी अपनी करुण कथा उन्हें सुनाता तो वे एकदम पिघल जाते थे। उनकी सहृदयता का अनुमान हमें श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखित एक पत्र से मिलता है।[२] इस विषय में उन्हें कभी कभी धोखा भी लगता था परन्तु उसकी ओर वे ध्यान ही नहीं देते। श्री भगवती चरण वर्मा ने लिखा है - 'नवीन के भोलेपन के कारण मैं कभी कभी बेतरह झुंझला उठता हूँ। - - - - बिना इस बात पर ध्यान दिए हुए कि इन करुण कथाओं में अभिनय की एक अच्छी-खासी मात्रा हो सकती है। और वे अपनी सामर्थ्य से ऊपर उठकर उसका हित करने को उत्सुक हो उठते हैं। - - -

---

१. 'वट-पीपल' - दिनकर, पृ० २६।

२. 'यह एक ज़रूरी पत्र है। मेरे एक मित्र हैं और साहित्य सेवी हैं। वह बीमार रहते हैं। प्लूरसी के शिकार हैं। बहुत दुर्बल हैं और बहुत निर्धन। मैं उन्हें छः महीने तक आराम देना चाहता हूँ। मुझे २५ रुपये महीने उनके लिए चाहिए। क्या आप यह कर सकते हैं कि मैं 'विशाल-भारत' के लिए छः महीने तक लगातार लेख लिखूँ और आप २५ रुपए महीना सीधा उन्हीं के पास, मेरे लेखों के पुरस्कार के रूप में, भिजवाते रहें? यदि आप स्वीकार करें तो मैं आपको उनका नाम बता दूँगा और पता भी लिख दूँगा।'

- सा० हि० - 'नवीन'-विशेषांक (लेख) - 'नवीन जी पत्र-लेखक के रूप में' - बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० ११।

- - - लाख बार धोखा खाकर भी वह जैसे धोखा खाने के लिए हमेशा तैयार हैं। उनके इस गुण के कारण ही मैं कभी-कभी हंसी-हंसी में उन्हें शिव-शंकर कह दिया करता हूँ।'[१]

'नवीन' जी महान त्यागी थे और अपने वचन पर दृढ़ रहते थे। 'बात रहनी चाहिए' - इसके लिए उन्हें एक बार निर्वाचन में हार हुई परन्तु वचन-पालन का संतोष उनके लिए परम मूल्यवान था।[२] 'नवीन' जी का हृदय इतना स्वच्छ था कि स्वार्थ उन्हें छू नहीं सकता था। वे अपने अनुजों के प्रति

---

१. 'आजकल' दिसम्बर १९५७ - 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - भगवतीचरण वर्मा, पृ० ६।

२. 'एक बार बालकृष्ण म्युनिसिपल बोर्ड के लिए खड़े किए गए। - - - उनके प्रतिकूल जो सज्जन थे, उन्हें घबड़ाहट हो गई। परन्तु वे कानपुर के चतुर राजनीतिज्ञ थे। बालकृष्ण की द्रवणशीलता और मन की कोमलता को वह खूब समझते थे। न जाने किन दुर्बल क्षणों में उन्होंने बालकृष्ण को घेर लिया और न जाने किस अनुनय-विनय से इस बात पर राज़ी कर लिया कि वे उनके बार्ड से न खड़े होकर दूसरे बार्ड से खड़े हो जाँए। बालकृष्ण दूसरे बार्ड से नामिनेशन कराके मेरे घर भाग कर आ गए। चुनाव बड़े ज़ोरों पर था। जब लोगों को यह मालूम हुआ तो वे बड़े बिगड़े और सारे कार्यकर्ता बालकृष्ण के प्रतिकूल हो गए। वे चुनाव हार गए परन्तु शरण आए हुए को जिता दिया।'

- 'आजकल' - अप्रैल १९६४ - 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद् गुरु शरण अवस्थी, पृ० १८।

अतिशय उदार थे यहाँ तक कि किसी साहित्यिक-संस्था द्वारा घोषित पुरस्कार को यह कहकर अस्वीकार करते थे कि यह मेरे अनुजों को मिलना चाहिए ।[१]

बालकृष्ण मानवताप्रिय प्राणी थे । उनका हृदय रागद्वेष की भावना से परिष्कृत था । दुखित, पीड़ित एवं शोषित जनता के प्रति सदा उनकी सहानुभूति रहती थी । श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है – मनुष्य रागद्वेष का कन्दुक है । जिसकी रागद्वेष भावना जितनी ही परिष्कृत है उतना ही वह ऊंचा है । इस परिष्कार के मूल में भावुक का अभ्यास है । भावुक प्राणी स्वार्थ के और अपनेपन के कटघरे से निकल कर जब अपने राग-द्वेष को समष्टि की पावन भूमि पर चढ़ा ले जाता है तब उसके पवित्र-स्वरूप को पहचानने लगता है ।संसार द्वेषी उसके द्वेष का लक्ष्य और संसार पूज्य उसके अनुराग की प्रतिभा बन जाता है । बालकृष्ण का सारा साहित्य-स्वरूप राग-द्वेष की इस पवित्र प्रेरणा की सृष्टि है और यही उनका व्यक्तित्व भी है ।'[२] स्नेह और सहानुभूति ,

---

१. 'एक साल साहित्य अकादमी के वार्षिक पुरस्कार के लिए 'नवीन' जी की 'ऊर्म्मिला' का नाम कई जगहों से भेजा गया । किसी तरह 'नवीन' जी को यह बात मालूम हो गई । फौरन, उन्होंने अकादमी को विनम्रता-पूर्वक यह सूचना दी कि उनकी पुस्तक पर विचार न किया जाए । - - - मैंने चकित और दुखित होकर कहा , ' आपने यह क्या किया ? और पत्र लिखना ही था तो मुझ से क्यों नहीं पूछा ?' वे मेरी पीठ थपथपाते हुए बोले, 'चिरंजीव, तुम्हारी इच्छा मैं जानता था । किन्तु, सच यह है कि सुयश और पुरस्कार अब मेरे अनुजों को मिलना चाहिए ।'

-'वट-पीपल' - दिनकर, पृ० २७-२८.

२. 'आजकल' - अप्रैल १९६४ (लेख) -'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद् गुरुशरण अवस्थी, पृ० ६ ।

निष्ठा और त्याग, द्रवणशीलता एवं सहनशीलता आदि अनेक गुणों को एक साथ हम उनमें पाते हैं।

निर्भीक, साक्षी एवं स्पष्ट वक्ता :

'नवीन'जी जहाँ कोमल हृदयी थे वहाँ निर्भीक, प्रखर एवं साक्षी भी थे। वे सर कटाना जानते थे, सर झुकाना नहीं। उनके निर्भीक व्यक्तित्व के अनेक ज्वलन्त उदाहरण हमें मिलते हैं। वे कभी किसी से दबते नहीं यहाँ तक कि आपने श्रद्धेय-जनों को भी साफ बात कहने में हिचकते नहीं थे।[१] डा० नगेन्द्र ने लिखा है - 'नवीन जी स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनिक रहे हैं, उनका व्यक्तित्व निर्भीक शौर्य का प्रतीक है। उनकी वाणी तेज के स्फुलिंग उगलती है।'[२] उन्होंने कभी मृत्यु की चिन्ता नहीं की अपितु मृत्यु को अनेकबार ललकारा। कितना ही विरोध क्यों न हो वे अपनी बात कह ही डालते थे। उनसे अन्याय एवं अनाचार सहा नहीं जाता था। अधर्म या अनीति को देख कर वे घायलसिंह की तरह क्रुद्ध हो उठते थे, और फिर शत्रु पर कड़ी चोंटें

---

१. '- - - - जब श्री सुभाषचन्द्र बोस, कांग्रेस की अध्यक्षता के लिए श्री पट्टाभिसीतारमैया के विरुद्ध खड़े हुए, तब अपना मत आप ने सुभाष बाबू को दिया। लेकिन, दूसरे ही दिन, जब गांधी जी का यह वक्तव्य प्रकाशित हुआ कि पट्टाभि की हार मेरी हार है, तब आपने सुभाष बाबू को तार देकर सूचित किया कि यदि आप गान्धी जी के विरुद्ध जीते हैं, तो अपना वोट आपको मैंने गलती से दिया है।'

- 'वट-पीपल' - दिनकर, पृ० ३६.

२. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' - डा० नगेन्द्र, पृ० २४।

करते थे ।[१] वे कायरता के परम विरोधी थे । एक दिन उस साहसी पुरुष ने गणेश जी की सबसे छोटी पुत्री के वस्त्रों में लगी हुई आग अपने खाली हाथों से बुझाई और इस पुण्य कार्य में अपने हाथ बुरी तरह जला दिए । समयानुकूल स्थिति सम्हालने में भी वे पूरे दक्ष थे । विकट परिस्थिति में वे अपनी साहसिकता के बल पर स्थिति-सुधार में अवश्य सफल हो जाते थे । उनके इसी निर्भीक एवं साहसपूर्ण व्यवहार को देखकर मित्र ही नहीं अपितु शत्रु भी रीझ जाते थे ।[२]

---

१. 'सन् '२८ में वीरपालसिंह के गोली चलाने के संवाद प्रकाशित करने के अपराध में 'प्रताप' पर मुकदमा चला । - - - अत: वीर नेता श्री गणेशशंकर को कठिन कारावास तथा जुर्माने का पुरस्कार देकर अपराधी करार दे दिया गया । सज़ा सुनते ही शर्मा जी की आँखों में क्रोध छा गया । - - - अत: उत्तेजित हो भरी अदालत में मजिस्ट्रेट से कह उठे, 'ब्रिटिश शासक के दुम हिलाते हुए कुत्ते महाशय, आप बाहर निकल आए, अभी आपको मज़ा चखाता हूँ ।' - 'सरस्वती' - दिसम्बर १९६० - 'नवीन जी के जीवन की कुछ अमिट घटनाएँ' - श्री पन्नालाल त्रिपाठी , पृ० ४०२ ।

२. 'द्वितीय महायुद्ध के समय शर्मा जी के साथ श्री शिवनारायण टंडन, श्री इकबाल कृष्ण कपूर आदि कई राजनैतिक कार्यकर्ता बन्दीगृह में रोके रखे गए थे । इन्हीं दिनों इम्फाल तक शत्रु-सेना ने हमला कर दिया था । जेलर महाशय को कुछ आवश्यक आज्ञाएँ उनके ऊपर के अधिकारियों के द्वारा प्राप्त हुई थीं । उन आज्ञाओं को पाकर वेबहुत ही चिन्तित और व्यथित हो शर्मा जी आदि के पास आकर रोने लगे । रोते-रोते उन्होंने यह संवाद सुनाया कि अधिकारियों की आज्ञा है कि अमुक-स्थल तक यदि शत्रु बढ़ आये तो सब राजनैतिक बन्दियों को गोली से मार दिया जाए । - - - शर्मा जी को सहसा कुछ उत्तेजना सी हुई और वे उसी अवस्था में चिल्ला उठे, 'अरे कायर कहीं का । इसमें रोने की क्या बात है ? - - - अगर ऐसी परिस्थिति आ जाए तोजेल का दरवाज़ा खुल जायेगा । और ये मेरे सब भाई बाहर चले जायेंगे । तू मुझे गोली मार देना और कह देना कि इसी विद्रोही ने सब को बाहर निकाल दिया । जा, सुख से सो, गोली केवल बालकृष्ण खायेगा ।'

'सरस्वती' दिसम्बर १९६०, पृ० ४०२ ।

निर्भीक एवं साहसी होने के साथ साथ बालकृष्ण एक वीर पुरुष थे । उनके विकराल रूप को देखकर कोई भी गुंडा समीप आने का साहस नहीं करता था । स्वयं 'नवीन' जी ने कहा था - ' जब मैंने देश की स्वतंत्रता को ही अपना प्राप्तव्य मान लिया था तब मैं राजनीति से अलग कैसे रह सकता था ? तब राजनीति भी प्राणदान की थी ।'[१] 'नवीन' जी स्पष्ट वक्ता थे । वे किसी की झूठी प्रशंसा करना नहीं जानते थे अपितु गुण-दोषों का विवेचन नीर-क्षीर विवेचन के समान करते थे । उत्तेजित होकर या क्रोधित होकर जो बात उन्हें कहनी होती थी वह एकदम स्पष्ट शब्दों में कहते, परिणाम की चिन्ता कभी नहीं करते । राजनीति के क्षेत्र में भी 'नवीन' जी स्पष्ट रूप से राजनीतिज्ञों की आलोचना करते थे । उनकी दृष्टि से कोई बच नहीं निकलता यहाँ तक कि उच्च कोटि के नेताओं का भी विरोध करने में वे कभी पीछे नहीं रहे हैं ।[२] पं० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने मुझे बताया कि - 'कोमल हृदयी का

---

१. 'मैं इन से मिला' - दूसरी किस्त - 'कमलेश', पृ० ५० ।

२. ' प्रयाग के आनन्द भवन में कांग्रेस पार्लमेण्टरी बोर्ड की बैठक थी । स्व० श्री रफी अहमद किदवई उसके अध्यक्ष तथा श्री जवाहरलाल नेहरू, श्री टण्डन जी, पन्त जी, श्री महावीर त्यागी और 'नवीन' जी उसके सदस्य थे । घटना विशेष पर श्री नेहरू जी ने महावीर त्यागी से बैठक से चले जाने के लिए कह दिया । वे चुपचाप चले गए यद्यपि वे सर्वथा निर्दोष थे । श्री त्यागी के चले जाने के पश्चात् जब रहस्य खुला । तब श्री 'नवीन' जी राष्ट्र नायक श्री नेहरू पर अधिक बिगड़े और कहा कि आपको कोई हक नहीं था, जो त्यागी को बैठक से निकालते । भविष्य में बोर्ड की बैठक कभी किसी के घर में न होकर कांग्रेस के दफ्तर में ही हुआ करे । परिणाम यह हुआ कि श्री त्यागी जी को समझा-बुझाकर चाय पिलायी गयी और शान्त किया गया, किन्तु उक्त घटना में घटित श्री 'नवीन' जी की दिलेरी बहुत समय तक याद की जायेगी ।'

- 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक -(लेख)- 'विलक्षण साधक श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', पृ० ६८ ।

क्रोधी होना आवश्यक है । जहाँ जुलुम देखा वहीं भड़क उठे । हम दोनों कभी कभी नेहरू जी से लड़ पड़ते थे और जो मुंह में आता कह देते थे ।'[१]

इतने प्रखर, निर्भीक एवं स्पष्ट वक्ता होने के साथ-साथ बालकृष्ण एक सैनिक के समान आज्ञापालक थे । कांग्रेस की विजय वे अपने जीवन की विजय समझते थे । देश को स्वतंत्रता उनके निजी जीवन का लक्ष्य था । अपना जीवन उन्होंने अपने देश पर समर्पित किया था ।

इस प्रकार उनके व्यक्तित्व में हमें माधुर्य और कठोरता, निर्भीकता एवं सहृदयता तथा भावुकता और दृढ़ता के दर्शन एक साथ होते हैं । यही उनके व्यक्तित्व की अमूल्य निधि है और यही हमें उनके प्रति आकर्षित करती है ।

मित्र-मण्डली एवं विनोद-प्रियता

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का मित्र-परिवार बड़ा विस्तृत था । उनकी दोस्ती मौखिक नहीं होती थी अपितु एक बार जिसके साथ मैत्री का नाता जोड़ दिया जीवनभर निबाहते रहे ।[२] श्री कान्तिचन्द्र सोनरक्सा ने लिखा है - 'नवीन जी दोस्त के मामले में खून देने वाले मजनूं थे, दूध पीने वाले नहीं ।'[३] मित्रों के साथ खुल कर मिलना, उन्हें गले लगाना, उनके सुख-दुःख में साथ देना तथा यथाशक्ति उनकी सहायता करना । इसके लिए 'नवीन' जी सदा तत्पर

---

१. पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल से प्रत्यक्ष भेंट १८-१-१९६५ द्वारा ज्ञात ।

२. 'आप मित्र थे और ऐसे मित्र जो बन्धु-रक्षा को उठे तो यही भूल जाय कि उसकी अपनी गरदन पर भी सिर है जो काटा जा सकता है ।'
-'वट-पीपल' - दिनकर , पृ० ३६ ।

३. सा० हि० - ३ जुलाई १९६० -(लेख) 'राजनीति के पंकज से' - कान्ति चन्द्र सोनरक्सा, पृ० १९ ।

रहते थे । डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है - 'मित्रों के लिए गंगा जल थे । सौजन्य की धारा के अटूट स्रोत थे ।'[१] सर्वश्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', श्रीराम शर्मा, श्री कृष्णदत्त पालीवाल, बनारसीदास चतुर्वेदी, भगवतीचरण वर्मा, हरिवंशराय 'बच्चन', आदि बालकृष्ण की मित्र-मण्डली में विशेष उल्लेखनीय हैं । विपत्ति में वे मित्रों को हार्दिक सहानुभूति के साथ साथ आर्थिक सहायता भी करते थे । अपनी रुग्णावस्था के दिनों के विषय में श्री कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' ने लिखा है - ' - - - मेरी पत्नी के नाम पत्र आया - 'बहू रानी ; प्रभाकर भाई का सर्वोत्तम इलाज होना चाहिए और फलादि की ठीक व्यवस्था भी । तुम्हारा जेठ गरीब है । पर वह कलम और कुल्हाड़ी दोनों की मज़दूरी कर सकता है । इसलिए खर्च की चिन्ता मत करना ।' और दूसरे ही दिन ५० रुपये का मनीआर्डर आ पहुँचा ।'[२] अपने स्नेह-भाजनों के प्रति बालकृष्ण सदा उदार रहते थे । इनकी मैत्री में कहीं भी मलिनता न थी । सामान्य जनता के अत्याधिक सम्पर्क में आकर उनकी मित्र-मण्डली में गाँव के दीन हीन खेतिहार एवं श्रमिक भी सम्मिलित थे । कबीरदास का यह दोहा उन पर अक्षरशः सटीक बैठता है :-

लघुता से प्रभुता मिले , प्रभुता से प्रभु दूरि ।
चींटी सक्कर ले चली, हाथी के सिर धूरि ।।

अपने मित्रों के गुणों की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करने में कभी पीछे नहीं रहे हैं । परन्तु साथ ही उनके अवगुणों पर भी वे खीझ उठते थे । उन्होंने स्वयं एक

---

१. 'विशाल-भारत' - (जनवरी-जून १९६० ई०) - 'स्वर्गीय नवीन जी' - डा० वासुदेव शरण अग्रवाल , पृ० ४७३ ।

२. सा० हि० - १० जुलाई १९६० - लेख (अनवरत संघर्ष के प्रतीक : नवीन जी) - कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' , पृ० ११ ।

बार श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को अपने एक पत्र में पण्डित श्रीराम शर्मा के विषय में लिखा है - " श्रीराम मेरे अग्रज, मेरे अपने, मेरे आदरास्पद मित्र और मेरे लिए दृढ़ समाश्रय के रूप में रहे हैं और हैं। मैं उन्हें गत ३२-३३ वर्षों से जानता हूँ। उनके ऐसे आदमी कितने हैं ? ऐसे त्यागी, ऐसे उद्भट आदर्शवादी, ऐसे सच्चे, इतने खरे, इतने वत्सल एवं स्नेही व्यक्ति जैसे कि श्रीराम हैं, अब दुर्लभतर होते जा रहे हैं।"[१] परन्तु अपने एक दूसरे पत्र में वे शर्मा जी की एक स्वाभाविक दुर्बलता का चित्रण कलात्मक ढंग से करते हैं।[२] अपने मित्रों पर प्रेम-पूर्वक डांट बताने में वे कभी चूकते नहीं थे।

'नवीन' जी विनोदप्रिय प्राणी थे। मज़ाक करने में उन्हें बड़ा आनन्द आता था और वे अपनी विनोद वृत्ति के कारण ही सब को आकर्षित करते। पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे हुए पत्रों से उनकी विनोद-वृत्ति का पूर्ण

---

१. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक, पृ० ३ (२१-८-१९५०) का लिखा पत्र।

२. 'Shriram is so good and true. The Scoundrel is an awfully fine fellow with no taint of meanness or pettiness in him. He is pure gold. And imagine, the fool thought that I was under estimating his real worth when I happened to express my difference of opinion with him. I say, even a legion of those who have the mark of sacrifice on their foreheads cannot unlace his boots xxx well, but Shriram is so thick headed that he would easily fall a prey to a casual misunderstanding'.

- 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक, पृ० १९।

परिचय मिलता है ।[१] हास-परिहास में वे अपनी तीव्र बुद्धि का सहारा लेते थे और शब्दों को तोड़ मरोड़ कर अपने मित्रों को मुखों की उपाधियाँ देने में सिद्धहस्त थे । श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' को उन्होंने एक पत्र में लिखा है - ' मैंने नामों के मूल रूप पर खोज की है और सामवेद से पता चलाया है कि तुम्हारे नाम कन्हैयालाल का मूल रूप काल-हिलास-लाल, अर्थात् बछड़ा या गधा है ।'[२] इसी प्रकार बनारसीदास चतुर्वेदी को वाराणसीदास चतुर्वेदी कह कर मज़ाक उड़ाया ।[३] अपने एक पत्र में उन्हें बनारसी सांड़ की पदवी से सुशोभित किया है ।[४] कभी कभी उनके व्यंग्य विनोद में गूढ़ तथ्य की

---

१. 'Come now, let us marry. I feel so lonely. How will it be if you and I both marry each otner? And let our Bapu solemnise our wedlock. What would you like me to call you after marriage?".

(२५ मार्च सन् १९३५ को लिखा हुआ पत्र) 'नर्मदा' पत्रिका में प्रकाशित ।

२. सा० हि०, १० जुलाई १९६० -'अनवरत संघर्ष के प्रतीक'-मिश्र 'प्रभाकर', पृ० ११।

३. 'विशाल-भारत' - मार्च १९६२ - (लेख) 'लम्बे भाषणों और सूखी बहसों के रेगिस्तान में' - बनारसीदास चतुर्वेदी , पृ० १३० ।

४. 'आपके स्तवन में जो एक पंक्ति मैंने सुनाई थी वह राम कृपा से पूर्ण हो गई। सो, वह आपकी सेवा में अर्पित है । आप कैसे हैं ? सुनिये :-

'हुचकि हुचकि हमि भ्रमि रहे जिमि नैया बनु डांड है ।
ये साठा पाठा भए खाई - खाई घी-खांड है ।
नासा विस्फातिक किए अहनिशि ढूंढ़त रांड है ,
धिक्क खिरक फिरोज़ाबाद के भी बनारसी सांड़ है'।

(२२-३-५३) को बालकृष्ण द्वारा लिखित पत्र - बनारसीदास जी के नाम ,'नवीन'-विशेषांक - 'नर्मदा' में प्रकाशित, पृ० ११ ।

बात छिपी रहती थी । श्री रामानुजलाल श्रीवास्तव ने लिखा है - 'उनके साथ मेरा मेल - मुलाकात , चिट्ठी-पत्री चलती रही । अन्तिम पत्र मेरे बहरे हो जाने पर है । लिखा है कि ईश्वर यह चाहता है कि अब तुम बाहर की बात न सुनकर भीतर की बात सुनो और उसे दूसरों को सुनाओ ।'[१] निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि हास-परिहास बालकृष्ण का स्वाभाविक गुण था। हास्य-व्यंग्य-विनोद करने में वे परम पटु थे । वे ज़िन्दादिल थे और जिन्दा-दिली से रहना जानते थे ।

संगीत प्रेम :

नवीन जी को संगीत से अत्यधिक प्रेम था । संगीत मानो उनकी नस नस में बसा हुआ था । वे हर समय कविता पाठ सस्वर करते थे । श्रोताओं का भी विशेष आग्रह रहता था । बचपन में उनकी माता मधुर कण्ठ में उनके सम्मुख भजन गाती थी, तब वे भी कभी कभी गुनगुनाते थे और धीरे-धीरे उनकी रुचि संगीत की ओर बढ़ने लगी । उनका कण्ठ मधुर था ।[२] यह उनमें एक दैवी गुण था यद्यपि अभ्यास से उन्होंने इस दिशा में उत्साहपूर्ण उन्नति की । जब वे कविता पाठ करने लगते थे तो ऐसा लगता था कि कोई संगीत विशेषज्ञ गाने में आत्मलीन है । डा० हरिवंश राय 'बच्चन' ने लिखा है - 'तभी प्रथम बार उनकी कविता सुनने का भी अवसर मिला । आवाज़ ऊंची और भारी, शब्द-शब्द का उच्चारण अलग-अलग, साफ़-साफ़ , पूर्ण अभिव्यंजना राग से ऐसी सधी, जैसे कोई पक्का गायक कविता सुना रहा है । - - - - मेरे मुहल्ले में एक गवैया उस्ताद रहा करते थे , वह कहा करते थे - 'आठ बरद बर पावै

---

१. 'सरस्वती' - जुलाई १९६० - (लेख) 'मुझ को तो हो तुम नित नवीन' श्री रामानुजलाल श्रीवास्तव , पृ० ३० ।
२. 'कादम्बिनी' - नवम्बर १९६० (लेख) - 'पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', - भगवतीचरण वर्मा , पृ० १९ ।

तब भैरव राग उठावें" — यानी आठ बैल का बल हो गले में तब भैरव राग गाया जा सकता है। - - -'नवीन' जी का गला भैरव राग गाने के लिए बना था।[१] कविता पाठ करते समय 'नवीन' जी इतने रसमय हो जाते थे कि वे अपनी सुधबुध बिल्कुल भूल जाते और तन्मय होकर संगीत के माध्यम से श्रोता-गण में रस-संचार करते थे। डा०नगेन्द्र ने लिखा है - " उस स्वर में अपूर्व आकर्षण था - काव्य-पाठ करते समय उनका व्यक्तित्व एक विशेष रस-दीप्ति से मण्डित हो उठता था उनका स्वर-संधान जहाँ हृदय के कवित्व का बाहर की ओर संप्रेषण करता था, वहाँ अर्धनिमीलित आंखें उस बहिर्गत रस को फिर से प्राणों की ओर खींचने का प्रयास-सी करती थीं। - - - 'नवीन' जी का काव्य-पाठ वास्तव में अप्रतिम था। संगीत का भी उन्हें ज्ञान था।[२] उनकी कविताओं में कहीं कहीं रागों के नाम दिए हैं। जिनमें कलिंगड़ा, बिहाग, भैरवी तिताल, ध्रुपद एवं पीलू प्रसिद्ध हैं। एक बार आकाशवाणी दिल्ली के कवि-सम्मेलन में वह तानपूरे के साथ कविता-पाठ करने को बैठे।[३] रससिक्त वाणी को सुनकर बालकृष्ण झूम उठते थे। किसी भी अच्छे गायक से जब वे कोई गीत सुनते तो उनकी आंखों से आँसू आते थे। वे आत्मविभोर हो उठते थे और गायक के कण्ठ-माधुर्य का मोल अपने अश्रुओं से चुकाते थे।[४]

औघड़ दानी - फकीर बादशाह

'नवीन' जी की दानशीलता निर्विवाद एवं सर्वविदित है। शोषितों,

---

१. 'नये पुराने झरोखे' - हरिवंशराय 'बच्चन' (लेख) 'नवीन जी एक संस्मरण' पृ० २३।
२. 'आजकल' - मार्च १९६१ -'दाद: बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'-डा० नगेन्द्र, पृ० ८।
३. 'नये पुराने झरोखे' - 'बच्चन', पृ० २३।
४. 'वट-पीपल' - दिनकर, पृ० २८-२९।

पीड़ितों एवं दलितों का पक्ष लेना उनका स्वाभाविक गुण था । अपना सर्वस्व दानदेने में वे कभी हिचके नहीं हैं । श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है - " वे औघड़ दानी थे । उनके पास धन हो, फिर कोई मांगने वाला विमुख न जाता था । उनके पास वस्त्र हों, फिर कोई सिकुड़ नहीं सकता था । उनके पास साधन हों, फिर किसी की प्रार्थना निष्फल नहीं हो सकती थी । अनिकेतन बालकृष्ण के सहयोग ने कितनों को सनिकेतन करा दिया । - - - कितने छात्र पढ़ कर बड़े अच्छे पदों पर पहुँच गए, कितने गरीब घरों की रोटियां चलने लगीं ।"[१] उन्हें फकीर बादशाह एवं नीलकण्ठ की उपाधियाँ मिली थीं ।[२] स्वयं उन्होंने लिखा है :-

"ठाट फकीराना है अपना बाघम्बर सोहे अपने तन ।"[३]

कितने ही व्यक्तियों ने उन्हें ठग लिया परन्तु इसकी उन्होंने कभी चिन्ता नहीं की । कितने ही छात्रों की फीस वे देते थे । 'नवीन' जीके मुख से कभी 'ना' नहीं निकलता था । स्वत: निर्धन होते हुए भी उन्होंने समय समय पर धन एवं वस्त्रों से अनेकों की झोली भर दी । श्री रतनलाल बंसल ने लिखा है - 'नवीन

---

१. 'आजकल' - अप्रैल १९६४ - (लेख) 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १८ ।

२. 'ये दोनों नाम - फकीर बादशाह और नीलकंठ मैंने ही उन्हें दिए थे । इसलिए कि सचमुच वह गरीब होकर भी दिल के बादशाह थे । यह बात वे अगिनत लोग जानते हैं जिन्हें उन्होंने मुक्त हस्त से सहायता दी - कर्ज लेकर जिनकी मदद की । अपनी आवश्यकता काटकर जिन्हें खाली न जाने दिया । और नीलकंठ सागर मंथन से निकले हलाहल को कण्ठ में धारण करके भी दादा भोलानाथ औघड़ दानी ही रहे ।"

'फकीर बादशाह - मेरे दादा' - रामसरन शर्मा - सा० हि० -'नवीन'- विशेषांक , पृ० १७ ।

३. 'रश्मि रेखा' -'नवीन', पृ० १२८ ।

जी अपने मित्रों के मध्य औघड़ दानी करके प्रसिद्ध थे । वे कभी साधन सम्पन्न नहीं रहे किन्तु जब कोई सहायता का याचक उनके द्वार पर पहुँच जाता था तब न जाने कहाँ से, कैसे, 'नवीन' जी 'धनी' हो जाते थे ।[१] उन का द्वार परिचित-अपरिचित दोनों के लिए खुला था ।

वे किसी की आर्थिक सहायता करके या किसी की सिफारिश करके उस का ढिंढोरा नहीं पीटते यही उनकी दानशीलता का विशेष गुण था । उनमें अहंकार नहीं था अपितु असहिष्णु थे । अपनी रुग्णावस्था में भी 'नवीन' जी परोपकार जैसे पुण्य कार्य को छोड़ न सके । ये उनका धर्म बन गया था । कितने परदुखकातर थे वे, कि रुग्णावस्था में चिकित्सा के लिए बचाये हुए पैसों का मोह नहीं किया और उनमें से भी कुछ न कुछ निर्धनों को देते रहे । श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है – 'पक्षाघात के फलस्वरूप जब उसकी वाणी तक अवरुद्ध हो गयी थी, वे इन लोगों की सिफारिशों पर दस्तखत करते रहे । यही नही, इनमें से कई लोगों के लिए मुझसे टेलीफोन पर भी स्थान स्थान पर कहलाया था - उस हालत में । मैंने बालकृष्ण को 'आशुतोष' की व्यक्तिगत उपाधि दी थी उनके इस गुण के कारण ।'[२] 'नवीन' जी के परिवार को उनकी अत्यधिक दानशीलता के कारण कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । उनके पारिवारिक जीवन की असफलता का एक कारण यह भी था । उनकी पत्नी तिनका तिनका जोड़ कर जिस घर को बनाती थी उसे वे अपनी उदार प्रवृत्ति के कारण गिराते रहते थे । डा० दिनकर ने लिखा है -

---

१. 'युवक' (आगरा) जून १९६० (लेख) ' और श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' चल बसे' - रतनलाल बंसल, पृ० ३ ।

२. 'मेरे आत्मीय नवीन' - भगवतीचरण वर्मा - 'सरस्वती' जून - १९६०, पृष्ठ ३९३ ।

`पहली बीमारी के बाद मैंने एक दिन उनकी पत्नी से पूछा - `घर के खर्चे-वर्चे का क्या हाल है`? वह बोली - `किसी तरह चल जाता है। मुश्किल सिर्फ यह है कि उनका हाथ नहीं रुकता।`[१] निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि उनकी दानशीलता से हमें उनके सात्विक, निश्छल एवं परदुखकातर हृदय की झलक मिलती है और उनके व्यक्तित्व का सौम्य प्रकाश चारों ओर फैल जाता है।

मस्त-स्वभाव (अक्खड़ एवं अल्हड़)

बालकृष्ण सदा मस्त रहते थे। श्री गो०प० नेने ने लिखा है - `मस्ती ने हिन्दी को दो प्रतिमाएँ दी : एक, `एक भारतीय आत्मा` - माखनलाल चतुर्वेदी। दो, बालकृष्ण शर्मा `नवीन`।`[२] कविता पाठ करते समय एवं सभा-गोष्ठियों में वाद-विवाद करते समय मस्ती उनके मुख पर खिल उठती थी। श्री पद्मसिंह शर्मा `कमलेश` ने लिखा है - `बढ़े चलो जवानो` 'नवीन' जी का पेटेंट वाक्य है और इस में लापरवाही, उपेक्षा, मस्ती आदि उनके स्वभाव की सभी विशेषताएँ निहित हैं।`[३] मस्ती के कारण ही वे अपनी कृतियों के प्रति उपेक्षाशील रहे हैं। परन्तु इस मस्ती ने ही उनको इतना सरल, इतना मोहक और इतना हठीला बना दिया था। स्वयं उन्होंने लिखा है –

` हम हैं मस्त फकीर - सखीरी हम हैं मस्त फकीर।`[४]

---

१. `नर्मदा` - 'नवीन'-विशेषांक - 'जिजीविषा के चार वर्ष' - `दिनकर`, पृ०७०।
२. `राष्ट्र वीणा` - जून १९६० - सम्पादकीय (स्व० 'नवीन' जी), पृ० २।
३. `मैं इन से मिला` - दूसरी किस्त - `कमलेश` , पृ० ५८।
४. `अपलक` , पृ०७२ ।

अक्खड़ता के कारण वे शोषण को सहन नहीं कर सकते थे और हरएक व्यक्ति के साथ निश्छल आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करते थे । वे अपनी दुर्बलताओं को छिपाते नहीं, स्वयं उन्होंने अपने जीवन को एक खुली पुस्तक कहा है ।[१] श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है – ' जीवन के विस्तार में रहन-सहन के अल्हड़पने की असावधानी से जहाँ भी काले मसि बिन्दु टपके हैं,'नवीन'जी ने उन्हें छिपाने की कभी चेष्टा नहीं की । खुलावट के साहस ने उन्हें उज्ज्वल कर दिया था ।'[२] उनके व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब हमें उनके सम्पूर्ण काव्य में यत्र तत्र दिखाई पड़ता है ।[३]

'नवीन'जी के व्यक्तित्व में एक विचित्र सा अलबेला फक्कड़पन था । मित्रों में उनका यह फक्कड़ी चोला सुहाता था ।[४] वे हर समय निश्चिन्त रहते थे । अट्टहास करके हंसना उनका एक विशेष गुण था । डा० दिनकर ने लिखा है - 'लेकिन फक्कड़पन में जो एक फाँस होती है, वे आप में नहीं थी ।'[५]

---

१. 'मैंने उनसे एक व्यक्तिगत प्रश्न पूछने की आज्ञा मांगी । आज्ञा मांगते हुए मैं थोड़ा सा झिझका । उसे देखकर'नवीन'जी ने कहा -
"Don't hesitate, I am an open Book"
- 'मैं इनसे मिला' - 'कमलेश' , पृ० ५२ ।

२. 'आजकल' - अप्रैल १९६४ - (लेख)-'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ,(लेखक)- सद्गुरुशरण अवस्थी , पृ० १८ ।

३. 'व्यक्ति और वांग्मय' - प्रभाकर माचवे , पृ० १०० ।

४. 'विशाल-भारत' (जनवरी - जून १९६०) - स्वर्गीय'नवीन'जी - वासदेवशरण अग्रवाल, पृ० ४७३ ।

५. 'वट-पीपल' -'दिनकर', पृ० ३८ ।

निष्कर्ष :

समग्र रूप से बालकृष्ण का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभाव-शाली था। उनके व्यक्तित्व में अनेक परस्पर विरोधी तत्वों का एक साथ सम्मिश्रण हुआ था।[१] उनके व्यक्तित्व में आकर्षित करने की सहज क्षमता विधमान थी। अनेक मानवीय गुणों को एक साथ उनके व्यक्तित्व में पाया जाता है। श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने लिखा है - " नवीन जी का व्यक्तित्व स्फटिक शुभ्र तथा सहज मेघ के समान उदार रहा है। उनकी वाणी में गर्जन, विचारों में हृदय-मंथन था। वह दार्शनिकता, भावुकता तथा संगीत-प्रेम के मूर्तिमान मिश्रण थे। स्वभाव से वह सदैव आशुतोष शंकर रहे हैं।"[२] उनके व्यक्तित्व में एक सफल राजनीतिक योद्धा का रूप, एक भावुक कवि का रूप, एक पथ-प्रदर्शक पत्रकार का रूप, एक निस्वार्थ देश-भक्त का रूप तथा एक निर्भीक एवं फक्कड़ मानव का रूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। भारत के माननीय राष्ट्रपति ए० राधाकृष्णन ने लिखा है - " मैं उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित हुआ था।"[३] श्री बालस्वरूप राही ने लिखा है :-

---

१. " वे संयत होते हुए रौद्र, स्पष्ट होते हुए भी दुर्बोध, सरल होते हुए भी प्रकीर्ण, अकिंचन होते हुए भी विभूति युक्त, ममताद्र होते हुए भी कठोर, बहिर्मुख होते हुए भी अंतर्मुख, लौकिक होते हुए भी अलौकिक और नवीन होते हुए भी प्राचीन थे।"

-'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक -'पण्डित श्री बालकृष्ण 'नवीन'' - श्रीराम इकबाल 'राकेश', पृ० ५८।

२. 'कृति' - मई १९६० -'स्वर्गीय नवीन जी' - (श्रद्धांजलि) - पन्त, पृ० ५२।

३. सा० हि० -'नवीन'-विशेषांक -'प्रभावशाली व्यक्तित्व' - (ए० राधा-कृष्णन), पृ० ४।

'मन घाटी-सा नम्र , शीश नगपति-सा अविनत ,
मनुज मुक्ति के लिए रहे तुम सदा कर्म रत ,
बालकृष्ण ! तुम हुए महा निद्रा में तन्मय ,
किन्तु रहोगे जन-मानस में युग-युग जाग्रत ।'[१]

(इ) कृतित्व

'नवीन' जी ने ४५ वर्ष तक काव्य-साधना की, किन्तु ३० वर्ष तक उनकी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई ।[२] सन् १९३९ में उनकी प्रथम काव्य-रचना 'कुंकुम' प्रकाशित हुई परन्तु इसके पश्चात् १२ वर्षों तक उनकी कोई अन्य काव्य-कृति प्रकाशित नहीं हुई । नियमित रूप से 'नवीन' जी ने सन् १९५० के पश्चात् ही अपनी पुस्तकों को प्रकाशित करवाया । आर्थिक अभाव के कारण वे अपनी रचनाओं को समय पर प्रकाशित नहीं करा सके ।[३] नियमित रूप से वे नहीं लिखते थे , जब इच्छा होती थी लिखते थे । इस विषय में स्वयं उन्होंने कहा था - ' लिखने का ढंग ऐसा है कि जो कोई भी छन्द सामने आगया उसी पर मंथन होने लगा और उसकी प्रथम पंक्ति लिख ली । अधिकतर एक ही सिटिंग में लिखता हूँ । फाउण्टेन पेन से इसलिए नहीं लिखता कि यदि उसे खोलूँ और बीच में सोचने लग जाऊँ तो स्याही सूख जाय और गति रुक जाय ।'[४]

---

१. सा० हि० - 'नवीन'-विशेषांक - 'श्रद्धा के तीन छन्द सुमन' - बालस्वरूप 'राही' , पृ० ३ ।
२. सा० हि० - ३ जुलाई १९६० (लेख) 'राजनीति के पंकज से' - कान्ति-चन्द्र सोनरेक्सा, पृ० १९ ।
३. श्रीकृष्णदत्त पालीवाल जी से प्रत्यक्ष भेंट १८-२-१९६५ द्वारा ज्ञात ।
४. 'मैं इनसे मिला' - 'दूसरी किस्त' - 'कमलेश' , पृ० ५५ ।

श्री बालकृष्ण 'नवीन' का सम्पूर्ण प्रकाशित-अप्रकाशित साहित्य मुख्य रूप से हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं – (अ) पद्य-साहित्य , (आ) गद्य-साहित्य । उनका सम्पूर्ण पद्य-साहित्य अब प्रकाशित हुआ है जिसका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार से है :-

(१) 'कुंकुम' (सन् १९३९) - प्रथम काव्य-संग्रह 'कुंकुम' सन् १९३९ में प्रकाशित हुआ । इस काव्य पुस्तक में ३८ कविताएँ संग्रहीत हैं । खड़ी बोली के साथ साथ कुछ कविताएँ ब्रजभाषा में भी मिलती हैं । मुख्य रूप से इसमें हमें दो प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं – राष्ट्रीय एवं शृंगारपरक । डा० दुबे ने लिखा है – 'कवि के प्रथम संकलन से ही यह विदित होता है कि उसकी काव्य-धारा दो प्रधान विभागों - राष्ट्रीयता तथा प्रणय के कूलों को स्पर्श करती प्रवाहित हो रही है ।'[१] देश-भक्तिपरक रचनाओं में 'सावधान' , 'जाह्नवी के प्रति', 'पराजय गीत', 'विप्लव गायन', एवं 'शिखर पर' विशेष उल्लेखनीय हैं ।[२] प्रेम-परक रचनाओं में 'दो पत्र' , 'निमन्त्रण', 'रक्षाबन्धन' एवं 'हिय की कसक' कविताएँ इस संग्रह की श्री वृद्धि करती हैं ।[३]

(२) रश्मि-रेखा - 'नवीन' जी का द्वितीय काव्य - संग्रह सन् १९५१ में प्रकाशित हुआ । ५७ कविताओं का यह संग्रह उन्होंने श्री हरिशंकर विद्यार्थी को समर्पित किया है । इस संग्रह में रहस्यवादी, प्रेमपरक, प्रकृति-चित्रण सम्बन्धी एवं प्रार्थनापरक रचनाएँ मिलती हैं । इन गीतों में मांसल भावुकता है । शृंगार के दोनों पक्ष संयोग एवं वियोग का सफल चित्रण कई कविताओं में मिलता है । 'प्राणधन, यह मदमत्त बयार' , 'पावस पीडा' एवं 'हम अनिकेतन' प्रसिद्ध

---

१. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे , पृ० १५० ।
२. 'कुंकुम' - पृ० ३, २५, ६३-६८, ९-१३, ८० ।
३. वही - पृ० ८७, ७०, ५, ५४ ।

कविताएँ इस संग्रह की शोभा हैं ।[१]

(३) `अपलक` - ५२ कविताओं का यह संग्रह भी सन् १९५१ में प्रकाशित हुआ । डा० दुबे ने लिखा है - `अपलक का मुख्य काव्य-विषय प्रेम है । प्रेम में स्मृति जन्य वियोग एवं वेदना के चित्र अधिक उभर कर आये हैं । प्रेम-परक कविताओं के अतिरिक्त, आध्यात्मिक व्यक्तिगत अल्हड़ता तथा प्रकृति-चित्रण सम्बन्धी कविताएँ भी मिलती हैं ।[२] `अपलक` में संग्रहीत समस्त कविताएँ खड़ी बोली में लिखी हुई हैं । इनमें संगीत गुण भी विद्यमान है । अधिकांश कविताएँ गीतात्मक हैं । उनकी अन्तर्वेदनामय भावनाओं का प्रसुफटन भी इन गीतों द्वारा हुआ है । यह संग्रह 'नवीन' जी ने श्रीमती इन्दिरा गान्धी को समर्पित किया है ।

(४) `क्वासि` - सितम्बर सन् १९५२ में प्रकाशित यह काव्य-संग्रह 'नवीन' जी के आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विचारों का प्रतिनिधित्व करता है । इसमें ५५ कविताएँ संग्रहीत हैं । कहीं कहीं पर 'नवीन' जी ने कविता के अंतर स्थान, तिथि एवं समय का उल्लेख भी किया है जिससे यह ज्ञात होता है कि ये रचनाएँ गणेश कुटीर कानपुर, उन्नाव, गाजीपुर एवं बरेली कारागृहों के शून्य कक्षों में लिखी गयी हैं । प्रकृति सुषमा के अनेक रंगीले चित्र इस गीत-माला में हमें यत्र-तत्र मिलते हैं । इन गीतों में हमें उनके स्वाध्याय, प्रबल कल्पनाशक्ति तथा मानव स्वभाव अध्ययन के दर्शन होते हैं । `डोले वाले` एवं `क्वासि` इस गीति-संग्रह की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं ।[३]

---

१. `रश्मि रेखा` , पृ० ३७-३९, ५७-५८, १२८-१२९ ।
२. `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे , पृ० १५३ ।
३. `क्वासि` , पृ० ४७, ११८ ।

(५) 'विनोबा-स्तवन' - सन् १९५४ में प्रकाशित 'नवीन' जी की यह काव्य रचना युग पुरुष विनोबा के आदर्श चरित्र को प्रतिबिम्बित करती है। यह काव्य-कृति 'नवीन' जी ने बन्धुवर सियारामशरण गुप्त को सस्नेह समर्पित की है। ~~यह काव्य-कृति 'नवीन' जी ने बन्धुवर सियारामशरण गुप्त को सस्नेह समर्पित की है।~~

(६) उर्मिला - सन् १९२२ में बालकृष्ण ने उर्मिला महाकाव्य को लिखना आरम्भ किया था और सन् १९३४ में समाप्त किया।[१] परन्तु इस ग्रन्थ का पुस्तकाकार में प्रकाशन सन् १९५७ में हुआ। डा० शिवमंगलसिंह 'सुमन' ने लिखा है - 'अपनी रचनाओं के प्रकाशन के प्रति कवि का कुछ ऐसा उपेक्षा भाव था कि आज युग के आकलन कर्ताओं को राष्ट्रीय संघर्ष की इस वाग्धारा का अविच्छिन्न प्रवाह-सूत्र प्राप्त कर सकना कठिन हो रहा है। कौन विश्वास करेगा कि 'साकेत' के प्रकाशन के पूर्व ही 'नवीन' की मर्म मधुर लेखनी से काव्य की उपेक्षित उर्मिला की मूक वेदना मुखरित होने को बेचैन हो उठी थी।'[२] यह महाकाव्य छः सर्गों में विभक्त है। युग युग से उपेक्षित उर्मिला के जीवन का मर्मस्पर्शी, सजीव एवं आकर्षक चित्र 'नवीन' जी ने अपनी इस काव्य-कृति में खींचा है। इस ग्रन्थ में 'नवीन' जी ने सांस्कृतिक विकास की ओर भी संकेत किया है। 'नवीन' जी ने इस ग्रन्थ में खड़ी बोली एवं ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। इसमें राम-कथा के उन्हीं अंशों को लिया गया है, जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उर्मिला तथा लक्ष्मण से है। वाल्मीकि एवं तुलसी ने उर्मिला से सम्बन्धित जिन प्रसंगों की उपेक्षा की थी 'नवीन' जी ने उन्हें प्रमुखता देते हुए नवीन उद्भावनाओं के साथ प्रस्तुत किया है। यह काव्य कृति 'नवीन' जी ने राष्ट्रीय कवि गुप्त जी

---

१. 'ऊर्मिला' - श्री लक्ष्मणचरणार्पणमस्तु' - 'नवीन', पृ० (ख-ग)।
२. सा० हि०, २० मई १९६२, (लेख)- 'स्वर्गीय बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - डा० शिवमंगलसिंह 'सुमन', पृ० ४७।

को समर्पित की है ।

'नवीन' जी की मृत्यु के पश्चात् उनके दो काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित हुए - `प्राणार्पण` एवं `हम विषपायी जन्म के` । `प्राणार्पण` अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी के आत्मोत्सर्ग पर रचित एक खण्ड-काव्य है । इस ग्रन्थ को श्रीमती बालकृष्णा शर्मा `नवीन` ने सरस्वती प्रेस इलाहाबाद से प्रकाशित करवाया । स्वर्गीय पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने इसकी भूमिका में लिखा है- ` अब बालकृष्ण जी भी गुज़र गये । लेकिन उनकी यह कविता उनकी और गणेशशंकर जी की एक स्मारक रहेगी । और विशेषकर हिन्दू-मुस्लिम एकता की यह एक ज़िन्दा मिसाल कायम रहेगी ।[१] एक वीर योद्धा के समान गणेश जी ने मृत्यु का स्वागत किया और उसी स्मरणीय घटना का काव्यात्मक वर्णन 'नवीन' जी ने इस रचना में किया है । कानपुर में सन् १९३१ के हिन्दू-मुस्लिम भीषण रव का चित्रण भी इस कृति में हुआ है । अप्रकाशित रूप में इस कृति के पांच सर्ग थे परन्तु प्रकाशन के समय इसका पांचवा सर्ग - जिस में मृत्यु सम्बन्धी दार्शनिक गीत थे - इसके साथ सम्मिलित नहीं किया गया ।

`हम विषपायी जन्म के` - 'नवीन' जी का काव्य विपुल मात्रा में अप्रकाशित रहा था । उनकी मृत्यु के पश्चात् भारतीय ज्ञानपीठ ने यह उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया और उनकी छः अप्रकाशित काव्य कृतियों को एक ही पुस्तक `हम विषपायी जन्म के` में संग्रहीत करके सन् १९६४ में प्रकाशित किया । अपने छः अप्रकाशित काव्य संग्रहों के शीर्षक स्वयं उन्होंने निश्चित किए थे और वे इस प्रकार से हैं :-

---

१. `प्राणार्पण` - भूमिका , पृ० १ ,(लेखक) - पण्डित जवाहरलाल नेहरू ।

१. सिरजन की ललकारें [१],
२. नवीन दोहावली ,
३. यौवन मदिरा [२],
४. प्रलयंकर ,
५. स्मरण-दीप , एवं
६. मृत्यु-धाम । [३]

इस कृति के प्रकाशन से 'नवीन' जी का कवि-व्यक्तित्व समग्र रूप से साहित्य-मर्मज्ञों के सम्मुख आया है । इस काव्य-कृति के द्वारा 'नवीन' जी की बहुमुखी प्रतिभा का पूर्ण परिचय हमें मिलता है । वास्तव में ये धूल भरी मणियाँ थीं जिन्हें पोंछने का पुण्य-कार्य भारतीय ज्ञानपीठ ने सम्पन्न किया ।

'नवीन' जी का गद्य साहित्य — 'नवीन' जी का गद्य-साहित्य यत्र तत्र बिखरा पड़ा है । उनके सम्पूर्ण गद्य-साहित्य मुख्य रूप से इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है :-

१. कहानियाँ ,
२. पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख ,
३. सम्पादकीय टिप्पणियाँ ,
४. अग्रलेख ,
५. काव्य-ग्रन्थों में प्रकाशित भूमिकाएँ ।

---

१. 'सिरजन की ललकारें' को कवि ने एक सहशीर्षक 'नूपुर के स्वन' भी दिया है।
-'हम विषपायी जन्म के' -पृ०५-'समर्पण' - लक्ष्मीचन्द्र जैन ।

२. 'यौवन मदिरा' को कवि ने एक और शीर्षक 'पावस पीड़ा' दिया है ।
-'हम विषपायी जन्म के' - पृ० ६-'समर्पण' - लक्ष्मीचन्द्र जैन ।

३. 'मृत्यु धाम' को कवि ने दूसरा शीर्षक 'सृजन झांझ' भी दिया है ।
'ज्ञानपीठ पत्रिका' - अप्रैल १९६४(लेख) 'हम विषपायी जन्म के',-डा०दुबे , पृ० २४।

इसके अतिरिक्त 'नवीन' जी ने अनेक राजनीतिक तथा साहित्यिक सभा-गोष्ठियों में भाषण दिए हैं।[१] 'नवीन' जी की प्रसिद्ध कहानी 'सन्तू' प्रो० केशव देव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक 'नवीन-दर्शन' के अन्त में प्रकाशित की है। 'प्रभा' एवं 'प्रताप' के अनेक अंक 'नवीन' जी के गद्य लेखों से भरे पड़े हैं। परन्तु कहीं भी पुस्तकाकार में संग्रहीत नहीं मिलते हैं और न स्वयं 'नवीन' जी ने इस की चिन्ता की है। श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है – 'बालकृष्ण शर्मा उन साहित्य कुबेरों में से हैं, जो अपना सरस्वती - कोष बिखेर देना जानते थे, उसका उपयोग करना नहीं जानते। यही कारण है कि समीक्षकों की दृष्टि अभी बालकृष्ण के ऊपर एक उत्तम गद्य-लेखक के रूप में नहीं पड़ी।'[२] उनके प्रसिद्ध अग्रलेख एवं सम्पादकीय टिप्पणियाँ ओजपूर्ण गद्य-शैली के उज्ज्वलतम उदाहरण हैं। गद्य-लेखों में उन का व्यक्तित्व स्पष्ट झलकता है। उनका भावुक हृदय गद्य लेखों में खुल पड़ा है। डा० रामगोपाल चतुर्वेदी ने उनके गद्य-साहित्य के विषय में लिखा है - 'चाहे किसी विषय पर उनकी कलम चले, उन का अन्तस बिना झलके नहीं रहता। सच तो यह है कि उनका व्यक्तित्व सम्पूर्ण रूप से मुखरित होता है। उनकी विनम्रता, राग, द्वेष और फक्कड़पन सभी कुछ पंक्ति-पंक्ति में बोलता है। वे जोश-खरोश के आदमी थे और यही कारण है कि उनकी भाषा में वेग है, प्रखरता है। जिधर उनका रुख हुआ, उधर पिल पड़े। विरोध होगा

---

१. 'नागपुर साहित्य-सम्मेलन के सभापति के पद से जो भाषण उन्होंने दिया था, उसमें उन्होंने मुझे बड़े स्नेह-सम्मान के साथ स्मरण किया था। - - - - - जब उनका प्रथम काव्य-संग्रह 'कुंकुम' प्रकाशित हुआ, तब यह भाषण उसकी भूमिका के रूप में दिया गया।'

-'नये पुराने झरोखे' -'बच्चन', पृ० २४।

२. 'आजकल' - अप्रैल १९६४ - 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरु शरण अवस्थी, पृ० १९।

तो खूब और समर्थन होगा तो डट कर ।"[१] प्रसंगानुकूल एवं भावानुकूल भाषा का प्रयोग करने में 'नवीन' जी कुशल थे । शब्दों के द्वारा पाठक के सम्मुख एक चित्र-सा उपस्थित करते थे । निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि 'नवीन' जी एक प्रभावशाली गद्य लेखक थे ।

जीवन-चरित (तुलनात्मक)

इससे पूर्व हमने दोनों कवियों की जीवनी का स्वतन्त्र रूप से विवेचन किया है । तुलनात्मक दृष्टिकोण से दोनों के जीवन-चरित में साम्य एवं वैषम्य को देखना नितान्त आवश्यक है । पूर्व अध्ययन के आधार पर हम यहाँ पर संक्षिप्त रूप से कुछ निष्कर्ष निकाल सकते हैं । दोनों महाकवियों का जन्म प्रकृति की गोद में नगर के कोलाहल से दूर गाँव में हुआ है । जहाँ `महजूर` का जन्म कश्मीर के पात्रिगाम नामक गाँव में हुआ वहाँ 'नवीन' जी का जन्म मध्यभारत में शुजालपुर के निकट म्याना ग्राम में हुआ है ।

दोनों कवियों का जन्म १९वीं शताब्दी में हुआ है । पण्डित बालकृष्ण की जन्मतिथि के विषय में कोई मतभेद नहीं है परन्तु `महजूर` की जन्म तिथि के विषय में विद्वान एकमत नहीं हैं । कवि ने स्वयं अपनी जन्मतिथि के विषय में कहीं भी उल्लेख नहीं किया । `महजूर` के सुपुत्र श्री मुहम्मद अमीन ने उनके जीवनकाल में ही इस मतभेद को दूर करने का प्रयत्न किया है । अपने मत के पक्ष में जो तर्क उन्होंने दिए वे हमें सर्वथा समीचीन दीख पड़ते हैं ।

जहाँ `महजूर` के पिता पीर-मुरीदों का पुनीत कार्य करते थे वहाँ बाल-कृष्ण के पिता नाथद्वारे में पुरोहित थे । दान-दक्षिणा में पाये गए अन्न एवं

---

१. `नर्मदा` - 'नवीन'-विशेषांक १९६३ -(लेख)- 'नवीनजी का गद्य साहित्य', (लेखक)- रामगोपाल चतुर्वेदी , पृ० १२५ ।

धन से दोनों का जीवन पोषित हुआ । बालकृष्ण का परिवार अत्यंत दरिद्र था । घर में खाने-पीने तक के लाले पड़ जाते थे । बच्चे के लिए एक चम्मच दूध का प्रबन्ध तक नहीं हो सकता था । परन्तु `महजूर` के परिवार की आर्थिक दशा इससे कहीं अच्छी थी । यद्यपि `महजूर` का परिवार वैभवशाली नहीं था तथापि 'नवीन' जी के परिवार से कहीं अधिक सुव्यवस्थित एवं धनवान था । पैतृक सम्पत्ति भी `महजूर` के पिताजी के पास काफी थी ।

दोनों महाकवियों की माताएँ विदुषियाँ थीं अत: वे अपने अपने बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास में सावधानी बरतती थीं । बालकृष्ण को आरम्भिक अक्षर-ज्ञान अपनी माता द्वारा ही मिला था परन्तु यह सौभाग्य `महजूर` को प्राप्त नहीं हुआ ।[१] जहाँ बालक गुलाम अहमद को आरम्भ से ही अरबी एवं फ़ारसी में शिक्षा मिली वहाँ 'नवीन' जी को हिन्दी एवं संस्कृत में । परन्तु जिस सुनिश्चित एवं सुव्यवस्थित ढंग से बालकृष्ण ने शिक्षा प्राप्त की वैसा सुअवसर `महजूर` को प्राप्त नहीं हुआ जिसका कारण उनके पूज्य पिताजी थे । वे अपने पुत्र को शीघ्रातिशीघ्र अपना काम सौंप देना चाहते थे । अत: `महजूर` मिडिल की परीक्षा भी पास न कर पाये परन्तु 'नवीन' जी ने बी०ए० तक शिक्षा ग्रहण की । यदि राष्ट्रीय आन्दोलन में वे कूद न पड़ते तो सम्भवत: उच्च अध्ययन कर पाते । परन्तु यह स्पष्ट है कि `महजूर` जीवन के स्कूल में काफ़ी पढ़ा था । 'नवीन' जी की भांति `महजूर` ने जीवन में सुख एवं दुख का

---

१. `महजूर` जब डेढ़ वर्ष का बालक था तो उसकी माता का देहान्त हो गया अत: उन पर अपनी माता का अत्यधिक प्रभाव नहीं पड़ा । कुछ विद्वानों का कथन है कि `महजूर` जब केवल दस मास के थे तभी उनकी माता का देहान्त हुआ है । स्वयं `महजूर` भी अन्तिम मत से ही सहमत थे ।

एक साथ अनुभव किया था । दोनों कवियों का जीवन-स्रोत दुख एवं सुख रूपी दो कूलों के बीच में बहा है । जीवन की कटु वास्तविकता से दोनों परिचित थे।

कवि `महजूर` पर मौलाना बिस्मिल, अल्लामा शिब्ली, चौधरी खुशी मुहम्मद `नाज़िर` , आफत लधुयानवी, मौलाना अब्दुल गनाई `आशिक` तथा अन्य महानुभावों का प्रभाव पड़ा है और विभिन्न साहित्यिक गोष्ठियों में भाग लेने के फलस्वरूप उनकी लेखनी परिपक्कव हो गई । `नवीन` जी पर साहित्यिक महानुभावों के साथ-साथ राजनीतिक नेताओं का भी प्रभाव पड़ा। जहाँ साहित्यिक क्षेत्र में वे सर्वश्री माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त, बनारसीदास चतुर्वेदी एवं डा० रामधारीसिंह `दिनकर` के निकट सम्पर्क में थे वहाँ राजनीतिक क्षेत्र में उनके गुरु स्वर्गीय गणेश शंकर विद्यार्थी थे । सत्य तो यह है कि विद्यार्थी जी के चरण-कमलों के समीप बैठकर 'नवीन' जी ने सुव्यवस्थित रूप से गद्य लिखना आरम्भ किया । पत्र-कारिता जगत में उन्हें विद्यार्थी जी ही लाए । इसके अतिरिक्त देशपिता गान्धी जी को भी वे अपना राजनीतिक पथ-प्रदर्शक मानते थे । निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि जिन उच्च कोटि के विद्वानों, राजनीतिक नेताओं एवं साहित्यकारों के सम्पर्क में 'नवीन' जी आए वैसा सौभाग्य `महजूर` को प्राप्त नहीं हुआ । `महजूर` के काव्य की प्रशंसा महाकवि इकबाल एवं टैगोर ने की परन्तु उनके सम्पर्क वे नहीं आए । उनसे विचार-विनिमय करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त नहीं हुआ । कुछ साहित्यिक गोष्ठियों में `महजूर` ने अवश्य भाग लिया परन्तु एक या दो बार से अधिक नहीं ।

`महजूर` ने आरम्भ में फ़ारसी भाषा में क़ाव्य लिखा । कुछ समय के पश्चात् उर्दू में और अन्त पर कश्मीरी भाषा में लिखते रहे । परन्तु 'नवीन' जी ने आरम्भ से ही हिन्दी भाषा को अपनाया और अन्त तक अपनाते रहे । बालकृष्ण ने अपना साहित्यिक जीवन कहानीकार के रूप में आरम्भ किया ,

और कुछ समय के पश्चात् उनका कवि-हृदय जाग उठा । देश की शोचनीय दशा से प्रभावित होकर 'महजूर' ने राष्ट्रीय काव्य लिखा जब कि इससे पूर्व वे प्रेम-परख कविताएँ लिखते थे ।'नवीन' जी भी आरम्भमें स्वच्छन्द प्रेम की रचनाएँ लिखते थे परन्तु भारतवासियों की दुर्दशा को देखकर उनका हृदय चीत्कार कर उठा और उनका काव्य-विषय देश-प्रेम बन गया ।

विवाह के पश्चात् 'महजूर' नौकरी की टोह में रहे और अन्त में लेखपाल नियुक्त हुए । बहुत समय तक उन्होंने इस कार्य को किया, फलत: देश के विभिन्न कोनों में उन्हें जाने का अवसर प्राप्त हुआ । देश-वासियों की कठिनाइयाँ स्वयं उन्होंने अपनी आंखों से देखीं परन्तु यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि लेखपाल होने के कारण ही वे राजनीतिक क्षेत्र में खुल कर सरकार का विरोध नहीं कर सके । इसके विपरीत 'नवीन' जी ने अपना सर्वस्व देश पर अर्पण कर दिया , उनका जीवन-लक्ष्य देशवासियों की निश्छल भाव से सेवा करना था । विदेशी सरकार पर'नवीन'जी ने अपनी वाणी एवं लेखनी द्वारा कड़े प्रहार किए । अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि जहाँ 'महजूर' राजकीय कर्मचारी होने के कारण विवश थे वहाँ बालकृष्ण स्वच्छन्द रूप से आगे बढ़े ।

दोनों कवियों ने पद्य एवं गद्य में रचनाएँ लिखीं । परन्तु जिस प्रकार 'नवीन'जी का गद्य-साहित्य अव्यवस्थित रूप में विद्यमान है उसी प्रकार 'महजूर' का गद्य साहित्य अप्रकाशित रूप में है ।'नवीन'जी का गद्य-साहित्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ है लेकिन पुस्तकाकार में कहीं भी संग्रहीत नहीं मिलता । यह बात ध्यान रखने योग्य है कि जहाँ'नवीन'जी अपने सम्पूर्ण साहित्य (गद्य एवं पद्य) के प्रकाशन के प्रति उपेक्षाशील रहे हैं वहाँ 'महजूर' ने विकट परिस्थितियों में भी अपनी काव्य-पुस्तिकाओं को फारसी एवं देवनागरी लिपि में प्रकाशित करवाया था ।

'महजूर' नेअपना समस्त जीवन काव्य रचना में व्यतीत किया और साथ साथ सरकारी कर्मचारी का कर्तव्य भी निभाते रहे। इस में सन्देह नहीं कि एक दो बार उन्हें राजनीतिक-कोपभाजन बनना पड़ा परन्तु राजनीतिक आन्दोलनों में उन्होंने कोई सक्रिय भाग नहीं लिया। इसका कारण यही है कि गृहस्थी का उत्तरदायित्व उनके कन्धों पर था। सरकारी नौकरी छोड़कर वे अपने परिवार को कैसे पाल सकते। यह एक विवशता थी जिसने उसे राजनीतिक दाँवपेंच से पीछे रक्खा। इसके विपरीत 'नवीन' जी स्वतंत्रता संग्राम के एक वीर योद्धा थे। देश के अन्य राजनीतिक नेताओं के समान 'नवीन' जी भी राजनीतिक कार्यों में आगे आगे रहते थे। उन्होंने राजनीतिक एवं साहित्यिक कर्तव्य दोनों निभाए जब कि 'महजूर' केवल मात्र साहित्यकार थे, एक सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता नहीं। राजनीति के विषैले वातावरण में 'नवीन' जी की काव्य-प्रतिभा कुछ दब गई थी। यद्यपि मातृभूमि के लिए यह एक पुनीत कार्य था परन्तु साहित्यदेवी के प्रति इससे एक प्रकार की उपेक्षा हुई है। यह सत्य है कि 'महजूर' ने स्वयं राजनीतिक-संघर्ष में भाग नहीं लिया परन्तु उनकी लेखनी सदैव सत्ताधारियों पर कड़ी चोटें करती थी। मातृभूमि के सपूतों को वे सदैव उत्साहित करते रहे। देश की सुप्त जनता को जाग्रत करने का प्रयत्न करते रहे। निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि जहाँ 'नवीन' जी ने राजनीतिक आन्दोलनों में एक कर्मठ योद्धा की भाँति सक्रिय भाग लिया और साथ ही साहित्य सेवा भी की वहाँ 'महजूर' ने केवल मात्र लेखनी के सहारे ठोस कार्य किया है।

दोनों कवियों का लक्ष्य एक था। जहाँ 'महजूर' ने डोगरा-राज्य के विरुद्ध अपनी लेखनी चलाई वहाँ बालकृष्ण ने अंग्रेज़ी-राज्य के विरुद्ध आवाज़ उठाई।

दोनों महाकवियों ने जीवन में दरिद्रता का साहस के साथ सामना किया है। अनेक कठिनाइयों को झेलकर बालकृष्ण ने २० वर्ष की आयु में मैट्रिक की परीक्षा पास की और बिगड़ती हुई पारिवारिक दशा को देखकर 'महजूर' ने मिडिल पास करने से पूर्व ही स्कूली शिक्षा को तिलांजलि दी। दोनों का जीवन गरीबी की मुँह बोलती तस्वीर (दरिद्रता का मुँह बोलता चित्र) है।

'महजूर' प्रकृति के रम्य आंगन में स्वछन्द रूप से घूमते फिरते थे। मातृभूमि के प्राकृतिक सौन्दर्य ने उनके हृदय को आकर्षित किया था। प्रकृति की पृष्ठभूमि में उन्होंने अपनी भावनाओं को काव्यगत अभिव्यक्ति दी है। इसके विपरीत 'नवीन' जी के जीवन का काफी भाग कारागृहों की अन्धेरी कोठरियों में व्यतीत हुआ और अपने साहित्य का अधिकांश भाग उन्होंने वहीं लिख डाला है।

दोनों महाकवियों में सेवा भाव कूट कूट कर भरा हुआ था। पर-दु:ख को अपना दु:ख समझ कर जहाँ 'महजूर' का हृदय विह्वल हो उठता था वहाँ 'नवीन' जी पर-दु:ख से इतने खिन्न हो उठते थे कि उन की आँखों से अश्रु-वर्षा होने लगती थी। उनका हृदय पीड़ित जनता को देखकर द्रवित हो उठता था। वे अपनी थाली में परोसा हुआ भोजन भी बुभिक्षित जन को देकर स्वयं भूखे रहते थे। वास्तव में दोनों कवि त्याग एवं सेवा को अपना परम कर्तव्य समझते थे।

दोनों महाकवियों ने जनता के निकट सम्पर्क में आकर उनकी समस्याओं को समझने और सुलझाने का प्रयत्न किया है। 'महजूर' जम्मू-कश्मीर के कोने-कोने में घूमे यहाँ तक कि लद्दाख भी गए। इसके अतिरिक्त भारत के अन्य प्रदेशों को भी देखा है। 'नवीन' जी भारत के चप्पे चप्पे से परिचित थे। यह हम निस्संकोच कह सकते हैं कि जनता के सम्पर्क में 'महजूर' की अपेक्षा 'नवीन' जी अधिक आए हैं।

जीवन के अन्तिम दिनों में दोनों कवि महोदय रुग्ण रहे। शारीरिक पीड़ा से उनका शरीर जर्जरित हुआ। परिणामस्वरूप अन्तिम वर्षों में वे कुछ नहीं लिख सके। 'नवीन' जी अत्यधिक अस्वस्थ रहे। भयंकर एवं निर्दयी रोग ने उन पर अनेकों प्रहार किए। दो बार पक्षाघात से ग्रस्त हुए परन्तु अन्त तक मृत्यु से जूझते रहे। अन्त में उनकी स्मरण शक्ति भी लुप्त हो गई और उनके फेफड़ों में कैंसर हो गया। इसी प्रकार 'महजूर' पर भी अधिक रक्तचाप के कारण दो बार पक्षाघात का आक्रमण हुआ और उसी में उन की मृत्यु हुई।

जीवन के अन्तिम वर्षों में दोनों कवि महोदय निराश हुए। 'महजूर' ने 'नया-कश्मीर' का जो स्वप्न देखा था - उसे पूरा न होते देख वे पहले तो क्रुद्ध हो उठे परन्तु अपने को असहाय देखकर वे निराश हो गए। इसी प्रकार 'नवीन' जी ने जब यह देखा कि स्वतंत्रता के पश्चात् हम गान्धी-मार्ग से हट आए हैं तो उनके मन में अशान्ति उत्पन्न हुई। जब उन्होंने देखा कि राजनीति में ऐसे लोग चढ़ बैठे जिनका कोई आदर्श नहीं तो वे हृदय मसोस कर रह गए। अत: दोनों कवियों ने स्वराज्य की जो कल्पना की थी, जिसके मुख्यतत्त्व सच्चाई, ईमानदारी एवं जन-सेवा थी - उसे पूरा न होते देख उनका हृदय अवसाद, निराशा एवं पीड़ा का घर बन गया।

'महजूर' की मृत्यु से पूर्व श्रीनगर में 'महजूर-दिवस' मनाया गया। 'महजूर' स्वयं इस साहित्यिक-गोष्ठी में सम्मिलित हुए। कश्मीरी भाषा के प्रसिद्ध कवियों एवं लेखकों ने इसमें भाग लिया। कवि महोदय के प्रति सम्मान प्रकट करने का यह एक सुअवसर था। इसी तरह शर्मा जी की मृत्यु से पूर्व एक वर्ष दिल्ली साहित्य सम्मेलन ने एक गोष्ठी का आयोजन किया जिसका सभा-पतित्व राष्ट्रीय कवि स्वर्गीय मैथिलीशरण गुप्त ने किया। इस गोष्ठी में सम्मान-पत्र डा० रामधारीसिंह दिनकर ने पढ़ा। यह एक हृदय-विदारक दृश्य था क्योंकि 'नवीन' जी स्वयं बोलने में असमर्थ थे। रोग ने उनकी वाणी को

छीन लिया था ।

दोनों महाकवियों का व्यक्तित्व प्रभावशाली था । दोनों के हृदय में देश का दर्द था, वही दर्द उनके काव्य में साकार हो उठा ।

दोनों महाकवि २०वीं शताब्दी में स्वर्गवासी हुए और अपने पीछे अपनी अमर कृतियों का भाण्डार छोड़ गए । ६ अप्रैल सन् १९५२ को `महजूर` का देहान्त हुआ और अथवाजन में राष्ट्रीय सम्मान सहित उनका अन्तिम संस्कार ११ अप्रैल को किया गया । उनकी शव-यात्रा में कश्मीरी जनता सहस्रों की संख्या में सम्मिलित हुई । २६ अप्रैल सन् १९६० को 'नवीन' जी ने अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया और दूसरे ही दिन उनकी कर्म-भूमि कानपुर में उनका दाह संस्कार राष्ट्रीय सम्मान सहित किया गया । वास्तव में दोनों कवियों के स्वर्गवास होने पर साहित्यिक क्षेत्र में एक ऐसी रिक्ति हो गयी जिस को पूरा करने में हम सदा असमर्थ रहेंगे ।

`महजूर` के आविर्भाव से जहाँ कश्मीरी भाषा में एक नवीन युग का उदय होता है । वहाँ 'नवीन' जी ने हिन्दी साहित्य में नवीन प्रवृत्तियों एवं काव्य-शैलियों को अपना कर माँ सरस्वती का भाण्डार भर दिया । `महजूर` ने गीत एवं गज़लों में अपनी समस्त रचनाएँ लिखीं परन्तु 'नवीन' जी ने गीतों के अतिरिक्त एक दो खण्ड-काव्य एवं एक महाकाव्य भी लिखा है ।

मृत्यु के पश्चात `नवीन` जी के जीवन एवं उनके काव्य के विषय जितने लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए, उनका एक चौथाई भी `महजूर` के विषय में प्रकाशित नहीं हुआ । 'नवीन' जी के सम्पूर्ण पद्य-साहित्य को प्रकाशित किया गया है और अब उनके काव्य पर काफी अध्ययन हो रहा है । इसी प्रकार

`महजूर` के काव्य पर भी अब कई लेखक काम कर रहे हैं।[१] कश्मीर सरकार का अनुसन्धान-विभाग भी इस विषय पर काम कर रहा है।

--

---

१. `डा० पद्मनाथ गुँजू ने १०० पृष्ठ की एक पुस्तक `महजूर' एवं उनके काव्य' पर लिखी है परन्तु यह अभी अप्रकाशित है। निकट भविष्य में इसके प्रकाशित होने की सम्भावना है।`

(३०-५-१९६५)

- डा० पद्मनाथ से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात।

अध्याय–२.

काव्य प्रवृत्तियाँ एवं युग - परिचय

(१) कश्मीरी काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ एवं `महजूर` की समसामयिक परिस्थितियाँ ।

(२) ~~आधुनिक हिन्दी काव्य की मुख्य प्रवृत्तियां एवं~~ `नवीन` की समसामयिक परिस्थितियाँ ।

अध्याय २.

काव्य प्रवृत्तियाँ एवं युग - परिचय

कश्मीरी काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ :

कश्मीर-भूमि में ही संस्कृत साहित्य के अमूल्य रत्न जगमगाये । कश्मीर शारदापीठ के नाम से भी प्रख्यात है । काव्यशास्त्र के दिग्गज विद्वान्, दर्शन के प्रकाण्ड पण्डित एवं इतिहास के ज्ञाता यहाँ उत्पन्न हुए जिन्होंने जगत-प्रसिद्धि प्राप्त की । श्री जियालाल कयलम् के विचारानुसार संस्कृत-काव्य का समुचित विकास यहाँ प्राचीन काल में हुआ है ।[१] काव्य में जितने सम्प्रदाय हैं, उन सभी का उदगम स्थान कश्मीर है । श्री अनन्तराम शास्त्री ने लिखा है - 'प्राचीन संस्कृत साहित्य का अवलोकन करते हुए कोई नहीं कह सकता कि संस्कृत साहित्य के निर्माण-कार्य में कश्मीर किसी से भी पीछे रहा है, अपितु सब से दो कदम आगे ही है । संस्कृत साहित्य को कश्मीर ने जो कुछ दिया, उसका लोहा

---

१. 'Sanskrit Poetry reached its high water mark in ancient Kashmir and we have received in heritage a huge mass of classic poetry of unique merit.'
Monthly Journal 'Kashmir' June, 1957.
'Ancient Period of Kashmiri Literature.'
- Justice Jai Lal Kilam - Page 154.

आज भी सभी मानते हैं । - - - इन्होंने साहित्य के किसी भी अंग को अधूरा नहीं रखा ।'[१]

ध्वनि सम्प्रदाय के प्रवर्तक आनन्दवर्धन (८०० ई०) राजा अवन्ति वर्मा के सभापण्डित थे । इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक' साहित्यशास्त्र के इतिहास में एक उल्लेखनीय कृति है । वामन (८०० ई०) के ग्रन्थ 'काव्य-अलंकार सूत्र' में रीति-सम्प्रदाय का चरमोत्कर्ष दिखलाई पड़ता है । इन्होंने रीति को ही काव्य की आत्मा माना है इसके अतिरिक्त अलंकारों का बड़ा ही सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक विवेचन इस ग्रन्थ में मिलता है । उद्भट अलंकार सम्प्रदाय के अनुयायी थे ।इन्होंने 'काव्यालंकार संग्रह' नामक ग्रन्थ लिखा है । कल्हण प्रसिद्ध इतिहासकार थे जिन्होंने 'राजतरंगिणी' शुद्ध ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर लिखने का प्रशंसनीय प्रयास किया है । राजा जयसिंह (सन् ११२७-११४६) के राज्यकाल में कल्हण ने इस ग्रन्थ की रचना की । उन्होंने शिला-लेखों, खण्डहरों, एवं हस्तलिखित ग्रन्थों को आधार बनाकर कश्मीर के प्राचीन-तम इतिहास पर प्रकाश डाला है । आरम्भ में इतिहास लेखन के अनेक सिद्धान्तों पर भी प्रकाश डाला गया है ।[२]

---

१. 'योजना' जनवरी १९६० -'संस्कृत साहित्य को कश्मीर की देन'- अनन्त-राम शास्त्री, पृ० २९ ।

२. 'This is the only work in ancient Indian litt. that may be regarded as a historical text in the true sense of the Word. The autnor has not only taken great pains to collect his material from the existing chronicles and other sources, but, at the beginning of his work, he has setdown a few general principles of writing history.' -'A History of Kashmir'- P.N.K. Bamzai - Page 32.

यह ऐतिहासिक ग्रन्थ संस्कृत पद्य में लिखा गया है। कल्हण के पश्चात् जोनराज ने इस ग्रन्थ को १५वीं शताब्दी तक लिखा। आनन्दवर्धन के प्रसिद्ध टीकाकार अभिनव गुप्त (११०० ई०) भी कश्मीर निवासी थे। शैवदर्शन पर उनका अध्ययन गम्भीर था। इस विषय में उन का प्रसिद्ध ग्रन्थ `तन्त्रालोक` है। भरत कृत `नाट्य शास्त्र` की व्याख्या इन्होंने अपने द्वितीय ग्रन्थ `अभिनव भारती` में की। रस-सिद्धान्त के विषय में इन्होंने अपना मौलिक विवेचन भी प्रस्तुत किया है। महापण्डित मम्मट (११०० ई०) का `काव्य-प्रकाश` एक प्रकाश स्तम्भ के समान है। काव्यशास्त्र सम्बन्धी यह ग्रन्थ अपनी मौलिकता एवं सूत्रात्मक शैली के कारण प्रसिद्ध है। अलंकारों पर मम्मट का अध्ययन काफी गम्भीर एवं गहन था। संस्कृत कवियों में क्षेमेन्द्र का स्थान भी उल्लेखनीय है। इन्होंने काव्य के विभिन्न अंगों पर लिखा है। क्षेमेन्द्र आचार्य अभिनवगुप्त के शिष्य थे और ११वीं शताब्दी के मध्य में विद्यमान थे। इनके ग्रन्थों में प्रसिद्ध है - `रामायण मंजरी` , `भारत मंजरी` , `बृहत्कथा मंजरी` , `दशावतार-चरित` , `नीति कल्पतरु` इत्यादि। इन्होंने नीतिविषयक ग्रन्थों की भी रचना की है जिनमें उपदेशात्मक प्रवृत्ति का प्राधान्य है। जगद्धर भट्ट (१४०० ई०) शंकर के अनन्य भक्त थे। इनके काव्य में भक्त हृदय के मार्मिक उद्गार मिलते हैं। इनकी कविता सरल, सरस, मर्मस्पर्शी एवं अलंकारों से सुसज्जित है। `स्तुति कुसमांजलि` इनकी प्रसिद्ध रचना है। इनके अतिरिक्त भामह, रुद्रट एवं रुय्यक (१२ शताब्दी) बिल्हण, कुन्तक एवं महिम भट्ट तथा अन्य अनेक महाकवि, इतिहासकार, काव्यशास्त्र के ज्ञाता एवं दर्शनवेता हुए जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा संस्कृत साहित्य-कोश की श्रीवृद्धि की।

१४वीं शताब्दी तक कश्मीर में विशेष रूप से संस्कृत का प्रभुत्व रहा, परन्तु व्यवहार में उस समय कश्मीरी का प्रचलन द्रुतगति से हो रहा था। मुस्लिम शासकों के राज्य-काल में संस्कृत का स्थान फारसी ने ले लिया।

श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है – ' संस्कृत के स्थान पर फारसी राज्य-भाषा हो गयी । संस्कृत-भक्त ब्राह्मणों ने राजभक्ति दिखाने के लिए फारसी पढ़ी और अब फारसी में अपनी काव्य प्रतिभा प्रयुक्त करने लगे । - - - - फारसी का इतना प्रभाव बढ़ा कि कश्मीरी भाषा का स्वरूप ही बदल गया । फारसी के हज़ारों मुहावरे , कहावतें, शब्द काश्मीरी भाषा में घुलमिल गये । - - - - उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक फारसी का प्रभुत्व रहा ।[१] इस प्रकार यह तथ्य स्पष्ट होता है कि कश्मीरी भाषा को विकसित होने के लिए कभी भी सुअवसर प्राप्त नहीं हुआ, न स्थायी रूप से राजाश्रय मिला और न ही यहाँ के विद्वत् समाज ने इसकी ओर कोई ध्यान दिया । उनके मन में इस भाषा के प्रति एक विशेष प्रकार का उपेक्षा-भाव था, एवं विशेष प्रकार की उदासीनता थी और इसी हीनभावना ने उन्हें लेखनी उठाने से रोक रखा था । उस समय कश्मीरी भाषा संस्कृत या फारसी के टक्कर में नहीं ठहर सकती थी , फलतः उसका यद्यपि ह्रास नहीं हुआ तथापि कोई उन्नति भी नहीं हुई । विदेशी भाषाओं का प्रभाव, विदेशी शासकों की शासन-नीति, कश्मीर वासियों की उदासीनता, लिपि का अभाव एवं स्वस्थ आलोचना के अभाव में कश्मीरी साहित्य हीनावस्था में हीरहा ।[२]

श्री शितिकंठ कश्मीरी भाषा के प्रथम लेखक माने जाते हैं । इन्होंने 'महानय प्रकाश' नामक ग्रन्थ कश्मीरी भाषा में लिखा है । इसका दूसरा नाम 'महार्थ प्रकाश' भी बताया जाता है । इस ग्रन्थ का लेखन काल तेरहवीं शती के आसपास माना जाता है । यह ग्रन्थ दार्शनिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया है । विषय प्रमुख रूप से शैवदर्शन है जिसका विवेचन एवं विश्लेषण

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १७५ ।

२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - 'आज़ाद', भाग १, पृ० ४७ ।

देशभाषा में किया गया है । ग्रन्थ की लिपि शारदा है ।

श्री शितिकण्ठ के पश्चात् १३वीं शताब्दी में कोई उल्लेखनीय कवि नहीं हुआ । सम्भव है कुछ साहित्य सृजन हुआ हो परन्तु आज वह सब अप्राप्य है इसलिए स्थिति अन्धकारमय है और 'महानय प्रकाश' पर ही संतोष करना पड़ता है ।[१] १४ वीं शताब्दी में कश्मीर के साहित्याकाश में लल्लेश्वरी का उदय हुआ और यहीं से कश्मीरी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास प्राप्त होता है । अन्य भाषाओं के समान ही कश्मीरी भाषा में भी साहित्य का आरम्भ पद्य से ही हुआ और आधुनिक युग तक केवल मात्र पद्य-बद्ध रचनाएँ ही प्राप्त होती हैं । १४वीं शताब्दी से २०वीं शताब्दी तक कश्मीरी काव्य में अनेक प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं जिनका विस्तृत अध्ययन अगले पृष्ठों में किया जाएगा ।

प्रत्येक भाषा के साहित्य में लोक-साहित्य की एक स्वस्थ परम्परा पाई जाती है । लोक-साहित्य विशेष कर लोकगीतों की एक स्वस्थ परम्परा कश्मीरी साहित्य में भी मिलती है जिनसे अनेक कवियों को भविष्य में प्रेरणा मिली है । लोकगीतों का अक्षय-कोश कश्मीरी साहित्य की अमूल्यनिधि है । काव्य की मुख्य प्रवृत्तियों का अध्ययन करते समय हमारे लिए यह नितान्तावश्यक

---

१. 'For about a hundred years following Shiti Kantha we do not come across any work written in Kashmiri language. May be that there were such works, but none is available now. These have probably been destroyed and lost in numerous political upheavals that took place in Kashmir times without number.'

'Kashmir' - June, 1957 - 'An ancient Period of Kashmiri Litt.' Justice Jai Lal Kilam - Page 154.

है कि लोकसाहित्य पर भी यथेष्ट प्रकाश डाला जाए । कश्मीर एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ का प्राकृतिक वातावरण जनमानस को समय-समय पर उद्वेलित करता रहा । कश्मीर अद्भुत सौन्दर्य एवं लावण्य का प्रतीक है और यहाँ के जन-मानस ने इसके अनेक चित्र लोकगीतों में उपस्थित किए हैं ।

लोक-गीत :

लोकगीत वह गीत अथवा गाना है जो लोक ने गाया हो । लोक समूची जनता है । साधारण जनसमाज है अत: उस जनसमूह के गाने को लोक-गीत कहा जाता है । लोक-गीत लोक-वार्ता (Folk Lore) का एक अंग है । लोक-वार्ता अंग्रेजी के 'फोकलोर' का पर्यायवाची है । डा० सत्येन्द्र ने लोकवार्ता के विषय में लिखा है :-

'लोकवार्ता शब्द विशद् अर्थ रखता है । इसके अन्तर्गत वह समस्त आचार-विचार की सम्पति आ जाती है जिसमें मानव का परम्परित रूप प्रत्यक्ष हो उठता है और जिसके स्रोत लोकमानस होते हैं, वे लोक मानस जिन में परिमार्जन अथवा संस्कार की चेतना काम नहीं करती होती । लौकिक धार्मिक विश्वास, धर्म गाथाएँ तथा कथाएँ, लौकिक गाथाएँ तथा कथाएँ , कहावतें , पहेलियाँ आदि सभी लोकवार्ता के अंग है ।'[१] लोकगीत लोक-वार्ता का ही एक महत्वपूर्ण अंग है । इसका रचयिता कोई एक विशेष पुरुष नहीं होता । मौखिक परम्परा से प्राप्त गीत इसके अन्तर्गत लिए जाते हैं । लोकगीत लोगों के आदि जीवन को प्रतिबिम्बित करते हैं । लोकगीतों के पीछे एक परम्परा होती है जिसका सीधा सम्बन्ध समाज से है । श्री देवेन्द्र-सत्यार्थी ने लिखा है - 'लोकगीतों में देश का वास्तविक चेहरा नज़र आता है ।

---

१. 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' - डा० सत्येन्द्र , पृ० २ ।

यह देश की अपनी आवाज़ है । अपनी बोली, हर प्रकार की बनावट से अछूती।[१]

कश्मीरी घाटी भी लोकसाहित्य से भरी पड़ी है ।[२] कश्मीरी भाषा में एक प्राचीन भाषा की तरह, लोकगीतों एवं लोक-कथाओं का प्राचुर्य है । कश्मीरी साहित्य का आरम्भ भी लोक-गीतों से हुआ । यह लोकगीत प्राय: गाँव के स्वच्छन्द वातावरण में पलने वाले सीधे-सादे तथा परिश्रमी ग्रामवासियों की भावनाओं को बहुत ही सुन्दर तथा मनमोहक रूप में प्रस्तुत करते हैं । ग्रामीण जीवन के साथ साथ स्वच्छन्द प्रकृति का प्रतिबिम्ब हमें इन लोकगीतों में स्पष्ट मिलता है । लोक-जीवन के विभिन्न पक्षों को ध्यान में रखकर इन लोकगीतों का निर्माण हुआ है । विभिन्न कालों में देश की राजनीतिक स्थिति, समय की गति-विधि, संस्कृति, समाज के संस्कार एवं आदर्श, इन सब के अध्ययन में लोक-साहित्य सहायक सिद्ध होता है । लोक-गीत कश्मीरी साहित्य की एक अमूल्य निधि है ।[३] अध्ययन की सुविधा के लिए कश्मीरी लोकगीतों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है :-

---

१. 'धीरे बहो गंगा' - देवेन्द्र सत्यार्थी, पृ० ३१ ।

२. 'Like all literary traditions in the workd, the first poetic traditions in Kashmiri must have been the work of illiterate persons who expressed the impulses and urges of their times in song and story before every any such thing was recorded in writing - - - Kashmir is very suchrich in this traditional type of Poetry'.

'Keys to Kashmir' -'Some Aspects of Kashmiri Poetry', Page 164

3. 'Kashmiri literature, thus has an immense wealth of folk songs.'

'Literary heritage' - Kawmudi - Page 97.

१. वनवुन[१] - (विवाह-गीत) - वनवुन उन कश्मीरी लोकगीतों को कहते हैं जो स्त्रियाँ विवाह के शुभावसर पर मिल कर गाती हैं। प्रमुखत: कश्मीर में हिन्दू एवं मुसलमान रहते हैं, इन दोनों के विवाह गीतों में पर्याप्त अन्तर है, विशेषकर गाने की रीति भिन्न है।

'बटि वनवुन' - (हिन्दू विवाह-गीत) - विवाह हिन्दुओं का एक मुख्य संस्कार है और काफी लम्बा है। जिस दिन विवाह के लिए काम में आने वाली लकड़ी भी घर लाई जाती है, उस दिन से सम्बंधित गीत भी मिलते हैं। घर की लिपाई करते समय, सम्बन्धियों के यहाँ जाने के दिन, मेंहदी रात के, 'दीवगुण' के एवं लग्न के वनवुन भिन्न भिन्न हैं।

२. रोफ़ - रोफ़ में गीत तथा नृत्य का सम्मिश्रण होता है। यह नारियों के गीत हैं। प्राय: मुसलमान नारियाँ रमज़ान के मास में - ईद के शुभावसर पर या बसन्त के आगमन पर रोफ़ गीत गाती हैं। गाँव में हिन्दू नारियाँ भी रोफ़ करती हैं। रोफ़ में प्राय: विवाहित तथा अविवाहित युवतियाँ दो पंक्तियों में आमने सामने खड़ी हो जाती हैं, एक-दूसरे की भुजाएँ आपस में मिलाए हुए और एक ही ताल पर पाँव तथा शरीर आगे पीछे करते हुए गीत गाती हैं। इन रूफ गीतों में प्रेम भाव की प्रधानता है। संयोग एवं वियोग के अनेकों सुन्दर चित्र इन में मिलते हैं।

३. बाँड़-जश्न - बाँड़ कश्मीरी भाषा में ग्रामीण नर्तकों को कहते हैं।

---

१. The oldest songs of this type are those sung and recited by Hindu and Muslim women on the occasion of Marriage festivities. These are called Vanvun or Marriage songs. 'Key to Kashmir' - 'Some Aspects of Kashmiri-Poetry' - Page 164.

प्राय: ये लोग मनोरंजन कराने में कुशल होते हैं। बाँड़ अपनी टोली के साथ गाँव गाँव घूमते फिरते हैं और हर स्थान पर एक अभिनय-प्रधान गीत गाते हैं जिन्हें कश्मीरी में 'जश्न' कहते हैं। कश्मीरी नाच गाने का प्राचीनतम रूप इन्हीं बाँड़-जश्नों में सुरक्षित है। कश्मीर घाटी में विशेषकर सोपोर के आसपास के गाँव में बाँड़ लोग काफी संख्या में रहते हैं और यहीं के बाँड़ अपनी कला के लिए प्रसिद्ध भी हैं।

४. हाँज़ि बॅति - (हाँजियों के गीत) - यह गीत दो प्रकार के हैं, एक तो हाँजियों की स्त्रियाँ सायंकाल को वितस्ता नदी के किनारे (जहाँ पर उनकी नौकाएँ होती हैं) एकत्र होकर रूफ के रूप में गाती हैं। दूसरे प्रकार के गीत श्रम परिहरण के लिए गाए जाते हैं। डल झील और वितस्ता नदी में किश्तियाँ भरी पड़ी हैं। श्रीनगर में काफी संख्या में लोग नावों में रहते हैं जिन्हें हाँजी कहा जाता है। ये लोग किश्तियों को चलाते समय श्रम-परिहार के लिए तथा आवेश में आकर गीत गाते हैं।

५. 'नयन्दहतिलोन नुक म्यवुन' - (खेत में नराई करने के और फसल काटने के गीत) - इन गीतों के पीछे भी श्रम परिहरण का सिद्धान्त काम करता है। खेतों में नराई करते समय नर-नारी इकट्ठे गीत गाते हैं। प्राय: नारियाँ एक पंक्ति गाती हैं और पुरुष उसी पंक्ति को दोहराते हैं। या पहले एक व्यक्ति एक पंक्ति को गाता है और अन्य नर-नारी उसी पंक्ति को दोहराते हैं।

६. 'लेंड़ी शाह' - लेंड़ी शाह कश्मीरी लोकगीतों में विशेष रूप से प्रसिद्ध है। ये पुरुषों के गीत हैं। प्राय: गाँव का कोई अशिक्षित पुरुष हंसने हंसाने के लिए तुक-बन्दी करता है और लोहे की एक सुलाख हाथ में लेकर (जिसमें लोहे की पाँच दस कड़ियाँ होती हैं) बजाता रहता है और गीत

की पंक्तियों का उच्चारण भी साथ-साथ करता है। इन गीतों की सबसे बड़ी विशेषता है - व्यंग्य की प्रधानता। इनमें राजा के प्रति, जमींदार के प्रति, हाकिम के प्रति, प्राकृतिक आपदा के प्रति तथा पुलिस के अफसरों के प्रति तीव्र व्यंग्य किया जाता है।[१] परिस्थिति-चित्रण इन गीतों में बहुत ही सुन्दर रूप से से होता है। घर-घर जाकर ये लोग गीत सुनाते हैं और इस प्रकार अपने जीवन-निर्वाह का प्रबन्ध भी करते हैं। इन गीतों में जीवन के दोनों पक्षों - सुन्दर और असुन्दर का सजीव चित्रण मिलता है। जनता के दुख-सुख, आशा-निराशा, हर्ष-विषाद सभी भावनाओं का सम्यक् चित्रण इन गीतों के द्वारा किया जाता है। इन गीतों के द्वारा देश की प्राचीन ऐतिहासिक घटनाओं का भी वर्णन किया जाता है अत: ऐतिहासिक घटनाओं की प्रामाणिकता सिद्ध करने में, तिथि ढूंढ़ने में तथा सामाजिक स्थिति का अनुमान लगाने में यह गीत काफी सहायक सिद्ध होते हैं। निस्सन्देह इन्हें हम ऐतिहासिक स्रोतों के अन्तर्गत ले सकते हैं। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - 'यह एक इतिहास सिद्ध तथ्य है कि जिस जाति का प्राचीन साहित्य लिखित नहीं होता, उसका ज्ञान-विज्ञान, अनुभव और प्रगति का इतिहास उसके लोक-साहित्य में सुरक्षित रहता है और श्रुति परम्परा इस साहित्य को लोगों की स्मृति में खोने नहीं देती।'[२]

७. ललनावुन (लोरियाँ गीत) - बच्चे को नहाते समय, बालों में कंघी करते समय, कपड़े पहनाते समय, खिलाते समय एवं सुलाते समय माँ मीठी लोरियाँ गाती हैं।

इस प्रकार के लोकगीत कश्मीरी भाषा में अल्प संख्या में प्राप्य हैं।

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग १, 'आज़ाद', पृ० २०६।
२. 'कश्मीर देश व संस्कृति' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १४३।

इन गीतों में भावुक हृदय का सजीव चित्रण मिलता है। इन गीतों का लिखित रूप आज भी सुरक्षित नहीं है। घरों में स्त्रियाँ अपने बच्चों को ऐसी लोरियाँ सुनाती हैं। अत: मौखिक रूप में यह गीत आज भी प्राप्य हैं।

८. बचनगमा - एक नर्तक अपनी टोली के साथ गाता है और साथ-साथ नृत्य भी करता है। टोली में अच्छे-अच्छे संगीतज्ञ एवं गायक होते हैं। स्वयं नर्तक भी अच्छा गायक होता है और नृत्य प्रदर्शिनियों के साथ-साथ वह गाता है और ताल एवं लय के साथ उसके साथी भी गाते हैं। इस लोक-गीत में संगीत एवं नृत्य की प्रधानता होती है। यह भी कहा जा सकता है कि संगीत एवं नृत्य ही ऐसे लोकगीतों के पूरक होते हैं। कश्मीर में प्राय: उत्सवों एवं अनुष्ठानों पर बचन-गमा होता है। इन गीतों को सुनने के लिए जनता काफी उत्सुक होती है। नर्तक प्राय: सुन्दर नव-युवक होता है और विशेष प्रकार के वस्त्र धारण करके पाँव में घुँघरू बाँध कर नाचता है और नृत्य की विभिन्न भंगिमाओं का प्रदर्शन करता है। देश की प्राचीन संस्कृति की सुन्दर झलक बचनगमा के द्वारा देखने को मिलती है। प्राय: प्रेम गीतों की बचनगमा में प्रधानता होती है।

९. लोलय्यवुन (लो-लो गीत)[१] - 'लोल' का शब्दार्थ है - प्रेम। यह गीत प्रेममय अनुभूतियों पर ही लिखे जाते हैं। यह गीत दो प्रकार के हैं - (१) नारी द्वारा गाये जाने वाले प्रेम-गीत, (२) प्रेमिका के विरह में गाये जाने वाले लोल-गीत। इन गीतों का प्रधान विषय प्रेम है। संयोग एवं वियोग (प्रधानत: वियोग) के सुन्दर चित्र इन गीतों में मिलते हैं।

---

१. 'कहा जाता है कि कश्मीर का एक प्रसिद्ध सम्राट वज़ीर बम्बुर अपने चचेरे भाई की पत्नी 'लोलरी' के प्रति आकर्षित हुआ था। उसे प्राप्त करने में वह असफल हुआ और अपनी निराशा में वह 'लोलरी' के प्रति गीत गाने लगा। 'लो-लो' 'लो-लो' सदा उसके होठों पर रहता था। धीरे-धीरे इस प्रकार के गीत और कवियों ने भी कहने शुरू किए और कुछ ही समय के पश्चात् इस प्रकार के गीत 'लोल' गीत के नाम से प्रसिद्ध हुए।'
- 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' भाग १, 'आज़ाद', पृ० २०२.

इसके अतिरिक्त 'सांत ग्यवुन' (बसन्त के गीत), 'कथग्यवुन' (कथा-गीत), यन्द्रबाथ (चरखा कातते समय गाये जाने वाले गीत), 'रेंड्हवाल्यन -हिन्द-बाथ (रेहड़ी चलाने वालों के गीत), 'वान' (मृत्यु समय के शोक-गीत), तथा 'ग्रेटि पेहान ग्यवुन' (चक्की पीसते समय जो गीत गाए जाते हैं) - विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं ।[१] इन लोकगीतों में इस देश का जीवन साकार हो उठा है ।[२] इन गीतों के द्वारा देश के सांस्कृतिक उत्थान-पतन का सम्यक् ज्ञान हमें प्राप्त होता है । लोकगीतों का वास्तविक क्षेत्र नगर के कृत्रिम एवं अशांत वातावरण से बहुत दूर है । वास्तव में लोकगीत जन-समूह की सम्पति है । साहित्य में इनका विशिष्ट एवं प्रौढ़ स्थान है । राष्ट्रपिता का कथन है - 'सचमुच लोकगीतों में धरती गाती है , पहाड़ गाते हैं, नदियाँ गाती हैं, फसलें गाती हैं, उत्सव और मेले, ऋतुएँ और परम्पराएँ - सभी गाती हैं ।'[३] कश्मीरी काव्य का आदि रूप इन्हीं लोकगीतों में सुरक्षित है । कालान्तर में कई प्रसिद्ध कवियों तथा कवयित्रियों को इनसे प्रेरणा मिली, इनमें कविवर 'महजूर' भी एक हैं ।

---

१. 'बेला फुले आधी रात' - देवेन्द्र सत्यार्थी, पृ० १४८ ।

२. 'The Folk Songs of Kashmir, like those of other countries, represent and preserve myths and traditions, customs and beliefs, superstitious and prejudices. They are sung in every village home and are handed down from generation to generation'.

"Kashmir" - Feb. 1954 - 'Folk Songs of Kashmir'- Asha Dhar - Page 34.

३. 'धरती गाती है' - देवेन्द्र सत्यार्थी - आमुख ।

दार्शनिक एवं आध्यात्मिक काव्य (रहस्यवादी काव्य-प्रवृत्ति)

कश्मीरी काव्य का उपलब्ध प्राचीन रूप स्वस्थ एवं उच्चकोटि की दार्शनिक विचारधारा से ओतप्रोत है। साहित्य में इन भावनाओं को लाने का श्रेय सर्वप्रथम श्री शितिकण्ठ को है जिन्होंने १३वीं शताब्दी में 'महानय प्रकाश' लिखा। इस विचारधारा के आगे ले जाने में ललद्यद एवं शेख नूर-उल-दीन का विशेष योगदान रहा है। इस रहस्यवादी काव्यधारा में कई दार्शनिक सिद्धान्तों का सम्मिश्रण मिलता है। शैव मत, ब्रह्मवाद, अद्वैतवाद, सूफी मत एवं गीता के निष्काम कर्मयोग के सदोपदेश को इन सन्त कवियों ने अपने काव्य में स्थान दिया। कश्मीर का शैवदर्शन 'त्रिकदर्शन' या 'त्रिक सिद्धान्त' के नाम से भी प्रसिद्ध है और १२वीं शताब्दी के अन्त तक (अर्थात् हिन्दू राज्यकाल में) इस दर्शन ने कश्मीरियों के जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया था। इस मत की व्याख्या यहाँ के संस्कृत विद्वानों ने अपने ग्रन्थों में विशद् रूप से की है जिनमें अभिनवगुप्त का 'तंत्रालोक' उल्लेखनीय है। यह दर्शन प्रधानत: तीन तत्वों पर आधारित है - शिव तत्व, शक्ति तत्व और नर-तत्व।[१] शिव तत्व को प्रधान माना जाता है, यही सब कुछ करने वाला एवं सर्वज्ञाता है। शक्ति तत्व शैवदर्शन का दूसरा तत्व है। सारे संसार की रचना इसी से सम्भव मानी जाती है। इसे शिव का क्रिया रूप माना जाता है और नर-तत्व का प्रयोग इस शास्त्र में जीव के लिए किया जाता है। डा० बी० डी० शास्त्री ने लिखा है - 'तीन तत्व वास्तव में भिन्न नहीं हैं। एक ही शिव अपनी स्वातंत्र्य शक्ति से तीनों रूपों में प्रकट होता है। इसीलिए इस शैवदर्शन को अद्वैतवादी कहा गया है। शिव अपनी शक्ति से संसार की रचना करते हुए भी अपनी पूर्णता नहीं खो देते। यह ब्रह्माण्ड उसी पूर्ण शिव का पूर्ण आभास है।

---

१. 'योजना' - 'सांस्कृतिक विशेषांक' - 'कश्मीर का शैवदर्शन' - डा० बी०डी० शास्त्री, पृ० ८६।

इसीलिए कश्मीर के शैव-तत्ववेत्ताओं ने सारे संसार को शिवमय माना है।[१] वेदान्तियों के कथनानुसार जिसे 'ब्रह्म' कहा जाता है, शैवमत वालों ने उसे ही 'शिव' की संज्ञा दी है। सूफी मत में भी गम्भीर आध्यात्मिक प्रयोजन निहित रहता है। निराकार के प्रति उत्कट प्रेम की भावना एवं सच्ची उपासना इस सिद्धान्त के प्राण-तत्व हैं। सूफी मत में गुरु के महात्म्य को सर्वोपरि माना गया है जिसके बिना आशिक का माशूक से मिलना (आध्यात्मिक उद्देश्य की प्राप्ति) असम्भव है। धार्मिक संकीर्णता से ऊपर उठकर इस मत के प्रवर्त्तक परमप्रिय के मिलन के हेतु परम अभिलाषी रहते हैं। इस के अतिरिक्त आत्म-ज्ञान की प्राप्ति के लिए एवं आवागमन के चक्कर से सदा के लिए मुक्ति के हेतु (निर्वाण प्राप्ति) यहाँ के ऋषि, मुनि प्राचीन काल से ही जनता का पथ-प्रदर्शन करते रहे।[२]

इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर कश्मीरी साहित्य के दार्शनिक एवं आध्यात्मिक काव्य का विवेचन करते समय सर्वप्रथम हमारा ध्यान ललद्यद की

---

१. 'योजना' - 'सांस्कृतिक विशेषांक' - 'कश्मीर का शैवदर्शन' - डा० बी०डी० शास्त्री, पृ० ८७।

२. 'Kashmir is a land of Rishis - Saints, who have sung in praise of the Almighty in various, delightful words. They stand above caste, creed and religion and have earned the veneration of all, high and low. xxx The Rishis see God everywhere. For them, He is absoulute reality, into whom is absorbed, finally everything we see.'

Kashmir - October 1958 - 'Two great mysties of Kashmir.' Farooq, A. Qureshi - Page 262.

ओर आकृष्ट होता है । 'महानय-प्रकाश' के विषय में अभी भी स्थिति भ्रमपूर्ण है यद्यपि प्रमुख रूप से उसका विषय त्रिक-सिद्धान्त ही है । लल्लेश्वरी कश्मीरी साहित्य की प्रथम प्रसिद्ध कवयित्री है जिन्होंने अपनी काव्य-वाणी से १४वीं शताब्दी में जन-मानस को आप्लावित किया । उन्होंने पहली बार अपने 'वाख्यों' में तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक एवं दार्शनिक भावनाओं का समावेश किया । हिन्दू और मुसलमान दोनों उनका समान रूप से आदर करते थे । वे सदा ईश्वर भजन में ही लीन रहती थी । उन्होंने बहुत ही सुन्दर तथा गम्भीर 'वाख' कहे हैं जो कि 'ललवाक्य' के नाम से प्रसिद्ध हैं । अपनी विद्वता के कारण उन्होंने संसार के श्रेष्ठ ज्ञानियों में अपना स्थान बना लिया है । उच्चकोटि की विदुषी होने के साथ-साथ उन्हें जीवन का बड़ा ही कटु अनुभव था । विषाद ग्रस्त परिस्थितियों से विवश होकर वे ऐसे जीवन से पलायन चाहती थीं । श्री आज़ाद ने लिखा है - 'वे उस युग की देन है जब कि सामंत राज्य की काली घटाएँ चारों ओर फैली हुई थीं । उनका संकीर्ण दृष्टिकोण उन्हें अन्धकार की ओर ले रहा था । जनता निराश एवं चकित रह जाती थी । काव्य परिस्थितियों का प्रतिबिम्ब है अत: ऐसे दयनीय वातावरण में वैराग्य एवं पलायन की बातें न सोचते, तो क्या सोचते ? गार्हस्थ जीवन के भयानक संकटों ने लल्ला को इस जीवन के प्रति निराश कर दिया था'।[२]

लल्लेश्वरी के काव्य में शिव परमतत्व है, जिसको उन्होंने निर्गुण निराकार माना है ।[३] शिव ही सर्वत्र व्याप्त है और शिव ही सर्वस्व है :-

---

१. 'Struggle for Freedom in Kashmir' - P.N. Bamzai - Page 292.

२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग१, 'आज़ाद', पृ० १५४ ।

३. 'मैंने अपने गुरु से सहस्र बार पूछा, जो निराकार है उसका क्या नाम है । मैं उसे पूछते पूछते थक गई, परन्तु कोई उत्तर नहीं मिला । कुछ है, जो वास्तविक तत्व है ।' (परि०(२) क्र० २०)
- 'ललधद' - कलचरल अकादमी द्वारा प्रकाशित, पृ० १२ ।

- `शिव प्रत्येक अणु में व्याप्त है। हिन्दू एवं मुसलमान का भेद-भाव भूल कर उसकी शरण में जाओ, यदि बुद्धिमान हो, तो मेरी बात समझले। यही वास्तव में ईश्वर की पहचान है।`[१] (परि०(२) क्रं० २१)

अज्ञानवश जीव स्वयं अपने आपको नहीं पहचान पाता है। भौतिक सुख उसे सदा अन्धकार में डाल देते हैं और वास्तविकता से वह अनभिज्ञ रहता है। स्वयं अपने आपको वह पहिचान नहीं पाता, परिणामस्वरूप वह जगत की वास्तविकता एवं जीवन-लक्ष्य से कोसों दूर रहता है।[२]

`ललवाखों` की अत्यधिक संख्या प्राप्त नहीं है। प्रत्येक `वाख` चार पंक्तियों का है। श्री महेन्द्र रैणा ने लिखा है – `ललेश्वरी के जो पद्य हम तक पहुँचे हैं, उनमें तनिक भी काव्य-सौन्दर्य की न्यूनता नहीं। रोज़मर्रा और सामान्य बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले मुहावरे आदि की भरमार है, अनुपम उपमायें हैं। असंख्य ऐसे पद्य हैं जो उपमायें बन चुके हैं।`[३] अत: काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से भी `ललवाख` श्रेष्ठ है। भाषा में संस्कृत शब्दों का प्राचुर्य है यद्यपि देशज और ठेठ कश्मीरी शब्दों का बड़ी सुविधा के साथ प्रयोग किया गया है। उनके `वाखों` में शब्द-सौन्दर्य अनुपम है। अपने तथ्य का स्पष्टी-करण वह कभी सरल एवं सुबोध भाषा में और कभी व्यंग्यात्मक रूप में करती है। गीता पर उन्हें परम विश्वास था।

इसी युग में कश्मीर में एक प्रसिद्ध सन्त शेख-नूर-उद्दीन हुए हैं। इन्हें `नुंदऋषि` भी कहा जाता है। `ऋषि नामा` इन के जीवन और काव्य के

---

१. `ललद्यद` , पृ० १०४।
२. वही , पृ० ६७ ।
३. `योजना` -'संस्कृति विशेषांक'- जनवरी १९६० - `कश्मीर की आदि कवयित्री` पृ० १३१।

विषय में प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है । इन्हें हम ललयद की शिष्य परम्परा में ले सकते हैं । बचपन में ही इनका विवाह हुआ था परन्तु गार्हस्थ जीवन से निराश होकर वे एकान्त गुफा में ईश्वर साधना में लीन रहे और समय समय पर दार्शनिक विचारों से ओतप्रोत रचनाएँ लिखते रहे जो बाद में 'श्लोक' कहलाए ।[१] नुदंयोंश के श्लोकों में जनता के लिए आध्यात्मिक सन्देश निहित है । जीवन की सरलता एवं पवित्रता पर उन्होंने बल दिया है । मानव प्रेम को श्रेष्ठता प्रदान की । बाह्याडम्बर एवं पाखण्ड उनके लिए असहनीय था। संसार से विमुख होकर वे उस एक सत्ता में विलीन होने के लिए साधना करने लगे । अपने जीवनकाल में वे अनेक सूफी सन्तों एवं कवियों के सम्पर्क में आए अत: उनकी काव्य-वाणी पर सूफी मत की स्पष्ट छाप पड़ी । वे एक सम-न्वयकारी सन्त थे जिन्होंने धार्मिक सहिष्णुता एवं चारित्रिक पवित्रता पर अधिक बल दिया है । सूफी सन्तों में उनका नाम अग्रगण्य है । सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह उनके लिए असहनीय है :-

' आह ! मुझको नफ़्स (मोह) ने मार डाला, वह अन्धेरे में मुझसे छिपकर बैठा, न जाने कहाँ , यदि वह मेरे हाथ आता तो मैं उसका गला तलवार से काट लेता ।'[२]

श्री अब्दुल अहनद आज़ाद ने लिखा है - 'शेख-नूर-उद्दीन का जन्म इस्लामी युग में एक विशेष देन है । यह वह समय था जब संस्कृत काव्य का स्थान फारसी काव्य और इस्लामी दर्शन ले रहा था । शेख स्वयं ऋषियों एवं मुनियों से प्रभावित हुए थे, अशिक्षित थे, दरबारों एवं साहित्यिक मण्ड-लियों से इन का कोई सम्बन्ध नहीं था । लल्लेश्वरी से आध्यात्मिक शिक्षा

---

१. 'Kashmir today' May-June 1960 - 'Renaissance in Kashmiri Litt.' F.A. Qureshi - Page 13.

२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - 'आज़ाद', भाग १, पृ० २१४ ।

ग्रहण की थी अत: संस्कृत काव्य एवं हिन्दू दर्शन का उन पर काफी प्रभाव पड़ा, यद्यपि मुस्लिम दर्शन एवं काव्य से भी प्रभावित थे ।[१]

शेख साहब के प्रत्येक श्लोक में दो पँक्तियां होती हैं । श्लोक अपने में पूर्ण और स्वतंत्र होता है । इसके अतिरिक्त शेख ने कुछ वर्णनात्मक कविताएँ भी लिखी हैं जिनका विषय आध्यात्मिक है । इन्होंने अपने श्लोकों में प्रश्नोत्तर शैली को भी अपनाया है । भाषा संस्कृत गर्भित है और ठेठ कश्मीरी के प्रयोग भी यत्र-तत्र मिलते हैं ।

रहस्यवादी काव्यधारा को आगे ले जाने में अलकेश्वरी[२] (रूपभवानी) का नाम भी उल्लेखनीय है । १७वीं शताब्दी में इनका जन्म श्रीनगर में पण्डित माधव दर के घर में हुआ था । उन्हें कठिन तपस्या के पश्चात् आध्यात्मिक दिव्य-दृष्टि प्राप्त हुई और जीवन-पर्यन्त वे योग-साधना में लीन रहीं ।उनका स्थान भारतीय योगियों की परम्परा में विशिष्ट है । उन्होंने लोकहित एवं लोक-कल्याण के लिए जनता को व्यवहारिक शिक्षा भी दी है ।[३]

१९वीं शताब्दी में महमूद गामी कश्मीर के एक प्रसिद्ध कवि हुए हैं । उन्होंने फारसी और कश्मीरी दोनों भाषाओं में रचनाएँ लिखी हैं । उनके काव्य में विविधता है । सूफी मत से प्रभावित होकर उन्होंने कई रचनाएँ कश्मीरी भाषा में लिखी हैं जिनका कोई विशेष महत्व नहीं । महमूद गामी के समकालीन सूफी कवि रहमान डार हुए हैं । ब्रह्म को प्रियतम मान कर उसके

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - 'आज़ाद', भाग १, पृ० ३६ ।

२. अलकेश्वरी - अलक् + ईश्वरी - (केशों से सुसज्जित महिला)
अलकेश्वरी - अलक्ष्य + ईश्वरी - (अदृश्य का स्वरूप)।

३. 'कश्मीर' - दिसम्बर १९५३ - 'रूप-भवानी' - डी०पी० काचरू, पृ० २४८।

विरह में उन्होंने कई रचनाएँ लिखी हैं ।[१]

शम्स फकीर कश्मीर के प्रसिद्ध सूफी कवि हुए हैं जिन्होंने सूफी काव्यधारा को अपनी काव्य-वाणी द्वारा एक नवीन जीवन प्रदान किया । इन्होंने आध्यात्मिक भावनाओं को लौकिक प्रेम के आवरण में प्रस्तुत किया। उनकी रचनाओं में यद्यपि प्रेम वर्णन बड़ा मनोरंजक एवं हृदयग्राही है तथापि उसमें असीम के साथ एकाकार होने का आभास सर्वत्र मिलता है । आध्यात्मिक प्रेम की हाला पीकर वे मस्त हैं ।[२]

वहाब खार एक अन्य सूफी कवि हुए हैं । वहाब उनका नाम था और जीविका-निर्वाह के लिए लोहार का काम करते थे । लोहार को ही कश्मीरी भाषा में 'खार' कहते हैं । वे अशिक्षित थे और गुरु-शिक्षा उन्होंने अपने पिता से ग्रहण की थी । उन्होंने कई ग़ज़लें एवं गीत लिखे हैं परन्तु कहीं भी कोई संग्रह प्राप्य नहीं है ।

रहस्यवादी एवं दार्शनिक काव्यधारा में प्रशंसनीय योगदान देने का श्रेय १९वीं शताब्दी में पण्डित नन्दराम को है । पण्डित नन्दराम परमानन्द के उपनाम से सारे देश में प्रसिद्ध हैं ।[३] कश्मीर के प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान मट्टन

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग २, 'आज़ाद', पृ० ३३९ ।

२. वही - भाग ३, 'आज़ाद', पृ० ३४२ ।

३. "The name 'Paramanand' is very familiar to those Kashmiri Pandits of today who take interest in Kashmiri literature or in Kashmiri religions verse, though it is only the poet's pen-name. Less familiar is his personal name, Pandit Nand Ram". 'Kashmir' - Feb. 1958 - 'Parmanand' - Masterji - Page 26.

(मार्तण्ड) के निकट सीर गांव में उनका जन्म सन् १७६१ में हुआ । उनके पिता मट्टन में लेखपाल थे और पण्डित नन्दराम भी २५ वर्ष की आयु में लेखपाल नियुक्त हुए । ८८ वर्ष की आयु में उनका देहावसान हुआ, मृत्यु से कई वर्ष पूर्व उन्होंने लेखपाल की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया था । जीवन के आरम्भिक वर्षों में ही उन्होंने भगवत् गीता, शैवमत, ब्रह्मवाद और पुराणों का विधिवत अध्ययन आरम्भ किया था । श्री जिन्दा कौल (मास्टर जी) ने लिखा है – 'उन्होंने अवश्य किसी संस्कृत विद्वान से शिक्षा ग्रहण की होगी। उन्हीं के चरण-कमलों के निकट बैठकर भगवतगीता का, पुराणों-की कथाओं का, वेदान्त सिद्धान्त , शैवदर्शन , लल्लेश्वरी एवं नुंदर्योषी के 'वाकों' का गम्भीर मनन एवं चिन्तन किया होगा । इसके अतिरिक्त मार्तण्ड में कई दार्शनिक एवं धार्मिक गोष्ठियों में बैठने का सुअवसर उन्हें प्राप्त हुआ क्योंकि प्राचीन काल से ही भारत के कोने कोने से विद्वान् इस पवित्र तीर्थ को देखने के लिए आते थे ।'[१]

श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है – 'परमानन्द शैवमत के सबसे उत्तम व्याख्याकार हुए हैं । उनके विचारानुसार सृष्टि एक सत्य है, एक लीला है । बहुत ही अच्छी है, शिव का नृत्य है ।'[२] कवि सर्वत्र शिव की महान सत्ता को स्वीकार करते हैं और तम-मय हृदय को शिव-मय बना देना चाहते हैं :-

' कोई उसे शक्ति कहे, कोई शिव, वह किसी से उत्पन्न नहीं हुआ और न उसके आने का कोई कारण है । वह दिन और रात में सूर्य और चांद प्रज्वलित है ।'[३] (परि (२) क्रं० ४०) ।

---

१. 'कश्मीर' - फरवरी १९५८ - 'परमानन्द' - मास्टर जी, पृ० २७ ।
२. 'स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन काश्मीर' - पी० एन० बज़ाज़ , पृ० २८७ ।
३. 'परमानन्द' - पृ० ८२ (ज०क० कलचरल अकादमी द्वारा प्रकाशित)

उनके काव्य में भक्ति की प्रधानता मिलती है। उनकी प्रसिद्ध रचना है - 'शिवलगन' जिसमें शिव और पार्वती के मिलन द्वारा आत्मा और परमात्मा के एकीभाव का रूपक बांधा गया है।

स्वामी परमानन्द की दार्शनिक एवं रहस्यवादी विचारधारा को आगे ले जाने वालों में श्री कृष्ण जू राज़दान का नाम उल्लेखनीय है। उनके विचारानुसार शिव और कृष्ण में कोई भेद नहीं। वह सर्वाकार है, सम्पूर्ण सृष्टि ही उनका आकार है। वे विश्वरूप हैं। वह सर्वस्व शिव पर निछावर करता है और बदले में उसे दिव्य प्रेम की प्राप्ति होती है।[१]

अन्य अनेक ज्ञात एवं अज्ञात कवियों ने इस काव्य परम्परा को आगे बढ़ाया। कविवर 'महजूर' को यह काव्य विरासत के रूप में प्राप्त हुआ था और उन्होंने इसका गम्भीर अध्ययन किया था। आरम्भ में उन्होंने भी कुछ दार्शनिक कविताएँ लिखीं हैं, परन्तु समय की मांग कुछ और थी अतः वे इस ओर अधिक ध्यान न दे सके। दार्शनिक तथ्यों का निरूपण उनके काव्य में यत्र-तत्र अवश्य मिलता है परन्तु कहीं भी उन्होंने जीवन और जगत से विमुख होकर पलायन की बात नहीं कही है। जगत को उन्होंने निस्सार नहीं बताया। जीवन में संघर्ष के महत्व को उन्होंने स्वीकार किया है। धार्मिक संकीर्णता एवं कट्टरता के विरुद्ध उन्होंने एक नवीन दृष्टिकोण से लिखा है:-

'वहाँ मैंने हिन्दू और मुसलमान को एक ही शक्ति के सम्मुख नतमस्तक देखा। इससे अधिक मैं प्रेम-नगरी का क्या हाल बताऊँ।'[२] (परि०(२)क्रं०४४)

---

१. 'कश्मीर' - दिसम्बर १९५८ - 'श्री कृष्ण जू राज़दान' - बी०एल०कौल, पृष्ठ २९८।

२. क० म० ४, पृ० १२।
'कलाम-ए-महजूर' → (क० म०)

'महजूर' के काव्य में किसी विशेष दार्शनिक सिद्धान्त या मत का विवेचन नहीं मिलता है और न ही वे स्वयं किसी विशेष मत के अनुयायी थे। सामान्य रूप से उन्होंने यत्र-तत्र दार्शनिक विचारों को काव्य-वाणी प्रदान की है। उनका विचार था :-

"अपने को भूल जाना वास्तव में परमतत्व को पाना है। जब मैंने यह जान लिया, तो मन शान्त हुआ।"[१] (परि (२) क्रं० ४५)

शृंगारिक-काव्य :

निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि रहस्यवादी काव्यधारा की प्रतिक्रिया में शृंगारिक काव्य का जन्म कश्मीरी साहित्य में हुआ। यह एक विशेष प्रकार का आन्दोलन था, एक स्वच्छन्द काव्य-प्रवृत्ति थी, साहित्य का पुनर्जागरण था, परम्परा के प्रति सक्रिय विद्रोह था। 'क्लासिक' साहित्य एवं प्राचीन विषय अवरूद्ध हो गए थे। जन कवियों के मानस में एक नवीन उफान आ रहा था। आध्यात्मिक प्रेम का स्थान लौकिक प्रेम ले रहा था और इस प्रकार चिरकाल से कुण्ठित एवं सुप्त भावनाओं के स्रोत फूट पड़े। १४वीं शताब्दी में रहस्यवादी काव्य अपने चरमोत्कर्ष पर था। जिस प्रकार एक नारी (लल्लेश्वरी) ने इस काव्य की स्वस्थ नीव कश्मीरी साहित्य में रखी, उसी प्रकार १६वीं शताब्दी में एक नारी ने (हब्बाखातून) ही शृंगारिक काव्य-प्रवृत्ति का नेतृत्व किया। १४वीं शताब्दी से १६वीं शताब्दी तक रहस्यवादी काव्य का ही प्राधान्य रहा। इस युग का अधिकतर साहित्य अप्राप्य है और मौखिक परम्परा से ही आधुनिक युग तक अर्धमृत अवस्था में पहुँचा है।

---

१. क० म० ५, गज़ल नं० ३४।

१६वीं शताब्दी में रानी हब्बाखातून के गीतों में यह काव्य-प्रवृत्ति मुखर हो उठी । चक-नरेशों के राज्यकाल में हब्बाखातून का जन्म चन्दहार में श्री अब्दुल राथिर के घर में हुआ था । कन्या का नाम 'जून' रखा गया । 'जून' कश्मीरी भाषा में चाँद को कहते हैं । जून सचमुच चाँद के समान सुन्दर थी । पिता से सामान्य शिक्षा प्राप्त करके इसका विवाह एक ग्रामीण युवक अज़ीज़लोन से हुआ । अज़ीज़लोन जैसे रूखे एवं कठोर हृदयी के साथ जून का जीवन-निर्वाह न हो सका । इन्हीं दिनों कश्मीर में प्रसिद्ध चक-राजा यूसुफ शाह राज्य कर रहा था । संयोग वश एक दिन भ्रमण करते करते वन में उनकी भेंट जून से हुई । वे उसके प्रति आकर्षित हुए । जून ने अज़ीजलोन से तलाक लिया और उसका द्वितीय विवाह युसुफशाह से हुआ, तब से उसका नाम हब्बाखातून पड़ा । आरम्भ से ही रानी कला-प्रेमी थी और काव्य एवं संगीत के प्रति उन्हें विशेष रुचि थी । उसके जीवन में एक और महान घटना घटित हुई । महाराज अकबर ने अपनी छलकपट नीति से यूसुफशाह को बन्दी बना दिया । और मृत्यु-पर्यन्त रानी उसके विरह में तड़पती रही । उन्होंने अपने प्रेमी के विरह में सुन्दर गीत गाए हैं । प्रिय-वियोग में वह हृदय मसोस कर रह जाती है :-

"मैं यहाँ हूँ और तू मुझ से बहुत दूर । हम दोनों एक दूसरे से कितना प्यार करते थे । कौन जानता था कि हमारा जीवन यों ही ढह जाएगा । किसी का बचपन और यौवन यों नष्ट न हो ।"[१] (परि (२) क्रं० ४६)

हब्बाखातून की रचनाओं में जन-जीवन के हर्ष-विषाद, विरह-मिलन, हास-रुदन का बड़ा ही मार्मिक चित्रण मिलता है । इस मार्मिकता के कारण भविष्य में अधिकांश कवि उनसे प्रभावित हुए ।[२] लोकगीतों के आधार पर उन्होंने

---

१. 'हब्बाखातून' - ज०क० कलचरल अकादमी द्वारा प्रकाशित , पृ० ३८ ।

२. 'योजना' - जनवरी १९६१ -'आधुनिक कश्मीरी कविता'- हरिकृष्ण कौल, पृ० ८ ।

अनेक शृंगारिक रचनाओं का निर्माण किया है । प्रेम को उन्होंने जीवन की अमूल्य धाती माना है । व्यक्तिगत अनुभूति के कारण उनके गीतों में स्वाभाविकता, तीव्रता एवं प्रभावोत्पादकता का गुण आगया है । श्री अमीन कामिल ने लिखा है - " रानी हब्बाखातून की कविताओं में लौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति विस्तृत रूप से इस प्रकार हुई है कि साहित्य में उसने एक विशिष्ट स्थान ग्रहण किया है । और आज के युग में भी जब कि परिस्थितियों में काफी परिवर्तन हुआ है,उनका प्रभाव स्थायी है ।"[१]

संगीत का उन्हें विधिवत् ज्ञान था । फारसी राग-रागिनियों एवं लोक-धुनों का सुन्दर सामंजस्य हमें उसके काव्य में मिलता है । उनका शृंगार वर्णन सूक्ष्मातिसूक्ष्म है । श्री अब्दुल अहमद 'आज़ाद'ने लिखा है - "इस महिला ने दिहाती-गीतों (ग्राम-गीत) को लिखने के अतिरिक्त अपने देश की भाषा एवं साहित्य की जो सेवा की वह साहित्य के इतिहास में स्वर्ण-अक्षरों से लिखने के योग्य है ।"[२]

रानी हब्बाखातून के पश्चात् लगभग २०० वर्षों तक शृंगारिक काव्य-कोश में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई । इस युग का साहित्य अप्राप्य होने के कारण ही स्थिति भ्रमपूर्ण है । १८वीं शताब्दी के मध्य में पुन: एक महिला ने काव्य-क्षेत्र में पदार्पण किया । इनका नाम अरिण माल था । एक हिन्दू परिवार में जन्मी थी और इनका विवाह उस समय के एक प्रसिद्ध फारसी विद्वान श्री भवानीदास काचरू से हुआ । पति के उपेक्षा भाव ने उसके जीवन में विष घोल दिया और पति-विमुक्ता अरिण माल ने अपने भग्न-हृदय को काव्य-वाणी प्रदान की । उनकी रचनाओं का विषय केवल मात्र भौतिक प्रेम है और मिलन की अपेक्षा

---

१. हब्बाखातून - ज० क० कल्चरल अकादमी , पृ० २५ ।

२. "कश्मीरी भाषा एवं काव्य" - भाग २- 'आज़ाद', पृ० २०५ ।

वियोग का सजीव चित्रण उनकी रचनाओं में हुआ है । श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - 'अरणिमाल साकार वेदना थी, उसका निष्ठुर पति मुंशी भवानी दास काचरू, फारसी 'बहरे तवील' का विख्यात कवि था ; पर अरणिमाल के प्रति उतना ही निर्मम जितनी वह उसके प्रति साभिलाष थी । अत: उस परित्यक्ता तपस्विनी ने अपने पाषाण-हृदय प्रियतम के बिछोह में तड़प-तड़प कर अपनी दर्द भरी धड़कन को ही करुण मधुर गीतों में शब्द बद्ध किया ।'[१] अपने जीवन की महान दुर्घटना ने अरणिमाल को उस युग की एक महान कवयित्री बनाया ।[२]

अरणिमाल के पश्चात् महमूद गामी ने शृंगारपरक रचनाएँ लिखी हैं । १६वीं शताब्दी में सर्वप्रथम महमूद गामी का नाम इस क्षेत्र में उल्लेखनीय है । उस समय फारसी देश की राज्यभाषा थी और यह यहाँ की जनभाषा एवं साहित्य को प्रभावित कर रही थी । फारसी प्रेमाख्यानक काव्यों के आधार पर कश्मीरी में भी प्रेमाख्यानक काव्य लिखे गये और इस प्रकार प्रबन्ध एवं मुक्तक दोनों प्रकार का शृंगारिक काव्य इस युग में हमें प्राप्त होता है । फारसी मसनवियों के अनुवाद भी हुए । महमूद गामी ने स्वयं तीन प्रसिद्ध प्रेमाख्यानक लिखे हैं जिनमें प्रधानता शृंगार वर्णन की है । 'लैला-मजनूं' , 'शीरी खुसरो' तथा 'यूसुफ-जुलेखा' तीनों पर विदेशी छाप सर्वत्र परिलक्षित होती है । महमूद ने स्वतंत्र रूप से शृंगारपरक रचनाएँ भी लिखी हैं जिनमें उनकी मौलिक प्रतिभा तथा रसिक हृदय का परिचय मिलता है ।

महमूद ने कुछ सुन्दर गीत भी लिखे हैं । उनकी कश्मीरी भाषा

---

१. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - 'पुष्प', पृ० ६ ।

२. 'कश्मीर' - नवम्बर १६५७ - 'रोमान्टिक ऐलोमेन्ट इन कश्मीरी लिटरेचर', पृ० २८१ ।

फारसी मिश्रित है । उनकी बहुत सी रचनाएँ नष्ट हो गई हैं । उन्होंने अनेक विषयों पर गीत लिखे हैं । इसी युग में दूसरे प्रसिद्ध कवि मकबूल शाह क्रालवारी हुए हैं । फारसी मसनवियों के आधार पर उन्होंने प्रेमाख्यानक काव्य 'गुलरेज़' लिखा है जिसमें अजब मलिक (नायक) और नोशलब (नायिका) की प्रेमकथा का वर्णन प्रभावोत्पादक ढंग से किया गया है । श्री 'आज़ाद' ने लिखा है — 'प्रसिद्धि एवं लोकप्रियता को ध्यान में रखकर कश्मीरी साहित्य में मसनवी 'गुलरेज़' का वही स्थान है जो फारसी काव्य में 'यूसुफ जुलेखा' और 'शीरी-खुसरो' को प्राप्त है । कश्मीर के प्रत्येक भाग में शिक्षित अशिक्षित, पुरुष स्त्रियों, बूढ़े बच्चे 'गुलरेज़' के नाम से ही केवल परिचित नहीं हैं अपितु उसके प्रति आकृष्ट भी हैं ।'[१] स्वर्गीय मकबूल शाह ने अनेक गज़ल भी लिखी हैं जिनमें भौतिक प्रेम की प्रधानता है ।

कश्मीरी शृंगारिक-काव्य में नवीन क्रान्ति लाने वालों में रसूल मीर का नाम उल्लेखनीय है । हिन्दी के प्रसिद्ध शृंगारिक कवि बिहारीलाल से उनकी तुलना की जाती है । उनकी कविताओं का मुख्य विषय शृंगार है । वे अनन्तनाग तहसील के डूरू शाहबाद गाँव में १६वीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में उत्पन्न हुए थे । आरम्भिक शिक्षा गाँव के मक्तब में ग्रहण की और वहीं एक ग्रामीण बाला 'कुंगी' के प्रेमपाश में फंस गए ।[२] 'कुंगी' को प्राप्त करने में उन्हें सफलता नहीं हुई और मीर साहब जीवन-पर्यन्त उसके विरह में पीड़ित रहे । उनके हृदय से एक हूक उठी जो काव्य के सांचे में ढल गयी । उनकी रचनाओं में अद्भुत भाव-सौन्दर्य तथा रसोद्बोधन शक्ति पाई जाती है । इसके अतिरिक्त पदलालित्य, सुन्दर शब्द-चयन , अलंकार नियोजन एवं संगीत का गुण भी उनकी रचनाओं में विद्यमान है ।

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग २, 'आज़ाद', पृ० २०१ ।

२. 'रसूल मीर' - कल्चरल अकादमी द्वारा प्रकाशित , पृ० ६ ।

रसूलमीर और बिहारी में काफी समानता पाई जाती है विशेष कर नखशिख वर्णन के प्रसंग में । उन्हें फारसी भाषा का पूर्ण ज्ञान था परन्तु उनकी सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उन्होंने भाव एवं भाषा दोनों क्षेत्रों में विदेशी प्रभाव को ग्रहण नहीं किया है । कहीं कहीं उनकी रचनाओं में फारसी शब्दों का प्रयोग मिलता है परन्तु भाव-क्षेत्र में वे पूर्ण रूप से स्वतंत्र रहे । निस्सन्देह यह कहा जा सकता है कि रसूल मीर (मीर शाहबादी) कश्मीरी साहित्य के महान शृंगारिक कवि हुए हैं । इस युग में वाज़ि महमूद एवं सेफउद्दीन आरिज़ ने भी शृंगारिक रचनाएँ लिखी हैं । आधुनिक युग में `महजूर` एवं 'आज़ाद' ने इस काव्य प्रवृत्ति को आगे बढ़ाया । 'महजूर' ने स्पष्ट शब्दों में रसूल मीर के प्रभाव को स्वीकार किया है ।[१] परन्तु यह प्रभाव उन पर अधिक समय तक नहीं रहा । उनका शृंगारिक काव्य एक विशेष युग की देन है । उसमें उनकी मौलिक प्रतिभा सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है । प्रेम के विभिन्न पक्षों का बड़ा ही सजीव, मार्मिक एवं हृदयग्राही वर्णन उन्होंने किया है जिसका विवेचन एवं विश्लेषण अगले अध्याय में `प्रेम-काव्य` के अन्तर्गत किया जाएगा । `महजूर` के समकालीन 'आज़ाद' ने भी इस प्रकार की बड़ी ही सुन्दर रचनाएँ लिखी हैं । इस प्रकार कश्मीरी साहित्य में शृंगारिक रचनाओं का आरम्भ १६वीं शताब्दी में हुआ और विकास की विभिन्न अवस्थाओं को पार करती हुई यह काव्य-प्रवृत्ति आज हमारे साहित्य का प्रमुख अंग बन गयी है ।

---

१. ` हमने मीर को पुरानी हाला नये प्यालों में भर दी और उसे ही बेचने के लिए मधुशाला में ले गये । अे महजूर । तू इस हाला को हाला-प्रेमियों में बांट दे ।` परि (२) क्रं० ५४.

`कश्मीरी भाषा एवं काव्य` - भाग २, 'आज़ाद', पृ० २८६.

लीला एवं भक्ति-काव्य :

कश्मीरी साहित्य में लीला एवं भक्ति काव्य को भी प्रधानता रही है । इस काव्य में धार्मिक उद्‌गार प्रकट किए गए हैं । शिव, राम, कृष्ण एवं मुहम्मद से सम्बन्धित अनेक भक्तिपरक रचनाएँ लिखी गयी हैं । श्री पृथ्वी नाथ 'पुष्प' ने लिखा है - 'धार्मिक कविता भी उन दिनों खूब हुई । जहाँ एक ओर शिव, पार्वती, राम और कृष्ण के भजन, कीर्तन और चरित गाये गये, वहाँ दूसरी ओर हज़रत मुहम्मद की शान में नातें कहीं गईं और मेराजनामे लिखे गये ।'[१] लीला काव्य के अन्तर्गत सम्पूर्ण सृष्टि को शिव या कृष्ण की लीला माना गया है । कृष्ण ने ही अपनी अद्‌भुत छटा को चारों ओर फैला दिया है । इस सृष्टि का निर्माण उसके कर-कमलों द्वारा हुआ है । यह उनकी परम इच्छा थी, यही उनकी लीला है । अत: इन रचनाओं में कृष्ण एवं शिव की महिमा का गुणगान किया गया है ।[२] भक्त अपने निश्छल हृदयोद्‌गारों को कृष्ण के प्रति अर्पित करता है । यही उसकी अर्चना के कुसुम हैं । वह विनीत एवं दास्यभाव में कहीं सगुण, तो कहीं निर्गुण ब्रह्म की लीला गाता है । इस काव्यधारा का जन्म १८वीं शताब्दी में माना जाता है । १६वीं शताब्दी में धार्मिक काव्य प्रचुर मात्रा में लिखा गया और २०वीं शताब्दी के प्रथम तीन चरणों तक इस प्रकार की कविताएँ प्रमुख रूप से लिखी जाती थीं । श्री साहब कौल ने सर्वप्रथम श्रीकृष्ण के विषय में कुछ लीलाएं लिखीं और इसके पश्चात् प्रकाशराम की 'कृष्ण अवतार लीला' इस क्षेत्र में उल्लेखनीय है । श्री अली जवाद ज़ैदी ने लिखा है - 'प्रकाशराम लीला-आन्दोलन के जन्मदाता हैं । उन्होंने ही कश्मीर में भक्ति का आन्दोलन चलाया जिसको आगे परमानन्द और उनके साथियों ने सक्रिय सहयोग प्रदान

---

१. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - 'पुष्प', पृ० १४ ।

२. 'कश्मीरी लायरिक्स' (सलेक्टेड एण्ड ट्रान्सलेटेड बाई)- जे०एल०कौल, पृ० १८ ।

किया ।[१] प्रकाशराम का 'रामावतार चरित' उस युग की सफल कृति समझी जाती है । इस ग्रन्थ में बहुत ही सुन्दर लीलाएं एवं भक्तिपरक भजन राम के विषय में लिखे गये हैं ।

१६वीं शताब्दी में लीला एवं भक्ति काव्य में नवीन प्राण फूंकने वालों में परमानन्द का नाम चिरस्मरणीय है । अनेक सुन्दर गीत एवं लीलाओं के अतिरिक्त उन्होंने 'सुदामा चरित' , 'राधास्वयंवर' एवं 'शिवलगन' नामक वर्णनात्मक कविताएँ भी लिखी हैं, जिनमें भक्ति की प्रधानता है । इन तीन काव्य-कृतियों के विषय में मास्टर जिन्दा कौन ने लिखा है – 'क्रमानुसार इन तीनों काव्य कृतियों का सार है - सुदामा और कृष्ण का परस्पर प्रेम अर्थात् जीव और परमात्मा का परस्पर प्रेम, राधा एवं श्रीकृष्ण का प्रेम, और शिव और उमा का पुनर्मिलन । ये तीनों कृतियाँ आत्मा-परमात्मा के परस्पर असीम प्रेम की प्रतीक हैं । ईश्वर की इस लीला को देखकर कवि अपना सर्वस्व उस पर निछावर करता है और भक्त के रूप में उसकी आराधना करता है । उन्होंने विशेषकर राधा और कृष्ण के प्रति अपने हृदयोद्गारों को वाणी प्रदान की । यही कारण है कि उनके काव्य को प्रमुखत: लीला के अन्तर्गत लिया जाता है ।'[२]

स्वामी परमानन्द श्रीकृष्ण के सच्चे भक्त थे । कृष्ण की लीलाएँ गाते गाते वे प्राय: मस्त हो जाते थे । आँखों में अश्रुओं की झड़ी लगती

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग २ (आज़ाद) - दो शब्द (प्रस्तावना) - अलीजवाद जेदी - पृ० ६६ ।

२. 'कश्मीर' - फरवरी १६५८ - 'परमानन्द' - मास्टरजी, पृ० २६ ।

धी और अभी अभी स्वयं भी नाचने लगते थे ।[१] प्रो० श्री कण्ठ तोशखानी ने लिखा है - 'उनकी लीलाएँ जनता में बहुत लोकप्रिय हुई और आज भी बड़े चाव से उन्हें गाया जाता है । धार्मिक एवं साहित्यिक गोष्ठियों में उनका पाठ किया जाता है ।'[२]

परमानन्द के पश्चात् पण्डित कृष्ण जू राज़दान का नाम लीला एवं भक्ति काव्य के क्षेत्र में प्रसिद्ध है । राज़दान साहब ने शिव और कृष्ण की समान रूप से उपासना की । प्रो० जियालाल कौल के अनुसार उनकी लीलाओं में रहस्य तत्व एवं दार्शनिकता अपेक्षाकृत कम है । ये लीलाएँ माधुर्य गुण से ओत-प्रोत हैं ।[३] उन्होंने ३४७ भजन एवं लीलाएँ लिखी हैं । 'शिवप्रणय' एवं 'शिवलगन' उनकी दो वर्णनात्मक काव्य-कृतियाँ हैं जिनमें अनेक भक्तिपरक गीत भी मिलते हैं ।

उनकी कृष्ण-लीलाओं में कृष्ण की बाल्यावस्था से लेकर राज्य प्राप्ति तक के सुन्दर चित्र मिलते हैं । उसके जीवन के विभिन्न पक्षों का उन्होंने बड़ी गहराई से चित्रण किया है ।[४]

---

१. (i) Kashmir - March 1958 - Page 53.

(ii) It is said that when he recited this lila in his musical voice and to the accompaniment of the Madham, which he played constantly and fairly well, every fibre of his heart, thrilled - he wept and sang and danced in ecstasy.

'Kashmir' Feb. 1958 - "Parmanand" - Master ji - Page 29.

२. 'परमानन्द' - कलचरल अकादमी - दो-शब्द - प्रो० तोशखानी, पृ० ११ ।

३. 'कश्मीर' - अक्टूबर १९५६ - 'मार्डन पीरियड आफ कश्मीरी लिटरेचर' जे० एल० कौल , पृ० २३० ।

४. 'कश्मीर' - दिसम्बर १९५८ - 'कृष्ण जू राज़दान' - बी०एल० कौल, पृ० २९९।

श्रीराम के प्रति भी राज़दान साहब ने सुन्दर भजन गाए हैं । राम के प्रति उनकी भक्ति दास्य भाव की है जब कि कृष्ण के प्रति सख्य भाव की :-

'आप भक्तों के भक्ति भाव पर रीझ जाते हैं । हे राम! मैं आपके राम नाम पर बलिहारी हो जाऊँ ।'[१] (परि (२) क्रं० ६७)

स्वामी परमानन्द की शिष्य परम्परा में स्वर्गीय लक्ष्मण जू राज़दान (बुलबुल नागामी) एक प्रसिद्ध भक्त-कवि हुए हैं । लक्ष्मण जू परमानन्द के प्रिय शिष्य थे और उनके सम्पर्क में आकर उन्होंने अनेक भक्तिपरक रचनाएँ लिखीं हैं ।

यहाँ के मुसलमान कवियों के धार्मिक साहित्य (भक्ति-साहित्य) पर प्रकाश डालना इस प्रसंग में असंगत न होगा । इन कवियों की भक्तिपरक रचनाएँ प्रमुखत: 'नातों' के रूप में प्राप्त होती हैं । १६वीं शताब्दी में श्री कुतुबउद्दीन वाइज़ ने इस प्रकार की सुन्दर रचनाएँ लिखी हैं ।

१६वीं शताब्दी में ही श्री अब्दुल अहद नादिम ने भक्ति-रस से ओत-प्रोत सुन्दर रचनाएँ लिखी हैं । वे एक प्रसिद्ध सूफी सन्त थे । हज़रत नबी के प्रति उन्होंने करुण एवं विनीत शब्दों में अपने भाव प्रकट किए हैं -

'हज़रत नब्बी के नाम पर हम बलिदान हो जाएं, वायु के द्वारा मैं अपना सन्देश उनतक पहुँचाऊँगी । मैं अपना दुखड़ा उन्हें सुनाऊँगी । मैं आँसुओं के ऊष्ण-जल से उनके पाऊँ धो लूँगी । दोनों आंखें उन पर निछावर करूँगी। मैं अपने शुष्क होन्टों से उनके पाँव पूँछ लूँगी ।'[२] परि(२) क्रं० ७१.

---

१. 'मार्ग-दर्शक' - अगस्त १६६२ , पृ० ५३ ।

२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग २, 'आज़ाद', पृ० ३५३ ।

इसी युग में मकबूलशाह क्रालवारी ने भी बहुत ही सुन्दर नातें लिखी हैं। तत्कालीन विकट परिस्थितियों से निराश होकर कवि महोदय मुहम्मद की शरण में जाते हैं। जीवन की अनेक असंगतियों ने उन्हें पीड़ित कर दिया था। उनका दृढ़ विश्वास है कि तमसान्धकार में हमारे लिए मुहम्मद ही प्रकाश की एक किरण है।[१]

पण्डित नन्दराम ने मुहम्मद की शान में एक सुन्दर नात लिखी है जिसका उल्लेख 'आज़ाद' ने अपने इतिहास में किया है। उन्हें दयासागर मुहम्मद पर अडिग विश्वास है :-

'आज मेरे सब रोगों का दवा कर दो ताकि मैं रोग-मुक्त हो जाऊँ। अे मेरे प्यारे मुहम्मद ! मैं तुम्हारे दरबार में बड़ी आशाएँ लेकर आया हूँ। मुझे निराश न होने देना। मेरे प्रेम से परिपूर्ण हृदय की पुकार सुन। मेरे मुहम्मद ! मुझ पर दया करो।'[२] परि० (२) क्रं० ७३.

कविवर 'महजूर' ने भी ईश्वर के प्रति अपने अडिग विश्वास को कई कविताओं में व्यक्त किया है। ये कविताएँ उन्होंने जीवन के अन्तिम वर्षों में लिखी हैं। इन कविताओं में 'महजूर' साहब का समन्वयवादी दृष्टिकोण - जो कि धार्मिक संकीर्णता से बहुत दूर है - प्रकट हुआ है। ईश्वर की चरण-वन्दना करते समय वे लिखते हैं :-

'हे मेरे मालिक ! मुझे केवल तुम्हारी आशा है। मुझे सन्मार्ग पर चलना सिखा दो। अब मैं और कितने समय तक अज्ञान में भटकता रहूँ। ज्ञान का प्रकाश मेरे जीवन के अन्धकार को मिटा देगा। मेरी विनती को तनिक

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग ३ -'आज़ाद', पृ० ७०-७१।
२. वही - भाग २ -'आज़ाद', पृ० ४५७।

सुनो और मुझे रोग-मुक्त कर दो । मुझ पर सदा तुम्हारी दया दृष्टि बनी रहे और कभी मैं निराश न होने पाऊँ । मेरा रूपाकार मनुष्य के समान है परन्तु मनुष्यता मुझ से कोसों दूर है । मुझे मानवता का पाठ पढ़ाओ । अब मुझे और परीक्षा में मत डाल दो ।[१] परि (२) क्रं० ७४.

ईश्वर-विरह में जीवात्मा का क्रन्दन देखने योग्य है :

"मैं अपना जीवन उस पथ पर बलिदान कर दूँगा जो पथ मुझे तुम्हारे यहाँ पहुँचा देगा । तुम्हारी जुदाई ने मेरी सहन शक्ति को नष्ट कर दिया । क्या करूँ, मुझे तुम्हारे प्रेम ने उन्मत्त बना दिया । यदि मुझे कहीं तुम्हारा पता मिलता तो मैं पागलों के समान दौड़ता हुआ वहाँ तक पहुँच जाता । मार्ग में तुझे ढूँढ़ लेता या वहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा करता ।[२] परि (२) क्रं० ७५

इस प्रकार लीला एवं भक्ति-काव्य के क्षेत्र में यहाँ के कवियों का योगदान प्रशंसनीय रहा है । इस काव्य प्रवृत्ति ने यहाँ के हिन्दू एवं मुसलमान कवियों को समान रूप से प्रभावित किया ।

चरित-काव्य :

कश्मीरी साहित्य में चरित काव्यों की एक स्वस्थ परम्परा मिलती है । यह काव्य अपनी मौलिकता एवं घटना-वैचित्र्य के कारण हृदयाकर्षक है। लौकिक एवं पौराणिक महापुरुषों से सम्बन्धित अनेक चरितकाव्य लिखे गये हैं । अधिकांश कवियों ने 'राम-चरित' लिखे, फलत: रामायण-काव्य की अमूल्य कृतियाँ आज इस भाषा में उपलब्ध हैं । यहाँ के रामभक्त कवियों ने निराकार राम की उपासना नहीं की अपितु दशरथ सुत अयोध्या के राजकुमार

---

१. 'सलामे-महजूर', पृ० १-२ । 'सलामे-महजूर' → (स० म०)
२. वही , पृ० ४ ।

की जीवन-लीला का सगुणोपासक के रूप में वर्णन किया ।

सुलतान ज़ैनुलाबद्दीन 'बड़शाह' का शासनकाल (१४२० ई० से १४७० ई० तक) कश्मीर के इतिहास का स्वर्ण-युग माना जाता है । उनके राज्यकाल में यहाँ की हिन्दू एवं मुसलमान जनता को समानाधिकार प्राप्त हुए । वे एक प्रजा-रक्षक राजा थे । स्वयं वे धार्मिक सहिष्णुता के प्रतीक थे । मुगल राजाओं में जो स्थान अकबर का है वही कश्मीर के सुलतानों में ज़ैनुलाबद्दीन का है । जनता प्रेमवश उन्हें 'बड़शाह' अर्थात् बड़ा राजा कहकर पुकारती थी । उनके राज्यकाल में प्रदेश ने हर क्षेत्र में उन्नति की - विशेषकर कला एवं साहित्य के क्षेत्र में । संस्कृत, फारसी तथा देशी भाषा के अनेक विद्वान, कवि एवं कलाकार उनके दरबारी रत्न थे । सोम पण्डित उनके दरबार के एक प्रसिद्ध विद्वान थे जिन्होंने सम्राट के जीवन पर आधारित 'ज़ैन चरित' नामक चरित-काव्य की रचना की है । इस ग्रन्थ का नायक स्वयं बड़शाह है जिनकी जीवन गाथा को महापण्डित ने बड़ी विज्ञता से शब्दबद्ध किया । इस कृति में सम्राट के अद्भुत राज्य कौशल, विलक्षण बुद्धि, गुण ग्राहक शक्ति, विद्याप्रेम एवं रसिक हृदय का विशद् वर्णन हुआ है ।

१८वीं शताब्दी में पण्डित प्रकाश राम ने 'रामावतार चरित' काव्य की रचना की । पण्डित प्रकाशराम जो दिवाकर प्रकाश के नाम से भी प्रसिद्ध हैं कुर्यगाम के निवासी थे । राजा सुखजीवन (सन् १७५४-६२) के राज्यकाल में प्रकाशराम ने इस चरित काव्य को लिखा है ।[१] जनश्रुति है कि प्रकाश भट्ट नेत्रहीन थे और इस चरित काव्य के लिखने के पश्चात् ही उन्हें नेत्र सुख प्राप्त हुआ । यद्यपि ग्रन्थ का मुख्याधार वाल्मीकि रामायण है तथापि इसमें अनेक नवीन प्रसंगों की उद्भावना की गयी है । कथा में भी कहीं कहीं मौलिक अंश

---

१. इस विषय में विद्वान एकमत नहीं हैं ।

जोड़ दिए गए हैं । इसमें सीता को मन्दोदरी की पुत्री बताया गया है ।[१] सारे काव्य में करुण रस की प्रधानता है । पण्डित प्रकाशराम फारसी के अच्छे विद्वान थे जिस कारण काव्य में यत्र-तत्र फारसी मिश्रित कश्मीरी का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है ।

श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - ' विषय और भाषा के लिहाज़ से यह कश्मीरी की मौलिक रचनाओं में से है । भाषा वर्णनानुकूल और संतुलित है तथा मनोवेगों का चित्रण बहुत स्वाभाविक और प्रभावशाली है । जंगों के अतिरिक्त शेष सभी प्रसंगों में देशकाल की उद्भावना खूब हुई है । वेदना को जाग्रत करने में कवि को विशेष सफलता मिली है । काव्य के परिशिष्ट 'लवकुश चरित' में सीता का करुण निवेदन तो कश्मीरी साहित्य में बिल्कुल निराली चीज़ है ।'[२] युद्ध-प्रसंगों पर फारसी 'रज़मिया-काव्य' का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है । इस ग्रन्थ में प्रकृति चित्रण भी सजीव एवं चिताकर्षक है । कश्मीर के वन-पर्वतों, जल-प्रपातों, झीलों, घाटियों एवं रम्य स्थलों को कवि ने अपने काव्य में बड़ी कलात्मकता से चित्रित किया है ।[३]

२०वीं शताब्दी में पण्डित नीलकण्ठ शर्मा ने श्रीराम के जीवन से सम्बंधित दो ग्रन्थ लिखे - 'रामायणि शर्मा' एवं 'रामचरित' (रामचंयर्थ) । 'रामायणि शर्मा' पर फारसी भाषा का गहरा प्रभाव है । 'रामचंयर्थ' पर वाल्मीकि एवं तुलसी कृत रामायण का स्पष्ट प्रभाव पड़ा है । कवि महोदय की महान रचना-शक्ति का परिचय हमें इस कृति से मिलता है । कृति अप्रकाशित है परन्तु उसकी पाण्डुलिपि स्वयं लेखक के पास सुरक्षित है ।

---

१. 'कश्मीर देश व संस्कृति' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १४५ ।
२. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' -'पुष्प', पृ० १७ ।
३. 'ए हिस्ट्री आफ कश्मीर' - पी०एन०के० बमज़ई , पृ० ७३६ ।

पण्डित विष्णु कौल व्यास (अनन्तनाग तहसील) गाँव के निवासी थे । उन्होंने भी एक 'रामचरित' लिखा है ।

चरित-काव्य की परम्परा में स्वामी परमानन्द का 'सुदामा चरित' अपने युग की एक सफल कृति समझी जाती है । सुदामा और श्रीकृष्ण की मैत्री के विषय में कई कथाएँ प्रचलित हैं । सुदामा-एक अकिंचन बालक-मैत्री बालगोपाल कृष्ण से थी । वे कृष्ण के घनिष्ठ मित्र थे । सुदामा को अभिमान हुआ और परिणामस्वरूप उनकी मैत्री में बाधा उपस्थित हुई । कृष्ण से अलग होने पर उसे अनेकों संकटों का सामना करना पड़ता है । दरिद्रता के कारण वह हताश हुआ । इन्हीं दिनों कृष्ण को राज्य प्राप्त होता है और सुदामा पुन: उसकी शरण में जाता है । इस कृति में स्वामी जी ने अपने दार्शनिक दृष्टिकोण को भी अभिव्यक्त किया है । सुदामा जीव का प्रतीक है जो सांसारिक सुख-वैभव के अभिमान के कारण उस परमसुख से वंचित हो जाता है । अंत पर जब जीव को वास्तविकता का ज्ञान होता है तो वह परमशक्ति से पुनर्मिलन के लिए व्याकुल हो उठता है । और अनेक कठिनाइयों के पश्चात् बिन्दु पुन: सिन्धु में विलीन हो जाता है । स्वामी जी ने सुदामा के जीवन का सर्वांगीण चित्रण किया है । आरम्भ से लेकर अन्त तक उनकी जीवन कथा इस कृति में वर्णित है । सुदामा की जीवन-कथा के साथ-साथ श्रीकृष्ण के जीवन की प्रमुख घटनाओं का भी वर्णन भी इस कृति में मिलता है।

कश्मीर प्रदेश में 'अकनन्दुन' की लोककथा बहुत ही लोकप्रिय है । इस लोककथा के आधार पर अनेक कवियों ने दुख सुखात्मक चरित-काव्य 'अकनन्दुन' का सृजन किया है । श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'एक और विषय जिस पर आधा दर्जन से अधिक कवियों ने अपनी प्रतिभा को आज़माया है, 'अकनन्दुन' की करुण कथा है । एक दम्पति वचन पालने पर मजबूर हो स्वयं अपने हाथों

अपने इकलौते बेटे को मार काट कर पकाते हैं और खाते हैं और परीक्षा में पूरे उतर कर फिर उसे प्राप्त कर लेते हैं ।'[१]

सर्वप्रथम प्रकाशराम (१८वीं शताब्दी) ने 'अकनन्दुन' लिखा है ।[२] आधुनिक युग तक अन्य अनेक कवियों ने इस कथा को पद्यबद्ध किया है । सर्वश्री रमज़ान भट्ट, अहद ज़रगर, समद मीर एवं अली वानी ने 'अकनन्दुन' चरित काव्य लिखा है । इन काव्यकृतियों में करुण रस की प्रधानता है । 'अकनन्दुन' उस बालक का नाम है जो एक हिन्दु परिवार में जन्म लेता है । वह परिवार पुत्र-सुख से उस समय तक वंचित था और एक जोगी के आशीर्वाद ने उन्हें यह सुख प्रदान किया । जोगी ने उनसे यह वचन लिया था कि १२ वर्ष के पश्चात् बालक लौटाना पड़ेगा । इन १२ वर्षों तक अकनन्दुन के बाल जीवन का बड़ा ही मनोरम चित्रण इन कृतियों में मिलता है । क्योंकि इन कृतियों में आरम्भ से लेकर अन्त तक अकनन्दुन के जीवन का ही वर्णन मिलता है अत: इनको चरित-काव्य के अंतर्गत लेने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये । ये सब काव्य सुखान्त हैं । जीव को कठिन परिस्थिति में डालकर ब्रह्म उसकी परीक्षा लेता है और अनेक यातनाएँ सहन करने के लिए विवश करता है । संकटों को झेलकर जो कुछ शेष रहता है वह पारस है और यही इन काव्य-कृतियों का सन्देश है ।

वीर एवं राष्ट्रीय काव्य :

यह प्रवृत्ति प्राचीन साहित्य में गौण रूप से उपलब्ध है । प्राचीन काल के साहित्य में दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं सूफी मत के सिद्धान्तों की अभि-व्यक्ति प्रमुख रूप से हुई है । फिर भी रहस्यवादी काव्य के घटाटोप में वीर काव्य की प्रवृत्ति कहीं× दबती कहीं उभरती दीख पड़ती है । कश्मीर में अनेक

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं साहित्य' -'पुष्प', पृ० १७ ।

२. 'स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन कश्मीर' - पी० एन० बज़ाज , पृ० २८६ ।

राजनीतिक एवं धार्मिक क्रान्तियाँ हुईं जिन्होंने इस काव्य-प्रवृत्ति को येनकेन प्रकारेण जीवित रखा। श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'कश्मीर की धरती ने अनगिनत परिवर्तन देखे हैं। सतीसर से 'नयाकश्मीर' तक की लम्बी यात्रा में इसने कई विषम परिस्थितियों का सामना किया है और वीरत्व के कई आदर्श प्रस्तुत किए हैं। शुरू के कश्मीरी साहित्य में यद्यपि इन आदर्शों की समयानुकूल गूँज बहुत कम सुनाई पड़ती है, फिर भी पौराणिक आवरण में या लोक-भाषा के साँचे में इस तरह के चित्रण अवश्य प्रस्तुत हुए हैं।'[१] सर्वप्रथम वीर-रस के दर्शन हमें यहाँ के लोक-साहित्य में होते हैं। लोक-गीतों में कहीं कहीं पर वीर पुरुषों का वर्णन मिलता है जिन्होंने कोई महान कार्य या अतुल्य साहस का प्रदर्शन किया हो। ऐसे वर्णन हमें 'लेड़ीशाह' लोकगीतों में मिलते हैं। प्राय: यह वर्णन लोकमानस की निजी कल्पना पर आधारित होते हैं अत: इन्हें हम शुद्ध वीरकाव्य के अन्तर्गत नहीं ले सकते हैं।

१५वीं शताब्दी के प्रेमगाथाकाव्य 'बाणासुर वध' में गौण रूप से वीर-रस के दर्शन होते हैं। पौराणिक आधार पर लिखी हुई इस कृति में बाणासुर की वीरता के अतिरिक्त कृष्ण की विजय का परम्परागत पौराणिक चित्रण मिलता है।'[२] पण्डित प्रकाश भट्ट की रामायण 'रामावतार चरित' में युद्ध वर्णन काफी विशद् एवं सजीव है। इस कृति का युद्ध-खण्ड वीर रस से ओतप्रोत है तथा राम और रावण की सेनाओं एवं सेना-अध्यक्षों की अप्रतिम शूरवीरता का बखान किया गया है। यही वह युग था जब कश्मीर पर विदेशी राज्य पूर्णरूपेण स्थापित हो चुका था। विदेशी भाषा, संस्कृति एवं साहित्य ने यहाँ की संस्कृति एवं भाषा को पदमर्दित कर दिया था।

---

१. 'योजना' - अक्तूबर-नवम्बर १९६० - 'कश्मीरी कविता में वीर रस', 'पुष्प', पृ० ४।

२. वही।

मुसलमानों के पश्चात् कश्मीर सिखों के अधीन हो गया । १९वीं शताब्दी के मध्य तक फारसी के कई वीरगाथा काव्यों का अनुवाद कश्मीरी भाषा में किया गया और कई मौलिक रचनाएँ भी लिखी गयीं । इन वीर-काव्यों के विषय-वस्तु एवं शैली विदेशी हैं और फारसी भाषा का अन्धानुकरण इन काव्यों में मिलता है । श्री 'आज़ाद'ने लिखा है - 'इन कवियों ने फारसी वीर गाथाओं विशेष कर 'सामनामा' एवं 'शाहनामा' को बड़े जोश के साथ जनता को सुनाना आरम्भ किया ।'[१] स्वर्गीय अब्दुल बाहब परे ने 'शाहनामा' एवं 'अकबरनामा' दो प्रसिद्ध वीररस प्रधान रचनाएँ लिखी हैं । इसके अतिरिक्त दो और वीर काव्य भी बहुत प्रसिद्ध हुए । श्री अज़ीज़ उल्लाह हकानी का 'महमूद गज़नवी' एवं श्री असद परे का 'सिकन्दरनामा' । दोनों में वीर योद्धाओं के अद्भुत पराक्रम एवं जन-संहार शक्ति का वर्णन मिलता है । इन कृतियों में अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन भी किया गया है । श्री 'पुष्प'ने लिखा है- 'बस यही नेज़ाबाज़ी के करतब, शमशीर बाज़ी के जौहर, पहलवानों दाव-पेच और ललकार, और अन्त में ख़ूनख़राबी और तख्त तख्त की गर्वोक्तियाँ ।'[२] ध्यान पूर्वक देखने से यह बात भली भांति स्पष्ट होती है कि इन वीर काव्यों में किसी उच्च आदर्श का संकेत नहीं मिलता । जीवन के प्रति किसी स्वस्थ दृष्टि कोण की अभिव्यक्ति इनमें अप्राप्य है । सामान्य जन-जीवन से न तो इन्हें प्रेरणा मिली थी और न ही इनमें जन-मानस प्रतिबिम्बित था । इनमें परम्परागत चित्रण की प्रधानता है और विदेशी संस्कृति एवं साहित्य के प्रति अन्ध-भक्ति ।

---

१. 'कश्मीर भाषा एवं काव्य' - भाग १ -'आज़ाद', पृ० १७६ ।

२. 'योजना' - अक्तूबर-नवम्बर १९६० - 'कश्मीरी कविता में वीररस'-'पुष्प', पृष्ठ ५ ।

२०वीं शताब्दी में इस काव्यधारा में समूल परिवर्तन हुआ । कवियों के सम्मुख एक राष्ट्र की कल्पना सजग हो उठी । देश की स्वतंत्रता के लिए सक्रिय आन्दोलन आरम्भ हुआ । राष्ट्रीयता की नई लहर सारे देश में फैल गयी । भारतीय राजनीतिक उथल-पुथल एवं संघर्ष का परोक्ष प्रभाव कश्मीर पर भी पड़ रहा था । अज्ञान का आवरण हट रहा था । सुप्त जनता एकबार पुन: जाग्रत हुई और अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए छटपटाने लगी । शताब्दियों पुरानी दासता की लोह-शृंखलाओं से अपने को मुक्त करने के लिए देशवासी सचेत हो उठे, फलत: कवियों की विचारधारा में भी परिवर्तन हुआ । राष्ट्रीय काव्य ने जन्म लिया । राजनीतिक एवं आर्थिक शोषण के विरुद्ध आन्दोलन हुए । यह धरती माँ की पुकार थी जो इस युग की कविताओं में मुखरित हो उठी । वीरकाव्य ने एक नवीन रूप धारण किया जिसमें अतिशयोक्ति का स्थान यथार्थ चित्रण ने ले लिया । अब वीरत्व का प्रदर्शन किसी सुन्दरी की प्राप्ति के लिए नहीं, अपितु देश की स्वतंत्रता के लिए होने लगा। 'वसुधैव कुटुम्बकं' की भावना इन कवियों की काव्य-वाणी में मुखरित हो उठी । यह विद्रोह एवं विप्लव का युग था । इस युग में 'महजूर' , 'आज़ाद' हसनबेग 'आरिफ' एवं दीनानाथ 'नादिम' ने अपनी काव्य-वाणी द्वारा जनता को स्थायी सहयोग प्रदान किया । इस नवीन काव्य-धारा का प्रतिनिधित्व कश्मीरी साहित्य में कविवर 'महजूर' ने किया । सर्व प्रथम इस युग के कवियों का ध्यान देश की दलित, पीड़ित, शोषित एवं अपमानित जनता की ओर आकृष्ट हुआ ।

'महजूर' के प्रिय शिष्य स्वर्गीय 'आज़ाद' ने इस काव्यधारा को आगे बढ़ाया । उनमें क्रान्ति का स्वर अधिक प्रबल है और निर्भीक होकर उन्होंने सत्ताधारियों के विरुद्ध अपने रोष को प्रकट किया ।[१] सांस्कृतिक पुनरुत्थान

---

१. 'कश्मीर टुडे' - सितम्बर १९५७ - निवकश्मीर इन कश्मीरी वर्स - 'पुष्प', पृष्ठ २ ।

को प्रबल वाणी प्रदान करने का श्रेय 'आज़ाद' महोदय को ही है ।[१]

कवि 'आज़ाद' मानव समाज़ में समूल परिवर्तन लाना चाहते थे । व्यक्तिगत, जातिगत एवं धार्मिक संकीर्णता के विरुद्ध कविवर 'महजूर' ने जिस आन्दोलन को जन्म दिया था उसमें सक्रिय सहयोग 'आज़ाद' ने प्रदान किया ।

इन्हीं दिनों मिर्ज़ा गुलामहसन बेग 'आरिफ' तथा अन्य अनेक कवियों ने देशप्रेम सम्बन्धी रचनाएँ लिखीं । आरिफ साहब की कविता 'सोन कारवाँ' विशेष रूप से प्रसिद्ध हुई । शोषक और शोषित के मध्य संघर्ष का चित्रण करते हुए कवि महोदय ने लिखा है :-

"महाजनों, ज़ैलदारों, गाँव के मुखियों, एवं मुल्लाओं ने अनेक प्रकार के शोषण किए । घाव बड़े गहरे थे । घाव रूपी पुष्प खिलते गए , परन्तु हमारा कारवाँ (दल) आगे ही बढ़ता गया ।"[२] परि (२) क्रं० ६०.

श्री दीनानाथ 'नादिम' ने नया-कश्मीर के नवनिर्माण के हेतु देशवासियों को आवाहन किया । देशवासियों के अज्ञान की भयंकर निद्रा को भंग करने के लिए वे ललकार उठे :-

"तुम स्वयं अग्नि पुंज हो , तुम में यौवन की उत्कट अभिलाषा केन्द्रीभूत है । यदि तुम बसन्त के पवन हो तो पवन - दूत बन कर आगे बढ़ो।

---

१. 'The greatest Poet of Modern Kashmir is Abdul Ahad Azad. He deserves to be called a revolutionary and a master of cultural renaissance.'
'Struggle for Freedom in Kashmir - Bazaz - Page 299.

२. 'गाए जा कश्मीर' , पृ० ४१ ।

तुम बादलों के नीचे छिपकर मत रहो । तुम पर्वतों एवं जंगलों के वृक्षों को चीर कर बाहर निकल आओ । तुम एक तूफान पैदा कर और स्वयं भी एक तूफान बन जाओ । इस कारवान (दल) का नेतृत्व ग्रहण कर और देश का कल्याण करो ।`[१] परि(२) क्रं० ६१.

निष्कर्ष : श्री ग्वाशिलाल कौल ने `कश्मीर` नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ में लिखा है - `कश्मीर के प्राचीन इतिहास से ज्ञात होता है कि यहाँ के देशवासी असंस्कृत एवं असभ्य नहीं थे और न ही जंगलों में रहते थे । उन का जंगल यही पवित्र भूमि थी जिसके प्रति संसार के महान विद्वान अपनी श्रद्धाँजलि अर्पित करते हैं । आज भी बनारस (जिसे भारत का रोम कहा जाता है) के पण्डित कश्मीर के विद्वानों की मानसिक उच्चता को स्वीकार करते हैं । कश्मीर ने ही देश के प्रसिद्ध इतिहासकारों, कवियों एवं दार्शनिकों को जन्म दिया है ।`[२] यहाँ की प्राचीन काव्य-परम्परा निस्सन्देह अमूल्य है । यह काव्य विविधता से पूर्ण है । युग और परिस्थितियों के साथ साथ अनेक काव्य प्रवृत्तियों ने जन्म लिया । कहीं अनुकरण की प्रधानता दीख पड़ती है तो कहीं अशिक्षित जन-कवियों के असाहित्यिक प्रयोग । इस देश का दुर्भाग्य यह था कि २०वीं शताब्दी तक विद्वत् समाज का ध्यान इस भाषा की ओर आकृष्ट नहीं हुआ । फलत: भाषा एवं साहित्य अविकसित अवस्था में पड़ा रहा । बहुत-सा प्राचीन साहित्य अप्राप्य है । या तो वह नष्ट हुआ है या मौखिक परम्परा में कहीं लुप्त हो गया । लिपि की समस्या भी हमारे लिए एक ज्वलन्त समस्या है। इस समस्या को सुलझाने का काफी प्रयत्न किया गया परन्तु आजतक कोई सन्तोषजनक हल प्रस्तुत नहीं हुआ ।

---

१. `गार जा कश्मीर` , पृ० १६ ।

२. `कश्मीर` (थ्रू-द-एज़्स) - ग्वाशिलाल कौल , पृ० २०५ ।

आधुनिक युग में 'महजूर', 'आज़ाद', 'आरिफ' एवं 'नादिम' के अतिरिक्त अनेक कलाकारों का ध्यान अपनी भाषा एवं साहित्य की ओर आकृष्ट हुआ। इनमें प्रसिद्ध हैं - मास्टर ज़िन्दा कौल[१], ~~दीननाथ 'नादिम'~~, गुलाम रसूल `नाज़की`, नूर मुहम्मद, रौशन, रहमान `राही`, गुलामनबी `फिराक`, अमीन `कामिल`, अब्दुल सतार `गुजरी`, नन्दलाल अम्बारदार, अज़ीज़ हारूण, एवं प्रेमनाथ `प्रेमी` आदि हैं। २०वीं शताब्दी में ही कश्मीरी भाषा में गद्य का विकास हुआ। सर्वश्री सोमनाथ जुत्शी, अख्तर महीउद्दीन, अली मुहम्मद लोन, अवतारकृष्ण `रहबर`, महीउद्दीन हाजिनी, हृदय कौल `भारती` - इस क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं। स्वतंत्रता के पश्चात `कौंगपोश` एवं `गुलरेज़` दो पत्रिकाएँ कुछ समय तक प्रकाशित होती रहीं। आजकल `शीराज़ा` साहित्यिक पत्रिका प्रकाशित हो रही है।

इस प्रकार १४वीं शताब्दी में जिस काव्य का बीजारोपण लल्लेश्वरी एवं नुन्द ऋषि के पवित्र कर-कमलों से हुआ, १६वीं शताब्दी में वह एक नन्ही सी कली के रूप में प्रकट हुआ और रानी हब्बाखातून ने उस कली को अपने अश्रुओं से सींचा। १९वीं शताब्दी में वह एक छोटे से वृक्ष के रूप में हमारे सामने आया। जिसकी देखभाल क्रालवारी, परमानन्द, रसूल मीर एवं महमूद गामी ने की। आज वही वृक्ष अपनी विशाल भुजाएँ फैलाए हुए विभिन्न दिशाओं में छाया

---

१. स्वीय मास्टर जिन्दा कौल की कविताओं में पुनः आध्यात्मिक स्वर गूँज उठा है। उन्होंने ललद्यद, परमानन्द एवं कृष्ण राज़दान की परम्परा को २०वीं शताब्दी में जीवित रखा। वे मानवता प्रेमी थे अतः मानव के आन्तरिक एवं बाह्य विकास के लिए सदा प्रयत्नशील रहे। मास्टर जी की काव्य-प्रतिभा बहुत ही सुलझी हुई है। उनके काव्य में कलात्मकता अधिक है। उनकी काव्य कृति `सुमरन` भारतीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत की गयी है।

एवं शीतलता प्रदान कर रहा है ।

(आ) युग-चित्रण

साहित्यकार अपने युग की उपज होता है । उस के व्यक्तित्व एवं प्रतिभा पर युगीन परिस्थितियों का काफी प्रभाव पड़ता है । वह एक सामाजिक प्राणी होता है और समाज की गतिविधियों से नित परिचित रहता है । परिस्थितियों को देखकर या अनुभव करके आँखें मूँद कर रहना या मूक रहना उसके लिए सम्भव नहीं । वह जन-हृदय को वाणी प्रदान करता है और समाज एवं जाति की धमनियों में रक्त संचार । २०वीं शताब्दी के कश्मीरी लेखकों पर युगीन परिस्थितियों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है । यह राजनीतिक उथल-पुथल एवं संघर्ष का युग था । श्री कौमुदी ने लिखा है - 'आधुनिक कश्मीरी साहित्य एवं काव्य में प्रमुख रूप से राजनीतिक आर्थिक एवं सामाजिक चेतना को ही अभिव्यक्ति मिली है । युग के प्रसिद्ध कवि जनता के निम्न वर्ग से सम्बन्धित हैं और उन्होंने अनेक प्रकार के शोषण सहन किए हैं । फलतः उनके काव्य में स्वतंत्रता प्राप्ति का एक नवीन आशावादी सन्देश प्राप्त होता है ।'[१] कविवर 'महजूर' के समस्त काव्य का विश्लेषण करने से पूर्व हमारे लिए यह नितान्तावश्यक है कि उस युग का सम्यक् अध्ययन किया जाए जिस युग में उन्होंने अपनी काव्य-वाणी द्वारा सुषुप्त जनता में नवचेतना का संचार किया।

राजनीतिक परिस्थितियाँ :

डोगरा-नरेशों ने जम्मू व कश्मीर में अपना एकछत्र राज्य पूर्ण रूपेण स्थापित कर लिया था । इससे पूर्व देश पर सिक्खों का राज्य था और उनसे पूर्व लगभग ५०० वर्षों तक मुसलमान नरेश हमारे भाग्य के मालिक रहे ।

---

१. 'लिटरेरी हेरीटेज' - कौमुदी , पृ० ८० ।

महाराजा गुलाबसिंह ने सन् १८४६ में यहाँ डोगरा राज्य का शिलान्यास रखा । राजा गुलाबसिंह एक महान योद्धा थे । उन्होंने अपनी शूरवीरता, बुद्धिमता एवं योग्यता से जम्मू व कश्मीर में अपना राज्य स्थापित किया जिसको सुदृढ़ बनाने में उनके सुपुत्र राजा रणवीरसिंह (सन् १८५६-१८८५) का प्रशंसनीय योगदान रहा है । सन् १८८५ में रणवीरसिंह के जेष्ठ पुत्र प्रतापसिंह राजगद्दी पर बैठे । वे एक सहृदय एवं न्यायप्रिय राजा थे । इन्हीं दिनों प्रदेश में भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन का अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ रहा था । डोगरा राजाओं ने भारत में विदेशी शासकों (अंग्रेज़ों) की तन-मन से सेवा की और प्राय: उन्हीं के संकेतों पर नाचते रहे । सामान्य जनता की दशा शोचनीय थी । जमींदारी प्रथा के दुष्परिणामों के फलस्वरूप जनता पीड़ित थी । शिक्षा का कोई सुप्रबन्ध नहीं था। दूर से कश्मीरवासी भारतीय स्वातंत्र्य-युद्ध और शासकों की छल-कपट नीति को देख रहे थे । गान्धी जी के असहयोग आन्दोलन, जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड, बंग-भंग आन्दोलन तथा अन्य अनेक घटनाओं के फलस्वरूप कश्मीर वासियों में भी स्वतंत्रता-भावना जाग्रत हो रही थी । सन् १९२५ में महाराजा प्रतापसिंह की मृत्यु हुई, वे निस्सन्तान थे अत: राजा अमरसिंह के सुपुत्र श्री हरीसिंह सन् १९२५ में गद्दी पर बैठे और सन् १९२६ में उनका तिलक जम्मू में राजसी ठाठबाट के साथ हुआ । इससे पूर्व सन् १९२४ में सर्वप्रथम देश में राजा की शासन नीति एवं पदाधिकारियों की क्रूरता के विरुद्ध आक्रोश प्रकट किया गया था , परन्तु आन्दोलन को शासन अधिकारियों ने कुचल दिया । श्री ग्वाशिलाल कौल ने लिखा है - 'सन् १९२४ की ग्रीष्म ऋतु में श्रीनगर के 'रेशम कारखाने' के श्रमिकों ने पदाधिकारियों एवं राज्य के विरुद्ध आन्दोलन किया । इसी के साथ अनन्त नाग में मुसलमानों ने सरकारी ज़मीन पर कब्ज़ा किया । प्रदेश में पहली बार शोषित जनता ने अपने आक्रोष को प्रकट किया और इस प्रकार

प्रदेश में आन्दोलन ने जड़ पकड़ ली । आन्दोलन को दबाया गया और वह कुछ समय के लिए ~~वह~~ पूर्णरूपेण मृतप्राय हो गया ।[१] महाराज हरीसिंह ने आरम्भ में बड़ी सूझबूझ से काम लिया; प्रदेश की स्थिति का स्वयं अध्ययन किया और उन्नति के लिए अनेक योजनाएँ बनाईं परन्तु कुछ ही समय के पश्चात् उनकी लोकप्रियता नष्ट हो गयी ।

महाराजा प्रतापसिंह ने अपने राज्यकाल में जनता को किसी भी प्रकार की सभा, संघ या अंजुमन बनाने की आज्ञा नहीं दी थी । वे कश्मीरवासियों को भारतीय राजनीतिक आन्दोलन से बहुत दूर रखना चाहते थे । उसका एक कारण यह भी था कि कश्मीर में अधिकांश जनता मुसलमान थी और उनका राजा से विरोध केवल राजनीतिक ही नहीं था अपितु धार्मिक भी था । देश-पर्यटन के हेतु आने वाले विदेशियों पर नियंत्रण रखा जाता था । जिन व्यक्तियों पर सन्देह होता था उन्हें देश से निष्कासित किया जाता था ।[२] इतना सावधान रहने पर भी भारतीय आन्दोलन ने यहाँ के युवक-गण को प्रभावित किया था । इस जागृति ने साम्प्रदायिक रूप धारण किया और केवल मुस्लिम जनता तक ही सीमित रही । सन् ~~१९३०~~ १९३१ में यहाँ के शिक्षित मुसलमान नव-युवकों ने फतहकदल के पास एक अध्ययन-केन्द्र की स्थापना की । वे यहाँ प्रायः मिलते थे और प्रदेश की राजनीतिक स्थिति पर विचार-विमर्श करते थे । अध्ययन-केन्द्र के सदस्यों ने धीरे धीरे मुस्लिम जनता को संगठित करने का प्रयत्न किया और अब शासन अधिकारियों का ध्यान भी केन्द्र की ओर जाने लगा । सन् १९३१ में कश्मीर की मुस्लिम जनता ने एक भयानक विद्रोह किया जिसका फल यहाँ की हिन्दू जनता को भुगतना पड़ा । साम्प्रदायिकता की अग्नि भड़क उठी और मुसलमानों ने महाराजा के बदले हिन्दू जनता को लूट लिया, अपमानित किया और अनेक

---

१. 'कश्मीर' (विभिन्न युगों में) - ग्वासिलाल कौल, पृ० १५१ ।

२. 'कश्मीर का इतिहास' - पृथ्वीनाथ वामज़ई, पृ० ६५१-५२ ।

हत्याएँ भी कीं । यह भयानक अग्नि-विस्फोट श्रीनगर के केन्द्रीय कारागृह के निकट जुलाई के मास में हुआ । कारागृह में एक मुसलमान श्री अब्दुल कादिर के विरुद्ध राजविद्रोह का अभियोग चलाया जा रहा था । मुसलमानों की भीड़ कारागृह में प्रविष्ट होने के लिए झटपटाने लगी । पुलिस ने गोली चलाई और कई व्यक्तियों की मृत्यु हुई । क्रोधित मुसलमानों ने हिन्दू महाराजा के विरुद्ध ही जुलकर विद्रोह नहीं किया अपितु अल्प संख्यक हिन्दुओं की हत्या की और उन्हें लूटा । इन्हीं दिनों अलीगढ़ विश्वविद्यालय से एक नवयुवक शेख मुहम्मद अब्दुल्ला उच्च शिक्षा प्राप्त करके लौटा । उसका सम्बन्ध भी अध्ययन केन्द्र से स्थापित हुआ । इधर पंजाब एवं लाहौर की मुस्लिम लीगी पत्र-पत्रिकाओं में कश्मीर के मुसलमानों की स्थिति एवं आन्दोलन से सम्बन्धित अनेक लेख प्रकाशित हुए और महाराजा के विरुद्ध जनता को भड़काने के हेतु प्रचार आरम्भ हुआ।[1]

महाराजा ने जनता को संतुष्ट करने के लिए एवं शासन-व्यवस्था को सुधारने के हेतु श्री बी० जे० ग्लासी की अध्यक्षता में एक आयोग की घोषणा की जिसमें जनता के प्रतिनिधि भी निमंत्रित किए गए ।[2] सन् १९३२ में मुस्लिम-नेताओं ने मुसलमान जनता के सामूहिक उत्थान के हेतु 'आल जम्मू व काश्मीर मुस्लिम कांफ्रेंस' की नींव रखी जिसका पहला अधिवेशन श्रीनगर में अक्तूबर १९३२

---

1. 'An extensive and fierce propaganda compaign against the Maharaja's rule was let loose from Lahore and other cities of Punjab from the Muslim press. "A history of Kashmir" - P.N. Bamzai - Page 655.

2. 'As a result of tnis enquiry religious places that had passed into the hands of Govt. were restored back to the Muslims and other communities'.
'Kashmir' - Gwasha LalKaul - Page 157.

में हुआ । कांफ्रेंस के नेता यह अनुभव कर रहे थे कि इस संस्था को किसी विशेष वर्ग या जाति तक सीमित न रखा जाए। वे इस संस्था को राष्ट्र-संघ या सम्पूर्ण राष्ट्र की संस्था बनाना चाहते थे। इस नए मोड़ की पूर्ति सन् १९३९ में हुई जब कि श्री गुलाम मुहम्मद सादिक की अध्यक्षता में कांफ्रेंस का अधिवेशन १८ जून १९३९ को हुआ और इसके नाम में परिवर्तन सर्व-सम्मति से किया गया । अब इसका नाम 'मुस्लिम कांफ्रेंस' के बदले 'नेशनल कांफ्रेंस' रखा गया और इस प्रकार प्रदेश के प्रत्येक वर्ग एवं जाति के सदस्य इसमें सम्मिलित हुए ।[१] 'ग्लांसी-आयोग' की सिफारिश के अनुसार महाराजा ने ७५ सदस्यों की प्रजा सभा बनाई । इन में ३३ सदस्यों को जनता के विभिन्न वर्गों से चुना गया । 'प्रजा सभा' के सदस्यों को नहीं के बराबर अधिकार प्राप्त थे । जनता ने कुछ ही समय के पश्चात् इसका बहिष्कार कर दिया ।

सन् १९४२ में 'भारत छोड़ दो' का महान आन्दोलन आरम्भ हुआ जिसने यहाँ के राष्ट्रीय संघर्ष को एक नवीन दिशा प्रदान की । 'करो या मरो' की भावना ने जनता को नवीन स्फूर्ति प्रदान की । सन् १९४४ में राष्ट्रीय नेताओं ने 'नया कश्मीर' का सुनहला चित्र जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया ।[२] जिसमें प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार प्राप्त होंगे, देश में राजनीतिक एवं आर्थिक शोषण का अन्त होगा, प्रत्येक नागरिक स्वतंत्र होगा । जनता द्वारा मनोनीत सदस्य ही शासन की बागडोर सम्भाल लेंगे । कश्मीर की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति सुधर जाएगी और साम्राज्यवादियों का अन्त होगा । सन् १९४६ में 'कश्मीर छोड़ दो' का महान आन्दोलन आरम्भ हुआ।

सन् १९३१ से १९४७ तक महजूर का सम्बन्ध राजनीतिक आन्दोलन के साथ स्थायी रूप से रहा । बड़ी योग्यता से उन्होंने अपने उत्तरदायित्व को निभाया और जन-मानस को सचेत किया । श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'महजूर

---

१. 'इनसाइड कश्मीर' - बज़ाज , पृ० ३१३ ।

२. 'कश्मीर' (विभिन्न युगों में) - ग्वाशिलाल कौल, पृ० १६४ ।

का स्वर्ग-तुल्य देश जागीर शाही की विषाक्त वायु से मुर्झा कर नरक का दृश्य प्रस्तुत करने लगा था।[१] राजनीतिक पराभव का मार्मिक चित्रण कवि ने अपनी रचनाओं में किया है। उनके सतत प्रयत्न से राजनीतिक आन्दोलन के साथ साथ साहित्य में भी एक आन्दोलन ने जन्म लिया। भाषा और भाव के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित हुआ। 'महजूर' की रचनाओं का पाठ प्रत्येक जन-सभा में होने लगा। ~~दूसरे वर्ष~~ सन् १९४७ में भारत की स्वतंत्रता की घोषणा की गई। १५ अगस्त को भारत स्वतंत्र हुआ और देश में विजय-पताका तिरंगे-झण्डे के रूप में फहराने लगी। उस समय कश्मीर की स्थिति कुछ विचित्र थी। कश्मीर नरेश की नीति भी अस्पष्ट थी। कश्मीर की नैया बीच मंझधार में भँवर में फंसी हुई थी। भारत के साथ रियासत के विलीनीकरण का निर्णय महाराजा बहुत समय तक न कर सके। पं० नेहरू की ओर से शर्तें लगायी गई थी कि शेख अब्दुल्ला को मुख्य मंत्री बनाया जाय। महाराज हरीसिंह सारी शर्तें मानने को राज़ी थे किन्तु शेख को मुख्य मंत्री रूप में स्वीकार नहीं करते थे। परिस्थितियों से लाभ उठाकर पाकिस्तानी सेना एवं कबाइलियों ने देश पर आक्रमण बोल दिया। महाराजा की सेना अल्प संख्या में थी और शत्रु को रोकने में पूर्ण रूप से असमर्थ। पाकिस्तानी सेना ने लूटमार आरम्भ कर दिया। अनेकों हिन्दू एवं सिक्ख शत्रुओं की दानवलीला में काम आए। बहू-बेटियों को अपमानित किया गया। कश्मीर की हिन्दू एवं सिक्ख जनता को इस भयानक आक्रमण का फल भुगतना पड़ा। उनके घर-द्वार जला दिए गए। नारियों के स्तन काट दिए गए और निर्बोध बालकों के शीष काटकर उनकी मालाएँ बनादी गयीं। महाराजा ने बाध्य होकर भारत से सहायता मांगी और पं० नेहरू की शर्तों पर भारत के साथ विलीनीकरण के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर किए। आक्रमणकारियों को रोकने के लिए भारत से सेना भेजी

---

१. 'महजूर' - कलचरल अकादमी द्वारा प्रकाशित, 'पुष्प', पृ० ११।

भेजी गईं । कई दिनों तक घमासान युद्ध हुआ और अन्त में विजय हमारी हुई । यहाँ की जनता ने शत्रु की पाशविकता पर खून के आँसू बहाये और साम्प्रदायिक एकता को बनाए रखने के लिए भरसक प्रयत्न किए । नेशनल कांफ्रेंस के नेताओं ने उस समय 'हिन्दू मुस्लिम सिक्ख इतिहाद' का नारा जनता को सुनाया । इसके बाद शेख अब्दुल्ला की सरकार बन गयी ।

इधर 'संयुक्त-राष्ट्र-संघ' में कश्मीर समस्या पर विचार-विमर्श होने लगा और उधर श्री अब्दुल्ला की राजनीति में भी धीरे धीरे असाधारण एवं विचित्र परिवर्तन हुआ । ९ अगस्त सन् १९५३ को उन्हें अपने विश्वस्त साथियों के साथ गुलमर्ग में ~~पाकिस्तान जाते हुए~~ कैद कर लिया गया और बख्शी गुलाम मुहम्मद, जो अब तक उपप्रधान मंत्री थे - प्रधान मंत्री के पद पर निर्वाचित हुए।

सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ :

प्रत्येक साहित्यकार समाज में रहता है और समाज की गतिविधि से परिचित होता है । वह स्वयं समाज का एक अभिन्न अंग है, समाज की एक कड़ी है । साहित्य सृजन के लिए वह कभी समाज से प्रेरणा ग्रहण करता है और कभी समाज को अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व से प्रभावित करता है । समाज का प्रतिबिम्ब हमें साहित्य में मिलता है । साहित्यकार कभी समाज का प्रतिनिधित्व ग्रहण करता है और कभी सामाजिक वैषम्य के विरुद्ध अपनी लेखनी उठाता है । कविवर 'महजूर' के युग में हमारा समाज पूर्ण रूप से विशृंखलित था। शताब्दियों की दासता एवं सामंती राज्य ने समाज को भीतर ही भीतर खोखला कर दिया था । सामाजिक व्यवस्था की नींव बालुका निर्मित प्रतीत हो रही थी । 'महजूर' ने उस समाज को छिन्न भिन्न होते देखा । कश्मीर एक कृषि-प्रधान देश है और यहाँ की जनता अधिकांशत: ग्राननिवासी है । नगर और गाँव का जीवन समान रूप में विभाक्त था । ग्रामीण समाज दो वर्गों में

बटा था - उत्पादक एवं भोक्ता । उत्पादक का जीवन जड़ता एवं निरीहता का जीवन था । कृषकों की स्थिति दयनीय थी ।श्रीदेवेन्द्र सत्यार्थी ने लिखा है - 'अन्य कृषि-प्रधान प्रदेशों की भाँति ही कश्मीरी जीवन में किसान का व्यक्तित्व सम्पूर्ण ग्रामीण जीवन का प्रतीक है । किसान ही कश्मीरी आत्मा का सच्चा प्रतिनिधि है । उसके अश्रु सारे कश्मीर के अश्रु हैं, और उसका उल्लास विभोर हास्य सारे कश्मीर की खुशी है । देश के इने गिने शहरों में घूम-फिर कर ही आप कश्मीरी दिल की धड़कन नहीं सुन सकते - कश्मीरी हृदय के परिचय के लिए आपको ग्रामों में जाना पड़ेगा ।'[१] उस समय कश्मीर में ज़मींदारी प्रथा अपने पूरे यौवन पर थी । ज़मींदार के सामने किसान की एक न चलती थी । वह अपमान का मूक रूप से विष के समान पान करता था क्योंकि उसमें संघर्ष करने की शक्ति एवं विरोध करने का साहस न था । श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है - 'गाँव में जागीरदारों का राज्य था, वहाँ उन्हीं की इच्छानुसार सब कुछ होता था । जागीरदार अपने को गाँव का भाग्य-विधाता समझता था ।'[२]
अन्य के बोझ से वे सदा दबे गए थे।

इस युग में अनेक दैवी आपदाओं के कारण समाज की व्यवस्था जर्जरित हो गयी । सन् १८७७ के भयंकर अकाल में सहस्रों देशवासियों की मृत्यु हो गई । सन् १८८५ में विनाशकारी भूकम्प आया जिसके कारण असंख्यों मकान गिर गए। सन् १८९३ एवं सन् १९०३ में भयंकर बाढ़ आई । खड़ी फसलें बह गयीं । श्री ग्वाशिलाल कौल ने लिखा है - 'कालरा की बीमारी सन् १८८८ , १८९२ ,१९००, १९०२, १९०६ एवं १९१० में देश में फैल गई और जनता पर अकथनीय विपत्ति डाल गयी ।'[३] इन समस्त आपदाओं के कारण प्रदेश की आर्थिक स्थिति शोचनीय

---

१. 'बेला फूली आधी रात' - देवेन्द्र सत्यार्थी , पृ० १४१ ।
२. 'इन्साइड काश्मीर'- पी० एन० बज़ाज़ , पृ० २३२ ।
३. 'काश्मीर'- ग्वाशीलाल कौल , पृ० १४६ ।

हो गयी । समाज की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई । श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - 'कश्मीरी जनता अपढ़ - अशिक्षित, सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी और मध्य युगीन नैतिक भावनाओं और अन्ध-विश्वासों में आकण्ठ डूबी है ।'[१]

इन विकट एवं विषम सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के विरुद्ध आधुनिक युग में सर्वप्रथम 'महजूर' ने आवाज़ उठाई । उनके काव्य में सामाजिक कुरीतियों एवं विषमताओं का सजीव चित्रण मिलता है । वे वास्तविक अर्थों में युग-द्रष्टा थे, स्वयं उन्हें इन विषमताओं का कटु अनुभव था । कृषक एवं श्रमिक के असहाय जीवन का चित्रण करते समय उन्होंने दरिद्र एवं धनाढ्य के जीवन-वैषम्य को बड़ी कुशलता से दिखाया है । 'महजूर' इस समाज में समूल परिवर्तन लाना चाहते थे । उनके विचारानुसार इस समाज के लिए सामान्य सुधार काफी नहीं । जराँह के तेज़ नश्तर की आवश्यकता थी । अत: उन्होंने क्रान्ति का स्वागत किया । 'महजूर' एक जन कवि थे, उनके काव्य में जागृति का सन्देश गूँज उठा । नवीन समाज के निर्माण के हेतु जन-समूह उमड़ पड़ा और उनकी भावनाओं को तत्कालीन जन-कवियों ने वाणी प्रदान की ।[२]

मूल्यांकन :

२०वीं शताब्दी में कश्मीरी साहित्य ने एक नवीन करवट ली । इससे पूर्व या तो धार्मिक, आध्यात्मिक तथा दार्शनिक काव्य की प्रधानता रही, या फ़ारसी काव्य के आधार पर शृंगारिक रचनाओं का सृजन हुआ । प्राय: कविगण आकाश के तारे तोड़कर पृथ्वी पर लाने का निष्फल प्रयत्न कर रहे थे परन्तु इस धरती पर रहने वालों की ओर आँख उठा कर भी नहीं देखते थे । निरन्तर वे इन्हीं सुन्दर स्वप्नों के शीशमहलों में विचरण करते थे । आधुनिक युग में उनके

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८३ ।

२. 'स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन कश्मीर' - पी० एन० बज़ाज , पृ० २६२-२६३ ।

ये शीश-महल टूट गए और संसार की वास्तविकता उनके सामने नग्न रूप में आ गयी । संसार में रह कर इसी धरती को स्वर्ग बनाने का महान कर्त्तव्य उनके सम्मुख था । यह महान संकल्प उन्हें प्रेरित कर रहा था । शताब्दियों पुरानी दासता, दरिद्रता एवं जड़ता को देखकर वे क्षुब्ध हो उठे और अपनी रचनाओं द्वारा अपनी मानसिक व्यथा को प्रकट करने लगे ।

२० वीं शताब्दी तक का हमारा अधिकांश साहित्य सुरक्षित न रहने के कारण संदिग्ध अवस्था में पड़ा है । प्रेस की सुविधा न होने के कारण बहुत सी हस्तलिखित रचनाएँ आज अप्राप्य हैं । लिपि की समस्या का कोई सन्तोष-जनक हल आजतक प्रस्तुत नहीं हो सका । सन् १६४६ में कश्मीर सरकार ने लिपि का निर्माण किया परन्तु वह लोकप्रिय न हो सकी और इस प्रकार सरकार भी इस समस्या को सुलझाने में विफल रही ।[१] आज तक शारदा, फारसी, रोमन एवं देवनागरी लिपियों का प्रयोग देश भाषा के लिए किया गया । प्रकाशन की असुविधा के कारण अनेक कवि एवं कलाकार आज भी अज्ञात हैं । कवियों की जीवनियाँ असंदिग्ध हैं और लेखनकाल के विषय में स्थिति भ्रमपूर्ण है । सन् १६४७ तक देश में प्रकाशन की कोई राष्ट्रीय संस्था विद्यमान नहीं थी । श्री चौहान ने लिखा है - ' यद्यपि सचेत राष्ट्रीय आन्दोलन के कारण

---

१. 'Lack of an established and Universally recognised scripts has presented quite a baffling problem. Kashmiri texts have at different times been recorded in Sharda, Persian, Devnagri and Roman scrips. It is only in 1949 that the Kashmir Government evolved an official script; this is not yet very widely known'.
- 'Keys to Kashmir' - Lala Rookh Publications - Page 164.

कश्मीरियों में अपनी कौम का स्वाभिमान जाग्रत हुआ है और वे अब अपनी ही भाषा में काव्य और साहित्य की रचना करना उचित समझते हैं, परन्तु प्रकाशन की सुविधाएँ अभी तक उपलब्ध नहीं हैं।'[१]

युगीन परिस्थितियों से प्रभावित होकर 'महजूर' ने एक नवीन काव्य प्रवृत्ति को जन्म दिया। जो कुछ देश एवं समय की मांग थी, उसे पूरा किया। उन्होंने क्षुधा-पीड़ित श्रमिकों का साथ दिया ; निरीह एवं अकिंचन कृषकों की जीवनगाथा सुनाई ; जागीरदारों, जमींदारों, महाजनों, मुल्लाओं एवं पण्डितों की दानव-लीलाओं का वर्णन किया ; देश में सर्वत्र व्याप्त व्यभिचार के विरुद्ध आवाज़ उठाई और साथ ही साथ यहाँ के अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य के गीत गाए। एक सच्चे देश-सेवक के समान वे देश-कल्याण के हेतु सदा प्रयत्न शील रहे। युग की विषाक्त परिस्थितियों ने उन्हें काव्य-विषय प्रदान किए जिन पर उन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा एवं सूक्ष्म अवलोकिनी शक्ति के द्वारा सुन्दर रचनाएँ लिखीं। निस्सन्देह 'महजूर' उस युग-विशेष की एक महान देन हैं।

युग-चित्रण (समकालीन परिस्थितियाँ) 'नवीन'

साहित्य अपने युग का प्रतिबिम्ब होता है और साहित्यकार युग का समर्थ द्रष्टा। प्रत्येक साहित्यकार पर अपने युग का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अमिट प्रभाव पड़ता है। 'नवीन' जी एक प्रसिद्ध राजनीतिक कार्यकर्ता, सबल समाज सुधारक, समर्थ कवि तथा गद्य लेखक थे। उनके जीवन एवं साहित्य की कहानी उस युग की कहानी है। अतः उसका पूर्ण परिचय प्राप्त करना हमारे लिए नितान्तावश्यक है। युग की पृष्ठभूमि पर ही उनके व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। 'नवीन' जी को यदि कवि रूप में समझना है तो उस समय की विभिन्न

---

१. 'कश्मीर देश व संस्कृति' - चौहान, पृ० १४७।

परिस्थितियों को समझना नितान्त आवश्यक है जिन्होंने उनके काव्य-व्यक्तित्व का निर्माण किया है । आर्थिक विपन्नता के कारण उन्हें स्वयं दारिद्रय के पंक में पलना पड़ा । राजनीतिक परिस्थितियों ने उन्हें वीर राष्ट्र-सेवक बना दिया, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक पराभव ने साहित्य-सेवा की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया और सामाजिक अव्यवस्था ने उन्हें जन-सामान्य का निकट से अध्ययन करने पर बाध्य किया । मृत्यु-पर्यन्त 'नवीन' जी राष्ट्र, समाज एवं साहित्य साधना में रत रहे । अपने जीवन के अमूल्य ४४ वर्ष (सन् १६१६ - १६६०) उन्होंने राष्ट्र-सेवा तथा साहित्य सर्जना में व्यतीत किए । वह युग उथल-पुथल एवं आन्दोलन का युग था । परिस्थितियों से संघर्ष करते करते 'नवीन' बाल्यावस्था से युवावस्था, युवावस्था से वृद्धावस्था को प्राप्त हुए । अन्तिम समय भी मृत्यु से निरन्तर संघर्ष करते-करते ही उन्होंने दम तोड़ा । वह युग ही एक महान साधक की सफल-परीक्षा का युग था । अपने युग को उन्होंने काव्य-वाणी से अमरत्व प्रदान किया । अगले पृष्ठों में उस समय की विभिन्न परिस्थितियों पर विशद् रूप से प्रकाश डाला जाएगा और साथ ही यह भी देखा जाएगा कि उन अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थितियों का 'नवीन' जी की लेखनी पर क्या प्रभाव पड़ा । डा० प्रेम नारायण शुक्ल ने लिखा है - 'युग की चेतना भी साहित्य-सृजन में प्रेरणा का कार्य करती है । इस दृष्टि से साहित्य में राजनीतिक विचारों का विशिष्ट स्थान है । आधुनिक साहित्य का एक बहुत बड़ा अंश राजनैतिक क्षेत्र से सम्बन्धित है ।'[१] अत: सर्वप्रथम राजनीतिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला जाएगा ।

राजनीतिक परिस्थितियाँ :

ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के पश्चात् भारत में कम्पनी राज्य

---

१. 'हिन्दी साहित्य में विविध वाद' - प्रेमनारायण शुक्ल - गांधीवाद, पृ० २३५ ।

उत्तरोत्तर बढ़ता गया । सन् १७५७ में पलासी के युद्ध में अंग्रेज़ों ने बंगाल को जीत लिया और सन् १७६४ में बक्सर में प्राप्त विजय के फलस्वरूप उत्तर भारत में उनके प्रभुत्व का विस्तार होने लगा । सन् १८३३ में नवीन आज्ञा-पत्र(चार्टर) के अनुसार कम्पनी का व्यापार बन्द कर दिया गया और अब शासन चलाना ही उसका एकमात्र काम रह गया । सन् १८५७ का प्रथम स्वातंत्र्य-युद्ध भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है । उस समय तक देश में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत हो गई थी । विदेशियों ने भारतवर्ष का सभी प्रकार से पराभव चाहा। सतत शोषण एवं अत्याचारों की वृद्धि ने भारतीय आत्मा में वह भीषण दावाग्नि प्रज्वलित की जिसके भड़कते ही सर्वत्र क्रान्ति के शोले फैल गए । श्री राजकुमार ने लिखा है - 'सन् १८५७ का सैनिक विद्रोह अंग्रेजी शासन के विरुद्ध प्रथम संघटित बगावत थी । - - - इसमें दिल्ली से बनारस तक की जनता ने अच्छा खासा हिस्सा लिया । - - - इस बगावत में धार्मिक भेदभाव का कहीं पता तक न था । - - - बीस-बाइस वर्षीय झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के युद्ध-कौशल, उसकी निर्भीकता और वीरता की प्रशंसा युद्ध में भाग लेने वाले अंग्रेज़ सेनाधिकारियों ने भी की । - - - दिल्ली के अन्तिम सम्राट बहादुरशाह और बेगम ज़ीनत महल का इसमें खासा हाथ था और भारत की सभी रियासतों को अंग्रेज़ों के विरुद्ध युद्ध-रत करने की उन्होंने पर्याप्त कोशिश की थी ।'[१] सैनिक शक्ति के अतिरिक्त छल-कपट एवं अनीतियों से विद्रोह को कुचल दिया गया परन्तु साथ ही देश में कम्पनी राज्य का अन्त हुआ और रानी विक्टोरिया ने भारत की शासन डोर स्वयं सम्भाल ली । देशवासी शासनाधिकारियों के प्रति सशंकित हो उठे अत: रानी के प्रति उनके हृदय में श्रद्धा कम, और आतंक और भय अधिक था , सन् १८८५ में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई जिसका आरम्भिक

---

१. 'भारत का राजनीतिक इतिहास' - राजकुमार (हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय) वाराणसी-१. , पृ० १४८ ।

उद्देश्य भारतीय प्रशासकीय कार्यों में सहयोग देना था परन्तु बाल गंगाधर तिलक के प्रवेश के साथ ही यह स्वाधीनता संस्था के रूप में बदल गई।[१] सन् १८५७ के विद्रोह के पश्चात् अंग्रेज़ों ने 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति को अपनाया। लार्ड कर्ज़न ने सन् १६०४ में बंगाल को दो भागों में बांटने की घोषणा की। सारे देश में इसका विरोध हुआ। इस घृणित दुष्कृत्य के भयानक परिणामों से जनता थर्रा उठी। डा० शम्भूनाथसिंह ने लिखा है - 'भारतियों की बढ़ती हुई राष्ट्रीय चेतना को देखकर अंग्रेज़ों ने यह नयी चाल सोची। उन्होंने हिन्दू मुसलमान के बीच फूट डालने और बंगाली संस्कृति और बंगाली राष्ट्रीय एकता को छिन्न-भिन्न करने के लिए पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल को अलग करने का निश्चय किया। पूर्वी बंगाल में मुसलमानों की संख्या अधिक थी। अत: उन्हें खुश करके हिन्दू विरोधी बनाने के लिए यह चाल चली गयी।'[२] सन् १६०५ में बंगाल दो भागों में विभक्त हुआ। सारे देश में भयंकर आन्दोलन हुआ। इसी वर्ष गोपालकृष्ण गोखले के सभापतित्व में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ उसमें गोखले जी ने इस अनीति का खुल कर विरोध किया। इन्हीं दिनों कांग्रेस के प्रधान सदस्यों में मतभेद हो जाने के कारण गरम और नरम दलीय अर्थात् उदार और उग्र पंथियों के बीच रेखा खिंच गयी। उदार और सौम्यपंथ का नेतृत्व गोखले तथा उग्र दल का तिलक महोदय कर रहे थे। बंगाल के उग्र नेताओं ने तिलक का साथ दिया, इनमें विपिन्नचन्द्र पाल तथा अरविन्द घोष प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय ने क्रान्ति की चिनगारी को उत्तर भारत में सुलगा दिया। डा० सुधीन्द्र ने लिखा है - 'बंग-भंग के अन्यायपूर्ण आघात को उद्बुद्ध बंग-प्रदेश न सह सका। वह उसके जीवन-मरण का प्रश्न था।

---

१. 'हिन्दी साहित्य: युग और परिस्तियाँ' - प्रो० शिवकुमार शर्मा, पृष्ठ ३८७।

२. 'छायावाद-युग' - डा० शम्भूनाथसिंह, पृ० ४-५।

अत: बंग-माता की रक्षा के लिए बंग-प्रजा उठ खड़ी हुई ।'[१] देश में स्वदेशी आन्दोलन आरम्भ हुआ । कांग्रेस पर सौम्य-दल का प्रभाव अधिक रहा । सन् १६०६ में दादाभाई नौरोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें 'कांग्रेस का लक्ष्य स्वराज्य है, शासन सुधार नहीं' का प्रस्ताव पास हुआ[२] परन्तु उदार एवं उग्र दल के नेताओं के मध्य कई अन्य विषयों पर परस्पर मतभेद बढ़ता ही गया । कांग्रेस की इस फूट से अंग्रेज़ों ने लाभ उठाया । परन्तु राज्य के विरुद्ध असंतोष की भावना उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और राष्ट्रीय - आन्दोलन को इसके कारण सब से अधिक शक्ति प्रदान हुई । सन् १६०६ को ढाका में मुस्लिम नेताओं की सभा हुई जिसमें मुस्लिम-लीग की स्थापना का प्रस्ताव पास हुआ । जुलाई सन् १६१४ में प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ हुआ । इस युद्ध में भारतियों से सक्रिय सहयोग प्राप्त करने के लिए अंग्रेज़ों ने राष्ट्रीय नेताओं को अनेक आश्वासन दिए । फरवरी सन् १६१५ में गोखले स्वर्गवास हुए और कांग्रेस में उग्र-पंथियों का प्रभाव बढ़ने लगा । सन् १६१६ में लखनऊ में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें उदार एवं उग्र दोनों दल आपस में एक हो गए । इन्हीं दिनों खिलाफत-आन्दोलन[३] के कारण कांग्रेस और लीग परस्पर एक दूसरे के

---

१. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र , पृ० १३ ।

२. 'सन् १६०६ में दादाभाई नौरोजी ने कांग्रेस का उद्देश्य एक शब्द में रख दिया - 'हमारा सारा आशय केवल एकशब्द स्व-शासन या स्वराज्य में आजाता है ।'
- 'कांग्रेस का संक्षिप्त इतिहास' - पट्टाभिसीतारामय्या, पृ० ५७.

३. 'वस्तुत: मुसलमानों में भी उस समय एक धार्मिक प्रश्न को लेकर असन्तोष और क्षोभ था । तुर्की का सुलतान उनका 'खलीफा' था और इस युद्ध में वह इंग्लैण्ड के विरुद्ध-पक्ष में था । फलत: मुसलमान अंग्रेज़ सरकार के विरोध में जाने लगे । इन्हीं कारणों से सन् १६१६ की कांग्रेस ने लखनऊ में हिन्दु-मुसलमानों में एकता का दृश्य देखा ।'
- 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र , पृ० १८ ।

निकट आने लगे । सन् १६१३ में लीग ने भी अपना लक्ष्य 'स्वराज्य' घोषित किया था । सन् १६१७ में रौलट कमीशन नियुक्त किया गया जिसने अपनी रिपोर्ट युद्ध की समाप्ति पर दे दी । सन् १६१६ में रौलट एक्ट पास हुआ । भारतियों को युद्ध में शौर्य-प्रदर्शन का विचित्र उपहार मिला । श्री राजकुमार ने लिखा है - 'सारे देश में आवाज़ उठी कि हिन्दुस्तान ने लड़ाई जीतने में सरकार की कितनी मदद की और उसका फल काले कानूनों के रूप में सरकार दे रही है । बिल स्वीकार होने से पूर्व ही गान्धी जी ने घोषित कर दिया था कि रौलट कमीशन की सिफारिशों को अमली रूप दिया गया तो मैं सत्याग्रह छेड़ दूँगा । इस की उपेक्षा हुई । सरकार ने बिल स्वीकार कर लिया । गांधीजी मैदान में आगए । गांधी-युग शुरू हो गया ।'[१] इस काले कानून का विरोध देश के कोने-कोने में हुआ । पंजाब में जलियाँ बाला बाग का निर्मम हत्याकाण्ड अंग्रेज़ी राज्य के घृणित कुकर्मों की मुँह बोलती कहानी है । जनरल डायर ने अनेकों बहनों का सिन्दूर मिटा दिया, असंख्य माताओं के लाल सदा के लिए उनसे छीन लिए और अनेकों निर्बोध बालकों के वक्ष छलनी कर दिए । १० अप्रैल सन् १६१६ में अमृतसर के ज़िला मजिस्ट्रेट ने डा० किचलू और डा० सत्यपाल को घर पर बुलाकर गिरफ्तार किया, सारे प्रदेश में यह समाचार अग्नि के समान फैल गया । 'रौलट एक्ट' एवं इस अनीति के विरुद्ध १३ अप्रैल को सार्वजनिक सभा अमृतसर के जलियाँ वाला बाग में हुई । इस सभा में लगभग २० हज़ार स्त्री-पुरुष एवं बच्चे एकत्र हुए थे । डा० पट्टाभि सीतारामय्या ने लिखा है - 'बाग में जब बीस हज़ार आदमी इकट्ठे हो गए, जिनमें पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे भी थे, जनरल डायर ने उसमें प्रवेश किया । - - - जनरल डायर ने घुसते ही गोली चलाने का हुक्म दे दिया । गोली तब तक चलती रही जब तक कि सारे कारतूस खतम नहीं हो गये । कुल सोलह सौ फायर किये गये थे । - - - सब से बड़ी

---

१. 'भारत का राजनीतिक इतिहास' - राजकुमार, पृ० २२६ ।

दुखद बात यह थी कि गोली चलाने के बाद मृतकों और उन लोगों को जो सख्त घायल हो गये थे, सारी रात वहीं पड़ा रहने दिया गया। वहाँ उन्हें रात भर न तो पानी ही पीने को मिला और न डाक्टरी या कोई अन्य सहायता ही मिली।'[१] इस दानव लीला से समस्त मानवता कराह उठी। धरती माँ का यह सबसे बड़ा अपमान था और अंग्रेज़ जाति पर सबसे बड़ा कलंक। अंग्रेज़ी राज्य पर देशवासियों में जो रहा सहा विश्वास था, वह भी उठ गया।

सन् १६२० में गांधी जी ने पूर्ण रूपेण कांग्रेस की बागडोर संभाली। इसी वर्ष १ अगस्त को तिलक का स्वर्गवास हुआ। गान्धी अहिंसा एवं सत्याग्रह के महामंत्र को लेकर संघर्ष-क्षेत्र में कूद पड़े। कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ जिसमें सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ करने का निश्चय किया गया। निस्सन्देह गांधी ने राष्ट्रीयता को नई दिशा प्रदान की।[२] इनके असहयोग आन्दोलन का देश के प्रत्येक वर्ग पर प्रभाव पड़ा,, विशेष कर निम्न वर्ग पर जिनको संगठित करने के लिए गांधीजी भरसक प्रयत्नशील रहे। उन्होंने इस आन्दोलन में मुसलमानों एवं हिन्दुओं को समान रूप से सम्मिलित किया। इधर ब्रिटिश सरकार ने अपना दानव-चक्र तीव्र कर दिया, फलस्वरूप नेताओं को काल कोठरियों में बन्द कर दिया गया। सामान्य जनता अंग्रेज़ों की पैशाचिक लीलाओं

---

१. 'कांग्रेस का संक्षिप्त इतिहास'- पट्टाभि सीतारामय्या, पृ० ६४।

२. 'उन्होंने राष्ट्रीयता को नयी दिशा दी और गोखले की समझौतावादी नीति तथा तिलक की उग्रवादी नीति दोनों का समय समय पर अवलम्बन लिया। यद्यपि ब्रिटिश साम्राज्यवाद की महान शक्ति के सामने ये राष्ट्रीय शक्तियाँ अधिक शक्तिशाली नहीं थीं, फिर भी जब देश के कोने कोने में राष्ट्रीयता की भावना जाग्रत हो गई तो उसे बहुत दिनों तक दबाकर नहीं रखा जा सकता था।'

- 'छायावाद युग' - डा० शम्भूनाथसिंह, पृ० ४८.

से संतप्त हो उठी । सन् १६२१ में गान्धी जी ने बारडोली में सत्याग्रह का नेतृत्व करने का निश्चय किया परन्तु अनेकों उपद्रवों के कारण सत्याग्रह स्थगित करने का निर्णय किया गया । पुन: १६२२ में जब सत्याग्रह होने ही वाला था तो चौरी चौरा के हत्याकाण्ड के कारण गान्धी जी ने सत्याग्रह पुन: स्थगित करने का निश्चय किया । अनेकों नेताओं ने इस पर असहमति प्रकट की और गान्धी जी का तीव्र विरोध भी किया ।[१] आन्दोलन मन्द पड़ गया और सन् १६२४ में देश में 'स्वराज्य पार्टी' की स्थापना श्री मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुई । इससे पहले १३ मार्च १६२२ को गान्धी जी गिरफ्तार कर लिए गए और राजद्रोह का अपराध लगाकर उन्हें ६: वर्ष का कारावास दण्ड दिया गया । भयंकर रोग के कारण काफी अस्वस्थ रहने के कारण ५ फरवरी सन् १६२४ को उन्हें छोड़ दिया गया । इसी वर्ष साम्प्रदायिक दंगों से ममाहत होकर उन्होंने २१ दिन का उपवास रखा । सन् १६२८ में बारदोली में किसानों ने सत्याग्रह किया । सरदार पटेल के नेतृत्व में इस सत्याग्रह का संचालन हुआ जिससे विदेशी सत्ताधारी धर्रा उठे और उन्हें अन्त में कृषकों की न्यायसंगत माँग पूरी करनी पड़ी । डा० सावित्री सिन्हा ने लिखा है - 'गुजरात में 'बारदोली' के सत्याग्रह ने सम्पूर्ण देश के कृषकों में चेतना की लहर उत्पन्न कर दी । बारदोली के किसानों ने सरदार वल्लभभाई पटेल के लौह नेतृत्व में,

---

१. 'सन् १६२२ में महात्मा जी ने बारदोली में सत्याग्रह प्रारम्भ करने का निश्चय किया , परन्तु, चौरा चौरी (गोरखपुर जिले के अंतर्गत) में पुलिस थाने को जला दिया जिसमें कई पुलिस वाले जल मरे । गान्धी जी ने इस घटना को लेकर असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया और रचनात्मक कार्यों में संलग्न हो गए । असहयोग आन्दोलन की असफलता से देश में बड़ी निराशा फैली ।'

-'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' - श्री रामाधार शर्मा, पृ० २०.

भूमि-कर से छूट प्राप्त करने के लिए सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह किया ।[१] सन् १९२१ में ही कांग्रेस के उग्र-दलीय नवयुवक नेताओं ने 'युथ-लीग' की स्थापना की और सन् १९२९ में लाहौर में श्री जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें 'युथ लीग' के प्रमुख उद्देश्य - पूर्ण स्वतंत्रता - के प्रस्ताव को पारित किया गया । इन्हीं दिनों क्रान्तिकारियों ने अपने कार्यक्रम को तीव्र कर दिया । आतंकवादियों के विप्लव एवं विद्रोह के कारण पुन: वातावरण में अस्थिरता एवं अनिश्चितता का समावेश हुआ । नवयुवकों ने सशस्त्र क्रान्ति का बीड़ा उठाया । श्री राजकुमार ने लिखा है - 'देश की आज़ादी पर हंसते हंसते मर मिटने वाले नवजवानों की रोमांचकारी कहानियों को सुन सुनकर यह तूफान बढ़ने लगा । बागियों के सरकलम हुए । धरती खून से लाल हुई और कुछ अर्से के लिए क्रान्तिकारियों की हैरत अंगेज़ कुर्बानियों की जोश भरी कहानियों से भारत की दरोदीवार गूँज उठी । छोटी सी उमर में जेल के अन्दर बेंत की मार का जुल्म सह कर बाहर आने वाले अद्भुत वीर चन्द्रशेखर 'आज़ाद' पराधीनता की बेड़ियाँ काटने की सौगन्ध खा चुका था । उसने बचे हुए क्रान्तिकारियों के साथ मिलकर 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' की स्थापना के कार्य को आगे बढ़ाया ।'[२] सरदार भगतसिंह , सुखदेव, राजगुरु एवं बटुकेश्वर दत्त ने गुप्त रूप से अन्य साथियों के साथ मिल कर विदेशी शासकों से प्रतिशोध लेने लगे। इधर श्रमिकों का आन्दोलन चल रहा था और उधर भगतसिंह तथा बटुकेश्वरदत्त ने दिल्ली में 'असेम्बली हाल' में बम फेंक दिए और साथही 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' के लाल पर्चे । भगतसिंह , राजगुरु एवं सुखदेव को २३ मार्च सन् १९३१ में लाहौर में फांसी पर लटका दिया गया । सम्पूर्ण देश में हड़ताल हुई । इन नवयुवकों के आत्मबलिदान ने देशवासियों को सचेत किया । सोई हुई

---

१. 'युग चरण दिनकर' - डा० सावित्री सिन्हा, पृ० ३५ ।

२. 'भारत का राजनीतिक इतिहास' - राजकुमार, पृ० २४५ ।

जाति में जागरण की स्फूर्ति और स्वत्वपूर्ति की लालसा उत्पन्न हुई । परन्तु साम्प्रदायिकता के भयानक विस्फोट ने पुन: उन्हें पथ-भ्रष्ट किया । २६ मार्च सन् १६३१ को कानपुर में गणेशशंकर विद्यार्थी जैसे महान देशभक्त एवं वीर-सपूत ने साम्प्रदायिकता की अग्नि को शान्त करने के लिए अपने प्राणों की आहुति चढ़ा दी । इधर सन् १६२६ में इंग्लैंड में मज़दूर दल विजयी रहा , भारतीय नेता उनके प्रति बहुत आशावादी थे परन्तु विपरीत परिणाम के फलस्वरूप गान्धी जी ने पुन: अपना सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ किया । देश में विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार होने लगा ।[१] इस अविज्ञा-आन्दोलन में शिक्षित एवं अशिक्षित, ग्रामीण तथा नागरिक, उच्च एवं निम्न वर्ग के लोगों ने समान रूप से भाग लिया । परन्तु सरकार की दमन नीति के कारण आन्दोलन मन्द पड़ गया । निहत्थों पर गोलियाँ चलाई गयीं, लाठी चार्ज हुए, असंख्य सत्याग्रहियों को जेल में ठूंस दिया गया, अनेकों काले कानूनों द्वारा समाचार पत्रों पर रोक लगा दी गयी ।[२] इसी वर्ष गान्धी-इरविन समझौता हुआ , वे भारत के जन-प्रतिनिधि बनकर लन्दन चले गए परन्तु अपने उद्देश्य में असफल होकर पुन: लौट आए । सन् १६३७ के आमचुनाव में कांग्रेस को कई प्रान्तों में बहुमत प्राप्त हुआ और कई प्रान्तों में कांग्रेसी मन्त्रीमण्डलों का निर्माण हुआ परन्तु सन् १६३६ में उन्होंने त्याग-पत्र दे दिए । सन् १६३८ में श्री सुभाषचन्द्र बोस कांग्रेस के प्रधान चुने गये । हरिपुरा अधिवेशन में उन्होंने द्वितीय महायुद्ध द्वारा मिले हुए अवसर का सदुपयोग करके हिंसात्मक क्रान्ति द्वारा अंग्रेज़ों के हाथ से शक्ति छीन लेने का सुझाव दिया ।[३]

---

१. `विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के लिए सत्याग्रह किया गया । - - - बम्बई नगर में गधों को विदेशी वस्त्रों से सजाकर सड़कों पर घुमाया गया ।`
- `युगचरण दिनकर` - सावित्री सिन्हा , पृ० ३६.

२. `माखनलाल चतुर्वेदी` - श्री रामाधार शर्मा, पृ० २१ ।

३. `युगचरण दिनकर` - सावित्री सिन्हा, पृ० ५५ ।

सुधारवादी नेताओं ने इसका विरोध किया, फलत: कांग्रेस में पुन: दो विरोधी विचारधाराएँ उपस्थित हुईं। सन् १९४० में श्री मुहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में लीग ने पाकिस्तान की माँग की। जनवरी सन् १९४१ में श्री सुभाषचन्द्र बोस अंग्रेज़ों की नज़रबन्दी से निकल भागे और रहस्यमय ढंग से अफगानिस्तान से होते हुए एक जर्मन जहाज़ पर बर्लिन पहुँचे। वहाँ से एक पनडुब्बी द्वारा तोकियो पहुँचे और अंत में सिंगापुर। सन् १९४३ में उन्होंने 'आज़ाद हिन्द फौज' एवं आज़ाद हिन्द सरकार' की स्थापना की घोषणा रेडियो पर की। उन्होंने सेना को 'दिल्ली चलो' का नारा दिया।[१]

सन् १९४२ में 'भारत छोड़ो' का महान आन्दोलन आरम्भ हुआ। कांग्रेस के सभी नेताओं को जेल में बन्द कर दिया गया। देश में विद्रोह की भीषण आग फैल गयी। राष्ट्रीय नेताओं ने खुल कर विदेशी शासकों का विरोध किया और उन्हें भारत छोड़ देने के लिए ललकारा। गान्धी जी ने देशवासियों को 'करो या मरो' का सन्देश सुनाया।[२] सरकार ने सभी प्रकार

---

१. 'पहली नवम्बर (१९४३) को सुभाष बाबू तोकियो पहुँचे जहाँ जापान सरकार ने आज़ाद हिन्द सरकार के अध्यक्ष के रूप में उनका स्वागत सत्कार किया। ७ जनवरी, १९४४ को सुभाष बाबू बरमा पहुँचे। तब आज़ाद हिन्द सरकार और आज़ाद हिन्द फौज का सदर कार्यालय भी यहाँ कायम कर दिया गया।'

-'भारत का राजनीतिक इतिहास' - राजकुमार, पृ० ३२२।

२. 'भारत के लिए चाहे इसका कैसा भी परिणाम क्यों न हो, उसकी और ब्रिटेन की भी वास्तविक सुरक्षा इसी में है कि अंग्रेज़ व्यवस्था पूर्वक और समय रहते भारत से चले जाएँ।'

-'कांग्रेस का संक्षिप्त इतिहास' - पट्टाभि सीतारामय्या, पृ० ४२६.

की सभाएँ निषिद्ध घोषित कर दीं । सारा देश ही उस समय मानो एक विशाल कारागार था । उन दिनों की भारतीय जनता की यह कहानी कारा की कहानी है । वह मुँह बन्दी कानून की कहानी है ।[१] इस आन्दोलन में छात्रों, श्रमिकों, कृषकों, व्यापारियों एवं राज्य कर्मचारियों ने भी भाग लिया । फरवरी सन् १९४३ में गान्धी जी ने २१ दिनों का अनशन आरम्भ किया । सन् १९४५ में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हुआ और इन्हीं दिनों हवाई-दुर्घटना में सुभाष बाबू की मृत्यु हुई । श्रीमती सावित्री सिन्हा ने लिखा है - `भारत के परमवीर सपूत सुभाष की मृत्यु के समाचार से सम्पूर्ण भारत पर अवसाद के बादल छा गए । उनके कठिन प्रवास की दुखद कहानियों को सुनकर यह अवसाद क्रोध में बदल गया । - - - इस प्रकार युद्ध समाप्त होते होते , भारत में फिर क्रोध की उत्तेजना चारों ओर व्याप्त हो गई ।`[२] सन् १९४५ में ब्रिटेन में उदार-दल की सरकार बनी । उन्हें भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन से काफी सहानुभूति थी फलत: सन् १९४६ में अंतरिम सरकार की स्थापना हुई । १६ अगस्त को लीग ने `प्रत्यक्ष कारवाई` का दिवस घोषित किया और शस्त्र प्रयोग द्वारा पाकिस्तान बनाने का प्रस्ताव पास किया । साम्प्रदायिक अग्नि पुन: भभक उठी । बिहार, पंजाब, बंगाल और कलकत्ता में भयंकर साम्प्रदायिक दंगे हुए ।

---

१. `सरकारी गुर्गों` , पुलिस और फौज द्वारा जिस प्रकार निर्दयतापूर्वक दमन किया गया, उसकी अपनी कहानी है । बड़े बड़े नगरों से लेकर छोटे-छोटे गाँव की जनता को आतंकित करने के लिए उन्होंने व्यापक स्तर पर लूट मार की, लोगों के घरों को आग लगा दी, फसलें उजाड़ दीं,गोलियाँ चलायीं - - - जुल्म की यह कहानी लम्बी है - बहुत लम्बी ।`

-`भारत का राजनीतिक इतिहास`- राजकुमार , पृ० ३००.

२. `युगचरण दिनकर` - सावित्री सिन्हा, पृ० ५८ ।

अंग्रेज अपने उद्देश्य में सफल हुए । 'पहले बांटो फिर छोड़ो' इस षड़यंत्र में अंग्रेज़ पूर्णरूपेण सफल हुए । पंजाब और बंगाल के विभाजन की योजनाएँ बनायी गयीं। ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा अधिकार हस्तांतरित करने की घोषणा की गई । ३ जून सन् १९४७ को माउंटबेटन-योजना घोषित हुई । १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ और साथ ही पाकिस्तान (इस्लामी प्रदेश) का जन्म हुआ। यह वह समय था जब कि सीमा-प्रान्तों में हिन्दुओं एवं सिक्खों को अनेकों संकटों का सामना करना पड़ा । पंजाब में यह अग्नि पहले से ही सुलग रही थी । सीमा-कमीशन के निर्णय की घोषणा से यह प्रचण्ड रूप में भड़क उठी । बर्बरता खुल कर नाचने लगी । असंख्य शरणार्थी पाकिस्तान से भारत भाग आए उन्हें पुन: बसाने के लिए देश में अनेक योजनाएँ बनायी गईं । इधर भारत में भी साम्प्रदायिक दंगे हुए , इस भेदभाव को मिटाने के लिए और हिन्दू मुस्लिम एकता तथा भाई चारे के लिए स्वतंत्रता के पश्चात् गान्धी जी भरसक प्रयत्नशील रहे । संकीर्ण - हृदयी देशवासी इसे सहन न कर सके और २९ जनवरी सन् १९४८ को नथूराम ने उनका हृदय पिस्तौल की गोलियों से छलनी कर दिया जब कि वे सायंकाल को प्रार्थना-सभा में जा रहे थे । गान्धी युग समाप्त हुआ । इसके पश्चात् अगले १२ वर्षों में राष्ट्र-नव-निर्माण का कार्य सुचारू रूप से होने लगा । पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा भारत की सामूहिक उन्नति का कार्य-क्रम आरम्भ हुआ । पण्डित नेहरू ने नेतृत्व में देश अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भाग लेने लगा । देश में औद्योगिक उन्नति के हेतु विदेशी सहायता धन एवं विशेषज्ञों के रूप में लाभ-दायक सिद्ध हुई । देश में आम चुनावों के द्वारा राज्यसभा, लोकसभा तथा प्रादेशिक विधान सभाओं के लिए सदस्य निर्वाचित होने लगे और इस प्रकार स्वतंत्र भारत में जनता को अपना मत प्रकट करने का अधिकार प्राप्त हुआ । कुछ अवसरवादी तथाकथित नेताओं ने भी उच्च पद प्राप्ति के हेतु राजनीति में प्रवेश किया । संयुक्त-राष्ट्र-संघ में कश्मीर की समस्या पर काफी वाद-विवाद हुआ । देश

में भाषा (राष्ट्रभाषा) के विषय में भी काफी विवाद उपस्थित हुआ । इस प्रकार स्वतत्र भारत को सन् १९६० तक अनेकों संकटों का सामना करना पड़ा। निस्सन्देह यह देश के पुनर्निर्माण का युग था । शताब्दियों से दासता की शृंखलाओं में जकड़ी हुई भारतमाता के नव-जीवन का यह आरम्भिक-युग था । यह नवीन प्रयोगों का युग था जिसमें सफलता और विफलता , आशा और निराशा, दुख और सुख एवं दारिद्रय तथा अज्ञान का समान रूप से अनुभव हुआ ।

'नवीन' जी स्वतंत्रता आन्दोलन के एक वीर एवं अनुशासित सैनिक थे । उन्होंने गांधी जी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर पढ़ाई छोड़ दी और देश-सेवा का महान् कार्य आरम्भ किया । सन् १९२० से सन् १९६० तक - जीवन के अमूल्य ४० वर्ष उन्होंने राजनीति में सक्रिय भाग लेकर व्यतीत किए । राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लेने के फलस्वरूप उन्हें अनेक यातनाएँ सहन करनी पड़ी, जीवन का गहन अनुभव उन्हें प्राप्त हुआ और हलाहल पान के कारण वे नीलकण्ठ कहलाए । डा० नगेन्द्र ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया - 'नवीन जी देश के सेनानियों में से थे । उनमें नेतृत्व की शक्ति थी । स्वयं उनका व्यक्तित्व भी ऊर्जा और साहस का था । वे राजनीतिक आन्दोलन के समर्थ सैनिक थे ।'[१] सन् १९२० से सन् १९४५ तक उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा । अपने जीवन के लगभग ९ वर्ष उन्होंने कारागृह की काल कोठरी में व्यतीत किए हैं ।[२] अपने राजनीतिक-गुरु से उन्होंने राष्ट्रसेवा एवं परोपकार की गुरु-शिक्षा ग्रहण की तथा गांधीजी से अहिंसा का शस्त्र एवं सत्याग्रह का कवच धारण करके राष्ट्र समर में कूद पड़े । स्वयं उन्होंने लिखा है - 'मुझे पन्द्रह वर्षों तक श्रद्धेय गणेश शंकर जी विद्यार्थी के चरणों में बैठने का , उनके नेतृत्व में काम करने का, उनकी प्रेरणा में कारागार

---

१. डा० नगेन्द्र से प्रत्यक्ष भेंट ३-६-१९६६ द्वारा ज्ञात ।

२. 'जन्मभूमि' ('नवीन'-विशेषांक) - २९ अप्रैल १९६६ , पृ० ५ ।

की ओर अग्रसर होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मुझे उनके सदृश दूसरा आदमी आज तक देखने को नहीं मिला ।'[१] गान्धी जी के पथ-प्रदर्शन में स्वराज्य आन्दोलन जिस ऊँचे आध्यात्मिक स्तर पर आरम्भ हुआ था उस का पूर्ण प्रभाव 'नवीन' जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर पड़ा । डा० शिव-मंगल सिंह 'सुमन' ने लिखा है - 'पद-दलित राष्ट्र के उस दुर्दमनीय संघर्ष में गान्धी के यह जांबाज़ सिपाही दरो दीवार पर हसरतें ही लुटाते रहे । एक पैर 'प्रताप-प्रेस' की टूटी-फूटी कोठरी में और दूसरा जेल के सीकचों में ।'[२] तत्कालीन राजनीतिक-व्यवस्था के प्रति असंतोष उनकी कविताओं में यत्र-तत्र व्यक्त हुआ है । दयनीय परिस्थितियों के फलस्वरूप उनका घायल-हृदय तड़प उठा है । ४० वर्ष की राजनीतिक परिस्थितियों का सम्यक् चित्रण उनकी कविताओं में हुआ है । उनका जीवन स्वयं एक प्रयोगशाला थी । जो कुछ वे कहते थे, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण स्वयं उनका जीवन था । परिस्थितियों ने उन्हें स्वयं जूझने के लिए विवश किया था । श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है - 'वे झुके नहीं। उन्होंने सिर दिया परन्तु सार नहीं दिया । - - - वे राष्ट्र संग्राम के घनीरूप प्रतिरूप थे और थे कविता की साकार प्रतिमा । इस गरल-संगीत के प्रणेता, हलाहल धर्म के प्रवर्तक और हिन्दी के नीलकंठ ने युग के हलाहल का पान करके, उसे प्राकृत बनाकर, काव्य-कुंज में उंड़ेल दिया ।'[३] विषमय राजनीतिक परि-स्थितियों ने इस पावन भूमि को कलंकित कर दिया था । वर्ग-विभाजित समाज

---

१. 'मैं इनसे मिला' - पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' , पृ० ४७ ।

२. 'साप्ताहिक-हिन्दुस्तान' - २० मई १९६२ - पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', डा० शिवमंगलसिंह 'सुमन' , पृ० ६ ।

३. 'सैनिक' - १५ फरवरी १९६५ - (साप्ताहिक-परिशिष्टांक) ,आलोचक : बनारसीदास चतुर्वेदी, मुख्य-पृष्ठ ।

में शोषक का दानव-साम्राज्य सर्वत्र व्याप्त था । इस शोषक की शोषण नीति के विरुद्ध 'नवीन' जी ने अपनी लेखनी चलाई, और निरन्तर चलाते ही रहे ।

'नवीन' जी का कर्म-क्षेत्र विशेषकर कानपुर रहा है । यही कवि की कर्मभूमि थी जहां से जूझने, जलने एवं खिलने का जीवन उन्होंने आरम्भ किया था ।[१] सन् १९३६-३७ में 'नवीन' जी कानपुर शहर कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे । उन्हीं के नेतृत्व में कानपुर में मज़दूरों की ५२ दिन की देश-प्रसिद्ध ऐतिहासिक हड़ताल हुई थी । इसके साथ साथ वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य भी निर्वाचित होते रहे । सन् १९३८ में 'नवीन' जी उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के प्रधान मन्त्री निर्वाचित हुए थे । सन् १९४१ से लेकर सन् १९४५ तक 'नवीन' जी ने अधिकांश समय कारागार में व्यतीत किया । पण्डित श्री कृष्णदत्त पालीवाल ने लिखा है- "स्वाधीनता संग्रामों के सेनानी की हैसियत से तो बालकृष्ण का और मेरा सदैव साथ रहा । यहाँ तक कि १९४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में हम दोनों बरेली के केन्द्रीय कारावास में लगभग दो साल एक ही बैठक में साथ-साथ रहे ।"[२] अपनी ओजस्विता के कारण 'नवीन' जी कानपुर के शेर कहलाते थे । अपने गद्य लेखों एवं सम्पादकीय टिप्पणियों के द्वारा भी उन्होंने तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों का साकार एवं यथार्थ चित्र प्रस्तुत किए हैं ।

सन् १९४८ से सन् १९६० तक के १२ वर्षों में उन्हें हिन्दी भाषा के लिए भी संघर्षशील रहना पड़ा और क्योंकि हिन्दी को पदच्युत किया जा रहा था अत: उनके हृदय में अशान्ति उत्पन्न हुई और उन्होंने अपने श्रद्धेय नेताओं -

---

१. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक, पृ० १०९ ।

२. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - पृ० ११२ - 'भाई बालकृष्ण' - पण्डित कृष्णदत्त पालीवाल ।

गान्धी जी और नेहरू जी - का भी विरोध किया । सन् १९५९ में अपने एक मित्र को एक पत्र में उन्होंने लिखा था - 'तुम सोचते होंगे, दिल्ली हिन्दुस्तान की राजधानी है, यहाँ के लोग सुखी होंगे, सम्पन्न होंगे । परन्तु यहाँ भी तबाही है, मुखमरी है, बेकारी है । रुपए का नंगा नाच हो रहा है, कागज़ी घोड़े दौड़ाये जा रहे हैं, उत्थान की योजनाएँ बनायी जा रही हैं, फिर भी लगता है कि महात्मा जी के रामराज्य का सपना अधूरा ही रह जायेगा ।'[१] निस्सन्देह इस युग में उनकी राष्ट्रीय चेतना को नेहरू के अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण ने प्रभावित किया है ।

इस प्रकार यह तथ्य भलीभाँति स्पष्ट होता है कि राजनीतिक परिस्थितियों ने 'नवीन' की चिन्तनधारा पर अमिट प्रभाव डाला और उन्हें काव्य-सामग्री भी प्रस्तुत की । प्रबल राजनीतिक योद्धा होने के साथ-साथ 'नवीन' जी सशक्त साहित्य साधक भी थे अत: कर्मक्षेत्र में अनुभूत सत्य को काव्य-वाणी प्रदान करने में उन्हें विशेष सफलता मिली है । राजनीतिक परिस्थितियों की पृष्ठभूमि पर ही उनका काव्य प्रधान रूप से पल्लवित एवं पुष्पित हुआ है ।

सामाजिक आर्थिक परिस्थितियाँ :

डा० ज्ञानवती दरबार ने लिखा है - 'भाषा तथा साहित्य की उत्पत्ति सामाजिक आन्दोलनों के इतिहास का ही एक अंग है । जन-जागरण के परिणाम व्यापक होते हैं और उनके सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि पक्ष हो सकते हैं । इन सभी पक्षों का सम्बन्ध मानव की भावनाओं से है और इसी तथ्य से भाषा और साहित्य की उत्पत्ति होती है ।

---

१. 'जन्मभूमि' - २० मई सन् १९६६ - 'हुतात्मा नवीन' - श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० ५ ।

अर्थात् साहित्य इन आन्दोलनों के इतिहास का भावात्मक पक्ष है ।`[१] बालकृष्ण शर्मा `नवीन` के समसामयिक भारतीय समाज की कहानी करुणा एवं अश्रुओं की कहानी है । समाज पूर्ण रूप से छिन्न भिन्न हुआ था और नित नवीन प्रहारों के कारण अपनी प्राचीन शक्ति से वंछित हो रहा था । समाज विभिन्न वर्गों में विभाजित था । अन्धविश्वासों, रूढ़ियों और परम्पराओं में जकड़ा हुआ था। अज्ञान का तमसान्धकार सर्वत्र व्याप्त था । डा० सुधीन्द्र ने लिखा है - `समाज अज्ञान, आलस्य, ईर्ष्या, दम्भ, दुराचार, फूट, विलास-वासना और व्यभिचार, आदि भयानक बुराइयों का घर है ।`[२] देशवासियों के परस्पर फूट और वैमनस्य से शासन अधिकारी लाभान्वित होना चाहते थे । ब्रिटिश अधिकारियों की कूट-नीति (फूट डालो और राज्य करो) के कारण देशवासी कभी पूर्ण रूप से संगठित न हो सके । देश छोटे-छोटे भागों में विभक्त था जहाँ राजाओं और नवाबों की दानवता सर्वत्र व्याप्त थी । श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने लिखा है - `अंग्रेज़ राज्य की प्रबल शक्ति को रोकने की क्षमता देश में नहीं रह गई थी । परस्पर वैमनस्य और व्यक्तिगत स्वार्थों की लड़ाई ने देश की सारी शक्ति को छिन्न भिन्न कर दिया था । ब्रिटिश कूटनीतिज्ञता की जड़ प्रत्येक भाग में गहरी समा चुकी थीं । अत: जब कभी कहीं स्वातंत्र्य-युद्ध का सूत्रपात हुआ उसे चूर-चूर होना पड़ा । विस्तृत दृष्टिकोण न तो उस समय के छोटे छोटे भागों में बंटे हुए राजाओं और नवाबों में था और न उस वातावरण में सांस लेने वाली जनता में ही । दृष्टिकोण की संकुचितता ने देश को तबाही और बर्बादी के बीच लाकर खड़ा कर दिया था ।`[३] मानसिक संकुचितता के कारण समाज रुग्ण हो गया

---

१. `साप्ताहिक हिन्दुस्तान` - ११ मार्च १९६२ - `भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा` - एक दृष्टि - ज्ञानवती दरबार , पृ० ७ ।

२. `हिन्दी कविता में युगान्तर` - डा० सुधीन्द्र , पृ० २६ ।

३. `हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर` - नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, पृ०१०२-१०३।

था । समाज में नारी की दयनीय अवस्था थी । उसे पुरुष ने अपनी काम-पिपासा का साधन मात्र बनाया था । अनमेल विवाह, बहु-विवाह, वृद्ध - विवाह एवं बालविवाह के कारण उसका जीवन विषमय बन गया था । दहेज के कारण उसे बेचा जाता था । समाज में उसे सम्मानित पद प्राप्त नहीं था । सामाजिक कुप्रथाओं के कारण नारी का जीवन वेदनामय बन गया था । उसके स्वास्थ्य या शिक्षा का कोई सुप्रबन्ध नहीं था और न ही उसे राजनीति में सक्रिय भाग लेने का सुअवसर प्रदान किया जाता था । नारी की इस पतित अवस्था के कारण गार्हस्थिक जीवन में सर्वत्र अशान्ति व्याप्त थी और यही अशान्ति सारे समाज में फैल गई थी ।

उस समय देश में किसानों की दशा भी हृदय विदारक थी । ग्रामीण जीवन नाना आपदाओं और संकटों से ग्रस्त था । किसान भूमिपति के विलास का साधन मात्र था । स्वयं उसका जीवन जड़ता, दरिद्रता एवं विवशता के कारण विषमय बन गया था । उसके जीवन में जीवन और मरण का कोई प्रश्न ही नहीं था । डा० सुधीन्द्र ने लिखा है - 'भारत में किसान की संख्या का अनुपात ५२ प्रतिशत से ७४ प्रतिशत था परन्तु किसान सब से अधिक पीड़ित और शोषित वर्ग था । किसान जो भारत का अन्नदाता है, उसी किसान को पृथ्वीतल का सबसे अधिक दरिद्र और दुखी प्राणी बनना पड़ा । गाँव की दशा भी दयनीय थी । जिन गाँव में भारत का सच्चा स्वराज केन्द्रित था और जो पूर्णतया समृद्ध थे, वे सब पीड़ा से कराहने लगे । जमींदारी प्रथा ने तो उन्हें बरबाद ही कर दिया ।'[१] ऋण किसान का जीवन-शत्रु था परन्तु विवशता के कारण उसे सदा उसी की शरण में जाना पड़ता था । महाजन, सूदखोर एवं जमींदार मिलकर गिद्ध के समान उसके मृतक शरीर से मांस नोंच रहे थे । पण्डित धर्म के नाम पर उसका शोषण कर रहा था । गाँव में गृह-उद्योग-धंधों के नष्ट

---

१. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र, पृ० २५ ।

हो जाने के कारण सारी जनता को कृषि पर ही निर्भर रहना पड़ता था, फलस्वरूप खेतिहर मज़दूरों की संख्या भी दिन प्रतिदिन बढ़ रही थी । किसान का भाग्य-विधाता ज़मींदार था । खेती हाथ से निकल जाने के कारण वह भूमिपति से श्रमिक और श्रमिक से दास बन रहा था । अशिक्षा एवं अज्ञान के कारण उसके जीवन में नाना अंधविश्वासों ने घर कर लिया था । शासन अधिकारी अप्रत्यक्ष रूप से उसके स्वजनों के द्वारा ही उसकी लूट करा रहे थे और साथ ही किसान की मान मर्यादा को खण्डित तथा अपमानित करने के लिए 'मुँह में राम और बगल में छुरी' के महामंत्र का प्रयोग करते थे । भेड़ के रूप में यह भेड़िये सदा किसान की अर्जित कमाई पर झपट्टा मारते थे । गाँव के समान ही नगरों में भी शोषक और शोषित, उत्पादक और भोक्ता तथा श्रमिक और पूंजीपति दोनों वर्तमान थे । यहाँ शोषक वर्ग अपने प्रभुओं की जी-हज़ूरी में ही अपना कल्याण समझते थे ।

अछूतों की समस्या भी देश में भयानक रूप धारण कर रही थी । धरती पर मानवता का यह सबसे बड़ा अपमान था, उनके स्पर्श मात्र से धर्म-नाश एवं कुल-नाश का हास्यास्पद ढोंग मूर्ख पण्डितों ने रचा था । हिन्दू समाज, धर्म एवं जाति के लिए यह सबसे बड़ा कलंक था जिसे महात्मा गान्धी ने सदा सर्वदा के लिए मिटा दिया । देश में मुसलमानी सभ्यता एवं संस्कृति तथा पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति के प्रसार के फलस्वरूप हिन्दू समाज एवं धर्म में कुछ संकीर्णताओं तथा अनुदार रीतियों का उदय हुआ था । सामाजिक विकास में परस्पर संकीर्णता, कट्टरता तथा अनुदार दृष्टि बाधक सिद्ध हुई । इधर ईसाई मिशनरियों द्वारा हमारे समाज एवं धर्म पर घातक प्रहार किये जा

रहे थे । अपने धर्म के विकास हेतु वे भारतीय धर्म एवं समाज की कटु निन्दा करने लगे और छल, बल तथा धन-लालच देकर अबोध देशवासियों को स्वधर्म त्यागने पर विवश करने लगे ।[१]

औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप योरुप में उत्पादन के नये-नये साधनों का आविष्कार हुआ । शासन अधिकारियों ने अपने कारखानों का माल भारत के बाज़ारों में पाटना शुरू किया, फलत: भारत में औद्योगिक विनाश तीव्र गति से होने लगा । यहाँ के उद्योग-धन्धों को समूल नष्ट किया गया । बुनकरों के अंगूठे काट लिए गए और आर्थिक सहायता के अभाव में कलाकार अधिक समय तक अपने कला-कौशल को जीवित न रख सके । राज्य की ओर से भी भारतीय उद्योगों को संरक्षण नहीं के बराबर मिलता था । फलस्वरूप एक समय ऐसा आया जब यहाँ का पूंजीपती वर्ग भी शासकों के विरुद्ध उनकी अनीतियों की कटु-आलोचना करने लगा । डा० उदयभानुसिंह ने लिखा है - 'योरुपीय तथा विदेशी वस्तुओं ने भारतीय बाज़ार पर अधिकार कर लिया' यंत्रों से स्पर्द्धा न कर सकने के कारण देशी कारीगर कृषि की ओर झुके । खेती की दशा भी शोचनीय थी । जन-संख्या में वृद्धि, उर्वर शक्ति के क्रमश: ह्रास, ईतियों और भीतियों के कारण उनकी आर्थिक दशा बिगड़ती जा रही थी । शिक्षितों को अनुकूल नौकरियाँ नहीं मिलती थीं । वे शारीरिक परिश्रम के भी अयोग्य थे । एक तो शिक्षित और अशिक्षित दोनों बेकार हो रहे थे और दूसरे देश का धन विदेश जा रहा था । देश आर्थिक संकट में पड़ गया ।'[२] विश्व व्यापी मन्दी के कारण देश की आर्थिक दशा अधिक बिगड़ गई ।[३] इधर अनेकों प्रकार के कर लोगों पर लगाए गए थे और उनकी दर

---

१. 'भारत का राजनीतिक इतिहास' - राजकुमार , पृ० १७७-७८ ।
२. 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग' - डा० उदयभानु सिंह, पृ०४-५ ।
३. 'छायावाद युग' - डा० शम्भुनाथ सिंह, पृ० २८ ।

भी प्रतिवर्ष बढ़ती ही जा रही थी । धन के असमान-वितरण तथा दूषित अर्थ-व्यवस्था के कारण जीवन-निर्वाह करना असम्भव हो रहा था । इसके अतिरिक्त सरकार के संरक्षण में चलती हुई चोर बाज़ारी और भ्रष्टाचार से साधारण जनता पीड़ित थी ।[१] सोने की चिड़िया को कागज़ की पुड़िया बनाने में शासकों ने कोई कसर नहीं रख छोड़ी थी । आर्थिक पराभव के कारण ही सामाजिक उच्छृंखलता, भ्रष्टाचार और कुत्सित व्यवहार सर्वत्र व्याप्त था । भारतवासियों का जीवन पापमय, अभिशापमय और विषमय बन गया था । श्री जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है - 'जनता न केवल विदेशी लुटेरों द्वारा ही लूटी गई थी बल्कि दैवी उत्पात जैसे - भुखमरी, अकाल, अतिवर्षा, अल्प वर्षा आदि भी उसे पतित बनाने को उद्यत थे । - - - सन् १९४७ तक जनता की आर्थिक दशा सर्वदा और सर्वथा शोचनीय रही । भारतीय किसान कभी सुख की साँस नहीं ले सका । वह शासन द्वारा चूसा भी जाता रहा और दैवी आपदाओं से त्रस्त भी रहा ।'[२]

इस युग में और इससे पूर्व भी (१९ शताब्दी में) अनेक सामाजिक आन्दोलन हुए । दयनीय परिस्थितियों के कारण देश में विवेकशील मस्तिष्क क्षुब्ध हो उठे । समाज की दीन एवं पतित अवस्था में सुधार लाने के लिए सर्वप्रथम १९वीं शताब्दी में राजा राममोहनराय के नेतृत्व में 'ब्रह्मसमाज' (१८२८ ई०) की स्थापना हुई । सन् १८७५ में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'आर्य समाज' की स्थापना की जिन्होंने सर्वप्रथम सामाजिक पुनरुद्धार का पुनीत कार्य सक्रिय रूप से आरम्भ किया । स्वामी जी ने समाज के बाह्याडम्बरों के विरुद्ध एक आन्दोलन शुरू किया । उस समय हमारा समाज वर्ग-भेद, जाति भेद, छुआछूत तथा अन्य

---

१. 'युगचरण 'दिनकर' - सावित्री सिन्हा, पृ० ५८ ।
२. 'नवीन' और उनका काव्य - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० २१ ।

सामाजिक कुप्रथाओं से ग्रस्त था । पतनोन्मुख समाज के सन्तप्त वर्ग के प्रति सहानुभूति तथा सामाजिक कुरीतियों से बचने और सन्मार्ग पर चलने का उपदेश सर्वप्रथम 'आर्यसमाज' के नेताओं ने दिया । आर्य समाजियों ने ही देश में शुद्धि एवं विधवा विवाह का आन्दोलन उठाया ।[१] स्वामी जी स्त्री-शिक्षा के समर्थक थे परन्तु दहेज प्रथा के कट्टर विरोधी । उन्होंने हिन्दू समाज में पुन: जागृति का स्वर फूँक दिया । सुषुप्त जनता के रूढ़ मानस में उथल पुथल मचादी । श्री राम बहोरी शुक्ल ने लिखा है - 'उनका व्यक्तित्व समाज सुधार के क्षेत्र में वैसा ही क्रान्तिकारी रहा जैसा कि राजनीतिक क्षेत्र में लोकमान्य तिलक का रहा । - - - उनके दो कार्य महत्वपूर्ण हैं – प्रथम राष्ट्रीय भावना का संचार और राष्ट्रभाषा हिन्दी की स्थापना और प्रचार ।'[२] इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र में सामाजिक आन्दोलन लाने का श्रेय प्रसिद्ध समाज सुधारक महादेव गोविन्द रानाडे को है । प्राचीन रूढ़ियों के विनाश तथा शिक्षा के प्रसार के लिए वे भरसक प्रयत्नशील रहे । इसके पश्चात् महात्मा गान्धी ने समाज के भयंकर कोढ़ का उपचार किया । हरिजनों को अपने साथ मिलाकर गान्धी जी ने समाज के जर्जरपन को दूर किया । साम्प्रदायिक भेदभाव को भुलाकर अखण्ड समाज के निर्माण हेतु गान्धी जी देश-प्रेमियों को ललकारते रहे । वे सत्य, अहिंसा तथा गीता के कर्म-भोग के सिद्धान्तों पर समाज के विशाल महल का निर्माण करना चाहते थे ।

स्वतंत्रता के पश्चात् आर्थिक तथा सामाजिक पुनर्निर्माण के हेतु अनेक योजनाएँ बनाई गईं । ज़मीदारी, जागीरदारी, ताल्लुकेदारी एवं महाजनी प्रथा का अन्त हुआ । भूमि का स्वामी किसान घोषित हुआ । विभिन्न वर्गों के मध्य गहरी खाई को पाटने के लिए अनेक सार्वजनिक एवं सर्वदलीय सभाओं का

---

१. 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' - डा० श्रीकृष्णलाल, पृ० २८ ।
२. 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास' - रामबहोरी शुक्ल, पृ०१२६।

निर्माण हुआ । देश के सामाजिक ढाँचे का शिलान्यास समाजवादी सिद्धान्तों पर रखा गया । सामाजिक-आर्थिक विषमताओं के कारण दीन हीन जनता स्वत्व-प्राप्ति के पश्चात् पुन: संगठित होकर जर्जरित समाज की बिखरी हुई शक्तियों को पुन: संचित करने लगी । आज 'एक हृदय हो भारत जननी' के व्यापक सिद्धान्त पर अखण्ड समाज के निर्माण में जनता सक्रिय सहयोग प्रदान कर रही है । स्वतंत्रता से पूर्व देश की सामाजिक एवं आर्थिक दशा निस्सन्देह शोचनीय थी ।[१]

'नवीन' जी ने अपनी रचनाओं में यत्र तत्र समाज का विशद एवं सांगोपांग वर्णन किया है । उनके समस्त साहित्य में सामाजिक जीवन साकार हो उठा है । समाज में पीड़ित, शोषित तथा दलित श्रमिक एवं कृषक के निराशामय जीवन के अनेक पक्षों का उन्होंने यथार्थ तथा हृदय स्पर्शी चित्रण किया । उनका काव्य सामाजिक जीवन की मुँह बोलती कहानी है । पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा है - 'पण्डित बालकृष्ण इस बात को जानते थे कि भारतीय समाज में कौन-कौन से गुण ऐसे हैं, जिन्हें वे दोष की तरह मानते थे, और बहादुर की तरह उन पर आक्रमण किया करते थे । ऊंचाई का खयाल भी यदि वह समाज रचना को तोड़ दे और उसके पुननिर्माण की क्षमता न रखे, उन की

---

१. 'बीसवीं शताब्दी के भारत के सामाजिक शरीर को ऐसा शरीर कह सकते हैं कि जिसकी रुग्णता का बोध उसके मस्तिष्क को हो चुका है और शरीर भी अपने आप में विकल है । युग-युग की पराधीनता के रोग से जर्जर शरीर को स्वास्थ्य-साधन के लिए जो अथक साधना करनी पड़ती है, उसकी चेष्टाएँ अब सजग दिखाई देती हैं ।'

- 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र , पृ० २५.

नज़र में गिर जाता था।'[१] ग्रामीण जीवन की विषमताओं से वे क्षुब्ध हो उठे थे। 'नवीन' जी की राष्ट्रीय कविता का एक सामाजिक पक्ष भी है। 'नवीन' जी कोरे कवि नहीं थे। वे जन-नेता तथा जन-नायक भी थे अत: पीड़ित तथा शोषित जनता को देखकर उनका अन्तर आन्दोलित हो उठता था। उनकी यही काव्य-चेतना सामाजिकता तथा लोक-कल्याण का रूप धारण कर अभिव्यक्त हुई।[२] 'नवीन' जी ने ग्रामीण जीवन के साथ-साथ नागरिक जीवन का भी सजीव चित्रण किया है। श्रमिकों के दारिद्र्यपूर्ण दीन तथा असहाय जीवन की अनेक तीक्ष्ण-भेदिनी झांकियाँ उन्होंने अपने काव्य में प्रस्तुत की हैं। डा० लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है – 'उन्होंने परतंत्रता से युद्ध किया, परिस्थितियों से लोहा लिया; सामाजिक बन्धनों से लड़ते रहे और आर्थिक विषमता की तीक्ष्ण डाढ़ों को उखाड़ते रहे।'[३] समाज की प्राचीन रूढ़ियों का नाश और नवीनता का सृजन – यही 'नवीन' जी का चरम लक्ष्य था। उन्होंने स्वयं लिखा है – 'जहाँ तक विद्रोही कविताओं का सम्बन्ध है, उनकी प्रेरणा समाज की अवस्थाओं से मिली है।'[४] नव-समाज के निर्माण हेतु तथा समता स्थापन के लिए 'नवीन' जी की अमृतमयी वाणी फूट पड़ी। तत्कालीन अनेक सामाजिक आन्दोलनों से वे प्रभावित हुए थे। वास्तव में सामाजिक आन्दोलन ही जनता की राजनीतिक चेतना के अग्रदूत होते हैं। समाज की हानिकारक रीतियों एवं कुप्रथाओं की उन्होंने कटु-आलोचना की। कवि ने गरीबी और भुखमरी पर आँसू भी बरसाये और आक्रोश भी प्रकट किया, परन्तु साम्प्रदायिक

---

१. 'सरस्वती' - जून १९६० - 'त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'' श्री माखनलाल चतुर्वेदी, पृष्ठ ३८१।

२. 'जन्मभूमि' - ६ मई १९६६ - 'राष्ट्रीय चेतना का सन्दर्भ तथा कवि 'नवीन'' – श्याम बिहारीराय, पृष्ठ ७।

३. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० ४२७।

४. 'मैं इनसे मिला' - किस्त २ - पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश', पृ० ५४।

भेदभाव के विरुद्ध उन्होंने विद्रोह एवं क्रान्ति को आह्वान किया । उन्होंने मानव-सृष्टि के समूल विनाश के लिए ईश्वर से प्रार्थना की क्योंकि ऐसे समाज में रहने की अपेक्षा वे परलोकवास ही श्रेयस्कर समझते थे । इस प्रकार 'नवीन'जी के काव्य में सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का सजीव, मार्मिक एवं हृदय-स्पर्शी चित्रण हुआ है । श्री पन्नालाल त्रिपाठी ने लिखा है - 'जहाँ तक उनकी योग्यता का सम्बन्ध था, उत्तर प्रदेश में राजनीतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक क्षेत्र में उनके समान कोई दूसरा न था ।'[१]

धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ :

भारत में मुसलमानों के आगमन से पूर्व हिन्दू धर्म तथा संस्कृति अपने वैभव पर थी । मुसलमानों ने जब देश को पदाक्रान्त किया तो धार्मिक संकीर्णता एवं कट्टरता दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी । विदेशी शासकों की अनीतियों के कारण हिन्दू धर्म का तीव्र गति से ह्रास होने लगा । देश में इस्लाम का प्रचार हुआ और शासित जनता किंकर्तव्य विमूढ़ अपने दुर्भाग्य पर केवल अश्रु बहाती रही । मुसलमानों के राज्यकाल में हिन्दू धर्म पर कई प्रकार से प्रहार हुए । इसके पश्चात् योरुप निवासियों ने जब भारत में अपना प्रभुत्व स्थापित किया तो उनके साथ ईसाई मिशनरियों का आगमन भारत में हुआ । उन्होंने अव्यवस्थित, रूढ़िग्रस्त तथा रोग-ग्रस्त हिन्दू धर्म के विरुद्ध अपने उदार दृष्टिकोण का प्रचार किया । फलत: ईसाई धर्म का प्रचार तीव्र गति से होने लगा । डा० उदयभानुसिंह ने लिखा है - 'अंग्रेज़ों के आधिपत्य-स्थापन के समय हिन्दू धर्म शिथिल हो चुका था । अशिक्षित भारतीय जनता अज्ञान , अन्ध-विश्वास में संवेष्ठित थी । दुर्बल और प्राणशून्य हिन्दू जाति की धार्मिक और सामाजिक अवस्था शोचनीय थी । सारा देश तन्द्रा में था । ईसाइयों ने निर्विरोध धर्म-प्रचार आरम्भ किया । शिक्षा, धन , विवाह ,

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १० जुलाई १९६० - 'नवीन जी : एक विलक्षण व्यक्तित्व' श्रीपन्नालाल त्रिपाठी, पृ० १७ ।

पदाधिकार आदि के लोभी जनों द्वारा उनके इस कार्य का स्वागत हुआ।[१] सन् १८५७ के असफल विद्रोह के पश्चात् शासक अधिकारियों ने धर्म में हस्तक्षेप न करने की नीति घोषित की परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से वे देशवासियों को मानसिक दासत्व की शृंखलाओं में जकड़ना चाहते थे। अंग्रेज़ों की सीधे संघर्ष करके प्रभुत्व स्थापन करने की नीति अब नहीं थी। वरन् अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेज़ी भाषा, सभ्यता, संस्कृति, वेशभूषा के गुलाम बनाकर भारतियों के अंग्रेज़ीकरण द्वारा शासन सुदृढ़ करने वाली नीति चालू की गई।[२]

दूसरी ओर इस युग में पुरोहित लोग धर्म के नाम पर खुल कर अत्याचार करते थे। धर्म अब व्यवसाय की वस्तु बन गई थी। धार्मिक अन्धानुकरण के कारण धर्म बाह्य आडम्बरों तक ही सीमित रह गया था। हिन्दू धर्म की समस्त प्राचीन भव्य-परम्पराओं का लोप हुआ था, उसके उज्ज्वल इतिहास पर वर्तमान का तमसान्धकार छा गया था। धर्म के नाम पर केवल धर्माभास रह गया था। धर्म मन्दिरों एवं मठों तक सीमित रह गया। इन मन्दिरों एवं मठों में पुरोहित महाराज तथा मठाधीश अपने को ईश्वर का अवतार समझने लगे थे। वर्णाश्रम धर्म अब अनेक अनीतियों का केन्द्र बना था। जातिभेद के कारण मन्दिर प्रवेश उच्च जाति तक ही सीमित था। अछूतों का मन्दिर-प्रवेश वर्जित था और इस प्रकार धर्म के नाम पर अन्याय हो रहा था। श्री कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा ने लिखा है — `२०वीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक धर्म के नाम पर मानवता का शोषण होता रहा है। और भारत में तो आज भी हो रहा है।`[३] शताब्दियों तक हिन्दू धर्म

---

१. `महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग` - डा० उदयभानुसिंह, पृ० ५।
२. `हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास` - रामबहोरी शुक्ल, पृ० १२५।
३. `साप्ताहिक हिन्दुस्तान` - १० जुलाई १९६० - `नवीन जी की काव्य प्रतिभा पर एक समीक्षात्मक दृष्टि` कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा, पृ० २७।

विदेशी सत्ताधारियों के कारण आक्रान्त रहा । आरम्भ में इस्लाम के सम्पर्क में आकर इसमें अनेक अनीतियाँ समा गईं और तत्पश्चात् ईसाई धर्मावलम्बियों ने इसके उज्ज्वल अतीत की पूर्ण उपेक्षा करके इसके अन्धकारमय वर्तमान से लाभान्वित होने का भरसक प्रयत्न किया ।

देश के सांस्कृतिक विकास में भी ठहराव सा आगया था । यह तथ्य सर्वमान्य है कि भारतीय संस्कृति का इतिहास बड़ा ही गौरवशाली रहा है । हमारी संस्कृति उज्ज्वल अतीत का प्रतीक है । संस्कृति व्यक्तियों के उदात्त संस्कारों का पुंज होती है ।[१] संस्कृति और सभ्यता में पर्याप्त भेद है । सभ्यता वह वस्तु है जो हमारे पास है । संस्कृति वह चीज़ है जो हम स्वयं हैं ।[२] संस्कृति में एक शाश्वत तत्व निहित होता है । संस्कृति उन उदात्त भावों, विचारों, कार्यकलापों, जीवन सिद्धान्तों तथा दृष्टिकोणों एवं विभिन्न कलाओं का पुंज है जिनके द्वारा मानव समाज विकसित होता है । २०वीं शताब्दी में सांस्कृतिक पराभव के कारण भारतवासी क्षुब्ध हो उठे थे । श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है - 'वास्तव में राजकीय विजय, कोई विजय नहीं है, आर्थिक दासत्व भी कोई दासत्व नहीं है, सांस्कृतिक पराभव ही सबसे बड़ी हार है । सब प्रकार की अधीनता में देश उबर सकता है परन्तु मानसिक दासता और सांस्कृतिक ध्वंस का कोई उपचार नहीं ।'[३] पश्चिम के साथ सम्पर्क बढ़ने के कारण पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति, साहित्य और शिक्षा का प्रचार हमारे देश में बढ़ने लगा । राजभक्त देशद्रोहियों ने अपनी चिरसंचित संस्कृति से विमुख होकर विदेशी आचार विचार तथा रहन-सहन का अन्धानुकरण किया । डा० शम्भूनाथसिंह ने लिखा है - 'उच्च

---

१. 'साहित्य तरंग' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० ६७ ।

२. 'वट-पीपल' - दिनकर , पृ० ६३ ।

३. 'साहित्य तरंग' - सद्गुरु शरण अवस्थी, पृ० ३५ ।

मध्य वर्ग का नैतिक पतन इतना अधिक हो गया था कि बार बार जातीय अपमान होने पर भी वह अंग्रेज़ों के प्रति अपना विश्वास नहीं छोड़ पाता था । उसमें आत्म-शक्ति और आत्म-गौरव की भावना का अभाव था जिसमें वह अंग्रेज़ों की संस्कृति और शक्ति का भरोसा करता था ।'[१] भारतीय सांस्कृतिक परम्परा को छिन्न-भिन्न करने के लिए शासक अधिकारियों ने उस पर अनेक प्रकार से घातक वार किए। बंगाल को दो भागों में विभक्त करके उन्होंने राष्ट्रीय एकता और बंगाली संस्कृति को छिन्न भिन्न किया । साम्प्रदायिक भेदभाव को फैलाकर देश में हिन्दू-मुसलमान में अलगाव की भावना फैला दी । मुसलमानों की संस्कृति भी भारतीय संस्कृति से कोई अलग चीज़ नहीं,[२] परन्तु कूटनीतिज्ञ अंग्रेज़ों ने यही भावना विष के समान मुसलमानों में फैला दी । सन् १८५७ के असफल विद्रोह के पश्चात् अंग्रेज़ भारत वासियों को मानसिक दासत्व की शृंखलाओं में जकड़ना चाहते थे । इस उद्देश्य से उन्होंने भारतीय धर्म एवं संस्कृति की आलोचनाएँ कीं और इसी आड़ में अपने धर्म का गुणगान करने लगे । डा० उदयभानुसिंह के विचारानुसार साधारण जनता में शासकों के प्रति श्रद्धा कम, आतंक अधिक था । भारतीयों की इस मनोवृत्ति को बदलने के लिए सरकार उनकी संस्कृति में परिवर्तन करना चाहती थी।

---

१. 'छायावाद' - डा० शम्भूनाथ सिंह , पृ० ६ ।

२. 'वस्तुत: हिन्दू मुसलमानों की अलग अलग संस्कृतियाँ नहीं हैं । मुसलमान बाहर से बहुत अधिक संख्या में नहीं आये थे । जो आये उन्होंने भी भारत में बसकर भारतीय संस्कृति को ही अपना लिया था । भारतीयों में से ही बहुत से लोग मुसलमान होते गये थे, पर उनका धर्म ही बदला था, संस्कृति भारतीय ही रही । यह अवश्य हुआ कि मुसलमानों के आने के बाद कई सौ वर्षों में एक मिली जुली भारतीय संस्कृति का विकास होता रहा, जिस पर अरब, फारस और तुर्किस्तान की संस्कृतियों का भी काफी प्रभाव था ।'

-'छायावाद युग' - शम्भूनाथ सिंह , पृ० ११.

इसीलिये अंग्रेज़ी माध्यम और पाश्चात्य साहित्य के पठन पर अधिक ज़ोर दिया गया था । विदेशी साहित्य, शिक्षा, सभ्यता और संस्कृति से मोहित भारतीय नवयुवक उन्हीं के दास हो गये । वे अपनी भाषा, साहित्य, सभ्यता, संस्कृति, जाति या धर्म की सभी बातों को गँवारू समझने लगे ।[१] डा० दिनकर का विचार है कि भारतीय संस्कृति में चार क्रान्तियाँ घटित हुई हैं जिनमें अन्तिम क्रान्ति सर्वाधिक भयानक तथा विनाशक सिद्ध हुई है जब कि ईसाई धर्म और संस्कृति का आगमन भारत में हुआ ।[२] भारतीय संस्कृति का एक विशेष गुण है —उसकी ग्राहिका शक्ति । इस्लाम के आगमन पर उसने फारस, अरब और तुर्किस्तान की संस्कृति के श्रेष्ठ तत्वों को ग्रहण किया और बदले में उन पर भी अमिट प्रभाव डाला । जहाँ कहीं अच्छे गुण, तत्व या विचार सामने आये, हमारी संस्कृति ने उन्हें पचा लिया परन्तु पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण भारत के नैतिक पतन, आर्थिक पराभव और राजनीतिक दासत्व का परिचायक है,उसकी गुणग्राहिका शक्ति का द्योतक नहीं ।

१९वीं शताब्दी में ही सांस्कृतिक और धार्मिक क्षेत्र में नवचेतना का उदय हुआ था । सन् १८२८ में राजा राममोहनराय ने ब्रह्मसमाज की स्थापना की । इन्होंने भारतीय संस्कृति के शाश्वत तत्व 'समन्वय सिद्धान्त' को अपनाया, वेदान्त और उपनिषद् से मूल प्रेरणा लेकर तथा ईसाई धर्म से प्रभावित होकर उन्होंने हिन्दू धर्म को नवीन पथ पर अग्रसर किया ।[३] राजा राममोहनराय ने

---

१. 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग' - डा० उदयभानुसिंह , पृ० ८ ।
२. 'वट-पीपल' - दिनकर - 'चार सांस्कृतिक प्रवृत्तियां', पृ० ७६ ।
३. 'राजा राममोहन भारत के सामाजिक सांस्कृतिक (धार्मिक और शैक्षिक) तथा राजनीतिक सुधार-आन्दोलनों के अग्रदूत बने और १९वीं शताब्दी के सभी मुख्य आन्दोलनों की आधार-शिला उनके विचारों ने रक्खी थी ।'
-'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र, पृ० ६.

हिन्दुत्व का नव संस्कार किया । संस्कृति में आदान-प्रदान के तत्व पर विशेष बल दिया । 'ब्रह्म-समाज' के पश्चात् सन् १८७५ में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'आर्य-समाज' की स्थापना की । 'आर्य-समाज' के द्वारा भारतीय धर्म, संस्कृति एवं समाज में क्रान्ति उपस्थित हुई । डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है - 'सामाजिक और धार्मिक विचारों की दुनिया में क्रान्ति ले आने वाली सबसे महत्वपूर्ण संस्था की स्थापना सन् १८७५ में हुई । इस संस्था का नाम है - 'आर्य समाज' । - - - इस संस्था ने अपने महान् संस्थापक स्वामी दयानन्द के नेतृत्व में रूढ़िवादी सनातनियोंसे , हिन्दू धर्म पर आक्रमण करने वाले ईसाईयों से, और देश में फैले हुए अनेक धार्मिक सम्प्रदायों से एक साथ ही लोहा लिया ।[१] स्वामी जी ने वैदिक धर्म के पुनरुत्थापन के हेतु प्रचार का कार्य आरम्भ किया और अपने व्याख्यानों द्वारा सनातन-धर्म की रूढ़िवादिता पर कठोराघात किए। धार्मिक आन्दोलन की प्रेरणा उन्होंने वेदों से ग्रहण की और शुद्ध तथा रूढ़ि-मुक्त धर्म प्रचार के लिए वे सरसक प्रयत्नशील रहे । ईसाई धर्म-प्रचारकों की छल-बल नीति के कारण स्वामी जी क्षुब्ध हो उठे थे अत: ईसाई धर्म-प्रचार की प्रतिक्रिया में उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की । देश के प्रत्येक भाग में 'आर्य-समाज' की शाखाएँ खोली गयीं और जनता को अपने धर्म तथा संस्कृति से परिचित कराने के लिए विधिवत उपदेशात्मक व्याख्यानों तथा भाषणों का आयोजन होने लगा । ईसाईयों द्वारा फैलाए हुए व्यभिचार तथा हिन्दू धर्म-विरोधी प्रचार की कटु आलोचना होने लगी । प्रो० शिवकुमार शर्मा ने लिखा है[२] - 'प्राचीन संस्कृति का पुनरुत्थान, वेदों के प्रति श्रद्धा जागरण, शिक्षा संस्थाओं के निर्माण द्वारा शिक्षा का प्रचार, नारी जाति के प्रति समादर की भावना, निम्न जातियों के

---

१. 'हिन्दी-साहित्य' - डा० हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० २५३ ।

२. 'हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियां' - प्रो० शिवकुमार शर्मा, पृ० ३८६ ।

प्रति अस्पृश्यता की भावना का निवारण, पुरातनरूढ़ियों का परित्याग – इन सब कार्यों के लिए भारतीय जनता इस समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द की सदा ऋणी रहेगी ।'[१] स्वामी जी ने धार्मिक अन्धविश्वास तथा रूढ़ संस्कारों के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया । उन्होंने देशोत्थान हेतु सामाजिक कुप्रथाओं का खुलकर विरोध किया तथा जनता को मानसिक उदासीनता और आलस्य से जगा दिया ।[२] 'आर्य-समाज' के अतिरिक्त स्वामी रामकृष्ण परमहंस (१८३४-८६ ई०) तथा उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द (१८६३-१९०२ ई०) ने 'वेदान्त-दर्शन' की नव प्रतिष्ठा की । इसके साथ ही सन् १८७९ ई० में 'थियोसोफ़िकल सोसायटी' की स्थापना भारत में हुई । मद्रास और उत्तर-भारत में इस सोसाइटी ने हिन्दु-पुनरुत्थान की भावना जाग्रत की । ऐनेबेसेन्ट जैसी पुज्य नारी ने भारतीयों में राष्ट्रीय भावनाओं को जाग्रत किया और हिन्दू धर्म की सर्वश्रेष्ठता को स्वीकार किया । २०वीं शताब्दी में गान्धी जी ने मानवतावादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया । उन्होंने अहिंसा, सच्चाई तथा सत्याग्रह के द्वारा साधनों की शुद्धता पर बल दिया । एक महान सन्त होने के साथ-साथ वे युग-नेता, युग-निर्माता तथा सफल समाज सुधारक थे । उन्होंने गीता के निष्काम कर्म-योग के सिद्धान्त का अपने जीवन में व्यावहारिक रूप से पालन किया । राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता के लिए उन्होंने देशवासियों के नैतिक उत्थान तथा चारित्रिक दृढ़ता पर विशेष बल दिया । महान लक्ष्य की प्राप्ति के हेतु वे शुद्ध एवं पवित्र साधनों को अपनाने के लिए देशवासियों को उपदेश देते रहे । वे अहिंसा के महान पुजारी थे । डा० 'दिनकर' ने लिखा है– 'गान्धी वह विनयपूर्ण भाषा है जिसके द्वारा प्राचीन विश्व ने नवीन विश्व

---

१. 'हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ' - प्रो० शिवकुमार शर्मा, पृ०३८९।
२. 'आधुनिक काव्यधारा' - केसरी नारायण शुक्ल, पृ० २०३ ।

को शान्ति का मार्ग बताया है । सभ्यता यानी बाहरी ठाट-बाट की उपासना बहुत हो चुकी, अब ज़रा उन गुणों की भी पूजा करो जिन्हें संस्कृति कहते हैं । संस्कृति सुख नहीं, सदाचार है । संस्कृति ताकत नहीं, विनम्रता है । संस्कृति संचय नहीं, त्याग है । संस्कृति विजय नहीं, मैत्री है । और सबसे बढ़कर संस्कृति की चरम साधना अहिंसा में प्रकट होती है ।'[१] इसी साधना-पथ को गान्धी जी ने अपनी अलौकिक आभा से प्रज्ज्वलित किया । उनके साथ ही श्री विनोबा ने देश के सामूहिक विकास तथा निम्न जाति के उत्थान के लिए भू-दान-यज्ञ आरम्भ किया । 'नवीन' जी विनोबा के परम भक्त रहे हैं । अपने श्रद्धेय के विषय में उन्होंने लिखा है - 'विनोबा कौन हैं ? विनोबा युग-युग की भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं । - - - वेदान्त को मानव धर्म की आधार-शिला के रूप में संसार के सम्मुख रखने का जो प्रयत्न वर्तमान युग में विवेकानन्द, रामतीर्थ, केशवचन्द्र सेन, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, राधाकृष्णन , प्रभृति सन्तों और विद्वज्जनों ने प्रारम्भ किया उसे एक डग और आगे ले जाने का काम विनोबा कर रहे हैं । - - - ऐसा लगता है कि गान्धी ने जो काम अधूरा छोड़ा था, उसे विनोबा ने उठा लिया है ।'[२] इस प्रकार इन महापुरुषों के प्रभावशाली व्यक्तित्व एवं जीवन सिद्धान्तों के द्वारा राजनीतिक आन्दोलन को चारित्रिक दृढ़ता प्रदान हुई तथा देशवासियों में सांस्कृतिक नव-चेतना का उदय हुआ । आडम्बर का आवरण हट गया और वास्तविक तथ्य प्रकाश में आने लगे । संस्कृति, धर्म और भाषा की रक्षा के लिए संघर्ष आरम्भ हुआ । छुत-छात के वर्जनशील धर्म की अवहेलना होने लगी । गहरी चिन्तना और आध्यात्मिक साधना को जगाने वाले अनेक मुनीषियों ने मानसिक अज्ञान के आवरण को हटा दिया । यह युग संघर्ष का युग था और यह संघर्ष केवल राजनीतिक संघर्ष ही नहीं था अपितु दो विभिन्न

---

१. 'वट-पीपल' -'दिनकर', पृ० ६७ ।

२. 'विनोबा स्तवन' - भूमिका - 'नवीन' , पृ० १,६,११ ।

संस्कृतियों का संघर्ष था - जाति और धर्म का संघर्ष था।[1] डा० शम्भूनाथ सिंह ने लिखा है - 'भारतीय संस्कृति में एक ध्यान देने योग्य विशेषता यह है कि यहाँ साहित्य और कला का धर्म से अलग स्थान नहीं था। वस्तुत: यहाँ धर्म को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रधान स्थान दिया गया है। जीवन और धर्म अविच्छिन्न थे।'[2] 'नवीन' के काव्य में यह तथ्य स्पष्ट परिलक्षित होता है। उन्हें अपने धर्म एवं अपनी संस्कृति से अगाध प्रेम था परन्तु तत्कालीन विषम धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के कारण उनका हृदय व्यथित हो उठा था। धर्म के नाम पर कुत्सित व्यवहार हो रहा था। 'नवीन' जी ने भारत देश को जगनायक की अप्रतिम प्रयोगशाला माना है जहाँ पर कि पृथ्वीभर के विभिन्न धर्मों का उजियाला फैला हुआ है।[3] परन्तु दानवों की दानव लीलाओं के परिणामस्वरूप आज हमारा धर्म खण्डित हुआ है। 'नवीन' जी महात्मा गांधी के परम भक्त थे। गान्धी जी के मानवतावादी दृष्टिकोण, सत्य, अहिंसा एवं सेवा-व्रत ने उन्हें मोहित कर लिया था। प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है - "'नवीन' का कवि सर्वदा से मानवता के प्रति ईमानदार रहा है, भारत की चिर-प्रवहमान सांस्कृतिक परम्परा के प्रति ईमानदार रहा है तथा उसकी कुशल अन्तर्दृष्टि ने सदा से ही युग के सत्य को परखा है और यही कारण है कि उसके गीतों में मुझे प्रेम और जीवन के दिव्य रूप देखने को मिले। उसकी वाणी में अर्चना की तन्मयता है, उसका राग मानवता का राग है।"[4] उन्होंने संस्कृति

---

१. 'साहित्य सन्देश' अक्टूबर १९६३ - 'हिन्दी साहित्य में वीरकाव्य का विकास' - डा० किरणकुमारी गुप्ता, पृ० १५०।

२. 'छायावाद युग' - शम्भूनाथ सिंह, पृ० ७।

३. 'प्राणार्पण', पृ० १३।

४. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० केशवदेव उपाध्याय - (अपनी बात)।

के भव्य-रूप को ग्रहण किया है और संस्कृति के आधारभूत तत्वों के विषय में अपने एक मात्र महाकाव्य 'ऊर्म्मिला' के षष्ठ सर्ग में लिखा है :-

'शुद्ध विचार-प्रौढ़ता ही है भिति सभ्यता संस्कृति की ,
सदाचरण शीलता मात्र है, धीतक संस्कृति,मति,धृति की'।[१]

'नवीन' जी के विचारानुसार राम का वन-गमन भी आर्य-संस्कृति के प्रसार हेतु ही हुआ है ।[२] अपनी संस्कृति का समीचीन मूल्यांकन करने में कवि महोदय को विशेष सफलता हुई है । अतीत के उज्ज्वल चित्रों के द्वारा वर्तमान समय की भयंकरता तथा पराभव को वे अधिक सजीवता से व्यक्त कर सके हैं । 'कु' को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए यह नितान्तावश्यक है कि उसके 'सु' पक्ष का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया जाए । भारतवासियों को अपनी संस्कृति, आचार-विचार तथा रहन-सहन से विमुख देख कर उन्हें बड़ा सन्ताप होता था । 'पश्चिमी आन्धी' से अपनी प्राचीन संस्कृति की रक्षा के लिए उन्होंने आर्य-संस्कृति के शाश्वत तत्वों की काव्यात्मक ढंग से पुनर्व्याख्या की । डा० दुबे ने लिखा है - 'एक ओर वह पदार्थवादी-दर्शन, भौतिक शास्त्र एवं अणु-विज्ञान की काव्यात्मक टिप्पणियाँ करता है ; वहाँ दूसरी ओर अपने जीवन-दर्शन को उपनिषद् एवं वेदान्त के चिर-प्रेरणास्पद नीर से पोषित करता है । वह गीता के गीत गाता है तो भूमिदान-यज्ञ की भी सांस्कृतिक छवि दिखलाता है । इस

---

१. 'ऊर्म्मिला' - षष्ठ सर्ग , पृ० ५५४ ।

२. 'मैंने रामवन गमन को एक विशेष रूप में देखने और उपस्थित करने का साहस किया है । राम की वन-यात्रा, मेरी दृष्टि में एक महान् अर्थ पूर्ण आर्य-संस्कृति-प्रसार-यात्रा थी ।'

- ऊर्म्मिला' - भूमिका , पृ० (ह) .

प्रकार 'नवीन' में युग धर्म बोल उठा है ।'[१] ~~इस प्रकार~~ 'नवीन' जी के काव्य में भारतीय संस्कृति एवं धर्म मुखर हो उठा है । युग के धार्मिक आन्दोलनों से वे अवश्य प्रभावित हुए । धर्म के नाम पर किए जाने वाले अत्याचार एवं अनाचार के वे कट्टर विरोधी थे । मानव-कल्याण ही उनका परम लक्ष्य था । उनके गम्भीर चिन्तन, मनन एवं अध्ययन के परिणामस्वरूप सात्विक भावों की पयस्विनि फूट पड़ी । सांस्कृतिक आदान-प्रदान का समर्थन उन्होंने अवश्य किया परन्तु अपने धर्म एवं संस्कृति की अवहेलना करने वाले तथाकथित भारतवासियों की वास्तविक देश-भक्ति की कलई खोल दी । श्री रामबहोरी शुक्ल ने लिखा है – 'धार्मिक आन्दोलनों ने जो संस्कार तैयार किये उन्हीं से ओतप्रोत इस युग के सामाजिक और राजनीतिक नेता रहे और उन्हीं से प्रभावित होकर साहित्य की सृष्टि भी हुई। - - - विवेकानन्द और गान्धी के समन्वय शील दृष्टिकोण ने भारतीय साहित्य को उदार एवं उच्च प्रेरणाओं से भर दिया जिसे पाश्चात्य चेतना का समावेश होने पर भी भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि और तत्व प्रचुरता के साथ मिले ।'[२] निस्सन्देह 'नवीन' जी अकर्मण्यता और दासता के दल-दल में फंसी जनता का सांस्कृतिक एवं बौद्धिक विकास चाहते थे । तत्कालीन धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों से जहाँ वे क्षुब्ध हो उठे वहाँ उन्हें नवीन काव्य-उपकरण भी प्राप्त हुए और नवीन प्रेरणा भी प्रदान हुई ।

निष्कर्ष :

कविवर 'नवीन' की कविता में युग की जागृति का स्पष्ट आभास मिलता है । वे युगीन परस्थितियों से प्रभावित हुए, उनसे प्रेरणा ग्रहण की और तत्पश्चात्

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे , पृ० ४२७ ।

२. 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास' - रामबहोरी शुक्ल, पृ० १३१ ।

अपनी काव्य-वाणी द्वारा उनका मर्मस्पर्शी चित्रण किया । उनकी कविता उस युग की जटिलताओं से परिचित करा रही है । उन्होंने नाना समस्याओं पर गूढ़ चिन्तन के पश्चात् यथार्थवादी ढंग से अपनी लेखनी चलाई है । राजनीतिक परिस्थितियों से विवश होकर उन्होंने अपना सर्वस्व राष्ट्रीय आन्दोलन में होम किया । पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने मुझे अपनी एक भेंट में बताया- 'कवि की हैसियत से बालकृष्ण का स्थान बहुत ऊँचा है और राजनीति में भी उत्तर प्रदेश में उनकी गणना नेताओं में की जाती थी । राजनीतिक नेता की दृष्टि से उनकी ठाह अखिल भारतीय थी ।'[१] वे एक महान् योद्धा थे और जीवन-पर्यन्त विकट परिस्थितियों से संघर्षरत रहे । सन् १९२० से लेकर सन् १९६० तक अपने जीवन के अमूल्य ४० वर्ष उन्होंने राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम और साहित्य सृजना में व्यतीत किए । सेठ गोविन्ददास ने लिखा है - 'स्वराज्य के युद्ध में, संविधान सभा में, राज्यभाषा हिन्दी के बनाने में, संसद में, न जाने कितने प्रसंगों में और साहित्यिक एवं राजनैतिक आयोजनों में मैं उनके संग रहा हूँ । - - - वे ऐसे साहित्यकार न थे जो देश में स्वतंत्रता के संग्राम के समय चुपचाप बैठे बैठे केवल कलम चलाते रहते थे । वे कर्मठ थे, अत: सब कुछ कर गये, साथ ही वे साहित्यिक थे, अत: बहुत कुछ छोड़ गये ।'[२] देश की सामाजिक अव्यवस्था एवं आर्थिक विपन्नता के कारण वे खिन्न हो उठे थे । एक समाज - सुधारक के नाते उन्होंने समाज के विभिन्न अंगों - कृषक, श्रमिक, पूंजीपति, ज़मींदार एवं नारी की वास्तविक स्थिति का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है । यत्र-तत्र उन्होंने शोषक वर्ग के संहार के लिए क्रान्ति का आह्वान किया और साथ ही उन्होंने शोषितों की कायरता पर अपना आक्रोश प्रकट किया।[३]

---

१. पण्डित कृष्णदत्त पालीवाल से प्रत्यक्ष भेंट १८-२-१९६५ द्वारा ज्ञात ।
२. 'वीणा' - ('नवीन'-स्मृति अंक) अगस्त-सितम्बर १९६० 'नवीन' जी पर कर भी अमर हो गये' - श्री सेठ गोविन्ददास, पृ० ४९६ ।
३. 'वे जीवन-भर युद्ध करते ही रहे - अन्याय से, कुरीतियों से और जन-साधारण की कंगाली से ।' - 'नवनीत' (हिन्दी डाइजेस्ट) अक्टूबर १९६०- 'नवीन जी' वेंकटेश नारायण तिवारी, पृ० ९५ ।

परिस्थितियों से प्रभावित होकर उन्होंने क्रान्तिकारी रचनाओं द्वारा समाज का नेतृत्व किया और आर्थिक शोषण के विरुद्ध जनता को सचेत करते रहे। मानव जीवन की समस्त विकृतियाँ उनके काव्य में साकार हो उठी हैं। अपनी एक भेंट में श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने मुझे बताया - 'नवीन जी उन कलाकारों में हैं जिनके जीवन और साहित्य में तादात्म्य मिलता है। वे स्वभाव तथा व्यवहार से जो कुछ और जैसे हैं, वैसे ही अपनी रचनाओं में हैं। मूलत: वे राजनीति और समाज के कवि थे।'[१] उच्च आदर्शों से प्रेरित होकर वे मानव को अपनी प्राचीन परम्परा, सभ्यता एवं संस्कृति का स्मरण दिलाते हैं। कवि का यशस्वी एवं प्रखर रूप उनकी काव्य चेतना के राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक सूत्रों में उपलब्ध होता है। डा० सत्येन्द्र ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया - 'उनके हृदय में पर-पीर समाई थी। अपनी पीर को भी पराई पीर के सम्मुख भूल जाते थे। जब कभी वे किसी का विरोध करते थे, तो उस विरोध के पीछे भी उनका स्नेह विद्यमान रहता था। अहिंसा को वे सिद्धान्त मान कर चले हैं अपनी दुर्बलता का ढाल समझ कर नहीं।'[२] उन्होंने अपनी रचनाओं में अपने युग की समस्त दुर्बलताओं एवं सबलताओं के सहित चित्रित किया है।

तुलनात्मक निष्कर्ष :

कश्मीरी ~~एवं हिन्दी~~ काव्य की मुख्य प्रवृत्तियों तथा 'महजूर' एवं 'नवीन' की युगीन परिस्थितियों का आलोचनात्मक अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि दोनों कवियों ने क्रमश: अपनी परम्परागत-पैतृक-सम्पत्ति से अतुलनीय प्रेरणा ग्रहण की और अपनी युगीन परिस्थितियों

---

१. श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी से प्रत्यक्ष भेंट २८-७-१९६६ द्वारा ज्ञात।
२. डा० सत्येन्द्र से प्रत्यक्ष भेंट २३-७-१९६६ द्वारा ज्ञात।

से काफी प्रभावित रहे हैं । जिस समय `महजूर` कश्मीरी साहित्य क्षेत्र में अवतरित हुए, उस समय हमारा साहित्य शैशवावस्था में था । भाषा का कोई सुनिश्चित एवं परिमार्जित रूप न था, साहित्य अनुन्नत था । चौदहवीं शती पूर्व का साहित्य सुरक्षित न रह सकने के कारण नष्ट हो गया था ; उसके विषय में स्थिति भ्रमपूर्ण थी । परन्तु ठीक इसके विपरीत जिस समय 'नवीन'जी हिन्दी साहित्य में आए, उस समय हिन्दी साहित्य कश्मीरी-साहित्य की अपेक्षा काफी समृद्ध था, उन्नत था एवं विशाल था । साहित्य की विभिन्न विधाएँ स्वतंत्र रूप से विकसित हो रही थीं । उस समय हिन्दी साहित्य के तीन युग (आदिकाल तथा वीरगाथा काल, भक्तिकाल एवं रीति-काल) समाप्त हो चुके थे । श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी द्वारा साहित्य-परिमार्जन का काम पूर्ण हो चुका था और हिन्दी साहित्य में नवीन काव्य-प्रवृत्तियाँ जन्म ले रही थीं ।

`महजूर` के समय तक कश्मीरी साहित्य में गद्य का पूर्ण रूप से अभाव था । समस्त साहित्य पद्य-बद्ध था और उस पर फारसी भाषा एवं साहित्य का प्रभुत्व स्थापित हो चुका था । ठीक इसके विपरीत `नवीन` जी के समय हिन्दी में पद्य के अतिरिक्त गद्य भी विकसित हो गया था । गद्य के विभिन्न रूपों (नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, आलोचना आदि) में नवीन-कृतियों द्वारा उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही थी और महान कलाकारों द्वारा समुचित दिशा निर्देशन हो रहा था । स्वयं `नवीन` जी ने भी गद्य में कुछ रचनाएँ लिखी हैं । उनकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ, अग्रलेख, काव्य ग्रन्थों की भूमिकाएँ तथा अन्य आलोचनात्मक लेख इस क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं । `महजूर` ने भी गद्य में रचनाएँ लिखीं हैं (विशेषकर उनका साहित्य) परन्तु सब अप्रकाशित हैं अत: स्थिति अन्धकारमय है ।

कश्मीरी भाषा का लिखित रूप `महजूर` के समय इतना समृद्ध, विकसित

बहुमुखी एवं परिपक्व न था जितना कि `नवीन` जी के समय में हिन्दी भाषा का था । कश्मीरी भाषा के विषय में विद्वानों में काफी मतभेद रहा है , यह एक विवादास्पद प्रश्न है । भाषा के लिए लिपि की समस्या भी बड़ी जटिल थी । परन्तु `नवीन` जी के समय हिन्दी भाषा एवं लिपि के विषय में ऐसी स्थिति नहीं थी । इसी युग में द्विवेदी जी ने पद्य की भाषा के लिए खड़ी बोली का प्रयोग किया जिसको आगे चलकर साहित्यकारों द्वारा सफल एवं प्रशंसनीय सहयोग प्राप्त हुआ ।

दोनों भाषाओं में लोक-साहित्य अमूल्य है । विशेषकर कश्मीरी भाषा का लोक-साहित्य `महजूर` के लिए एक महान प्रेरणा स्रोत रहा है । जितनी प्रेरणा `महजूर` को लोक-साहित्य से मिली है उतनी `नवीन` जी को नहीं मिली । `नवीन` जी के काव्य में यत्र-तत्र लोक-तत्व अवश्य मिलते हैं परन्तु यह उसके प्रेरणा-स्रोत नहीं रहे हैं ।

हिन्दी के समान ही कश्मीरी साहित्य में दार्शनिक एवं आध्यात्मिक काव्य की प्रचुरता रही है । भक्तिकाल में ही लल्लेश्वरी एवं शेख नूर-उद्दीन का काव्य इस प्रवृत्ति का उज्ज्वल प्रतीक रहा है । शैव-दर्शन ने इस काव्य के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान किया है । इसके अतिरिक्त वेदान्त, सूफी सिद्धान्त एवं भक्ति-आन्दोलन ने भी इस काव्य को प्रभावित किया है । धार्मिक दृष्टिकोण की इस साहित्य में प्रधानता है और यही प्रधानता हमें हिन्दी साहित्य के `आदिकालीन-साहित्य` (अपभ्रंश साहित्य) में भी मिलती है । रहस्यवादी काव्य-क्षेत्र में शम्स फकीर, महमूद गामी एवं पण्डित नन्दराम (परमानन्द) का नाम भी विशेष उल्लेखनीय हैं । हिन्दी में जो स्थान जायसी का है वही कश्मीरी साहित्य में शम्स फकीर एवं अहमद भट्टवारी को प्राप्त है ।

हिन्दी के समान ही कश्मीरी-साहित्य में शृंगारिक काव्य का जन्म

धार्मिक काव्य की प्रतिक्रिया में हुआ है । आध्यात्मिक प्रेम का स्थान लौकिक प्रेम ने ले लिया । रानी हब्बा खातून एवं अरणिमाल इस क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं । कश्मीरी शृंगारिक काव्य में रसूल मीर का वही स्थान है जो हिन्दी में बिहारीलाल जी का है । दोनों कलाकारों ने शृंगार के सूक्ष्मातिसूक्ष्म तन्तुओं का बड़ी कुशलता से चित्रण किया है । आधुनिक युग में `महजूर` ने इस काव्य-धारा में पुनः प्राण-संचारक रस उंड़ेल दिया ।

लीला एवं भक्ति-काव्य की भी कश्मीरी साहित्य में प्रधानता रही है । तुलसी के समान ही रास-काव्य के क्षेत्र में पण्डित प्रकाशराम एवं सूर के समान ही कृष्ण-काव्य के क्षेत्र में परमानन्द उल्लेखनीय हैं । यहाँ यह बात निर्विवाद रूप से स्पष्ट करना आवश्यक है कि दोनों कवियों में तुलसी और सूर के समान कवि-चातुर्य, अभिव्यक्ति-कौशल, भाव-शबलता, एवं जन-मानस को उद्वेलित करने की शक्ति नहीं पाई जाती है तथापि उन का प्रयास अपने-अपने क्षेत्र में प्रशंसनीय है । लीलाकाव्य के क्षेत्र में श्री कृष्ण जू राज़दान तथा पण्डित लक्ष्मण जू राज़दान (बुलबुल नागामी) अष्टछाप के कवियों की याद दिलाते हैं।

चरित-काव्यों की भी एक अर्ध-विकसित परम्परा हमें कश्मीरी साहित्य में मिलती है परन्तु हिन्दी के चरित-काव्यों की तुलना में उनका मूल्य नगण्य है। वीर एवं राष्ट्रीय काव्य कश्मीरी साहित्य में आधुनिक युग की उपज है जबकि हिन्दी में प्राचीन काल से ही इस काव्य-प्रवृत्ति का विशाल साहित्य उपलब्ध होता है । कश्मीर वासियों में `एक-राष्ट्र` की कल्पना २०वीं शताब्दी में ही सजग हो उठी । राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए देश में सक्रिय आन्दोलन इसी युग में आरम्भ हुए जिन के परिणामस्वरूप यहाँ का साहित्य भी प्रभावित हुआ ।

स्वच्छन्दतावादी एवं छायावादी काव्य-प्रयोग `महजूर` के युग तक कश्मीरी भाषा में नहीं मिलते हैं । कश्मीरी भाषा के साहित्य में विविधता

तो अवश्य मिलती है परन्तु किसी भी क्षेत्र में उस समय तक ('महजूर' के समय तक) का पूर्ण साहित्य, अबाध रूप से (प्रत्येक युग का) प्राप्त नहीं होता है । मुद्रण की सुविधा प्राप्त न होने के कारण एवं जन-कवियों को शासक एवं शासितों की ओर से प्रोत्साहन तथा संरक्षण न मिलने के कारण अर्धमृत अवस्था में यह धाराएँ क्षीण रूप से प्राप्त होती हैं । इसके विपरीत 'नवीन' जी के युग तक हिन्दी का भव्य एवं विशाल साहित्य क्रमवत प्राप्त होता है । आदिकालीन साहित्य के विषय में यहाँ भी मतभेद है परन्तु कश्मीरी के समान आधुनिक युग तक साहित्य के विषय में अन्धकारमय स्थिति नहीं है ।

समसामयिक परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन करते समय हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि दोनों कवियों के साहित्य में तत्कालीन युग साकार हो उठा है । दोनों कवियों की रचनाएँ २०वीं शताब्दी की उपज हैं । दोनों कवि इसी शताब्दी में जीवन-श्वास ले रहे थे अत: अपने देश एवं युग की सम-कालीन परिस्थितियों ने अवश्य ही उनकी लेखनी एवं व्यक्तित्व पर स्थायी प्रभाव डाला होगा । दोनों का युग राजनीतिक परतंत्रता का युग था । विदेशी हमारे भाग्य के मालिक थे । कश्मीर में व्यक्ति-राज्य का बोलबाला था ।यहाँ के गाँव यम के घर से कुछ कम न थे । सामान्य जनता की दशा शोचनीय थी । ज़मींदारी प्रथा के दुष्परिणामों के फलस्वरूप जनता पीड़ित थी । शिक्षा का कोई सुप्रबन्ध न था । देश अनेक दैवी एवं मानवीय आपदाओं से ग्रस्त था । दूर से यहाँ के देशवासी भारतीय स्वातंत्र्य-युद्ध तथा यहाँ और वहाँ के शासकों की छलबल नीति को देखकर क्रुद्ध हो उठे थे । श्रमिक भूमिपतियों, महाजनों एवं ज़मींदारों के तलवे चाटने में ही अपनी कुशलता समझते थे । यह दशा न केवल कश्मीर की थी अपितु समस्त भारतवर्ष की थी । कश्मीर में 'महजूर' ने क्रान्ति का आह्वान किया और भारत में 'नवीन' जी ने ।

'नवीन' जी स्वयं राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग ले रहे थे। महात्मा गान्धी की ललकार सुनकर उन्होंने शिक्षा छोड़ दी और 'ससुराल' (जेल) का कंटकमय मार्ग अपना लिया। इस प्रकार उन्होंने आरम्भ से लेकर अन्त तक राजनीति में सक्रिय भाग लिया और मृत्यु-पर्यन्त भारत की राजनीति में विशेष रुचि लेते रहे। इसके विपरीत 'महजूर' ने राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग नहीं के बराबर लिया। वे व्यक्तिगत रूप से आन्दोलनों में बहुत कम सम्मिलित हुए परन्तु राजनीतिक आन्दोलन में एक साहित्यकार के कर्त्तव्य को भली भांति निभाया। अत: यह कहा जा सकता है कि 'नवीन' जी एक राष्ट्रीय कवि होने के साथ-साथ एक राजनीतिक नेता या कार्यकर्ता भी थे जबकि 'महजूर' केवल एक राष्ट्रीय कवि थे।

दोनों कवि राजनीतिक अस्त-व्यस्तता के कारणजीवन के अन्तिम वर्षों में बहुत निराश रहे हैं, फलत: दोनों ने दार्शनिक रचनाएँ लिखीं जिनमें उनकी व्यक्तिगत निराशा एवं विफलता अभिव्यक्त हुई है।

दोनों कवि अपने युग की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से विशेष रूप से प्रभावित हुए हैं। भारत के कृषक एवं श्रमिक तथा कश्मीर के कृषक एवं श्रमिक की उस समय समान स्थिति थी। तत्कालीन समाज का प्रतिबिम्ब दोनों की रचनाओं में दृष्टिगोचर होता है। दोनों ने सामाजिक वैषम्य के विरुद्ध लेखनी चलाई। समाज की विशृंखलित अवस्था पर दोनों क्षुब्ध हो उठे। उस समय समाज में नारी की अवस्था भी बड़ी शोचनीय थी। 'महजूर' की अपेक्षा 'नवीन' जी ने नारी की करुण गाथा अधिक विह्वलता के साथ गाई है। दोनों कवियों का समाज दो वर्गों में विभक्त था -- उत्पादक एवं भोक्ता, शोषक एवं शोषित, पीड़क एवं पीड़ित। समाज को अनेक रोगों ने जर्जरित किया था। दोनों कवि महोदय सामाजिक सुधार में नहीं अपितु सामाजिक क्रान्ति

में विश्वास रखते थे ।

धार्मिक एवं सामाजिक पराभव पर कुछ लिखने में 'महजूर' असमर्थ रहे हैं परन्तु 'नवीन' ने भारत के अनेक धार्मिक एवं सांस्कृतिक आन्दोलनों से प्रेरणा ग्रहण की है । धार्मिक संकीर्णता, असहनशीलता, वर्ण-भेद, जातिभेद, अछूत समस्या एवं पण्डितों के घृणित तथा अमानुषीय व्यवहार ने शुद्ध वैदिक-धर्म पर कठोराघात किया था । 'नवीन' इसे भली भांति परिचित थे, अत: धर्म के नाम पर जो अन्याय हो रहा था, धर्म की आड़ में देशवासियों का जो शोषण हो रहा था उसके विरुद्ध 'नवीन' जी ने अपने आक्रोश को प्रकट किया । उस सांस्कृतिक अवनति, ह्रास एवं नाश के युग में 'नवीन' नवीन आशा लेकर अवतरित हुए ।

'नवीन' जी को अपने युग के महान नेताओं का अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ । वे राष्ट्र-पिता गान्धी जी, राष्ट्र-नायक नेहरू जी, कानपुर-रत्न स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी जी तथा राष्ट्र कवि गुप्त जी एवं अन्य अनेक महानुभावों के सम्पर्क में रहे । उनसे समय समय पर उन्हें अमूल्य परामर्श मिले । इस प्रकार उनके अपरिपक्व मस्तिष्क को विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त हुईं । उन्हें श्रेष्ठ शिक्षक मिले जिन्होंने उसे जीवन में संयम करना, नेतृत्व ग्रहण करना और समय आने पर प्राणों की आहुति चढ़ाना सिखलाया । दुर्भाग्य वश यह अमूल्य शिक्षा 'महजूर' को प्राप्त नहीं हुई जिस कारण हम उनमें वह साहित्यिक श्रेष्ठता, मस्तिष्क की परिपक्वता एवं दृष्टिकोण की विशालता नहीं पाते जो 'कानपुर के शेर' में देखने को मिलती है ।

युगीन परिस्थितियों से प्रभावित होकर 'महजूर' ने एक नवीन काव्य-प्रवृत्ति को जन्म दिया । उन्होंने बदलती परिस्थितियों में पनपने का प्रयत्न किया , और जो कुछ देश और समय की मांग थी उसे पूरा किया । उन्होंने

क्षुधा पीड़ित श्रमिकों का साथ दिया एवं निरीह तथा अकिंचन कृषकों की जीवनगाथा सुनाई । वे कश्मीरी साहित्य में राष्ट्रीय (विशेष कर क्रान्तिकारी) काव्य के जन्मदाता हैं । `नवीन` जी ने अपने युग के अन्य साहित्यकारों के साथ उनके स्वर में स्वर मिलाकर भारत माँ पर अर्चना के पुष्प चढ़ाए। वे इसकाव्यधारा के जन्मदाता नहीं अपितु आगे ले जाने वाले साहसी सेवक थे ।

दोनों की कविताओं में युग की जागृति का स्पष्ट आभास मिलता है । दोनों युगीन परिस्थितियों से प्रभावित हुए , उन से प्रेरणा ग्रहण की और तत्पश्चात् अपनी काव्यवाणी द्वारा उनका मर्मस्पर्शी चित्रण किया है । दोनों महानुभावों ने नाना समस्याओं पर गूढ़ चिन्तन के पश्चात् यथार्थवादी ढंग से अपनी लेखनी चलाई । इस प्रकार दोनों कलाकारों ने अपनी रचनाओं में अपने युग को समस्त दुर्बलताओं एवं सबलताओं के साथ चित्रित किया है । `नवीन` जी जिन सामयिक परिस्थितियों से प्रभावित हुए वैसी ही परिस्थितियाँ `महजूर` के सम्मुख उपस्थित हुईं , अन्तर केवल इतना है कि एक की परिधि विस्तृत है , दूसरे की अपेक्षाकृत संकुचित ।

साहित्य-प्रकाशन के विषय में `नवीन` जी को जो सुविधाएँ प्राप्त थी (यद्यपि उन्होंने कभी उन सुविधाओं का उपयोग नहीं किया) वे `महजूर` को उपलब्ध नहीं थी, परिणामस्वरूप आज भी उनका समस्त साहित्य प्रकाशित नहीं हुआ है । `नवीन` जी अपनी मस्ती के कारण अपनी कृतियों के प्रति उपेक्षाशील रहे । `महजूर` को वे सुविधाएँ सुलभ ही नहीं थी ।

प्राचीन युग की प्रमुख काव्य-प्रवृत्तियों का समुचित ज्ञान दोनों लेखकों को था । `नवीन` जी ने उनसे `महजूर` की अपेक्षा अत्यधिक प्रेरणा ग्रहण की क्योंकि हिन्दी की प्राचीन साहित्यिक-सम्पति विशाल थी, भव्य थी एवं विविधता के कारण समृद्ध थी । इतनी श्रेष्ठ, उन्नत एवं विकसित साहित्य-

परम्परा `महजूर` को उपलब्ध नहीं हुई । उन्होंने अपने युग में कई नवीन प्रवृत्तियों को जन्म दिया ।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि `महजूर` एवं `नवीन` २०वीं शताब्दी के अमर कलाकारों में अग्रगण्य हैं जिनके साहित्य में उस युग का इतिहास छिपा है और जिन के द्वारा वह युग बोल उठा है ।

--

तृतीय अध्याय

प्रेम - काव्य

तृतीय अध्याय

प्रेम - काव्य

हमारा विवेच्य-विषय शृंगार है जिसका स्थायी भाव रति है। श्री परशुराम चतुर्वेदी के विचारानुसार 'प्रेम' शब्द का अभिप्राय साधारणत: उस मनोवृत्ति से लिया जाता है जो किसी व्यक्ति की, दूसरे के सम्बन्ध में, उसके रूप, गुण, स्वभाव, सान्निध्य आदि के कारण उत्पन्न, कोई सुखद अनुभूति सूचित करती हो तथा जिस में उस दूसरे के हित की कामना भी बनी रहती हो।[१] कश्मीरी साहित्य में प्रेम का वर्णन १६वीं शताब्दी से मिलता है।[२] १६वीं शताब्दी से आधुनिक युग तक यह काव्य-प्रवृत्ति अनेक परिवर्तनों एवं परिवर्द्धनों के साथ विकसित हुई है।

---

१. 'हिन्दी काव्यधारा में प्रेम-प्रवाह' - परशुराम चतुर्वेदी, पृ० १।

२. 'The romantic element in Kashmiri literature, and more so in poetry, was ushered in at quite a late date, i.e., in the 16th century.
'Kashmir' - Nov. 1957 (Essary - Romantic element in Kashmiri literature)
Issued by Publication Division, Ministry of Information & Broadcasting, New Delhi.

आधुनिक युग में अनेक कवियों ने प्रेमकाव्य की प्राचीन परम्परा को आगे बढ़ाया परन्तु जो कान `महजूर` की लेखनी ने किया वह एक पथ-प्रदर्शक एवं युग-नेता के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। `महजूर` का हृदय शृंगारिक भावनाओं से ओतप्रोत था। वे स्वयं एक सौन्दर्यप्रिय जीव थे। सुश्री कृष्णा कौल के अनुसार उनकी आरम्भिक कविताओं में भावना की तीव्रता और प्रेम की उद्दामता मिलती है।[१] देश के सौन्दर्य ने उनके हृदय में प्रेम की भावना को उद्दीप्त किया। उस समय अरणिमाल, रसूल मीर एवं हब्बाखातून की प्रेम रस-छलकाती गज़लें एवं गीत सम्पूर्ण घाटी में गूँज रही थीं अत: इन सब का प्रभाव उनकी आरम्भिक रचनाओं पर पड़ा। रसूलमीर का सबसे ज्यादा प्रभाव उनके प्रेम-काव्य पर पड़ा है जिसको वे स्वयं भी स्वीकार करते हैं:-

`इस `साज़े इश्क` ( शृंगार-काव्य ) के मुख से रसूलमीर ने गिलाफ उठाया था। आज वही `महजूर` के रूप में फिर से इसको छेड़ने आया है।`[२] (देखिए परि० २, क्रं० ६४)।

श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है - 'Rasul Mir has inspired many a modern poet by his ideas and thoughts. Even Mahjoor the great national poet of modern Kashmir acknowledges that the inspiration of his poetry came from Rasul Mir.[3]

---

१. `योजना` - मार्च १९६२ - `महजूर - एक अध्ययन` - सुश्री कृष्णा कौल।
२. क्र० म० नं० २ , गज़ल १३।
३. `स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन कश्मीर` - पी० एन० बज़ाज़ , पृ० २८८।

रसूलमीर से प्रेरणा ग्रहण करते हुए 'महजूर' ने एक अन्य स्थान पर कहा है :-

'हमने मीर (मीरशाह बादी या रसूलमीर) की पुरानी हाला नये प्यालों में भरदी और बेचने के लिए मधुशाला में रखली । महजूर ! तू यह हाला पीने वालों के सम्मुख रख दे ।'[१] (देखिये परिशिष्ट २, क्र०६५)

प्रेम की महानता प्रकट करते हुए 'महजूर' ने लिखा है -' मेरा प्रेम फूल से भी अत्यधिक नाजुक है और मेरे जीवन से भी अत्यधिक मूल्यवान है ।'[२] (देखिये परि० २, क्र० ६६)

प्रेमी के आवश्यक गुणों का विश्लेषण करते हुए 'महजूर' ने लिखा है - 'प्रेमी वही है जो अपना जीवन कठिनाईयों में, सुदृढ़ चित रहकर, व्यतीत करता है । उसे आग में रहकर जीना पड़ता है ।'[३] (देखिये परि० २, क्र०६७)

उनके प्रेम-वर्णन में इतनी तड़प, गहराई और दर्द (करुणा) है कि उसे पढ़कर पाठक हृदय मसोस कर रह जाता है । वह सदाप्रिय के गीत गाता रहा और उसके विरह में भी उसे एक प्रकार का सुख प्राप्त होता था । प्रेम क्षेत्र की व्यापकता स्वीकार करते हुए वे लिखते हैं :-

' प्रेम का दरबार मैंने बहुत बड़ा देखा है ।'[४]

(देखिये परि० २ , क्रमांक ६८)

---

१. कलामे महजूर ४ - गज़ल २१ ।
२. वही १० - गज़ल ६० ।
३. वही ५ - गज़ल ३० ।
४. वही ८ - गज़ल ५१ ।

यह सत्य है कि 'महजूर' के आरम्भिक प्रेम-काव्य पर उनके पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव पड़ा है।[१] परन्तु कुछ ही समय के पश्चात् उनकी गज़लों में उनका अपना रंग उभरने लगा जिसमें पुरानी रीतियों एवं नवीन प्रयोगों का सम्मिश्रण था :- " प्रेम गीतों में एक नवीन रंग लेकर महजूर की गज़लें आई हैं।"[२] (देखिये परि० २ - क्रमांक ६६) ।

'महजूर' को प्रेम पर पूर्ण विश्वास है और अनेकों कठिनाइयों को वह इस विश्वास के सहारे झेल सकता है। वह प्रेम का मतवाला है। प्रेम उसके नस-नस में समा गया है। अत: अपने अडिग विश्वास के बल पर वह कहता है -- " भवसागर के इस पार भयंकर आंधी को देखकर हमारी नैया डाँवाँडोल स्थिति में है परन्तु इसे पार ले जाने वाली मुहब्बत (प्रेम) है। प्रेम ने अपने प्रकाश से सारे संसार को ज्योतिर्मय बना दिया। प्रेम की गति बिजली की गति से भी तेज़ है।"[३] (देखिये परि० २ , क्रमांक १००)

श्री मुज़फ्फर आज़िम ने लिखा है - "'महजूर' के प्रेमी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह एक मनुष्य है। वह हमारे अनेकों अन्य कवियों की भाँति अज्ञात प्रेमी की कल्पना नहीं करता। उसने रसूल मीर की भाँति हड्डी-

---

१. "महजूर ने मुझे यह बताया कि बचपन में मकबूल शाह क्रालवारी की 'गुलरेज़' के राजकुमार अजबमलिक और नोशलव की प्रेम कहानी उन्हें रुचिकर प्रतीत हुई। फिर महमूद गामी और उनसे भी अधिक रसूलमीर की अभिव्यक्ति-कला ने उन्हें प्रभावित किया।"

-'तामीर' -'महजूर-अंक - १९५७ - 'महजूर-मेरी नज़र में' - 'पुष्प'

२. क० म० ४, गज़ल २७ ।

३. क० म० ८, गज़ल ५१ ।

'कलाम-ए-महजूर'

मास द्वारा निर्मित मनुष्य को लिया है ।"[१]

प्रेम वर्णन की जिस प्रणाली को `महजूर` ने अपनाया उसमें उसे अद्वितीय सफलता मिली है । कभी वे प्रेम-वर्णन नायिका के मुख से कराते हैं तो कभी नायक के मुख से । वे प्रेम का एक अलग संसार बसाते हैं जिसमें वे अपनी प्रिया के साथ मस्त प्रेम-रस का पान करते हैं । श्री पृथ्वीनाथ'पुष्प' ने लिखा है - " `महजूर` के आरम्भिक काव्य में एक अनोखी दुनियां बसाने की इच्छा बोल उठी है । जिसमें प्रिया एवं प्रेमी की निजी छोटी मोटी समस्याओं, विनति, प्यार मनुहार एवं उलाहनों के अतिरिक्त कोई भी समस्या नहीं ।"[२] उनका प्रेमकाव्य किसी विशेष वर्ग से सम्बन्धित नहीं अपितु सामान्य जन-समुदाय के हृदय का हार है । श्री पृथ्वीनाथ कौल बामज़ई ने लिखा है - **"In his early Poems love predominates. But it is not the love of the rich, or of the tavern: it is of the simple folk."[३] (A History of Kashmir' - P.N. Kaul Bamzai - Page 740).** अत: हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जिस शृंगारिक कविता को हब्बाखातून ने जन्म दिया , अरणिमाल ने जिसका पालन-पोषण किया, महम्मूद गामी और रसूलमीर ने जिसे विभिन्न दिशाओं की ओर अग्रसर किया उसे आधुनिक युग में `महजूर` जैसे श्रेष्ठ कवि ने अपने कला-नैपुण्य के द्वारा अमरत्व का वरदान दिया । सुविधा के लिए क्रम से `महजूर` के समस्त प्रेम-काव्य का मूल्यांकन विभिन्न बिन्दुओं से किया जाएगा । इस विषय में सर्वप्रथम संयोग-वर्णन

---

१. `तामीर` -'महजूर'-अंक - १९५७ - `महजूर का तस्सवुरि महबूब` - मुज़फर-आज़िम ।

२. `महजूर` - पृथ्वीनाथ'पुष्प', पृ० १४ ।

३. 'ए हिस्ट्रू आव कश्मीर'- पी० एन० कौल बमज़ई , पृ० ७४० ।

का अध्ययन करना संगत होगा ।

संयोग-वर्णन :

संयोग शृंगार में नायक और नायिका के प्रेम-पूर्ण विविध कार्यों - मिलन, वार्तालाप, दर्शन, स्पर्श आदि - का वर्णन होता है ।[१] 'महजूर' के प्रेम-काव्य में संयोग-वर्णन के अनेक सुन्दर उदाहरण हमें प्राप्त होते हैं । उनके काव्य में प्रेम का आदर्श सदा महान रहा है । जहाँ एक ओर उन्होंने आलम्बन का रूप-वर्णन किया है वहाँ दूसरी ओर प्रेमी और प्रेयसी के मिलन, व्यंग्यविनोद, कटाक्ष एवं हास्य, तथा अन्य अनेक प्रकार की क्रीड़ाओं का वर्णन भी किया है । प्रेम का क्षेत्र विस्तृत एवं विशाल है अत: उस विस्तृत क्षेत्र का खिलाड़ी बन कर उन्होंने खूब क्रीड़ाएँ की हैं । उन्होंने संयोग-वर्णन कभी नायक को आश्रय मानकर और कभी नायिका को आश्रय मानकर किया है । अभिसार के लिए दोनों निश्चित स्थान पर पहुँच जाते हैं । नायक अपनी हृदयेश्वरी को 'शृंगार नगरी की महारानी' घोषित करता है । वह उसके अकृत्रिम सौन्दर्य पर मुग्ध हो उठता है :-

' तुम शृंगार नगरी की महारानी हो । तुम्हारा रूप अतुलनीय है। तुम मेरे हृदय को मोहित कर रही हो । तुम्हारी बातें सुनकर हृदय मेरे वश में नहीं रहता । मैं अपना मानसिक-संतुलन (होश) खो बैठता हूँ । तुम्हारे सम्मुख बड़े-बड़े बुद्धिमान भी हाथ मलकर चले जाते हैं । तुम्हारी आँखें देखकर मुझे भ्रम हो जाता है क्योंकि 'नरगिस' का फूल भी तुम्हारी आँखें देखकर लज्जित हो जाता है ।'[२] (देखिए परि० २ , क्र० १०१-अ ।

---

१. 'काव्य प्रदीप' - पण्डित राम बहोरी शुक्ल, पृ० ६६ ।

२. क० म० २ , गज़ल १२ ।

उसने प्रेयसी को अभिसार स्थल पर दूर से आते देखा तो वह उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो गया । उसके वस्त्राभूषणों एवं श्याम रंग की अलकों की छटा अपूर्व थी । वह प्रेयसी के आगमन पर उसके हृदयाकर्षक रूप का वर्णन प्रभावोत्पादक ढंग से करता है :-

" लाल रंग के वस्त्र पहन कर सुन्दरी आ गयी और सायंकाल को छिप-छिप कर उपवन में प्रविष्ट हुई । उसके आते ही पुष्प स्तवक सुगन्धि से महक उठे । श्याम रंग के अलक अपनी अपूर्व आभा से मोहित कर रहे हैं मानो 'गुलाब' की कली के साथ 'सोम्बुल'[१] उलझ गए हैं । इन काल सर्पों ने अनेकों हृदयों को घायल कर दिया ।"[२] (देखिए परि० २, क्रं० १०१-आ)

और जब नायिका तिरछी चितवन से अपने प्रेमी को घायल करती है तो वह उसके कोमल हाथों का सहारा लेकर उसकी मधुर और विश्वसनीय बातें सुनती है । वह उसके सम्मुख अपनी दशा को इस प्रकार अभिव्यक्त करता है :-

" तुमने अपनी तिरछी नज़रों से मुझे घायल कर दिया और तुम्हें देखकर मैं अपना मानसिक संतुलन खो बैठा । तुमने अपनी भौंह कस कर मुझ पर बाण-वर्षा की । तुम्हारे हाथ इतने कोमल हैं मानो फूलों के गुलदस्ते हैं । मैंने तुम्हारी मीठी-मीठी बातें धीरे-धीरे सुनीं । मुझ जैसे रोगी के लिए तुम्हारे प्रेम-पूर्ण कथन औषधि समान हैं ।"[३] (देखिए- परि० २, क्रं० १०१-इ)

---

१. पुष्प विशेष ।

२. क० म० १, गज़ल ५ ।

३. वही वही ।

अभिसार-स्थल पर नायिका अपने प्रिय से मर्मस्पर्शी शब्दों में वहाँ तक आने का कारण समझाती है :-

"मैं यासमीन का फूल बन कर अपने हृदय के टुकड़े भेंट चढ़ाने आई हूँ।"[१] (देखिए परि० २ , क्रमांक १०२)

प्रेममयी युवती की मनोवृत्तियों का विश्लेषण 'महजूर' ने अपनी कल्पना-शक्ति के आधार पर सजीवता के साथ किया है। संकेत-स्थल पर पहुँचते ही वह उस निर्दयी को उलाहनें देने लगी क्योंकि प्रिय की निर्दयता के कारण ही आज वह मुरझाई हुई कली के समान प्रतीत होती है। फिर भी वह संतुष्ट है क्योंकि आज उसका वेध पुनः अभिसार स्थल पर दर्शन सुख से कृतार्थ कर रहा है। वह उसे करुण शब्दों में कहती है :-

"जिसके तुम वैद्य हो उसे मृत्यु का भय कैसा ? परन्तु वह रोग कभी ठीक नहीं हो सकता, मेरे प्रिय ! उस रोग की औषधि संजीवनी के रूप में मात्र तुम्हारा मुख-मण्डल है।"[२] (परि० २ , क्र० १०४)

प्रियतमा अपने प्रिय के सौन्दर्य का वर्णन करते समय उसे भौंरे की उपाधि देकर उसके चारित्रिक गुणों की ओर भी संकेत करती है। अभिसार-स्थल पर प्रिय उसके सम्मुख है। नायिका नायक के शारीरिक-संगठन पर रीझ उठती है। प्रसन्न चित्त, वह प्रिय से कहती है :-

"तुम्हारी लम्बाई फूलों के एक वृक्ष के समान है, जिस पर असंख्य

---

१. क० म० न० ५ , गज़ल ३४।

२. वही ६ , गज़ल ५६।

फूल खिले हुए हैं ।"[१] (परि० २ , क्रं० १०१-ई)

उसे पूर्ण विश्वास है कि उसका प्रिय कामदेव की तुलना में ठहर सकता है । प्राय: वह अपने प्रिय को कामदेव कह कर ही पुकारती है, क्योंकि :-

"कामदेव सजधज कर बड़ी शान से निकलेंगे, उस समय क्यों न हम अपने होश गँवा बैठें । हमारी बुद्धि जवाब देगी और हमारा हृदय हमारे वश में नहीं रहेगा ।"[२] (परि० २ , क्रं० १०१-उ)

निश्चित स्थान पर , नायिका व्याकुलता से प्रिय की प्रतीक्षा कर रही है । प्रियतम के आने पर वह प्रसन्न चित्त उसके स्वागत हेतु अपने शृंगार को अन्तिम बार देख लेती है और निकट आने पर वह प्रिय के आलिंगन पाश में बंध जाती है, पर ये कैसा प्रिय है जो अब भी हिचक रहा है :-

"मैं फूल के समान कोमल शरीर वाली अपने शरीर को सुगन्धित पदार्थों से नहलाती हूँ और भांति-भांति के आभूषणों से सजाती हूँ । प्रिय का अपार प्रेम, मेरी सहन शक्ति की सीमाएँ लांघ कर मुझे प्रिय के साथ सहवास करने पर विवश करता है । पर क्या करूँ । वह कामदेव अपने वस्त्र उतारने से हिचकिचाता है । मैं उसके साथ सोयी हूँ ।"[३] (परि० २ , क्रं० १०१-ऊ)

परस्पर वार्तालाप में वह प्रिय के सम्मुख अपना हृदय खोल कर रख देती है :-

---

१. क० म० नं० २ , गज़ल ७ ।
२. वही ३ , गज़ल १७ ।
३. वही ४ , गज़ल २२ ।

"मेरे हृदय में अब तुम्हारे प्रेम ने निवास कर लिया है। आज मुझे तुम्हारी एक चितवत भी व्याकुल बना देती है। तुम्हारी तिरछी-निगाहों ने मेरे होश-हवास हर लिए हैं। अब मैं कदापि तुम्हें भुला नहीं सकती।"[१]
(परि० २, क्रं० १०१-ए)

इस प्रकार मिलन के अवसर पर नायिका की मनोदशा का चित्रण 'महजूर' ने कलात्मक ढंग से किया है। नायिका नायक के सम्मुख अपना हृदय खोल कर रख देती है। अभिसार-स्थल पर वह कभी उसकी निर्दयता का रोना रोती है और कभी संयोग के क्षणों में उसके साथ प्रेम-भरी दो-चार बातें करती है। सखियाँ जब प्रेमी के विषय में कुछ पूछती हैं तो वह स्पष्ट कह देती है :-

"मैंने चितचोर को आज देखा है और अपने हृदय के सब दुख मैंने कह सुनाये। उसके आने से मुझे प्रसन्नता हुई है। मेरे हृदय में दुख और क्रोध लेशमात्र भी नहीं।"[२] (देखिये - परि० २, क्रमांक १०६)

जब सखियाँ उसे चिढ़ाती हैं तो अपने दृढ़ प्रेम की परीक्षा नायिका इन शब्दों द्वारा देती है :-

"मैं अपने प्रियतम के चरणों पर अपना जीवन निछावर कर दूँगी।"[३]
(परि० २, क्रमांक १०७)

---

१. क० म० न० ६, गज़ल ५५।
२. वही २, गज़ल ११।
३. वही ४, गज़ल २४।

यौवन एवं रूप के अनेक चित्र 'महजूर' ने अपने काव्य में खींचे हैं । नायिका को देखकर नायक उसके रूप, गुण, शील एवं स्वभाव की प्रशंसा करने लगता है । प्रेयसी की प्रत्येक वस्तु नायक के लिए प्रेम का आलम्बन बन जाती है । भक्ति के क्षेत्र में जिस प्रकार उपासक और उपास्य तन्मय हो जाते हैं उसी प्रकार भाव के क्षेत्र में प्रेमी और प्रेयसी एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं । प्रेयसी के प्रत्येक अंग के सौन्दर्य का वर्णन कलात्मक ढंग से 'महजूर' ने किया है :-

'उसके हाथ बड़े नाजुक हैं मानो फूलों के दस्ते हैं । मैंने उसकी मीठी मीठी बातें धीरे धीरे सुनी जिस से उसके हृदय की पीर मिट गयी । अरी सुन्दरी ! मेरे हृदय की क्या दशा हुई है, तनिक इसकी भी सुन ।'[१] (परि०२, क्रमांक १०८)

नायिका ने कुण्डल पहने हैं जिनकी छबि उसके मुख-मण्डल पर प्रतिबिम्बित होती है । वास्तव में सौन्दर्य प्रेम का उद्दीपन है । सौन्दर्य से आकर्षित नायक तरह-तरह से अपनी प्रेयसी का वर्णन करता है :-

'तुम्हारे कोमल बालों की छाया में कुण्डल चमक रहे हैं मानो सात सितारे घूम रहे हैं जिन का प्रकाश चारों ओर विकीर्ण हो रहा है । मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो काले मेघ-खण्डों के नीचे मोती के दाने चमक रहे हैं ।'[२] (परि० २ , क्रमांक १०६)

प्रसिद्ध शृंगारिक कवि रसूलमीर ने भी अपनी नायिका के रूप-यौवन का वर्णन बड़े ही कलात्मक ढंग से किया है[३] जिसका प्रभाव स्पष्ट 'महजूर'

---

१. क० म० १ , गज़ल ५ ।
२. वही २ , गज़ल १२ ।
३. 'उसके गालों पर श्रम-कण इधर-उधर ढुलकते हैं मानो गुलाब के फूल पर ओस की बूंदें चमक रही हैं या चाँद पर तारे चल रहे हैं जो कि बड़े आकर्षक प्रतीत होते हैं ।' (देखिए परि० २, क्रमांक ११०)

- कश्मीरी भाषा एवं काव्य , भाग २, पृ० २६५.

पर पड़ा । उनके प्रेमवर्णन में उनकी निजी विशेषताएँ भी परिलक्षित होती हैं । अपने पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव उन्होंने अधिक समय तक ग्रहण नहीं किया । श्री नूर मुहम्मद ने लिखा है – 'उसी समय महजूर 'प्यार के साज़ पर ताज़ा लय लेकर' प्रेम-गीत गाने लगा जिससे जनता उत्साहित हो गई ।'[१] प्रियतमा की विरह-व्याकुल दशा देख कर एवं उसकी बातें सुनकर प्रेमी उसे सान्तवना देता है कि :-

'तुम्हारी बातें सुनकर मेरा हृदय छलनी हो गया, हृदय धक धक करने लगा है और मैं अपने होश-हवास खो बैठा हूँ । बड़े-बड़े विद्वान भी ऐसी बातें सुनकर परास्त हो जाते हैं । अरी सुन्दरी ! मेरे हृदय की क्या दशा हुई है, तनिक इसकी भी सुन !'[२] (देखिये परि० २, क्रमांक १११)

प्राय: प्रेमियों का मिलन-स्थान वन, उपवन, पहाड़ो झरनों या नदी का तट होता है ।[३] नायक शीघ्र लौट आने के लिए उत्सुक है और नायिका रुकने के लिए विनती करती है – 'मेरे प्रिय ! मैं विनती करती हूँ, कुछ क्षण और ठहर जाओ क्योंकि मैं तुम्हारे प्रेम की भूखी हूँ । मैंने तुम्हें ग्राम और नगर में ढूँढा । ढूँढ़ते-ढूँढते मैं थक गई हूँ और मेरा शरीर सूख गया है । वास्तव में तुम्हारे विरह ने मेरे बाल-जीवन को नष्ट कर दिया और तुम्हारे पीछे-पीछे मेरा यौवन भी यों ही निष्प्रयोजन नष्ट हो गया ।'[४] (परि०२, क्रमांक ११२)

---

१. 'तामीर' - जून १९६२ , पृ० ४२ - 'कुछ आकर्षक काव्य-पंक्तियाँ' - नूर मुहम्मदबट ।

२. क० म० नं० २, गज़ल १२ ।

३. The meeting places of lovers are woods, gardens, andbanks of brooks'. 'Kashmir' No.v.1957 - Romantic Elements in Kashmiri Litt. P.275.

४. क० म० नं० २, गज़ल ८ ।

प्रिया अपने हृदय की दशा उस निर्दयी के सम्मुख खोल कर रख देती है । अब उसका प्रेम विरह की अग्नि में जल कर पारस बन गया है । वह पुन: प्रियतम से ठहरने के लिए आग्रह करती है --

" ओ मेरे प्रियतम ! तनिक ठहर जा और सुन मेरे प्रेम की दास्तान । मैं साफ़ साफ़ और खुले दिल से सब कुछ कहूँगी ।"[१] (देखिये परि०२,क्र०११३)

यहाँ उनके प्रेम-वर्णन पर रसूल मीर का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । 'मीरशाहबादी' के काव्य की नायिका भी नायक से कुछ क्षण ठहरने के लिए विनती करती है :-

"मेरे प्रिय ! तनिक ठहर ! मैंने तेरे ही प्यार के लिए उपवास रखे और तेरी ही इच्छा के अनुसार सोने की चूड़ियाँ बनवा कर पहनी हैं । तू रूठ कर जाता है और मैं अपनी करुण कथा सुनाना चाहती हूँ । मेरी इस कथा को ध्यानपूर्वक सुन । मैंने सुन्दर फूलों की मालाएँ भी तेरे लिए बनवाई हैं ।"[२] (देखिये परि० २, क्रमांक ११४)

'महजूर' ने जनता की रुचि को परखा था और उसी के अनुकूल कविता लिखी । यदि वे ऐसा न करते तो सम्भवत: वे इतने लोकप्रिय न होते । छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा शब्द-चित्र प्रस्तुत करने में वे सिद्धहस्त थे । डा० पद्मनाथ गुँजू ने लिखा है -- " वे छोटे-२ वाक्यों एवं सीधे साधे शब्दों द्वारा प्रेम का ऐसा सजीव वर्णन करते थे कि वातावरण गुँज उठता था ।"[३] इस कथन की

---

१. क० म० ४ , गज़ल २६ ।

२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग २ , 'आज़ाद', पृ० २६३ ।

३. 'तामीर' 'महजूर'-अंक १९५७ - 'महजूर की कविता के चन्द फनी महासिन' - डा० पद्मनाथ गुँजू , पृ० ३४ ।

पुष्टि निम्न लिखित उदाहरण से हो सकती है :-

"जब से तुम ने दर्शन दिए मेरा दिल मतवाला हो गया है।
मेरे प्रियतम ! मेरे लिए तुम जवाहिर से भी मूल्यावान हो।"[१]
(परि० २, क्रमांक ११५)

नायिका की एक मात्र इच्छा यही है कि प्रियतम उसे छोड़ कर न जाए अत: वह स्पष्ट कह देती है कि जिस प्रेम के भवन को तुमने बनाया उसे स्वयं अपनी भूल से नष्ट न कर देना।[२] वह अपनी तुलना बर्फ की एक चट्टान से करती है। जो ग्रीष्म में सूर्य के प्रखर ताप से धीरे-धीरे पिघल जाती है :-

"केवल तेरे कारण तिल तिल कर मैं बर्फ की चट्टान के समान गल गई।"[३] (देखिये परि० २, क्रमांक ११७)

प्रेम का बन्धन दिन प्रतिदिन दृढ़ होता जाता है और प्रेयसी उसका संकेत प्रेमी के सम्मुख करती है। वह उसे अपने घर आने के लिए नेवता भी देती है और स्वीकार करने के लिए मनाती भी है :-

"मेरे दिल की अन्तिम इच्छा पूर्ण होती यदि तुम मेरे घर की अटारी पर बैठ जाते। फूलों के मतवाले मेरे साजन ! मैं तुम पर निछावर हो जाती।"[४] (परि० २, क्रमांक ११८)

---

१. क० म० ७, गज़ल ४३।
२. देखिये परि० २, क्रमांक ११६ — क० म० २ - गज़ल १५।
३. क० म० ५, गज़ल ३४।
४. क० म० १, गज़ल ३।

निवेदन करते समय नायिका की प्रेम-विह्वलता उसके शब्दों द्वारा व्यक्त होती है। नायक उसके प्रति उपेक्षाशील है और वह इसे कैसे सहन कर सकती है :-

'मेरे साजन। मेरे प्रति उपेक्षाशील रहने का क्या कारण है। मैंने जब तेरे प्रेम का समाचार सुना मैं मत हो उठी और दौड़ते हुए तेरे चरण चुम्बन के लिए आ खड़ी हुई। मैं तुझे चाहती हूँ और तेरी एक दृष्टि ने मुझे घायल पक्षी की भांति पँख फड़फड़ाते छोड़ दिया है। प्रेम की अग्नि ने मेरे शरीर को भस्म कर डाला और फिर भी तू मेरे प्रति उपेक्षाशील है।'[१] (देखिये - परि० २, क्रमांक ११६)

यहाँ 'महजूर' के काव्य पर महमूद गामी का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। महमूद गामी के काव्य की नायिका अपने नायक को मनाने के लिए अनेक युक्तियों से काम लेती है और उसके छल कपट व्यवहार पर आश्चर्य प्रकट करती है :-

'मेरे साजन! क्यों तुमने मुझसे छल-कपट किया। मुझे छोड़ कर मत जाओ। मैं तो तुम्हारे प्रेम की दीवानी हूँ। - - - मुझ पर तेरी प्रीत ~~प्रतीत~~ ने न जाने क्या जादू कर दिया। मैं अपनी आँखों से अश्रु के बदले रक्त बहाती हूँ और तेरे लिए मधु-प्याले भर-भर कर सजा रही हूँ। तुम आ जाओ। मुझ से छल-कपट मत करो। मैं, 'नरगिस' के समान सुन्दरी तुम्हारी राह देख रही हूँ।'[२] (देखिये परि० २, क्रमांक १२०)

---

१. क० म० १, गज़ल २।

२. कश्मीरी साहित्य और काव्य, पृ० २५५।

'महजूर' का प्रियतम कभी-कभी प्रियतमा के इन करुण शब्दों से विह्वल हो उठता है और तत्पश्चात् उसका गुणगान करने लगता है। उसकी नायिका एक साधारण ग्राम-बाला है जिस में कृत्रिमता एवं हावभाव लेशमात्र भी नहीं और जो अपने स्वाभाविक गुणों के कारण उसे अपनी ओर खींच लेती है :-

'तेरी तुलना धनाढ्य एवं कुलीन नारियों से क्या हो सकती है। तुम्हें तो फूलों से प्यार है। वे नारियाँ अपने कुल-गर्व के कारण घर के अन्दर ही बैठकर अपना समय नष्ट कर देती हैं और तू प्रकृति के स्वच्छन्द आंगन में एक स्वच्छन्द कली के समान खिलती हुई प्रतीत होती है। अरी मेरी सजनी! किसान-बाला।'[१] (देखिये परि० २, क्रमांक १२१)

नायिका ने फूलों से अपना शृंगार किया है जिसे देखकर नायक रीझ उठता है :-

'तू ने अपने शरीर को फूलों के आभूषणों से संवारा है। जाने किस सुनार ने ये आभूषण बनाए हैं! तुम्हारे इस कला-चातुर्य पर मैं बलिहारी हो जाऊँगा।'[२] (देखिये परि० २, क्रमांक १२२)

~~तेरे इस मोहक रूप को देखकर सजनी! न जाने क्यों मैं अपना सर्वस्व खोने बैठता हूँ।~~ श्री पद्मनाथ गुँजू ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया कि -

'His love poetry and lyrics are certainly liked and appreciated because of their appeal to the heart.'[३]

---

१. क० ग्र० ३, गज़ल २० ।
२. क० ग्र० ३, गज़ल २० ।
३. ३०-५-१९६५ को एक भेंट द्वारा ज्ञात ।

नायिका के रूप-यौवन को देखकर वह अकस्मात कह उठता है :-

"तुझे देखकर मेरे होश-हवास गायब हो गए । मेरी बुद्धि मन्द पड़ गई और मैं अपना हृदय भी खो बैठा ।"[१] (देखिये परि० २, क्रमांक १२३)

विरह में जितनी तड़प, कसक और वेदना होती है संयोग में उतना ही आनन्द, रूठना-मनाना एवं विनोद-भरी क्रीड़ायें होती हैं । 'महजूर' के प्रेम-काव्य में एक विशेषता यह भी है कि कभी 'नायिका आश्रय होती है तथा नायक आलम्बन' और कभी 'नायक आश्रय होता है और नायिका आलम्बन ।' कश्मीरी साहित्य में प्रेम-काव्य की प्राचीन परम्परा को अपनाते हुए 'महजूर' ने ऐसा वर्णन किया है ।[२] अपने प्रियतम को चितचोर कह कर प्रेयसी उलाहना देते हुए कहती है :-

"मेरे चितचोर ! तुम ही मेरे हृदय के टुकड़े हो, तुम्हीं मेरे जीवन हो और तुम्हीं मेरे प्रियतम हो । तुम्हीं मेरे प्रियतम हो । तुम्हीं मेरे हृदय को चुरा कर ले जाने वाले डाकू हो । तुम्हीं मेरे पथ-प्रदर्शक हो और तुम्हीं मेरे जीवनानन्द का साधन हो ।"[३] (देखिये परि० २, क्रमांक १२४)

प्रियतम प्रवास की बात करता है तो प्रेयसी पर मानो वज्रपात होता है । वह इस दुस्सह विरह ताप को कैसे सह सकती है । इससे पूर्व भी एक बार जब नायक उसे छोड़ कर चला गया था तो बहुत समय तक आने का नाम न लिया और यों ही एक कली के समान, नायिका मुरझा गई थी :-

---

१. क० म० ३, गज़ल १७ ।

२. **Some of his love lyrics are in the traditional Kashmir form i.e. Lover is the female and male is the beloved.**

'३०-५-६५' को डा० पद्मनाथ गुंजू से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात ।

३. क० म० ११, गज़ल ७० ।

"मैंने तुम्हारे आगमन की खुशी में शृंगार किया था परन्तु तुम न आए और मेरा शृंगार यों ही व्यर्थ हुआ। मेरे मेंहन्दी से रंगे हाथ एवं मेरे हाव-भाव सब नष्ट हो गये। मेरे प्रिय! मैं तुम्हारे विरह को सहन नहीं कर सकूँगी।"[१] (परि० २, क्रमांक १२५)

नायिका अपने प्रिय के प्रेम को कभी भुला नहीं सकती है अत: अन्त में वह निष्कर्ष रूप में कहती है :-

"संक्षेप में यही कहूँगी कि मुझे केवल तुम्हारे मिलन की चाह (सदा रहती) है और कुछ नहीं।"[२] (देखिये परि० २, क्रमांक १२६)

अत: हम कह सकते हैं कि 'महजूर' के प्रेम-काव्य का संयोग-पक्ष मार्मिक एवं स्वाभाविक है। उसके द्वारा हमें शुद्ध एवं तीव्र प्रेम का आभास मिलता है। यह प्रेम-वर्णन एक भाव स्थल पर ही वासना युक्त है अन्यथा इसके द्वारा मानव-मन के उद्‌गारों की ही स्पष्ट व्यंजना हुई है। कहीं उन्होंने रूढ़ि का पालन किया है और कहीं स्वच्छन्द रूप से नवीनता को भी जन्म दिया है। स्वयं उन्हें प्रेम पर अडिग विश्वास था। प्रेम की महानता प्रकट करने के लिए उन्होंने अलौकिक पात्रों का सहारा नहीं लिया अपितु सर्व साधारण जन-समुदाय की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए उन्हीं से नायक एवं नायिका का चयन किया। उनका संयोग-वर्णन सजीव है एवं स्वाभाविक है।

वियोग-वर्णन :

'महजूर' की कविताओं में संयोग-पक्ष की अपेक्षा वियोग-पक्ष का ~~भी~~ अधिक प्रबल एवं सजीव चित्रण हुआ है। उनकी कविता में विप्रलम्भ-शृंगार

---

१. क० म० ८, गज़ल ५४।
२. क० म० ४, गज़ल २०।

का महत्व अधिक रहा है वह प्रेम के अश्रुमय स्वरूप पर अधिक रीझा है। जितने भी विरह-गीत उन्होंने लिखे हैं उनमें से अधिकांश गीतों में विरह-अग्नि से संतप्त नायिका का चित्रण मिलता है। सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है – "एक परित्यक्ता प्रेमिका ऐसे भाव प्रकट करती है कि नेत्र अश्रुओं से छल-छलाने लगते हैं। कवि नारी हृदय की मार्मिक अनुभूति को व्यक्त करते हैं कि वह विवश है, उसकी ओर प्रेमी ने कोई ध्यान नहीं दिया है, वह अपनी व्यथा प्रकट नहीं कर सकती है, क्योंकि सुनने के लिए कोई नहीं है। उसका हृदय वियोग के बाणों से विच्छिन्न है।"[१] विरह-वर्णन में प्रतीक्षा एवं अतृप्ति के कारण मार्मिकता पाई जाती है और रसानुभूति की मात्रा भी अधिक होती है। नायिका नायक की अनुपस्थिति में विलाप करती है क्योंकि उसे छोड़कर वह परदेश चला गया है :-

"मुझे बीच रास्ते में छोड़ कर तुम चले गए। मेरे हृदय को झुलसा डाला और अब मैं अपनी आप-बीती किसे सुना सकती हूं। फूलों के मतवाले साजन।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १२७)

पहले तो उस प्रियतम ने मेरे साथ अनेकों प्रण किए और अब जाल में फंसा कर चला गया। न जाने कौन सा जादू वह मुझ पर कर गए जिसका प्रभाव अब हो रहा है :-

" प्रथम मिलन के अवसर पर मेरा मन ललचा उठा था परन्तु आज मुझे दूर छोड़ कर स्वयं अकेले चले गए। मेरे साजन ! मैं तुम पर निछावर हो जाऊँगी परन्तु मेरे हृदय में एक विचित्र टीस उत्पन्न करके तुम चले गए। तुम्हारे वे प्रण

---

२. क० म० १ , गज़ल - ३।

१. 'योजना' - मार्च १९६२ - 'महजूर- एक अध्ययन'- सुश्री कृष्णा कौल, पृ०२२।

एवं आश्वासन सब झूठे थे ? पर क्या करूँ । तुम्हारी तिरछी नज़र ने मुझे मार डाला । सात साल की बालिका के हृदय को चीर कर तुम चले गए ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १२८)

प्रियतम के चले जाने से तो प्रेयसी का घर ही उजड़ गया । मोतियों की माला बड़े यत्न से उसने पिरोयी थी परन्तु धागा कोमल था, टूट गया और मोती चारों ओर बिखर गए :-

"अश्रु वर्षा करते-करते जब आँखों से रक्त की बूँदें टपकने लगीं क्योंकि अब अश्रु कहाँ से आएँगे । मेरे साजन ! मोतियों की माला से मोती अलग-अलग हो गए । तुम्हारी एक दृष्टि से अनेकों रोगी स्वस्थ हुए परन्तु जब मेरी बारी आई तो तुम इतने निर्दयी क्यों बने । यह पीड़ा का राज्य तुम्हारा है और तुम्हीं इस पीड़ा को दूर भी कर सकते हो ।"[२] (देखिये परि० २, क्रमांक १२९)

एक बार दर्शन दिखाकर फिर कई मास तक उनके दर्शन दुर्लभ हो जाते हैं । यह विचार नायिका के हृदय में आता है तो तिलमिला उठती है । क्रोध में उसे 'ज़ालिम' और 'बेवफा' तक कह देती है :-

"निर्दयी प्रियतम ! अब अधिक कठोर न बन । पुनः लौट आ । तुझे मुझ पर दया भी नहीं आती । तनिक यह भी सोच कि मैं एक नारी हूँ । कहाँ कहाँ तुझे ढूँढू । तू ही मेरा पथ-प्रदर्शक है । तेरे बिना कहाँ जाऊँगी। मुझे प्रेम का रोग है और मैं अपनी इच्छा को अन्दर ही अन्दर दबाए जा रही हूँ ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १३०)

---

१. क्र० म० १, गज़ल ४ ।

२. क० म० २, गज़ल ८ ।

३. क० म० २, गज़ल ९ ।

प्रियतम इतना कठोर-हृदयी है परन्तु प्रियतमा उसके बिना जीवित ही नहीं रह सकती । वही उसका जीवनाधार है, वही उसका खिवैया है और वही उसका साध्य है । अरे, क्यों वह रुष्ट हो कर चला गया ? यही दुख उसे प्रति-क्षण मूर्छित सा बनाये रखता है :-

' मेरे साजन ! ज़रा लौट आओ, मैं अपने हृदय में तुम्हारा निवास-स्थान बनाऊँगी । रुष्ट होने का क्या कारण है जो आज तुम मुझ से दूर हो गए हो । मिलन के कुछ दिनों में मेरी यह जीवन-फुलवारी खिल उठी थी परन्तु दुर्भाग्य मेरा पीछा कहाँ छोड़ता है । तुम्हारे जाने से इस फुलवारी के फूल मुरझा गए, ग्रीष्म शिशिर में परिवर्तित हुआ और मेरी अभिलाषाएँ पूर्ण नहीं हुईं ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १३१)

प्रेमिका अपने प्रेमी के साथ रह कर नन्दन वन के आनन्द का अनुभव करती है लेकिन उसके वियोग में वह अधखिली कली मुरझा जाती है । असमय ही उसका यौवन-कुसुम धूल में मिल जाता है । वह भ्रमर को मधुपान करने के लिए आग्रह करती है परन्तु उस आग्रह में कहीं भी किशोर-पन नहीं है । नायिका को शंका होती है कि कहीं उसकी बातों से प्रिय रुष्ट तो नहीं हुआ :-

' मुझ से दूर रह कर तुमने मुझे नष्ट कर डाला । तुम अकारण दूर भागने लगे सम्भवत: किसी ने कुछ कहा होगा परन्तु मैंने तो कुछ ऐसी बात नहीं की । मेरे हृदय के टुकड़े ! मैं तेरे लिए झोली फैलाऊँगी परन्तु तुम्हारे

---

१. क० म० ८ , गज़ल ५० ।

वियोग को सहन नहीं कर सकती हूँ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १३२)

प्रेमी की अनुपस्थिति से विरह का जन्म होता है। यही अभाव वास्तव में दुख का मूल कारण है। इस अभाव की पूर्ति के लिए नायिका अपने प्रिय के विषय में कहती है :-

'यदि वे मेरे हृदय के करुण संगीत को सुनने आते तो मैं हृदय-विधारक स्वरों में अपनी करुणा-गाथा सुनाती और अपने हृदय रूपी वाद्य-यंत्र के तार कस लेती। यदि मेरे अश्रु बहाने से उस पर कुछ प्रभाव पड़ता तो मैं दिन रात अपनी आँखों से रक्त की नदियाँ बहाती। मेरी इस विनती का उत्तर क्या देंगे ? इसके लिए मैं प्रतीक्षा में रहूँगी।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १३३)

नायिका असहाय एवं साधन रहित है परन्तु नायक पर उसकी बेबसी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अन्य नायिकाएँ उस पर व्यंग्य कसती हैं मानो उसके हृदय पर सौ-सौ प्रहार होते हैं :-

'प्रियतम का विरह मुझे रुला रहा है, आँखों से अश्रुरूपी नदियाँ बह रही हैं, दूसरों के उलाहने एवं व्यंग्य-वचन मेरे हृदय में मर्मान्तक पीड़ा उत्पन्न करते हैं फिर भी मैं तुम्हारे लिए फूलों की माला गूँथ रही हूँ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १३४)

---

१. क० म० ५, गज़ल २८।

२. क० म० ४, गज़ल २३।

३. क० म० ४, गज़ल २२।

नायिका सब कुछ सह लेती है परन्तु अन्य नायिकाओं के व्यंग्य-वचन उसके लिए असहनीय हैं उसे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेम के कारण ही वह बदनाम हो गई है :-

"मुझे तेरे प्रेम ने बदनाम कर दिया है। हमारे प्रेम की चर्चा गाँव और नगर, हर स्थान पर होती है। दूसरी ओर पर-नायिकाओं के व्यंग्य-बाणों से मेरा हृदय घायल हो गया है। फूलों के मतवाले मेरे साजन! यह स्थिति मेरे लिए असहनीय है।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १३५)

प्रसिद्ध कवयित्री हब्बाखातून ने भी अपने काव्य में इस तथ्य की ओर संकेत किया है। वहाँ नायिका अपने प्रियतम को नहीं अपितु उस सौतिन को सारा दोष देती है :-

"तुझे मेरी किस सौतिन ने भरमा लिया। मेरे प्रियतम! आज मुझ से घृणा का क्या कारण है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १३६)

सन्देह की अग्नि नायिका के हृदय में भड़क उठती है। नायिका को चारों ओर शत्रु दीख पड़ते हैं और उसके हृदय में पूर्ण-विश्वास होता है कि यह विपत्ति भी शत्रुओं ने ही दी है :-

"मेरे शत्रुओं ने तुझे क्या कह कर बहका दिया। आज तेरे हृदय में मेरे लिए कुविचार उत्पन्न हुए। आज से पहले जो मेरे शत्रु थे और तेरे अशुभचिन्तक, आज वही तेरे प्रिय मित्रों में से हैं।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक १३७)

---

१. क० न० १, गज़ल ३।
२. 'हब्बाखातून' - कलचरल अकादमी, पृ० ५४।
३. क० न० १०, गज़ल ६८।

श्री अब्दुल अहद आज़ाद ने लिखा है – " 'महजूर' की अनेक कविताओं में वेदना का इतना आधिक्य है कि पाठक की आँखों से अकस्मात आँसुओं की झड़ी लगती है और भीतर हृदय में ऐसा प्रतीत होता है मानो तीर की तेज़ नोक चुभ गयी है।"[१]

वियोग-पक्ष में वेदना की पूर्ण विवृति 'महजूर' ने दिखायी है। प्रवास का कवि ने विशेष रूप से विशद वर्णन किया है क्योंकि विप्रलम्भ का वास्तविक स्वरूप इसी पर स्थित रहता है। प्रियतम के चले जाने पर नायिका विलाप करती है और इस प्रकार उसके हृदय की मार्मिक अभिव्यंजना होती है-

"मेरे साजन ! मुझे छोड़कर क्यों चले जाते हो। आज भी कहीं यह न कहना कि मैं अपने प्रण पर अटल हूँ।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक १३८)

प्रेयसी अपने प्रियतम को खोजना चाहती है परन्तु कहाँ ? यही समस्या चिन्ता का रूप धारण करके उसके हृदय को भीतर ही भीतर खाये जा रही है। स्वर्गीय कवि वाहब-खार के शब्दों में :-

"उसे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मेरी दृष्टि भी मन्द पड़ गई। वह कहाँ गया ? किसके साथ गया और कब गया ? उस निष्ठुर ने मेरे जीवन को असफल बना दिया, मुझे बहती नदी में डाल गया।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक १३६)

कविवर 'महजूर' ने भी इसकी ओर संकेत किया है। नायिका अज्ञात पथ पर निस्सम्बल उस प्रियतम को कहाँ ढूँढ़े :-

---

१. 'कश्मीरी भाषा साहित्य एवं कविता' - भाग ३, 'आज़ाद', पृ० २३७।

२. क० म० ६, गज़ल ५६।

३. 'कश्मीरी भाषा साहित्य और कविता' - भाग २, 'आज़ाद', पृ० ४००।

"मेरे हृदय रूपी गृह को नष्ट करके तुम बिना कुछ कहे चले गए । मेरे प्रिय ! ज़रा ठहरो, कहाँ जा रहे हो । मैं तुम्हें कहाँ ढूँढूगी ? मेरे रहने का भी कोई प्रबन्ध करो ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १४०)

विरह-वर्णन की एक परिपाटी पत्र द्वारा सन्देश भेजने की भी है । 'महजूर' ने विरह-वर्णन में स्वाभाविकता पर अत्यधिक बल दिया । पत्र-व्यवहार में भी उन्होंने इसी स्वाभाविकता को ध्यान में रखा है । नायिका पत्र लिख-कर अपने जी को हल्का करती है, उसे कुछ शान्ति मिलती है । पत्रों में अपनी विरह-व्याकुल दशा, उलाहने एवं लौट-आने के लिए अनुनय-विनती की जाती है । आरम्भ में ही नायिका इस विषय पर अपने विचार यों प्रकट कर-ती है :-

"फूलों के मतवाले साजन ! मैं पत्र लिख-लिख कर तुम्हारे पास अपनी करुण गाथा पहुँचाऊँगी । मैं एक भी न सुनूँगी क्योंकि मुझे भी तुम पर कुछ अधिकार है ।"[२] (परि० २, क्रमांक १४१)

नायिका पत्र लिखती है परन्तु आँखों से अश्रु वर्षा के कारण मसि घुल जाती है । अत: अब निश्चय करती है कि रक्त से पत्र लिखूँगी । सम्भवत: उन पर कुछ प्रभाव पड़े और मेरे रोग की औषधि मुझे प्राप्त हो :-

"मेरे हृदय के टुकड़े-टुकड़े हुए हैं , मैं अपने दुखों की चर्चा किससे करूँ । काश ! वे स्वयं आते , मेरे वक्ष को चीर कर देख लेते, तब कहीं उनका रोष कम होता । पर वे आए नहीं । अत: मैंने निश्चय किया कि रक्त से लिखकर

---

१. क० म० २, ग़ज़ल १३ ।

२. क० म० १, ग़ज़ल ३ ।

मैं अपना सन्देश उन तक पहुँचाऊँगी । यह समस्या तभी हल होगी जब वे मेरी बातों की ओर ध्यान देंगे ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १४२)

नायिका का विरह-ताप भी साधारण नहीं है । नायक परदेश में बैठा है और नायिका 'गुल' और 'बुलबुल' के सहारे उसकी खोज कराना चाहती है । उसे सर्वत्र जड़ एवं चेतन प्रकृति में करुणा का आभास होता है । वह अपने विरह का प्रसार चारों ओर देखती है । उपवन में वह फूलों से भी यही विनती करती है कि प्रियतम का कुछ सन्देश तो नहीं आया है :-

'अरे पुष्प ! तुमने उस प्रियतम को कहीं देखा तो नहीं । 'बुलबुल । तुम्हीं जाकर उस प्रियतम को ढूँढ़ लेना । मैंने फूलों से विशेष कर नरगिस से पूछा था कि कहीं वह फूलों का मतवाला साजन वहाँ तो नहीं आया । वह मेरा अन्तर्यामी कहाँ गया ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १४३)

विरह-वर्णन में 'नहज़ुर' की मौलिकता दर्शनीय है । नायिका प्रेम का (पंचांग) लेकर ज्योतिष महाशय के पास पहुँची क्योंकि अब ढूँढ़ते-ढूँढ़ते वह परास्त हुई है :-

'मैंने उसे अनेकों बाज़ारों में ढूँढ़ा । अनेकों सौदागरों (व्यापारियों) से पूछा कि प्रेम का सौदा कहीं पैसों के मोल तो नहीं बिकता ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १४४)

---

१. क० म० ३, गज़ल -१७ ।

२. क० म० ७, गज़ल -४४ ।

३. क० म० ६, गज़ल -३६ ।

'वहाँ से परास्त होकर मैं घने वनों में उसे ढूँढने के लिए गई। जंगलों में ढूँढ़ा। परन्तु उस निर्दयी के दर्शन नहीं हुए। मैंने असंख्य कष्ट सहन किये। परन्तु न जाने वह कहाँ अप्सराओं के पास छिपा बैठा है।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक १४५)

अत: अन्त में नायिका पण्डित के पास पहुँच कर उनसे यह विनती करती है :-

'ज़रा प्रेम की जंत्री में यह देखिए कि मेरा साजन कब लौट रहा है। मेरे जीवन में मिलन का शुभावसर कब आ रहा है। परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य था। पण्डित से ज्योतिष-गणना में कोई चूक हुई और इस प्रकार प्रतीक्षा के पश्चात् भी वह घड़ी न आई। मेरा मतवाला साजन, किसके कहने पर रूठ गया।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १४६)

परित्यक्ता नायिका अपने पाषाण-हृदय प्रियतम के विछोह में तड़प-तड़प कर जीवन व्यतीत करती है और कवि उसकी दर्दभरी धड़कनों को करुण किन्तु मधुर गीतों में शब्दबद्ध कर देता है। समर्पण की भावना उसमें प्रबल है और प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष उसके जीवन का प्रमुख लक्ष्य बनता है। श्री मुज़फ्फर आज़िम ने लिखा है – 'अपने प्रिय की कल्पना प्रेमिका की रक्त-धमनियों में, रक्त की गति तीव्र कर देती है। उसमें संघर्ष करने की शक्ति स्वत: आती है। जीवन की कटुता का अनुभव कम होता है और उसकी शक्ति एवं साहस में वृद्धि होती है। इस प्रकार वह संघर्ष करने को तत्पर रहती है।'[३] अत: नायिका अपने उपभोग का परिचय निम्नलिखित पंक्तियों

---

१. क० म० ४, ग़ज़ल २१।
२. वही ७, ग़ज़ल ३८।
३. 'तामीर'-'महजूर'-अंक १९५७ - 'महजूर का तस्सवुर महबूबा' - मुजफ्फर आज़िम, पृ० ४१।

में देती है :-

"मैं प्रियतम को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते साधु सन्तों के पास भी पहुँच गई। देवालयों में मैंने प्रसाद चढ़ाए और मनौती मनाई। मैंने उसे ज्योतिषियों के घरों में भी ढूँढ़ा परन्तु वह न जाने कहाँ अप्सराओं के पास छिपा बैठा है।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १४७)

परास्त होकर नायिका अन्त में सोचती है :-

"क्या प्रियतम अब नहीं आएंगे ? उनके दर्शन दुर्लभ हो गए। काश! उनका रोष कम हो जाता। मेरा वक्ष प्रेम की अग्नि से जल रहा है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १४८)

कवि प्रीति को व्यवहार की वस्तु नहीं समझता। उनके काव्य में पीड़ा का साम्राज्य है। उस पीड़ा से वे स्वयं भी सन्तुष्ट हैं। पीड़ा को जीवन का सार तत्व मानने वाला 'महजूर' सदा इसी राग में मस्त रहा। मिलन की तीव्र इच्छा की पूर्ति के लिए नायिका चारों ओर प्रिय को खोजती है परन्तु सदा असफलता उसके पाँव चूम लेती है :-

"उसको ढूँढते-ढूँढ़ते मेरे पाँव भी थक गए। चढ़ती जवानी अकारण नष्ट हुई। कठोर-हृदय मेरा प्रियतम न जाने कहाँ गया। बड़ा ही निर्दयी है। परन्तु क्या करूँ। वह मेरे हृदय की शान्ति भी चुरा कर ले गया।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १४९)

---

१. क० म० ४, गज़ल २२।

२. क० म० ३, गज़ल १७।

३. क० म० ७, गज़ल ४८।

प्रिय के मार्ग को बुहारते बुहारते मेरी आँखें भी थक गईं । पाँव तो पहले ही थके हुए हैं , अब मेरी दृष्टि भी मन्द पड़ गई । इस दयनीय अवस्था में मुझे त्याग देना क्या तुम्हारे लिए शोभा दायक है ?

'प्रेम की कटार ने जिस हृदय के टुकड़े-टुकड़े कर दिए हैं उस हृदय को मिट्टी में मिला देना क्या तुम्हें उचित जान पड़ता है ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १५०)

निराश होकर नायिका किसी के द्वारा सन्देश भेजना चाहती है । सम्भवत: इस युक्ति से प्रियतम लौट कर आएँगे - यही विचार उसके हृदय में घर कर जाता है । कभी पक्षी के द्वारा सन्देश भिजवाती है तो कभी पथिक के द्वारा । प्रथम सन्देश संकेतात्मक एवं करुणा प्रधान है । सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है - " 'महजूर' के काव्य में 'बोम्बूर' (भ्रमर) और 'यम्बरज़ल' (नरगिस) विशेष रूप से आए हैं । वह प्रेमी और प्रेमिका को क्रमश: भ्रमर और पुष्प मानता है, जिस प्रकार पुष्प विकसित होता है और भ्रमर उस पर मंडराने लगते हैं, उसी प्रकार नारी के यौवन का पान करने वाला भ्रमर प्रिय ही होता है ।"[२] अपने प्रिय को भ्रमर की उपाधि देकर नायिका कहती है :-

'तुम कहीं छिप कर रह गए और मेरा शरीर विरह अग्नि से जल रहा है । हे मेरे भ्रमर! मेरा हृदय कब शान्त होगा क्योंकि अभी भी मैं तुम्हारे विरह में अश्रु-वर्षा कर रही हूँ ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १५१)

---

१. क० म० ३ , गज़ल १६ ।

२. 'योजना' - मार्च १९६२ - 'महजूर-एक अध्ययन' - सुश्री कृष्णा कौल ।

३. क० म० २ , गज़ल ७ ।

व्याकुल अवस्था में नायिका यहां तक कह देती है :-

"जाकर उनसे यह कहो कि मैं कब तक प्रतीक्षा करती रहूँगी । यह दुस्सह वेदना मुझे और कितने समय तक सहनी है । फूलों के मतवाले , मेरे साजन ! मैं सर्वत्र तुम्हें खोज चुकी हूँ । तुम वास्तव में एक मदारी हो जिसने असम्भव को सम्भव बना दिया ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १५२)

फिर भी प्रियतम न आए तो नायिका अपनी जीवन लीला समाप्त करना चाहती है परन्तु पुन: सोचती है कि मृत्यु से तो मुक्ति मिल जाएगी परन्तु प्रिय के दर्शन नहीं होंगे । उसे तो एक न एक दिन आना ही पड़ेगा - यही आशा उसके प्राणों को रोक कर रखती है । व्याकुलता, ताप और वेदना के होते हुए भी वह विनीत स्वर में नायक के प्रति निवेदन करती है:-

"विरहानल से मेरा हृदय दग्ध है और घाव भी बड़े गहरे हैं । इन घावों से अभी भी रक्त टपकता है । इसलिए मेरे प्रियतम ज़रा लौट आये । मेरी यही इच्छा है कि तेरी भुजाओं में ही मैं अपना प्राण त्याग करूँ और इस प्रकार मेरी हत्या तुझे लग जाए ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १५३)

प्रसिद्ध शृंगारिक कवि मीर शाहबादी ने भी कुछ ऐसे ही विचार व्यक्त किए हैं जिनका प्रभाव 'महजूर' पर पड़ा है ।[३] विरहिणी कवयित्री अरणि-माल ने भी अपने प्रिय के बिछोह में लिखा है :-

---

१. क० म० १, ग़ज़ल ३ ।

२. क० म० ४, ग़ज़ल २५ ।

३. "दूर से ही अपने दर्शन दिखाकर चले जाओ। मेरे प्रियतम ! मेरी विनती को स्वीकार करो । रसूल मीर तेरे द्वारपर प्रतीक्षा कर रहा है । तनिक उस पर कृपा करो ।" (देखिए परि० २, क्रमांक १५४)

- हिन्दी भाषा एवं काव्य - भाग २, पृ० २६२.

'आज़ार'

'मेरे प्रियतम ! यह मेरे भग्न हृदय की पुकार है, मैं तेरे लिए शयन-गृह को सजाकर रक्खूँगी । लाख नाम रखने वाले प्रियतम ! तुम वहीं ठहरना । मैं स्वयं दुलहन की भाँति शृंगार करके तेरी राह देखती रहूँगी । मेरे प्रियतम! तुम मेरे हृदय-उपवन को छोड़कर चले गए । यदि लौट कर आओगे तो मैं फूलों की मालाएँ पहनाऊँगी । मैं और कुछ नहीं माँगूगी । केवल तुम लौट आओ । मैं विरह में एकपल भी विश्राम नहीं कर सकती हूँ ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १५५)

'महजूर' के विरह-वर्णन की एक विशेषता यह भी है कि जहाँ प्रेयसी अपने प्रेमी की अनुपस्थिति में अपनी विरह-दग्ध भावनाओं को व्यक्त करती है जिनमें कठोर-हृदय को भी द्रवित कर देने की शक्ति रहती है, वहाँ दूसरी ओर प्रेमी भी कुछ समय के पश्चात् प्रियतमा के वियोग में दु:ख का अनुभव करता है । पश्चाताप की अग्नि उसके हृदय में भड़क उठती है और वह विचार-मग्न नायिका के विषय में सोचता है । इस प्रकार नायक का मनोविश्लेषण भी 'महजूर' ने कलात्मक ढंग से किया है :-

'किसने मेरे हृदय को दूर से ही अपनी ओर आकर्षित कर लिया । ऐसा प्रतीत होता है किसी ने उसे चुरा लिया है । काश ! मेरा हृदय वापिस लौट आता ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १५६)

प्रियतमा के बुलावे नित प्रति आते रहते हैं । नायक उनकी अवहेलना करता है परन्तु साथ ही यह भी सोचता है :-

'उससे तो मैं हर दिन कोई न कोई बहाना करता हूँ परन्तु मेरा हृदय

---

१. 'हिन्दी भाषा एवं काव्य' - भाग २ - 'आज़ाद', पृ० २४२ ।

२. क० म० ३, गज़ल १४ ।

मेरे वश में नहीं है। यह किसी की मानता ही नहीं।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक १५७)

विवश होकर प्रेमी अपनी प्रियतमा से विनीत शब्दों में प्रणय-निवेदन करता है :-

"मैं तुझे अपनी भुजाओं के झूले में झुलाऊँगा। तुम मुझ से अब और रुष्ट न रहो। तुम चाँदनी रात में पनघट पर आओ। सौन्दर्य का फंदा तुम्हारे साथ था और एक ही बार में तुमने मुझ प्रेम के मतवाले को उसमें फँसा लिया। अब मुझ से अधिक दूर न रहो।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक १५८)

नायिका के आगमन का सन्देश कहीं से नायक को मिला तो प्रफुल्लित होकर वह उसकी प्रतीक्षा करने लगा। परन्तु वह न आई और नायक की आँखों से मोती जैसे अश्रु गिरने लगे :-

"तुम्हारे मार्ग को ताकते ताकते मेरी आँखें थक गईं। मैं बहुत समय से प्रतीक्षारत हूँ और अब खून के आँसू बहा रहा हूँ। सुन्दरी ! मेरे हृदय की पुकार सुन !"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १५९)

नायिका के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए नायक कहता है :-

"तुम्हारी आँखें देखकर मनुष्य भ्रम में पड़ जाता है और नरगिस के

---

१. क० म० ६ , गज़ल ३७ ।

२. क० म० १ , गज़ल २ ।

३. क० म० २ , गज़ल १२ ।

फूल तुझे देखकर लज्जित हो जाते हैं। तुम्हारी चितवन मेरे हृदय में तीर के समान चुभ गई। इस अंधेरे में प्रकाश की एक रेखा तुम हो। मेरे प्राणों में पुनः जीवन-संचार होगा। सुन्दरी! मेरे हृदय की पुकार सुन।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १६०)

वेदना की विवृत्ति में काव्य-उक्तियाँ सदैव व्यंजना से पूर्ण रहती हैं। कहीं कहीं पर 'महजूर' ने विरह-वर्णन में उद्दीपन का प्रयोग भी किया है और कभी कभी परम्परागत लोक-कथाओं में वर्णित 'हीमाल' और 'नागराय' का सहारा लेकर भी विरह-वर्णन किया है :-

"मेरे नागराय![२] मैं हीमाल[३] तुम्हारे प्रेम में मतवाली हूँ। तुमने मुझे अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। मेरे प्रिय! मैं अब क्या कहूँ। 'आरिवल पुष्प'[४] के समान मेरा शरीर घायल हो गया है और तुम कस्तूर पक्षी के समान

---

१. क० म० २, गज़ल १२।

२. कश्मीरी लोक कथाओं में वर्णित प्रसिद्ध नायक।

३. कश्मीरी लोककथाओं में वर्णित प्रसिद्ध नायिका। स्वर्गीय वली अल्लाह मत्तू ने 'हीमाल' एक प्रसिद्ध प्रेमाख्यानक काव्य लिखा है जिस में हीमाल और नागराय के परस्पर प्रेम का विशद् वर्णन मिलता है। श्री मही-उद्दीन फाक ने अपने इतिहास में लिखा है - 'हीमान राजा बलदेव (१७०३ई०पू०) की लड़की थी जो एक राजकुमार नागीअर्जुन से प्रेम करती थी।'

- 'कश्मीर का इतिहास' भाग १, पृ० ८३ - 'फाक'

४. श्री अब्दुल अहद 'आज़ाद' ने लिखा है - 'आरिवल एक प्रकार का गुलाब होता है। इस फूल में थोड़ी पँखुड़ियाँ होती हैं। बहुत ही सुन्दर और सुगन्धमय फूल होता है। इसकी कली कश्मीर के वनों में पाई जाती है। इसमें बड़े बड़े नोंकदार कांटे होते हैं। इस फूल की एक विशेषता यह भी है कि यह हर समय काँपता हुआ प्रतीत होता है।'

- हिन्दी भाषा और काव्य, भाग ३, पृ० २३४ - 'आज़ाद'

वनों में छिपकर रह गए, मैं बर्फ की चट्टान के समान तुम्हारे विरह में धीरे-धीरे गल गई।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १६१)

विरह-वर्णन में 'महजूर' ने अनेकों शब्द-चित्र भी प्रस्तुत किए हैं। छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा पाठक के सम्मुख एक पूर्ण चित्र प्रस्तुत करना उनकी निजी विशेषता है। शब्दों का चयन यथास्थान सुन्दर रूप से किया गया है। नायिका विरह में कराह रही है :-

"वियोग को सहन करना वास्तव में अपने शरीर को आग में जलाने के समान है मेरे प्रिय ! क्या यही मेरे भाग्य में लिखा है ?"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक १६२)

दूसरे स्थान पर नायिका कहती है :-

"जब मैंने तुझे दूर से आते देखा तो मैं - स्वर्ग की अप्सरा - अवाक् रह गई। आज मैं छिप-छिप कर तेरे लिए रो रही हूँ।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक १६३)

चारों ओर से निराश होकर अन्त पर नायिका पुनः एक बार प्रियतम से विनयपूर्वक निवेदन करती है। इस निवेदन में अब व्यंग्य नहीं, अभिमान नहीं अपितु यह एक टूटे हुए हृदय की टूटी हुई पुकार है :-

"मेरे साजन ! यदि तुम यहाँ आने का कष्ट नहीं करोगे, तो ठहरो,

---

१. क० म० ५, गज़ल ३४।

२. क० म० ७, गज़ल ४३।

३. क० म० १, गज़ल २।

मैं ही स्वयं आकर तुम्हारे दर्शन की प्यास शान्त करूँगी । मेरी अब अन्तिम अभिलाषा है कि एक बार तुम्हें अपनी आँखों में समालूँ । अब मत रूठ, मेरे जीवनाधार । मैं अब विरह को सहन नहीं कर सकती । मैं अपने प्राणों की आहुति चढ़ाऊँगी परन्तु एक बार तुम दर्शन देने की कृपा मुझ पर करो ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक १६४)

स्वर्गीय महमूद गामी की काव्य-नायिका भी नायक से पुन: लौट आने के लिए विनीत शब्दों में निवेदन करती है । नायिका के हृदय में प्रिय की मूर्ति घर कर गई है और वह यद्यपि भुलाने का प्रयत्न भी करती है तथापि उसका प्रयत्न निष्फल होता है :-

"मेरे सलोने ! मैं तुझे हृदय के बीच रखूँगी क्योंकि अब मुझ से वह प्यार का बन्धन भुलाया नहीं जा सकता । मेरे शरीर में प्रेम का उफान आया है । मेरा शरीर प्रेम-अग्नि की भट्ठी बन गया है और उसी में तूने मेरे हृदय को भुन डाला । मेरा वक्ष जल गया परन्तु मैंने आह तक न भरी । तुझे किसने मुझ से अलग कर दिया । मैं तेरे प्रेम को कभी भुला नहीं सकती हूँ ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १६५)

नायिका अन्त में लाज का बन्धन भी तोड़ देना चाहती है क्यों पानी अब सरसे ऊपर पहुँच चुका है :-

"मैं यहाँ अकेली पागल हो गई हूँ । कभी-कभी भावावेग में मैं यहाँ तक सोचती हूँ कि लाज का बन्धन तोड़ कर मैं भी उस मार्ग पर चली जाऊँगी जिस पर मेरा प्रिय चला गया । मैं हरएक दुकान पर तथा प्रत्येक बाज़ार में

---

१. क० न० २, ग़ज़ल १३ ।
२. 'कश्मीर भाषा एवं काव्य' - भाग २, पृ० २५८ - 'आज़ाद'।

उसे ढूँढूँगी ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १६६)

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'महजूर' के काव्य का वियोग-पक्ष अत्यन्त प्रबल एवं प्रभावोत्पादक है । परिस्थितियों का प्रभाव भी उन्होंने ग्रहण किया है । परम्परा से भी उन्हें पथ-प्रदर्शन के हेतु कुछ विरह-काव्य मिला था और साथ ही अपनी मौलिक प्रतिभा के आधार पर उसने उसमें नवीन प्राणों का संचार किया । उनका प्रेम सांसल होते हुए भी पवित्र है । उनके विरह-वर्णन में स्वाभाविकता, सजीवता एवं मार्मिकता के गुण सर्वत्र दृष्टि-गोचर होते हैं ।

सखि-वर्णन :

प्रेम-वर्णन में सखि-वर्णन अपना विशेष स्थान रखता है । संयोग एवं वियोग में नायिका अपनी अन्तरंग सहेलियों के पास बैठ कर प्रिय के विषय में अनेक प्रकार से सोचती रहती है । संयोगावस्था में प्रिय के आगमन पर सखियाँ उसे चिढ़ाती हैं और धीरे-धीरे अभिसार-स्थल से खिसक जाती हैं । वियोग अवस्था में तो सखि ही नायिका को एकमात्र सहारा होती है । 'महजूर' के काव्य में विशेष रूप से वियोग-वर्णन में सखि का प्रसंग आता है । यद्यपि संयोग अवस्था में भी यत्र-तत्र इस प्रसंग के उदाहरण मिल सकते हैं । नायिका प्रियतम से निश्चित् समय एवं निश्चित स्थान पर मिलने के पश्चात् अपनी सखी को सब बातें सुनाती है :-

"मैंने उसे अधिक समय तक ठहरने के लिए आग्रह किया और अपनी बातें सुनाने लगी । अन्त में वे ऊब गए और कहने लगे कि तेरे उलाहनों का

---

१. क० प० २, गज़ल ११ ।

अन्त ही नहीं होता । इस प्रकार वें वहाँ से खिसक गए ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १६७)

वियोग में आरम्भ से लेकर अन्त तक विरहिणी अपनी सखी के सम्मुख कभी विलाप करती है कभी उस निर्मोही की निर्दयता का रोना रोती है और कभी अपने भाग्य पर विचार करती है । सखी के सम्मुख विरहिणी अपना हृदय खोल कर रख देती है :-

" अे सखी ! मेरा प्रियतम तो जाने कहाँ भटक रहा है और मैं अब किसे अपना सौन्दर्य दिखाऊँगी । इस सौन्दर्य का पान करने वाला वह षठ-मधुप तो कब का यहाँ से चला गया । क्या करूँ मेरा यह अर्ध प्रस्फुटित यौवन नष्ट हो गया । मैं किसे अपने यौवन का सौन्दर्य दिखाऊँगी ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १६८)

आरम्भ में नायिका यही सोचकर सन्तुष्ट होती है कि सम्भवत: दो एक दिन में वह स्वयं लौट आएगा और जब यह मात्र कल्पना ही रही तो सखी से वह अपनी मर्मान्तिक पीड़ा का वर्णन मार्मिक शब्दों में करती है जिससे उसका मन हल्का हो जाता है :-

" अे सखी ! बचपन का साथी मेरा मीत कहाँ गया । वही मेरे हृदय को शान्ति प्रदान करता था और वही आज मुझे छोड़कर चला गया । मेरे मोतियों की माला न जाने कहाँ गई । लक्ष्य तक पहुँचने से पूर्व ही निराशा का अन्धकार चारों ओर फैल गया और अब शीघ्र चलने का कोई प्रयोजन नहीं। जिस चाव से मैं जीवन व्यतीत करती थी । वह सब न जाने कहाँ विलीन हो

---

१. क० म० ५, गज़ल ३१ ।

२. क० म० ६, गज़ल ३६ ।

गया । मेरा मीत मुझे छोड़ कर कहाँ चला गया ।"[१] (देखिये परि० २,क्रमांक १६६)

मेरा मीत मुझे प्रीत का रोग भेंट देकर स्वयं नौ दो ग्यारह हो गया । निश्चय ही किसी ने मेरे विरुद्ध उनके कान भर दिए, नहीं तो अकारण चले जाने का अभिप्राय क्या है । सखी सम्मुख यह सब बातें ध्यानपूर्वक सुन रही है :-

"ए सखी । किसने मेरे मीत को बहका दिया, तब से तो मैं अचेत एवं निर्जीव पड़ी अपने भाग्य पर रो रही हूँ । अवश्य किसी ने मेरे विरुद्ध विष फैला दिया । यह सौतिन कहाँ से यहाँ आ पड़ी है ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १७०)

नायिका का सन्देह निश्चय में परिवर्तित हो जाता है । अवश्य किसी ने चिकनी-चुपड़ी बातें कह कर मेरे हृदय-स्वामी को अपनी ओर आकृष्ट किया है । किस सौतन ने इस बसन्त में मेरे लिए पतझड़ का सन्देश प्रस्तुत किया है :-

" अे सखी ! यहाँ तो विरहाग्नि का ताप अधिक है । चलो वन चलें । वहाँ इस अग्नि का ताप कुछ कम प्रतीत होगा । न जाने किस ने उसे बहका दिया । उसी के कारण आज मुझे लोगों के व्यंग्य-वचन सुनने पड़ते हैं । चलो सखी, किसी काम को आरम्भ कर लें ताकि उसी पर मेरा ध्यान केन्द्रित रहे । उस प्रियतम ने तो मुझे समूल उखाड़ कर फेंक दिया ।"[३]
(देखिए परि० २, क्रमांक १७१)

---

१. क० म० ७, गज़ल ४८ ।
२. क० म० ६, गज़ल ३५ ।
३. क० म० १, गज़ल ३ ।

विरह में उन्मत्त नायिका का चंचल मन किसी एक निश्चय पर दृढ़ नहीं रहता । 'किस डायन ने मेरे प्रेम का संसार उजाड़ दिया ?'- यही सोच उसे भीतर ही भीतर खाये जा रहा है । सखी चलने के लिए तैयार है परन्तु नायिका फिर कहती है :-

'न जाने कहाँ साजन का मन रम गया । ए सखी ! तू ही बता, पुन: वे इस नगरी में लौट कर कब आएँगे - - मैं कहीं नहीं जाऊँगी केवल उनकी प्रतीक्षा करूँगी । नरगिस के समान मैं चुरका गई जब कि वह ('हांक्ल'*) मुझे भ्रम में डाल कर चला गया । कहाँ रह गया मेरा मीत ? किसने उसे बहका दिया ? कहाँ उसका गृह द्वार है ? कब यहाँ आएगा ? वास्तव में वह किसी दूर गाँव में है । मैं उसके चरण चूम लेती, उस पर बलिहारी जाती यदि वह यहाँ से एक बार आ जाता ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १७२)

'वह छलिया मुझसे रूठ कर क्यों चला गया' - यही एक बात शूल के समान नायिका के हृदय में चुभी हुई है जिसका प्रकटीकरण वह सखी के सम्मुख करती है :-

' अे सखी! क्यों रूठ कर मेरा मतवाला मुझ से दूर चला गया । अप्सराओं के पास जाने कहाँ रह गया है । अब मैं अपने हृदय की दशा का वर्णन दूसरों के सामने क्या करूँ ! वह तो अप्सराओं के पास है ।'[२] (देखिए परि०२, क्रमांक १७३)

नायिका के मानसिक क्लेश एवं आन्तरिक व्यथा से सखी ही परिचित है । प्रिय के विरह का दु:ख उसके हृदय में घर कर गया है और सखी उसका

---

१. क० म० २, गज़ल १० ।

२. क० म० ४, गज़ल २१ ।

* आरोप लगाने वाला

ध्यान वहाँ से हटाना चाहती है परन्तु अपनी विवशता वह सखी के सम्मुख बड़े ही करुण शब्दों में प्रकट करती है :-

" ए सखी ! क्या करूँ ? मेरा भाग्य ही खोटा था । मुझे आज ऐसा भास होता है कि उन्हें मुझसे प्रीत नहीं, तभी तो आज मेरे प्रति उदासीन है, तथा मेरा तिरस्कार कर रहे हैं ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १७४)

विरहिणी अपनी सखी से विनती करती है कि जाकर उस निर्दयी को मना ला । मेरी वास्तविक स्थिति का वर्णन उसके सामने करना । उससे कहना कि केवल एक बार यहाँ आएँ तो मैं तन-मन-धन से अतिथि-सत्कार करूँगी :-

" ए सखी ! जाकर उनसे यह कहना कि एक बार सैर करते करते यहाँ आएँ । यदि विलम्ब करेंगे तो मैं प्राण-त्याग करूँगी और फिर उनका ढूँढ़ना निष्प्रयोजन होगा । जब मेरा यौवन मुरझा जाएगा तब वे सौन्दर्य-पान कहाँ करेंगे ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १७५)

सखी मौन बैठी है तो नायिका अधीर होकर उससे पूछती है कि :-

" मेरी सखी ! कब वह मेरा न्योता स्वीकार करेंगे ! मैं उनके रहने का स्थान आँखों से बनाऊँगी । मेरे आँखों रूपी गवाक्षों पर उनके रहने का प्रबन्ध बड़ा ही ऐश्वर्यशाली होगा । इस प्रकार मैं अपनी प्रबन्धकर्त्री-बुद्धि का परिचय दूँगी । मैं उनके प्रिय नाम पर बलि हो जाऊँगी ।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक १७६)

---

१. प्याम-ए-महजूर नं० ३, गीत १२ ।
२. क० म० १०, गज़ल ६३ ।
३. क० म० १०, गज़ल ६३ ।

सखी निस्तब्ध बैठी यह सुन रही है तो नायिका विलाप करने लगी :-

"ओ सखी ! मेरे सम्पूर्ण रहस्यों को जानने वाला प्रिय कहाँ गया ? मैं ने अपने हृदय की शान्ति उस दिन से खो दी । मेरा साजन कहाँ चला गया ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १७७)

यह सत्य है कि विरह से ही प्रेम का बन्धन दृढ़ होता है । यह एक परीक्षा होती है - विशेषकर विरहिणी के लिए । अग्नि परीक्षा से यह कुछ कम नहीं परन्तु हर एक चीज़ की अपनी कुछ सीमाएँ होती हैं । नायिका के विचारानुसार नायक की निर्दयता उन सीमाओं का भी उल्लंघन कर गई, परिणामस्वरूप नायिका असहनीय विपदा में फँस गई जिसका उल्लेख वह सखी के सम्मुख इस प्रकार करती है :-

"ओ सखी ! तनिक यह तो सोचो कि मैं अपने हृदय को किस ओर लगाऊँगी । मैंने उस दिन प्रिय से प्रणय-निवेदन किया था परन्तु उत्तर में उनके शब्द सुनकर मैं निरुत्साहित हो गई । निराशा मेरे इस हृदय-लोक में राज्य कर रही है । आज मेरा हृदय घायल-पक्षी की भाँति तड़प रहा है ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १७८)

इस प्रकार नायिका अपनी करुण-कहानी का सखी के सम्मुख सविस्तार वर्णन करती है । विरहिणी की हृदय-दशा एक नारी ही भली भाँति समझ सकती है । वह अपने प्रियतम को निष्ठुर एवं निर्दयी ठहराती है । वह अपने हृदय में यह बात ठान लेती है कि नायक का काम केवल धोखा देना ही है:-

---

१. क० म० ७ , ग़ज़ल ४८ ।

२. क० म० ३ , ग़ज़ल १४ ।

"अरी सखी ! मुझे बताओ ना ! क्या छल-कपट करना ही साजन का कर्तव्य बन जाता है । हम असहाय एवं अबलाओं पर छुरियाँ चलाना ही उनका व्यवसाय होता है । यह कितना अन्याय है जिसे हमें सहन करना पड़ता है ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक १७६)

सखी अनेक युक्तियों से काम लेती है और नायिका के हृदय को शान्त करना चाहती है परन्तु जो चिनगारी उस निर्मोही ने फेंकी है वह नायिका के शरीर को भस्म करके छोड़ेगी । वह निरन्तर आँसू बहाती है परन्तु अश्रुओं से हृदय की अग्नि बुझती नहीं । ऐसा प्रतीत होता है मानो वह मोतियों का व्यापार करती है और अपने अनमोल मोतियों ही बिनमोल बेच देती है । वह उस चाँद के समान अपने को वर्णित करती है जिस पर ग्रहण लगा है । भय है कि कहीं यह ग्रहण उसे निगल न जाए :-

"ए सखी ! वह मधुर-भाषी प्रियतम कब आयेगा ? जिसे देखकर मेरे हृदय की लालसा शान्त हो जायेगी । मेरे हृदय की कली खिल उठेगी । यदि प्रियतम आजाते तो चाँद के समान सुन्दरी के भाग्य का ग्रहण अपने प्रकाश की तीव्र किरणों से हर लेते । मैं अपने सारे परिवार को उन पर निछावर करती और अब उनकी प्रतीक्षा में रत रहूँगी ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १८०)

कभी-कभी सखियाँ नायिका को चिढ़ाती हैं तो व्याकुल अवस्था में वह पुकार उठती है :-

"मेरा शरीर प्यार की अग्नि से झुलस गया और हृदय रूपी काँसा सोना बन गया । परन्तु न जाने क्यों आज सखियाँ डरा रही हैं । मेरे साजन ।

---

१. 'तामीर' - 'महजूर'-अंक - १६५७ , पृ० ५० ।
२. क० म० २, गज़ल १० ।

तनिक मेरे जीवन में भी रस घोल दे, फिर ये नटखट सखियाँ स्वयं चुप रहेंगी।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १८१)

सखियों के व्यंग्य-वचन नायिका के लिए असहनीय हैं। अंत में वह रोते रोते उनके व्यंग्य एवं तानों का उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में करती है। इसमें सम्बोधन नायक के प्रति है :-

" अरे निष्ठुर ! जब से तुम पर-नायिका-विहार में रमे हो तब से मेरी सखियाँ मुझे व्यंग्य बाणों से छलनी कर रही है। केवल तेरे कारण लोग मुझ पर ताने एवं व्यंग्य कसते हैं। तुम तो चले गए पर मेरे लिए तानों एवं व्यंग्य-वाणों का भण्डार छोड़ कर चले गए।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १८२)

इस प्रकार एक ओर से साजन का विरह और दुसरी ओर सहेलियों के व्यंग्य-नायिका के लिए 'टेढ़ी-खीर' वाली समस्या बन जाती है। उसे कभी विश्वास न होता था कि सखियाँ भी विमुख हो जाएँगी, यद्यपि वे मात्र चिढ़ाने के लिए ही यह सब नाटक रचती थीं। नायिका उनकी चाल समझ नहीं सकती, अत: अपने भाग्य को कोसती रहती है:-

"भाँति-भाँति के दुख मैंने सहन किये परन्तु प्रेम का निबाह येनकेन प्रकारेण किया। मैं भी अब 'महजूर' के स्वर के साथ स्वर मिलाकर प्रियतम को पुकारूँगी। जाने क्यों वे मुझ से रूठ गए।"[३] (परि० २, क्रमांक १८३)

---

१. क० म० १, गज़ल ५६।

२. क० म० ८, गज़ल ५०।

३. प्याम-ए-महजूर ५, गीत १२।

अपने को दुख की सम्राज्ञी समझने वाली नायिका नायक की निर्दयता पर अब रोष प्रकट नहीं करती अपितु सहर्ष प्रियतम-प्रदत्त विरह को स्वीकार करती है। अब दु:ख भी सुख प्रतीत होता है क्योंकि नायिका अब उसकी अभ्यस्त है :-

"मुझे मेरे प्रिय ने दाँव पर लगा लिया परन्तु मैं उनके नाम का जप कर रही हूँ। मैं उनके लिए हाला के प्याले भर-भर रखूँगी। यौवन-मदिरा-पिलाकर उनका स्वागत करूँगी। मैं उनके नाम पर बलि हो जाऊँ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १८४)

इस प्रकार 'महजूर' के काव्य में सखि-वर्णन अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। सखि-वर्णन को अत्यधिक प्रभावोत्पादक बनाने के लिए कवि महोदय ने अपने पूर्ववर्ती कवियों के प्रभाव को ग्रहण किया और कहीं-कहीं अपनी मौलिक प्रतिभा के आधार पर इसमें नवीन उद्भावनाएँ कीं। 'महजूर' से पूर्व स्वर्गीय मुहम्मद गानी के काव्य में सखि-वर्णन विशद् रूप से हुआ है। उनकी काव्य-नायिका वियोग में अपनी सखी से कहती है :-

"अरी सखी ! मुझे उसके प्यार ने उन्मत्त बना दिया। तुम्हीं जाकर मेरी उन्मत्तावस्था का वर्णन उनके सम्मुख करो। किस सौतन ने उसे कौनसी शिक्षा दी और गुरु-दक्षिणा में उसने मेरा प्यार उसे दिया। मुझ सुन्दरी को उसने अकारण नष्ट किया। किसे कहूँ, कि वह रूठ कर क्यों गया। जलती हुई प्यार की अग्नि ने मुझे भीतर ही भीतर भस्म कर डाला। प्रेम करने में वह सिद्धहस्त न था। उसी के कारण आज मुझे दूसरों के व्यंग्य सुनने पड़ते हैं। उसकी असावधानी एवं उपेक्षा ने मुझे मार डाला। अरी सखी ! वह कब आएँगे।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक १८५)

---

१. क० म० १०, गज़ल ६३।
२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग २, 'आज़ाद', पृ० २५६।

अपने पूर्ववर्ती कवियों से प्रभाव ग्रहण करते हुए भी 'महजूर' ने उसमें एक नवीनता को जन्म दिया है। वह नवीनता जहाँ उनकी कला में निहित है वहाँ भाव-क्षेत्र में भी उन्होंने अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। अपने गम्भीर-अध्ययन एवं जीवनानुभूति के आधार पर उन्होंने सखि-वर्णन में अनेक नवीन प्रसंगों को जन्म दिया है। उनके सखी-वर्णन में कहीं भी कृत्रिमता के दर्शन नहीं होते हैं। साधारण युवती के उद्गार उसमें भरे पड़े हैं।

स्मृति-तत्व :

संयोगावस्था में प्रेमी और प्रेयसी की प्रेम-क्रीड़ाएँ, हास्य-विनोद, मान-मनुहार बड़े ही चित्ताकर्षक प्रतीत होते हैं परन्तु वियोग में उनका स्मरण नायिका के हृदय में हूक उत्पन्न कर देती है। मिलन की प्रत्येक अवस्था नायिका के लिए सुखदायक होती है परन्तु वियोग में उनका पुनः स्मरण नायिका की उन्मत्तावस्था को और बढ़ा देती है :-

" मेरी आँखों से अश्रु-वर्षा होने लगी जब उस प्रियतम की याद आई। स्वयं तो नैया में बैठकर उस पार चले गए परन्तु मेरे जीवन में भयानक बाढ़ उत्पन्न की। छलकपट के द्वारा उसने मेरे जीवन से दो आवश्यक तत्वों को छीन लिया - सहनशक्ति एवं विश्राम। किस स्थान पर उसने यह चीज़ें रखी हैं ? सम्भवतः कहीं बेच डाली हैं।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १८६)

संयोग में प्रियतम की प्रत्येक वस्तु प्रेम का आलम्बन बनती है। प्रेयसी उन्हें चूमती है और अपने वक्षा से लगाती है। परन्तु वियोग में उन वस्तुओं का स्मरण नायिका की विरह अग्नि में घृत का कार्य करता है। प्रियतम

---

१. क० म० ५, गज़ल ३०।

की वह मधुर बातें आज रह-रह कर उसे सताती हैं :-

"बचपन की बातों का स्मरण करते-करते मेरा हृदय व्यथा के सागर में डूब गया । मिलन के क्षण कितने आनन्ददायक थे परन्तु आज उनकी स्मृति मेरे हृदय में शूल के समान चुभ गई है । प्रेम की बातों पर ध्यान देते-देते आज मेरा हृदय व्यथा के सागर में डूब गया है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक-१८७)

'महजूर' ने कई सम्बोधन-गीत भी लिखे हैं जिनमें प्रिय को मिलन के क्षणों की स्मृति दिलाई गई है । आँख-मिचौनी, जल-क्रीड़ा एवं झूले की क्रीड़ा प्रेयसी के विरह को उद्दीप्त करती हैं । उसके हृदय-स्थित भावों में उथल-पुथल मच जाती है और वह नायक के प्रति निराश होकर कहने लगती है :-

"अरे निर्दयी ! मैं तुम्हें उन प्रतिज्ञाओं की स्मृति दिलाती हूँ जो कि तुमने मेरे साथ की थीं । क्या वे प्रतिज्ञाएँ थीं ? या तुम मेरे साथ कोई खेल खेल रहे थे । मैं दिन प्रतिदिन तुम्हारे विरह में क्षीण होती जाती हूँ और तुम्हारे कान पर जूँ भी नहीं रेंगती । आज यदि मेरी यह दशा है — तो यह सब तुम्हारी दया का फल है ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १८८)

मैंने तुम्हारे लिए अनेकों कष्ट सहन किए परन्तु तुम अपनी ज्ञान अन्धता में वे सब भूल गए । तुम्हारे जीवन में वह मात्र एक क्षणिक विनोद था परन्तु मेरे जीवन में उसका महत्व इससे कहीं अधिक है । नायिका उसे बीते हुए दिनों की याद दिलाती है :-

" मैंने तुम्हारे लिए अपना सम्पूर्ण जीवन नष्ट किया और तुमने

---

१. क० सं० ६, गज़ल ६० ।

२. क० सं० ११, गज़ल ६८ ।

इसकी कोई चिन्ता नहीं की । मैंने अपना वक्ष बन्दुकों और तोपों के सम्मुख किया था और तुम उस बलिदान को भूल गए ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १८६)

नायिका को सब से अधिक दुख इस बात का है कि कभी भी प्रियतम ने कोई सन्देशा नहीं भेजा है । 'मेरा हृदय उन के पास है । जाने कहाँ मिट्टी में मिला दिया । और मैं यहाँ उन के विरह में हृदय मसोस कर रह जाती हूँ ।' उसके विलाप में कितनी करुणा है :-

"मुझे तुम्हारे विरह का रोग लग गया है । इस रोग ने मुझे दिन प्रतिदिन क्षीण बना दिया और मेरा शरीर इसके ताप से झुलस गया है । परन्तु तुमने कभी भी मेरा हाल नहीं जानना चाहा । सम्भवत: तुम मेरा अस्तित्व ही भूल गए । विवश होकर मैं ही तुझे अपनी याद दिलाना चाहती हूँ ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १६०)

वह अपने मन में निश्चय करती है कि 'एक दिन अपने आँसुओं का मोल उनसे चुकाऊँगी'। अनेक बातों का एक साथ स्मरण करके वह पक्षी के द्वारा सन्देश भेजती है :-

"मैं उनकी राह देखती रहूँगी और लिख-लिख कर कौवे के द्वारा सन्देशा भेजूँगी । मधु-रस छलकता यौवन तो यों नष्ट हुआ पर इसकी याद एक दिन अवश्य उन्हें दिलाऊँगी ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १६१)

अपने सहनशील हृदय का परिचय वह निम्नलिखित पंक्तियों में देती है:-

---

१. क० म० ११, गज़ल ६८ ।

२. क० म० २, गज़ल १३ ।

३. क० म० ३, गज़ल १६ ।

"अपने प्रियतम के मधुर वचनों को मैं सावधानी से स्मरण रखती हूँ परन्तु दो अधरों पर मैंने उन बातों को कभी नहीं लाया है।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १६२)

प्रचण्ड विरह अग्नि के कारण नायिका की स्मरण शक्ति क्षीण पड़ जाती है। इस प्रकार वह कभी प्रसन्न होती है कि अब उनकी याद नहीं सतायेगी और कभी दुखित होती है क्योंकि उस समय साजन की याद ही उसे एक मात्र सम्बल दिखाई देता है। वह दुविधा में पड़ जाती है और किसी भी अन्तिम निर्णय पर पहुँचने में असमर्थ दिखाई देती है। उसकी यह असमर्थता वास्तव में नायक के बिछोह का परिणाम है। वह उसके प्रेम को भूलना चाहती है परन्तु :-

"मेरा शरीर तुम्हारे विरह में सूख कर काँटा हो गया। आँखों की दृष्टि मन्द पड़ गई, बिन बुलाए अतिथि के समान असमय में ही बुढ़ापा मेरे प्राणों के द्वार पर आ खड़ा हुआ परन्तु फिर भी तुम्हारा प्रेम मुझ से भुलाया नहीं जाता।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १६३)

प्रिय की स्मृति कभी नायिका के हृदय में मीठी कसक को जन्म देती है और कभी उसी स्मृति के सहारे वह अपने को सान्त्वना देती है। कभी स्मृति-रानी का स्वागत होता है और कभी उसे हृदय-द्वार पर ही दुतकारा जाता है। स्मृति को सजीव रखने के लिए वह नायक से विनीत शब्दों में कहती है :-

"मेरे चितचोर ! सपने में ही एक क्षण के लिए मेरे हृदय में आजाओ।

---

१. क० म० ४, गज़ल २२।

२. क० म० ६, गज़ल ५६।

मैं तभी इस विरहताप को सहन कर सकती हूँ । यदि तुम स्वप्न में ही अपनी मुख-छबि दिखाओगे तो मेरे प्राणों में नवीन स्फूर्ति का संचार होगा ।'[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक १६४)

'महजूर' के समस्त प्रेम-काव्य का अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि स्मृति-तत्व का उल्लेख उनके काव्य में सीमित रूप से हुआ है । इसका एक कारण यह भी है कि स्मृति-वर्णन की कोई विशेष परिपाटी उन्हें परम्परा से प्राप्त नहीं हुई । यह उनके मस्तिष्क की मौलिक उपज थी । अत: सराहनीय है ।

प्रकृति का आधार :

'महजूर' के प्रेम-काव्य में प्रकृति का अपना निजी महत्व है । श्री अब्दुल अहद 'आज़ाद' ने लिखा है - 'कवि अपने वातावरण से प्रभावित होता है । - - - उसके काव्य पर आसपास की वस्तुओं का प्रभाव अवश्य पड़ता है । उस देश की जलवायु, सभ्यता, संस्कृति, जन-रुचि एवं जन-स्वभाव सब कुछ उसमें वर्णित होता है । जिस प्रकार फोटो खींचते समय आसपास के वातावरण का प्रतिबिम्ब भी स्वयं चित्र में खिंच जाता है ।'[२] 'महजूर' प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में पला हुआ एक ग्राम-निवासी था । प्रकृति का अध्ययन एवं विश्लेषण करने के लिए उन्हें पर्याप्त समय मिला । प्रकृति के अकृत्रिम-सौन्दर्य ने उन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया और इस प्रकार अपने प्रेम-काव्य का शृंगार प्राकृतिक-सुषमा से किया । स्वयं वे प्राकृतिक सौन्दर्य के उपासक थे और अपनी उपास्य-देवी के प्रति उऋण होने का भरसक प्रयत्न उनकी लेखनी ने किया । सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है - 'जिस प्रकार

---

१. क० म० ७, ग़ज़ल ४६ ।
२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग ३, 'आज़ाद' , पृ० २४२ ।

अंग्रेज़ी कवि वर्ड-स्वर्थ और हिन्दी के कवि पन्त जी को कविता करने की प्रेरणा प्राकृतिक सौन्दर्य से मिली, उसी प्रकार 'महजूर' भी कश्मीर के नील-नाग और अच्छाबल के रम्य दृश्यों से आकर्षित हुए हैं। इस के काव्य में हम प्रकृति के कण-कण का स्थान पाते हैं। यही प्रकृति-प्रेम उनकी अन्तिम कविताओं में मानव-प्रेम और देश-प्रेम के रूप में परिवर्तित हुआ।[१] स्थानीय रंग उनके प्रेम-काव्य में वर्णनीय है। इस भू-स्वर्ग के सौन्दर्य को उन्होंने अपनी कविताओं में कलात्मक ढंग से चित्रित किया है।[२] उनके प्रेम काव्य में प्रकृति का उल्लेख उद्दीपन रूप में, पृष्ठभूमि के रूप में, संकेतात्मक रूप में एवं प्रतीकात्मक रूप में हुआ है। इसके अतिरिक्त स्थानीय प्राकृतिक सौन्दर्य के सहारे उनका प्रेम काव्य बड़ा ही मार्मिक बन पड़ा है। एक खिलते हुए पुष्प के साथ अपनी तुलना करते हुए उन्होंने लिखा है – 'अपने हृदय की दशा मैंने छिपा कर रखी थी परन्तु अधिक देर तक छिपा न सकी। जिस प्रकार एक फूल से उसकी गंध फूट पड़ती है उसी प्रकार मेरे प्रेमातुर हृदय से प्रेम-रस बाहर छलक पड़ा।[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १६५)

षट्-ऋतु वर्णन यद्यपि क्रमिक रूप से हमें उनके काव्य में नहीं मिलता तथापि प्रेम-वर्णन में उन्होंने कई ऋतुओं का उल्लेख किया है :-

'यदि श्रावण अपनी मोहक लीला समाप्त करके चला जाएगा और कुछ समय के पश्चात् पतझड़ का पदार्पण होगा जिसकी तेज़ वायु से फूलों की

---

१. 'योजना' - मार्च १९६२ - 'महजूर' - एक अध्ययन' - सुश्री कृष्णा कौल, पृष्ठ २३।

२. 'तामीर' - 'महजूर'-अंक - १९५७ - 'महजूर के काव्य में कुछ कलात्मक उपलब्धियां' - डा० पद्मनाथ गुंजू, पृष्ठ ३४।

३. क० म० ६, गज़ल ४०।

पंखुड़ियाँ धूल में मिल जाती हैं । परन्तु यह पतझड़ भी अधिक देर टिक नहीं सकता । यह बात भी ध्यान रखने योग्य है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक १६६)

यहाँ पर संकेत बड़ा ही हृदय-विदारक है । नायिका साजन की निर्दयता पर विवश हो कर कहती है कि रात के पश्चात् सूर्य-उदय जिस प्रकार निस्सन्देह है उसी प्रकार मेरे जीवन में पतझड़ के पश्चात् पुन: बसन्त ऋतु आएगी अर्थात् मेरा भाग्योदय होगा । नायिका के उपवन में नाना प्रकार के पुष्प खिले हैं परन्तु कोई भी पुष्प उनके प्रिय के सौन्दर्य के साथ तुलना में ठहर नहीं सकता। वह उन्हें तुच्छ कहती है और प्रिय की वरणधूलि के समान समझती है:-

"यासमीन के फूल अपनी बहार दिखा रहे हैं और नरगिस अपने कोमल अंगों पर गर्व कर रही है । दूसरी ओर मधुर भाषी बुलबुल उनके सौन्दर्य की प्रशंसा करता है परन्तु यह सब मैं अपने साजन पर निछावर करूँगी ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक १६७)

पतझड़ और बसन्त की तुलना करते हुए नायिका एक अन्य स्थान पर कहती है कि :-

"पतझड़ की तीव्र आँधी ने मेरी विवेक-बुद्धि को नष्ट मूर्च्छित कर दिया । कस्तूरी ने चहकना बन्द कर दिया मानो पतझड़ के भयानक एवं विकराल रूप को देखकर वह गूँगे हो गए । परन्तु मेरे हृदय को उल्लसित करने वाली बसन्त ऋतु कहाँ गयी ? मेरे हृदय को शान्ति देने वाला मेरा प्रिय कहाँ चला गया ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक १६८)

---

१. क० म० ६, गज़ल ४० ।

२. क० म० ७, गज़ल ४२ ।

३. क० म० ७, गज़ल ४८ ।

प्रात:कालीन समीर नायिका के लिए प्रिय का सन्देश लेकर आता है। वह मन्द गति से चल रहा है और कलियाँ अपनी डालियों को झुका कर उसका स्वागत करती हैं। यहाँ प्रकृति-चित्रण संचारीभाव के रूप में हुआ है :-

"प्रात:कालीन मन्दगामी समीर उपवन (हृदय) में प्रविष्ट हुआ और प्रेम का सन्देश कलियों को सुनाया। वायु के चलने से कलियाँ थिरकती हैं मानों उसके प्रेम-सन्देश को स्वीकार करती हैं।"[1] (देखिए परि० २, क्रमांक १६६)

यहाँ पर कवि की कल्पना बड़ी सजीव एवं मौलिक है। वायु के आगमन से जिस प्रकार कलियों में नवीन प्राणों का संचार होता है और वह खिल उठती है उसी प्रकार प्रिय का सन्देश पाकर नायिका में नवीन प्राणों का संचार होता है और वह खिल उठती है। बसंत-ऋतु में नायिका की हृदय-स्थित भावनाएँ उद्दीप्त हो उठती हैं। जड़ एवं चेतन प्रकृति में नवीन स्फूर्ति देखकर स्मृति कण्टक उसके हृदय में शूल के समान चुभ जाता है :-

"ए बसंत ऋतु ! तुम्हारे आगमन से मेरे हृदय में एक नवीन उथल-पुथल मच गई। पुरानी बातें (अभिसार के क्षण) पुन: याद आने लगीं और मेरी भावनाएँ उद्दीप्त हो उठीं।"[2] (देखिए परि० २, क्रमांक २००)

नायिका नायक को बुलबुल का रूप धारण करके उपवन में आने का निमंत्रण देती है :-

"मेरे साजन ! बुलबुल का रूप धारण करके मेरे प्रेम-उपवन में पधारो। बसन्त के जोबन का आनन्द उठाने के लिए मैं तुझे निमंत्रण देती हूँ। मेरा

---

१. क० म० ८, गज़ल ५१।

२. क० म० ८, गज़ल ४६।

हृदय प्रेम का एक उपवन है जिसमें फव्वारे एवं आबशार प्रेम जल छिड़काते हैं। यहाँ प्रेम का पक्षी वृक्षों में मधुर स्वर में तुम्हारे स्वागत के गीत गा रहा है। यहाँ की प्रत्येक वस्तु प्रेम-रस से सनी है और प्रेम पर ही बलि होती है।[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २०१)

प्रकृति के अनेकों प्रतीकों द्वारा 'महजूर' ने अपने प्रेम-काव्य में अद्भुत रस घोल दिया है। जिस प्रकार प्रकृति के सौन्दर्य में कृत्रिमता नहीं उसी प्रकार 'महजूर' का प्रेम-वर्णन भी अकृत्रिम है। प्रकृति से नाना प्रकार के प्रतीक उन्होंने अपने काव्य के लिए ढूँढ निकाले हैं। प्रकृति का प्रतीकात्मक वर्णन ही उनके प्रेम-काव्य में सबसे सबल, सजीव एवं हृदयाकर्षक है। नायिका को चाँद एवं नरगिस तथा नायक को गुलाब का फूल कह कर उन्होंने एक मोहक चित्र हमारे सामने प्रस्तुत किया है :-

'आश्वन मास के चन्द्रमा के समान मैं प्रेमाकुल हृदय लेकर तुझे ढूँढ़ने निकली परन्तु मेरा सारा शृंगार नष्ट हुआ, यौवन बीत गया। पर तुम न आए, जाने किस उपवन की शोभा बने हो, मेरे गुलाब! नरगिस के फूल मधु हाला के प्याले भर-भर कर तुम्हारे लिए सुरक्षित रखते हैं परन्तु तुम्हारे विरह में अपनी रोगी आँखों से केवल ताकते ही रहते हैं। उनकी साध कभी पूर्ण नहीं होती। मैंने तुम्हारे लिए प्रेम-पुस्तकों के पृष्ठ पढ़ डाले और उन्हें अपने वक्ष-रूपी अलमारी में सम्भाल कर रखा है।[२] (देखिए परि० २, क्र०२०२)

नरगिस के फूल ऋतुराज की शोभा बढ़ाते हैं परन्तु ऋतुराज के अन्त पर उन्हें विरह के दावानल में जलना पड़ता है। नायिका नरगिस पुष्प के साथ

---

१. क० म० ५, गज़ल ३३।

२. क० म० ६, गज़ल ३५।

अपने जीवन की तुलना करती है और प्रकृति के साथ अपनी भावनाओं का तादात्म्य । उसे नरगिस के फूल से सहानुभूति है क्योंकि दोनों की दशा समान है । इस दारुण दशा में उसे एक सखी मिलती है जो उसी के समान विरह-पीड़ित है :-

"नरगिस के समान सुन्दरी को उसने दाँव पर लगाया । मैं चकित हुई परन्तु किसी से कुछ कह न सकी । प्रात: कालीन समीर, बसन्त ऋतु एवं ओस-बिन्दुओं से मैं कुछ न कह सकी । मुझे ऋतुराज ने अपने आगमन का सन्देशवाहक बनाकर भेजा था और मैं तीव्र गति से यहाँ आ पहुँची । परन्तु स्वयं ऋतुराज भी यहाँ स्थायी नहीं । मैं आषाढ़ और श्रावण को विकराल लू में क्या करूँगी ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २०३)

प्रकृति में जब बसन्त आया तो नायिका का हृदय भी आनन्द विभोर हो उठा । उमंग और उल्लास की भावना में उसके हृदय में लहरें मारने लगी । बुलबुल को प्रिय का प्रतीक मानकर उसे अपने नन्दनवन में आने का नेवता देती है । बुलबुल का वर्णन 'महजूर' के काव्य में दो रूपों में हुआ है – सौन्दर्य का प्रेमी एवं क्रान्ति का सन्देशवाहक । सौन्दर्य-प्रेमी बुलबुल के प्रति नायिका की विनती उल्लेखनीय है :-

"मेरे बुलबुल ! तनिक यह तो देखो कि प्रात: फूलों में कौन-सी शक्ति सौन्दर्य एवं मधु संचार करती है । इन कलियों का दर्शन करने के लिए एक बार मेरे उपवन में अतिथि बन कर तो रहो । फूल किसी की प्रतीक्षा में हैं , जाने किसके लिए सारे उपवन में फूल खिल उठे हैं । कोमल डालियों पर पुष्प विनीत भाव से प्रतीक्षारत हैं । तनिक इन कलियों के दर्शन के लिए

---

१. क० म० ६, गज़ल ३७ ।

आओ ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २०४)

सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है - 'कश्मीर में 'गुलिलाल' जिसे कश्मीरी भाषा में 'गुल्लाला'* कहा जाता है, इतना लाल रंग वाला होता है, मानो उसने प्रेम की मशाल ही जलाई हो और उसी की ज्योति से आकाश में भी नई लालिमा आ गई हो ।"[२] नायिका उसी के सम्मुख करुण विलाप करती है:-

"मैं उपवन में अपने विरह-दग्ध हृदय की दशा का वर्णन 'गुलिलाल' के सम्मुख करती हूँ , यह सोच कर कि कहीं प्रियतम से कहने का समय मिलेगा या नहीं ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २०५)

नायिका नाना प्रकार के फूलों को प्रियतम के स्वागत के लिए एकत्रित करती है । फूल मुरझाने लगे पर प्रियतम कहीं दिखाई नहीं देते :-

"सोम्बुल, नरगिस, गुलाब एवं अनार के फूल मैंने एकत्रित किए हैं और उन्हें कलात्मक ढंग से सजा के रखा है । यह फूलों का फुरमुट कितना सुन्दर एवं हृदयाकर्षक है । तनिक इसको देखने के लिए तो आओ ।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक २०६)

नायक के लिए भ्रमर की उपाधि युक्ति युक्त है । भ्रमर के समान ही वह भी मधु-पान के लिए लालायित रहता है और जब पुष्प मुरझा जाता है तो षठ-भ्रमर भी उसका साथ छोड़ देता है । नायक के इस चारित्रिक गुण

---

१. क० म० ३, गज़ल १५ ।
२. 'योजना' - मार्च - 'महजूर एक अध्ययन' - सुश्री कृष्णा कौल ।
३. क० म० ५, गज़ल ३१ ।
४. क० म० ३, गज़ल १८ ।

* एक पुष्प विशेष

से नायिका भलीभाँति परिचित है, इसलिए :-

'मेरे भ्रमर ! नरगिस के समान मैं रस के प्याले भर-भर कर रक्खूँगी और तुम अतिथि के रूप में आकर मेरे हृदय की मधुशाला में हृदयरूपी मधुकलश से रसपान करते रहो । मैं तुम्हारे रहने का प्रबन्ध अपने दृगों में कर रही हूँ ।[1] (देखिए परि० २, क्रमांक २०७)

अपनी प्रसिद्ध कविता 'ग्रीसकुरि' (किसान कन्या) में उन्होंने प्रकृति का चित्रण पृष्ठभूमि के रूप में किया है । श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है – 'ग्रीस कुर' (किसान कुमारी) में उसने रोमांस के रस से ओतप्रोत शैली में कर्मठ किसान कन्या की सहज मधुरता के गति चित्र प्रस्तुत किए हैं ।[2] यह मधुरता इस कविता में प्रकृति के सौन्दर्य के मेल से सम्भव हुई है । प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में पलने वाली किसान कुमारी के अंग-भंग में सहज एवं स्वाभाविक सुन्दरता के दर्शन होते हैं । उसमें तनिक भी दुराव छिपाव नहीं यद्यपि लाज का घूंघट सदा उस पर रहता है । 'महजूर' ने इसी कृषक-बाला को अपनी काव्य-नायिका स्वीकार किया :-

'अरी किसान कुमारी ! उपवन में फूलों ने तुम्हें कौन-सा पाठ पढ़ाया । तुम शरमाती हुई उपवन में गई थी । तुम्हारे लज्जाशील स्वभाव की प्रशंसा अप्सराओं ने की । तुम्हारे शरीर पर फूलों के आभूषण बहुत शोभा पा रहे हैं । जाने किस सुनार ने बनाये हैं । उसकी कला पर बलिदान हो जाऊँ । अरी लोलरी ![3] मैंने तुझे खेतों में देखा । तुमने अपने आस्तीन

---

१. क० म० ४, ग़ज़ल २४ ।

२. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - 'पुष्प' प्रकाशक - बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद्, पटना-३, पृष्ठ २७ ।

३. लोकगीतों की नायिका ।

ऊपर चढ़ाए थे । 'लो लो' की मधुर तान तुम गुनगुना रहीं थीं । आज तेरी भुजाएँ गोड़ी करते-करते थक कर चूर तो नहीं । अरी सुन्दर किसान कुमारी !'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २०८)

वियोग-वर्णन में कविवर 'महजूर' ने प्रकृति के बड़े ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किए हैं । अपनी वेदना का प्रसार उन्होंने प्रकृति के विभिन्न दृश्यों के द्वारा दिखाया है । प्रात: कालीन ओस-बिन्दुओं के मनोहर दृश्य को देखने के लिए नायिका नायक से आग्रह करती है :-

'ओस बिन्दुओं ने तुम्हारे लिए मोतियों की माला बनाई है । मेरे प्रिय ! बड़े ही शुद्ध एवं पवित्र रूप से उन्होंने यह कार्य सम्पन्न किया है केवल तुम्हारे आने में विलम्ब है ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २०६)

नायक प्रत्येक निवेदन को ठुकराता है तो नायिका दृढ़ निश्चय करती है कि -

'मैं पूस एवं माघ मास में उनकी प्रतीक्षा करूँगी और उपवन में उन का मार्ग ताकती रहूँगी । सम्भव है पुन: मेरे उपवन में बसंत ऋतु आएगी ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २१०)

यहाँ 'महजूर' ने संकेतात्मक रूप में प्रकृति चित्रण किया है । पूस एवं माघ मास से उनका अभिप्राय वियोग की अवधि से है एवं बसंत संयोग का द्योतक है । 'चुपचाप किसी भी प्रकार से यदि एक बार साजन पधारेंगे तो मेरे मुरझाए हुए हृदय-उपवन में पुन: कलियाँ खिल उठेंगी' । क्योंकि पुरानी स्मृतियाँ

---

१. क० म० ३, गज़ल २० ।
२. क० म० ७, गज़ल ४३ ।
३. क० म० ७, गज़ल ४६ ।

आज बरबस उसके मानसपटल पर छाई हुई हैं :-

"मैंने 'पोश्तू' को अपनी फुलवारी में बिठाया और उसने अपनी सारी कथा बड़े ही आकर्षक ढंग से सनाई। मैंने उसकी बातें फूलों की पंखुड़ियों पर लिखवाई परन्तु आज मुझे छोड़कर फूलों का मतवाला साजन चला गया। जाने किसने उसे बहकाया।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २११)

निश्चित अवधि की समाप्ति पर नायक के आने की सम्भावना है तो नायिका अपनी सखी से कहती है :-

"मैंने आज उसके लिए अपने उपवन को सजा लिया है और प्रत्येक स्तवक को फूलों से भर दिया है। चमेली एवं यासमीन के फूल मैंने विशेष रूप से सुरक्षित रखे हैं। सम्भव है वह उन्हें देखने के लिए आजाए।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २१२)

और फिर मधुर-भाषी बुलबुल के चहकने से नायिका के हृदय में आशा का एक नवीन अंकुर फूट पड़ता है :-

"बुलबुल मस्त होकर गा रहा है। चैत का मास समाप्त हुआ और बसन्त के शुभागमन पर बुलबुल एवं मन्दगामी समीर स्वागत के लिए मीठी तान छेड़ रहे हैं। सम्भवत: प्रिय आगमन की सम्भावना है।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक २१३)

---

१. क० म० ६, गज़ल ३८।

२. क० म० ३, गज़ल १७।

३. क० म० ६, गज़ल ४०।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि 'महजूर' के प्रेम काव्य में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है । प्रकृति के प्रति 'महजूर' के संकेत भावपूर्ण एवं रोचक हैं । उसकी सूक्ष्म-पर्यवेक्षण शक्ति इस कार्य में सहायक सिद्ध हुई है । प्रकृति के अधिक सन्निकट रहने के कारण 'महजूर' ने अपनी काव्य-नायिका की विरह-दशा की व्यंजना के लिए उसका उपयोग किया है । उन्होंने प्रकृति के साथ अपनी अभिन्नता स्थापित की थी । आसपास के पहाड़, कल-कल करती नदियाँ, हिम से आच्छादित पर्वत-शृंग - अर्थात् गाँव का सम्पूर्ण वातावरण नायिका को प्रिय है । 'महजूर' के प्रकृति वर्णन पर जहाँ परम्परा का स्पष्ट प्रभाव दिखलाई देता है वहाँ उन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा एवं कल्पना शक्ति के आधार पर अनेकों नवीन उद्भावनाएँ की हैं ।

प्रेम-काव्य पर स्थानीय प्रभाव :

प्रेम-वर्णन में मस्त 'महजूर' अपनी नायिका और नायक को कश्मीर के चप्पे-चप्पे में घुमाता है । यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य-स्थलों का वर्णन उन्होंने प्रेम-काव्य के प्रसंग में बड़ी सजीवता के साथ किया है । डा० पद्मनाथ गुंजू ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया - 'उनके प्रेम-काव्य में यहाँ के प्राकृतिक दृश्य विशेष कर पृष्ठभूमि के रूप में वर्णित हैं । उन्होंने इस भू-स्वर्ग के सौन्दर्य का सजीव चित्रण अपनी लेखनी के द्वारा किया है ।'[१] नायिका सेलानी प्रिय को कश्मीर के प्रसिद्ध स्वास्थ्यप्रद स्थानों पर ले जाना चाहती है :-

'अपने सेलानी प्रिय को मैं डूँगे[२] में सैर के लिए ले जाऊँगी । अछिबल

---

१. डा० पद्मनाथ गुंजू से प्रत्यक्ष भेंट (२८-१२-१९६५) ।

२. 'डूँगा' कश्मीर में एक नौका को कहा जाता है जिसमें यहाँ के लोग प्राय: घूमने के लिए जाते हैं ।

मैं प्रेम-रस के प्याले भर-भर कर रखूँगी और अपना शीष उनके चरणों में अर्पण करूँगी । फिर मैं उन्हें यूसमर्ग ले जाऊँगी और वहाँ सुन्दर उपत्यका में घुमाऊँगी । यूसमर्ग से हम नीलनाग चले जाएँगे जहाँ मैं `गिलि`[१] पक्षी की मीठी तान सुनाऊँगी । निशात और अहरबल के फूलने वह तब भूल जाएगा जब मैं अपनी आँखों से निरन्तर अश्रुओं की झड़ी बहाऊँगी । इसके अतिरिक्त मेरे पास और कुछ नहीं जिस पर मैं गर्व करूँ । मैं अपने प्रियतम के चरणों पर अपना शीष नवाऊँगी ।`[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २१४)

श्री अब्दुल अहद `आज़ाद` ने लिखा है – `उनके काव्य पर स्थानीय रंग खूब चढ़ा हुआ है जो कि अतुल्य है ।`[३] उनकी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

`सिंध नदी के किनारे-किनारे मैं बाँसुरी बजाने का प्रबन्ध कराऊँगी और फिर नैया लेकर मानसबल में प्रतीक्षा करूँगी । वहाँ मैं उस षठ साजन को झूठी प्रतिज्ञाओं की याद दिलाऊँगी । आरिगाम में पहाड़ी नदियों के किनारे ठंडी वायु में चिनारों के नीचे उसकी प्रतीक्षा करूँगी और जब वह आयेगा तो मैं चमेली के फूलों से उसके बैठने का स्थान सजाऊँगी ।`[४] (देखिए परि० २, क्रमांक २१५)

श्री मुज़फ्फर आज़िम ने लिखा है – `वह अपने प्रिय को निशात और शालिमार में ढूँढ़ता है । वह जब सुनता है कि उसका नीत डल की सैर

---

१. `गिलि` यहाँ जंगलों में एक पक्षी विशेष होता है ।

२. क० म० ६, गज़ल ५८ ।

३. कश्मीरी भाषा एवं काव्य - `आज़ाद` - भाग ३, पृ० २४२ ।

४. क० म० ६, गज़ल ५८ ।

करने जा रहा है तो स्वयं जल में कँवल का रूप धारण करके उसके दर्शन के लिए प्रतीक्षा रत रहता है । प्रेम के यह सजीव-चित्र 'महजूर' के काव्य के आभूषण हैं ।[१] साजन झील डल की सैर करने जा रहा है तो :-

"मैंने सुना कि साजन डल की सैर को जा रहे हैं और रात तेलबल[२] में रहेंगे । अत: दर्शन की भूखी मैं कँवल का रूप धारण करके जल में रहूँगी ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २१६)

पर्वत प्रदेश कश्मीर के प्राकृत सौन्दर्य के प्रति कवि में अगाध प्रेम था और वह विरहिणी नायिका को प्रिय के दर्शनार्थ हर स्थान पर पहुँचाता है । स्वयं 'महजूर' ने कश्मीर का प्रत्येक स्थान देखा था और यहाँ के सौन्दर्य ने उसे मोहित किया था । उनका प्रत्येक प्रेम-वर्णन यहाँ के प्राकृतिक-सौन्दर्य के कारण चित्रात्मक बन पड़ा है । निशात और शालिमार[४] का वर्णन प्रमुख रूप से उन्होंने अपने प्रेम-काव्य में किया है ।

"मेरे साजन ! डल सैर का आनन्द लेने कभी तो आओ साथ ही निशात बाग एवं शालिमार भी देखते जाना । मैं अपने दृग-सरोवरों को तुम्हारे लिए तैयार रखूँगी , तुम नौका में बैठकर अवश्य आना ।"[५] (देखिए परि० २, क्रमांक २१७)

---

१. 'तामीर' - 'महजूर'-अंक - पृ० ३६ - 'महजूर' का तस्सवुर महबूब मुज़फ्फर-आज़िम ।

२. झील डल के किनारे एक गाँव, हज़रत बल से तीन मील दूर है ।

३. क० न० ३, गज़ल २३ ।

४. मुगल-राज्यों द्वारा निर्मित झील डल के किनारे दो प्रसिद्ध उपवन ।

५. क० न० ३, गज़ल १५ ।

प्रियतम के वियोग में नायिका निशात, शालिमार, फील डल, जहर-बल, संगरवानि, नागिबल, मांसबल, तेलबल, फील-आंवार, अछबल एवं कुटि-हार आदि स्थानों पर उसे ढूँढने का प्रयत्न करती है और अन्त में निराश होकर विलाप करने लगती है :-

'मुझसे छल करके वह निर्मोही चला गया। मैं परीमहल[१] में उन्हें ढूँढूँगी। न जाने कहाँ बैठा है। बड़े डल में, तेलबल में या निशात बाग में। मैं रो रही हूँ क्योंकि मेरा मीत मुझे छोड़ कर सीमाओं की ओर चला गया। सम्भवत: प्रंग, दरंग, ब्रंग या कुटिहार[२] में मनमोजी बैठा होगा।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २१८)

प्रात:काल नव-स्फूर्ति का सन्देश लेकर आता है। ऊषा की लाली अपने साथ आशा की किरणों को विकीर्ण करती है। अरुणोदय के समय जब प्रियतम न आए और नायिका का सारा दिन यों ही निष्फल व्यतीत हुआ तो वह कहने लगती है :-

'सम्भवत: मेरा प्रिय अपने अन्य अनेक मित्रों के साथ शालमार बाग में मौज उड़ा रहा होगा और अपना रंग-रूप आबशारों एवं हरी मखमली घास को दिखा रहा होगा।'[४] (देखिए परि० २, क्रमांक २१६)

अत: फूलों से नायिका विनयपूर्वक कहती है कि :-

---

१. 'परीमहल' फील डल के किनारे प्राचीन खण्डहर है।

२. यह सब विभिन्न ग्रामों के नाम हैं जो कि कश्मीर घाटी में स्थित हैं।

३. क० न० १, गज़ल १।

४. क० न० ६, गज़ल ३६।

" ओ नरगिस के फूल ! क्या मेरा प्रिय तुम्हारे पास है । तुमने उसे यहाँ आते तो नहीं देखा ? और बुलबुल ! तुम मेरे चितचोर को ढूँढ़ निकालो । कहीं वह जादूगर तुम्हारे पास तो नहीं आया ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक २२०)

प्रकृति में मिलन की अवस्था देखकर नायिका की हृदय स्थित अभिलाषा जाग उठती है और प्रिय-दर्शन के लिए लालायित उसके दोनों नेत्र अद्भुत व्यापार करने लगते हैं :-

"आज डल-सरोवर का सौन्दर्य खिल उठा है क्योंकि चारों ओर कँवल के फूल अपनी आभा एवं सुगन्धि फैला रहे हैं । मैं भी ठियारि में नौका लेकर प्रतीक्षा रत रहूँगी । तुम गुपकार में दर्शन तो देते जाओ ।"[२] (देखिए परि २, क्रमांक २२१)

'महजूर' के सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति-चित्रण का विश्लेषण करना मेरा विषय नहीं अपितु प्रेम-काव्य में उन्होंने प्रकृति का सहयोग किस प्रकार प्राप्त किया एवं उनके काव्य में स्थानीय प्रभाव कहाँ तक मिलता है - यही देखने का प्रयत्न मैंने किया है । 'महजूर' की दृष्टि प्रत्येक रम्य-स्थल तक पहुँची है और अपने प्रकृत-स्वभाव के कारण उसमें सजीवता भी पाई जाती है । उनके प्रणय-गीतों में यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य ने एक अद्भुत रस घोल दिया है । श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है — " उनकी कविताओं में यह स्थानीय रंग बहुत शीघ्र निखरता गया ।"[३]

---

१. क० म० ७ , गज़ल ४४ ।

२. क० म० ६ , गज़ल ५७ ।

३. 'महजूर' - कलचरल अकादमी श्रीनगर द्वारा प्रकाशित - 'पुष्प', पृ०१४ ।

संकेतात्मकता :

कविवर 'महजूर' के काव्य में संकेतों का अपना एक विशिष्ट स्थान है । कश्मीरी काव्य में परम्परा से प्रचलित संकेतों को उन्होंनेअपनाया तथा निजी बहुमुखी प्रतिभा द्वारा उन संकेतों में कलात्मक सौन्दर्य का अद्भुत सम्मिश्रण किया । समयानुकूल एवं परिस्थिति अनुकूल कवि ने अनेक नवीन संकेतों एवं प्रतीकों को ग्रहण किया और कहीं रूढ़ संकेतों को नवीन अर्थ में ग्रहण किया। बुलबुल जहाँ प्रेमकाव्य में प्रेम का सन्देशवाहक है वहाँ राष्ट्रीय काव्य में स्वतन्त्रता का । प्रेम काव्य में इन संकेतों का प्रयोग कवि ने अधिकतर उद्दीपन के लिए किया है । भौंरा (भ्रमर) , नरगिस, हीमाल, नाग्रिराय, कली, मधुप, यूसुफ, जुलेखाँ, बुलबुल, बसंत, पतझड़ आदि अनेक जड़ एवं चेतन वस्तुओं के द्वारा उन्होंने अपने संकेतात्मक-प्रेम-वर्णन में अद्भुत रस घोल दिया । हीमाल और नाग्रिराय की प्रेम कथा का वर्णन कश्मीरी लोक-साहित्य में विशेष रूप से हुआ है । इस प्रेम-कथा के संकेत द्वारा नायिका अपनी विरह व्याकुल दशा का वर्णन करती है :-

" अपने प्रिय नाग्रिराय को ढूँढने के लिए अर्धरात्री के समय घर से निकल पड़ी । फूलों के गतवाले साजन ! मैं प्रिय विछोह रूपी भँवर में फँस गई हूँ ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २२२)

विरहिणी आशा का संबल लिए प्रतीक्षा रत केवल इतना चाहती है :-

" मेरा नाग्रिराय आकर अपनी हीमाल को देखकर मेरी दर्शन-पिपासा शान्त कर देता ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २२३)

---

१. क० स० १, गज़ल ३ ।

२. क० स० ३, गज़ल १६ ।

प्रेम-वर्णन में 'महजूर' ने नरगिस एवं भ्रमर का विशेष रूप से उल्लेख किया है। भ्रमर की धूर्तता पर नायिका चकित मन विलाप करती है। उस धूर्त ने एक बार रसपान करके चला गया परन्तु पुनः लौट कर नहीं आया। पतझड़ से भयभीत होकर सम्भवतः उसने प्रेम का मात्र प्रदर्शन किया। अब बसन्त ऋतु के आगमन पर मैं तो खिल उठी परन्तु उस निर्दयी की निर्दयता तो देखिये:-

"मेरे प्रिय भ्रमर! मैं नरगिस तेरे दर्शन के लिए आतुर मन प्रतीक्षारत हूँ। जिस दिन से मैं खिल उठी उसी दिन से तेरी बाट जोहती हूँ। मेरी पंखुड़ियाँ नेत्र बनकर प्रिय मार्ग की ओर एकटक, देख रही हैं। अब मैं अपने को अधिक समय तक संयमित नहीं रख सकती।"[१] (देखिए परि०२, क्रं० २२४)

'महजूर' ने प्रेम-काव्य में अनेक नवीन प्रतीक एवं संकेत ग्रहण किये हैं जिनके द्वारा उनकी मौलिक प्रतिभा का परिचय मिलता है। विरह व्याकुल नायिका का कथन कितना मर्मस्पर्शी है :-

"अरे आकाश! स्वयं तो मेघों का पट ओढ़ कर छिप गए और मैं विरह अग्नि के कारण बिजली के समान जल उठी। तनिक ठहर तो जाओ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २२५)

तुम तो योगी बन गए और मैं यह सोच कर अपने हृदय को सान्तवना दे रही हूँ कि पुनः तेरे पुनीत दर्शन हो जाएँगे। यदि ऐसा न हुआ तो:-

"अरे योगी! मैं भी तेरे लिए संन्यास ग्रहण करूँगी। तुम्हारा योग तो छल-कपट पर आधारित है परन्तु मेरा संन्यास निष्कपट है। मुझे तेरी

---

१. क० म० २, गज़ल ७।

२. क० म० २, गज़ल १३।

चाह ने भीतर से घुला घुला कर मार डाला । फूलों के मतवाले साजन ! क्या अब तुझे फूलों से भी वैर है ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक २२६)

"तुमने योग धारण किया - इसका मुझे अवश्य खेद है परन्तु अपने जीवन उपवन को नष्ट भ्रष्ट देखकर मुझे अत्यधिक क्लेश पहुँचता है :-

"तुमने एक प्रेमी के रूप में मेरी प्रेम-वाटिका में पदार्पण किया । परन्तु कुछ ही समय के पश्चात् वाटिका को नष्ट-भ्रष्ट करके चले गए । वाटिका का यौवन-निखार तुमने तो देख लिया परन्तु पतझड़ का पीलापन मुझे देखना पड़ा । मैं चमेली की कली के समान अपनी यौवन सुगन्धि चारों ओर बिखेर रही थी । परन्तु आज प्रेम-अग्नि ने मुझे भस्म कर डाला । तेरे वियोग के असहनीय एवं अविश्वसनीय कुसमाचार ने मेरे भाग्य को पलट दिया । मेरी जीवन कली आज शुष्क पड़ गई है । मुझे जीवन की अन्तिम सीमा तक पहुँचा कर आज तुम भाग गए ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २२७)

सम्बोधन-गीतों में भी 'महजूर' ने अनेक संकेतों को अपनाया है । नायिका बुलबुल से विनती करती है :-

"इस वाटिका में भाँति-भाँति के फूल खिल उठे हैं । अरे बुलबुल ! इन पुष्पों का दर्शन करने के लिए अतिथिस्वरूप कुछ क्षण तो आओ । मेरी इस रंगीन वाटिका में पुष्पों ने अपना सम्मेलन बुलाया है । तनिक तुम भी कुछ समय के लिए आ जाओ ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २२८)

विरहिणी की दशा इस समय एक पंखहीन पक्षि के समान है ।

---

१. क० म० १ , गज़ल ३ ।
२. क० म० १ , गज़ल ४ ।
३. क० म० ३ , गज़ल १८ ।

निस्सहाय, भ्रान्त एवं लक्ष्यहीन :-

"जीवन-वाटिका में मेरे दोनों पंख काट कर वह दुखदायक (सित्मगर) तो चला गया और मेरी दशा उस पक्षी के समान है जो अनेक कष्टों के कारण जर्जरित जीवन-निर्वाह करने पर विवश हो।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक २२६)

पतंगा दीपक से प्यार करता है। वह अपना अस्तित्व मिटा देता है और अपने प्रिय के साथ एक हो जाता है। प्रणय की इससे बड़ी परीक्षा क्या हो सकती है ? विरहिणी का संतप्त मन प्रिय से ऐसी ही प्रणय-परीक्षा की सम्भावना रखता है। वह इस का स्पष्ट उल्लेख नहीं, अपितु मात्र संकेत करती है :-

"पतंगे को अग्नि-परीक्षा का आदेश तुम्ही से प्राप्त हुआ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २३०)

नायिका जीवन-आहुति देने पर तैयार है परन्तु एक प्रश्न विचारणीय है, जिसकी ओर संकेत बड़ा मार्मिक एवं प्रभावोत्पादक है :-

"मैंने तेरे विरह में असंख्य अश्रु बहाये और पुष्पों ने अपनी पंखुड़ियों को उसी जल से रंगीन बनाया। यदि मैं अपने प्राणों की आहुति चढ़ाऊँगी तो तुम अपने वस्त्रों को किस जल से रंग दोगे।"[३] (देखिए परि० २ , क्रमांक २३१)

कितनी कोमल कल्पना है। नायिका प्रसन्न चित एवं प्रसन्नमुख अपने

---

१. क० म० ५ , गज़ल ३१ ।
२. क० म० ६ , गज़ल ६१ ।
३. क० म० ४ , गज़ल २५ ।

प्राणों की आहुति चढ़ाएगी परन्तु उसका परिणाम नायक के लिए हानि-कारक होगा। वियोग की दारुण अग्नि से उसका शरीर जल गया। पतझड़ में प्रकृति भी दग्ध-नायिका के समान प्रतीत होती है। परन्तु बसन्त की वायु उसमें नवीन जीवन-संचार करती है। अत: नायिका बसंत की जीवन-दायिनी बयार से रुष्ट है :-

"मैं बसंत की वायु से इस कारण रुष्ट हूँ कि उसके आगमन पर जहाँ फील डल में भी हरियाली छा गई वहाँ उसने मेरे जीवन में पुन: हरियाली लाने के लिए कोई उपाय नहीं सोचा। मैं नतमस्तक उसे विनीत भाव में अपने प्रश्न का उत्तर पूछूँगी।"[१]

कश्मीरी काव्य पर फारसी प्रतीकात्मक एवं संकेतात्मक काव्य का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। 'महजूर' ने इस प्रभाव को बहुत कम ग्रहण किया। वे जन-कवि थे और साधारण जन समूह की हृदय स्थित भावनाओं को काव्य-मय वाणी देना ही उनका परम कर्तव्य था। निस्सन्देह उन्होंने पूर्ववर्ती कवियों द्वारा प्रयुक्त संकेतों को ग्रहण किया परन्तु कहीं भी वे केवल अनुकरण मात्र प्रतीत नहीं होते उनमें कुछ न कुछ नवीनता अवश्य है। हीर-राँझा-नागिराय के समान ही कश्मीरी साहित्य में युसुफ जुलेखाँ की प्रेमकथा भी प्रसिद्ध है। 'महजूर' ने इस कथा को पृष्ठभूमि में लाकर सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है:-

"मैं जुलेखाँ मार्ग में चुपचाप बैठी कठिन घड़ियाँ गिन रही हूँ। मेरा जीवनसाथी यूसुफ कहीं से आ जाता। पुन: एक बार मिलन होने पर यौवन मेरे जर्जरित शरीर में लहरें मारने लगता।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक २३३)

---

१. क० म० ६ , गज़ल ५८ ।

२. क० म० २ , गज़ल ६ ।

मधुमक्षी मधु-संचय में सदा रत रहती है । भाँति-भाँति के फूलों से वह मधु-रस एकत्रित करती है । नायिका साजन को निमंत्रण देती है और स्वयं मधुमक्षी के समान साजन के लिए नाना वस्तुओं को एकत्रित करती है:-

"मैं मधु-मक्षी के समान चारों ओर घूमघामकर मधु संचित कर लाई हूँ । तुम मेरे निमंत्रण को स्वीकार तो करो । मैं तुम्हारे अतिथि-सत्कार में किसी भाँति कमी आने नहीं दूँगी ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २३४)

यहाँ मधु से अभिप्राय नाना प्रकार की अप्राप्य वस्तुओं एवं व्यंजनों से है । निमंत्रण को ठुकरा कर वास्तव में उस निर्मोही ने विरहिणी को छलनी कर दिया । वह असहाय विलाप करने लगती है :-

"यदि साजन क्रोध एवं रोष को त्याग कर मेरे निमंत्रण को स्वीकार करते तो मैं वैसे ही खिल उठती जैसे सावन में चमेली की कली । मेरे प्राणों में पुन: यौवन का आगमन होता और जीवन में नवीन स्फूर्ति ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २३५)

पर-नायिका विहार में नव नायक के प्रति नायिका की उक्ति वेदना-मय है एवं संकेतात्मक भी :-

"मेरे साजन ! तुम जुगनुओं की अस्थिर आभा पर आकर्षित होकर अपने पाँव पर स्वयं कुल्हाड़ी मारते हो । जुगनू की क्षीण आभा दीपक की लौ के सम्मुख कहाँ ठहर सकती है । तुम्हारा मस्तिष्क तो परिपक्व है, तुम्हें दीपक के साथ प्यार का निर्वाह करना चाहिए ।"[३] (देखिए परि० २ , क्रमांक २३६)

---

१. क० म० १, गज़ल ६ ।
२. क० म० ४, गज़ल २३ ।
३. क० म० १, गज़ल ५७ ।

संकेतात्मक प्रेम-वर्णन में निशात बाग का भी महत्वपूर्ण स्थान है। नायिका साजन को निशात बाग का एक सुन्दर पुष्प कहकर उसके प्रत्येक अंग के अकथनीय सौन्दर्य की प्रशंसा करती है :-

'अरे निशात बाग के पुष्प ! तुम इठलाते हुए आओ। तुम्हारी पंखुड़ियों का प्रस्फुटित होना ही वास्तव में तुम्हारी मुसकान है। और जब तुम हंसते हो तो ऐसा प्रतीत होता है मानो मोती झड़ रहे हैं। इसी मुद्रा में तुम मेरे पास आओ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २३७)

'तुम्हारे लिए प्रतीक्षा रत केवल मैं अकेली नहीं हूँ अपितु :-

'वाटिका के अन्य पुष्प स्तबक तेरी प्रतीक्षा में हैं। नरगिस के फूल अपने मधु-कलश हाथों में लिए तेरे स्वागतार्थ खड़े हैं। तुम कब आओगे? कहीं यह साज सज्जा यों ही निष्फल न हो जाए।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २३८)

प्रोफेसर मुहम्मद यूसुफ ने लिखा है – 'महजूर की आत्मा एवं उसके दृग हर समय सौन्दर्य की टोह में लगे रहते हैं।'[३] संकेतों के द्वारा वे सौन्दर्याभिव्यक्ति में विशेष रूप से सफल हुए हैं। उनका प्रेम समाज की ऊंच-नीच की सीमाओं में सीमित नहीं है। वे उस भेद को मिटाना चाहते थे। उनके प्रेम-संकेतों में विवशता है, विह्वलता है एवं आतुर हृदय की पुकार है। 'गुल्लाला' एक लाल रंग का सुन्दर फूल है। इस फूल को हर पुष्प-वाटिकाओं में नहीं

---

१. क० म० ३, गज़ल १५।

२. क० म० २, गज़ल १०।

३. 'तानीर' - 'महजूर'-अंक १९५७ - पृ० ४९ - 'महजूर की शायरी के अबदी अनासिर' - प्रो० मुहम्मद यूसुफ।

अपितु गेहूँ के खेतों एवं वनों में पाते हैं। इसी फूल के द्वारा नायिका हृदय-स्थित भावनाओं की अभिव्यक्ति बड़े कौशल के साथ करती है :-

' प्रेम-पीड़ा से दुखी एवं चिन्तित व्यक्ति, विलासी पुरुषों की गोष्ठी में नहीं बैठता क्योंकि यहाँ उसका हृदय अत्यधिक व्यथित होता है। यही कारण है कि 'गुलाला' पुष्प वाटिकाओं में नहीं मिलता अपितु घने वनों में दूर शान्ति पाने के लिए खिल उठता है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २३६)

व्यंग्य एवं उलाहने :

प्रेम-वर्णन में व्यंग्य वचनों एवं उलाहनों का महत्व निर्विवाद है। संयोग एवं वियोग दोनों अवस्थाओं में नायक-नायिका, निजी रोष प्रकट करने के लिए व्यंग्य एवं उलाहनों को मनोभावाभिव्यक्ति का साधन बनाते हैं। हिन्दी साहित्य में सूरदास एवं बिहारीलाल को इस क्षेत्र में अद्वितीय सफलता मिली है। इस क्षेत्र में 'महजूर' को परम्परा से कुछ नहीं मिला। उन्होंने निजी अनुभूति एवं विलक्षण बुद्धि के आधार पर स्वाभाविक व्यंग्योक्तियों से अपने काव्य को मार्मिक बना दिया है। 'महजूर' ने विरह-वर्णन में व्यंग्य एवं उलाहनों का विशेष प्रयोग किया है। नायिका नायक के प्रति निराश होकर कहती है :-

'अरे कठोर हृदयी नायक ! तुम बड़े अन्यायी हो। तुम्हारे हृदय में दया लेश मात्र भी नहीं। तुम मनुष्य रूप में पाषाण हृदयी हो। तुम्हारे कारण में एक सुन्दरी नष्ट हो गई। प्रेम-रस छिटकाते हुए पुनः एक बार

---

१. क० न० १०, गज़ल ६७।

तो आओ ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २४०)

"तुम तो चले गए परन्तु मेरे लिए उपहार में एक विचित्र निधि छोड़ गए" :-

"तुमने मुझे बदनाम किया । अलग छोड़कर चले गए और मेरे लिए यहाँ केवल उलाहने ही उलाहने हैं ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २४१)

नायिका का यह अटल विश्वास है कि नायक यहीं कहीं छिप गया अत: वह रोष में आत्महत्या की धमकी नायक को देती है :-

"तुम यहीं कहीं छिप कर रहते हो और अब मैं लाज के सारे बन्धन तोड़ कर तुझे ढूँढ़ने के लिए निकलूँगी । जिस ओर पर तुम मुझे मिलोगे वहीं मैं आत्महत्या करूँगी ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २४२)

अत्यधिक वेदना के कारण नायिका कठोर-हृदयी बन जाती है और नायक की कटु आलोचना करने में वह लेशमात्र भी नहीं डरती :-

"तुम ने खींच कर नेजा मारा और मेरा हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया । तुम निर्दयी हो, निर्मम हो, बात-बात पर रुष्ट होते हो । मेरे हृदय को कष्ट पहुँचाने वाले साजन ! तनिक ठहर तो जाओ ।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक २४३)

---

१. क० म० ३, गज़ल १५ ।
२. क० म० १, गज़ल ४ ।
३. क० म० ४, गज़ल २५ ।
४. क० म० २, गज़ल १३ ।

अपनी सखी से प्रियतमा उस दुष्ट की करनी का रोना रोती है। उसमें प्रतिशोध की भावना प्रबल हो उठी है। और प्रतिद्वन्द्वी से झूझने के लिए वह कटु शब्दों की ढाल लेकर समर में कूदती है:-

"यों ही बहाना बनाकर वह अन्धेरे में चला गया और पुन: दर्शन देने का कष्ट नहीं उठाया। क्या करूँ। उसके जाने से मेरी हृदय-शान्ति भी चली गई।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २४४)

वह अपने पूर्व जीवन एवं विगत घटनाओं पर दृष्टि डालती है तो चारों ओर नायक की धूर्तता एवं छल-कपटता उसे असमंजस्य में डाल देती है और वह किंकर्तव्यविमूढ़ एवं अवाक रह जाती है :-

"एक ओर मेरा बचपना एवं चढ़ता हुआ यौवन तो दूसरी ओर तुम्हारा कृत्रिम व्यवहार। अभिनयात्मक ढंग से तुम ने मुझे जाल में फँसा दिया और अब भुला दिया। मुझे इस बात का खेद है कि तेरे हृदय में मेरे लिए लेशमात्र भी प्रेम क्यों न रहा ? अब विषाक्त बाण फेंककर मुझ पर अत्याचार करना चाहते हो। यदि तुम पुन: लौट आओगे तो मैं तुझे अपने बाहों रूपी झूले में झुलाऊँगी।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २४५)

नायिका उलाहना देते हुए कहती है :-

"मेरा घर तो बरबाद हो गया पर तुम्हारा घर आबाद रहे।"[३]
(देखिए परि० २, क्रमांक २४६)

---

१. क० म० २, गज़ल १०।
२. क० म० ८, गज़ल ५०।
३. क० म० ६, गज़ल ६१।

अपना छोटा सा संसार तो नष्ट हुआ । पर तमाशा देखने के लिए भी तुम नहीं आए । उलाहना कितना सजीव एवं मर्मस्पर्शी है :-

" मेरे प्रिय । मुझे तेरे प्यार ने आवारा (मत्त, दीवाना, पागल) बना दिया है, क्या कोई उपाय तुमने सोच रक्खा है । छिप-छिप कर तुम यदि आ जाते और प्रेम की हाला मधु-कलशों में डाल देते तो मेरा जीवन सफल हो जाता । मेरा हृदय विरह के अथाह सागर में अनेकों भंवरों में फँस गया है । उसकी हृदय विदारक दशा देखने के लिए कुछ क्षण तुम आ जाते ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २४७)

नायिका का पश्चाताप उसके कथन में स्पष्ट झलकता है । बिना सोच-विचार के जो निश्चय उस ने किया था उस पर आज असहाय-विलाप के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकती । परन्तु उस विलाप में भी उसका भीतर का आक्रोश प्रकट होता है :-

" मुझे अपने आप पर अधिकार न रहा और उस निर्दयी को अपना हृदय दे बैठी । आज वह मुझ पर बल का प्रयोग कर रहा है । क्या करूँ । मैं उसका विछोह सह नहीं सकती हूँ ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २४८)

जहाँ इन व्यंग्योक्तियों में मर्मस्पर्शी वेदना निहित है वहाँ कवि की रागात्मक वृत्ति का भी परिचय मिलता है । प्रेम के बन्धन में प्रेमिका अपने प्रेमी को बांधना चाहती है परन्तु यह सुन कर कि वह पर-नायिका विहार में आनन्दमग्न है - उसकी सहन शक्ति सीमाओं का अतिक्रमण कर जाती है । उसके व्यंग्यवचन तीखे बन जाते हैं क्योंकि उसकी निधि का उपभोग कोई दूसरा

---

१. क० म० ४, गज़ल २७ ।

२. क० म० ८, गज़ल ५४ ।

कर रहा है । उसके श्मशान पर कोई अपना भव्य महल बनाना चाहता है :-

"मेरा साजन किसी पर-नायिका की नशीली चितवनों के सुरापान में लगा है । उसे बहकाया गया । अकारण उसकी आँखों में आज रोष टपकता है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २४६)

विरहिणी एक विचारशील नारी है । वह सब दोष नायक को देती है, परनायिका को नहीं । जब अपने पराए हो गए तो सौतन का क्या दोष :-

"मेरे साजन ! तुझे किस सौतन ने पथ-भ्रष्ट कर दिया । किससे तुमने सम्मति ली । आज तुम मुझसे रूठकर इस पथ को भी भूल गए ।तुम्हारे हृदय में मेरे लिए कोई स्थान नहीं रहा । फूलों के मतवाले मेरे साजन ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २५०)

उसे दु:ख है कि नायक पर-नायिकाओं की मीठी-मीठी बातें सुनकर उनके बाहु-पाश में आगया , गुड़ छोड़ कर गोबर चखने लगा :-

"तुम ने मेरा शरीर विरहाग्नि से जला दिया । तुम्हारे ही आदेशानुसार मैंने चुप्पी साध ली । तुम बड़े निर्लज्ज हो । मेरी ओर से तुम निश्चिन्त हो, अब मैं तुझे क्या कहूँ ? किस सौतन ने तुझे मेरे विरुद्ध बहकाया ? आज तुमने मुझे पूर्ण रूप से त्याग दिया । अब मैं और क्या करूँ । तुम हरसमय दूसरों के कथनानुसार जीवन-पथ पर अग्रसर होते हो ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २५१)

---

१. क० म० ५, गज़ल ३१ ।

२. क० म० १, गज़ल ३ ।

३. क० म० ५, गज़ल ३४ ।

प्रेमनगरी का राजा बन कर राज्य-नियमों का निर्वाह करना उसका प्रथम पुनीत कर्त्तव्य है परन्तु उस निर्मोही की राज्य-नीति ही कुछ भिन्न है:-

'तुम मेरे शत्रुओं के साथ प्रेम-विहार में मग्न हो और मैं उन पुराने घावों की पीड़ा सह रही हूँ। विचित्र नीति है तुम्हारे इस राज्य की। शत्रु सब प्रसन्न-चित विहार में मस्त हैं और तुम्हारे शुभचिन्तक मित्र व्याकुल हैं। प्रेम-नगरी पर ऐसी राजनीति क्या शोभा देती है?'[1] (देखिए परि० २, क्रमांक २५२)

अन्तिम वाक्य में उलाहना बड़ा सजीव है। ~~ऐसी~~ ही काव्य पँक्तियों को ध्यान में रख कर 'महजूर' के विषय में श्री प्रेमनाथ बज़ाज़ ने लिखा है - **"Being musical and dealing with the emotions and sentiments of ordinary people these because popular. In a few years the countryside echoed and ~~reached~~ re-echoed with Mahjoor's lyrics."[2]**

नायिका को अपने सौन्दर्य पर गर्व है परन्तु नायक की उपेक्षा इस गर्व को क्रोध एवं आक्रोश में परिवर्तित करता है। व्यंजना शक्ति का सहारा लेकर वह नायक को उलाहना देती है :-

'तुम अपने मित्रों के साथ विहार करते हो और मैं वियोग में खून के आँसू बहाती हूँ। मेरे भ्रमर! दिन में लाज के कारण तुझे ढूँढ नहीं पाती परन्तु अब रात्रि में तुझे ढूँढूँगी। अरे निर्मम! क्या कोई अन्य नायिका मेरे समान सुन्दर रूप वाली है जिसके प्रेम-पाश में तुम फँस गए। सम्भवत:

---

१. क० म० ११, गज़ल ६८।

२. 'स्ट्रगिल फार फ्रीडम इन कश्मीर' - पी० एन० बज़ाज, पृ० २६५।

किसी ने मुझे नीचा दिखाने के लिए तुझे अपने पास रखा है।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २५३)

वचन देकर उसका निर्वाह करना नितान्त आवश्यक है परन्तु नायक की कपट-लीला तो देखने योग्य है :-

" तुमने आने का वचन दिया परन्तु वचन-पालन तुम से सम्भव नहीं हो सकता। तुम अधिकतर दूसरों के पास ही बैठे रहे। मुझे ज़रा बता तो दे कि आज किस दिशा में कहाँ तुझे जाने का विचार है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २५४)

फूलों को मालाओं में पिरोते देखकर सखियाँ-चिढ़ाने के लिए नायिका से व्यंग्य कसती हैं और वह अश्रु-भीगे नेत्र-कमल ऊपर उठाकर उत्तर देती है:-

"प्रिय का वियोग मुझे रोने पर विवश करता है और मैं अपने अश्रु-कोषों से अगणित आँसू बहाती हूँ। दूसरों के व्यंग्य वचन मेरे हृदय में गहरे घाव बना रहे हैं। यों ही अकारण मैं फूलों की मालाएँ बना रही हूँ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २५५)

अपने इस उजड़े एवं नीरस जीवन में विरह की वेदना तड़पा देने वाली है। कविवर 'महजूर' ने विरहिणी की मनोदशाओं का चित्रण विविध रूपों से किया है। उनका मनोविश्लेषण व्यापक, गम्भीर, विस्तारपूर्ण एवं स्वाभाविक है। नायिका के हृदय में यह बात तीर के समान चुभ गई है कि :-

---

१. क० म० २, ग़ज़ल ७।
२. क० म० ६, ग़ज़ल ५५।
३. क० म० ४, ग़ज़ल २२।

"जिसके लिए मैंने अनेकों कष्ट सहे लोकलाज की चिन्ता नहीं की, उसके हृदय में मेरे लिए स्थान क्यों नहीं है। वह इतना कठोर क्या है?"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २५६)

नायक की व्यवहार कुशलता से नायिका आश्चर्य चकित है। प्रेम को भी उस ने व्यवहार की वस्तु माना और छल-कपट नीति का प्रयोग किया। मुझे धोखा देकर स्वयं बाज़ी मार कर चला गया :-

"मैं एक निष्बुद्ध नारी थी। प्रिय की प्रतिज्ञाओं पर विश्वास किया और स्वयं प्रेम का निर्वाह किया। मैं अपनी बाज़ी हार गई और हानि उठा कर अब पश्चात्ताप का कड़ुआ विष पी रही हूँ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २५७)

असहाय विरहिणी अन्त पर अवाक रह जाती है। इन तीखे व्यंग्य-वचनों एवं उलाहनों का वज्र-समान हृदय वाले नायक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। आक्रोश वह स्वयं पी जाती है और आत्मग्लानि एवं पश्चाताप के अथाह सागर में बह जाती है :-

"तुम मेरी एक बात भी नहीं मानते। मेरी ओर ध्यान ही नहीं देते हो। तुम निर्मम हो, निष्ठुर हो और दयाहीन हो।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २५८)

---

१. क० म० २, गज़ल ११।
२. क० म० १, गज़ल ४।
३. क० म० १०, गज़ल ६१।

आशा, प्रतीक्षा एवं विनति :

कविवर 'महजूर' का स्वर मूलत: आशावादी है । आशा के बल पर ही नायिका प्रतीक्षा करती है और प्रतीक्षा में ही विनति का अवसर आ जाता है । प्रियतम के आने का सन्देश नायिका ने कहीं से सुन लिया तो आशा का अंकुर उसके हृदय में फूट पड़ा । नूत के विकराल दानव से छुटकारा पाने के लिए वह वर्तमान में ही भविष्य के मधुर सपने देखने लगी :-

"प्रियतम के आगमन का समाचार सुनकर मैंने मधु-कलश भर लिए और फूलों की मालाएँ गूँथने लगी । मैंने शालिमार बाग का प्रत्येक कोना उनके लिए सजा रखा है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २५६)

प्रसन्नचित नायिका सखियों को यह समाचार सुनाती है क्योंकि उसके हृदय-सागर में प्रसन्नता का उफान आया है :-

"मैं प्रसन्नता में झूमने लगी जब मैंने प्रिय के आगमन का सन्देश सुना। वह मेरा प्रियतम मेरी हृदयपिपासा को शान्त करेगा । क्रोध की मुद्रा धारण किए मेरा साजन आएगा । बसन्त की बयार उपवन में फूलों की पँखुड़ियों को चारों ओर बिखेर रही है । नायिका का विचार है कि सायंकाल को नायक अवश्य आएगा क्योंकि दिन में उनके आने के विज्ञप्ति पत्र चारों ओर आ गये हैं ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६०)

कभी संकेतात्मक ढंग से वह प्रिय के आगमन का समाचार सुनाती है । समवयस्क सखियों के पास वह अधिक समय तक नहीं बैठ सकी । उन्हें प्रिय-

---

१. क० म० ४, गज़ल २२ ।

२. क० म० ७, गज़ल ४२ ।

आगमन का मात्र संकेत देकर वह साजन के स्वागत के लिए चली गई :-

"प्रात: अबाबील (पक्षी) की मधुर वाणी सुनकर मैंने जान लिया कि शिशिर-ऋतु समाप्त हुई और बसन्त के आगमन का यही समाचार है ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक २६१)

श्री मुज़फ्फर आज़िम ने लिखा है – "वह हमारी भावनाओं के कोमल तार छेड़ कर हमें भी अपने भावुक हृदय के समीप ले आता है ।"[२] कवि विरहिणी नायिका की नस-नस से परिचित है और उसके प्रत्येक हावभाव को अपनी लेखनी द्वारा वाणी का अमर वरदान देता है । प्रिय-आगमन से पहले ही नायिका यह निश्चय करती है कि :-

"उस बचपन के साथी पर मैं अपना सर्वस्व न्योछावर करूँगी । मैं अपना मस्तक उसके पुनीत चरणों पर रख दूँगी और अपनी सारी करुण-कथा उसे सुनाऊँगी ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २६२)

यदि प्रियतम ने अपनी मीठी बातों से मनाना चाहा तो स्पष्ट कह दूँगी :-

"मैंने तेरे वियोग में 'आरिवल' (पीले रंग का गुलाब) पुष्प के समान दिन काँटों पर व्यतीत किए ।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक २६३)

---

१. क० सं० १०, ग़ज़ल ६७ ।
२. 'तामीर' - 'महजूर' अंक १९५७ - पृ० ३७ - 'महजूर' का तस्सवुर महबूब- मुज़फ्फर आज़िम ।
३. क० सं० ६, ग़ज़ल ५८ ।
४. क० सं० ४, ग़ज़ल २५ ।

परन्तु यह सब सपना था । इससे घाव और गहरा हुआ । स्वागत के लिए सजाई सामग्री यों ही अकारण नष्ट हुई । प्रियतम ने अपने आगमन का सन्देश भेजा परन्तु वे आए नहीं और विरहिणी उनकी प्रतीक्षा में रत एकटक मार्ग देखती रही :-

"'कन्द' (नबात के दाने) , नबात, इलाइची एवं सुपारी मैंने उनके लिए बड़े चाव से मंगाई है । यदि वे आजाते तो मैं उनका नियमपूर्वक अतिथि सत्कार करती । कवि 'महजूर' कहता है कि अपने प्रियतम की प्रतीक्षा बहुत समय से कर रहा हूँ - और अधिक कब तक मुझे प्रतीक्षा करनी है । आज वह कितना निर्दयी बन बैठा है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २६४)

यह प्रतीक्षा के क्षण नायिका के लिए असहनीय हैं परन्तु भाग्यवश उसे यह सब सहन करना पड़ता है :-

"मैंने प्रत्येक पहाड़ी पर उनकी प्रतीक्षा की और आज मैं आँसुओं के बदले रक्त बहा रही हूँ । मेरी मृत्यु का उत्तरदायित्व उसी पर होगा ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६५)

नायक का यह उपेक्षाभाव अत्याचार से कम नहीं, और असहाय पर अत्याचार एक साधन सम्पन्न व्यक्ति के लिए शोभा नहीं देता । विरहिणी के संकल्प दृढ़ हैं और नायक के संकल्प पानी के बुलबुले हैं । नायिका ने यह दृढ़ निश्चय किया है :-

"यदि वह साजन आएगा तो मैं अपना सर्वस्व निछावर कर दूँगी और

---

१. क० म० १, गज़ल ६ ।

२. क० म० १, गज़ल ३ ।

अपना दग्ध-वक्ष उसे दिखाऊँगी ।"[१] (परि० २, क्रमांक २६६)

प्रतीक्षा करते-करते नायिका की दशा दयनीय बन जाती है । कवि महोदय उसका मनोविश्लेषण निम्नलिखित पंक्तियों में करते हैं :-

"मुझे तेरा विरह घाव सहन करना पड़ता है । एक बार पुन: दर्शन देकर कृतार्थ करो । तेरे आने से मेरे मानसिक एवं शारीरिक रोगों का निवारण होगा । पहले तुमने मेरे चित को फँसाकर ठगा लिया और आज उसे ही दाँव पर लगा रहे हो । मेरे जीवनाधार । बचपन के प्रण एवं प्रतिज्ञाएँ तथा प्रेमपूर्ण वार्तालापों की स्मृति में तुझे दिलाती हूँ ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६७)

प्रतीक्षा-रत विरहिणी के करुण विलापों से भी उसकी मनोदशा का परिचय मिलता है :-

"मैं तुझे कब से बुलाती हूँ । परन्तु तुम पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता । कृपया यह तो बताओ कि पुन: मिलन के लिए क्या करना पड़ेगा । मेरे साजन ! मैं तुम्हारे वियोग को किसी भी प्रकार सहन नहीं कर सकती । तुम मेरे कैसे बन जाओगे - तनिक यह तो बताओ ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २६८)

इस प्रकार आशा एवं प्रतीक्षा के अनेक उदाहरण हमें 'महजूर' के काव्य में मिलते हैं । विनती के प्रसंग में कवि महोदय अत्यधिक भावुक बन पड़े हैं । विरहिणी के पास यह अन्तिम साधन है जिसके द्वारा वह रुष्ट

---

१. क० म० ३, गज़ल १६ ।

२. क० म० ८, गज़ल ५३ ।

३. क० म० ८, गज़ल ५४ ।

साजन को मनाना चाहती है । श्री मज़फ़र आज़िम ने लिखा है — 'महजूर' का यह प्रियतम इतना कठोर-हृदयी सिद्ध हुआ है कि एक बार दर्शन दिखाकर वह प्रियतमा को आकृष्ट करता है और फिर उसे त्याग कर सुख की बंशी बजाता है । इस प्रकार प्रियतमा को वियोग के दावानल में छोड़, अनेकों कष्ट झेलने पर विवश करता है ।'[१] विरह की अन्तिम अवस्था पर पहुँच कर नायिका विनीत भाव में नायक से पुन: लौट आने के लिए कहती है :-

'मेरे हृदय के टुकड़े मनमोहक साजन । तनिक लौट आओ । मैं अपने हृदय के घाव तुझे दिखाऊँगी । तुम अतिथि स्वरूप कुछ दिनों के लिए आना, मैं तुम्हारे रहने का सारा प्रबन्ध स्वयं करूँगी । मधु-कलश भर-भर कर रखूँगी। तुम ने अनेकों प्रतिज्ञाएँ की थीं परन्तु फिर भी मुझ से छल कपट किया । अब मैं तुझे और क्या याद दिलाऊँ ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६६)

स्वयं तो उसने मान छोड़ दिया परन्तु नायक अभी भी क्रोधित है । नायिका के विनीत शब्द सम्भवत: उस पर कुछ प्रभाव डाल सकें :-

'तुम रुष्ट हो, पर अब रोष छोड़ कर मेरे इस तुच्छ निमंत्रण को स्वीकार करो । मैं मदिरा के प्याले भर-भर कर रखूँगी । तुम्हारे विषय में मात्र विचार करने पर ही मेरा हृदय काँप उठता है । मैं तुम्हारे स्वागत के लिए फूलों की मालाएँ गूँथ लूँगी । मैंने नसीम-बाग में सुना कि तुम पास ही पर्वतीय भाग में शिकार खेलने चले गए हो । मैं तुम्हारी रुचि पूर्ति के लिए नाविका में अपना सर लेकर आऊँगी ।'[३] (देखिए परि०२, क्रमांक २७०)

---

१. 'तामीर' - 'महजूर-अंक' - १९५७ , पृ० ४० - 'महजूर का तस्सवुर महबूब' श्री मुज़फ्फर आज़िम ।
२. क० म० ४, गज़ल २५ ।
३. क० म० ५, गज़ल २८ ।

इन विनीत शब्दों में करुणा का प्राधान्य है और विरह उत्पीड़ित नायिका के हृदय-स्थित भावों की अभिव्यक्ति कुशलतापूर्वक हुई है। करुणा के प्राधान्य के कारण इनका प्रसार भी विस्तृत क्षेत्र में हुआ है और लोक-प्रियता एवं शाश्वता का वरदान भी इन्हें मिला है। वह विवश होकर दया की भीख मांगती है :-

"मैं अपने मनोभावों को उनके सम्मुख प्रकट करूँगी सम्भवतः उन्हें कुछ दया आ जाएगी।' ऊफ ! मुझ पर कुछ दया तो कीजिए। मेरे दोषों पर पर्दा डालिए और मुझे क्षमा कीजिए। मैं प्रेम की भूखी अपना हृदय दिखाने आई हूँ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २७१)

नायिका एक विशेष प्रकार के रोग से ग्रस्त है। रोग की औषधि नायक के पास है। मीरा के समान 'मीरा के प्रभु पीर मिटेगे, वैद सांवलिया होय' विरहिणी को प्रिय-दर्शन की तीव्र अभिलाषा एवं उत्कट इच्छा है। 'महजूर' की काव्य नायिका भी अपने हृदय-रोग के निवारण के लिए प्रिय से विनती करती है :-

"मेरे प्रिय ! इस रोग की औषधि का प्रबन्ध कृपया शीघ्र कीजिए।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २७२)

अपनी विवशता एवं दैन्यावस्था पर स्वयं विरहिणी की मार्मिक उक्तियाँ 'महजूर' के काव्य में यत्र-तत्र मिलती हैं। वह अपने प्रेमास्पद के प्रेम रूपी डोरे में इस प्रकार बंध गई है जैसे किसी नट को चकई बंधी रहती है। वह प्रिय को भुलाने पर भी रंचमात्र भूल नहीं पाती। प्रिय से विमुक्त नायिका

---

१. क० म० ३, गज़ल १२।

२. क० म० ४, गज़ल २६।

पंखहीन पक्षी की भाँति दुख के आँसू पीकर रह जाती है :-

"मैं अपने हृदय के घाव किसे दिखाऊँ । ऊफ ! प्रियदर्शी साजन तो मेरी विनती सुन लेते । मैं उसके प्रेम में धीरे-धीरे गल चुकी हूँ । अब ज़रा दर्शन दिखाकर कृतार्थ करता ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २७३)

कवि ने विरहिणी की मानसिक वेदना को उसके सारे दुखों का मूल स्रोत माना है । अपने प्रियतम से निवेदन करते समय वह अपनी मानसिक वेदना का सजीव चित्र प्रस्तुत करती है:-

"यदि तुम आ जाते तो मैं अपने घावपूर्ण हृदय की दशा तुझे सुनाती, और अपना दग्ध-वक्ष तुझे दिखाती । क्या तुम तब लौट आओगे जब मेरी मृत्यु हो जाएगी ? फूलों के मतवाले साजन ! मैं पहाड़ी पर चढ़ कर तुझे पुकारूँगी । तुम लौटकर यहाँ आओगे! जाने से पूर्व उन प्रतिज्ञाओं को निभाओ जो आज मेरे मानसिक क्लेश का मूल कारण हैं ।"[२] (देखिए परि०२,क्रमांक२७४)

विरहिणी के हृदय-विदारक करुण-क्रन्दन से जब नायक पर कोई प्रभाव न पड़ा तो वह "जाते जाते इक नज़र भर देखने के लिए" विनती करती है:-

"तनिक वहीं ठहर जा । केवल मेरी दो बातें तो सुन लो । क्या करूँ ! तेरी इच्छा ने मुझे मार डाला ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २७५)

चारों ओर निराश होकर परित्यक्ता नायिका अपने भाग्य को कोसती है । उसकी चिर अभिलाषा यह है कि अरुणोदय के साथ-साथ उसकी भाग्योदय भी हो जाए । निराशा का अन्धकार उसके हृदय में घर कर गया है और

---

१. क० म० ३, गज़ल १५ ।
२. क० म० १, गज़ल ३ ।
३. क० म० ३, गज़ल १६ ।

आशा की किरण उस तमस में विलीन हो चुकी है । वह अन्त में नायक के प्रति यह शब्द कह कर मौन रहती है :-

'ऊफ ! एक रात्रि के लिए ही तुम मेरा निमंत्रण स्वीकार करते । सम्भव है तुम्हारा मूल्यवान समय इस प्रकार नष्ट हो जाएगा । और यदि तुम निश्छल भाव से दो-तीन बातें करते तो वही मेरा भाग्योदय था ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २७६)

मूल्यांकन :

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'महजूर' ने प्रेम के जिस अंश को छुआ है उसे अन्तिम सीमा तक पहुँचा दिया । उसमें नवीन रंग एवं नवीन प्राण फूँक देने के लिए वह सतत प्रयत्नशील रहा । इन प्रेम गीतों में संगीत के माधुर्य ने अधिक रस घोल दिया और आज यह गीत जन-जन के कंठहार बने हैं । 'महजूर' को आधुनिक युग में शृंगार-परक काव्य का पथ-प्रदर्शक कहा जाता है - 'Mahjoor originated a modern romantic movement in the full impact of which is yet to come. He strove for an ideal society, where romance and revoluntion are one."

इन कविताओं के अध्ययन से हमें 'महजूर' की अन्तरवेदना, सूक्ष्म दृष्टि, अद्भुत भाव-गाम्भीर्य एवं रसिक हृदय का परिचय मिलता है । वे प्रेम को जीवन

---

१. क० प० ७, गज़ल ४६ ।

२. 'Kashmir' - Nov. 1957 - Issued by Publication Division, Ministry of information and Broadcasting.
Name of Essary- "Romantic Element in Kashmiri literature"
Page No.282.

का एक मूल्यवान तत्व समझते थे और उन्होंने भी शृंगार को रस राजत्व का स्थान दिया ।

श्री मुज़फ्फर आज़िम ने लिखा है - 'प्रेमिका की विवशता एवं प्रेमी की कठोरता का वर्णन करते हुए भी 'महजूर' का प्रेम के विषय में दृष्टिकोण शुद्ध, सरल, प्रभावोत्पादक , आकर्षक, शाश्वत एवं सप्राण है ।'[१] स्वयं उनका प्रेम के विषय में दृढ़ निश्चय है -

' मैं इस प्यार का पालन करूँगा । इसको अपने पास रखूँगा और कभी अपने से अलग नहीं होने दूँगा । यह फूल से अधिक कोमल और मेरे जीवन से अधिक मूल्यवान है ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २७७)

'महजूर' के प्रेम-काव्य में स्थूल से सूक्ष्म के प्रति संकेत बहुत कम मिलते हैं । अलौकिक प्रेम का वर्णन उन्होंने लौकिक प्रेम के माध्यम से नहीं किया अपितु स्वतंत्र रूप से कुछ दार्शनिक रचनाएँ लिखी हैं जिन में सूक्ष्म तत्व का विश्लेषण किया गया है । 'महजूर' के प्रियतम की सब से बड़ी विशेषता यही है कि वह मनुष्य है और इसी धरती पर रहता है । उसने चलते फिरते सामान्य मानव के मनोभावों का प्रतिनिधित्व किया यही उसकी लोकप्रियता का सबसे प्रमुख कारण है । 'खयाबान पाक' पुस्तक में लिखा गया है -'जो काव्य-पंक्ति उसकी लेखनी से निकलती वह सम्पूर्ण कश्मीर घाटी में बसंत ऋतु के बयार के समान फैल जाती ।'[३]

---

१. 'महजूर' का तस्सवुर महबूब' - मुज़फ्फर आज़िम - 'तामीर' -'महजूर'-अंक - १९५७ , पृ० ४२ ।

२. क० म० १०, गज़ल ६१ ।

३. 'खयाबान पाक' - पृ० २४७ (पाकिस्तान कराची में सूचना विभाग द्वारा प्रकाशित, १९५६)

प्रेम के विषय में 'महजूर' का निजी दृष्टिकोण स्वस्थ था। वह प्रेम को व्यवहार की वस्तु नहीं समझते। प्रेम की महानता का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है :-

'प्रेम-अग्नि की जलती हुई भट्ठी में प्रेमी की सम्पूर्ण मलिनता जल जाती है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २७८)

सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर 'महजूर' ने अपने प्रेम-काव्य को नवीन रूप दिया और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुकूल ही उन्होंने कुछ ही समय के पश्चात् इस प्रवृत्ति को त्याग दिया। कुमारी कृष्णा ने लिखा है – 'सौन्दर्य तथा प्रेम की भावनाओं से अपने काव्य में सजीवता लाई। सामाजिक आवश्यकताओं को अपने काव्य में स्थान देकर जनता की सहानुभूति प्राप्त की।'[२]

'ग्रीसकूरि' 'महजूर' की प्रसिद्ध शृंगारिक रचनाओं में से एक है जिसके विषय में श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - 'यह गीत लिखकर वास्तव में 'महजूर' ने कश्मीरी साहित्य में एक नवीन सुर अलापा था। शृंगार-रस से ओतप्रोत ~~वास्तव में~~ इस रचना में उन्होंने गाँव के स्वच्छन्द वातावरण में पलने वाली परिश्रमी ग्रामीण बालिका के अकृत्रिम सौन्दर्य का जो सजीव चित्र खींचा है वह बहुत ही हृदयाकर्षक है।'[३]

---

१. क० म० ६, गज़ल ५८।

२. 'मार्ग-दर्शक' - अगस्त १९६५ - पृ० १३१ - 'आधुनिक कश्मीरी काव्य की नई प्रवृत्तियाँ' - कुमारी कृष्णा।

३. 'महजूर' - कलचरल अकादमी - पृथ्वीनाथ 'पुष्प', पृ० १५।

'महजूर' के शृंगार काव्य का विश्लेषण करते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि कभी-कभी वह अपनी भावनाओं को नियंत्रित न रख सके, फलत: शृंगार का घृणित एवं अवांछनीय रूप भी हमारे सामने आया :-

'प्रियतम से शीघ्र मिलने की अभिलाषा मुझे चैन से रहने नहीं देती है। मैं उसके बाहुपाश में सो जाती हूँ परन्तु वह अभी भी अपने वस्त्रों को नहीं उतारता है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २७६)

ऐसे चित्र प्रस्तुत करते समय सम्भवत: 'महजूर' ने सामाजिक मर्यादा का कोई ध्यान नहीं रखा है। वे सदा वासना रहित गीतों की रचना करते रहे पर कभी-कभी शालीनता की सीमाओं को भी लांघ गए। ~~शीलता~~ शालीनता की परिधि में रहकर कभीकभी वासना की गन्ध ने उन्हें छू लिया है। परन्तु ऐसे उदाहरण हमें उनके काव्य में बहुत कम मिलते हैं। श्री मुज़फ्फर आज़िम ने लिखा है :-

'वह सदा एक प्रियतम के गीत गाता रहा। उसके विरह में दुख का और मिलन में सुख का आनन्द उठाता है। और अपनी संगीतात्मकलय में अपनी भावनाओं एवं अनुभूतियों के सजीव चित्र उतारता रहा।'[२]

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि 'महजूर' स्वयं महान थे और उस महान कलाकार की कला-कृतियाँ आज भी ख्यातिप्राप्त रही हैं। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है – ''महजूर' पुराने ढर्रे के उस्ताद हैं, उनकी शायरी प्रधानत: प्रेम और रोमांस की शायरी है।'[३]

---

१. क० नं० ४, पृ० २२।
२. 'महजूर' का तस्सवुर महबूब' - मुज़फ्फर आज़िम-'तामीर' - 'महजूर-अंक' १९५७, पृ० ३९।
३. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान - 'कश्मीरी भाषा साहित्य और कवि 'महजूर', पृ० १८३।

'नवीन' जी के काव्य में प्रेम-वर्णन :

डा० केसरीनारायण शुक्ल ने लिखा है - 'द्विवेदी-युग में रीति-कालीन शृंगारी कविता के विरोध का आरम्भ हुआ। - - - मानव-हृदय की इस जातिगत भूखतृप्ति का जादू कवियों के सिर चढ़ कर बोल उठा।'[१] स्वर्गीय गुप्त जी ने 'साकेत', 'यशोधरा' आदि काव्य-ग्रन्थों द्वारा सहयोग प्रदान किया। पं० अयोध्यासिंह हरिऔध ने 'प्रियप्रवास' एवं 'वैदेही वनवास' नामक दो प्रबन्ध काव्यों की रचना की। आधुनिक युग में प्रेम-काव्य का विकास (छायावादी काव्य-प्रवृत्ति के साथ-साथ) पवित्र भावभूमि पर हुआ।[२] प्रेम काव्य में उच्छृंखलता एवं नग्न चित्रण को छोड़ कर अत्यधिक उदार दृष्टिकोण को अपनाया गया। आधुनिक हिन्दी प्रेम-काव्य में नारी को अपना विशिष्ट स्थान मिला। प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है - 'अपने आदर्श और लक्ष्य में विशेषकर नारी के प्रति आधुनिक हिन्दी कविता का कवि पहले की अपेक्षा कुछ अधिक उदार तथा अंकीर्ण दृष्टि रखता है। उसकी निगाह केवल स्थूल रूप तक ही सीमित न रहकर नारी के उदात्त आन्तरिक स्वरूप को भी देखना चाहती है।'[३] नारी केवल क्षणिक मनोविलास एवं काम पिपासा की तृप्ति का साधन मात्र नहीं अपितु एक

---

१. 'आधुनिक काव्यधारा' - केसरी नारायण शुक्ल, पृ० २६०।

२. 'प्रेम पवित्र पदार्थ, न इसमें कहीं कपट की छाया हो,
इसका परिमित रूप नहीं जो व्यक्ति मात्र में बना रहे
क्योंकि यही प्रभु का स्वरूप है जहाँ किसको सबता है।
- प्रसाद - 'प्रेम पथिक' (हिन्दी ग्र० भण्डार कार्यालय, बनारस, पृ० १६)

३. 'नवीन' - दर्शन - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ५७।

विश्वासमयी रागात्मिका वृत्ति है । वह प्रेम करती है और प्रेम चाहती है ।[१] डा० श्रीकृष्णलाल ने लिखा है - 'सब से महत्वपूर्ण बात तो यह है कि आधुनिक काल में प्रेम 'जीवन-तत्व' (फिलासफी आव लाइफ) के रूप में स्वीकार किया गया । भक्तिकाल में जैसे भक्ति जीवन का तत्व माना गया था वैसे ही प्रेम आधुनिक काल में माना गया । - - - 'मिलन' में रामनरेश 'त्रिपाठी' का निश्चित मत है :-

'गन्ध विहीन फूल है जैसे चन्द्र चन्द्रिका हीन,
यों ही फीका है मनुष्य का जीवन प्रेम-विहीन ।'[२]

इसी समय हिन्दी साहित्य में 'नवीन' जी का आविर्भाव हुआ । 'नवीन' जी का जीवन प्रेम के परमाणुओं से बना था । उनके गीतों का मर्म रसराज शृंगार है । उन की शृंगारिक रचनाओं में उनका शुद्ध और सच्चा हृदय झलकता है । इन कविताओं में उन्होंने अपने हृदय की सरलता का स्वाभाविक चित्रण किया है । प्रेम सम्बन्धी गीतों के लिखने की प्रेरणा उन्हें कहाँ से मिली, यह बताते हुए उन्होंने श्री 'कमलेश' से कहा था — 'प्रेम सम्बन्धी अधिकांश रचनाओं का जन्म स्मृति से हुआ है । प्रिय का ध्यान आते ही गीत की प्रथम पंक्ति फूट पड़ी है और गीत बनता चला गया है ।'[३] इन प्रेम गीतों में कहीं मिलन की आकुलता है तो कहीं विरह की कसक है ।

---

१. 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो - विश्वास-रजत नग-पगतल में
पीयूष - स्रोत सी बहा करो - जीवन के सुन्दर समतल में ।'
- 'कामायनी' - लज्जा सर्ग , पृ० ११६.

२. 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' - श्री कृष्णलाल , पृ० ६३-६५।

३. 'मैं इनसे मिला' - दूसरी किस्त , 'कमलेश' ।

सौन्दर्य इनका आभूषण है । यद्यपि 'नवीन' जी का जीवन राजनीतिक संघर्ष में व्यतीत हुआ तथापि उन्होंने जीवन के उस स्रोत को शुष्क होने नहीं दिया जिससे उनका जीवन सरस एवं उनकी रचनाएँ माधुर्य गुण से ओतप्रोत हुईं । श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने लिखा है – "वे काल्पनिक प्रेम के पोषक नहीं हैं प्रत्युत प्रेम की बाह्य एवं आन्तरिक सीमा को वे छूते हैं । शारीरिक स्पन्दन के साथ ही आत्मा की धड़कन तक पहुँचते हैं । उनके प्रेम में मांसलता है । यही प्रेम उनके अलमस्त जीवन का स्वर भी है और उनकी कविता का प्राण भी ।"[१] उन्होंने अधिकांश रचनाओं में मानव प्रेम अर्थात् लौकिक प्रेम का चित्रण किया है परन्तु वह भी सच्चा एवं मर्मस्पर्शी है जिस कारण किसी आध्यात्मिक प्रेम या दिव्य अनुभूति से कम नहीं । कारागृह की शून्य कोठरियों में भी वे अपनी राजनी को बुलाते रहे ।[२] वे चिर-तरुण कवि थे । उनका जीवन प्रेम का अक्षय भण्डार था और उन्होंने उसके विविध पक्षों का सूक्ष्म-परिवेक्षण किया । आधुनिक काल की विभिन्न साहित्यिक विचार-धाराओं से प्रभावित 'नवीन' नायक-नायिका की विभिन्न प्रेम-क्रीड़ाओं का वर्णन अपनी रचनाओं में करते रहे । प्रेम की विभिन्न दशाओं में संयोग एवं वियोग का 'नवीन' जी ने विशद् वर्णन किया है । जहाँ वे प्रेमी के हृदय से परिचित थे वहाँ प्रिया के हृदय की धड़कन भी अनुभव करते थे । प्रेमांगण में उन्होंने खूब क्रीड़ाएँ की हैं । उनके समस्त प्रेम-काव्य को निम्नलिखित रूपों में विभाजित किया जा सकता है :-

१. संयोग, २. वियोग, ३. सश्लिष्ट वर्णन, ४. प्रतीकात्मकता, ५. मान-वर्णन, ६. प्रकृति का आधार, ७. स्मृति तत्व, ८. आशा, प्रतीक्षा एवं

---

१. 'हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ३३८।

२. 'पर वे वहाँ ऊँची दीवारों के बीच अपने 'प्राणवल्लभ' अपने 'मनभावन' अपने 'प्रीतम' अपनी 'मैना' को याद करते रहे । समय की कितनी ज़बर्दस्त माँग थी कि इतना भावुक, इतना कोमल हृदय, इतना रससिक्त कवि अपने को राजनीति की कवित्व हीन परिस्थितियों में झोंक देने को विवश हो गया था ।' - 'नये पुराने झरोखे' - 'बच्चन', पृ० ३३-३४.

विनति , ९. हालावाद का प्रभाव, १०. दार्शनिकता ।

१. संयोगपक्ष :

संयोग के अनेक सुन्दर चित्र हमें 'नवीन' जी के काव्य में मिलते हैं । उनके प्रेम-काव्य में जहाँ शुद्धता है वहाँ सरलता भी विद्यमान है । अपने आलम्बन के प्रति अनेक सुन्दर काव्य पँक्तियाँ कवि ने लिखी हैं । नायक-नायिका के सजीव वार्तालाप एवं प्रिया-प्रेमी के मिलन के मधुर प्रसंगों की उद्भावना कवि की निजी मौलिकता है । डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है :- 'नवीन' जी का समग्र प्रेम-काव्य, अपने आलम्बन के सम्बोधन, स्मरण एवं विरह से आपूर्ण है । कवि ने पग-पग पर प्रेम के आलम्बन के प्रति अपनी सरल, निष्कपट, मार्मिक और कारुणिक प्रणयाभिव्यक्ति की है ।[१] प्रेयसी अपने प्राणप्रिय नायक को देख कर आनंदित होती है । उसके आने पर वह कहती है - 'तुम आए मानो मेरे शरीर में प्राणसंचार हुआ । तुम्हारे चरणों पर अपने आँखों की अश्रुधारा बहाकर मेरा जीवन धन्य हुआ :-

> आज हुलसे प्राण, पीतम, आज हुलसे प्राण ;
> ओ निठुर, तुमने दिया यह नेह का वरदान !
> हुलसे आज आकुल प्राण
> उन मृदुल प्रियतम चरण पर - अश्रु भीने युग नयन धर,
> हो गया कृत - कृत्य जीवन - - - - - - - - - - ।[२]

मेरी कौन-सी बात ऐसी है जो तुमसे छिपी है तुम तो मेरे हृदय से चिर परिचित हो :-

---

१. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० २५१ ।
२. 'अपलक' , पृ० ३ (आज हुलसे प्राण) ।

"कौन बात ऐसी है मेरी जो तुम से हो छिपी, सलोने ?
तुमने झाँक चुके हो मेरे अन्तस्तल के कोने - कोने ।"[१]

"यही कारण है कि आज कई वर्षोंपरान्त जब तुम मिले तो मेरे जीवन की मुरझाई कली खिल पड़ी" :-

"आज बरसों बाद पीतम मिल गये जीवन डगर में,
मृत मनोरथ के सुमन , ये खिल गये जीवन डगर में
मिल गये जीवन डगर में ।"[२]

"तेरे आने से मेरे हृदय की प्यास बुझ गई । मेरा हृदय-कुसुम प्रस्फुटित हुआ । मेरे प्राण ! मैंने तुझे बहुत ढूँढा" :-

"नित्य ढूँढता मैं फिरा निज प्रियतम सायास ,
इतने दिन उपरान्त अब मिटी पास की प्यास ।"[३]

"दूर से ही मैंने तुझे देखा तो मेरी विचित्र दशा हुई । हृदय काँपने लगा और तेरे स्वागत के लिए मेरी आँखों से अश्रु-कण टप-टप कर गिरने लगे" :-

"जब द्वारे आ गये सलोने,
खिल कुटी के कोने-कोने,
हुलसे प्राण , कँपा हिय, बह-बह आई लोचन-धार;
स्वप्न सब बन आये साकार ।"[४]

---

१. "रश्मि रेखा" - वर्षा-लोके, पृ० ५ ।
२. वही , पृ० १३३ ।
३. "प्राप्ति" - (हम विषपायी जन्म के) , पृ० २१४ ।
४. "स्वप्न सब बन आये साकार" - "अपलक" , पृ० ४४-४५ ।

'तुम्हें देखकर तो प्रियतम यही जी चाहता है कि पुन: तुझ में और मुझ में कोई अन्तर न रहे। प्रेम की इस स्थिति में मन इतना आकर्षित हुआ कि खिंचता ही चला गया' :-

'आज एक यह वर दो, प्रियतम, आज एक वर दो।
अपनी अलख - झलक - आभा से मम अन्तर तम भर दो।
प्रियतम, आज एक वर दो'।[१]

'मेरे प्राणधन! मैंने यह दिन कैसे व्यतीत किए, अब तुम से क्या बताऊँ? सम्भव है कि इस कठिन तपस्या का फल मुझे ईश्वर ने तेरी प्राप्ति के रूप में दिया अत: अब मैं अपने दुखित जीवन को भूल गई परन्तु यह न समझना कि मैं इसी प्रकार प्रसन्न रहती थी' :-

'हम जीवित हैं, चलत फिरत हैं, बोल लेत हैं बैन,
तुम समझत हो, हृदय हमारो रंच नाहिं बेचैन;
कैसे कहें कि होति रहति है खटक हिये दिन रैन?
अपनी बात कहत जब हम, तुम तुम कब मानत हो?
प्राणधन, तुम नहिं जानत हो'।[२]

श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने लिखा है - 'नवीन' जी प्रेम-योग को ही नित्य सत्य मानते हैं। उनके विचारानुसार प्रेम के बिना सभी ढकोसले हैं:-

'प्रेम नित्य सन्यास नहीं तो अन्य योग हैं रोग री।
सखी कहो ले रहे सजन क्यों व्यर्थ अधूरा जोग री?'[३]

---

१. 'अपलक' - ४६ वें वसन्त के दिन, पृ० १६।
२. 'तुम नहिं जानत हो' - 'रश्मि रेखा', पृ० ६४।
३. 'हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी - लेख - नई धारा, पृ० ३४२।

'नवीन' जी की कविता में संयोग-वर्णन रूढ़ काव्योपयुक्त विषय नहीं अपितु नवीन साहित्यिक प्रवृत्तियों से प्रभावित है। उस में पूर्ण प्रवाह है, नवीनता है एवं वास्तविक-जीवन से सम्बन्धित है। नायिका का कथन है कि 'अनजाने ही चोरी-चोरी वे मेरे हृदय में समा गए अतः अब उनका मुझसे अलग होना कठिन ही नहीं, असम्भव है -

'प्रिय, मेरे हिय में तुम आए चोरी-चोरी,
ओ, लेली निज कर में मेरी जीवन-डोरी,
रंजित है तव रंग में अब मम चादर कोरी,
मुझको अब कहते हैं सभी तुम्हारा चारण;
ओ मम मंदार सुमन।'[१]

प्रेयसी प्रियतम को देखकर प्रसन्न है और उसका दर्शन सुख प्राप्त करके वह अपना जीवन सफल समझती है। वास्तव में जितने व्रत और उपवास उसने रखे थे यह सब उन्हीं का शुभ परिणाम है :-

'कितने वे उपवास पियासे, कितने निराहार व्रत, संयम,
आज सफल हो गए अचानक, भागे सब भव-रव-भय-संशय।'[२]

मैं अपने अश्रु-कणों से तुम्हारे पाँव धोकर अतिथि-सत्कार का व्रत निभाऊँगी परन्तु मेरे जीवन! तुम तो चरण छूने ही नहीं देते। क्या यह अधिकार भी मुझसे छीन लेना चाहते हो! तो मेरा जीना निष्प्रयोजन है:-

'चरण-चुम्बन-दान में अब मान कैसा? प्राण मेरे,

---

१. 'तुम मम मन्दार सुमन' - 'रश्मि रेखा', पृ० २६।
२. क्वासि - 'विदेह', पृ० ८।

झिझक कैसी ? झीझ क्यों ? यह विरति क्यों ? अभिमान मेरे।
मान मत ठानो, न तानो भृकुटियों की चाप, वल्लभ,
पहुँचने दो चरण-तल तक ये अधर मत शुष्क , निष्प्रभ ;
मत हटाओ, मत हटाओ, मत हटाओ , पद-कमल अब,
कर रहे चीत्कार हैं यों प्राण ये नादान मेरे ,
मान कैसा ? प्राण मेरे ।"[१]

मिलन के मधुर प्रसंग में कहीं-कहीं 'नवीन' जी कुछ खुल से जाते हैं और उनके हृदय की कोई निर्भीकता से खिल कर खिल खिला पड़ती है ।[२] परन्तु पुन: उन्हें लोकापवाद का डर हृदय में घर कर जाता है :-

" माली की डलिया का धन
ले लूँ , मैं सब कुछ देकर ;
कर दूँ तेरे चरणार्पण
बंध जाऊँ बस तेरे कर ;
किन्तु हाय ! लोकापवाद,
पथ का बन्धन हो जाता है ।"[३]

प्रेमी अपनी प्रेमिका के हेतु अनेक कष्ट सहन करता है और प्रेमिका से यह छिपा नहीं है कि उसके साथ प्यार का नाता जोड़कर नायक ने अपने लिए विपदाओं को आमंत्रित किया । अपने हृदय में ज्वालाओं को समेट कर नायक सदा कठिनाइयों से घिरा रहा :-

---

१. 'क्वासि' - 'मान कैसा' , पृ० ४६ ।
२. 'नवीन दर्शन' - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ७५ ।
३. 'कुंकुम' - 'बेबसी' , पृ० ४७ ।

" मेरे कारण, प्रियतम, तुमने कौन व्यथा है, जो न सही है ?
ऐसी कौन वेदना है जो हठ कर तुम से दूर रही है ?
देह कर मुझे नेह निज तुमने विपदाएँ आमंत्रित कर ली,
तुमने निज सुकुमार हृदय में यों ज्वलन्त ज्वालाएँ भरली । "[१]

शुद्ध प्रेम की प्रवृत्ति सदा स्वच्छन्द रह कर ही प्रवाहित होना चाहती है परिणामस्वरूप दोनों (प्रेमी और प्रेमिका) विश्वास और समर्पण के बल पर एक अभिन्न सम्बन्ध में बन्ध जाते हैं । उनका प्रेम पूर्ण समर्थ होता है । नायिका अपने और प्रियतम के मध्य कोई अन्तर नहीं देखना चाहती :-

" प्रिय, त्वम् मय कर दो मन तन-मन,
ऐसा कर दो मुझे कि मैं बिसरूं अलग-थलग अपनापन,
प्रिय, त्वम् मय कर दो मन तन-मन ! "[२]

कभी-कभी नायिका अपने नायक से विनय पूर्वक आमंत्रण देती है :-

" आओ, बलिहारी जाऊँ, तुम झूलो आज हिंडोले ;
मैं झोटे दूँ , तुम चढ़ जाओ झूले पे अनबोले । "[३]

बालकृष्ण एक शुद्ध कलाकार थे और ऐसे नाते एक प्रणयी भी थे ।[४]

---

१. `अपलक` - `तुम ने कौन व्यथा न सही है` , पृ० २४ ।
२. `अपलक` - `प्रिय, त्वम- मय कर दो मम तन-मन` - पृ० ७४ ।
३. `रश्मि रेखा` - `हिंडोला` , पृ० ६३ ।
४. `निस्वार्थ प्रीति का वह अमर गायक` (लेख) - देवव्रत शास्त्री - साप्ताहिक हिन्दुस्तान , ३ जुलाई १९६० , पृ० ३३ ।

उनके सम्पूर्ण प्रेमकाव्य में कभी नायिका की ओर से तो कभी नायक की ओर से प्रेम-क्रीड़ा की इच्छा प्रकट होती है। संयोग में दोनों प्रसन्न हैं, प्रेमिका इसलिए कि उसका साजन उसके सामने है और उसकी हृदय तृष्णा शान्त होती है, नायक इसलिए कि नायिका के मुख-कमल की छवि का दर्शन प्राप्त कर वह चिर आनंदित होता है। नायक अपनी प्रिया को देखता है तो बरबस पुरानी स्मृतियाँ उसके मन: पटल पर छा जाती है :-

" तुम युग युग की पहचानी-सी,
हो कौन, सुनुसि ! अनजानी-सी ?
जो देख तुम्हें आँखें रोईं ?
क्या पर्दा-सा हट गया, जो कि, -
लगती जगती धोई-धोई ?
जग नया लग रहा ; पर तुम तो लगती हो बहुत पुरानी-सी
तुम कौन सुनुसि अनजानी-सी ?[१]

यौवन एवं रूप के अनेक चित्र 'नवीन' जी ने खींचे हैं जिन में प्रेयसी के अद्भुत सौन्दर्य का वर्णन मिलता है। नायिका के कोमल अंगों की शोभा नायक को आकर्षित करती है और उसके हृदय में एक टीस उत्पन्न होती है:-

" तव ढिँग ही मँडराया करता है मेरा मन !
जैसे मँडराते हैं जलजों के ढिँग कालिंगण !
कभी मृदुल वरणों पर, कभी मधुर श्री मुख पर,
कभी सघन केशों-पर, कभी दृगों पर रुक कर , -
करता ही रहता है मन गुन-गुन , ओ सुकर ?

---

१. 'क्वासि' - 'तुम युग-युग की पहचानी सी', पृ० ६२ ।

उठती ही रहती है मम तन-मन में सिहरन ,"[१]

कवि अपनी नायिका को अनेक प्रकार से सम्बोधित करता है । 'हिरनी की आँखों वाली' कितना मार्मिक, सरल, सहज एवं मौलिक सम्बोधन है:-

" लट्ठ धरे अपने काँधे पर जो , हँकारता अपनी गायें,
बढ़ा आ रहा था, लेकिन तू देख रही थी ये लीलाएँ,
मैंने देखा, खड़ी मेंड़ पर , छुरपी लिये हाथ में, कोई,
द्वापर की राधा रानी-सी, चित्रे रही है खोयी-खोयी;
देख रही थी क्या तू गायें, धौली, धूमर, काजर-काली ?
या ग्वाले को देख रही थी , ओ हिरनी की आँखों वाली ।"[२]

प्रो० श्यामला कान्त वर्मा ने लिखा है - "'नवीन' जी का भावुक हृदय समय-समय पर प्रेम की प्यास का अनुभव भी करता रहा है । रूप के प्रति आसक्ति भाव का कथन उन्होंने बड़े ललित ढंग पर किया है ।"[३] अपनी प्रेमिका से अपने अंधकार पूर्ण जीवन को आलोकित करने की आकांक्षा व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा है :-

" दीप रहित जीवन-रजनी में, भटक रहा कब से सजनी मैं ।
भूल गया हूँ अपनी नगरी , कुहू व्याप्त है सारी डगरी ।।
अपनी दीप-शिखा की किरणें जाने दो उस पथ की ओर ।
जहाँ भ्रांत सा ढूँढ रहा हूँ प्रतिमे तब अंचल का छोर ।।"[४]

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'मेरा मन' , पृ० ३५ ।
२. 'ओ हिरनी की आँखों वाली !' - 'हम निषपायी जन्म के', पृ० ३७३।
३. 'काव्य-समीक्षा' लेखक - प्रो० श्यामलाकान्त वर्मा - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (परिचय), पृ० २२६ ।
४. 'कुंकुम' - 'अंचल का छोर', पृ० ५२ ।

शुद्ध प्रेम बिना किसी स्वार्थपरक इच्छा के हुआ करता है । नायक दिनभर अकेला ही था और जब पुनः सायं अपनी प्राणप्रिये से मिला तो अपनी आकुल दशा का वर्णन यों करता है :-

'दिन में गायों की कजरारी भोली आँख देख-देख कर ,
याद कर लिया करता हूँ मैं, सुन्दर तेरी आँख मनहर ;
तू जाती है खेत निराने , मैं जाता हूँ ढोर चराने ,
दिन भर गाया करता हूँ - मैं तेरे ही गुनगान-तराने ;
देखा करता हूँ चिड़ियों की जोड़ी बैठी डाली-डाली ,
पर, मैं तो हूँ निपट अकेला, ओ हिरनी की आँखों वाली'।[१]

प्रणय-निवेदन करते समय कवि की प्रेम-विह्वलता उनकी पंक्तियों द्वारा स्पष्ट अभिव्यक्त होती है । प्रो० केशवदेव ने लिखा है - 'नवीन' जी की कला मोहक सपनों की मधुर पयस्विनी है । तरल तरंगों की भाँति जीवन की प्रणयी मीठी उर्मियाँ उसमें उठा करती हैं ।'[२] कवि की आतुरता हृदय स्पर्शी है :-

'आओ , - मुख देखो , हैं दो - दो -
दर्पण मेरी आँखों में ;
ये दर्पण प्रतिबिम्बित करते
तुम को चुन के लाखों में
कहाँ मिलेंगे तुम्हें नयन-पट -
ऐसे दर्पण ? कहो, लली ,
मत भटको मुकुरों का सौदा-
करती फिरती गली-गली ।

---

१. 'ओ हिरनी की आँखों वाली' - 'हम विषपायी जन्म के', पृ० ५७४ ।
२. 'नवीन-दर्शन' - केशवदेव उपाध्याय, पृ० ७४ ।

इन आँखों में सजनि, देख लो तुम भी तो अपनी झाँकी ।
हँस दो, मुसकादो, सिसका दो हिय, कसके स्नेह टाँकी ।"[१]

~~प्रेयसी के बिना वह अपने को निस्सहाय एवं निर्बल समझता है । वह जीवन के संघर्ष को सफल बनाने के लिए उसका साथ चाहता है और कभी-कभी इसका संकेत वह उसके सम्मुख भी करता है :-~~

~~" आज सोचता हूँ, प्रिये, तुम बिन कैसे होगा जीवन-चार ?~~
~~कौन वहन कर सकेगा हिय यह इतना दुसह सम्भार ?~~
~~अच्छा हो, यदि निश्चिंत सान्त हो, यह अपना जीवन-विस्तार।"~~[२]

'नवीन' जी ने अनेक शृंगारिक दोहे लिखे हैं जिन में संयोग शृंगार का वर्णन बड़ी कुशलता से हुआ । इन दोहों के द्वारा उनकी वर्णन शक्ति एवं चित्रण कला का परिचय मिलता है । याचक बन कर वह प्रेयसी से कहता है:-

" जब हम माँगत अधर-रस, तबहीं तुम मुसकात,
फिर, नाहीं कर देत हौं, कहहु कौन यह बात ?"[३]

साजन की नींद भंग न हो जाए - इस डर से प्रेयसी वायु से विनय करती है कि ज़रा धीरे से चल । कोयल कू-कू करती है और वह उसे भी चुप कराने का प्रयत्न करती है :-

'हमरे बलम को कोउ न जगइयो, कोउ जनि गाइयो मलार रे ,

---

१. 'सिंगार' - 'हम विषपायी जन्म के', पृ० ३८८ ।
२. ~~'प्यार बना नेत्र अभिशाप', 'हम विषपायी जन्म के', पृ० ६०२ ।~~
३. 'नवीन दोहावली' - ज० प्र० श्रीवास्तव (लेख- साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ८ जुलाई १९६२) ।

कंगनन की खन-खन जनि करियौ, ना पायल झनकार रे ।
राग भरी कारी कोयलिया , तू क्यों कूकी, आय, रे ?'[१]

प्रेयसी की अनुपस्थिति में नायक ने अपनी बाँसुरी की मीठी तान छेड़ दी । इस ध्वनि को सुनकर नायिका का हृदय मचल उठा । येन-केन-प्रकारेण वह घर से निकल पड़ी और प्रियतम के पास पहुँच कर भौंवें चढ़ा कर कह उठी :-

' क्यों बजाई बाँसुरी ? मैं तो, सजन, आही रही धीं ?'[२]

परन्तु फिर मुख पर हँसी लाकर कहने लगी :-

'प्रिय, मन मन - पंछी अकुलाया ।'[३]

इस प्रकार हमें 'नवीन' जी के काव्य में संयोग शृंगार के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं । स्वच्छन्द-प्रेम के साथ-साथ सच्ची भावनाओं को सम्यक् वाणी 'नवीन' जी द्वारा प्राप्त हुई । उन्होंने सर्वोत्तम भावनाओं को ही अपने काव्य में अपनाया क्योंकि वे जानते थे कि जनता केवल सर्वोत्तम का ही स्वागत करेगी । उनके संयोग-वर्णन में हमें सरल और सीधी व्यंजना के दर्शन होते हैं । यही कारण है कि उनका संयोगवर्णन बहुत सुन्दर बन पड़ा ।इन गीतों में प्रभाव, सत्यता और सजीवता है ।

वियोग-पक्ष

'नवीन' जी के काव्य में जहाँ संयोग-वर्णन अत्यन्त मार्मिक एवं

---

१. 'राग-विराग' - 'हम विषपायी जन्म के', पृ० २३१ ।
२. 'क्वासि' - 'मैं तो सजन, आही रही धी' , पृ० ८४ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'मन मन - पंछी अकुलाया', पृ० ४० ।

हृदय ग्राहक है वहाँ वियोग-वर्णन भी अत्यंत मर्मस्पर्शी है। 'कुंकुम' की भूमिका में स्वयं उन्होंने लिखा है — '- - - आज की कविता में रोदन और गायन का समन्वय हो रहा है।'[१] पन्त जी ने भी कविता का आरम्भ वियोग वर्णन से ही माना है[२] और महादेवी विरह से चिर सन्तुष्ट हैं।[३] 'नवीन' जी के स्थायी सहचर विप्रलम्भ एवं वियोग-भाव हैं। डा० विनयमोहन शर्मा ने लिखा है — 'विरह भावना की व्याप्ति अपरिमित है, साहित्य शास्त्र उसे अपनी परिधि में नहीं बाँध सका है। मानव जीवन की अनेक दशाओं की व्याख्या

---

१. 'कुंकुम' - भूमिका, पृ० १३।

२. कल्पना में है कसकती-वेदना,
अश्रु में जीता, सिसकता गान है;
शून्य आहों में सुरीले छन्द हैं;
मधुर लय का क्या कहीं अवसान है!
वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान;
उमड़ कर आँखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान।'
— आधुनिक कवि० नं०२ - आँसू से - 'पंत' (नवाँ संस्करण), पृ० १५।

३. 'एक करुण अभाव में चिर -
तृप्ति का संसार संचित;
एक लघु क्षण दे रहा
निर्वाण के वरदान शत शत;
पा लिया मैंने किसे इस
वेदना के मधुर क्रय में?
कौन तुम मेरे हृदय में?'
— 'नीरजा' (महादेवी वर्मा - गीत ७ (कौन तुम मेरे हृदय में) पृ० १४.

उसमें हुई है - - - - विरह की भावस्थिति शृंगार रस के अन्तर्गत मानी गई है, जो प्राय: नायक-नायिका के शारीरिक वियोग का परिणाम होती है - - - - ।"[१] उनका सम्पूर्ण काव्य उनके निजी जीवन का प्रतिबिम्ब है ।उनकी कई कविताएँ उनके वियोगी जीवन की कसक एवं पीड़ा का अनुभव कराती हैं । वेदना एवं करुणा की व्यापकता स्वीकार करते हुए उन्होंने स्वयं लिखा है- "आज, यदि सामाजिक बन्धनों के कारण एक नौजवान या नवयुवती अपने स्नेह-पात्र को प्राप्त नहीं कर सकते और यदि वे वियोग और विछोह के हृदय ग्राही गीत गा उठते हैं, तो यह न समझिये कि यह केवल उन्हीं की वेदना है , जो यों फैल पड़ी है - यह वेदना तो समूचे हृदयों की चीत्कार है ।"[२] प्रेम एवं विरह दोनों का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है । विरह की अग्नि में तप कर ही प्रेम कुन्दन बन जाता है । यह प्रेमी-जन के लिए परिष्कार का समय होता है ।

'नवीन' जी के काव्य में यत्र-तत्र वियोग शृंगार के सुन्दर चित्र मिलते हैं । प्रियतम की अनुपस्थिति में नायिका की दशा दर्शनीय है :-

"तुम क्या गए कि इस जीवन की सत्य-प्रेरणा लुप्त हुई है,
तुम क्या गए कि इस जीवन की मधुर भावना लुप्त हुई है,"[३]

नायिका अपने प्रियतम के वियोग में तड़प रही है और अब उसके लिए जीना भी दुर्लभ है । यदि वह जीवित है तो केवल नायक की मधुर स्मृति लेकर :-

"हम तो आठों याम, प्राणधन, ध्यान तुम्हारा धरा करे हैं;

---

१. 'काव्य में विरह-भावना' - डा० विनय मोहन शर्मा - 'आदर्श' दिसम्बर १९६३, पृष्ठ १७ ।
२. 'कुंकुम' - कुछ बातें , पृ० ११-१३ ।
३. 'नवासि' - 'मेरे स्मरण-दीप की बाती', पृ० ४० ।

यों स्मृति-आवेगों में हम नित जिया करें हैं, मरा करें हैं ।"[१]

प्रियतम अतिथि के समान आता है और आशाओं पर पानी फेर कर चला जाता है :-

"बन-बन कर मिट गए अनेकों मेरे मधुमय स्वप्न रंगीले,
भर-भर कर फिर-फिर सूखे हैं मेरे लोचन गीले-गीले;
यदा-कदा है मिले मुझे तो तुम-जैसे कुछ अतिथि लजीले!
यों ही बन-बन कर बिगड़े हैं मेरे मधुमय स्वप्न रंगीले ।"[२]

अत: जाते समय वह अपने प्राणप्रिय सलौने से स्पष्ट शब्दों में कहती है:-

"दूभर-सा करता है तुम बिन जीवन, प्रियतम ,
चलता ही जाता है , कालचक्र अति निर्मम ।"[३]

प्रेम की अनन्यता भी देखिए । एक बार जिसे हृदय दे दिया उसे फिर मोल-भाव करने की आवश्यकता नहीं । क्योंकि प्रीति देना जानती है, लेना नहीं । यह हृदय का सम्बन्ध है :-

"नेह के हरे हाट में मैंने न जाना भाव क्या है ?
भाव-तावों में पड़े जो, वह सुरति का चाव क्या है ?
दाव पर जब प्राण हैं, तब शेष भी कुछ दाव क्या है ?
जब कि दे डाला सभी कुछ, प्राप्ति का फिर ध्यान क्या, प्रिय ?
दान का प्रतिदान क्या, प्रिय ।"[४]

---

१. 'ध्यान तुम्हारा धरा करें हैं' - 'अपलक', पृ० ११ ।
२. 'क्वासि' - 'मेरे मधुमय स्वप्न रंगीले', पृ० १६ ।
३. 'क्वासि' - 'दूभर सा करता है तुम बिन जीवन, प्रियतम', पृ० ३६ ।
४. 'क्वासि' - 'दान का प्रतिदान क्या प्रिय', पृ० ११२ ।

जाने से पहले वह प्रिय को अनेक युक्तियों से मनाने का प्रयत्न करती है :—

" क्या बतलाऊँ क्या होता है उस में एकाकी का हाल ?
मैं ही जानूँ हूँ कैसा है यह तपस्विनी - काल कराल ।"[१]

और जब प्रियतम चले गए तो :-

" चार दिन की चान्दनी थी, फिर अंधेरी रात है अब,
फिर वही दिग्भ्रम, वही काली धुंध की बात है अब ।"[२]

नायिका का हृदय विरह-अग्नि से संतप्त कुछ सह नहीं सकता । वह नायक से अपने दग्ध-हृदय की दशा का वर्णन करना चाहती है परन्तु नायक की अनुपस्थिति में वह केवल विलाप ही करती है :-

" मत मुँह मोड़, अरे बेदरदी, काँटे तनिक निकाले जा ;
रोम-रोम मम आज कण्टकित, हिय में शूल समाए हैं,
अमित थकित इन चरण-तलों में काँटे जाल बिछाये हैं;
जाने किस प्रतिकूल पवन में , ये कण्टक उड़ आए हैं ,
शूल मयी जीवन-डगरी है , इसको आज संभाले जा ।"[३]

डा० विनय मोहन शर्मा ने लिखा है — 'यद्यपि लौकिक जगत में विरह का अनुभव दु:ख के रूप में होता है पर साहित्य में उसकी अनुभूति सुखमय ही

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'भीग रही है मेरी रात', पृ० ७६ ।
२. 'रश्मि रेखा' - 'धुंध की बात' , पृ० ५३ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'मत मुँह मोड़, अरे बेदरदी', पृ० ६१ ।

होती है क्योंकि कवि का उससे व्यक्तिगत लगाव नहीं रहता । यह नहीं कि वह उससे उत्पीड़ित नहीं होता , करुण काव्य को पढ़कर उसकी आँखें नहीं भीगतीं । वह उत्पीड़ित होता है, अश्रु गद-गद् भी होता है पर इनका पर्यवसान सुख में ही होता है । - - - हमारे जीवन का वास्तविक दु:ख साहित्य में वर्णित दुख से उद्बुद्ध हो आँखों के मार्ग से निःसृत हो जाता है । परिणामत: हम सुख अनुभव करने लगते हैं ।[१] यही कारण है कि कवि को सिसकने में आनन्द प्राप्त होता है :-

`सिसकने में ही मज़ा मिलता रहा,-
कसक की उस वेदना की चाह से -
हम विपन्नों का कमल खिलता रहा ,
दर्द को दिल से लगाया चाह से ।[२]

प्रियतम परदेश में हैं और प्रियतमा अपनी सतत टेर द्वारा अपनी करुण दशा का वर्णन करती है । उसके प्रत्येक शब्द में हृदय की पुकार है। वास्तव में वियोग ने उसके हृदय पर छाले डाल दिये हैं :-

` प्राण, नयन, मन, श्रवण, तन, अपने को अकुलात,
पै साजन नहिं ढरतइत , जीवन बीत्यो जात ।[३]

कवि महोदय ने अपनी निजी अनुभूति के आधार पर ऐसे मार्मिक चित्र खींचे हैं जो पाठक के हृदय पर अपना स्थायी प्रभाव डाल देते हैं । वह पीड़ा

---

१. `काव्य में विरह भावना` लेख डा० विनयमोहन शर्मा - `आदर्श पत्रिका` दिसम्बर १९६३ , पृ० १८ ।
२. `कुंकुम` - `सूखे आँसू` , पृ० २१ ।
३. `हम विषपायी जन्म के` - `अनवाप्त` , पृ० २२६ ।

में भी किसी एक ऐसे रस का अनुभव करता है जो उसे निरन्तर पुष्ट एवं जाग्रत बनाये रखता है । वह अपनी चिर परिचित प्रेयसी के लिए पुकार उठता है:-

"सिसक रही जीवन की घड़ियाँ,
सूख रही हिय- कुसुम - पँखड़ियाँ,
टूट रहीं भावों की लड़ियाँ ,
ढूँढ़ रही तुम्हें अँखड़ियाँ ,
एक बार जो आ लेने दो, उस निष्ठुर आंगन की ओर,
जहाँ छिटकता है, ढुलता है, प्रतिमे, तब अंचल का छोर ।"[१]

केवल नायिका ही दुखित नहीं अपितु नायक भी विरह की घड़ियाँ विवश होकर बिता रहा है :-

"तुम क्या जानो बिता रहा हूँ
कैसे मैं जीवन - घड़ियाँ ?
कैसी प्यासी - सी रहती हैं,
मेरी आकुल अँखड़ियाँ ?"[२]

डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है – "कवि 'नवीन' के जीवन में वेदना का सूत्र आद्यन्त विद्यमान रहा । इस का मूल कारण, उनके जीवन की अस्थिरता , अभावों की प्रतीति, अनासक्ति-वृत्ति आदि रहे हैं ।"[३] उनकी गहन वेदना का आभास इन पँक्तियों में मिलता है :-

---

१. 'कुंकुम' - 'अंचल का छोर' , पृ० ५२ ।
२. 'कुंकुम' - 'ओझल झाँकी' , पृ० २२ ।
३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - २ फरवरी १९६४ - 'काव्य के भूतराज कविवर 'नवीन' - डा० दुबे , पृ० ४८ ।

"लिख विरह के गान, रे कवि, लिख विरह के गान,
अमित खिलने दे अधर पर दुख-भरी मुसकान ,
रे कवि, लिख विरह के गान ,
इस घड़ी में बढ़ गई है शून्यता मम हिय विकल की,
असहनीया हो गई है सतत धारें मेघ- जल की ;
किन्तु कब उनने सुनी है प्रार्थना आतुर निबल की ?
तू लगा मम वेदना का आज कुछ अनुमान ,
रे कवि, लिख विरह के गान !"[१]

इतने पर भी प्रियतम की सुनी अनसुनी से खीझ कर कवि कह उठता है – "लज्जा है कि उपेक्षा ? मुझ को ज़रा बता दो प्राण !" और साथ ही निष्ठुर प्रिय को धमकाने के लिए एक प्रेम भरी धमकी है :-

"झाँकी कर लेने दो वरना वे लोचन बेचैन ,
तड़प-तड़प कर बन जायेंगे सूरदास के नैन ,"[२]

"क्या करूँ इन आँखों की भी विचित्र दशा है :-

"प्यारी इन अँखियान की बड़ी अटपटी नेह,
कबहुँ चमकत बीजुरी , कबहुँ बरसत मेह ।"[३]

और फिर :-

---

१. "क्वासि" - "लिख विरह के गान" , पृ० ३ ।
२. "हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर" - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी - लेख - "नई धारा" , पृ० ३४० ।
३. "हम विषपायी जन्म के" - "नैना" , पृ० २१७ ।

'पर नींद हो गयी बैरिन,
नैनों को छोड़ सिधारी;
यह रात , बिरात हुई है,
आँखें क्या करें बिचारी ?'[१]

कवि प्रीति को व्यवहार की वस्तु नहीं समझते थे । एक स्वाभिमानी की तरह वह अभाव की तपन को सहन करने को तैयार थे । प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है – ''नवीन' के वियोग-गीत प्राणों को उद्वेलित कर देते हैं । जहाँ मिलन की आतुरता जीवन में एक मिठास भर देती है, वहाँ वियोग की बेकली भी दिल को झकझोरे बिना नहीं रहती । यह होते हुए भी विरह की कातरता में हम 'नवीन' को विचलित होते नहीं देखते ।'[२] वे अपनी प्रेयसी से केवल यह विनय करके रह जाते हैं :-

'सरकार, न आओ तो नूपुर तो मत बजाओ -
इससे तड़प उठे हैं आकुल हृदय हमारा ;'[३]

'एक बार जिसे हृदय दे चुके उसके सभी कुछ तो हार बैठे । उस पर विश्वास किए बिना रहा नहीं जाता परन्तु वह निर्मोही , निष्ठुर वचन-पालन क्यों करे ! उससे हर समय मुझे रुलाने में ही आनन्द मिलता है:-

'प्रिय ! लो, डूब चुका है सूरज, ना जानें कब का;
वचन तुम्हारा भंग हुआ है, क्या जानें कब का ?

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'नौका निर्वाण', पृ० ४० ।
२. 'नवीन-दर्शन' - केशवदेव उपाध्याय, पृ० ७५ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'व्याकुल' , पृ० ३६६ ।

सांध्य मिलन के आश्वासन पर काटी घड़ियाँ दिन की,
बड़े चाव से हम ने जोही बाट सांझ के छिन की ;
दिन की मेघ-विलास-वेदना, किसी तरह सह डाली,
इसी भरोसे कि तुम सांझ को आओगे बनमाली ।"[१]

जगवासी प्रेयसी पर हंसी उड़ा रहे हैं और इसका दोषी वह केवल नायक को ठहराती हैं । वह इस कलंक को सह लेती है परन्तु साथ ही उस प्रियतम को भी फटकारती है । परन्तु इस फटकार से उसके आतुर हृदय का परिचय मिलता है :-

" तेरा मेरा नाता क्या है ? यह, मैं जग को क्या समझाऊँ ?
खिसक-खिसक हँसने वालों को मैं क्या हृदय मर्म बतलाऊँ ?"[२]

बहुत समय व्यतीत हुआ और प्रेयसी प्रतीक्षा करते-करते थक गई । वियोग-जनित दुख उसकी बाढ़ इस कदर आई कि विरहिणी अत्यंत व्याकुल हो उठी, पर वह तो प्रेम-दीवानी थी , उसका व्यथित हृदय स्वयंमेव पुकार उठता है :-

" फिर से क्या आफ़त आयी ।
दिल कहाँ गया वह अपना ?
है अजब हाल इस मन का
देखे हैं दिन में सपना ।"[३]

---

१. `रश्मिरेखा` - `प्रिय लो डूब चुका है सूरज` , पृ० ५५ ।
२. `अपलक` - `तेरा मेरा नाता क्या है` , पृ० ६६ ।
३. `हम विषपायी जन्म के` - `फिर से` , पृ० ३६२ ।

कहीं-कहीं विरह-वर्णन में 'नवीन' जी ने रूढ़ि का आश्रय भी लिया है। वस्तु-चित्रण शक्ति का परिचय 'नवीन' जी ने इन कविताओं में दिया है। होली का त्योहार है परन्तु नायिका के लिए असहनीय पीड़ा का कारण बन गया। मनमोहन के बिना होली का क्या आनन्द ? यह वेदना असहनशील है। वह पुकार उठती है :-

'कहाँ हो तुम मेरे सरकार ? आज है होली का त्योहार।
कहाँ हो तुम , मेरे सरकार ?
धधक रही है अन्तर - तर में विरह - ज्वाल विकराल ,
आज लगा है मेरे हिय में होली का अंबार ।
कहाँ हो तुम , मेरे सरकार !'[१]

कभी नायिका पत्र लिखकर उस निर्मोही को निमन्त्रण देना चाहती है, परन्तु ज्यों ही पत्र लिखने का निश्चय करती है त्यों ही कुछ और ही विचार उसके मन में उथल पुथल मचा देते हैं। जब प्रियतम हिय में विद्यमान है तब अक्षरों का सहारा क्यों लिया जाय ?

'मैं क्या लिखूँ तुम्हें पाती, प्रिय, अब क्या लूँ मैं शब्द-सहारा ?
जब हिय में तुम बसे हुए हो , तब अभिव्यंजन कौन विचारा?
रोम - रोम में , श्वास-श्वास में, रक्त-कणों में, अन्तर-तर में,
मेरी ज्ञान - ध्यान-पूजा में , मेरे इस मानस-अम्बर में ,-
जब तुम रमे हुए हो मेरी हिय- उमंग की लहर-लहर में ,
तब अक्षरों और शब्दों से कौन भेद बतलाऊँ सारा ?
मैं क्या लिखूँ तुम्हें पाती , प्रिय , अब क्या लूँ मैं शब्द-सहारा।'[२]

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'आज है होली का त्योहार' , पृ० २५ ।
२. 'क्वासि' - 'पाती' , पृ० १०४ ।

फिर भी निश्चयकरके वह लिखने बैठती है, परन्तु उसका हृदय काँपने लगता है। अनेक प्रश्न मन में उठते हैं क्या लिखूँ ? कैसे लिखूँ ? कुछ समझ में नहीं आता :-

`यही नहीं कि हाथ कँपते हैं,
हिय भी कँपता आज,
पूरन कैसे होगा पतिया -
लेखन का यह काज ?
क्या कह तुम्हें करूँ सम्बोधित ?
लिखते लगती लाज,
`प्या - - ` लिखते ही कलम निगोड़ी
कँप जाती है आज ?`[१]

अन्त में जब वह थक जाती है तो उसका प्रणय-निवेदन दर्शनीय है:-

`अब मत बिलगो, प्रियतम, आजाओ, हृदय लगो,
दूर-दूर से ही तुम निज जन को अब न ठगो
ओस-बिन्दु ने नभ से आकर चूमे शतदल,
दूर देस के अलिगण उन पर झूमे पल-पल,
और, एक तुम हो, जो मुझको भूले, चंचल,
आए हैं शुभ क्षण अब, विरति रंग तुम न पगो;
आओ, प्रिय-हृदय लगो।`[२]

---

१. `कुंकुम` - `दो पत्र`, पृ० ८७-९१।
२. `अपलक` - `आओ, प्रिय हृदय लगो।`, पृ० ८४।

आँखों से निरन्तर अश्रुधारा बहती है, परन्तु निष्प्रयोजन । वह पाषाण हृदय इन मोतियों का मोल क्या जानें :-

"मत बह, मत बह अरे हठीले, तनिक ठहर, मेरी सुन ले,
कृपा खेद का भेद, उसे तू खोल न, ओ बैरी, सुन ले ;
कण्ठ द्वार पर ही रुक, रुक तू,
आगे को न रंच भी झुक तू ?"[१]

अश्रुओं के माध्यम से उसकी अन्तर्हित पीड़ा व्यक्त होती है परन्तु कोई सहानुभूति प्रकट करने वाला नहीं । अत: आँसुओं के प्रति सम्बोधन करते हुए विरहिणी कहती है :-

" ढरक-ढरक मत गिर, रे दृग-जल !
अपनी अंतर्हित पीड़ा को मत प्रकटा रे, तू यों पल-पल ;
ढरक-ढरक मत गिर रे, दृग- जल ।"[२]

और अन्त पर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचती है :-

"गायन उनको नहीं सुहाता, उन्हें रुदन से प्रेम ।
मेरे प्रिय की एक अदा यह, है यह उनका नेम ।।"[३]

डा० रामधारीसिंह "दिनकर" ने लिखा है — "जिस वेदना की अनुभूति से उत्तेजित होकर सामान्य मनुष्य पत्थर का जवाब पत्थरों से देता है , उसी

---

१. "हम विषपायी जन्म के" - "आँसू के प्रति", पृ० ३६६ ।
२. "अपलक" - "ढरक-२ मत गिर रे दृग-जल" , पृ० ७ ।
३. "हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर" - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी- नई धारा (लेख), पृ० ३३६ ।

वेदना की अनुभूति को लेकर सत्कवि कोई सूक्ति बना देते हैं।[१] वेदना के सहारे जीवन की पहेली को सुलझाने का प्रयत्न देखने योग्य है :-

'मेरी वेदना सहेली है,
बचपन से वह संग खेली है ;
जल-कण से बूझ रहा हूँ मैं –
यह जीवन जो कि पहेली है ;
टुक सुलझाने दो, सुनो ढेर, - क्यों छेड़ रहे हो बेर-बेर ?'[२]

प्रेम-मार्ग बड़ा कठिन है। यह एक व्रत है, एक तपस्या है और अभिमान रहित समर्पण है। जयशंकर प्रसाद ने अपने 'प्रेम-पथिक' में लिखा है :-

'पथिक प्रेम की राह अनोखी भूल भूल कर चलना है,
सोच समझ कर जो चलता है वह पूरा व्यापारी है।'[३]

ठीक इसी व्रत का पालन करते समय कवि कह उठता है :-

'पाँव थके, हिय थका, जिय थका, लोचन थके, थके अंग-अंग,
आशा थकी, प्रतीक्षा हारी, थकी कल्पना, थकी उड़ान,
हम तो बहुत थक गये, प्राण।'[४]

प्रो० केशव देव उपाध्याय ने लिखा है – 'मिलन और वियोग प्रेम

---

१. 'दिनकर' - 'वट पीपल', पृ० ३६।
२. 'क्वासि' - 'मनुहार', पृ० ७६।
३. 'प्रेम पथिक' (हिन्दी ग्र० भण्डार कार्यालय, बनारस), पृ० १६।
४. 'अपलक' - 'श्रान्त', पृ० २८।

के दो पहलू हैं। मिलन जीवन का एक मधुर स्वप्न है, वियोग प्रेम की गहन समीक्षा। 'नवीन' के काव्य में प्रेम के दोनों ही पक्ष बड़े ही सुष्ठ बन पड़े हैं। 'नवीन' की कविताओं में प्रेम की एक खोज है। 'कुंकुम' की भूमिका में स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है — "बाज़ औक़ात कुछ धुँवा सा मन में मँडराने लगता है और कुछ कहने की ख्वाहिश हो उठती है।" यह धुआँ ऐसा वैसा नहीं, बल्कि वियोग में सुलगते हुये हृदय का धुँआ है।"[१] विरह-अग्नि हृदय में सुलग रही है अत: इस व्यथित-हृदय की करुण दशा का चित्रण करने में वह (कवि) अपने को असमर्थ समझता है -

"बिथा या हिय की बरनि न जात,
छिन-छिन गिनत कलप शत बीते, अजहुँ न होत प्रभात ;
बिथा या हिय की बरनि न जात।"[२]

यह विरहणी के प्राणों की शाश्वत पुकार है, चिर अभिलाषा है और जीवन का लक्ष्य है :-

"बिचरहु पिय की डगरिया, बसहु पिय के गाँव,
पिय की ड्योढ़ी बैठि कै, रटहु पिय को नाँव।"[३]

प्रिय की उपेक्षा एवं विरह अग्नि का तत्व किसी प्रकार से वह सह लेती है परन्तु जब निर्दोष पराया हुआ तो फिर उसका नाम जानने से क्या लाभ ? अब लोक निन्दा का भय उसे खाये जा रहा है :-

---

१. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० ६२।
२. 'रश्मि रेखा' - 'बिथा या हिय की बरनि न जात', पृ० १०६।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'यह प्रवास-आयास', पृ० २१३।

'अब कबतक खोजोगे साजन ?
अब खोजा तो जगत हँसेगा ओ' तुम मर जाओगे लाजन,
हुआ पराया वह पीतम भी जिसको तुम समझे थे अपना,
उसने ही यदि त्याग दिया तब अब क्या नाम किसी का जपना ?'[१]

उसकी आशाओं पर जब पानी फिर जाता है तो प्रियतम को खरी-खरी सुनाती है । उसका विरहाकुल हृदय चीख उठता है:-

'मत मुँह मोड़ , अरे बेदरदी, काँटे तनिक निकाले जा ;
शूलमयी जीवन-डगरी है, इसको आज सँभाले जा,
जाता है ? जा ; विरह ताप में मुझको खूब उबाले जा,
मैं देती ही रहूँ निमंत्रण, ओ' तू हँस-हँस टाले जा ।'[२]

वास्तव में 'नवीन' जी ने वेदना को बड़ा महत्व दिया और उसे वरदान स्वरूप माना । उनके हृदय की वेदना, पीड़ा, कसक और टीस इन कविताओं में व्यक्त हुई है । प्रो० दुगादत्त शास्त्री ने लिखा है - 'वे तभी लिखते हैं जब हृदय इतना मथ जाता है कि पीड़ा को कागज़ पर बहाये बिना हल्का ही नहीं होता - - - - ।'[३] वे स्वस्थ प्रेम के पुजारी थे जिसमें छल-कपट लेशमात्र भी न था । उनका विरही-जीवन का चित्रण इसकी साक्षी देता है । प्रेमी और प्रेमिका एक दूसरे के लिये विह्वल रहते हैं और उन्होंने दोनों ओर की विरह-व्याकुल दशा का चित्रण किया है । श्री जगदीश प्रसाद

---

१. 'क्वासि' - 'अब कब तक खोजोगे साजन' , पृ० ५५ ।
२. 'रश्मि रेखा' - 'मत मुँह मोड़ अरे बेदरदी' , पृ० ६१-६३ ।
३. 'कल्लोल' (आधुनिक कविताओं का संकलन) सम्पादक - प्रो० दुगादत्त शास्त्री -(एक परिचय)-(पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'),पृ०११३ ।

श्रीवास्तव ने लिखा है – " इनका वियोग-वर्णन सहज स्वाभाविक अनुभूति और कल्पना के साथ लौकिक धरातल पर चलता है । हाँ, वियोग की लगभग सभी दशाओं का वर्णन इनमें देखने को मिलता है किन्तु वह वर्णन भी परंपरा-जनित नहीं है, अपितु वह वास्तविक भाव-भूमि की उपज है ।"[१] इस प्रकार कवि ने विरह का व्यापक चित्रण किया है । इसमें उनके निजी हृदयगत विचारों और भावनाओं को अभिव्यक्ति मिली है । कवि के निजी जीवन की अतृप्ति उनके प्रेम-काव्य में यत्र-तत्र दिखाई देती है । उनकी आत्मा की हूक उन्हें लिखने को प्रेरणा देती है । स्वयं उन्होंने लिखा है – " मैंने यहाँ दो बातें कही हैं। आज की हमारी कविता में वेदना के प्रकट होने के मैंने दो कारण बतायें हैं। एक कारण तो यह है कि हम लोग संक्रान्ति काल के प्राणी होने के नाते अपनी अतृप्त अभिलाषाओं के कारण दुखी हैं । दूसरा और शाश्वत कारण यह है कि मानव स्वभाव में एक अतृप्ति का सम्मिश्रण है और इस कारण हम सदा 'क्वासि' ? क्वासि ? की चीत्कार किया करते हैं ।"[२] उनके प्रेम-काव्य में सरलता, सत्यता और निष्कपटता से विश्वासपूर्ण परिस्थिति का प्रसार होता है[३], क्योंकि प्रेम को 'नवीन' जी अन्तःकरण की शाश्वत प्रवृत्ति मानते थे । आरम्भ से अन्त तक उनका हिय सतत भिखारी ही रहा :–

'पीतम, श्याम, नयन घन, बिछुड़न के दिन से हिय मचल गया है,
तुम्हीं कहो, क्या जतन करूँ ? यह हृदय सदा का है अविचारी ।
प्रिय, मेरा हिय सतत भिखारी ।"[४]

---

१. 'नवीन' और उनका काव्य - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १५७ ।
२. 'कुंकुम' - कुछ बातें, पृ० १३ ।
३. 'निस्वार्थ प्रीति कर वह अमर गायक' -देववती शर्मा - साप्ताहिक-हिन्दुस्तान , ३ जुलाई १९६०, पृ० ३३ ।
४. 'अपलक' — 'भिखारी' – पृ० ३०

सखि-वर्णन :

प्रेम-काव्य में सखि-वर्णन का महत्वपूर्ण स्थान है । प्राचीन काल से ही इस प्रणाली को अपनाया गया है । रीतिकाल में बिहारीलाल ने इसमें नवीन प्राण फूँक दिए ।[१] संयोग एवं वियोग अवस्था में सखि नायिका के साथ रहती है और यदाकदा वह अपने मन का उल्लास एवं विषाद् सखि के सम्मुख प्रकट करती है । प्रिय से पुनर्मिलन के अवसर पर नायिका अपने मन के उल्लास को अपनी सखियों के सामने प्रकट करती है :-

`हम नूतन प्रिय पाए, री सखि, हम नूतन पिय पाए;
इस बसन्त ऋतु में सुपुरातन, नवल केश घर आए ,
री सखि, हम नूतन पिय पाए ।
मेघ हटे, चमका गगनांगन, विहँसे सज्जन सुहाने ,
लगन - चकोर - पंख से गूँजे सन-सन मिलन तराने ,
मोर हमारे देश-देश में उमड़े स्वर रस-साने ;
क्या बतलाएँ कैसे हमने आपुन सजन रिझाए ,
री सखि, हम नूतन पिय पाए ।`[२]

---

१. पति रति की बतियाँ कहीं, सखि लखि मुसकाइ ।
कै कै सबै हलाहलीं , अलीं चलीं सुख पाइ ॥२४॥
(बिहारी रत्नाकर, पृ० १६)
नभ लाली चाली निसा, चटकाली धुनि कीन ।
रति पाली, आली, अनत, आए बनमाली न ॥११५॥
(बिहारी रत्नाकर, पृ० ५२)

२. `क्वासि` - `हम नूतन पिय पाए` , पृ० १२ ।

लाज की लालिमा उसके मुख-कमल पर छा जाती है और नायक के सम्मुख जाने से पहले अपनी मन: स्थिति का वर्णन सखि के सम्मुख करती है क्योंकि यह डायन लाज उसे खाए जाती है :-

"सजनि, लाज ने पकरयो मेरो
अंचल मैं कैसे जाऊँ ?
दरस करो केहि विधि साजन के
वह मूरत कैसे ध्याऊँ ?"[१]

सखि का मौन रहना नायिका के लिए असहनीय है, क्योंकि :-

"उत्कण्ठा ने सीमा को
उल्लंघित करके किया प्रणाम,
कँपे अधर, रह गया सिसक कर-
हिय का विमल दुलार सखी !"[२]

प्रिय के वियोग में तो सखि उसके लिए एक सम्बल है, सहारा है जो कि सदा उसका साथ देती है । प्रिय के चले जाने की सूचना मिलते ही वह अपने घायल-हृदय की दशा का वर्णन सखि से करती है । क्योंकि स्वयं तो वे जोग धारण कर रहे हैं और बदले में मुझे उसे :-

"आज सुना है , सखी हमारे साजन लेंगे, जोग री
हमें दान में दे जाएँगे वे विकराल वियोग, री ।"[३]

---

१. 'कुंकुम' - 'निगोड़ी हवा' , पृ० ७३ ।
२. 'कुंकुम' - 'सखी' , पृ० ४६ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'साजन लेंगे जोग री', पृ० ५६ ।

प्रियतम चले गए पर फिर न आए । कितने निर्मोही हैं । ऋतु-क्रीड़ाएँ विरहिणी के हृदय में एक नवीन कसक एवं टीस उत्पन्न कर रह देती हैं और पँख-फड़-फड़ाते पक्षी की भाँति वह तड़प-तड़प कर रह जाती है । व्यथा के इस भार को हल्का करने के लिए सखी से कहती है:-

"सखि मेरे कारागृह में भी आती हैं मेघावलियाँ,
कभी सुना जाती हैं यों भी निज कूजन के कावलियाँ ,
कारागृह का अन्तरिक्ष भी रस-फुहियाँ बरसाता है ,
क्षिन में कौतुक दरसाता है क्षिन हियरा तरसाता है,
सजनि यहाँ भी होती रहती हैं ऋतु-क्रीड़ाएँ सारी ,
अरी यहाँ भी कसका करती हैं गत-पीड़ाएँ सारी ।"[१]

मेघ गरजते हैं । रिम-झिम जल कण बरसते हैं और प्रियतमा की आँखों में दुख के बादलों की बाढ़ आ जाती है । सखि कारण पूछती है तो उत्तर कितना वेदनामय है :-

"सखि, वन-वन घन गरजे ;
श्रवण निनाद-मगन, मन उन्मन, प्राण-पवन-कण लरजे ;
री सखि, वन-वन घन-गन गरजे ।"[२]

हिय की कसक निरन्तर बढ़ती गयी जिसने प्रियतमा को उन्मत्त बना दिया है । उसकी यह दशा देखकर सखि निष्ठुर प्रिय से कहने का निश्चय करती है, परन्तु :-

---

१. "हम विषपायी जन्म के" - "पावस-पीड़ा", पृ० ३४० ।
२. "अपलक" - "सखि, वन-वन घन गरजे" , पृ० ९४ ।

`मेरी अकुलाई की कहानी मम मन बसे,
उनकी बतादे कैसे जानों ही-कहानी हौं ?
मेरी कथा मेरे ढिग रहिबे दे , आली ,
मत कहियो उनते जाय ह्वै गई दिवानी हौं ।`[१]

घर की प्रत्येक वस्तु , प्रियतम की याद दिलाती है परन्तु स्नेह के विमल नीर की धार कहीं नहीं मिलती । वह सखी से विनती करती है कि `हम दोनों उस देश में चलें जहाँ दो दिल मिलते हैं। - कितनी विदग्धता है उसके कथन में :-

`एक बार आओ हम दोनों चलो चलें उस पार, सखी,
जहाँ बह रही हो सनेह के विमल नीर की धार, सखी ,
चलो , चलें, उस देस , जहाँ हो छिटका मंजुल प्यार, सखी,
जहाँ सकुच कर हो जाते हैं दो-दो लोचन चार, सखी ।
जहाँ कुंज की गलियों में हों मिलते दो दिलदार, सखी ,
चलो चलें उस देस, जहाँ हो छिटका मंजुल प्यार, सखी ।`[२]

दिवाली का त्योहार आया परन्तु वनमाली नहीं आया । प्रतीक्षा करते-करते नायिका थक गई । हृदय छलनी हुआ, आँसों का पानी सूख गया । सखी बधाई देने आई परन्तु प्रियतमा के हृदयोद्‌गार सुनकर अवाक् रह गई :-

`फिर आगई काट कर चक्कर आली आज दिवाली,
और , लुट गई री यह मेरी खेती की हरियाली;

---

१. `कुंकुम` - `हिय की कसक` , पृ० ५४ ।
२. `हम विषपायी जन्म के` - `उस पार` , पृ० ३८२ ।

भाव-शून्य हो गया हृदय, सूखा आँखों का पानी,
जीवन-निधि को फेंक चुकी हूँ मैं कठोर दीवानी;
मेरा दीप कहाँ है ? कहाँ गये मेरे वनमाली ?
क्यों आगई काट कर चक्कर आली, आज दिवाली ?"[१]

अत्यधिक वेदना के कारण अब उसकी आँखों का पानी सूख गया है। वह प्रियतम को `बेदरदी` कह कर उसके प्रति कठोर बन गई। प्रियतम उसे मनाना चाहता है परन्तु वह एक नहीं सुनती। ऐसा निष्ठुर व्यवहार देखकर सखियाँ उसे कोसती हैं, जिसका उल्लेख वह स्वयं करती है :-

" सब जग मुझे दोष देता है
मैं हूँ बड़ी कठोर,
साथिन कहती हैं कि रुलाती
मैं अपना चितचोर ;
`ऐसा भी क्या मूक प्यार जो
कभी न ले सुध आह !`
यों चुटकी लेती हैं सखियाँ
मुझको चलते राह ;"[२]

अपनी दशा का परिचय देने वाली विरहिणी नारी की वाग्विदग्धता देखने योग्य है :-

" धधक रहा है सब भूमण्डल,
भूधर खौल रहे निशि-वासर ,

---

१. `कुंकुम` - `दीपावली`, पृ० ७१।
२. `कुंकुम` - `दो पत्र`, पृ० ६१।

सखे, आज शोलों की बारिश-
नभ से होती है फर-फर-फर ;[१]

सखि उसे अन्य किसी प्रदेश में जाने के लिए कहती है क्योंकि यहाँ उसकी आशाएँ मूर्च्छित पड़ी हैं, उसके मनोरथ कभी पूरे नहीं हुए और दिल में हाय-हाय का शोर सदा रहता है । क्योंकि यहाँ कसक और वेदना का राज्य है :-

सजनि, तुम्हारी इस दुनिया में कसक सिसक को ज़ोर बड़ा,
टूटे दिल की हाय-हाय का मचता रहता शोर बड़ा ,
आतुरता अटकी रहती है आँखों की गहराई में ,
आशा मूर्च्छित पड़ी उपेक्षा की एकान्त तराई में,
छोड़ चलो यह देस, मनोरथ हुए जहाँ हिय-हार सखी,
चलो चलें उस पार, जहाँ हो छिटका मँजुल प्यार सखी ।"[२]

इस प्रकार सखि-वर्णन के अनेक सुन्दर उदाहरण हमें 'नवीन' जी के काव्य में मिलते हैं । वेदना की अनुभूति कवि को ऐसी लग रही है , जैसे उसका कभी कोई अंत नहीं होने वाला है । उन्हें सदा अपने प्रियतम के वियोग का अनुभव हो रहा है जिसकी वेदना की तीव्रता उसे व्याकुल बना रही है । विरहिणी अपनी गहन-व्यथा को कम करने के लिए सखि से अपने हृदय की करुण दशा का हाल बताती है । वास्तव में यह वेदना ही उस के अतृप्त हृदय की चिर सहचर है ।

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सिरजन की ललकारें मेरी !' ,पृ० ४६ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'उस पार', पृ० ३८३ ।

स्मृति तत्व :

स्मृति-तत्व का भी प्रेम काव्य में बड़ा महत्व है। प्रिय के चले जाने पर रह रह कर उसकी याद प्रियतमा को कष्ट पहुँचाती है। नायक के गुण, उसकी रुचि, प्रेम-क्रीड़ाएँ और मिलन के क्षणों की स्मृति उसके हृदय में मीठी कसक को जाग्रत करती है। स्वयं 'नवीन' जी ने एक भेंट में श्री पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' को कहा था - 'प्रेम सम्बन्धी कविताओं के सम्बन्ध में भी यही बात है। प्रेम-सम्बन्धी अधिकांश रचनाओं का जन्म स्मृति से हुआ है। प्रिय का ध्यान आते ही गीत की प्रथम पंक्ति फूट पड़ी है और गीत बनता चला गया है।'[१] प्रिय-मिलन तो अब उसे स्वप्न ही दिखाई पड़ता है :-

'छूट्यो सँग, फीको पर्यो जीवन को सब राग,
अब तो स्मृति ही में रह्यो प्रिय, तब अंग-पराग।
अब तो तुम बिन दृगन में भरी रहैगी रात।
एक कहानी ह्वै गयी अब प्रभात की बात।'[२]

कभी तो उसे प्रिय की स्मृति से ~~कभी~~ सुख शान्ति मिलती है और कभी हृदय में शूल चुभ जाते हैं। कब तक वह अपने मन को फुसलाएगी जब कि दिन-पर-दिन बीते चले जाते हैं :-

'स्मरणों से कब तक, प्रिय, रीता हिय फुसलाऊँ ?
कल्पना - हिंडोले पर कब तक मन दुलराऊँ ?
कब तक स्मृति के बल पर अपने को हुलसाऊँ ?
कब तक पहनूँ, प्रिय, तव कल्पित भुज-माल गले ?
दिन पर दिन बीत चले।'[३]

---

१. 'मैं इन से मिला' - पद्मसिंह शर्मा - (लेख) श्री बालकृष्ण 'नवीन' (एक इण्टरव्यू) पृ० ५५।
२. हम विषपायी जन्म के')- 'हंसनि उड़ी अकास', पृ०२३३।
३. 'क्वासि' - 'दिन पर दिन बीत चले', पृ० ३२।

डा० ज्ञानवती दरबार ने लिखा है - " बालकृष्ण जी की कविता में दार्शनिकता है, ऊंचे-से ऊंचा आदर्शवाद है और एक भावुक प्रेमी की उड़ान है जो कल्पना के पंखों के सहारे नील गगन में विचरने को उत्सुक है ।"[१] एक भावुक हृदय की उड़ान उसके काव्य में यत्र-तत्र मिलती है । संयोग में कभी प्रियतमा अपने प्रिय पर खीझ उठती थी परन्तु आज उसके अभाव में जब उन घटनाओं की स्मृति आती है तो वह हृदय मसोस कर रह जाती है :-

" प्राण, खीझ आती थी कभी-कभी जो तुम पर,
उसकी स्मृति अब बेधा करती है हिय दिन-भर ।"[२]

प्रिय ने तो साथ देना छोड़ दिया पर स्मृति तो सदा छाया की भाँति मेरे साथ लिपटी हुई है :-

" इतने दिन बीत गए, फिर भी स्मृति प्यासी-सी
आ जाती है सम्मुख , सिन्धु-स्नात क्वाँरी सी,
टपकाती केसों से जल-बूँदें खारी - सी !
नहीं जान पाए हैं हम यह सब भेद - मरम ,
दुभर-सा करता है तुम बिन जीवन, प्रियतम ।"[३]

इस स्मृति में वे क्षण भी याद आते हैं जब प्रिय के साथ मधुर मिलन हुआ था और इसी स्मरण अवलम्बन के बल पर प्रेयसी विछोह-नद को पार करना चाहती है । प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है - " 'नवीन' जी

---

१. 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा' - डा० ज्ञानवती दरबार, पृ० ३७७।
२. 'क्वासि' - 'दुभर-सा करता है तुम बिन जीवन प्रियतम' , पृ० ३८ ।
३. 'क्वासि' - वही , पृ० ३७ ।

के वियोग-चित्र अतीत के रमण स्वरूपों से पूर्णत: मंडित होते हैं । उनमें एक भावोन्मेष की तरलता होती है । सहज रति व्यापार की क्रीड़ा कौतूहल साधारण किन्तु मादक शब्दों में अंकित दिखाई देता है । बीते दिनों के मनोरागों की मंजूषा कई रंगों में हमारे सामने आती है - - - ।"[१] प्रेयसी अपने नीरस जीवन को इसी स्मृति के सहारे हरा करने का प्रयत्न करती है:-

"स्मरण-फलक बिन हम वियोग के शराघात कैसे सह जाते ?
इन के बिन, बोलो तो, कैसे हम अपने मन की कह पाते ?
यदि न स्मरण-अवलम्बन मिलता तो हम कब के ही बह जाते,
हमतो इसी तरी के बल , प्रिय यह बिछोह नदतरा करे हैं ।
कभी स्मरण कुन्तल-चुंबन के, कभी प्रगाढ़ चरण-चुंबन के ;
कभी रहसि संलाप मधुर के , कभी मदिर मधु परिरंभण के,
ये ही तो आधार बने हैं हम एकाकी विरही जन के ,
अहो , इन्हीं से तो हम अपना नीरस जीवन हरा करें हैं ,"[२]

होली का त्योंहार आया । सखियाँ गुलाल लाईं परन्तु नायिका होली खेलने से इन्कार करती है और मर्म स्पर्शी ढंग से अपना तर्क सखियों के सामने रखती है :-

"मत लाओ गुलाल भर झोरी, रहने दो यह रंग ,
किसी गुलाबी मुख की संस्मृति आएगी उठ जाग ;
अरे क्या होली ? कैसा फाग ?"[३]

इस स्मृति में वे वस्तुएँ भी याद आती हैं जो प्रिय की अपनी थीं।

---

१. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० ६६ ।
२. 'अपलक' - 'ध्यान तुम्हारा धरा करें हैं' , पृ० १२-१३ ।
३. 'रश्मिरेखा' - 'हमारी क्या होली ? क्या फाग ?' , पृ० ८४ ।

उसे उन्माद की सी स्थिति हो जाती है । लगता है कि कहीं पास ही प्रिय के कर-कंकण खनक रहे हैं । आज तक तो दृग-गत स्मृति ही थी पर आज श्रवण-स्मृति भी जाग उठी है :-

'प्राण, तुम्हारे कर के कंकण,
मानो मेरे बहुत पास ही आज बज उठे खन-खन, खन-खन ।
प्राण, तुम्हारे कर के कंकण ।
बजा रहे हो अन्तर में क्यों ये भूषण, ओ हृदय-निवासी ?
बलिजाऊँ । इससे तो मेरी बढ़ जाती है और उदासी ;
दृग-गत स्मृति तो थी ही, पर, अब जाग उठे ये श्रवण-संस्मरण ।'[१]

अब तो उसके स्मरण-दीप की बाती तिल-तिल कर बल रही है[२], क्योंकि पूर्व कृत प्रेम-क्रीड़ाओं की मधुर-स्मृति नायिका के मन में सदा आ जाती है और वह इसी क्षोभ में है कि क्या ये स्मृतियाँ नायक को कभी याद आती हैं :-

' मेरे प्रियतम, मेरे मंगल,
क्या हैं तुम्हें स्मरण वे कुछ क्षण, उस दिन, उस चम्पक तरु के तल?
मेरे प्रियतम , मेरे मंगल ।'[३]

प्रकृति के विविध रूप भी नायिका के हृदय में एक विचित्र हूक उत्पन्न कर देते हैं। श्री रुद्र गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है - 'प्रिय की स्मृति की

---

१. 'अपलक' - 'प्राण तुम्हारे करके कंकण' , पृ० ७६-७७ ।
२. 'तुम बिन तिल-तिल कर जलती है मेरे स्मरण-दीप की बाती,
देखो तो अब धार बनी है मेरी दृग-बूँदों की पाँती ;
- 'क्वासि' - 'मेरे स्मरण-दीप की बाती', पृ० ३६ ।
३. 'रश्मि रेखा' , पृ० ८२ ।

मादकता प्रकृति के सुहावने नशे से मिलकर मन को नचा देती है और क्षुब्ध कर देती है।[१] कली की मारूक मुसकान को देख प्रियतम की स्मित की स्मृति आती है :-

> निरख-निरख कलियों की मादक मुसकान अमल -
> बलि जाऊँ ! आयी है तब स्मिति की स्मृति विह्वल !
> मन मन-सर में विकसित हैं तब युगनयन-कमल ,
> परिमल मिस आयी तव तव-सुवास सिहर-सिहर !
> ओ - मेरे मधुराधर !'[२]

प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है - 'कवि-हृदय यदि सहज कोमल और मधुर स्मृतियों को चित्रित न करे तो प्रेम, शृंगार एवं मिलन-वियोग की मीमांसा ही निरर्थक होजाय'[३] खंजनों को देखकर प्रियतम के लोचनों की सुधि विरहिणी के हृदय में जाग उठती है। निस्सन्देह अतीत की मधुर स्मृतियाँ स्वयं कवि को भी झकझोर रही हैं :-

> 'देख खजनों को क्यों प्रिय के लोचन की सुधि हिय में जागे ?
> ये चंचल क्या टिक जाएँगे उनके उन नयनों के आगे ?
> कहाँ सजन के नित गम्भीर दृग ! और कहाँ ये चपल अभागे !
> चकित खंजनों ने पीतम के वे लोचन - गुण रंच न पाए !!!
> मेरे आँगन खंजन आए ।'[४]

---

१. 'रश्मि रेखा' - (लेख) गीत काव्य और बालकृष्ण शर्मा - सद्गुरु शरण अवस्थी, पृ० १६ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'ओ मेरे मधुराधार', पृ० ५५६ ।
३. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ६६ ।
४. 'क्वासि' - 'मेरे आँगन खंजन आए' , पृ० ८६ ।

आकाश पर घनघोर घटा छाई है और प्रियतमा को अतीत की स्मृति विह्वल कर देती है । अभिसार की वे घड़ियाँ आज भी उसके हृदय को रससिक्त कर देती थीं :-

"तुम्हें याद है वह दिन, प्रियतम, जब मदभरी घटा छाई थी ?
वह दिन, जब नभ के आँगन में घन-रस-रास-छटा छाई थी ?
उस दिन तुमने भी तो हँस-हँस नवरस - फुहियाँ बरसाई थी ।
जिनसे अब तक हैं मधु-भीते मेरे हिये के कोने - कोने ।
कौन बात ऐसी है मेरी, जो तुम से हो छिपी, सलोने ?"[१]

डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है - "कवि का प्रेम स्वप्न टूट गया । उसके कल्पना का संसार ढह गया । कवि का जीवन सपना पूर्ण नहीं हो पाया । उसने, उसकी स्मृति को ही, अपना चिरसंगी तथा जीवन-शृंगार बना लिया ।"[२] साथ ही उन्हें जीवन का अधिकांश भाग जेल के शून्य कक्षा में व्यतीत करना पड़ा, जिस कारण उनके काव्य में स्मृति तत्व का आधिक्य स्वाभाविक है ।[३] प्रेयसी के प्रति उनका कथन कितना वेदनामय बन पड़ा है:-

" तुमने आकर, विहँस, प्रियतमे, नयनों में भर प्यार,
निज भुज - माला इस ग्रीवा में डाली थी उस काल,
स्मरण-शर वह बन आई, बाल ।"[४]

---

१. "रश्मि रेखा" - "वर्षा-लोके" , पृ० ६ ।
२. "नवीन : व्यक्ति एवं काव्य" , डा० दुबे , पृ० २५३ ।
३. "व्यक्ति और वांग्मय" - प्रभाकर माचवे - लेख (नवीन), पृ० १०१ ।
४. "रश्मिरेखा" - "स्मरण कटक", पृ० २० ।

वास्तव में यही स्मृति-जन्य वेदना, जो कि `नवीन` जी के प्रेम-काव्य में प्रकट हुई, वियोग-वर्णन को अत्यधिक प्रभावोत्पादक बना देती है। स्मृति-तत्व का आश्रय लेकर `नवीन` जी ने सजीव कल्पनाएँ की हैं और अपने काव्य में एक मौलिक गुण उत्पन्न कर दिया है। स्वयं उन्होंने स्मृति के विषय में लिखा है - `स्मृति क्या है ? प्रिय, स्मृति ही तो है केवल यहाँ हमारी थाती।`[१]

प्रेम-वर्णन में प्रकृति का आधार :

`नवीन` जी ने प्रेम-वर्णन में प्रकृति का भी यत्र-तत्र सहारा लिया है जिस कारण उनका चित्रण अत्यधिक मार्मिक बन पड़ा है। `नवीन` जी के सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति वर्णन का अपना महत्वपूर्ण स्थान है और उन्होंने प्रकृति-वर्णन की अनेक प्राचीन एवं नवीन शैलियों को अपनाया है। परन्तु यहाँ केवल प्रेम-काव्य के सन्दर्भ में उसका अध्ययन किया जाएगा। डा० रांगेय राघव ने लिखा है - `प्रकृति का सौन्दर्य अपने-आप तो सुन्दर होता है किन्तु शृंगार की भावना से मिल जाने पर उसमें एक अपरूप सौन्दर्य जाग उठता है।`[२] मेघागमन पर नायिका की दशा दर्शनीय है, क्योंकि बिजलियाँ तो आकाश में कड़कती हैं और वर्षा नायिका की आँखों से होने लगी, कितनी सजीव कल्पना है :-

`आए मेघ घने, सजन , ये आए मेघ घने ;
आज श्याम-सुन्दर के चहुँए अम्बर बीच तने ;
सजन , ये आए मेघ घने ;`

-+ -+

---

१. `अपलक` - `ध्यान तुम्हारा धरा करे हैं।` , पृ० १३।
२. `आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार` - डा० रांगेय राघव, पृ०६४, (प्रथम संस्करण - जून १६६१)

उमड़ बही दृग धारा विकला ,
अब विलम्ब क्यों ? हँस मुसकाते, आओ हिय लगने,
सजन , ये आए मेघ घने ।'[१]

डा० श्रीकृष्ण लाल ने लिखा है – 'बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में कवियों की प्राय: दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ थीं । प्रथम, प्रकृति के परम्परागत रूपों का वर्णन था, जैसे ऋतुओं का वर्णन, प्रभात-वर्णन, समुद्र-तट वर्णन इत्यादि। इस प्रकार का प्रकृति-वर्णन भारत में बहुत प्राचीन-काल से चला आ रहा है ।'[२] बालकृष्ण ने भी इस परिपाटी को अपनाया परन्तु उसमें अनेक मौलिक गुणों का समावेश हुआ । वर्षा-ऋतु का वर्णन उल्लेखनीय है :-

'बरखा ऋतु में सब सहेलियाँ मैके पहुँची आय, रे ;
बाबुल घर से आज चलीं हम, पिय-घर, लाज बिहाय, रे ;
उनके बिन, बरसाती रातें कैसे कटें अचूक , रे ?
पिय की बाँह उसीस न हो तो मिटे न मन की हूक, रे ।'[३]

और सावन के बादलों से प्रेयसी की विनती है कि :- को देखकर नायिका अपने प्रिय के प्रति मर्मस्पर्शी शब्दों में कहती है :-

'रिम झिम-झिम , झरर-झरर-झर
उमँगे सावन के धाराधर
मेरे प्रिय, मेरे मन-भावन ,
तुम बिन है सूना यह सावन

---

१. 'क्वासि' - 'मेघ आगमन' , पृ० १८-१६ ।
२. 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' - डा० श्रीकृष्णलाल, पृ०७२ ।
३. 'क्वासि' - 'डोले वालों' , पृ० ४७ ।

सूनी निशा, शून्यमय वासर
उमँगे सावन के घाराधर ।[१]

श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है - 'साधारणतया प्रकृति रूप भावाधीन है । उससे उद्दीपन का भी काम लिया गया है ।'[२] बसन्त-ऋतु के आगमन पर नवीन भावनाओं का संचार प्रेयसी के हृदय में होता है । इस समय प्रकृति भाव उद्दीपन का कार्य करती है :-

आज सखि नवल बसन्त-बहार
कह रही मदिर भाव संचार
आज सखि नवल बसन्त-बहार ।[३]

बसन्त के सुभागमन पर कलियाँ स्वागार्थ चारों ओर सुगन्धि बिखेर देती हैं । और मतवाले भौंरे अभिसार के लिए मचल उठते हैं, उनकी गुंजार नायिका के हृदय में पूर्व-मिलन की स्मृतियों को जगा देती है परन्तु वह प्रियतम को ढूँढते ही रह जाती है जब कि बसन्त का यह मादक वातावरण धीरे-धीरे विलीन हो जाता है :-

इस बसन्त के अलस प्रात में,
ढूँढ रहे तुम को नैना ,
गुप -चुप बातें करने की,
आकुल हैं अलसाने बैना ,
इस दुखिया अँगड़ाई में
अलिगन उत्साह भरा ,

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'उमगे सावन के घाराधर', पृ०५५८ ।
२. 'रश्मि रेखा' - 'गीत काव्य और बालकृष्ण 'नवीन' -सदगुरु शरण अवस्थी, पृ० १७।
३. 'रश्मि रेखा' - 'बसन्त बहार', पृ० १३० ।

कर देता उच्छ्वास समीरण,
दरस चाव का घाव हरा ।"[१]

फागुन के आने पर नायिका की दशा अधिक शोचनीय बन जाती है क्योंकि फागुन उसके शरीर में भी जर्जरता लाता है अत: वह विह्वल होकर बोल उठती है :-

" अरे ओ निरगुन फागुन मास ।
मेरे कारागृह के शून्य अजिर में मत कर वास,
अरे ओ निरगुन फागुन मास ।"[२]

वेदना ही प्रकृति के संश्लिष्ट चित्र उपस्थित करती है । वही हमें अत्यन्त सलोने रूपों की झलक दिखाती है ।[३] यही कारण है कि 'नवीन' जी ने विरह-वर्णन में ही प्रकृति का अत्यधिक सहारा लिया है । वसन्त-दूतिका की पंचमतान सुनकर विरहिनी उसे समझाती है :-

" मेरे हिय में टीस उठी है, तूम कूके कोयलिया सखि ;
श्वास रूँधी है; प्राण घुँटे हैं, तू कत कूके कोयलिया सखि ?
तू मत कूके कोयलिया , सखि ।"[४]

और जब वह एक नहीं सुनती तो विरहिनी खीझ उठती है :-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'बसंत' , पृ० ३३६ ।
२. 'क्वासि' - 'फागुन' , पृ० ६६ ।
३. 'आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार' - डा० रांगेय राघव, पृ० ८४ ।
४. 'रश्मि रेखा' - 'तू मत कूके कोयलिया, सखि', पृ० १२३ ।

'कह दो इस बैरिन कोकिल से कि वह रहे चुप साध,
वरना गूँज उठेगा हिय में उनका पंचम-राग,
अरे, क्या होली ? कैसा फाग ?'[१]

जहाँ पृष्ठभूमि के रूप में एवं अलंकार-वर्णन के रूप में प्रकृति से 'नवीन' जी ने अधिक सहायता ली है । वहाँ प्रेम की अनन्यता एवं नायिका के दृढ़-चरित्र का परिचय भी दिया है :-

' तुम्हरे लोचन- कमल में मोमन अलि अनुरक्त,
तुम टारत , मंडरात वह बार-बार आसक्त ।
कबहुँक हँसि मुसिकात हो, कबहुँ करत हो क्रोध ,
यह कैसी जु अदाबरी ? यह कैसा अवरोध ?'[२]

प्रकृति का सौन्दर्य संवेदना को जन्म देता है और नायिका के भीतर एक हलचल उत्पन्न होती है ।[३] इस हलचल का परिणाम समर्पण होता है । यही कारण है कि वह प्रियतम को अतिथि स्वरूप स्वीकार नहीं करती , अपितु उसके साथ अपना स्थायी सम्बन्ध जोड़ती है जो कि जीवन-पर्यन्त बना रहता है :-

'तुम न आना मम भवन, प्रिय, आज मेरे अतिथि बनकर,
कमल-दल, नव मधुकरी को, क्यों अतिथि अनजान मानें ?
क्यों न अलि-गुंजार को वे निज समर्पण तान मानें ?
और, तुमको भी, कहो, क्यों अतिथि मेरे प्राण मानें ?

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'हमारी क्या होली क्या फाग' , पृ० ८५ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अनुरोध' , पृ० २२० ।
३. 'आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार' - डा० रांगेय राघव, पृ० ५७।

क्या पराए हो गए तुम जो हुए हो दूर क्षण भर ?"[१]

'नवीन' जी ने प्रकृति में सौन्दर्य पाया जिसके सहारे अपनी सौन्दर्य-भावना को अभिव्यक्त किया। उन्होंने अपनी चितवृत्ति के अनुरूप ही प्रकृति का चित्रण किया। वास्तव में प्रकृति का सहारा लेकर 'नवीन' जी की कल्पना साकार बन पड़ी है। प्रकृति-सुषमा के आंगन में 'नवीन' जी की कल्पना साकार बन पड़ी है। प्रकृति-सुषमा के आंगन में 'नवीन' जी ने अनेक प्रेम-क्रीड़ाएँ की हैं। उनकी लेखनी ने जहाँ प्रकृति में प्राण-रस छिटका वहाँ प्रकृति ने उनके प्रेम-वर्णन को कई शाश्वत गुण प्रदान किए। यही कारण है कि उन्हें हिन्दी काव्य का ऋतुराज[२] कहा गया है।

मान-वर्णन (व्यंग्य एवं उपालम्भ) एवं संकेतात्मकता :

'नवीन' जी के काव्य में मान-वर्णन का अपना एक विशिष्ट स्थान है। संयोग एवं वियोग दोनों अवस्थाओं में इस का चित्रण हुआ है। इन प्रसंगों के द्वारा नवीन जी ने काव्य में एक अद्भुत मिठास का सम्मिश्रण किया है। मानवती नायिका के प्रति कवि का कथन दृष्टव्य है :-

'मान छोड़ो, मानिनी अब
नयन में सपना भरे तुम विहँस दो अभिमानिनी अब,
मान छोड़ो, मानिनी अब।"[३]

प्रेयसी को मनाने के लिए नायक उसकी राह ताक रहा है :-

---

१. 'अपलक' - 'तुम न आना अतिथि बनकर', पृ० ८०।
२. 'काव्य के ऋतुराज कविवर 'नवीन' - डा० दुबे, 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' पृ० १४ (२ फरवरी १९६४)।
३. 'क्वासि' - 'मान छोड़ो', पृ० ६४।

`ओ लजवन्ती, ले लो आए देने, हम हिय-दान,
खड़े हैं हम कब से अनजान ।`[१]

डा० रांगेयराघव ने लिखा है - `संसार के इतिहास में किसी भी युग में काव्य की सर्वप्रिय अनुभूति सौन्दर्य का वर्णन ही रही है । इसी सौन्दर्य ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए वेदना का आश्रय लिया है, क्योंकि वेदना व्यक्ति से सहज आत्मीयता करके, दूसरे के राग पक्ष को जागरित करती है ।`[२] वेदना की तीव्र अनुभूति एवं अभिव्यक्ति इन मानचित्रों के द्वारा होती है । प्राण-प्रिय के रूठने पर विरह गान ही केवल एकमात्र सम्बल होते हैं :-

`प्राण प्रिय के रूठने की क्यों मिली है सूचना यह ?
हो गई क्यों आज उनकी हिय - दशा यों उन्मना यह ?
नेह-दानी की विरति की हो रही क्यों व्यंजना यह ?
शिथिल, वीना पड़ गई क्यों मम अतृप्त उड़ान ?
रे कवि, लिख विरह के गान ।`[३]

प्रिय के प्रति भी कवि ने अनेक प्रकार की कल्पनाएँ की हैं । उसकी अनुपस्थिति में प्रेयसी के विरह-दग्ध-कथन सुनकर, हृदय ककफोर कर रह जाता है । कहीं व्यंग्योक्तियों एवं कहीं उलाहनों के द्वारा वह अपनी करुण स्थिति का परिचय देती है :-

---

१. `रश्मि रेखा` - `जोगी` , पृ० ४७ ।
२. `आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रेम और शृंगार` - डा० रांगेय राघव , पृ०१५।
३. `क्वासि` - `लिख विरह के गान` , पृ० ४ ।

'अन्तस्तल शून्य आज, आज जगत सूना है ,
ओ प्राणों के पाहुन, तुम बिन सब ऊना है;
जीवन में व्यर्थ-भाव उमड़ा दिन दूना है ,
होती ही रहती है हिय में खुट-खुट हरदम ;
दूभर सा करता है तुम बिन जीवन, प्रियतम ।'[१]

प्राणप्रिय के पराये हो जाने पर तो कवि विरहाकुल दशा में विलाप करने लगता है :-

' तुम हो गये पराये , साजन , तुम हो गये पराये ,
पाकर समाचार, आँखों ने मुक्ता - कण बरसाये ;
जिसके अब हो गये , उसीके बने रहो मन-मोहन ,
होने दो मेरी श्वासों का आरोहन - अवरोहन ;
जन्म-जन्म का अभ्यासी हूँ मैं आहें भरने का ,
तुम न करो कुछ सोच , तनिक इन आँखों के झरने का;
हहराने दो हिय मेरा यदि अब यह हहराये ;
साजन , तुम हो गये पराये ।'[२]

प्रियतम पराये हुए, इसलिए नायिका दुखी है परन्तु इससे भी अधिक क्लेश उन्हें इस बात का है कि उसके हृदय को नायक ने अपनी चितवन से छलनी कर डाला और अब उनका मन-मीन बिना नीर के तड़प रहा है । इस व्यथा-सागर से उबारने वाला न जाने कहाँ मनमानी कर रहा है :-

---

१. 'क्वासि' - 'दूभर सा करता है तुम बिन जीवन प्रियतम', पृ० ३७ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तुम हो गए पराये' , पृ० ६०४ ।

`चितवन से छलनी कर डाला
मम हिय - भाजन दीन ,
बूँद - बूँद कर टपक गई वह
सुरस - राशि तल्लीन ।
बिना नीर के तड़पा करता
है अब यह मन - मीन ,
अरे ज़रा तो इसे उबारो ,
आकर हे हिय - हीन !'[१]

साजन के हठ ठानने पर नायिका अन्तर्भेदनी उक्तियों से उसे मनाना चाहती है । वह अपने हृदय को चीर कर उसके सम्मुख रख देती है । दो आँखें चार होने पर उसे वह अपने हृदय का अन्तर्यामी कह कर सम्बोधित करती है:-

`आग दी तुमने, सजन, फिर, आग की यह चाह भी दी,
अग्नि-क्रीड़ा - प्रेरणा दी , अटपटी इक राह भी दी ,
फिर दिये ये दाह्य साधन, और गहरी आह भी दी ,
लो, लगी है आग , अब तुम व्यर्थ क्यों हठ ठानते हो ?
प्राण ! अन्तर्यामिनी मम वेदना तुम जानते हो ।'[२]

मान छोड़ने के लिए कवि बार-बार प्रार्थना करता है :-

`प्यार में यह खीझ - जैसी चीज़ ? इतना मान ?
प्रिय, दिखा दो चाँदनी-सी वह मृदुल मुसकान ।'[३]

---

१. `कुंकुम` - `दो पत्र` , पृ० ८६ ।
२. `रश्मि रेखा` - `तुम इसे पहचानते हो` , पृ० १०४ ।
३. `हम विषपायी जन्म के` - `तीर कमान` , पृ० २४१ ।

और जब उसे अपनी सखि के द्वारा नायक का पर-नायिका के साथ प्रेम-प्रसंग का समाचार मिलता है तो वह हृदय मसोस कर रह जाती है । वह उलाहनों और व्यंग्योक्तियों का सहारा लेती है :-

"मुसका कर छोड़ चले यही मधु-शाला तुम ?
प्रिय, अब क्या चक्खोगे औरों की हाला तुम ?
दोगे क्या अन्यों को मेरे वे स्नेह-कुसुम ?
मत छिड़को लवण, सजन, हैं मेरे गात जले !
दिन पर दिन बीत चले ।"[१]

'जिसके अब हो गये, उसी के बने रहो मोहन', क्योंकि वह प्रेम का व्यापार नहीं करना चाहती । वचन-पालन के लिए तो वह अपना सर्वस्व निछावर करने पर उद्यत है पर उस चित-चोर की मनमानी एवं अन्याय तो देखिए :-

"मेरी कौन बिसात, प्राणधन, मेरी कौन बिसात ?
जिसको चाहो , उसे निबाहो , मन आए की बात;
प्राण धन, मेरी कौन बिसात ?
सभी सुध रस चाहते ; सभी नवल के मीत ;
क्यों सुध लो तुम आज गए मेरे वे दिन बीत ?
आज अब शिथिल हो चले गात,
प्राण, अब,मेरी कौन बिसात ?"[२]

कवि अपने प्रियतम को उपालम्भ देते हुए 'बेदरदी'[३] तक कह डालते हैं ।

---

१. 'क्वासि' - 'दिन पर दिन बीत चले' , पृ०३१-३२ ।
२. 'अपलक' - 'प्राणधन, मेरी कौन बिसात ?', पृ० १८ ।
३. 'बेदरदी दर - दर फिरे, तुम कारन हम दीन ।
खोजत तुम कूं है गए, हम 'नवीन' प्राचीन ।।'
- लेख श्री बालकृष्ण 'नवीन' का ब्रजभाषा काव्य - श्रीरामनारायण अग्रवाल,साप्ताहिक हिन्दुस्तान, १६ दिसम्बर, १९५६ ।

उनके व्यंग्य-वचन साजन की निष्ठुरता का परिणाम हैं:-

'जाओ, नित कुब्जा संग खेलो, बोलो हरे-हरे ,
कह दो राधा से वह अब तो यमुना डूब मरे ;
ग्वालिन , नयनन नीर भरे ।'[१]

इस प्रकार मान-वर्णन के अनेक सुन्दर उदाहरण हमें 'नवीन' के काव्य में मिलते हैं । डा० दुबे ने लिखा है - 'कवि ने, अपनी काव्य-नायिका के मान का भी, ललित आकलन प्रस्तुत किया है । इस क्षेत्र में, कवि की रागात्मिका-वृत्ति अत्यन्त हृदय स्पर्शी हो गई है ।'[२] वास्तव में मान-मनुहार का प्रसंग प्रेम की एक निष्ठा एवं अनन्यता का द्योतक है । इस प्रसंग में 'नवीन' जी की सब से बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने कहीं भी असम्भव काल्पनिक उड़ानें नहीं की है जिस के परिणाम स्वरूप उनके काव्य में सहज स्वाभाविकता के स्थान पर कृत्रिमता का समावेश हो जाता । उन्होंने लौकिक प्रेम-वर्णन में इसी संसार से सामग्री एकत्रित की और उसे कल्पना के सहारे नवीन आकार प्रदान किया । 'नवीन' जी ने प्रेम-वर्णन में अनेक संकेतों का सहारा लिया है । उन्होंने जहाँ एक ओर परम्परागत प्रतीकों को अपनाया वहाँ अनेक स्थलों पर अपनी मौलिक प्रतिभा का भी प्रयोग किया है । प्रिय की मनमानी एवं उपेक्षा को भौंरे के क्षणिक-प्रेम (फूलों के प्रति) के साथ बड़ी कुशलता से कवि ने अलंकारिक रूप में प्रस्तुत किया है :-

'भ्रमर उड़ चले डाल से, अब कुम्हलाए फूल ,
मुझे मुरझता लख हुए तुम भी तो प्रतिकूल,

---

१. 'अपलक' - 'नयनन नीर भरे' , पृ० १०१ ।
२. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' , डा० दुबे , पृ० २५७ ।

झटक कर छुड़ा चले तुम हाथ ,
प्राण, अब, मेरी कौन बिसात ?'[१]

'मेरे यौवन के बसन्त में तुम मेरी डाल पर नीड़ बनाने के लिए इच्छुक थे परन्तु पतझड़ में न जाने क्यों तुम्हें मेरे प्रति अरुचि उत्पन्न हुई । यही तुम्हारे लोभी होने का प्रमाण है :-

'नीड़ बनाना चाहते थे तुम मेरी डाल,
पर, तब तो था मैं सरस, मैं था नवल रसाल ,
झर चले अब तो मेरे पात,
प्राण, अब अपनी कौन बिसात ?'[२]

पपीहा की ओर कवि का संकेत कितना वेदनामय है :-

' पपिहा, मत बिलखो कि 'पी-कहाँ' ?
ओ, पागल , पी-यहाँ , पी-यहाँ,
मत ढूँढ़ो उनको जहाँ - तहाँ -
सजन - जहाँ रम रहे , है वहाँ ,'[३]

खंजन की तुलना प्राय: प्रिय की आँखों से की जाती है । यह एक परम्परागत प्रयोग है । इस प्रतीक को 'नवीन' जी ने एक नवीन ढंग में अपनाया । खंजन पक्षियों का आगमन जहाँ दृग-रंजन है वहाँ स्मृति-अंजन भी :-

---

१. 'अपलक' - 'प्राणधन, मेरी कौन बिसात ?' , पृ० १८ ।
२. 'अपलक' - 'प्राणधन , मेरी कौन बिसात ?', पृ० १६ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'पावस पीड़ा' , पृ० ५८ ।

`मेरे आँगन खंजन आए,
चटुल, चपल, प्रति पल-पल चलते ये चंचल दृग-रंजन आए ;
मेरे आँगन खंजन आए ।
कौन सँदेसा लाए हैं ये ? लाए किन की स्मृति दीवानी ?
मेरे आँगन आए हैं क्या ये करते अपनी मनमानी ?
आज, किन्हीं नयनों की सुधि क्याकर देगी हिय पानी-पानी ?
इसीलिये क्या इस निर्जन में खंजन बन स्मृति-अंजन आए ?
मेरे आँगन खंजन आए ।`[१]

विरहिनी अपने को `मरुस्थल का मृग` कह कर विरह के व्यापक प्रभाव को दिखाना चाहती है । प्रिय-दर्शन के लिए वह वैसे ही तड़प रही है जैसे मरुस्थल में जल-कणों के लिए मृग :-

`मैं तो हूँ मरुथल का मृग, हूँ ना जाने कितना प्यासा ।
मैंने अपने जीवन-वन में, बोलो कब जाना चौमासा ?
मैं तो हूँ मरुथल का मृग, प्रिय, हूँ न जाने कितना प्यासा ।`[२]

राधा-कृष्ण के प्रेम-वर्णन की आड़ में `नवीन` जी ने नायक-नायिका के प्रेम-वर्णन का बड़ा ही माधुर्य गुण-सम्पन्न वर्णन किया है । कवि ने प्रेम की तड़पन को पुराना आधार देकर अपने को समाज-लांछन से मुक्त कर लिया है । वास्तव में कृष्ण और राधा की प्रेमगाथा इस देश की रग-रग में समाई हुई है ।[३] अलौकिक प्रेम के सहारे उन्होंने लौकिक प्रेम- का सजीव वर्णन किया है:-

---

१. `क्वासि` - `मेरे आँगन खंजन आए`, पृ० ८८ ।
२. `क्वासि` - `मरुथल का मृग`, पृ० १०६ ।
३. 'आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार'- डा० रांगेयराघव, पृ०१०६।

`अँखियन नीर भरे, राधा नयनन नीर भरे,
कई युगों से टेर रही है तुमको हरे! हरे!!
राधिका नयनन नीर भरे ।'[१]

पर-नायिका विहार करने पर `नवीन` जी की काव्य-नायिका नायक से इस प्रकार संकेत करती है :-

`तुम ने कुब्जा में रस देखा तुम उस पर बिखरे ,
उसकी उस कूबड़ से , बोलो, क्या रस-बिन्दु झरे ?
राधिका नयनन नीर भरे ।'[२]

नीर-क्षीर विवेचन करने में नायक की असफलता पर नायिका का कथन व्यंग्यपूर्ण है :-

`तुम न पारखी चिर सुन्दर के ; तुम हो अघ कचरे ,
वरना राधा - स्नेह - सुमन में क्यों तुमने निदरे ?
राधिका नयनन नीर भरे ।'[३]

इस प्रकार प्रेम-वर्णन में `नवीन` जी की वैयक्तिक विशेषता और अनुभूति की तीव्रता उत्कृष्ट कोटि की है । स्वाभाविकता के कारण उनकी अधिकांश प्रेम-रचनाएँ सरल, स्वच्छ अनुभूति युक्त एवं प्रभावशाली हैं । उनमें आकर्षण है, लालित्य है एवं सारल्य है । उनके प्रेम-काव्य में सच्ची भावनाओं को सम्यक् वाणी प्राप्त हुई है । डा० दुबे ने लिखा है - ``नवीन`जी

---

१. `अपलक` - `नयनन नीर भरे`, पृ० १०० ।
२. `अपलक` - `नयनन नीर भरे`, पृ० १०० ।
३. `अपलक` - `नयनन नीर भरे`, पृ० १०१ ।

का प्रेम-काव्य अपनी निष्कपट अभिव्यक्ति तथा अनुभूति की ईमानदारी में अपना सानी नहीं रखता । वे जीवन के गायक थे और जीवन से ही उन्होंने अपनी काव्य-प्रेरणा, सामग्री तथा प्रगति की निधियाँ प्राप्त की हैं । - - - - प्रेम भी उनके जीवन की उपज थी और इसे कवि ने, अपने काव्य में लहलहाती फसल के रूप में परिणत कर दिया ।[१] इस लहलहाते खेत की शोभा बढ़ाने में मान वर्णन एवं संकेतात्मकता का अपना निजी योगदान बड़ा ही महत्वपूर्ण , प्रशंसनीय एवं प्रभावोत्पादक है ।

आशा, प्रतीक्षा एवं विनती :

वियोग वर्णन में विरहिणी की विविध मानसिक स्थितियों का चित्रण किया जाता है जिस में आशा-निराशा, प्रतीक्षा एवं विनती के क्षण विशेष महत्व रखते हैं । स्वस्थ प्रेम-वर्णन करने में `नवीन` जी सिद्ध-हस्त थे । अत: क्षणिक निराशा उनके विरहाकुल हृदय पर अपना कोई स्थायी प्रभाव नहीं डालती, यद्यपि विरहाग्नि में यदाकदा घृत का कार्य ही करती है :-

> `निराशा क्यों हिय मथित करे ?
> चारों ओर भयानक तुम क्यों हम को व्यथित करे ?
> निराशा क्यों हिय मथित करे ?`[२]

निराशा के अंधकार में ही आशा का अंकुर फूट पड़ता है । उस अन्धकार में कहीं से भी कोई आवाज़ होने पर प्रिय के आगमन की शंका होती है :-

---

१. `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे , पृ० २६६ ।
२. `अपलक` - `निराशा क्यों हिय मथित करे ?` , पृ० १०३ ।

'एक सूनी-सी दिशा से सुन पड़ा कुछ ललित मृदु स्वर,
थी किसी की कण्ठ ध्वनि वह, था किसी का मान-मनहर ।'[१]

प्रिय-आगमन की प्रतीक्षा करते-करते अनेकों दिन बीत चले परन्तु आमन्त्रण कभी भी स्वीकार नहीं हुआ :-

'क्षिन-क्षिन कर अगिनती दिन पर दिन बीत चले ,
विकल हुए कितने मम आमन्त्रण-गीत भले ।
दिन पर दिन बीत चले ।'[२]

यद्यपि विरहिणी कीप्रतीक्षा में भी एक विशेष प्रकार का आनन्द अनुभव होता है तथापि हृदय की टीस अब अत्यधिक सहन नहीं होती । विरह का काँटा उसके हृदय में अन्दर ही अन्दर विष संचार करता है । प्रिय परनायिका विहार में आनन्द-मग्न है और विरहिणी उसकी राह देखती रहती है और कभी-कभी कोसती भी है :-

'तुझे बुलाने मैंने भेजी श्वास-पवन-दूतियाँ कई ;
पर, तू अटक रहा लख-लख कर कई मूरतें नई-नई ,
मैंने अपनी प्रथा निबाही, तूने अपनी विधि निबाही,
मैं देता ही रहूँ निमन्त्रण, औ' तू हँस-हँस टाले जा ,
मत मुँह मोड़, अरे बेदरदी, काँटे तनिक निकाले जा ।'[३]

प्रिय के साक्षात्कार के लिए व्याकुल विरहिणी की दशा देखते ही बनती है:-

---

१. 'अपलक' - 'फिर वही' , पृ० ६० ।
२. 'क्वासि' - 'दिन पर दिन बीत चले ।' , पृ० ३१ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'मत मुँह मोड़ अरे बेदरदी' , पृ० ६३ ।

`जदपि रमे हो मम शोणित के कण-कण में तुम, प्राण,
फिर भी व्याकुल हूँ करने को मैं तब साक्षात्कार ;
कहाँ हो तुम , मेरे सरकार ?`[१]

फिर भी वे न आये और प्रेयसी उसकी निष्ठुरता पर खीज उठी :-

` कितने उल्लास भरे थे ,
आशाएँ हिय में कितनी,
अनुमान नहीं था , तुम में
होगी निष्ठुरता इतनी !`[२]

विरहिणी की जीवन-नैया मँवर में फँसी है परन्तु पार लगाने वाला खेवनहार न जाने क्यों मनमानी कर रहा है :-

` आके तो देखो तनिक कैसा हाल-बिहाल ?
डगमग-डगमग हो रही इस नौका की चाल ।`[३]

विरह अग्नि से संतप्त नायिका अनुनय-विनय का सहारा लेकर प्रियतम को मनाने का प्रयत्न करती है । डा० हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है — `इन कविताओं में सच्चे रोमाण्टिक कवि की भाँति वे कल्पना के पंख फैला कर भाव के आकाश में उड़ान लेते हैं ।`[४] प्राण-प्रिय को `दूर देश का वासी` कहकर विरहिणी वास्तव में अपने हृदय की मर्मान्तिक पीड़ा का परिचय

---

१. `रश्मि रेखा` - `आज है होली का त्योहार` , पृ० २६ ।
२. `हम विषपायी जन्म के` - `नौका-निर्वाण`, पृ० ४१ ।
३. `हम विषपायी जन्म के` - `नैया` , पृ० २२५ ।
४. `हिन्दी साहित्य` - डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, `छायावाद`, पृ० ४७६।

देती है :-

"मेरे प्रिय, अब कब तक होंगे उन नयनों के मंगल-दर्शन ?
हुलस करोगे कब, निज जनपर , उन नयनों से मधु-रस वर्षण ?
कब फिर उन्हें निरख कर होगा मेरे रोम-रोम का हर्षण?
कब तक, तुम तक पहुँचूँगा मैं निपट प्रवासी बारह मासी ?
क्या है तब नयनों के पुट में ? बोलो दूर देश के वासी ।"[१]

पत्र लिखकर विरहिणी प्रियतम को आने के लिए विनीत भाव से निमन्त्रण देती है और साथ ही प्रिय-आगमन के अवसर पर अपनी मन:स्थिति का भी एक सुन्दर चित्र खींचती है :-

"आओ, आज बलाएँ ले लूँ
इस भादों के बीच,
रिम-झिम बरसो, अहो, मचा दो ;
मेरे आंगन कीच ।
मैं दौड़ी आऊँ स्वागत को,
फिसल पड़ूँ हरषाय ।
तुम घबराए-मुसकाते-से
बाँह पकड़ लो आय ।"[२]

विरहिणी अनेक उक्तियों का सहारा लेकर नायक को प्रवास से लौट आने के लिए विनती करती है ।[३] कोमल भावों की अभिव्यंजना में

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'क्या है तब नयनों के पुट में' , पृ० ८१ ।
२. 'कुंकुम' - 'दो-पत्र' , पृ० ६२ ।
३. 'कौन साध है अब मम हिय में, प्रियतम, तुमको क्या बतलाऊँ ?
केवल यह कि तुम्हें बिठलाकर सम्मुख , मैं निज गीत सुनाऊँ ।'
- 'रश्मि रेखा' - 'मैं तुमको निज गीत सुनाऊँ', पृ०७६.

कोमल एवं रससिक्त शब्दावली को अपना कर कवि ने प्रकृति के सहारे विरह दग्ध नायिका की व्याकुलता का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है :-

" अब मत छिटको दूर, प्राण-धन ;
देखो , होता है घन - गर्जन ;
हुलसा है जाती का कण-कण ;
वसुधा देख रही है छिन-छिन , नवल-नवल सपने ,
सजन , ये आए मेघ घने ।"[१]

अन्त में निस्सहाय होकर नायिका विलाप करने लगती है क्योंकि उसके विनीत शब्दों का प्रियतम पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा । वह प्रियतम की उस नगरिया तक जाने के लिए सोचती है जहाँ वह पर-नायिका के प्रेम-पाश में बंधा है । उसके विलाप में कसक है, वेदना है और मर्माहत पीड़ा है:-

"प्राची को पश्चिम करने की, क्यों यह मन में ठानी ?
ऊषा को सन्ध्या करने की यह कैसी मन - मानी?
उदयाचल अस्ताचल में मत परिवर्तित कर डालो !
कुछ क्षण तो मेरे सुहाग का कुंकुम तनिक सँभालो !
बड़ी कठिनता से पाए हैं प्रिय ! तब दुर्लभ दर्शन ,
तुम बिन सूना होगा जीवन ।"[२]

प्रो० केशवदेव ने लिखा है – "'नवीन' का प्रेमी-हृदय मिलन की मधुरिमा के रस में शराबोर है और सम्भवत: इसीलिये बार-बार नायिका से प्रणय का निवेदन करता है ।"[३] 'नवीन' जी के काव्य में प्रणय-निवेदन के

---

१. 'क्वासि' - 'मेघ आगमन' , पृ० १८ ।
२. 'अपलक' - 'तुम बिन सूना होगा जीवन' , पृ० ३८ ।
३. 'नवीन दर्शन' - प्रो० उपाध्याय , पृ० ६३ ।

अनेक सुन्दर उदाहरण नायक की ओर से भी मिलते हैं उनमें कवि के आतुर-हृदय की प्रेम-विह्वलता दर्शनीय है । प्रियतम प्रवास से लौट आता है तो प्रेयसी मान-हठ पर आ जाती है । मान छोड़ने के लिए प्रियतम विनीत होकर सरल एवं स्वाभाविक ढंग से कहता है :-

"मान छोड़ो , मानिनी,अब
नयन में सपना भरे तुम विहंस दो अभिमानिनी अब
मान छोड़ो , मानिनी , अब ।"[१]

अब तक तो वह भ्रान्त पथ पर भटक रहा था और अज्ञान का अन्धकार चारों ओर से व्याप्त था-इस तमस को हटाने के लिए कवि प्रेयसी का सहयोग चाहता है , अत: आग्रह पूर्वक निवेदन करता है :-

" दीप रहित जीवन - रजनी में ,
भटक रहा कब से, सजनी में ,
भूल गया हूँ अपनी नगरी ,
कुहू व्याप्त है सारी डगरी,
अपनी दीप शिखा की किरणें जाने दो उस पथ की ओर,
जहाँ भ्रान्त सा ढूँढ रहा हूँ प्रतिमे, तब अंचल का छोर ।"[२]

कवि प्रिय-दर्शन के लिए लालायित है अत: मनोकामना की पूर्ति के लिए वह अपने प्रिय से विनती करता है :-

"आकर इस सन्ध्या को कर दो सिन्दूर - दान ,

---

१. 'क्वासि' - 'मान छोड़ो' , पृ० ६४ ।
२. 'कुंकुम' - 'अंचल का छोर' , पृ० ५२-५३ ।

मम अंचल-ओटे दीप बन बिहँसो, अहो प्राण ,
ग्रहण करो आकर मम सन्ध्या - वन्दन, सुजान ,
हरण करो युग-युग का मेरा यह हिय -तम तुम ;
मेरे सन्ध्या-पथ में विहँस उठो , प्रियतम तुम ।"[१]

प्रिय आगमन की प्रतीक्षा करते करते कवि की दशा इतनी करुणा-जनक होती है कि :-

"कहा कहें ? कछु समझ हू परत न कोऊ बात ,
शब्द बापुरे सिमिटि के सकुचि- सकुचि रह जात ।"[२]

इस प्रकार आशा, प्रतीक्षा एवं विनति के अनेक सुन्दर चित्र हमें 'नवीन' जी के काव्य में मिलते हैं । वे एक मौलिक कलाकार थे , अत: अन्वेषक की भाँति पाठक को उस के काव्य के अन्तरतम में जाकर सौन्दर्य को ढूँढना पड़ता है । आग्रह-अनुग्रह, रूठना मनाना, प्रेम और आसक्ति के अनेक सुन्दर उदाहरण हमें उनके काव्य में ढूँढ़ने पर मिलते हैं ।

प्रेम का उन्माद का रूप : (हालावाद का प्रभाव)

राजनीतिक अव्यवस्था, सामाजिक दुराचार एवं आर्थिक कठिनाईयों के कारण तत्कालीन समाज में निराशा की लहर फैली हुई थी । चारों ओर से गहन अन्धकार दिखाई देता था । डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'राज-नीतिक और आर्थिक पराभव के कारण उस समय के वातावरण में गहन अवसाद छाया हुआ था, जिसके परिणाम स्वरूप तत्कालीन समाज, मुख्यत: मध्यवर्ग,

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विहँस उठो प्रियतम तुम' , पृ० ५५२ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'प्रतीक्षा' , पृ० २३६ ।

की चेतना एक विशेष मानसिक आध्यात्मिक क्लांति से अभिभूत हो गई थी। इस क्लांति को दूर करने के लिए बच्चन ने हाला का आह्वान किया।[१] परन्तु उन से पूर्व ही 'नवीन' जी ने इस क्षेत्र में नेतृत्व संभाला था, स्वयं 'बच्चन' जी लिखते हैं – 'नागपुर साहित्य-सम्मेलन के कवि-सम्मेलन के सभापति पद से जो भाषण उन्होंने दिया था, उसमें उन्होंने मुझे बड़े स्नेह-सम्मान के साथ स्मरण किया था। उस हाला प्यालावाद की भी वकालत की थी, जो अब मेरे नाम से सम्बद्ध हो चला था, पर जिसके आदि-अधिष्ठाता वही थे।'[२] विषमता से भरे हुए जीवन को कुछ क्षण विश्राम की आवश्यकता थी, जिसके लिए इन कवियों ने हाला का आश्रय ग्रहण किया। अनवरत संघर्ष, विफलता, यौवन की मस्ती, भोगवाद एवं लौकिक प्रेम के उफान ने इस काव्य को जन्म दिया। डा० नगेन्द्र के कथनानुसार यह हाला थी आध्यात्मिक विद्रोह से प्रेरित भोगवाद की।[३] अपना गम बुलाने के लिए इन कवियों ने उमर खय्याम से प्रेरणा ग्रहण की। प्रो० केशवदेव ने लिखा है - 'हालावाद का प्रारम्भ हमने देखा। जीवन के सूने वैराग्य-मरु में प्रेम की पयस्विनी बहाने का यथासाध्य प्रयत्न हालावाद ने किया है।'[४] इस दिशा में श्री बच्चन ने 'मधुबाला', 'मधुशाला' एवं 'मधुकलश' लिखकर जीवन की कटुता को कुछ कम करने का प्रयत्न किया,

---

१. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ - डा० नगेन्द्र - 'बच्चन की कविता', पृ० ८३।

२. 'नर्मदा' - 'नवीन'—विशेषांक १९६३ - 'वह योद्धा के समान जिए और योद्धा के समान मरे भी' - लेख - बच्चन, पृ० ९६।

३. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' - डा० नगेन्द्र - 'बच्चन की कविता', पृ० ८३।

४. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० ८१।

क्योंकि हालावाद के विषय में उनका निजी दृष्टिकोण था।[१] 'मधुशाला' में उनकी मधुमयी विचारधारा दृष्टव्य है :-

'उस प्याले से प्यार मुझे जो-
दूर हथेली से प्याला,
उस हाला से चाव मुझे है
दूर अधर से जो हाला;
प्यार नहीं पा जाने में है,
पाने के अरमानों में।
पा जाता तब हाय, न इतनी
प्यारी लगती मधुशाला।'[२]

बच्चन जी के अतिरिक्त अन्य अनेक कवियों पर इस उन्मादक प्रेम का प्रभाव पड़ा जिनमें भगवतीचरण वर्मा भी उल्लेखनीय हैं :-

'पीने दे, पीने दे, ओ यौवन-मदिरा का प्याला,
मत याद दिलाना कल की, वह कल है आने वाला।
है आज उमंगों का युग, तेरी मादक मधुशाला,
पीने दे जी भर रूपसि, अपने पराग की हाला।'[३]

---

१. श्री बच्चन के हालावाद के अनुसार इस जगत में जो कुछ आनन्द का अंश है वही हमारे लिए 'हाला' अर्थात् 'मधु' है, जो उसका आधार है उसी को हम उसका पात्र वा 'प्याला' मान सकते हैं और जो उसका मूल स्रोत है उसे 'मधुबाला' के रूप में देख सकते हैं। यह जगत् हमारे लिए, इसी कारण, एक 'मधुशाला' का महत्व रखता है और हम उपर्युक्त मधु की मादकता के लिए नित्य प्रयत्नशील रहा करते हैं।
- 'हिन्दी काव्यधारा में प्रेम-प्रवाह'-परशुराम चतुर्वेदी, पृ०२२२.

२. 'मधुशाला' (लीडर प्रेस, प्रयाग), पद्य ६३।

३. 'मधुकर' - भगवतीचरण वर्मा, पृ० ४२।

प्रेम की मदिरा उंड़ेलने के लिए 'नवीन' जी सदा तत्पर रहे । उनकी कतिपय कविताओं में उन्मादक प्रेम के सुन्दर चित्र मिलते हैं जिन पर कि हालावाद का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है ।इन कविताओं में उनका अलमस्त व्यक्तित्व भी देखने को मिलता है । डा० विजयेन्द्र स्नातक ने लिखा है — 'शृंगार रस से भी आपको प्रेम है और उस रस की अभिव्यक्ति जिन कविताओं में हुई है, वहाँ मादकता, उन्माद और सहज मस्ती बिखर पड़ी है ।'[१] यौवन-मदिरा का प्याला लेकर कवि सब कुछ बुला देना चाहता है :-

'हो जाने दो गर्क नशे में,
मत आने दो फ़र्क नशे में,
ज्ञान-ध्यान-पूजा-पोथी के-
फट जाने दो वर्क नशे में ।
ऐसी पिला कि विश्व रो उठे एक बार तो मतवाला ।
साक़ी, अब कैसा विलम्ब । भर-भर ला तन्मयता हाला ।'[२]

'नवीन' जी प्रेम की महत्ता से पूर्णत: परिचित थे । प्रेम के भीतर उन्होंने उस मिठास का अनुभव किया था जिसके सहारे विरह अग्नि का भीषण दाह भी उन्हें सुखदायक प्रतीत होता था । उस मिठास को प्राप्त करने के लिए उनका साक़ी से आग्रह है :-

'एक घूँट, हाँ एक घूँट, बस दे हे प्राण, मुझे ,
तनिक समीप अधर-सम्पुट ले आओ, कुछ तो प्यास बुझे;
एक घूँट उन अधरों का मधुरस ले लेने दो कृपया ,

---

१. 'हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास' - छायावाद युग, पृ०२७० - डा० विजयेन्द्र स्नातक ।
२. 'रश्मि रेखा' - 'साकी' , पृ० ७३ ।

एक घूँट देकर, स्वामिनी, यह प्यास बुझा दो, करो दया;
तड़पा हृदय गला चिटका है व्याकुल मन, जीवन, सूखा;
एक घूँट, हाँ एक घूँट में, लहरे रोम-रोम सूखा ।[१]

डा० शिवमंगल 'सुमन' ने लिखा है:- 'बच्चन के जिस हालावाद ने दो दशकों तक पाठकों को मदमस्त बनाया उसका सर्वप्रथम उत्स नवीन के उफनते प्याले से ही छलका था ।'[२] उन्मादावस्था में वे साक़ी से कई बार पिलाने का आग्रह करते हैं :-

'साक़ी ! मन-घन-गन घिर आये, उमड़ी उमड़ी श्याम मेघ माला,
अब कैसा विलम्ब ? तू भी भर भरला गहरी गुल्लाला ;
तन के रोम-रोम पुलकित हों ,
लोचन दोनों अरुण-चकित हों;
नस-नस नव झंकार कर उठे ;
हृदय विकम्पित हो, उलसित हो;
कब से तड़प रहे हैं - खाली पड़ा हमारा यह प्याला ?
अब कैसा विलम्ब ? साक़ी भर भर ला तू अपनी हाला ।'[३]

इसी मादकता में वह संसार की सुध-बुध भुला देना चाहता है क्योंकि संसार उसे असफलताओं का केन्द्र दिखाई देता है । निरन्तर संघर्ष के पश्चात् भी जब आशा का स्रोत कहीं से दिखाई न दिया तो वह इस घोर निराशा के अन्धकार से निकल कर कुछ क्षण विश्राम करना चाहता है । डा० केसरी

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'एक घूँट' , पृ० ३६४ ।
२. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - २० मई १९६२ - 'पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - डा० शिवमगलसिंह 'सुमन', पृ० ६ ।
३. 'रश्मि रेखा' , 'साक़ी' , पृ० ७३ ।

नारायण शुक्ल ने लिखा है - 'कुछ कवि समय की कटुता भुलाने के लिए साक़ी और प्याला सपनों के महल और वास्तविक जीवन से कोसों दुर बसी हुई प्रेम की दुनिया का गान करने लगे ।'[१] इस दुनिया में बिना पिये रहना असम्भव है:-

'बिना पिये मानता नहीं वह,
बिगड़ गयी है कुछ ऐसी आदत,
कहाँ के रोज़े , कहाँ की पूजा ?
छुटी परस्तिश, मिटी इबादत ।

+- +-

दुबाये खाली बगल में बोतल;
संभाले टूटा-सा एक प्याला ,
वो पीने वालों में नाम लिखवाने
आन पहुँचा, हजूरे वाला ।'[२]

वह विस्मृति को आह्वाहन देता है क्योंकि अवसाद के घने बादल चारों ओर से घिर आए हैं । इसी कारण साक़ी से खूब पिलाने के लिए एवं हृदयाकर्षक रूप में प्रस्तुत होने के लिए कवि विनती करता है :-

'मुसकाती, मधु छलकाती-सी सखि, तुम साक़ी बनजाओ,
निज मधु-भरी सुराही लेके, मदमाती बन-ठन आओ ;
सीधा नही, तनिक टेढ़ा-सा किये मधु भरा सुघर नया;
सजी, यौवन के पावस में सरसा दो कुछ रस कृप्या ,
अंजलि भर-भर खूब पिला दो ,

---

१. 'आधुनिक काव्यधारा' - केसरी नारायण शुक्ल, पृ० ३०३ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'प्यासा' , पृ० ४०० ।

मेरे मृण्मय प्राण जिला दो,
कुछ क्षण मेरी बा होशी को-
बे होशी के संग मिला दो ,'[१]

जहाँ एक ओर इन कविताओं में मांसलता एवं वासना का आधिक्य है वहाँ दूसरी ओर कहीं-कहीं पर इनके द्वारा दार्शनिक तथ्यों का प्रतिपादन भी हुआ है । अधिकांश कविताओं में यौवन का उन्माद ही निखर उठा है। डा० रांगेय राघव ने लिखा है – 'प्रेम और यौवन काव्य के मेरुदण्ड हैं । यौवन जीवन का वह भाग है जब विकास करने की शक्ति अपनी पूरी सामर्थ्य से जागरूक रहती है । - - - बाल्यकाल में विस्मय की प्रधानता होती है, यौवन में विस्मय लालित्य को ग्रहण करता है । सौन्दर्य की ओर विशेष अभिरुचि हो जाती है ।'[२] यौवन से सम्बन्धित ये गीत सौन्दर्य पूर्ण हैं , नशीले हैं और सुला देने वाले हैं परन्तु इनमें कहीं भी अतिरंजना नहीं है एवं प्रेम का अस्वस्थ वर्णन नहीं मिलता । वह जीवन का उद्देश्य ही विस्मृति नहीं मानता, केवल मात्र हाला के नशे में ही चूर नहीं रहना चाहता। अतः वह कह उठता है:-

' आज अधिक गहरे में हूँ मैं तुमने तो की क्रीड़ा मात्र,
पर मेरे चहुँ ओर पड़े हैं , प्रिय, देखो ख़ाली मधु पात्र ।
गात्र शिथिल हैं, पग डगमग पड़ते हैं, आँखें झपती हैं ,
वचनों को उच्चरित करते , अक्षर रेख यह कँपती है !
फाँसा मुझको नया-नया यों ,
ज़रा दिखाई नहीं दिया क्यों ?
अब हँस - पूछ रहे हो निर्दय-,

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'पिलादो' , पृ० ३७४ ।
२. 'आधु० हि० कविता में प्रेम और शृंगार' - डा० रांगेयराघव, पृ०५२ ।

मघवा इतना चढ़ा गया क्यों ?
जोड़े हाथ विनय करता, मेरे हिय का निस्पन्दन, रो,
भर-भर प्याले यौवन-मदिरा के देना अब बन्द करो।।।[१]

इस प्रकार 'नवीन' जी के प्रेमकाव्य पर हालावाद का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, स्वयं उन्होंने इस वाद का समर्थन किया[२], अत: इसके विकास में सहयोग भी दिया। डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है – 'नवीन' जी ने प्रेम के भोग पक्ष का भी चित्रण करके, उसे जीवन की जिन्दादिली से ओत-प्रोत कर दिया है।'[३]

मूल्यांकन :

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रेम के विषय में बालकृष्ण का निजी दृष्टिकोण स्वस्थ था। वे प्रेम को जीवन की प्रेरक शक्ति मानते थे। प्रेम जीवन का लक्ष्य है जिसमें सफलता प्राप्त करने के लिए कवि सतत प्रयत्नशील रहता है। उनके प्रेम गीतों में लालित्य है, आकर्षण है, सौन्दर्य है एवं समर्पण की भावना है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है – 'यह काव्य गंगा हृदय की दिव्यधारा थी। यह अमृत की प्रेरणा थी।'[४]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'यौवन मदिरा', पृ० २८२।
२. 'यह आपके कवि-गण, जिनका मखौल पुरानों ने और नयों ने सजीवादी, हाला प्यालावादी, रहस्यवादी, छायावादी एवं अर्थहीन व्यर्थ बकवादी कह कर उड़ाया है, आपके साहित्यिक भूषण हैं। स्मरण रखिये, भविष्य में इतिहास वेत्ता इस काल को प्रसाद, पन्त, माखनलाल, महादेवी, भगवती चरण, निराला, सुभद्रा, दिनकर, बच्चन, अज्ञेय आदि के नाम से ही स्मरण करेगा।' - 'कुंकुम' - 'कुछ बातें', पृ० ११.
३. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० २६४।
४. 'विशाल भारत' (संख्या १-६) (जनवरी-जून १९६० ई०) - लेख 'स्वर्गीय नवीन जी' लेखक - डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० ४७९।

'नवीन' जी के प्रेम-गीत प्रभाव पूर्ण एवं अनुभूति युक्त हैं। उनका काव्य सहज रसमय काव्य है।[१] उसमें वेदना का आधिक्य है और अनुभूति की मर्मस्पर्शी अभिव्यंजना। डा० हरिवंशराय 'बच्चन' ने लिखा है - 'राजनीति में 'नवीन' जी का शरीर था, उनका मस्तिष्क भी हो सकता है; पर उनका हृदय, उनके हृदय की सरसतम भावना उनकी कविता में थी, उनकी कविताओं के लिए सुरक्षित थी।'[२] कहीं कहीं पर 'नवीन' जी ने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की ओर संकेत किया है। वे प्रेम को निष्कपट और निश्छल वृति मानते थे, यही कारण है कि उस परम तत्व को प्राप्त करने में ऐसी प्रेम भावना सहायक सिद्ध होती है। स्वयं उन्होंने लिखा है - 'जिस समय भवभूति ने कहा था, 'एकोरस: करुणमेव' उस समय वह रो ही रहा हो और विलाप की धुन में उसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित कर दिया हो सो बात नहीं। भवभूति के कथन के पीछे निखिल जीवन का एक तत्व, एक रहस्य, छिपा है। हमारे, आपके, सबके अनुभवों ने हमें यह स्पष्ट रूप से जता दिया है कि जीवन में एक अकारण असन्तोष, एक मदिर चाह, एक अमिट प्यास, एक विषादमयी स्फूर्ति, एक अतृप्ति बनी ही रहती है। - - - रवि ठाकुर

---

१. 'चाहें वे गांधी का प्रशस्ति-गान करें या उनकी पराजय-नीति के विरुद्ध आक्रोश की अभिव्यक्ति या उद्दाम शृंगार का उद्गीथ, उनकी वाणी अनिवार्यत: प्राण-रस से अभिषिक्त रहती थी।'
- 'आजकल' - मार्च १९६१ - लेख (दादा : बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'), पृ० ८।

२. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - १९६३ लेख (कवि - 'नवीन' जी) - हरिवंशराय बच्चन, पृ० ११५।

कहते हैं - `ओह, द कीन काल आफ द फ्लूट.` आह ! तेरी स्वनित मुरलिका का वह आतुर आह्वान किस देश से, किस के श्वासोच्छ्वास से स्पंदित हमारी ~~समसे~~ प्राण वंशी के रन्ध्रों से प्रवाहित हो उठता है ? कहाँ है वह ? साजन कौन देश में छाए ?`[१]` `चेतन-वीणा` नामक कविता में कवि ने लिखा है :-

`प्रियतम, मम रोम-रोम, रन्ध्र-रन्ध्र स्वनित आज,
मेरी चेतन-वीणा है गुंजित , क्वणित आज
रन्ध्र-रन्ध्र स्वनित आज ।
सहसा मिल गए आज मेरे सब तार-तार ,
गूँजा झंकार, मधुर उमँगी मधु गान-धार ;
आज पूर्ण हुआ, प्राण, जीवन का स्वर-सिंगार,
आरोहण, अवरोहण, श्रुति, लय, सब ध्वनित आज ।
रोम-रोम स्वनित आज ।`[२]

`नवीन` जी स्वच्छन्द प्रकृति के जीव थे और यही स्वच्छन्दता उनके प्रेम काव्य में दृष्टिगोचर होती है । उन्होंने किसी साहित्यिक वाद की दासता स्वीकार नहीं की । उनमें आत्म व्यंजन की क्षमता विद्यमान थी और उद्दाम गति से वे शृंगारपरक रचनाएँ लिखते रहे । श्री कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा ने लिखा है - " `नवीन` जी की प्रेमभावना पर्वतीय नदी की भाँति सदैव उद्दाम रही है । हिन्दी के अन्य किसी कवि में ऐसी उद्दाम गति मैंने नहीं देखी ।"[३]

---

१. `कुंकुम` - `अपनी बात` , पृ० १२ ।
२. `क्वासि` - `चेतन-वीणा` , पृ० १० ।
३. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - ३ जुलाई १९६० - लेख (राजीति के पंकज से)- लेखक कान्तिचन्द्र सोनरक्सा, पृ० २५ ।

विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि उनका निजी जीवन अवसाद-पूर्ण था। यौवन की लालिमा कारागृह के शून्य कक्षों में खो गई। कसक ने हृदय में घर कर लिया और निराशा जीवन-थाती बन गई। परिणामस्वरूप उनके प्रेम-काव्य में विप्रलम्भ की प्रधानता है। डा० इन्द्रनाथ मदान ने लिखा है — 'श्री 'नवीन' की शृंगार और करुण रस सम्बन्धी कविताओं में उन्माद और वेदना है। इन कविताओं से यह पता चलता है कि कवि के जीवन में एक समय ऐसा आया जब वह निराश था।'[१]

स्वाभाविकता एवं सहजता के कारण उनकी शृंगारिक कविताएँ विश्वास पूर्ण परिस्थितियों का प्रसार करती हैं, पाठक कवि के समीप आकर उस की हृदयगत भावनाओं से तादात्म्य कर लेता है। उनके प्रेमोच्छ्वास संतुलित मनोरागों की उद्भावना है। उनमें मधुर कसक है और मतवाली टीसें।[२] डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने लिखा है - 'उनकी शृंगारपरक रचनाओं में एक सच्चे रोमांटिक कवि के दर्शन होते हैं।'[३]

निस्सन्देह उनके काव्य में उन्मादक प्रेम-वर्णन हुआ है परन्तु कहीं भी नग्न-चित्रण नहीं जिसे पढ़कर घृणा उत्पन्न होती। उन्होंने यदाकदा संयम से भी काम लिया है। डा० लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है — ''नवीन' जी का प्रेम-काव्य उनके हृदय का स्वच्छ दर्शन है, अमल अनुभूतियों का आगार है। उनमें प्रणय, रूपसौन्दर्य, यौवन, मादकता, भोग एवं समन्वय के सूत्र अपनी संयुक्त जलनिधि में, काव्य श्री को, स्नात कर रहे हैं।'[४] निष्कर्ष रूप में

---

१. 'काव्य सरोवर' - संकलनकर्ता-डॉ० इन्द्रनाथ मदान, पृ० २२५।
२. 'नवीन-दर्शन' - केशवदेव उपाध्याय, पृ० ७२।
३. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ० ३१०।
४. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० २६४।

'नवीन' जी का प्रेम-काव्य आधुनिक युग की अमूल्य देन है । स्वयं वे रस के पारावार थे । अपने मित्रों और आत्मीय जनों के बीच उनकी आत्मा एक खिल-खिलाते फूल की तरह उन्मुक्त हो उठती थी ।[१] उन के हृदय का यह आह्लाद उनके प्रेम-काव्य में मुखरित हुआ है । उनके सम्पूर्ण साहित्य में प्रेम-काव्य का स्थान यद्यपि सर्वोपरि नहीं तथापि महत्वपूर्ण एवं अद्वितीय है ।

तुलनात्मक निष्कर्ष :

'महजूर' एवं बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के प्रेम-काव्य का सम्यक् विवेचन करने के पश्चात् तुलनात्मक दृष्टिकोण से कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रकाश में आते हैं । दोनों के प्रेम-काव्य में साम्य एवं वैषम्य विपुल मात्रा में मिलता है । दोनों महानुभावों का प्रेम के प्रति दृष्टिकोण स्वस्थ, परिमार्जित एवं विकसित है । 'नवीन' जी ने रीतिकालीन प्रेम-वर्णन को नहीं अपनाया और न ही उसके आधार पर सस्ते छन्द लिखने का प्रयास किया । उनका प्रेम-काव्य स्वयं उनके अतृप्त हृदय की पुकार है, जिसको उन्होंने वाणी प्रदान की । अपने अभावपूर्ण जीवन ने उन्हें सजनी के विषय में बहुत कुछ सोचने के लिए विवश किया, परिणाम स्वरूप अनेक कल्पनाएँ सजीव बन पड़ी, अनेक उच्छ्वास् मुखरित हुए और सर्वत्र भावुक हृदय बोल उठा । निस्सन्देह 'महजूर' ने आरम्भ में परम्परा का पालन किया, हब्बाखातून और रसूलमीर का अनुसरण किया परन्तु समय आने पर उन्होंने रूढ़ परम्परा को ठुकरा भी दिया । शृंगार-वर्णन को अधिक सजीव एवं हृदय-ग्राही बनाने के लिए उन्होंने लोक-जीवन से अपनी काव्य-नायिका एवं नायक का चयन किया और उनके रस-छलकाते

---

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - १५ मई १९६० - सम्पादकीय - पृ० ३ (एक और नर-केहरी चला बसा) ।

हृदयों का वर्णन किया । उन्होंने काल्पनिक या अविश्वसनीय प्रेम-वर्णन में अकारण समय नष्ट नहीं किया अपितु जीवन के समान ही अपने प्रेम-वर्णन को गतिमान बनाने के लिए वे जनता में उतर आए । `नवीन` जी ने भी `महजूर` के समान ही अनुभूत-तथ्य को कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है । दोनों के प्रेम-काव्य में यथार्थ जीवन और जगत की मधुर-लय गूँज उठी है । दोनों ने अपने प्रेम-काव्य के उपकरण इसी सृष्टि से जुटाये, आकाश के तारे तोड़ने की आवश्यकता उन्हें नहीं पड़ी और न ही आकाश-कुसुम चुनने की ।

दोनों ने प्रेम को जीवन का एक महान तथ्य माना है । उनके विचारानुसार प्रेम जीवन का शाश्वत सत्य है, अमिट भूख है जो निरन्तर बढ़ती ही रहती है । प्रत्येक प्राणी को संसार में प्यार करने का अधिकार है और इस अधिकार से किसी को भी वंचित नहीं रखा जा सकता । दोनों की रचनाओं में पर्याप्त मात्रा में तड़प, गहराई और दर्द है ।

`महजूर` के प्रेम-वर्णन में स्थानीय रंग अत्यधिक उभर आया है । उनके प्रेम-काव्य में पुरानी रीतियों एवं नवीन प्रयोगों का समुचित सम्मिश्रण पाया जाता है । काश्मीर की प्राकृतिक-सुषमा ने बरबस उनके हृदय को मोह लिया था । यहाँ के प्राकृतिक-सौन्दर्य-स्थलों का वर्णन उन्होंने प्रेम-काव्य के प्रसंग में बड़ी सजीवता के साथ किया है । पर्वतीय-प्रदेश कश्मीर के प्रकृत-सौन्दर्य के प्रति कवि के हृदय में अगाध-प्रेम था और वे अपनी काव्य-नायिका को प्रिय के दर्शनार्थ इन समस्त स्थलों पर पहुँचाते हैं । उनका प्रेम-वर्णन यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण चित्रात्मक बन पड़ा है ।

दोनों कवियों ने शृंगार को रस-राज स्वीकार किया और इसकी महत्ता निर्विवाद घोषित की । उन्होंने शृंगार के विषय में स्वस्थ दृष्टिकोण

अपने-अपने काव्य में प्रस्तुत किया । दोनों कवियों ने शृंगार-वर्णन करते समय संयोग और वियोग का सूक्ष्म चित्रण किया है । `नवीन` जी ने संतुलित रूप से संयोग एवं वियोग-वर्णन का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है । इन गीतों में उन का शुद्ध एवं सच्चा हृदय झलकता है । उनकी कविताओं में संयोग-वर्णन रूढ़ काव्योपयुक्त विषय नहीं अपितु नवीन साहित्यिक प्रवृत्तियों से प्रभावित है । उसमें पूर्ण प्रवाह है एवं नवीनता है । `महजूर` के प्रेम-काव्य में संयोग और वियोग-वर्णन के विषय में इस संतुलन का अभाव है । उनका मन संयोग-वर्णन की अपेक्षा वियोग चित्रण में अधिक रमा है । उनकी कविताओं में विप्रलम्भ शृंगार का महत्व अधिक रहा है और वे प्रेम के अश्रुमय स्वरूप पर ही अधिक रीझे हैं ।

दोनों कवियों की शृंगार रस-परक रचनाएँ मनुष्य की कोमल भावनाओं को स्पर्श करती हैं । स्वच्छन्द प्रेम के साथ-साथ सच्ची भावनाओं को सम्यक् वाणी दोनों कवियों के द्वारा प्राप्त हुई है । दोनों ने काव्य-नायिका की विरह-दशा का बहुत ही मर्मस्पर्शी चित्रण किया है । दोनों ने वेदना को वरदान स्वरूप ग्रहण किया है और प्रिय-विरह को जीवन की एक चिर थाती माना है । दोनों भावुक कलाकारों ने इस क्षेत्र में अनेक मौलिक उद्भावनाओं को जन्म दिया है ।

`महजूर` एवं नवीन जी के प्रेम-काव्य में `सखि-वर्णन` का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है । `महजूर` सखि-वर्णन में वियोग-दशा का प्रभावोत्पादक चित्रण करते हैं जब कि `नवीन` जी सखि के माध्यम से संयोग-प्रेम का चित्रण करते हैं । `महजूर` के काव्य में विरहिणी नायिका अपनी अन्तरंग सहेलियों के पास बैठकर प्रिय के विषय में अनेक प्रकार से सोचती है, वह कभी विलाप करती है और कभी निर्मोही की निर्दयता पर रोती भी है । `नवीन` की

काव्य-नायिका पुनर्मिलन के अवसर पर अपने मन के उल्लास को अपनी सखियों के सम्मुख विविध प्रकार से अभिव्यक्त करती है। 'नवीन' जी ने सखि-वर्णन में परम्परा का पालन भी यत्र-तत्र किया है।

सौन्दर्य के उपासक दोनों कवियों ने प्रेम-वर्णन में स्मृति संचारी का भी यथेष्ट सहारा लिया है। इस के आधार पर उनके काव्य में अनेक गुणों का समावेश (विशेष कर स्वाभाविकता का) हुआ है। मिलन की प्रत्येक अवस्था नायिका के लिए सुखदायक होती है परन्तु वियोग में उनका पुनः स्मरण नायिका की उन्मत्तावस्था को बढ़ा देता है। यहाँ यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि 'महजूर' के काव्य में 'स्मृति' का उल्लेख सीमित रूप से हुआ है।

कोमल हृदयी दोनों कलाकारों ने अपने-अपने प्रेमकाव्य में प्रकृति की सहायता भी यथा समय ली है। प्रेम-वर्णन में प्रकृति-चित्रण पृष्ठभूमि एवं उद्दीपन के रूप में अधिकतर हुआ है। 'महजूर' के प्रेम-काव्य में प्रकृति का अपना निजी महत्व है। प्रकृति के अकृत्रिम सौन्दर्य ने उन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया और इस प्रकार उन्होंने अपने प्रेम-काव्य का शृंगार प्रकृति-सुषमा से किया है। 'नवीन' जी पर भी प्रकृति के मादक वातावरण ने अपना स्थायी प्रभाव डाल दिया था। वे छायावादी युग के अमर कलाकार थे, इस कारण युगीन-प्रवृत्तियों का प्रभाव भी उन पर पड़ा। छायावादी काव्य में प्रकृति को विशेष स्थान प्राप्त हुआ था, 'नवीन' युग से प्रभावित हुए, फलतः उनके काव्य में प्रकृति की सुषमा खिल उठी। वे स्वच्छन्द प्रकृति के जीव थे। उनके काव्य में स्वच्छन्द रूप से प्रकृति-देवी ने अपना उचित स्थान पा लिया। दोनों कवियों के लिए प्रकृति प्रेरणा-स्रोत रही है।

प्रेम-काव्य में संकेतों एवं प्रतीकों का भी अपना एक विशिष्ट स्थान

होता है । इस क्षेत्र में `महजूर` `नवीन` जी से एक पग आगे हैं । `महजूर` ने परम्परागत संकेतों तथा प्रतीकों में नवीन प्राण-संचार किया है । समयानुकूल एवं परिस्थिति अनुकूल कवि ने अनेक नवीन संकेतों एवं प्रतीकों को ग्रहण किया और कहीं-कहीं रूढ़ संकेतों को भी बिना किसी झिझक के काव्य में फिट किया । `नवीन` जी ने राधाकृष्ण के प्रेम-वर्णन की आड़ में अपने नायक-नायिका के प्रेम-वर्णन का बड़ा ही माधुर्य-गुण-सम्पन्न वर्णन किया है । अलौकिक प्रेम के सहारे उन्होंने लौकिक प्रेम का सजीव वर्णन किया है जब कि `महजूर` के काव्य में इसका अभाव है । `महजूर` ने भौंरा, नरगिस, हीमाल, नागराय, कली, मधुप, यूसुफ, ज़ुलेखाँ, बुलबुल, बसन्त, पतझड़ आदि के अनेक प्राचीन एवं नवीन तथा जड़ एवं चेतन संकेतों के द्वारा अपने संकेतात्मक प्रेम-वर्णन में अद्भुत रस घोल दिया है । ऐसे संकेत `नवीन` जी के काव्य में अल्प हैं ।

दोनों कवियों के प्रेम गीतों में `व्यंग्य एवं उलाहनों` का भी सम्यक् निर्वाह हुआ है । `महजूर` ने इस क्षेत्र में ठेठ कश्मीरी शब्दों का प्रयोग किया है और कहीं-कहीं उर्दू एवं फारसी से भी कुछ व्यंग्योक्तियाँ अपना ली । `नवीन` के काव्य में `मान-वर्णन` के प्रसंग में ऐसी अनेक उक्तियाँ देखने को मिलती हैं । निस्सन्देह मान-मनुहार का प्रसंग प्रेम की एक निष्ठा एवं अनन्यता का द्योतक है । इस प्रसंग में दोनों कवियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कहीं भी उन्होंने असम्भव काल्पनिक उड़ानें नहीं की हैं । लौकिक प्रेम-वर्णन के प्रसंग में `नवीन` जी ने इसी संसार से सामग्री एकत्रित की और उसे कल्पना के सहारे नवीन आकार प्रदान किया । संयोग एवं वियोग दोनों अवस्थाओं में नायक-नायिका, निजी रोष प्रकट करने के लिए व्यंग्य एवं उलाहनों को भावअभिव्यक्ति का साधन बनाते हैं । इन व्यंग्योक्तियों में मर्म-स्पर्शी वेदना निहित रहती है । दोनों आलोच्य-कवि इस क्षेत्र में मंजे हुए खिलाड़ी

प्रतीत होते हैं ।

दोनों कवियों का स्वर मूलत: आदर्शवादी रहा है । आशा के बल पर ही प्रतीक्षा की जाती है और प्रतीक्षा में ही विनति का अवसर आता है । इन तीनों (आशा, प्रतीक्षा एवं विनति) प्रसंगों का चित्रण `नवीन` और `महजूर` ने अपने-अपने काव्य में आकर्षक ढंग से किया है । आग्रह-अनुग्रह, रूठना-मनाना, प्रेम और आसक्ति, आशा और क्षणिक निराशा तथा प्रेम पर अडिग विश्वास के अनेक सुन्दर उदाहरण हमें उनके काव्य में मिलते हैं ।

`नवीन` जी पर हालावादी काव्य-प्रवृत्ति का भी प्रभाव पड़ा है । कोई इसे उनके निजी जीवन की मस्ती एवं फक्कड़पन कहता है तो कोई विषमय जीवन की रंगीन हाला का उन्मादक प्रभाव । उन्हें हालावाद का अधिष्ठाता भी कहा जाता है । इस प्रकार, प्याला, मधुबाला, मधुशाला एवं मधु-कलश का उल्लेख भी उनके प्रेम-काव्य में यत्र-तत्र मिलता है । जीवन की कटुता को कुछ कम करने के लिए उन्होंने नीलकंठ के रूप में विषपान किया और यह उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी कि मृत्यु-पर्यन्त उफ तक नहीं किया । प्रेम की मदिरा उँडेलने के लिए `नवीन` जी सदा तत्पर रहे । उनकी कतिपय कविताओं में उन्मादक प्रेम के सुन्दर चित्र मिलते हैं । इन कविताओं में उनका अलमस्त व्यक्तित्व भी देखने को मिलता है । वे इसी मादकता में कुछ क्षण के लिए जीवन की सुध-बुध भुला देना चाहते हैं । इन कविताओं में मांसलता का आधिक्य है और अधिकांश में यौवन का उन्माद भी निखर उठा है । कविवर `महजूर` इस विशेष काव्य-प्रवृत्ति के प्रभाव से सर्वथा मुक्त थे । कहीं-कहीं उनके काव्य में ढूँढने पर ऐसे एक, दो या चार उदाहरण अवश्य मिलते हैं परन्तु वे नगण्य हैं और उन्हीं अल्प-उक्तियों के आधार पर हम उन्हें किसी विशेष वाद या काव्य-प्रवृत्ति के साथ जोड़ नहीं सकते ।

प्रेम के मतवाले गायकों (`महजूर` एवं `नवीन`) की काव्य-नायिकाएँ यदाकदा पत्र-लिखने बैठती हैं और इस प्रकार अपने को अभिव्यक्त कर के विरह ताप को कुछ मिटाने का प्रयत्न करतीहैं । यह पत्र-व्यवहार की कला (सन्देश) बहुत प्राचीन है जिसको `महजूर` और `नवीन` ने पुन: नवीन ढंग से अपनाने का सफल प्रयत्न किया है । इस पत्र-व्यवहार के प्रसंग में सखी विरहिणी के उन्मत्त हृदय एवं मस्तिष्क को संयमित रूप से अभिव्यक्ति देने में सहयोग देती है।

दोनों कवियों के प्रेम-गीतों में संगीत का ऐसा सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है कि उनकी रचनाएँ अत्यधिक सरस, हृदयस्पर्शी एवं भावोत्तेजक बन पड़ी हैं । दोनों कलाकारों की अन्तर वेदना, सूक्ष्म-अवलोकनी दृष्टि, रसिक एवं कोमल हृदय, स्थिर-अस्थिर चित एवं भाव गाम्भीर्य का बोध इन गीतों के द्वारा होता है ।

दोनों कवियों का प्रेम-काव्य बहुत समय तक उपेक्षा के मेघ-खण्डों से आच्छादित रहा । `नवीन` जी की अधिकांश रचनाएँ उनकी मृत्यु तक अप्रकाशित रहीं । वे सदा राजनीति में व्यस्त रहते थे परन्तु फिर भी कुछ समय निकाल कर वे अपने भावुक-हृदय को टटोल कर साहित्य देवी पर अर्चना के पुष्प चढ़ाते थे । लिखने में उन्होंने कभी आलस्य नहीं दिखाया । परन्तु दुर्भाग्यवश वे अपनी रचनाओं के प्रकाशन में बड़े ही लापरवाह रहे । फलत: उनके जीवनकाल में उनके कवि हृदय का सम्यक् मूल्यांकन नहीं हो सका । कश्मीरी भाषा एवं साहित्य के प्रति यहाँ के संस्कृत तथा फारसी भक्तों की उपेक्षा का यह परिणाम निकला कि धीरे-धीरे सामान्य जनता भी इसके प्रति उदासीन हो गई, फलत: कश्मीरी लेखकों एवं कवियों को जनता की ओर से सदा निराश ही रहना पड़ा । यही हाल `महजूर` का भी हुआ। बहुत समय तक कोई उन्हें पूछता भी न था । समय की माँग ने उसे प्रकाश में लाया ।

`नवीन` जी ने अपने प्रेम काव्य में यत्र-तत्र अपनी दार्शनिक विचार-धारा को भी अभिव्यक्त किया है। कहीं-कहीं पर उनके प्रेम-काव्य में एक अज्ञात-रहस्य की भावना भी देखने को मिलती है। लौकिक चित्रण में कहीं अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति भी उन्होंने की है। उनके काव्य में स्थूल से सूक्ष्म के प्रति संकेत अवश्य मिलते हैं। इसके विपरीत ऐसे रहस्यात्मक संकेत हमें `महजूर` के काव्य में देखने को नहीं मिलते हैं। `महजूर` के प्रियतम की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वह मनुष्य है और इसी धरती पर रहता है, कहीं आकाश की उड़ान या अज्ञात की टोह में भटक नहीं जाता।

दोनों का प्रेम-वर्णन संयमित एवं संतुलित है। उनके प्रेम-वर्णन में नग्न-चित्रण या अश्लीलता का अभाव है। `नवीन` जी के काव्य में उन्मादक प्रेम-वर्णन अवश्य मिलता है परन्तु उन्होंने सदा संयम से काम लिया है और शालीनता की सीमाओं को कभी लांघा नहीं।

दोनों भावुक हृदयों के अनुसार प्रेम एक निश्छल एवं निष्कपट वृत्ति है, एक निस्वार्थ भाव है। यह जीवन की प्रेरक शक्ति है जिसकी ओर दोनों का ध्यान आकृष्ट हुआ। प्रेमी के लिए जीवित रहने से भी अधिक अपने को मिटा देने का आदर्श दोनों कलाकारों ने स्वीकार किया है। दोनों का प्रेम-काव्य सहज रसमय है।

--

चतुर्थ अध्याय

राष्ट्रीय-काव्य

चतुर्थ अध्याय

राष्ट्रीय - काव्य

`महजूर` का राष्ट्रीय - काव्य

पूर्व पीठिका :

शताब्दियों की दासता से मुक्ति पाने के लिए कश्मीर वासियों ने सर्वप्रथम बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया और परिवर्तित परिस्थितियों का समकालीन साहित्य पर भी अमिट प्रभाव पड़ा। निस्सन्देह `महजूर` ने कश्मीरी साहित्य में इस आन्दोलन का नेतृत्व किया और अपनी अद्भुत प्रतिभा और ओजस्वी वाणी के द्वारा अन्य कलाकारों को भी प्रभावित किया। २०वीं शताब्दी से पूर्व भी वीर-रस-प्रधान रचनाएँ कश्मीरी साहित्य में लिखी गई हैं परन्तु कहीं भी इन रचनाओं की अविच्छिन्न धारा नहीं मिलती। श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - `वीररस चित्रण के सबसे पहले नमूने हमें `बाणासुर वध` काव्य में मिलते हैं। पन्द्रहवीं शताब्दी के इस प्रेम-गाथा काव्य में ऊषा और अनिरुद्ध की रोमांस-वार्ता के घेरे में वाणासुर की उद्धत वीरता के साथ ही कृष्ण की मात्र विजय का परम्परागत पौराणिक चित्रण मिलता है।[1] इस से पूर्व हिन्दू और बौद्ध काल

---

१. `योजना` - अक्तूबर-नवम्बर १९६०, पृ०४, कश्मीरी कविता में वीररस- `पुष्प`।

का लिखित अथवा अलिखित कश्मीरी साहित्य अप्राप्य है । सम्भव है उस काल में भी कुछ वीर-रस-प्रधान रचनाएँ लिखी गयी हों परन्तु उनके विषय में कोई भी प्रामाणिक मत प्रकट नहीं किया जा सकता । सुल्तान ज़ैनुलाबदीन `बड़शाह` का शासनकाल कश्मीर के इतिहास का `स्वर्ण-युग` माना जाता है । उसके शासनकाल में कला एवं साहित्य के क्षेत्र में अपूर्व प्रगति हुई और स्वयं राजा ने भी कश्मीरी भाषा एवं साहित्य की उन्नति के लिए विशेष उत्सुकता प्रकट की थी । `बड़शाह` के दरबार में सोम पण्डित नाम का एक प्रसिद्ध कश्मीरी विद्वान था जिस ने राजा के जीवन का यशोगान `जैन-चरित` नामक चरित-काव्य में किया है ।[१] इसमें `बड़शाह` के जीवन की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है और उन्हें शक्ति एवं वैभव का पुंज माना गया है ।[२] कश्मीरी रामायणों में भी वीर-रस की प्रधानता है । रावण पर राम की विजय अदम्य साहस एवं शक्ति का परिणाम है । कवि दिवाकर प्रकाश भट्ट का `रामावतार चरित`[३] पण्डित नीलकण्ठ शर्मा रचित `रामायणि शर्मा`[४] एवं

---

१. `कश्मीर देश व संस्कृति` - शिवदानसिंह चौहान - `कश्मीर का इतिहास`, पृ० १४४ ।

२. `सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर हम इस रचना को शुद्ध-राष्ट्रीय-रचना नहीं कह सकते । सम्भव है इसमें राजा का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन हो या राजा के आश्रय में रहने के कारण सोम पण्डित ने उनके प्रसादनार्थ मात्र प्रशस्तियाँ लिखी हों ।`

   -`श्री पुष्प` से प्रत्यक्ष भेंट ८-६-१९६५ द्वारा ज्ञात (यह ग्रन्थ भी अप्राप्य है) ।

३. यह काव्य-ग्रन्थ १८वीं शताब्दी में लिखा गया है ।

४. शर्मा जी के पास इस कृति का मूलरूप अभी भी सुरक्षित है ।

पण्डित विष्णु कौल की `विष्णु प्रताप रामायण`[१] उल्लेखनीय है । पण्डित दिवाकर प्रकाश फारसी के अच्छे विद्वान थे अत: उनके ग्रन्थ में फारसी `रज़मिया` शायरी की छाप है ।[२] पण्डित नीलकण्ठ शर्मा की `रामायणि शर्मा` का एक खण्ड फारसी में प्रकाशित हुआ है । परन्तु इस समय अप्राप्य है ।[३] कश्मीरी साहित्य का प्राचीनतम रूप लोक गीतों एवं लोकगाथाओं में सुरक्षित है , उनमें भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से समकालीन परिस्थितियों का चित्रण होता था । `लडीशाह` व्यंग्य प्रधान गीत हैं जिनमें राजकर्मचारियों के अत्याचार, अकाल, पुलिस के हथकण्डे एवं देशवासियों की आर्थिक दुर्दशा का सजीव चित्रण मिलता है । श्री जियालाल कौल ने लिखा है —

'The Socio-economic conditions of the time, accentuated by the apathy and inefficiency of corrupt bure-aucracy, bore heavily upon the people and stirred the pity and anger of the poet. This gave rise to a comic - Satiric ballad, called 'Lari Shah', expressing the Kashmiri's satiric humour, for, a Kashmiri can laugh at his own discomfiture.

कश्मीरी साहित्य पर सन् १८५७ के प्रथम स्वातंत्र्य-युद्ध का कोई

---

१. यह कृति अप्रकाशित है ।

२. `कश्मीरी भाषा और साहित्य` - `पुष्प` - बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् प्रकाशन, पृ० १७ ।

३. पण्डित नीलकण्ठ शर्मा के सुपुत्र से ज्ञात(६-६-१९६५ की भेंट से)

४. `कश्मीर` -अक्तूबर १९५६ - `माडर्न पीरियड आफ कश्मीर लिट०` — बे०एल० कौल , पृ० २२६ ।

प्रभाव नहीं पड़ा । १६वीं शताब्दी तक कश्मीरी भाषा में प्रेमाख्यानक काव्य, विशुद्ध शृंगारिक काव्य, लीला एवं भक्ति काव्य एवं रहस्यवादी काव्य अधिक मात्रा में लिखा गया था । कश्मीरी साहित्य के आरम्भिक युग में प्रधानता रहस्यवादी रचनाओं की रही और इस परम्परा को आगे बढ़ाने में अनेक कवियों ने योगदान दिया । इस रहस्यवादी काव्यधारा में सूफी सिद्धान्तों एवं शैवमत के सिद्धान्तों का समन्वय मिलता है । १८वीं एवं १६वीं शताब्दी में युगीन परिस्थितियों से निराश होकर कुछ कवियों का ध्यान आध्यात्म-योग-साधन की ओर पुन: आकृष्ट हुआ और इस प्रकार इस काव्य की एक अविच्छिन्न धारा आगे बढ़ती गयी ।

१६वीं शताब्दी में स्वर्गीय मकबूल शाह क्रालवारी ने `ग्रीसनामा` (किसान चरित) लिखा । इसमें किसानों के जीवन की विवशता एवं विडम्बना का यथार्थ चित्रण मिलता है ।[१] २०वीं शताब्दी में कश्मीरी काव्य धार्मिक उपाख्यानों एवं सूफी गीतों की परिधि से बाहर निकल कर स्वच्छन्द उड़ानें भरने लगा ।[२] इस शताब्दी में यहाँ के देशवासियों ने पिंजर-बद्ध रहने से साफ इन्कार किया और वे निरन्तर शोषण के चक्र से मुक्त होने के लिए छटपटाने लगे । शताब्दियों की दासता की लोह-शृंखलाओं को एक बार छिन्न-भिन्न करने के लिए देश में आन्दोलन आरम्भ हुए । श्री `कौमदी` ने लिखा है –

---

१. 'Maqbul has, though unwittingly reflected the socio-political set-up of his age. The poor peasant was sucked dry by the merciless exploiters, social religious and political'.
'The Poetry of Makbul Kralwari' -'Pushp', - 'Kashmir' - October, 1953, Page 216.

२. `कश्मीर देश व संस्कृति` - शिवदानसिंह चौहान - `कश्मीर का साहित्य`, पृ० १४५ ।

"The modern period of Kashmiri literature opens with a fresh and free outlook on national and cultural life. A marked feature of this period has been the beginnings of the democratic struggle in Kashmir in the wake of the freedom movement over the rest of India. As a result of this national awakening, Kashmir witnessed the rise of a new and powerful literary movement, culminating in the revival of fresh interest in local literature and arts."[1]

पश्चिमी शिक्षा-प्रणाली के कारण भारत में जागृति की लहर तीव्र गति से फैल गई। पश्चिम के राजनीतिक आन्दोलनों का इतिहास पढ़कर भारतवासियों के अज्ञान की निद्रा भंग हुई। ठीक इसी प्रकार कश्मीर प्रान्त में भी अंग्रेज़ी के पठन-पाठन के द्वारा राष्ट्रीय आन्दोलन की चिनगारियाँ सर्वत्र फैल गईं।[२] इस प्रकार पश्चिमी शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप

---

१. 'Kashmir' Its cultural Heritage' Kaumudi (M.A., D.Phill) Page 80.

२. 'The Western education imparted in the Schools and Colleges was inculcating revoluntionary ideas of Patriotism, equality, freedom and social justice - xxx The more the ideas of independence spread among the people, the more demand there grew, for literature that the masses could easily understand.'
'Struggle for freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz, Page 292.

प्राचीन विचारधारा में एक नवीन क्रान्ति आई और सम्पूर्ण देश की कृत्रिम शान्ति भंग हो गई। २०वीं शताब्दी के द्वितीय एवं तृतीय दशक में राजनीतिक आन्दोलन ज़ोर पकड़ने लगा। इन्हीं दिनों कविवर 'महजूर' कश्मीरी भाषा में प्रेम-रस छलकाती गज़लें लिखते थे परन्तु समय की माँग को पूरा करने के लिए उन्होंने देश-प्रेम सम्बन्धी रचनाएँ भी लिखीं और शक्ती-राज्य के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए देशवासियों को ललकारा।[१] 'महजूर' कश्मीरी-साहित्य में एक नवीन युग के सन्देशवाहक थे।[२] वे देशवासियों के लिए नवीन प्रेरणा स्रोत बन कर आए और जनता को मातृभूमि के लिए महान त्याग करने के लिए ललकारते रहे :-

'मेरे उपवन में रहने वाले अनेकों पक्षी अपनी मधुर-संगीतमयी तान से इस उपत्यका को स्वर्ग बना रहे हैं परन्तु उनकी आवाज़ अलग-अलग है। इन

---

१. 'Perhaps the first to introduce into Kashmiri literature the ideas of Patriotism, human freedom, love of mankind, unity of Hindus and Muslims, dignity of work, respect of manual labour'.
'KASHMIR' - May, 1958 - "Singer of Kashmir's Freedom' Farooq, A. Qureshi - Page 139.

२. 'Ghulam Ahmad Mahjur definitely ushers in another period of Kashmiri literature. This is the period when Kashmir palpably feels the impact of new ideas, which were surging throughout India'.
'Kashmir' - October, 1966 - 'Modern Period of Kashmiri literature - J.L. Kaul, - Page 231.

पक्षियों के नाद का एक ही कारण है, एक ही उद्देश्य है । मेरे ईश्वर ! इन नादों का प्रभाव भी एक ही होना चाहिए ।[१] (देखिए परि० २ , क्रमांक २८०)

देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के कारण देशवासियों की दशा दयनीय थी ।[२] उन पर दोहरी मार पड़ रही थी, अत: संघर्ष करने की शक्ति जन-साधारण में नहीं के बराबर थी, परन्तु अब निरंतर अत्याचारों के कारण वे क्रुद्ध हो उठे थे । उनमें रोष की अग्नि भीतर ही भीतर सुलग रही थी । `महजूर` ने अपने देशवासियों को शताब्दियों की अज्ञान-निद्रा से जाग्रत करने का पुनीत कर्त्तव्य अपने ऊपर लिया और देश-वासियों को जीवन की कटु-वास्तविकताओं से परिचित कराया । इस महान कार्य का अपने ऊपर उत्तरदायित्व लेकर `महजूर` ने युग-नेता का परम

---

१. प० म० १ , गीत १ । (`पयाम-ए-महजूर'→ प०म०)

२. 'Mahjoor was born at a time when Kashmir was under a monarchical system of government. The customary practice of oppressing the people was facilitated in Kashmir by the low level of the development of productive sources, the presence of elements characteristic of the primitive communal system in its social order, and by the low level to which culture and literacy has fallen.

'Kashmir' - May, 1958 - 'Singer of Kashmir's freedom', Farooq A. Qureshi - Page 139.

प्रशंसनीय पद प्राप्त किया । श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है – 'आधुनिक कश्मीर के सामाजिक और राजनीतिक विकास के साथ ही साथ 'महजूर' की कविता भी अपने बचपन की मासूम मंज़िलें पार कर जीवन की कटु वास्तविकताओं से परिचित हुई, और कश्मीर के स्वतंत्रता-संघर्ष की जो पृष्ठभूमि उसके दर्पण में झलकती नज़र आती है, उससे उसकी सांस्कृतिक उपयोगिता का अच्छा परिचय मिलता है ।'[१] वर्ग-विभाजित समाज की कुरीतियाँ अभिशाप बनकर समस्त मानवता को कलंकित कर रही थी :-'सामूहिक उत्थान एक स्थायी मस्ती है और कायरता नाश का कारण है । मैं आत्म अभिमान की तोप से कायरता के दुर्ग पर विजय पाऊँगा । धनाढ्य वर्ग धी के चराग जला रहा है और निम्न वर्ग पतन के गर्त में पड़ा कराह रहा है । मुझे ऐसे अभिमानी उच्च वर्ग का समूल नाश करना है ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २८१)

जुलाई सन् १९३१ में कश्मीर में राज्य के विरुद्ध प्रथम बार हिंसक रूप में मुसलमानों द्वारा रोष प्रकट हुआ और सन् १९३२ में जम्मू काश्मीर 'मुस्लिम कांफ्रेंस' की नीव डाली गयी । इस राजनीतिक दल को अधिक व्यापक रूप देने के लिए जून १९३९ में इसका नाम 'जम्मू-काश्मीर नेशनल कांफ्रेंस' रक्खा गया और अब हिन्दू एवं मुसलमान अर्थात् समस्त जनता की ओर से स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए यह राजनीतिक दल सामूहिक रूप से आन्दोलन का संचालन करने लगा । 'महजूर' ने समय-समय पर संकेतों द्वारा देशवासियों की भावनाओं को अभिव्यक्ति दी और उन्हें उत्साहित किया । उनकी लेखनी ने भी वही कार्य किया जो कि राजनीतिक नेताओं ने राजनीति के क्षेत्र में किया । श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है – 'आरम्भ में निस्सन्देह 'महजूर' भी दूसरे

---

१. 'महजूर' की कविता में 'नया कश्मीर' - 'पुष्प' - हिन्दी गद्य-प्रवेशिका, पृष्ठ १४९ ।

२. प० म० २, गीत ६ ।

कश्मीरी कवियों की तरह गुलो-बुलबुल, यम्बर-ज़ल (नर्गिस) और बम्बूर (भौंरा), हीमाल और नागराय तथा तोता और मैना के राज़ो नियाज़ की गज़लों से ही कश्मीरी जनता को रिझाता रहा, परन्तु बहुत शीघ्र उसकी कविता ने अपने देश के सामाजिक और राजनीतिक जीवन से गहरा सम्बन्ध स्थापित कर लिया ।[१] उस समय भारत में राजनीति के क्षेत्र में भयंकर संघर्ष चल रहा था । सत्ताधारी अपनी छलकपट लीला में व्यस्त थे और `बाँटो और राज्य करो` की नीति का पालन कर रहे थे । सौ साल के निरन्तर संघर्ष के कारण विदेशियों की नींव हिल गयी थी ।श्री हबीबउलाह `हामदी` ने लिखा है – `बीसवीं शताब्दी की पहली चौथाई में संसार ने एक नई करवट बदली । संसार की सुषुप्त जातियों में जागरण की एक तेज़ लहर दौड़ गई । और इस संसार-व्यापी परिवर्तन ने कश्मीर वासियों के रक्त में भी उष्णता उत्पन्न कर दी । दासता की प्राचीन जंजीरें तोड़ने के लिए उनमें अपनी बिखरी हुई शक्ति को पुन: संचित करने की भावना जागने लगी ।[२] नये विचारों से प्रभावित होकर उनके मस्तिष्क एवं हृदय ने एक करवट ली और शृंगार काव्य के शीश-महल से बाहर निकल कर `महजूर` ने उन देशवासियों की वाणी के साथ अपनी वाणी मिला दी, जो स्वतंत्रता-संग्राम में अडिग एवं अटल डटे थे। नगर के विषैले वातावरण को देखकर वे हृदय मसोस कर रह जाते थे । उनकी वाणी में असंख्यजन-समुदाय बोल रहा है । श्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने लिखा है – `महजूर धीरे-धीरे कश्मीर के राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रभावित हुए थे । नवीन प्रभावों को ग्रहण करते हुए उनके मस्तिष्क ने भी एक नवीन करवट ली । - - - उनकी प्रसिद्धि का वास्तविक कारण यही है कि उन्होंने देश की आवश्यकताओं को समझ कर उन नवीन प्रवृत्तियों को अपनाया जो देश को स्वतंत्रता,

---

१. `महजूर` की कविता में नया कश्मीर`- `पुष्प`- हिन्दी गद्य-प्रवेशिका,पृ०१४६ ।
२. `तामीर` -'महजूर'-अंक - `महजूर की कविता में देश-प्रेम` - हबीब उलाह `हामदी` , पृ० ४३ ।

उन्नति और नव-निर्माण की ओर ले जा रही थीं ।[१]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि `महजूर` ने आधुनिक युगीन कश्मीरी साहित्य में राष्ट्रीय-काव्य का सूत्रपात किया । इसे पूर्व कश्मीरी साहित्य में राष्ट्री-काव्य के क्षेत्र में वीर प्रशस्तियाँ, पौराणिक नायकों का यशोगान, फ़ारसी से अनुवादित जंगनामे एवं व्यंग्यप्रधान रचनाएँ यत्र-तत्र अव्यवस्थित अवस्था में मिलती हैं । 'महजूर' ने समय की एक आवश्यक माँग को पूरा किया और अशिक्षित देशवासियों की भावनाओं को वाणी प्रदान की । श्री पृथ्वी नाथ `पुष्प` ने लिखा है – `वीर-रस का यह परम्परागत चित्रण बीसवीं सदी के आरम्भ तक पिष्ट-पेषण मात्र होकर रह गया, पर जब प्रदेश में राष्ट्रीयता की नई लहर उमड़ चली तो कश्मीरी कविता में भी इसकी प्रतिध्वनि सुनाई देने लगी । धीरे-धीरे आज़ादी का संघर्ष ज़ोर पकड़ता गया और देश में एक नई चेतना जागृत हो उठी । कश्मीरी कविता प्राचीनता के घेरे से निकल नवीनता की देहरी पर पैर जमाने लगी और वीर रस की अभिव्यक्ति का एक नया विकास खोजने लगी ।`[२]

`महजूर` के समस्त राष्ट्रीय काव्य का अध्ययन विभिन्न बन्दुओं से किया जा सकता है । उनके समकालीनकवियों में अब्दुल अहद `आज़ाद` एवं श्री गुलाम हसन बेग `आरिफ` ने उन के स्वर से स्वर मिलाकर देश-प्रेम के गीत गाये । `महजूर` का राष्ट्रीय-काव्य अपने युग का प्रतिबिम्ब है जिस के द्वारा कश्मीर वासियों को एक नवीन प्रेरणा मिली, एक नवीन शक्ति मिली ।

---

१. `तामीर` - 'महजूर'-अंक - `महजूर का सियासी शोऊर` - जी० एम० बख्शी, पृ० ६,७ ।

२. `योजना` - अक्तूबर - नवम्बर १९६०-'कश्मीरी कविता में वीर-रस'- `पुष्प` , पृ० ५ ।

स्वर्णिम अतीत का गौरव-गान :

कश्मीर आदिकाल से ही साहित्य, राजनीति एवं कला का केन्द्र रहा है । संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डितों एवं फारसी के प्रसिद्ध विद्वानों के असंख्य साहित्यिक ग्रन्थ यहाँ की संस्कृति एवं साहित्य के आधार स्तम्भ माने जाते हैं । इसके अतिरिक्त कश्मीरी भाषा की भी अपनी एक उत्कृष्ट साहित्य-परम्परा विकसित हुई थी परन्तु २०वीं शताब्दी के आरम्भ में साम्राज्यवादियों की कूट-नीतियों के कारण देश की स्थिति छिन्न-भिन्न हो रही थी और जनता खोये हुए अधिकारों की पुन: प्राप्ति के लिए संगठित होकर संघर्ष-रत थी । वर्तमान के प्रति वे निराश थे, स्वर्णिम अतीत की स्मृति में उज्ज्वल भविष्य-निर्माण के लिए ललकार रही थी ।[१] आरम्भ में यह जागृति देश के किसी विशेष भाग तक ही सीमित थी परन्तु राजनीतिक नेताओं के निरन्तर प्रयत्नों के फलस्वरूप जागृति का यह सन्देश देश के प्रत्येक भाग तक पहुँच गया । देश-वासियों की किंकर्तव्य विमूढ़ता को नष्ट करने के लिए राजनीतिक नेताओं के साथ-साथ यहाँ के कवियों ने भी साहसिक कार्य किया और जनता को अपने स्वर्णिम अतीत की याद दिलाकर वर्तमान से जूझने के लिए प्रेरित किया । कविवर 'महजूर' इन में अग्रगण्य थे :-

"पुन: संसार में कश्मीरियों का नाम प्रसिद्ध हो जाएगा । तुम ललितादित्य, ताज़ीब एवं मुबारक खाँ जैसे महान व्यक्तियों को उत्पन्न करो ।"[२]

(देखिए परि० २, क्रमांक २८२)

---

१. 'We must feel proud of our ancestors and redeem their memory from the mist of the past. The stature that our prodigious ancestors had added to our greatness by their intellectual productions is of as great importance to us as the natural beauty of our mother land'.
'Inside Kashmir - Pran Nath Bazaz - Page 411.

२. प० म०१, गीत १ ।

तत्कालीन हृदय-विदारक परिस्थितियों की तुलना कवि वैभवशाली अतीत से करता है । आज धर्म के नाम पर व्यवहार किया जाता है । धार्मिक भेदभाव के कारण रक्तपात होता है :-

"धर्म, मज़हब, बलमांसी, न्यायपरता एवं सच्चरित्रता प्राचीनकाल में हमारे देश में सर्वत्र व्याप्त थी परन्तु आज पाश्विक शक्तियों का बोलबाला है । मलिन चांद के समान मेरे देश का मुखड़ा आज दयनीय दीख पड़ता है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २८३)

श्री 'कौमदी' ने लिखा है :-

'In Mahjur's Poems there is a burning love for his country's past as well as a sense of pride for its ancient greatness.[2]

कश्मीर के वीर सेनानी अपने बाहु-बल की परीक्षा कई बार दे चुके हैं । अत: 'महजूर' उन वीरों की स्मृति दिला कर वर्तमान विषाक्त परिस्थितियों में देशवासियों को सोत्साह संघर्ष-रत रहने की चेतावनी देते हैं । इतिहास में इन वीरों की वीर-गाथाएँ स्वर्णिम-अक्षरों से लिखी गयी हैं:-

"वीर सेनानायक ताज़ी भट्ट के अथाह धैर्य से हमें कश्मीर एवं कश्मीर वासियों के पुरुषार्थ का परिचय मिलता है । यहाँ के रहने वालों ने महाराजा अकबर को भी पराजित किया था । उसी वीरगाथा को याद करते-करते तुम आगे बढ़ो ।"[३] (देखिये परि० २, क्रमांक २८४)

---

१. प० म० ३, गीत १४ ।

२. Literary Heritage - 'Kashmir - Its cultural Heritage - Kaumudi, M.A., Page 87.

३. प० म० ६, गीत ३१ ।

प्राचीन काल से ही हिन्दू मुस्लिम एकता की अनेक प्रसिद्ध कथाएँ कश्मीर में प्रचलित हैं। 'हिन्दू और मुसलमान वास्तव में एक माँ के दो पुत्र हैं — यही भावना लेकर कश्मीर-वासी सदा राष्ट्रीय-हित के लिए सामूहिक शक्ति का प्रयोग करने लगे। स्वर्गीय कुदूस गोजावारी[१] के महान आत्म-बलिदान एवं पण्डित सूरज काक[२] के मानव-प्रिय स्वभाव की ओर संकेत करते हुए 'महजूर' ने लिखा है :-

'कुदूस गोजावारी ने एक हिन्दू के लिए अपने प्राण गवाँ दिए। हे देशवासियो! आज तुम सब उन्हीं बातों को याद करो। पण्डित सूरज काक ने मुसलमान अनाथ बच्चों को अपने पुत्र समझ कर पाला पोसा, उसी प्रकार से तुम भी आज परस्पर भेदभाव को भुलाकर राष्ट्रीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए संगठित हो जाओ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक २८५)

श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है — 'महजूर प्राचीन इतिहास, संस्कृति और काव्य-परम्परा के ज्ञान के साथ अपनी कविता में नयी चेतना, नये दृष्टिकोण का समावेश करते हैं और इससे उनकी कविता में जो क्लासिकल व्यापकत्व, सरलता और माधुर्य आ जाता है, वह 'आज़ाद' अथवा मिर्ज़ा बेग की कविता में दुर्लभ है।'[४]

निस्सन्देह वर्तमान दुर्दशा से कवि क्षुब्ध हो उठा है और निकट

---

१. 'ख्वाजा कुदूस गोजावारी को सन् १८१६ में जबार खाँ राज्यपाल ने कत्ल किया था। क्योंकि उन्होंने अपने घर में पण्डित बीर दर की पत्नी एवं बच्चों को आश्रय दिया था।'

२. 'पण्डित सूरज काक ने हन्दवारा तहसील के अनाथ बच्चों को पाला-पोसा, उनके संरक्षक बनकर आवश्यक शिक्षा दी और विवाह इत्यादि भी किए।'

३. प० म० २, गीत ६।

४. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८।

भविष्य का कोई भी उज्ज्वल रूप न देखकर वह स्वर्णिम अतीत की ओर झांकने लगा । उन्हें अपनी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति पर गर्व था और गर्व था उन देशवासियों पर जिन्होंने अपने जीवन का महान लक्ष्य राष्ट्रहित समझा ।[१] यही कारण था कि वे तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलनों से अलग न रह सके और उन्हीं से प्रेरित होकर उनका काव्य-विषय भी परिवर्तित हुआ । शृंगार-प्रेम पर राष्ट्र-प्रेम ने विजय पायी और अपने जीवन का सर्वस्व वे देश पर निछावर करने के लिए तत्पर रहे :-

"मेरी हर समय यही दशा नहीं थी । एक समय मैं (मेरा देश) शक्तिशाली था । उस प्राचीन-कालीन वैभव के प्रमाण स्वरूप यह पत्थर की दीवारें आज भी खड़ी हैं ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २८६)

श्री मही-उल-दीन 'हाजिनी' ने लिखा है – 'सन् १९३१ से कश्मीर-वासी स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए भरसक प्रयत्नशील थे अत: शृंगारिक काव्य की अपेक्षा राष्ट्रीय काव्य अत्यधिक लोकप्रिय हुआ । यह समय की माँग थी जिसे 'महजूर' , 'आज़ाद' तथा अन्य अनेक कवियों ने पूरा किया । इन्होंने कश्मीर, कश्मीर-वासी एवं उनके नये तथा प्राचीन शौर्यपूर्ण इतिहास को छन्द बद्ध किया, परिणामस्वरूप प्रदेश वासियों की दासत्व की शिराओं में अभिमान एवं देश-प्रेम

---

१. '---he burst forth into composing moving songs full of national spirits and ideas about human freedom, brotherhood of man, unity of Hindus and Muslims, respect of manual labour, pride for ancient culture and past achievements of Kashmiris and love of mankind'.
'Struggle for freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz, P.295.

२. प० म० १, गीत १८ ।

के रक्त का संचार हुआ ।"[१] 'महजूर' देशवासियों को दीवान नन्दराम एवं गनी जैसे प्रसिद्ध फारसी कवि की स्मृति दिलाते हैं :-

"कश्मीरवासी तभी अन्य प्रदेशों में अपनी बुद्धिमत्ता की अमिट छाप डाल सकते हैं जब वे अपने देश में पुन: नन्दराम जैसे प्रसिद्ध दीवान को उत्पन्न कर सकेंगे । ईरान एवं शीराज़-वासी तभी तुम्हारी ओर नतमस्तक होंगे जब तुम अपने देश में पुन: गनी जैसे विद्वान् को उत्पन्न कर सकोगे ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २८७)

'महजूर' के साथ साथ प्रसिद्ध कवि 'आज़ाद' ने भी ऐसी ही भावनाओं को अभिव्यक्त किया है :-

"जिस धरती माँ ने अपने अंक में 'बड़शाह' जैसे सुपुत्र को पाला पोसा आज उसी की सन्तानें भूख के कारण असाह्य अवस्था में पड़ी कराह रहीं हैं । जिस देश में कल्हण, गनी एवं सरफी जैसे प्रसिद्ध विद्वान उत्पन्न हुए आज उसी देश का जल हमारे लिए विषाक्त बना है ।"[३] (देखिए परि० २ , क्रमांक २८८)

प्राचीन काल से ही कश्मीर ज्ञान का केन्द्र रहा है । हिन्दुओं के

---

१. 'गुलरेज़' - मई १९६१ - 'आधुनिक कश्मीरी कविता की प्रवृत्तियाँ' - महीउद्दीन 'हाजिनी' , पृ० ११ ।

२. प० म० १ , गीत १ ।

३. 'आज़ाद' - 'पुष्प' - कविता (आस्था) - पृ० ४४ । (कलचरल अकादमी श्रीनगर द्वारा प्रकाशित पुस्तक) ।

राज्यकाल में संस्कृत भाषा को एवं मुसलमानों के शासनकाल में प्रमुख रूप से फारसी भाषा को शासकों की ओर से प्रोत्साहन मिला, परिणामस्वरूप साहित्य एवं कला दिन प्रतिदिन उन्नति-पथ पर अग्रसर हुई। समय-समय पर यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य भी अनेक विद्वानों एवं कलाकारों को आकर्षित करता रहा एवं उनके लिए प्रेरणा का प्रधान स्रोत बना। `महजूर` देश-वासियों को कश्मीर-घाटी की प्राकृतिक सुषमा[१] की स्मृति दिलाकर पुन: उस के उद्धार-हेतु ललकारते हैं :-

`पाम्पोर की धरती हंस रही है, वहाँ केसर के फूलों की बहार है। वहाँ जाकर तुम्हारे हृदय के घाव भर जाएँगे और तुम्हारी इच्छा भी पूर्ण होगी। हमारा देश एक फुलवारी है। वेरीनाग, डूरू एवं अच्छाबल में जाकर देखो जहाँ नाना प्रकार के मधुर-भाषी पक्षी अपनी संगीतमयी तान से हृदय को आकर्षित करते हैं। उनकी तान तुम्हें ललकार रही है। हमारा देश एक फुलवारी है। यूसमर्ग में खेमे गाढ़कर तुम `बरगाह` की सौन्दर्य स्थली देख सकते हो। गुलमर्ग, अलि-पत्थर, नील नाग एवं तुगजिपेथर को जाकर देखो जहाँ चारों ओर मखमल के समान हरियाली बिछी हुई है। यहाँ की शस्य-श्यामला धरती तुझे पुकार रही है।`[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २८६)

इस प्रकार `महजूर` ने देशवासियों को अपनी घाटी के आकर्षक एवं

---

१. 'In his poem 'Our country is a garden' he describes the beauty of the valley and relates some of the achievements of the Kashmiri's in the past.'
A History of Kashmir - P.N. Kaul Bamzal, Page 746.

२. प० म० १, गीत ५।

प्रसिद्ध स्थानों की याद दिलाई । खेद तो इस बात का है कि जिन प्रसिद्ध स्थानों को देखने के लिए संसार भर के लोग आते हैं वहीं स्थान यहाँ के प्रदेश-वासी देख नहीं पाते हैं । पराए हमारे घर के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसे सदा तृषित नेत्रों से देखते रहते हैं । उस सौन्दर्य में निहित भयंकर वास्तविकता की ओर किसी का ध्यान आकृष्ट नहीं होता है । 'महजूर' को कटु यथार्थ का अनुभव था , अत: वे उस युग की याद दिलाते हैं जब कि सर्वत्र सुख का राज्य था :-

'कहीं कोई दुखी न था , शोषण का कहीं भी नाम न था ,वहाँ सर्वत्र सुख एवं शान्ति व्याप्त थी ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २६०)

'महजूर' अपने साथ 'नया कश्मीर' का नूतन सन्देश लेकर आए थे अत: 'नया कश्मीर' के निर्माण हेतु वे देशवासियों को निरन्तर संघर्ष के लिए प्रेरित करते हैं । वे आग से खेलना जानते थे । कायरों की भाँति उन्होंने गुफाओं एवं कन्दराओं की शरण नहीं ली अपितु देशवासियों को एकता एवं भाई चारे का पाठ पढ़ाया । श्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने लिखा है – 'अपने देश की उज्ज्वल राष्ट्रीय परम्परा को हमारे सामने प्रस्तुत करके राष्ट्रीय संघर्ष के भयानक क्षणों में उन्होंने हमारा नेतृत्व किया । और यह वह महान कार्य था जो बड़े-बड़े राजनीतिक नेता अपने लम्बे-लम्बे व्याख्यानों से नहीं कर पाए थे ।'[२] उनके कथन में एक महान सत्य निहित है :-

'संसार में वही उन्नति-शिखर पर पहुँच जाता है जिस के जीवन में 'शौक' (चाव) एवं 'अरमान' (इच्छा, आकांक्षा) का प्राबल्य हो ।' (देखिए परि० २, क्रमांक २६१)

---

१. प० म० ५, गीत २२ ।

२. 'तामीर' 'महजूर-अंक' - 'महजूर का बसियासी शोऊर'- बख्शी गुलाम मुहम्मद, पृ० ६ ।

वर्तमान दुर्दशा :

'महजूर' का राष्ट्रीय काव्य अपने युग का प्रतिबिम्ब है । युगीन परिस्थितियों का सजीव चित्रण हमें उनके काव्य में मिलता है । उनके राष्ट्रीय काव्य का एक विशेष गुण यही है कि उसमें तत्कालीन युग का एक करुण-चित्र प्रस्तुत किया गया है । युग-द्रष्टा 'महजूर' ने राष्ट्रीय चेतना के लिए तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक प्रतिबन्धों में जकड़ी हुई जनता को अपना काव्य-विषय बनाया । श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - "'महजूर' ने जनता को पहले बेदार करने के लिए उसकी वर्तमान भाव-चेतना को ही अपनी कविता का माध्यम और बाहक बनाया है । इस भाव-चेतना को वे कुरेदते हैं; मुक्ति कामना के अनेक कण अग्नि स्फुलिंग से चमक उठते हैं और पास के बुझे सुप्तकणों में ज्योति जगा देते हैं ।"[१] सत्ताधारियों द्वारा किए गये शोषण का वर्णन करते समय 'महजूर' लिखते हैं :-

'तनिक सुनिये ! इस उपवन में मैंने अपनी आँखों से क्या क्या देखा है । यहाँ के लोगों को सुख शान्ति बहुत कम मिली है । वे चिन्ताओं से ग्रस्त हैं उन्हें कठोर यातनाएँ सहन करनी पड़ती हैं । इस उपवन के बुलबुलों पर बाणों की वर्षा की गयी और इस प्रकार उन कठोर-हृदय सत्ताधारियों ने इतने असहाय बुलबुलों (देशवासियों) का ~~क्रन~~ वध किया कि उनके रक्त से सारी धरती रंगीत हो गई ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६२)

'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाला नियम प्रत्येक स्थान पर लागू था। समाज के ठेकेदार न्याय के नाम पर अन्याय कर रहे थे । पुरोहित एवं मौलवी

---

१. प्रगतिवाद - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८५ ।

२. प० म० २, गीत ८ ।

धर्म के नाम पर व्यापार कर रहे थे और निरीह जनता का शिकार खेल रहे थे :-

'यहाँ मनुष्य अपनी प्यास बुझाने के लिए दूसरे मनुष्य का रक्त पी रहे हैं, मनुष्य में मनुष्यता का भाव ही नहीं रहा है वह पशुत्व की अन्तिम सीमा पर पहुँच गया है। 'महजूर' की बातें सुनकर ही तुम वास्तविक ज्ञान को प्राप्त कर सकते हो। क्योंकि सच्चा ज्ञान पुरोहितों एवं मुल्लाओं के पास नहीं है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २६३)

आजकल उसी मनुष्य को चतुर समझा जाता है, जो अपने स्वार्थ का ध्यान रखता है। साधारण मनुष्य की दयनीय अवस्था का चित्रण करते हुए 'महजूर' ने लिखा है :-

'क्या उस देश में भी असहाय व्यक्तियों को गुनाहगार एवं मुजरिम ठहराया जाता है, और ये धनाढ्य व्यक्ति हर समय निर्दोष माने जाते हैं ? क्या वहाँ भी कमज़ोर मनुष्य पर विश्वास नहीं किया जाता और उसे झूठा कहकर उसकी निर्धनता की खिल्ली उड़ाई जाती है ? और साधन-सम्पन्न व्यक्ति सच्चा एवं भलामानस समझा जाता है। क्या वहाँ भी उस मनुष्य को लोह-शृंखला में जकड़ा जाता है जिस के जीवन का महान उद्देश्य सत्य बोलना हो ? अर्थात् जो सत्यवादी हो। क्या वहाँ पर भी खुशामन्दी-टट्टू मोटरकारों में घूमते हैं ?'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६४)

आजकल दरिद्रता मानव के लिए अभिशाप बनकर आई है। निर्धन को जीवित रहने का अधिकार नहीं अत: उसके रक्त से समाज, राजनीति एवं धर्म

---

१. प० म० २, गीत ७।

२. प० म० ५, गीत २२।

के ठेकेदार अपनी पिपासा शान्त करते हैं ।[१] संसार भर में कश्मीर अपने सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध है और एक स्वास्थ्य-प्रद स्थान है परन्तु यहाँ के निवासी क्यों सदा रोग-ग्रस्त रहते हैं ? कोई इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं देता :-

`इधर एक ओर सारे संसार के लोग इस भू-खण्ड में स्वास्थ्य पुष्टि के लिए आते हैं और दूसरी ओर यहाँ के निवासी तृषित व्याकुलावस्था में रोगग्रस्त रहने के कारण सड़कों पर अपनी जान गँवाते हैं । मेरे इस उपवन के अधखिले पुष्प मिट्टी में मिले हुए हैं । तुम ज़रा उपवन में जाकर थोड़ी सी मिट्टी हाथ में उठाकर देखो कि इस मिट्टी के साथ मेरे अधखिले `गुलनार` भी मिले हुए हैं ।`[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६५)

आर्थिक शोषण के परिणाम स्वरूप देश अकाल एवं दुर्भिक्ष से पीड़ित था । छल-कपट का व्यवहार चारों ओर हो रहा था । इस आर्थिक लूट के कारण विद्रोह की अग्नि प्रदेश-वासियों के हृदय में भीतर ही भीतर सुलग रही थी । श्री पृथ्वीनाथ `पुष्प` ने लिखा है - `शताब्दियों की गुलामी ने कश्मीरी जनता को निकम्मा कर रखा था ; आर्थिक लूट-खसूट की चक्की में पिसते हुए भी उनके मुँह से आह तक न निकलती थी । अभाव और अज्ञान के घुप अँधेरे में ठोकरें खाते हुए वे देर तक किसी ऐसे प्रगतिशील नेतृत्व से वंचित ही रहीं, जिससे उसकी धँसी हुई निस्तेज आँखें चमक उठतीं ।`[३] `महजूर` ने

---

१. 'Those days Kashmir was suffering the scourge of dehumanising diarchy - the feudal monarcy and the inperialistic Resident State'.
'Kashmiri Literature' - P.N. Pushp (Booklet Printed from Contemporary Page 116. Indian literature). Page 116

२. प० म० ४, गीत १८ ।

३. `हिन्दी गद्य-प्रवेशिका` - `महजूर` की कविता में `नया कश्मीर`-`पुष्प` पृ० १४६ ।

तत्कालीन छल-कपट नीति का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है :-

"मैं सोना और चाँदी लेकर बाजार में निकला परन्तु बदले में मुझे चाय और नसवार मिली । उस समय मुझे पूर्णरूपेण यह ज्ञात हुआ कि मेरे ही बाज़ार मेरे लिए घातक हैं ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २६६)

'महजूर' ने अपने समकालीन उन नेताओं का भी वर्णन किया जो नेतागीरी की आड़ में पाखण्ड एवं व्यभिचार फैलाते हैं । इन नेताओं की कथनी और करनी में अन्तर है और निजी हित के लिए वे कभी सामूहिक कल्याण की चिन्ता नहीं करते :-

"धर्म, मज़हब, भलमनसाहत एवं सच्चरित्रता प्राचीनकाल में यहाँ सर्वत्र व्याप्त थी परन्तु उसके बदले में आज यहाँ पाशविकता का बोलबाला है । हमारे नेतागण समय के अनुभूतिशील शिकारी हैं और अपने निजी हित का विशेष ध्यान रखते हैं । वे कमज़ोर हृदयों पर बाणवर्षा करने में व्यस्त हैं और शोषण चक्र चलाने में पटु ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक २६७)

सामान्य जनता अपनी दीन-हीन अवस्था पर दुःखी है और 'महजूर' इस दीन हीन अवस्था के मूल कारण को खोजने का प्रयत्न करता है । पाशविक वृत्ति वाले शासकों का जब देश पर अधिकार हो तब मानव सभ्यता कभी उन्नति-पथ पर अग्रसर नहीं हो सकती, उसके विकास में एक अवरोध उत्पन्न होगा और इस प्रकार कला, साहित्य एवं ज्ञान का ह्रास हो जाएगा ।[३] गृह-

---

१. प० म० ४, गीत १८ ।

२. प० म० ४, गीत १७ ।

३. 'Human culture has no chance to prosper when barbarious rule a country. Men of letters, artists, and master builders flourish in peaceful times under the Patronage of noble and enlightened rulers'.
'Struggle for freedom in KMR' - P.N. Bazaz - Page 278.

कलह एवं परस्पर द्वेष के कारण भी देश की शोचनीय दशा हुई है। 'महजूर' इसकी ओर संकेत करते हुए लिखते हैं :-

"मेरी इस फुलवाड़ी में घातक पक्षी, पशु एवं बिल्लियाँ निवास करने लगीं हैं। अब बुलबुल के प्राण सुरक्षित नहीं। ये नृशंस पशु लुक-छिप के उपवन में वास करने लगे, इन्होंने चारों ओर परस्पर-द्वेष के विषैले बीज बोये हैं। हम तो परस्पर झगड़ते रहे और उन्होंने उपवन के सारे फूल बीन लिये।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक २६८)

राष्ट्र की जागृति में समाचार-पत्र विशेष रूप से सहायक हो सकते हैं। परन्तु हमारे प्रदेश में इनकी संख्या नहीं के बराबर है और जो कुछ भी अल्प संख्या में हैं उनकी दशा भी शोचनीय है :-

"यहाँ के समाचार-पत्रों के सम्पादकों को समय ही नहीं कि राष्ट्र-हित में सहयोग प्रदान करें। वे गृह-कलह वर्णन में लगे हैं, सामूहिक उत्थान की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक २६६)

चोरबाज़ारी एवं राजकीय कर्म-चारियों की अनीतियों का वर्णन भी 'महजूर' ने बड़ी सजीवता के साथ किया है।[३] देशवासियों का शोषण

---

१. प० म० २, गीत ८।

२. प० म० ४, गीत १८।

३. "क्या वहाँ भी चोरबाजारी सर्वत्र व्याप्त है ? क्या वहाँ भी कंट्रोल का प्रबन्ध अव्यवस्थित है ? क्या वहाँ भी ऐसे गृह-स्वामी हैं जो खाद्य-पदार्थों का वितरण करते समय अपने और पराये का ध्यान रखते हैं।

- प० म० ५, गीत २२ (दे० परि० २, क्रमांक ३००)

प्रत्यक्ष एवं परोक्ष- दोनों तरह हो रहा था । दरिद्रता के नग्न चित्र एवं दासता के दुष्परिणामों से उनका हृदय विह्वल हो उठा । नये विचारों से प्रभावित होकर उनके मस्तिष्क एवं हृदय ने एक नवीन करवट ली । वे शोषित जनता की करुण दशा देख कर आठ-आठ आँसू रो उठे :-

" तुम्हारे कोमल हृदय को किस भयानक दुर्घटना के कारण इतना गम्भीर एवं गहरा घाव हुआ है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३०१)

'महजूर' यह देखकर दु:खी होते हैं कि :-

'लोगों के घरों में शोक फैला हुआ है, और शासनाधिकारी दूल्हा महाशय के समान निश्चिन्त बैठे हैं ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३०२)

ऐसी विकट परिस्थितियों में उनको जीवन स्वयं उनके लिए एक बोझ सा बना है और वे अपनी असहायता के कारण खून के आँसू पी-कर रह जाते हैं । 'महजूर' के साथ-साथ स्वर्गीय 'आज़ाद' ने भी शोषित जनता की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण किया है । अपनी 'ईद' नामक कविता में वे अत्याचारियों के दुष्कर्मों से पीड़ित सामान्य जनता की करुण दशा का वर्णन करते हैं :-

" उनके लिए 'ईद' का त्योंहार या दशहरा निष्प्रयोजन है जिनके हृदय नेज़ों से छलनी हो चुके हैं । उनके वक्ष को आज विषैले बाण छलनी करके निकलते हैं । वे घर से किस बुरी दशा में भूखे निकल पड़े थे परन्तु पुन: घर लौट जाना उनके भाग्य में न था । उन में से कुछ तो शमशान-घाट पहुँचाये

---

१. प० म० ५, गीत २२ ।

२. प० म० ६, गीत २६ ।

गये और कुछ कब्रिस्तान पर ।" (देखिए परि० २, क्रमांक ३०३)

श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - 'ऐसी परिस्थिति आकस्मिक नहीं थी । उन दिनों कश्मीर का वातावरण 'रेज़ीडेण्ट शाही' के कुलबुल से उखड़ा-उखड़ा था । दुधारे शिकंजे में कसी हुई जनता की सामाजिक-राजनीतिक चेतना मूर्छित पड़ी थी ।"[२] सन् १९४७ में कश्मीर पर पाकिस्तान की ओर से भयंकर आक्रमण हुआ और शताब्दियों की दासता के पश्चात् जो कुछ भी वैभव शेष था वह भी नष्ट हो गया । मातृभूमि के वैधव्य पर वे हृदय मसोस कर रह गये :-

"उन्होंने निर्दोष जनता का वध किया । इस स्वर्ग-भूमि को नरक में परिवर्तित किया । इस फुलवाड़ी को उन्होंने समग्र रूप से नष्ट कर दिया। वे नर-हिंसक एवं भड़ाक सब मिलकर आए थे ।"[३] (देखि० परि०२,क्रमांक३०४)

ऐसी हृदय-विदारक दशा में समूल परिवर्तन लाने के लिए 'महजूर' देश वासियों की सुषुप्त भावनाओं को जाग्रत करने का प्रयत्न करते हैं ।उन्हें जन-शक्ति पर अडिग विश्वास था , अत: वे निराश नहीं हुए अपितु भविष्य के उज्ज्वल निर्माण हेतु वर्तमान से जूझने के लिए जन-सामान्य को उत्साहित करने लगे :-

"हे मनुष्य ! तुम क्या देख रहे हो । तनिक अपने उपवन से परिचित तो हो जाओ । वास्तव में तुम्हीं स्वयं इस उपवन की शोभा हो और तुम

---

१. 'आज़ाद' - 'पुष्प' - 'ईद अनिता मे' - पृ०६४

२. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - 'पुष्प' - बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् प्रकाशन , पृ० १९ ।

३. 'गाये जा कश्मीर' (क्रान्तिकारी गीतों का संग्रह)- कौमी कलचरल मदाज़ कश्मीर द्वारा प्रकाशित 'शीरवानी का सन्देश' - 'महजूर',पृ०५८।

ही स्वयं इस उपवन के माली हो ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३०५)

सत्ताधारी इस अग्नि को भीतर ही भीतर दबाना चाहते थे, अत: देश-प्रेमियों को भयंकर यातनाएँ सहन करनी पड़ी । शासकों के दमन का वेग दिन प्रतिदिन बढ़ा । निशस्त्र देशवासियों पर निर्दयी राज्य अधिकारियों के क्रूर प्रहार, बन्दी जनों के साथ अमानुषिक व्यवहार, एवं पुलिस के हथकंडों ने जनता के रोष को अत्यधिक भड़काया । `महजूर` के समकालीन श्री हसन बेग `आरिफ` की प्रसिद्ध रचना `सोन कारवाँ` में ऐसा ही भावनाओं को अभिव्यक्ति मिली है । इन पँक्तियों में ओज एवं सच्चाई निहित है :-

`राज्याधिकारी नवयुवकों को लोह-शृंखलाओं में कसते गये । हमारी पीड़ा एवं दु:ख पर वे क्रुर अन्यायी हँसने लगे परन्तु फिर भी हमारा दल आगे ही बढ़ता गया ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३०६)

`महजूर` ने स्वतंत्रता आन्दोलन का स्वागत किया और अपने सक्रिय सहयोग से अनेक कवियों एवं देशभक्तों को प्रेरणा प्रदान की । विदेशी आक्रमणकारियों पर रोष प्रकट करते हुए `महजूर` ने उनकी कूटनीतियों का बड़ा ही सजीव वर्णन किया है :-

`जब हमारा उपवन पूर्णरूपेण नष्ट हो गया तब वे क्रूर आखेटक यहाँ से चले गए । हमारे घरों को उजाड़ कर उन्होंने अपने देश में भव्य एवं विशाल भवनों का निर्माण किया ।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ३०७)

---

१. प० म० १ , गीत १७ ।
२. `गाये जा कश्मीर` - `सोन कारवाँ` - हसन बेग `आरिफ`, पृ०४१ ।
३. प० म० २, गीत ८ ।

अपने युग की दुर्दशा का वर्णन करने में 'महजूर' का मात्र उद्देश्य यही था कि देशवासी अपने महत्व को समझें और अपने खोये हुए अधिकारों को पुन: प्राप्त करने के लिए संगठित होकर राष्ट्रीय आन्दोलन में योग दें। वे जनता को निराश नहीं करना चाहते थे। उन्होंने स्वयं लिखा है :-

'यदि मानसिक क्लेश के कारण 'महजूर' किसी तथ्य को स्पष्ट रूप में कह देता है तो उससे देशवासियों को हताश नहीं होना चाहिए। उन्हें रुष्ट नहीं होना चाहिए।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३०८)

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि 'महजूर' के राष्ट्रीय-काव्य में निस्सन्देह उसका युग प्रतिबिम्बित है। राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दुर्दशा का मार्मिक चित्रण उन्होंने अपनी लेखनी द्वारा किया है। श्री शिव-दानसिंह चौहान ने लिखा है - ''महजूर' के काव्य में गहरी स्वातंत्र्य-भावना है जो उनकी प्रेम और रोमांस की अभिव्यक्ति में भी सर्वत्र व्याप्त है। कश्मीर की जनता अपढ़-अशिक्षित, सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी और मध्य युगीन नैतिक भावनाओं और अन्ध-विश्वासों में आकण्ठ डूबी है।'[२] वे जन-साधारण के कवि थे। अत: उन्हीं की भावनाओं की सच्ची अभिव्यक्ति उनके काव्य में हुई है।

देश-भक्ति की कविता : (जन्मभूमि के प्रतिगीत एवं बलिदान की भावना)

'महजूर' को अपने देश से असीम प्यार था। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य पर वे मुग्ध थे।[३] कल-कल करती नदियाँ एवं हिमाच्छादित पर्वत-

---

१. प० म० ४, गीत १८।

२. 'साहित्यानुशीलन' - चौहान, पृ० ११५।

३. 'Of the more recent times, mention may be made of Abdul Ahad Azad and Ghulam Ahmad Mahjur, whose songs and verses have been characterised by deep love for the mother land as well as joy in Nature's colourful phenomena'. Kashmir - Its cultural heritage - Kaumudi - Page 50.

शृंगों से बहने वाले झरने, लहलहाते खेत एवं शस्य-श्यामला धरती, स्वास्थ्य प्रद स्थान एवं हृदयाकर्षक पर्वतीय दृश्य तथा घाटी के कण-कण से उन्हें प्यार था। 'महजूर' ही पहला कश्मीरी कवि है जिसने अपनी जन्मभूमि के सौन्दर्य और प्रेम के गीत गाये हैं। श्री 'पुष्प' ने लिखा है - "'महजूर' ही ने सर्व-प्रथम यह राग अलापा कि हमारा कश्मीर एक 'गुलशन' है जिससे प्यार न करना सम्भव नहीं। लेकिन पाम्पोर की हँसती केसर-वाटिकाओं का कश्मीर, मोती बिखेरने वाले जल-प्रपातों का कश्मीर, बेरनाग, अच्छाबल और नील-नाग का कश्मीर दुखी रहे, लाचार रहे, यह देखकर किस काश्मीरी का दिल नहीं दुखता ?"[१] 'महजूर' के विचारानुसार प्रत्येक मानव को अपनी जन्मभूमि से अनुराग होना चाहिए। यह उसका प्रथम धर्म है। जब यह भाव उन में जाग्रत होगा तभी अपने लक्ष्य तक पहुँच पाएँगे।[२] 'महजूर' ने अपने देश के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन अपनी प्रसिद्ध रचना 'गुलशन वतन छु सोनुय' में किया है। अपने देश के साथ पुष्पवाटिका का सांगरूपक बांध कर 'महजूर' ने यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य का अभूतपूर्व वर्णन किया है :-

'बुलबुल फूलों से कहता है कि हमारा देश एक पुष्पवाटिका है। केवल हमारे देश को ही पुष्प-वाटिका की संज्ञा दी जा सकती है। इसके चारों ओर हिमाच्छादित पर्वत मालाएँ संगमरमर की दीवारें हैं और उन्हीं के मध्य स्थित यह शस्य श्यामला धरती हीरे के ढेर के समान कान्तिमान है। ऐसा प्रतीत होता है कि पर्वत शृंखलाओं के बीच में बसन्त ने अपना निवास-स्थान बनाया है। शालिमारों में पुष्प खिल उठे। हमारा देश एक पुष्प-वाटिका है। जहाँ चारों ओर वनों, उपवनों एवं सुन्दर स्थलों पर फूल

---

१. हिन्दी गद्य-प्रवेशिका 'महजूर' की कविता में नया कश्मीर - 'पुष्प', पृ० १५१।
२. प० म० १, गीत १ (परि० २, क्रमांक ३०६)

खिले हैं । यह देखकर स्वयं `बुलबुल` भी मस्त हो जाता है ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ३१०)

इस प्रसिद्ध काव्य-रचना का कई विद्वानों ने अंग्रेजी भाषा में भी अनुवाद किया है ।[२] इस कविता में देश प्रेम की सच्ची भावनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं । श्री पृथ्वीनाथ `पुष्प` ने लिखा है :-

'Mahjur's 'Gulshan Watan Chu Sonny' (Our land is a flower - garden), inspite of its apparent innocence of any politics is mildly resonant with a new urge to prove worthy of the love and loveliness of Kashmir'.[३]

यह सत्य है कि हमारा देश स्वर्ग समान है , यही कारण है कि शत्रु सदा घात लगाए बैठे रहते हैं । कई बार अनेक कारणों से इस प्रदेश पर आक्रमण हुए, परन्तु अब `महजूर` यहाँ के देशवासियों को शत्रु पर टूट पड़ने के लिए ललकाररहे हैं :-

---

१. प० म० २ , गीत ५ ।

२. The Bulbul sings to the flower:-
'Our country is a garden. In this our lovely garden
Flowers bloom and bloom, wafting abroad their sweet
fragrance . See the flush of bloom in Orchardes, woods
and glades. The Bulbul gazes loudly. And has his
thrill of Joy on all sides pinnacles of snow like
Marble ramparts stand Around a green emerald."
'Kashmiri Lyrics' - J.L. Kaul, P.123. and
Struggle for freedom in Kashmir - By P.N. Bazaz, P.295.

३. 'Kashmir' - February, 1959 - Freedom in Kashmir verse - P.N. Pushp, Page 29.

'तुम्हारा देश स्वर्ग के समान है और शत्रुओं को इसका बहुत दु:ख है , यहाँ का सौन्दर्य उन के हृदय में काँटे के समान चुभ गया है । तुम इन अशुभ-चिन्तकों पर धावा बोल दो और इनका रक्त पी लो । तुम्हें शत्रु का क्या डर है ? तुम हर समय तैयार रहो । विजय-पताका हाथ में लेकर तुम शीघ्रता से उच्च-लक्ष्य की ओर अग्रसर हो जाओ ।'[१] (देखिए परि० २,क्र०३११)

'महजूर' वास्तविक अर्थों में एक देशभक्त थे । उनके हृदय में देश-प्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी । उनके देश-प्रेम की सब से बड़ी विशेषता यह है कि वे अपने देश के प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ-साथ देश-वासियों के प्रति भी जागरूक थे । उनकी समस्याएँ स्वयं 'महजूर' की निजी समस्याएँ थीं । वे उन्हें राजनीतिक एवं आर्थिक शोषण से मुक्त करना चाहते हैं । इस प्रकार उनके देश-प्रेम की भावना बड़ी व्यापक है । अपनी जन्मभूमि के प्रति प्यार का एक अथाह सागर उनके हृदय से उमड़ता रहा । उनका हृदय देश-प्रेम का एक ऐसा स्रोत था जो सदा प्रवाहित रहा :-

'मैंने सुना है कि साकी देश-प्रेम की मदिरा बाँट रहा है, मैंने इसके लिए नये बर्तन एवं नये मधु-कलश बनाये हैं ।'[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ३१२)

श्री हबीब-उला- 'हामिदी' ने लिखा है – 'आपको घाटी के चप्पे-चप्पे से प्यार था । प्यार की यह पवित्र भावना गीतों एवं ग़ज़लों के माध्यम से झलकती है । आपके गीत पढ़कर हमें भी देश-प्रेम के मधुर भाव का अनुभव होता है ।'[३] 'महजूर' जन्म भूमि की महानता का उल्लेख करते हुए लिखते हैं :-

---

१. प० म० ६, गीत ३१ ।

२. प० म० ४, गीत १५ ।

३. 'तामीर' - 'महजूर-अंक - 'महजूर' के काव्य में देश-प्रेम - 'हामिदी',पृ०४४।

"जब नव-युग का सूर्य उदय होगा, उस समय सर्वप्रथम तुम्हारी अट्टालिका पर ही कान्तिमान किरणों का प्रकाश पड़ेगा और उसके पश्चात् सारे संसार में वह अपनी उज्ज्वल आभा बिखेर देगा। तुम्हारा निवासस्थान ऊँचाई पर वैसे ही शोभा पाता है, जैसे पहाड़ी पर "गुल्लाला" शोभा पाता है। तुम्हारे नीचे सारा हिन्दुस्तान है। तनिक अपने देश से परिचित हो जाओ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३१३)

साम्राज्यवादियों के घोर आतंक से भयभीत जन-समूह में उनकी देश-प्रेम की कविताओं से नवीन आशा का संचार होता है। वे उन देशवासियों को भी ललकारते हैं जो सत्ताधारियों की जूतियाँ चाट कर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं और इस प्रकार देश-द्रोही बनकर अपने नाम एवं जात पर कलंक लगाते हैं :-

"जो अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए देश की स्वतंत्रता का विरोध करते हैं, समयान्तर में उन्हें अपनी भूल का अनुभव होगा परन्तु उस समय वे अपने बच्चों को क्या उत्तर देंगे। रे देश के शत्रुओं! हमारे देश को छोड़ कर तुम चले जाओ। मुझे अपने वृक्षों को सींचना है, क्योंकि पुनः हमारी नदियों में पानी बहने लगा है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३१४)

कश्मीर वास्तव में एक ग्राम-समूह है। यहाँ की जनता की प्रमुख-जीविका खेती है, यही कारण है कि यहाँ की तत्कालीन राष्ट्रीय-ध्वजा पर हलका चिह्न था, हलकी स्तुति में "महजूर" लिखते हैं :-

---

१. प० म० ४, गीत १७।
२. प० म० ५, गीत २६।

`किसानों को तुम्हारे साथ अपार प्रेम है । और वे तुम्हारी ही पूजा करते हैं । वे बड़े चाव के साथ तुम्हारी रक्षा करते हैं और सम्मान सहित सबसे ऊपर तुम्हारा निवासस्थान बनाते हैं । `महजूर` तुम्हें बहुत पहले से जानता है क्योंकि वह स्वयं बहुत समय तक तुम्हारे साथ रहा है । सुन्दर हल । मुझे तुम्हें देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है ।`[१] (देखिए परि० २ , क्रमां ३१५)

`महजूर` अपने देशवासियों से अथाह प्रेम करते थे । वे उनके दुख में दुखी एवं सुख में सुखी होते थे । वास्तव में वे उनके दुख-सुख के मीत थे । श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है — `बुलबुल और `गुल्लेलाला` की तरह जिनके हृदय संगीतमय और सहज-सुन्दर हैं, उन सरल भोले भाले बालगोपाल काश्मीरी जनों को `महजूर` के हृदय की समस्त वात्सल्यपूर्ण ममता प्राप्त हुई है । `महजूर` अपनी कविताओं में अपने शिशुवत प्रिय-जनों के, दु:खी दिलों का वेदन सुनकर उन्हें ढाढस बँधाते हैं, उनके स्वाभिमान को जगाते हैं ।`[२] वे उन्हें स्पष्ट शब्दों में कहते हैं :-

`स्वतंत्र रहकर कम खाना ही अच्छा है । तुम फूलों को चुन लो और फुलवाड़ी के सौन्दर्य से प्रसन्न चित हो जाओ ।`[३] (देखिए परि०२,क्रं०३१६)

`महजूर` अपने प्रदेश वासियों को एकता का पाठ पढ़ाते हैं और परस्पर विद्वेष की भावना को सदा के लिए त्याग देने का आदेश देते हैं । प्राचीन काल से ही काश्मीर हिन्दु-मुस्लिम एकता का प्रतीक रहा है ।

---

१. प० म० ६ , गीत ३० ।

२. `साहित्यानुशीलन` - चौहान, पृ० १२४ ।

३. प० म० ४, गीत १६ ।

आधुनिक युग में विशेष कर पिछले दस वर्षों में हमें इसके अनेक उदाहरण मिले हैं। हिन्दू एवं मुसलमानों के लिए 'महजूर' समानरूप से सद्भावना के लिए आगे बढ़े हैं। वे उनकी परस्पर एकता पर विशेष बल देते हैं :-

'हमारे देश का कौन मित्र है ? और कौन शत्रु ? निष्फल वाद-विवाद को छोड़कर कर यह देखने के लिए तुम एक हो जाओ। काश्मीरियों की जाति एक है। यदि मुसलमान दूध हैं तो हिन्दू शक्कर। इस दूध और शक्कर को आपस में मिलाओ। हिन्दू इस देश की नैया का दिशा-नियंत्रण करेगा। मुसलमान हाथ में पतवार लेगा। इस प्रकार मिलजुल कर तुम इस देश की नैया को भँवर से बाहर ले जाओ।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ३१७)

'महजूर' की इन प्रसिद्ध काव्य-पँक्तियों का अनुवाद भी अंग्रेज़ी भाषा में हुआ है।[२] 'नया-कश्मीर' के निर्माण-हेतु कविवर 'महजूर' साम्प्रदायिक एकता एवं मानवीय भाईचारे को नितान्तावश्यक समझते थे। श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'रसूल मीर से प्रभावित होते हुए भी 'महजूर' ने 'प्रेम' के 'साज़' पर एक ताज़ा लय छेड़ने की कोशिश की, और इस ताज़गी की लय में भी हमें उस मानवीय भाईचारे की झंकार सुनाई देती है जिसकी दृढ़-नींव पर अब 'नया-कश्मीर' निर्मित हो रहा है।'[३] उन्हें पूर्ण विश्वास

---

१. प० म० २, गीत ६।

२. Who is the friend and who the foe of your (native land)?
Let you among yourselves thoughtfully make out.
The kind and stock of all Kashmiris is one;
Let your mix milk and sugar once again.
Hindus will keep the helm and Muslims ply the oars;
Let you together now (ashore) the boat of this country."
Struggle for freedom in Kashmir - P.N. Bazaz . Page 296.

३. हिन्दी गद्य-प्रवेशिका - 'महजूर' की कविता में 'नया कश्मीर' - 'पुष्प', पृ० १५०।

था कि :-

`बुलबुल के हाथ में इस उपवन का नेतृत्व दिया जाएगा और सारे हिंसक पक्षी उसके आधीन रहेंगे । गरुड़ उसका दरबान होगा ।हे मेरे प्रियजन! ध्यान देकर मेरी इस प्रेम-कहानी को सुनो ।`[१] (देखिए परि०२,क्रमांक ३१८)

यह सत्य है कि `महजूर` ने अपने प्रदेश के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन बड़ी सजीवता के साथ किया है परन्तु इस प्राकृतिक-सौन्दर्य से सुशोभित भू-खण्ड पर रहने वाले जन वासियों की अविश्वसनीय दशा का वर्णन भी `महजूर` ने अपनी लेखनी द्वारा किया है । यह उनकी देशप्रेम सम्बन्धी कविताओं की सबसे बड़ी विशेषता है । वे केवल आहें ही नहीं भरते अपितु इन परिस्थितियों में समूल परिवर्तन लाना चाहते थे । श्री नूर मुहम्मद भट्ट ने लिखा है – `"`महजूर` की रचनाएँ सुनकर जनता में नवीन स्फूर्ति उत्पन्न हुई, इसी के साथ देश में स्वतंत्रता-आन्दोलन भी तीव्रतर हुआ और `महजूर` के काव्य ने भी एक नवीन करवट ली ।`[२] `महजूर` ही वास्तव में प्रथम कवि थे जिन्होंने जनता में जागृति के प्राण फूँक दिए ।[३] `महजूर` के साथ-साथ स्वर्गीय प्रेमनाथ

---

१. प० म० ३, गीत १३ ।

२. `तामीर` - जून १९६२ - `क्यँह दिल पसन्द शुरि` - नूरमुहम्मद भट्ट ।

३. 'Mahjoor was indeed the first to arouse the people to an awareness by such a change dawning over them. His patriotic and nationalistic strains gave Kashmiri Poetry not only a new tone but a new outlook'. 'Kashmiri Literature', (Booklet Printed from contemporary Indian Litt.) - P.N. Pushp - Page 116.

परदेसी[१] एवं अब्दुल अहद `आज़ाद` ने भी जन-मन की भावनाओं को अभिव्यक्त किया । आज़ाद अपनी प्रसिद्ध कविता `गफ़्लता बेदार` में देशवासियों को चेतावनी देते हैं :-

` तुम्हारे हृदय की गौरव एवं पुरुषत्व की अग्नि क्यों बुझ गयी? हे मेरे देश के सपूतो ! तनिक सजग हो जाओ । तुम आतंक एवं भय की कीचड़ में फँस गए हो और भीम के समान मस्त सोये हुए हो । शत्रुओं के नाश के हेतु व्याल के समान फन फैलाते हुए तुम निकल जाओ ।हेमेरे देश के सपूतो ! तनिक सजग हो जाओ ।`[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३१६)

`महजूर` की राष्ट्रीय संघर्ष-कालीन रचनाओं में जनता के धड़कते हुए हृदयों का संयोग है । राजनीतिक कुचालों एवं अत्याचारों से ग्रस्त जनता `महजूर` की वाणी का सच्चे हृदय से स्वागत करने लगी । संकटकालीन क्षणों में `महजूर` देशवासियों का साथ देते रहे । श्री श्रीनिवास लाहोटी ने लिखा हैं:— ` `महजूर` के काव्य में इस देश के प्रति प्यार के शोले लपकते हुए नज़र आते हैं । वे अपने देश-वासियों को एकता एवं संगठन के लिए ललकारते हैं ।

---

१. हम अपने देश के लिए जवान खून बहाएँगे ।
वतन के नंग व नाम पर हम गरदनें कटाएँगे ।
वतन के गीत गाएँगे नवतन को हम बचाएँगे ।
कदम-कदम बढ़ेंगे हम
महाज़ पर लड़ेंगे हम ।

- `वतन की पुकार` - संकलन कर्ता-मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० ७ ,
`कदम-कदम` - प्रेमनाथ `परदेसी` ।

२. `आज़ाद` - `पुष्प` , `गफ़्लता बेदार` , पृ० ४६ ।

वे उनको मानवता का पाठ पढ़ाते हैं । धार्मिक-संकीर्णताओं के विरुद्ध वे धर्म के ठेकेदारों की खिल्ली उड़ाते हैं ।[१] देशवासियों के प्रति उनका कथन समय की सबसे बड़ी आवश्यकता को पूरा करता है :-

'एक भाई के लिए क्या यह शोभा देता है कि वह अपने दूसरे भाई से रुष्ट रहे । अपने हृदयों की सब गाँठें खोल दो और परस्पर प्रेम एवं सद्-भावना से व्यवहार करते रहो । अपने अनजान देश-वासियों को सुमार्ग पर चलना सिखाओ । सावधान ! अपने नाम पर कहीं कलंक न लगने पाए ।'[२]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३२०)

'महजूर' का दृढ़ विश्वास है कि पूंजीपति वर्ग समाज के लिए घातक है अत: वर्ग-विभाजित समाजोद्धार के लिए इनका नष्ट होना नितान्तावश्यक है । वह देशवासियों को उज्ज्वल भविष्य का आश्वासन देते हुए अन्धकारमय वर्तमान से जूझने के लिए प्रेरित करते हैं ।[३] वह देशवासियों को ऐसा संसार

---

१. 'तामीर' - 'महजूर'-अंक' - 'कश्मीर भाषा का राष्ट्रीय कवि' - श्रीनिवास लाहोटी , पृ० २० ।

२. प० म० २, गीत ६ ।

३. 'His verses thus embody the spirit of New Kashmir's struggle for freedom and emancipation. Mahjur inspires his suffering countrymen with the promise of a happier world when the gardens will be in full bloom and the lot of the people would be free from misery and unhappiness. 'Kashmir: Its cultural Heritage'-By-Kaumudi, Page 88-89.

बनाने के लिए बुला रहे हैं जिसमें समस्त मानव जाति को समान अधिकार प्राप्त हों :-

'इस उपवन में धरती सदा शस्य-श्यामला रहेगी क्योंकि उसकी रखवाली यहाँ के निवासियों की सरलता, निश्छलता एवं निष्कपटता करेगी। पतझड़ की घातक वायु से पूंजीपति पीले पड़ जाएँगे।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ३२१)

यहाँ की सुन्दर एवं पवित्र भूमि के प्रति 'महजूर' का अपार प्रेम उनकी अनेक कविताओं में साकार रूप में प्रकट हुआ है, जहाँ कवियों को प्रकृति के स्वच्छन्द एवं रम्य प्रांगण में बैठकर काव्य-प्रेरणा मिलती है वहाँ योगियों एवं महात्माओं को भी अपनी योग-साधना में सिद्धि प्राप्त होती है :-

'अहर बल जाकर तुम्हारी मनोअभिलाषा पूर्ण होगी, वहाँ तुम सुन्दर प्राकृतिक दृश्य देखकर विस्मित नेत्रों से यह भी देखोगे कि किस प्रकार पानी से मोती बन जाते हैं। मैंने 'सुखनाग' एवं 'तोसि मैदान' में स्वयं भगवान को अपने भक्तों को दर्शन दिखाते हुए देखा।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३२२)

मानव-प्रेम, साम्प्रदायिक-एकता एवं धार्मिक-सहिष्णुता को 'महजूर' ने राष्ट्रहित के लिए एवं 'नया कश्मीर' के निर्माण के लिए

---

१. क० म० ७, गज़ल ४२।
२. प० म० १, गीत ५।

नितान्त आवश्यक माना है।[१] 'नया कश्मीर' का भावी स्वप्न उन्हें संघर्ष के लिए प्रेरित करता है, बलिदान के लिए साहस देता है एवं जन-क्रान्ति लाने के लिए शक्ति प्रदान करता है। 'शीरवानी का सन्देश'[२] नामक कविता में कवि ने बन्दी शीरवानी की हृदयगत भावनाओं को वाणी प्रदान की है:-

" मेरे मित्रो ! मेरे देश के नवयुवको ! मैं तो मरने जा रहा हूँ परन्तु मेरी विनती को ध्यानपूर्वक सुनो। तुम साहस एवं दृढ़ता से कर्त्तव्य-पथ पर अटल रहना। तुम्हें अपने देश की रक्षा करनी है। उसी से मेरा

---

१. The modern note is first sounded in new themes introduced by Gh. Ahmad Mahjur, whose songs and poems, imbued with deep patriotic fervour, appealed to the people of Kashmir. He also interprets though his songs the cultural background of the 'New Kashmir', inspiring people to strive for the greater glory'.
Kashmir: Its cultural heritage'-By-KAUMUDI, Page 84.

२. सन् १९४७ में पाकिस्तान की ओर से कश्मीर पर भयंकर आक्रमण हुआ। वीर मुहम्मद मकबूल शेरवानी ने देश को उनकी बर्बरता से बचाने के लिए परम-साहस एवं अध्यवसाय का परिचय दिया। अन्त में नृशंस शत्रुओं ने उन्हें पकड़ लिया और बड़ी निर्दयता से उनका जीवनान्त किया। उनकी स्मृति में बारहमूला में 'शीरवानी स्मारक' बनाया गया है।

आत्मबलिदान सफल होगा ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३२३)

अपने प्रदेश की सर्वांगीण उन्नति के लिए `महजूर` ईश्वर की शरण में जाता है और नत-मस्तक प्रदेशवासियों की सुखशान्ति के लिए कामना करता है :-

" `महजूर` ईश्वर से विनती करता है कि हमारा उपवन सदा शोभायमान रहे , यहाँ का `बागवान` (देशवासी) कुशल सहित जीवन व्यतीत करे और इस उपवन के पुष्प सदा खिलते रहें।"[२] (देखिए परि० २ , क्रमांक ३२४)

श्री अली जवाद ज़ैदी ने लिखा है – " विशेष कर `महजूर` के काव्य में सर्वप्रथम देशप्रेम का जो उत्साहवर्द्धक एवं हृदयाकर्षक रूप मिलता है वह हमें उनसे पूर्व के कवियों में कहीं प्राप्त नहीं होता ।"[३] अपने देश के प्रति अथाह प्रेम की भावना लेकर वह साहित्य जगत में आए और जनता को उसके साथ प्रेम करना सिखाया:– " बुलबुल पुष्पों पर बलि हो जाता है और भौंरा नरगिस के फूल पर मर मिटता है । कश्मीर वासी अपने देश-प्रेम की मदिरा पीकर मस्त हैं । हमारा देश एक फुलवाड़ी है । कवि `महजूर` कहता है कि हमारा देश संसार में सब से न्यारा है । इसे प्यार करना हमारा परम कर्त्तव्य है । हमारा देश एक फुलवाड़ी है ।"[४] श्री जियालाल कौल ने इन काव्य-

---

१. `गाये जा काश्मीर` - `पैगाम शीरवानी` - `महजूर` , पृ० ५८ ।
२. `तामीर` -'महजूर'-अंक - कविता - (गर्ल्ज़ स्कूल), पृ० ७७ ।
३. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` - 'आज़ाद'- भाग २, भूमिका - अली जवाद ज़ैदी, पृ० १०२ ।
४. `महजूर` - `पुष्प` - `गुलशन वतन कु सोनुइ` , पृ० ४८ ।

पंक्तियों का अनुवाद अंग्रेजी भाषा में किया है ।[१] (देखिए परि० २,क्रं०३२५)

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि `महजूर` का देश-प्रेम सम्बन्धी काव्य समय की सबसे बड़ी आवश्यकता को पूरा करता है और देशवासियों के अन्तर-तम को उद्वेलित करता हैं ।

पीड़ित कृषकों एवं श्रमिकों का चित्रण :-

अपने राष्ट्रीय-काव्य में `महजूर` ने कृषकों और श्रमिकों का बड़ा ही हृदय-विदारक एवं करुण चित्रण प्रस्तुत किया हैं । उनकी सच्ची एवं वास्तविक दशा का वर्णन करने में कवि महोदय को विशेष सफलता मिली है । सरकारी कर्मचारी होने के कारण `महजूर` अधिकतर गाँव में ही रहे हैं । अत: ग्रामीण जीवन का निकट से अध्ययन करने का सुअवसर उन्हें प्राप्त हुआ है । तत्कालीन जागीरदारी एवं सामंती-व्यवस्था दोष-पूर्ण थी, जिसके फलस्वरूप हमारा समाज दो वर्गों में बंटा था - शोषक एवं शोषित ।

---

१. 'The Bulbul dotes on roses on narcissus the bee,
Drunk with the joy of his native land,
Is the Kashmiri, Our native land, O Mahjur,
Is verily a lovely garden.
We must love it dearly,
We all must love it dearly.'
' Kashmiri Lyrics - Selected and Translated by
J.L. Kaul, Page 125.

समस्त गाँव दरिद्रता, जड़ता एवं भूख के केन्द्र बने थे ।[१] ऐसी विषम परिस्थितियों से कौन प्रभावित नहीं होता ? किसानों की दरिद्रता एवं विवशता को समीप से देखकर 'महजूर' हृदय मसोस कर रह जाते । सामंत शाही की निरन्तर लूट ने उनकी कमर तोड़ दी थी ।[२] खेतिहर स्वयं कहता है कि - 'कठिन परिश्रम करने के पश्चात् भी हमें सदा अपमानित होना पड़ता है - 'हम स्वयं इस भूमि से अन्न उत्पन्न करते थे, घर के दसों जने खेत पर रात-दिन कड़ा परिश्रम करते थे परन्तु फिर भी सदा हमें रोटियों के लाले पड़ते थे । जागीरदार के कारिन्दे शरद-ऋतु में सारे अनाज को बटोर कर ले जाते।

---

१. I shuddered when I heard the condition of the people living in the Jagirs. The depredating of the Jagirdars aremoustrous. There is no law but the will of the Jagirdars in these parts of the State. I was told that people may not marry even their daughters against the wishes of the Jagirdars.'

'Inside Kashmir' - P.N. Bazaz - Page 231

२. 'At that time, the poor class was groaning under the burden imposed on them by the feudalistic form of Government. At the same time a wave of nationalism was sweeping the country'.

'Kashmir' - Nov. 1957. - 'Romantic element in Kashmiri literature' - Page 282.

वे बड़े ही निर्दयी हैं, एवं अत्याचारी हैं । किसी का ध्यान आज तक हमारी इस पतित-दशा की ओर नहीं गया । अब हम शीघ्र ही स्वतंत्रता पायेंगे ।'[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३२६)

किसान उत्पादक है परन्तु भोक्ता कोई और । शोषक सदा अपने घृणित पंजे उस पर डाले रहता है, यहाँ तक कि कभी-कभी उसका अपमान करने से भी नहीं हिचकिचाता । श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - 'यह एक कटु-सत्य है कि गुलाम देशों में साम्राज्यवाद का रूप सर्वत्र एक-सा ही होता है । अत: कश्मीरी जनता ने भी उसका कोई दूसरा रूप नहीं देखा । वही अन्याय, हनन, शोषण, उत्पीड़न, फूट-कलह, जहालत, अशिक्षा, दु:ख दैन्य, भूख, महामारी, अकाल - काश्मीरी जनता को भी गुलामी की यह नियामतें ही पल्ले पड़ती आईं । शिक्षा-संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान के द्वार उसके लिए सदा बंद ही रहे ।'[२] 'महजूर' केसर-वाटिका में काम करने वाले किसानों की दीन-हीन दशा का करुण चित्रण निम्नलिखित पंक्तियों में प्रस्तुत करते हैं :-

' हे केसर के फूल ! किसान कड़कती धूप में तुम्हारी रखवाली करता है । ताकि पशु या कोई अन्य जानवर तुम्हें किसी प्रकार से हानि न पहुँचाए। उसी किसान का शरीर आज मुर्झा गया है । उसके शरीर पर गहरे घाव हो गये हैं और शरीर सड़ा हुआ है । वही किसान जो आजन्म तुम्हारी सेवा में रत रहता है, उसका मुख-कमल अनेकों चिन्ताओं के कारण पीला पड़ा है । क्यों न तुम अपने रक्षक को अपनी थोड़ी सी लाली उधार देते हो ? उसमें

---

१. प० म० ६, गीत ३३ ।
२. 'साहित्यानुशीलन' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १२१ ।

पुन: नवीन जीवन-संचार की आवश्यकता है ।"[१] (देखिए परि० २,क्रं०३२७)

इसके अतिरिक्त जमींदारी-प्रथा के फल-स्वरूप अनेक कुरीतियाँ प्रचलित थीं । कृषकों से फसल तथा रुपया लेना, किसानों से बेगार लेना एवं उन्हें बेदखल करा देना एवं शासकाधिकारियों द्वारा लूट करा लेना उनके लिए साधारण सी बात थी । किसान का शोषण करने में उन्हें एक विशेष प्रकार का आनन्द आता था । कृषकों पर अत्याचार करने के लिए कानूनी सुविधाएँ प्राप्त थीं ।[२] - `महजूर` देश वासियों के स्वर में अपना स्वर मिलाकर लिखता है :-

इन असहाय दीन-दुखियों की करुण पुकार की ओर कोई ध्यान नहीं देता । बुलबुल का करुण-क्रन्दन सुन कर भी अधिकारी जन उसके प्रति उपेक्षाशील रहते हैं । इन मनमौजी मस्त शासक-अधिकारियों के साथ दीन दुखी जनता का मेल नहीं हो सकता है, जनता अपना सहयोग इन्हें प्रदान नहीं कर सकती । यही कारण है कि `~~गोस्त का फूल~~ गुल्लाला` फुलवाड़ी में नहीं खिलता।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३२८)

उस समय श्रमिकों की दशा में अकथनीय थी । कार्याभाव के कारण बेकारी की समस्या दिन प्रतिदिन अपना विकराल रूप धारण कर रही थी । यही बेकारी किसानों में भी फैल रही थी । श्रमिकों के जीवन की सबसे बड़ी `ट्रेजिडी` की ओर संकेत करते हुए `महजूर` ने लिखा है :-

---

१. क० म० नं० ११ , गज़ल ७३ ।

२. `महजूर` - एक अध्ययन` - सुश्री कृष्णा कौल , `योजन` - मार्च १९६२, पृ० २४ ।

३. प० म० ४, गीत २० ।

"यदि मेरे घर में मेरे रहने का सुप्रबन्ध होता तो शीतकाल की भयंकर सर्दी में मेरे देशवासी निष्प्रयोजन अपना समय नष्ट न करते । अब मैं क्या कहूँ ? वर्ष भर परिश्रम करने के पश्चात भी आज मेरे बन्धु भूखे हैं, नंगे हैं एवं पीड़ित हैं ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३२६)

श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - "'महजूर' का देश स्वर्ग के समान होते हुए भी जागीर-शाही की विषाक्त वायु के झोकों से मुर्झा कर नरक में परिवर्तित हुआ था ।"[२] सामंतशाही की कूटनीति एवं पाश्विक वृत्ति की ओर संकेत करते हुए 'महजूर' ने लिखा है :-

"मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि पूंजीपतियों को अधिक मात्रा में सम्पत्ति प्राप्त हो परन्तु उसके उपलक्ष्य में वे अर्थात् पूंजीपती मेरे नाश का स्वागत करने के लिए प्रतीक्षारत हैं । मेरे नंगे शिशु हरएक को अन्न पहुँचाते हैं परन्तु उन्हीं का रक्त चूसने के लिए यहाँ के पूंजीपति रात-दिन उनकी ओर तृषित नेत्रों से देखते हैं ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३३०)

'महजूर' के समकालीन कवि स्वर्गीय 'आज़ाद' ने भी इस वर्ग - विभाजित समाज का बड़ा ही सजीव एवं मर्मस्पर्शी चित्रण अपनी कविता 'शिकवय् इबलीस' में किया है ।[४] और उनके समकालीन एक अन्य कवि

---

१. प० म० ४, गीत १८ ।

२. 'महजूर' - 'पुष्प' , पृ० ११ ।

३. प० म० ४, गीत १८ ।

४. "कितनी विडम्बना है कि एक सोने के सिंहासन पर विराजमान है जिस पर बहुमूल्य जवाहिर जड़े हुए हैं , परन्तु दूसरे को भीख मांगने के लिए बरतन भी नहीं मिलता । मैं यह मेरा रोज़ का अनुभव है कि धनाढ्य-वर्ग दलित वर्ग के मांस का मज़ाक बना है और उसी पर प्रतिदिन आनन्दोत्सव मना रहा है ।" — 'आज़ाद' - 'पुष्प' - 'शिकवय्-इबलीस' - पृ० २०, (देखिए परि० २, क्रमांक ३३१)

श्री हसनबेग 'आरिफ' ने धर्म एवं समाज के मुखियों पर व्यंग्यात्मक चोटें की हैं :-

'मौलवी, ग्राम-मुखिया, ज़ेलदार, पुंजीपति तथा अन्य दुष्ट जनों ने मिलकर अनेकों कष्ट जनता पर डाले। अनेक प्रकार से शोषण किया। उस शोषण के परिणामस्वरूप हमारे शरीर पर गहरे घावों के पुष्प खिलने लगे। परन्तु फिर भी हमारा दल आगे ही बढ़ता रहा।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३३२)

'महजूर' बड़ी सुन्दरता एवं कलात्मक ढंग से इस तथ्य को हमारे सामने स्पष्ट करते हैं कि संसार के प्रत्येक देश के लोग काश्मीर स्वास्थ्य-लाभ के हेतु आते हैं परन्तु खेद इस बात का है :-

'जिस प्रदेश में संसार के कोने कोने से लोग स्वास्थ्य-पुष्टि के लिए आते हैं वहीं की जनता तृषित, पीड़ित सड़कों पर अपनी जानें गँवा देती हैं।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३३३)

'महजूर' इसके मूल कारण को खोजने का प्रयत्न करते हैं और यहाँ की दूषित परिस्थितियों में पलने वाली कश्मीरी जनता के प्रति अपनी सहानुभूति प्रदर्शित करते हैं :-

'क्या वहाँ भी दीन-हीन व्यक्ति अधर्मी माना जाता है और इसके विपरीत धनाढ्य धर्म का रक्षक एवं पोषक ? क्या वहाँ भी दरिद्र एवं चार बातें गम खा लेने वाला व्यक्ति मूर्ख समझा जाता है और इसके विपरीत

---

१. 'गाये जा काश्मीर' -'सोन कारवाँ'- 'आरिफ' , पृ० ४२ ।
२. पद्म० ४ , गीत १८ ।

पूंजीपति बुद्धिमान ? क्या वहाँ भी ज़मींदार, काश्तकार `नानगार` एवं चकदार हैं ? क्या वहाँ भी आलसी पुरुषों को भाँति-भाँति की चीज़ें खाने को मिलती हैं और परिश्रमी व्यक्ति भूखा रह जाता है ।`[१]` (देखिए परि० २, क्रमांक ३३४)

`महजूर` ने स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ कृषकों एवं श्रमिकों के आन्दोलन का अटूट सम्बन्ध माना है । उन्होंने केवल कृषकों एवं श्रमिकों की वर्तमान दुर्दशा पर आँसू ही नहीं बहाये अपितु उस दुर्दशा में समूल परिवर्तन लाने के लिए वे देशवासियों (श्रमिकों एवं कृषकों को) को पुन: संगठित होने के लिए ललकारने लगे । उन्होंने इन के जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक समस्या को कुशलता के साथ प्रस्तुत किया और उसको सुलझाने के लिए सांकेतिक रूप में सुझाव भी देते रहे । इस प्रकार उन्होंने सामान्य जनता के जीवन के अनेक अंगों को स्पर्श किया है ।`[२]` श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - `तरानये मजदूर` में महजूर ने पहली बार आज़ादी के संघर्ष को मज़दूर किसानों के वर्ग-संघर्ष के साथ इतनी स्पष्टता से सम्बन्धित किया है । निरन्तर के जुल्मोत-शद्दुद से पामाल और बदहाल मज़दूरों को गफलत की नीद से जगाते हुए उन्होंने कहा कि `उठ, नज़र उठाकर देख कि सुबह हुई है ।`[३] `महजूर श्रमिकों

---

१. प० म० ५, गीत २२ ।

२. 'Mahjur can undoubtedly by signed out from the company of Kashmiri poets for having bequeathed to his homeland a treasure house of verse touching several aspects of life'.

'Kashmir' - Feb. 1959 - Page 48 - A Patrotic song by Mahjur - O.N . Hak.

३. `साहित्यानुशीलन` - चौहान , पृ० १२५ ।

को चेतावनी देते हैं :-

" हे श्रमिक ! निराहार रहते-रहते तुम्हारी दुर्दशा हुई है । निरन्तर शोषण की चक्की में पिसते रहने के कारण तथा अनेक कष्टों को सहने के परिणामस्वरूप तुम क्षीण पड़ गए हो । दरिद्रता तेरे अंग-अंग के लिए विष बन गयी है और अब तुम मृत प्राय; से दिखाई पड़ते हो । तुम जागृत हो जाओ । अब अधिक कितने समय तक तुम शोषण को सहन करते रहोगे ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३३५)

'महजूर' श्रमिकों एवं कृषकों को संगठित रूप से आन्दोलन करने की प्रेरणा देते हैं । उन्हें जनशक्ति पर अटूट विश्वास था और राजनीतिक आन्दोलन को सफल बनाने के लिए वे सामूहिक जन-शक्ति का प्रयोग करना चाहते थे :-

'हे श्रमिक एवं किसान ! तुम आपस में एक हो जाओ । अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए तुम संघर्ष करना सीखो । अधिकारियों की दया-दृष्टि की अब आवश्यकता नहीं, उनसे विनय करना निष्प्रयोजन होगा । संसार की समस्त दौलत तुम्हारी है । यह वृक्ष तुम्हारे हैं, यह धरती तुम्हारी है, राज तुम्हारा है, यह सिंहासन तुम्हारा है । जो इस समय दरिद्र है, वास्तव में वही इस देश का सच्चा स्वामी है, वही इसका रक्षक है और वही हितैषी।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३३६)

लूट खसूट करने वाले इन प्रशासकों और पूंजीपतियों की धूर्तताओं एवं छलकपट लीलाओं का वर्णन 'महजूर' ने अपने काव्य में यत्र-तत्र किया है ।

---

१. प० म० ५ , गीत २४ ।

२. प० म० ५, गीत २४ ।

स्वार्थ वृत्ति वाले इन प्रशासकों की कायर मनोवृत्ति की ओर संकेत करते हुए `महजूर` ने लिखा है :-

`धनाढ्य व्यक्तियों (उच्च व्यक्तियों) के घरों में धन का बोलबाला है, परन्तु वे चिन्तित भी रहते हैं, उनका जीवन बड़े खतरे में रहता है । उन्हें अपने प्राणों का डर सदा रहता है । साहस एवं शूरवीरता गरीबों के घरों में पलती है । प्राय: पवित्र-जन जनता से दूर ही रहते हैं यही कारण है कि कमल के फूलों ने दूर झीलों में अपने लिए स्थान बनाया है ।`[१] (देखिये परि० २, क्रमांक ३३७)

इस प्रकार कवि के कथनानुसार सज्जनता दरिद्र जनों के घरों में पलती है । उनकी टूटी फूटी फूस की झोंपड़ियों में मानवता स्वच्छन्द एवं निर्भय रूप से विकसित होती है, परन्तु दुष्टों की काली छाया यहाँ भी पहुँचती है। `महजूर` शोषित जनता की कायरता से कभी कभी निराश भी होते हैं:-

`अब कितने समय तक शक्तिशाली लोग निर्बलों पर राज्य करते रहेंगे । काश ! इन निर्बल व्यक्तियों में जागृति आ जाती । दिन भर अथक परिश्रम के पश्चात् शाम को इन्हें आधा पेट भोजन मिलता है, फिर भी वे संतुष्ट हैं, परन्तु उनका स्वामी दु:ख में उनका साथ नहीं देता ।`[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ३३८)

दरिद्रता के इस विस्तृत साम्राज्य में किसान एवं श्रमिक की दीन-हीन दशा का वर्णन करते हुए `आज़ाद` ने लिखा है :-

---

१. प० म० ५, गीत २८ ।

२. प० म० ३, गीत ११ ।

'दरिद्रता मेरे देश के गुलों एवं अरिवेल पुष्पों (पीला गुलाब) को पछाड़ कर मिट्टी में मिला देती है । दरिद्रता के कारण ही प्रकाश अन्धेरे में परिवर्तित होता है एवं धूप छाँव में ।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ३३६)

उदर-पूर्ति के लिए देशवासी प्रत्येक शोषण को सहन करने के लिए विवश थे ।[२] इसके अतिरिक्त शताब्दियों की दासता, अज्ञान एवं दरिद्रता के कारण वे जीवन से निराश हो गये थे । कोई उनकी ओर ध्यान नहीं देता था ।[३] 'महजूर' देशवासियों को संघर्ष के लिए प्रेरित करने लगे :-

'देशवासियो ! तुम्हें नवीन संसार की सृष्टि करनी है अत: निर्माण के लिए सामान की तलाश करो । इस नये युग में केवल तुम्हारा ही आधिपत्य होगा और सारा कारोबार तुम्हारा ही होगा ।'[४] (देखिए परि० २ , क्रमांक ३४१)

श्रीनिवास लाहोटी ने लिखा है - 'इनके जीवन का अधिक भाग किसानों के बीच में व्यतीत हुआ था और उन्होंने बहुत निकट से उनकी दरिद्रता एवं विवशतापूर्ण जीवन का गम्भीर अध्ययन किया था । उन्होंने यह अध्ययन यथार्थवादी दृष्टिकोण से किया क्योंकि स्वयं कवि ने अपने जीवन के अधिक भाग में, वर्षों तक दरिद्रता का मुकाबिला किया ।'[५] देशवासियों की दुर्दशा देखकर

---

१. 'आज़ाद' - 'पुष्प' - 'इंद' कविता से' , पृ० ६५ ।

२. 'अब तक आका के बन्दे थे जो कहता था करते थे ,
खून-पसीना साथ बहा कर उनकी जेबें भरते थे ,
मौत का एक ही दिन होता है हम तो पल पल मरते थे ,
पेट की खातिर कर लेते थे सब का ज़ुलुम गवारा
चमका देश हमारा ।' 'चमका देश हमारा' -- प्रेमनाथ 'परदेसी' ,
'गाए जा कश्मीर', पृ० ४३-४४.

३. 'कोई इन गरीबों की चीख पुकार की ओर ध्यान नहीं देता ।'
-क०म०१०, गज़ल ६७ ,(देखिए परि०२, क्रमांक ३४०)

४. प०म० ५, गीत २४ । 'नामीर' - 'महजूर' - अंक

५. 'कश्मीर का राष्ट्रीय कवि - 'महजूर' - श्रीनिवास लाहोटी', पृ० १६।

उनका हृदय तड़प उठता था । श्रमिकों को एकता का सन्देश देते हुए 'महजूर' ने लिखा है:-

'हे श्रमिको । तुम आपस में जातपांत, वर्ग, परिवार एवं कुल का विचार करना छोड़ दो क्योंकि अब श्रमिकों का एक ही वर्ग माना जाता है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४२)

सामन्तशाही का अन्त करके किसानों को ज़मीन का मालिक बनाना, यहाँ के राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रोग्राम रहा है ।[२] 'महजूर' इस वर्ग-विभाजित समाज में परस्पर भेदभाव को सदा के लिए दूर करना चाहता है । वह इस भेद-भाव की खाई को पाटना चाहता है । वह महान देश के लिए महान आदर्शों की स्थापना करता है :-

'छोटे-बड़े, ऊंच-नीच तथा कमज़ोर एवं शक्ति शाली का भेद अब नहीं रहेगा । सब एक हो जाएँगे । मनुष्य वास्तविक अर्थों में मनुष्यत्व के आदर्शों को अपना लेगा ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४३)

देशवासियों की दीनहीन दशा से प्रभावित होकर 'महजूर' ने अपने काव्य-विषय में परिवर्तन किया । भविष्य में स्वतंत्रता देवी के आगमन का शुभ-समाचार सुनाते हुए वह सामंती व्यवस्था के नाश की ओर भी संकेत करते हैं :-

' अब जुलुम एवं लूट का युग सदा के लिए समाप्त होगा । 'वडदारों'

---

१. प० म० ५ , गीत २४ ।
२. 'साहित्यानुशीलन' - चौहान , पृ० १२६ ।
३. प० म० ३, गीत १३ ।

एवं चखदारों की शक्ति क्षीण पड़ जायगी । यह शुभ समाचार सुनकर हमें प्रसन्नता हुई । अब हम जो कुछ अन्न उत्पन्न करेंगे वह हमारे पास रहेगा, और उसमें से एक दाना भी नष्ट न होगा । अब हम शीघ्र ही स्वतंत्रता प्राप्त करेंगे ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४४)

श्री मही-उल-दीन 'हाजिनी' ने लिखा है – ' इस सारे काव्य का अभिप्राय था - देशवासियों को जागृत करना और देश की स्वतंत्रता ढूँढना ।'[२] इस प्रकार यहाँ का भूखा जन-समुदाय, किसान, मज़दूर आदि उसके काव्य के आलम्बन बने । उन्होंने अपने काव्य में जनता की निर्धनता, मूढ़ता, विवशता और आर्थिक शोषण के चित्र खींचे हैं । जनता को अपने कर्त्तव्य और अधिकारों के प्रति जागरूक करके दमन और शोषण के विरुद्ध संगठित करने के लिए उसने उत्साहपूर्ण कविताएँ लिखी हैं ।[३] 'महजूर' पथ-प्रदर्शक के रूप में भी यदाकदा अपने देशवासियों का पथ-प्रदर्शन करते हैं :-

'अपने देश की समस्याएँ स्वयं मिल जुलकर सुलझाने का प्रयत्न करो । एक दूसरे का कभी भी अहित नहीं सोचना चाहिए और इस प्रकार आपस में ही शत्रुता मोल नहीं लेनी चाहिए । यदि तुम संगठित रहोगे तो कोई तुमसे लोहा लेने का सामर्थ्य नहीं रखेगा । स्वयं एक दूसरे के शत्रु बनकर गृह-युद्धों को बढ़ाना नहीं चाहिए ।'[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४५)

---

१. प० म० ६, गीत ३३ ।

२. 'गुलरेज़' - मई १९६१ - 'हमारे आधुनिक काव्य की प्रवृत्तियाँ' - मही-उल-दीन 'हाजिनी' , पृ० ११ ।

३. 'महजूर' - एक अध्ययन' - सुश्री कृष्णा कौल - योजना - मार्च १९६२, पृ० २४ ।

४. प० म० २ , गीत ६ ।

राष्ट्रीय काव्य में संकेतात्मकता :-

'महजूर' के राष्ट्रीय काव्य में संकेतात्मक रचनाओं का विशिष्ट स्थान है। सामयिक परिस्थितियों से विवश होकर 'महजूर' ने राष्ट्रीय-काव्य में संकेतों का सहारा लिया है।[१] वे स्वयं राज्य-कर्मचारी थे, अत: आरम्भ में खुलकर सरकार का विरोध न कर सके। उन्होंने 'बुलबुल' को स्वतंत्रता का सन्देशवाहक बनाया और हर समय एक नवीन उपवन सजाने के स्वप्न देखने लगे। 'महजूर' की विवशता से जनता भली-भाँति परिचित थी। कवि स्वयं कभी बुलबुल बनकर अपने देश के गुलों को शताब्दियों की अज्ञान की निद्रा से जगाते हैं। 'गुल' और बुलबुल की शायरी को 'महजूर' ने एक नये रंग में हमारे सामने प्रस्तुत किया। प्राचीन काल से कश्मीरी काव्य में 'गुल' और 'बुलबुल' को प्रेम वर्णन में प्रतीकात्मक रूप में ग्रहण किया गया है। परन्तु 'महजूर' के काव्य में इन परम्परागत प्रतीकों में एक नवीन अर्थ ध्वनित होता है।[२] श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - " उनके यहाँ 'बुलबुल' आज़ादी का गायक और 'बाग़वान' अर्थात् जन-नेता भी है। यह

---

१. 'The Poet could not afford to be out spoken, for, he feared the fault finder was out to catch hold of any word fallings from his lips:
'Kashmir' Feb. 1959 - 'Freedom in Kashmiri verse' - P. N. Pushp - Page 29.

२. 'प्यार की साज़ पर ताज़ा लय लेकर' उसकी गज़लों ने 'गुल' और 'बुलबुल' के प्रतीकों में एक नई अर्थ गम्भीर ध्वनि की उद्भावना की और अपने 'वतन' को प्रमाद की नींद से जगाते हुए गाया - - - ।'
- 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - 'पुष्प' - बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद्', पृ० ३० ।

~~उनकी अपनी काव्य-परम्परा है~~ और उनकी गज़लों को कश्मीरी धुनों में गाने वाले असंख्य गायक और श्रोताओं के लिए यह लाक्षणिक पदावली पूरी तरह बोधगम्य है । कश्मीर में `बुलबुल` किसान-मज़दूर की झोंपड़ियों में घोंसला बनाकर बारहों मास निवास करते हैं, उनके दुख-दर्द, हंसी-खुशी, आशा-निराशा, प्रेम-उल्लास के सहभागी हैं ।[१] `महजूर` भविष्य में कश्मीर को ऐसा मधुवन बनाने के लिए उत्सुक हैं जहाँ जनता बिना किसी भय एवं शंका के जीवन व्यतीत कर सके । देशोद्धार के लिए `महजूर` अपने देश के माली (बागवान) के प्रति संकेत करते हुए लिखते हैं :-

`अरे माली, आ ! नव-बसन्त के सौन्दर्य से तू भी अपने उपवन का शृंगार कर ले । नव-बसन्त की नवीन आभा चारों ओर बिखेर दे । फूल खिल उठेंगे और बुलबुल उन्हें देखकर मस्त हो जाएगा और झूम उठेगा । इस समय उपवन की क्यारियाँ अस्त-व्यस्त दशा में पड़ी हैं । उपवन के इस वैधव्य पर ओस आँसू बहा रहा है और पुष्प भी चिन्तित हैं । तुम पुन: इन पुष्पों एवं बुलबुलों में नवीन प्राण फूँक दो ।`[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४६)

ऊपर लिखित काव्य पंक्तियों का अंग्रेज़ी अनुवाद भी किया गया है ।[३]

---

१. `साहित्यानुशीलन` - चौहान - `नयी कश्मीरी कविता` , पृ० १२४ ।

२. प० म० १, गीत १ ।

३. Arise, O Gardener !
Let these be a glory in the garden once again !
Let roses bloom again !
Let bulbuls sing of their love again !

(शेष अगले पृष्ठ पर)

`महजूर` अपने देश के `बुलबुल` को स्वच्छन्द रूप में विचरण करते हुए देखना चाहता है । वह उसकी मुक्ति के लिए व्याकुल है :-

` हे बुलबुल ! तुझे लोह श्रृंखलाओं से कौन मुक्ति दिला सकता है । तुम यों पिंजरे में कराह रहे हो । तुम्हें स्वयं अपने हाथों अपनी कठिनाइयों को दूर करना होगा ।`[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४७)

`बुलबुल` स्वयं अपने उपवन में पीड़ित है । हिंसक पक्षियों के कुचक्र एवं अनीतियाँ उसके जीवन को विशाक्त बना देती हैं । यह विचित्र बिडम्बना है कि :-

"प्रत्येक बसन्त ऋतु में यहाँ विदेशी पक्षी आते थे । कुछ दिनों फूलों के सौन्दर्य का पान करने के पश्चात् वे पुन: लौट जाते थे । बुलबुल इन पक्षियों का खूब अतिथि-सत्कार करता था । परन्तु अब इन पक्षियों के मन में कुटिलता समा गई है । उन्होंने मेरे उपवन का चप्पा-चप्पा अपने अधिकार में कर लिया । मेरे छोटे से घोंसले को नष्ट कर दिया और अब मेरे उपवन के नाश की तैय्यारियाँ कर रहे हैं । आज वे ही अतिथि इस उपवन के स्वामी को यहाँ से विदा कर रहे हैं ।`[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ३४८)

(पिछले पृष्ठ का शेष)

The garden in ruins,
the dew in tears, the roses in tattered leaf -
let roses and bulbul be kind
led a new with life !
Kashmiri Lyrics - Selected and translated by J.L. Kaul,
Page 121.

१. प० म० १, गीत १ ।

२. प० म० २, गीत ८ ।

तब से इनकी अनीतियाँ बढ़ती ही गयीं और आज यह दशा है कि-

'ऊपर हिंसक पक्षी और नीचे बिल्लियाँ मेरी ताक में हैं अब मैं फूलों की डालियों में छिप-छिप कर कितने समय तक अपने आप की रक्षा कर सकता हूँ। उन्होंने ऊँचे-ऊँचे चिनारों पर अपने घोंसले सजा लिये हैं और तब से मैं अपनी दुर्दशा पर स्वयं लज्जित होकर दूर किनारे पर पड़ा हूँ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३४६)

श्री मही-उल-दीन हाजिनी ने लिखा है - 'अब कश्मीर का हर एक निवासी बुलबुल बन गया और कश्मीर उसके लिए फुलवारी जिसके प्रति विदेशी पक्षी ईर्ष्यालु हैं।'[२] बुलबुल के साथ विश्वासघात किया जाता है। उस निष्बुद्ध भोले-भाले मधुर-भाषी पक्षी की जीवन धाती लुट ली जाती है और तब वह सचेत हो जाता है :-

'मैं किसी के प्रण एवं आश्वासन पर अपने प्राण बलिदान कर देता परन्तु क्या कहूँ। उन आश्वासनों पर मुझे विश्वास नहीं आता।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३५०)

बुलबुल की करुण दशा पर कवि बहुत ही विचलित हो जाता है। आरम्भ में निराशा उसके हृदय में घर कर जाती है परन्तु कुछ समय के पश्चात् वह प्रतिकूल परिस्थितियों में समूल परिवर्तन लाने के लिए व्याकुल हो उठता है। वह एक नवीन संसार की कल्पना करता है जिसमें प्रत्येक वस्तु नवीन होगी।

---

१. प० म० २, गीत ८।

२. 'गुलरेज़' - मई १९६१ - 'हमारे आधुनिक काव्य की प्रवृत्तियाँ' - 'मही-उल-दीन 'हाजिनी', पृ० ११।

३. प० म० ३, गीत ११।

दासता का नाम नहीं होगा, गरीबी एवं विवशता नहीं होगी तथा वर्ग-विभाजित समाज नहीं होगा :-

`नया उपवन हो, जिसमें पुष्प भी नवीन हों और बुलबुल भी नये हों । नये मधु के लिए नया ही साक़ी होना चाहिए । यह संसार ही नवीन होना चाहिए था जिसमें नवीन आकाश हो, नवीन प्रकाश हो और नवीन धरती हो । इस नवीन संसार में प्रात:काल एवं सांयकाल भी नवीन होने चाहिए ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३५१)

परन्तु इस नव-निर्माण के लिए अपार शक्ति , संघर्ष एवं बलिदान की आवश्यकता है । कवि राष्ट्रीय हित के लिए महान कर्त्तव्य की ओर संकेत करते हुए लिखता है :-

`मेरे उपवन की कलियाँ सूख गईं क्योंकि कुँए में पानी कम पड़ गया है । मुझे आकाश पर बादल बनकर चढ़ना है और वर्षा की झड़ी बरसानी है ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३५२)

श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है – ' महजूर ने प्रतिकूल परिस्थितियों से विवश होकर प्रतीकों एवं संकेतों का सहारा लिया और `गुल` व `बुलबुल` की प्राचीन परम्परागत उपमाओं द्वारा नवीन संकेत किए और इस प्रकार कश्मीरी काव्य में राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति होने लगी ।'[३] `गुल` और `बुलबुल` के अतिरिक्त `महजूर` ने अन्य अनेक संकेतों द्वारा देशवासियों को तत्कालीन दूषित व्यवस्था के प्रति सचेत रहने के लिए एवं उसके विरुद्ध संघर्ष

---

१. प० म० ३ , गीत ११ ।

२. प० म० २, गीत ६ ।

३. `महजूर` - `पुष्प` , पृ० १७ ।

करने के लिए प्रोत्साहित किया :-

"तुम अपने उपवन की शोभा पर अभिमानित हो रहे हो परन्तु तुम्हें अपने परिणाम की कोई ख़बर नहीं । इस उपवन की उपज को लेने के लिए सौदागर (ग्राहक) प्रतीक्षारत हैं । फिर भी तुम अकेले उपवन में इस दुर्दशा पर अश्रु नहीं बहा रहे हो । तुम्हारे साथ 'महजूर' भी रो रहा है, उसे भी वही दुख है । वास्तव में वह तुम्हारा सम-दुखी है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३५३)

देशवासियों की निराशा पर कवि महोदय खीझ उठता है । वह उन्हें उज्ज्वल भविष्य के निर्माण हेतु आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के लिए प्रेरित करता है । स्वयं उन का दृढ़ विश्वास है :-

"इस उपवन के अचूक निशानाबाज़ वैरिल (हिंसक) पक्षियों का नाश करेंगे । हे बुलबुल । तुम निराश एवं चिन्तित न होना । तू अपने पर तौल । भविष्य में तुम्हारे ही धर्म का पालन होगा यदि फूलों की डालियाँ पतझड़ के भयंकर झंझावात को सहन करेंगी तो बसन्त किसी दिन अवश्य आएगा तभी पूरी पुष्पता होगी । अन्त में वही आनन्दित एवं आह्लादित होंगे जो इस समय कठिनाइयों को सहर्ष सहन करेंगे । कोह सारों की चोटियाँ जगमगा उठी हैं । गुलेलाला प्रेम-शिखा जलाएँगे और उस प्रकाश से सारा आकाश जगमगा उठेगा । यासमीन के पुष्प शबनम की हाला प्यालियों में उँडेल देंगे । 'महजूर' के कथन का मर्म समझ लो। वह स्पष्ट कह देता परन्तु गोपन-भेद सभी को नहीं कहा जा सकता । बुद्धिमान व्यक्ति उसकी बातों को समझ लेंगे , परन्तु मूर्ख उसकी बातों को टाल देंगे ।"[२] (देखिए परि०२,क्रमांक३५४)

---

१. प० म० ६, गीत ३२ ।

२. प० म० ६, गीत ३४ ।

'महजूर' यह भली-भाँति जानता है कि पतझड़ और सर्दियों के पश्चात् बसन्त का उल्लास चारों ओर फैल जाएगा। यह एक प्राकृतिक नियम है, प्राकृतिक परिवर्तन है। 'महजूर' जो परिवर्तन लाना चाहते हैं उसकी ओर संकेत वह इसी प्राकृतिक परिवर्तन के द्वारा करते हैं। वह अपने देश को ऐसे उपवन के रूप में देखना चाहता है जहाँ 'गुलेलाला', सदाबहार और श्याम-सुन्दरी के फूल अपनी सौन्दर्य छटा एवं सौरभ बिखेरते हों।[१] दासता के इस दयनीय वातावरण में कहीं से अन्धकार को चीरती हुई अबाबील की ध्वनि सुनाई दी :-

'प्रात: अबाबील की ध्वनि जब मेरे कानों में सुनाई दी तो मैं समझ गया कि शिशिर बीत चुका है और अब बसन्त का उल्लास चारों ओर छाया है।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३५५)

अत्याचार एवं अनाचार अब अधिक देर तक टिक नहीं सकते क्योंकि स्वराज्य रूपी बसन्त के आगमन पर सर्वप्रथम इनका समूल नाश किया जाएगा। 'महजूर' अपने देशवासियों को क्षणिक असफलताओं में ढढिस एवं साहस बाँधते हैं :-

'यदि श्रावण का यह उल्लास पतझड़ की वायु से समाप्त हो जाएगा और पुष्प भी मुर्झा जाएँगे परन्तु यहाँ पतझड़ को भी अधिक देर रहना नहीं है यह तथ्य ध्यान देने योग्य है।'[३] (देखिए परि०२,क्रमांक ३५६)

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८७।

२. प० म० ४, गीत २०।

३. क० म० ६, गज़ल ४१।

'महजूर' के साथ उनके समकालीन कवि स्वर्गीय 'आज़ाद' ने भी राष्ट्रीय काव्य में संकेतों का सहारा लिया है। ग्रीष्म-ऋतु के आगमन पर नवीन आशा का अंकुर उनके हृदय में फूट पड़ा है :-

'तनिक ग्रीष्म-ऋतु को आने दो। यह 'यख' (बर्फ) की मूर्तियाँ एवं भवन समूल नष्ट हो जाएँगे। बसन्तकाल में बादलों के गरजने से पर्वतों से बर्फ के विशालकाय ढेर टुकड़े-टुकड़े होकर नीचे गिर जाएँगे।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ३५७)

'महजूर' ने 'नया-कश्मीर' के निर्माण की ओर भी संकेत किया है।[२] स्वतंत्रता आन्दोलन में जब कभी भी कोई विशेष अवसर आया तो 'महजूर' ने अपनी लेखनी द्वारा उसमें सक्रिय योगदान दिया और भविष्य के उज्ज्वल चित्र प्रस्तुत करके हमारा साहस बंधाया।[३] फिर भी देशवासियों को सचेत रहने के लिए 'महजूर' हर समय चेतावनी देते हैं :-

---

१. 'आज़ाद'- 'पुष्प' - 'वतनुक सोज़', पृ० ४८।

२. 'The background to the New Kashmir idea is clearly mirrored, by the Kashmiri Poets of the ~~Perivd~~ Period; and Mahjoor, the foremost among them, waxed eloquent over the theme. He sang of 'The New Time Coming' in warm strains'.
'Kashmir today' September, 1957, 'New Kashmir in Kashmiri verse' Pushp - Page1.

३. उपवनों में पुनः हरियाली छा जाएगी और हमारी सब अभिलाषाएँ पूरी होंगी। 'सोम्बुल' पुष्पों के घायल-हृदय निरोग हो जाएँगे।' (देखिए परि० २, क्रमांक ३५८) - 'तामीर -'महजूर'-अंक - 'गर्ल्ज़ स्कूल' - , पृ० ७७.

`बुलबुल-फील में बाढ़ आगई है और इसके साथ ही भयंकर आँधी की सम्भावना है । अभी किनारा ( लक्ष्य ) बहुत दूर है तनिक सोच समझकर नैया को बीच मंझधार में उतारना ।`[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३५६)

शिशिर की समाप्ति पर बुलबुल के हृदय में एक विचित्र उल्लास छा जाता है ।[२] कवि महोदय का विश्वास है कि जो इन संकटकालीन दिनों में तन, मन एवं धन से आन्दोलन में सहायक सिद्ध होंगे, विजय-श्री अन्त में उन्हीं के चरण चूमेगी । आग से खेलने वालों को मृत्यु का क्या डर :-

`"बुलबुल चैत्र मास की समाप्ति पर हर्षोल्लास से मत्त घूम रहा है । बसन्त की बयार किसी के आगमन के लिए मन्द गति से बह रही है । पतझड़ में पुष्प डालियाँ सूख जाती हैं परन्तु बसन्त में पुन: उनमें नवीन प्राणों का संचार होता है । इस प्रकार मृत्यु के पश्चात् पुन: उनमें जीवन संचार होता है । अत: मृत्यु का भय छोड़ दे ।`[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६०)

इस युग में `महजूर` के पुष्पों की महक तथा बुलबुल की चहक में प्रणय की भावना न रही, यहाँ उन का बुलबुल स्वतंत्रता का गाहक और बागबान जनता का शुभचिन्तक है ।[४] प्रात:काल जड़ एवं चेतन में नव-स्फूर्ति भर देता

---

१. प० म० ५, गीत २७ ।

२. `मुझे ऐसा लगा जैसे कवि स्वयं बुलबुल बन कर अपने देश के गुलों की शताब्दियों की निद्रा भंग कर रहा है ।` €
   - `महजूर` - मेरी नज़र में` - `पुष्प` - `तामीर` - 'महजूर'-अंक, पृ० ८ ।

३. क० म० ६, गज़ल ४१ ।

४. `योजना` - मार्च १९६२ , `महजूर`-एक अध्ययन - सुश्री कृष्णा कौल, पृ० २४ ।

है । अरूणोदय के समय चारों ओर ऊषा की लाली एवं रवि की सुनहली किरणें फैल जाती हैं । प्रात:काल हमारे लिए नवीन आशा का सन्देशवाहक है परन्तु सत्ताधारियों को प्रात:काल अनेक चिन्ताओं के कारण दु:खदायक प्रतीत होता है । `महजूर` इन सत्ताधारियों को `उलूक` की संज्ञा देता है :-

`प्रात:कालीन वायु ने उपवन में जब प्रवेश किया तो अपने साथ उपवन के पुष्पों के लिए शान्ति का सन्देश लेकर आया परन्तु उल्लुओं के लिए वही दुख का कारण बना ।`[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६१)

सामंती व्यवस्था के शासकाधिकारी जनता की आशाओं पर अपने कुचक्रों एवं दुष्कृत्यों से पानी फेर देते हैं । वे उनके आन्दोलनों को कुचल डालते हैं और नृशंस होकर बर्बरता के साथ उनसे व्यवहार करते हैं :-

`जब उपवन में कुछ हरियाली आ गई तो पुष्पों के होठों से स्मित प्रस्फुटित होने लगी । परन्तु तत्काल `हालव` ( घातक जीव ) आ पहुँचे और मैंने देखा कि पुन: मेरे उपवन में धुआँ उठ रहा है ।`[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ३६२)

कवि `आज़ाद` देशवासियों को इन शत्रुओं पर बिजली के समान कड़कने के लिए ललकार रहा है ।[३] और `महजूर` को पूर्ण विश्वास है कि इनका नाश

---

१. प० म० ५, गीत २६ ।

२. प० म० २, गीत ८ ।

३. `तुम बिजली के समान कंटीली झाड़ियों पर गिर पड़ो, इस प्रकार पुन: सोत्साह अपने शत्रु पर वार करो । फुलवाड़ियों में भय सदा के लिए दूर हो जाएगा, उनकी अभिलाषा पूर्ण हो जाएगी । हे देशवासी । जागृत हो जाओ ।` (देखिए परि० २, क्रमांक ३६३)

- `आज़ाद` - `पुष्प` , पृ० ४६. `गफ़्लता बेदार`

निकट भविष्य में अवश्य होगा :-

"शिशर समाप्त हो जाएगा, सारी बर्फ पिघल जाएगी । बसन्त अवश्य आएगा अत: हे देशवासियो ! तुम प्रेम के साज़ को तैयार रखो ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३६४)

इस प्रकार विभिन्न संकेतों द्वारा कविवर `महजूर` ने गुल और बुलबुल की ओट में, बसन्त और पतझड़ के सहारे बाग और `बागवान` के उज्ज्वल भविष्य के गीत गाए हैं । डा० पद्मनाथ गुँजू ने मुझे अपनी एक भेंट में बताया - `महजूर` के काव्य में राष्ट्रीय-भावना आरम्भ में अप्रत्यक्ष रूप से संकेतों के माध्यम से प्रकट हुई है ।[२]

(व्यक्ति) शख्सी-राज्य पर आक्रोश : जागरण गीत

हमारा देश बहुत समय से सामन्ती व्यवस्था के साथ-साथ रेज़िडन्ट-शाही के छलबल एवं शोषण का शिकार बना हुआ था । देश की सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में अनेक प्रकार के दोष वर्तमान थे । शख्सी-राज्य की अनीतियों के परिणामस्वरूप विद्रोह की अग्नि भीतर ही भीतर सुलग रही थी । २०वीं शताब्दी[३] के आरम्भ से ही देश में राज्य के विरुद्ध विद्रोह

---

१. प० म० १, गीत ३ ।

२. डा० पद्मनाथ गुँजू से ३०-५-६५ को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात ।

३. 'The end of the 19th and the beginning of the 20th century was the period of national rebirth and political consciousness in Kashmir as in the rest of India.'
'Kashmir' - May, 1958 - 'Singer of Kashmir's Freedom. Farooq A. Qureshi, Page 139.

की भावना मधुर उभार के साथ उठ रही थी, और यदाकदा राज्य-नियमों का उल्लंघन भी होने लगा । उपेक्षित जनता की ओर से शासक अधिकारियों को आरम्भ में कोई विशेष भय न था परन्तु धीरे-धीरे सत्ताधारी सचेत होने लगे और उन्होंने अपनी दमन नीति को तेज कर दिया । `महजूर` अन्याय एवं शोषण को सहन न कर सके और उन्होंने राज्य के विरुद्ध देशवासियों को संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया । इन गीतों में जहाँ एक ओर राज्याधिकारियों पर कठोर व्यंग्य किए गए हैं वहाँ दूसरी ओर उनकी छलकपट लीलाओं का भी सजीव चित्रण मिलता है । `महजूर` एक नवीन राज्य-व्यवस्था का स्वागत करते हैं :-

`इस संसार में यह प्राचीन राज्य-प्रणाली रूढ़ पड़ गई है । अब नये राज्य-नियम बनने चाहिये, नये दफ्तर और नये राज्य-दरबार होने चाहिए।`[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३६५)

श्री अब्दुल अहद `आज़ाद` ने लिखा है – `किसी को विलास के सभी उपकरण प्राप्त हैं । मदिरापान में मस्त हैं और अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए सभी वस्तुएँ उसे मिलती हैं परन्तु कोई दु:ख एवं विवशता के कारण कराह रहा है । उसकी उत्कट अभिलाषाएँ अश्रु द्वारा व्यक्त होती हैं । आहें भर-भर कर वह जीवन-निर्वाह करता है और जीविकोपार्जन में असफल होकर वह जीवन से निराश होता है ।`[२] `महजूर` इन निराश व्यक्तियों में पुन: आशा का संचार करता है । वह उनको विश्वास दिलाता है कि निकट भविष्य में सत्ताधारियों के विशाल भवन चूर-चूर हो जाएँगे ।

---

१. प० म० ३, गीत ११ ।

२. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` भाग १ - 'आज़ाद', पृ० १६५-१६६ ।

उनकी हिंसक नीतियाँ असफल हो जाएँगी और वे पछाड़ खाकर बीच रण-क्षेत्र में दम तोड़ देंगे :-

'तुमने बड़े बड़े पूंजीपतियों को देखा है परन्तु अन्त में वे जीवन में कभी सफल नहीं हुए हैं। वे हाथियों पर चढ़ कर आए परन्तु अन्त पर नंगे पाँव यहाँ से चले गए।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६६)

श्री चौहान ने लिखा है – 'गुलाम देशों में स्थापित पूंजीवादी-सामंती-व्यवस्था की दुरंगी नैतिकता, दुरंगे इंसाफ, शोषण-दोहन और जंगबाज़ साम्राजियों की तबाहकारियों का कच्चा चिट्ठा खोलते हुए 'महजूर' ने जनता की मर्मान्तिक वेदना के एहसास को अपनी कविता 'गुल्लेलाला' में अत्यन्त मार्मिकता से व्यक्त किया है।'[२] इस कविता में 'महजूर' ने अत्यंत मार्मिक ढंग से युगीन परिस्थितियों का सजीव चित्रण किया है एवं राज्याधिकारियों के दुष्कृत्यों का पर्दाफाश किया है। 'महजूर' 'गुल्लेलाला' से कहता है :-

'क्या वहाँ भी मनुष्य जीव-हत्या के लिए शस्त्र बना रहा है ? क्या वहाँ भी स्त्रियों एवं अबोध बच्चों पर बम गिराए जाते हैं ? क्या वहाँ भी राज्य-नियम ~~स्वेच्छाचार~~ अभियोगी को उसके बन्ध-बान्धुओं सहित नष्ट कर देते हैं ? क्या वहाँ भी निर्दोषी के सगे सम्बन्धी शोषित किए जा रहे हैं ? क्या वहाँ भी अन्यायी एवं अत्याचारी उन लोगों को लोह-श्रृंखलाओं में जकड़ देते हैं जो निर्दोष जनता का पक्ष लेते हैं ? क्या वहाँ भी समय के परामर्शदाता एवं बुद्धिमान लोग शोषक को विशालहृदयी कहते हैं।'[३] (देखिए

---

१. प० म० ३, गीत १४।
२. 'साहित्यानुशीलन' - शिवदानसिंह चौहान - 'नयी कश्मीरी कविता' पृ० १२५।
३. प० म० ५, गीत २२।

परि० २, क्रमांक ३६७)

'महजूर' ने स्वयं देखा था कि किस प्रकार शक्सी-राज्य के अधिकारी अन्याय एवं अत्याचार के सहारे किसान-जीवन को कलुषित बना रहे थे। उन्हें स्वयं अधिकारियों के घृणित कृत्यों का कटु अनुभव था। 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति को अपना कर वे कश्मीर को पृथ्वी का नरक बना रहे थे। निरन्तर शोषण का यह परिणाम हुआ कि :-

'कुछ झाड़ियों में छिप गए, कुछ दीवारों की आड़ लेकर बैठे और कुछ दूर बनों में भाग गए। इस तरह देशवासियों ने अपने प्राणों की रक्षा की। इस उपवन के अनेकों पक्षियों की हत्या करके उन्होंने इसे उजाड़ दिया। बुलबुलों के घोंसले उन्होंने जला दिए और कलियाँ समूल उखाड़ फेंकी।'[1] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६८)

उनके घृणास्पद कुकर्मों के परिणामस्वरूप यह जननी कलंकित हो गई है और 'महजूर' इस कलंक को धोने के लिए देशवासियों के पुरुषत्व को ललकार रहे हैं। 'महजूर' के विचारानुसार जीवन का महान लक्ष्य मनुष्यत्व के उच्चादर्शों को प्राप्त करना है। वे सत्ताधारियों के दानवी रूप में परिवर्तन लाने के लिए व्याकुल हैं :-

'शत्रु को धरती पर गिराकर अपने शारीरिक बल का महान परिचय देते जाना। इस प्रकार अपने समय का सब से बड़ा पहलवान बन जाना। तुम सब कुछ बन सकते हो - परिश्रम एवं अध्यवसाय के बल पर। परन्तु इन सबके अतिरिक्त तुम्हें और कुछ भी बनना है और वह है - वास्तविक रूप में एक

---

१. प० म० २, गीत ८।

मनुष्य ।[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६६)

'महजूर' अच्छी तरह समझ चुका था कि प्रेम ही भिन्न-भिन्न जातियों को एक दूसरे के निकट लाकर उनमें मानवीय सम्बन्ध स्थापित करता है ; और सहजातीयता की नींव डालता है ; यह सहजातीयता कश्मीर जनता की चिरकालीन विशेषता रही है ।[२] परन्तु वर्तमान काल में देशवासियों के परस्पर गृह-कलहों को देखकर कवि हृदय मसोस कर रह जाता है । वह उन्हें अपनी स्थिति पर सोच विचार करने के लिए बाध्य करता है :-

'मेरे उपवन के सौन्दर्य से पराए और अपरिचित जन आनन्दित होते हैं । वे ही इसका सौन्दर्य पान करते हैं परन्तु यहाँ के निवासी इस सौन्दर्य-पान से वंचित रहते हैं । अपरिचित जन यहाँ के फूलों एवं नदियों के किनारे घूमते हैं और उन्हें मन: शान्ति मिलती है ।[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ३७०)

सामाजिक-राजनीतिक प्रतिबन्धों और वर्जनाओं में जकड़ी-डूबी जनता बिना आज़ाद हुए अपनी प्रतिभा का विकास कैसे कर सकती है ? कैसे आधुनिक बन सकती है, यह प्रश्न उनके सम्मुख बराबर उठा और 'महजूर' ने जनता को पहले जागृत करने के लिए उनकी वर्तमान भाव-चेतना को ही अपनी कविता का माध्यम और बाहक बनाया है । इस भाव-चेतना को वे कुरेदते हैं, मुक्ति - कामना के अनेक कण अग्नि स्फुलिंग से चमक उठते हैं और पास के बुझे सुप्त कणों में ज्योति जगा देते हैं ।[४] बसंत की बयार जिस प्रकार उपवन की सुरभाई

---

१. प० म० २, गीत १० ।

२. 'महजूर' की कविता में नया कश्मीर' - 'पुष्प' - हिन्दी गद्य प्रवेशिका, पृ० १५१ ।

३. प० म० २, गीत ६ ।

४. 'साहित्यानुशीलन'- शिवदानसिंह चौहान , पृ० ११७ ।

कलियों के लिए श्री सौरभ का सन्देश लेकर आती है, ठीक उसी प्रकार 'महजूर' देशवासियों के लिए जागृति का सन्देश लेकर आया :-

"महजूर ! तुम भी बसन्त की वायु बन जाओ और अपने उपवन की तरफ तनिक देख तो लो । तुम भी निद्रा में मस्त जनता को जगाते जाओ। और देशवासियों की नैया को पार लगाओ ।"[१] (देखिए परि०२,क्रमांक ३७१)

वे जनता को कन्धे पर बन्दूक सम्भाल कर मातृभूमि की रक्षा एवं उद्धार के लिए रण-क्षेत्र में कूद पड़ने का आग्रह करते हैं । कश्मीरवासी सदा अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध रहे हैं, अत: पूर्वजों के उज्ज्वल नाम को जीवित रखने के लिए 'महजूर' अपने देशवासियों की सिंह-गर्जना सुनने के लिए व्याकुल हैं :-

"'फिरन' को छोड़ दो । तुम सैनिक बन जाओ । मशीनगन एवं रफल (बन्दूक) चलाना सीखो । अपने देशवासियों में नवीन प्राण फूँक दो । अपने देश को जगाओ । इतिहास में अपना नाम अमर कर दो ।"[२]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३७२)

'महजूर' के साथ साथ श्री आरिफ[३] एवं स्वर्गीय परदेसी[४] ने भी

---

१. क० म० ६, ग़ज़ल ५६ ।

२. प० म० ६, गीत ३१ ।

३. 'जो कुछ भी राजा आज तक भूल गया था ; यदि कहीं उसने अकारण शोषण कम किया था और एक सौ वर्ष में अगर शोषण में कहीं कुछ कसर रह गई थी ; आज निर्दयी वह इसको पूरा कर रहा है । कुम्भी के समान यह निर्दयी आज पृथ्वी में से निकल रहे हैं । हलाकू और चंगेज़ खाँ

(शेष अगले पृष्ठ पर)

सामंती राज्य के विरुद्ध अग्नि विस्फोटक बाण चलाए । सामंती व्यवस्था का समूल नाश ही उनका जीवन-लक्ष्य बन गया है और `महजूर` इस लक्ष्य की प्राप्ति में मृत्यु को भी वरदान स्वरूप स्वीकार करता है :-

"मृत्यु से क्या डरना, मृत्यु तो एक प्रकार का वरदान है ।"[१] (देखिए परि० २ , क्रमांक ३७४)

समय के साथ साथ सामंती राज्य से छुटकारा पाने के लिए कश्मीरियों का संघर्ष उत्कर्ष पर जा पहुँचा । `महजूर` ने युग की मांग को समझा और अपनी कविता का प्रमुख विषय जन-आन्दोलन बनाया । `महजूर` शोषकों को सचेत करते हैं, वे उन्हें अपनी राज्य-नीति में परिवर्तन लाने की सम्मति

(पिछले पृष्ठ का शेष)

के समान इन की टोली में कुछ राज्य अधिकारी भी मिल गए । शोषण का चक्र दिनप्रतिदिन बढ़ता गया और देशवासियों का रक्त भीतर ही भीतर उबलने लगा । इतना होने पर भी हमारा दल आगे ही आगे बढ़ता गया ।" (देखिए परि०२, क्रमांक ३७३)

- गाए जा कश्मीर` - `सोन कारवाँ` , पृ०४१-४२.

४. "लड़ेंगे हम लुटेरों और हमलाआवरों के साथ
लड़ेंगे ज़ालिमों के साथ और जाबिरों के साथ
वतन फरोश बेवफाहओं और शातिरों के साथ
कदम कदम बढ़ेंगे हम महाज पर लड़ेंगे हम ।"

- `वतन की पुकार` - संकलनकर्ता-मुहम्मद यूसुफ टेंग -
` कदम कदम` - प्रेमनाथ परदेसी , पृ० ७ ।

---

१. क० म० ८ , गज़ल ५१ ।

देते हैं ।[१] परन्तु उनके वचन शासकों के लिए कटु सत्य होते हुए भी व्यर्थ थे । सन् १९३१ के भयंकर आन्दोलन के पश्चात् मई सन् १९४६ में नेशनल कांफ्रेंस ने 'कश्मीर छोड़ो' आन्दोलन छेड़कर महाराजा से कश्मीर का सम्पूर्ण शासन जनता के हाथ में सौंप देने की माँग की ।[२] श्री मणिराम 'कंवन' ने लिखा है - 'कश्मीर छोड़ो' आन्दोलन चलते ही कश्मीर में दमन और आतंक का दौर-दौरा फैल गया । हज़ारों कार्यकर्ताओं को कुछ घण्टों में ही कश्मीर के नेताओं के साथ गिरफ्तार कर लिया गया ।[२] परन्तु 'महजूर' को विश्वास था कि :-

'यह चंगेज़खानी-युग अब समाप्त हो जाएगा और अब मेरा ही प्रभुत्व

---

१. 'Mahjur gives warning to the exploiters of the land that times are coming when the down-trodden would rise against tyranny and oppression and the just rights of the people would be recognised and the oppressors would better change with the changing times.'

'Kashmir:its cultural Heritage'

-By-Kaumudi - Page 89.

२. 'मार्गदर्शक' - 'जम्मू कश्मीर-विशेषांक' अगस्त १९६५ - 'कश्मीर छोड़ो आन्दोलन' - मणिराम 'कंवन', पृ० १० ।

स्थायी रूप में रहेगा । अब उल्लू को अपने उपवन में कौन रहने देगा ? मेरा शाहबाज़ उसे अपने पंजों से घायल कर देगा ।"[१] (देखिए परि० २, क्र० ३७५)

श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'सचमुच उन दिनों ग़ैर-रियासती प्रशासकों, ठेकेदारों, व्यापारियों आदि ने हमारी धरती के बेटों की निश्छलता का ख़ूब लाभ उठाया था और उसकी एकता असम्भव बनाने की जी-तोड़ कोशिश भी की थी ।"[२] सामूहिक हित के लिए 'महजूर' देशवासियों को एकता, भाई-चारे एवं सहिष्णुता का पाठ पढ़ाते हैं और स्वत्व-प्राप्ति के लिए अनुत्तर-दायी शासन-व्यवस्था के भीषण प्रकोप को हँसते-हँसते झेलने के लिए प्रेरित करते हैं । अब इनका राज्य अधिक समय तक टिक नहीं सकता, क्योंकि :-

"संसार में यह बात स्पष्ट हो गई कि शोषण अधर्म है ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३७६)

जब भयंकर आन्धी के कई थपेड़ों ने उस शासन-व्यवस्था को ढीला कर दिया तो 'महजूर' के भावी धुँधले स्वप्न यथार्थ में परिवर्तित होने लगे:-

"सात वर्ष पूर्व जो बात 'महजूर' ने कही है वही अब पूरी हो जाएगी । पतझड़ की घातक वायु से पूंजीपति पीले होकर धराशायी हो जाएँगे ।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ३७७)

---

१. प० म० ५, गीत २३ ।
२. 'हिन्दी गद्य प्रवेशिका' - 'पुष्प' - 'महजूर की कविता में 'नया कश्मीर' पृ० १५४ ।
३. प० म० ४, गीत २० ।
४. प० म० ५, गीत २५ ।

शताब्दियों की दासता के कारण देश में नैराश्य-पूर्ण वातावरण था। देशवासियों की दशा भेड़-बकरियों के समान थी। इस पर भी कोई उफ़ तक नहीं कर सकता था।[१] 'महजूर' के अतिरिक्त स्वर्गीय 'आज़ाद' ने भी दासता के अनेकों सजीव चित्र खींचे हैं।[२] 'महजूर' इस अपमान को मूक रहकर पीना नहीं चाहता, वह इस मधुर हलाहल-पान के विरुद्ध आन्दोलन में सहयोग देता है। 'स्वराज्य मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है।' 'महजूर' उच्च-स्वर में पुकार उठता है :-

"मुझे यही तथ्य कश्मीरियों के कानों तक पहुँचाना है।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३७६)

वीर-पूजा :

राष्ट्रीय संग्राम में सक्रिय भाग लेने वाले राष्ट्रीय वीरों की अभ्यर्थना भी 'महजूर' ने अपने काव्य में यत्र-तत्र की है। उन वीरों के महान त्याग, बलिदान एवं कर्त्तव्य-पालन की मुक्त-कंठ से प्रशंसा कवि महोदय ने की है। उनके

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - 'आज़ाद' (भाग १), पृ० १६६।

२. 'दासता स्वर्ण को पीतल बना देती है। जिनका आसन सब से नीचे होना चाहिए था उन्हें ही दासता शीर्ष पर बिठाती है। जिन्हें स्वर्ग की अप्सरा मधुकलश लेकर सेवा में होनी चाहिए थी उन्हें ही यह दासता हृदय-रक्त पिलाती है।" (देखिए परि०२, क्र०३७८)

- गाए जा कश्मीर' - 'गुलामी' - 'आज़ाद', पृ० ६५.

३. प० म० २, गीत ६।

आत्म बलिदान ने अनेकों अन्य देशभक्तों को रण-क्षेत्रों में जूझने के लिए प्रेरित किया, उनकी कायरता को ठेस पहुँची और वह आग की भट्ठी में परीक्षा के लिए कूद पड़े। शहीदों के प्रति आदर, सम्मान एवं श्रद्धा के सुमन समर्पित करते हुए 'महजूर' ने अनेक राष्ट्रीय-गीत लिखे हैं। उन्होंने जनता के सुषुप्त वीरत्व को ललकारा और मानव-कल्याण हेतु जन-आन्दोलन में सक्रिय सहयोग प्रदान किया। इन गीतों की प्रतिध्वनि सुनकर सामंती-व्यवस्थापक कंपित हो उठे।[१] 'महजूर' की वीर-प्रशस्तियों में कृतज्ञता, विनय एवं समर्पण की भावना प्रधान है, परन्तु ललकार की गूँज भी कम नहीं है :-

" हे कश्मीरी जन ! तुम बाहर निकल आओ और अपने वीरत्व का प्रदर्शन करो। हे साहसी वीर ! तुम बाहर आकर अपनी बहादुरी को दिखाओ। कार्य-सम्पन्न करने में अनेक बाधाएँ (पर्वत शृंग) आएँगी परन्तु तुम सिंह के समान छलांग मार कर ऊपर आजाओ। इस प्रकार तुम पर्वतों को भी लाँघ कर आगे बढ़ो। कोई तुम्हारे रास्ते को रोक न ले। तुम आगे बढ़ो।"[२]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३८०)

अपने देशवासियों के अदम्य साहस को देखकर कवि राष्ट्र के अशुभ-

---

१. 'सहस्रों वक्षों से गूँजते हुए यह राष्ट्रीय गीत स्वतंत्रता के शत्रुओं के हृदयों को सहस्रों मशीन गनों की गड़गड़ाहट से भी अधिक कंपा सकते हैं। इस-लिए कि जो जनता राष्ट्रीय आपदा के समय भी देश-प्रेम के गाने गा सकती है उसकी आत्मा जीवित है।'
- गाए जा कश्मीर' - भूमिका , पृ० १०।

२. प० म० ६, गीत ३५।

चिन्तकों को उनकी धूर्तता पर धिक्कारते हैं । `हम सर कटाना जानते हैं, सर झुकाना नहीं ।` इसी तथ्य को `महजूर` कलात्मक ढंग से स्पष्ट करता है :-

` तुम हमारे साहस की परीक्षा कब तक लेते रहोगे । हम तो मृत्यु की शरण लेंगे परन्तु आततायी के सामने शीश नहीं झुकाएँगे ।`[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३८१)

`महजूर` के समकालीन स्वर्गीय आज़ाद ने भी ऐसी ही भावनाओं को अभिव्यक्त किया है ।[२] `महजूर` ने यहाँ तक स्पष्ट रूप से कह दिया कि :-

`अगर शत्रु यमराज के समान आक्रमण बोल देगा तो उसको पराजित करके पर्वत-शृंगों के पार मेरे देश-वासी फेंक देंगे ।`[३] (देखिए परि० २ , क्रमांक ३८३)

स्वर्गीय मुहम्मद मक़बूल `शेरवानी` के आत्मबलिदान ने `महजूर` को विशेष रूप से प्रभावित किया । `शेरवानी` के अतिरिक्त मास्टर अब्दुल अज़ीज़ एवं पुष्कर नाथ ज़ाडू के शौर्यपूर्ण बलिदान से उनके हृदय में आशा की

---

१. प० म० ५ , गीत २५ ।

२. `दुख की अग्नि को जो वक्ष में सहलाता रहेगा, वह दूसरों की शरण में क्यों जाएगा । बाणों एवं बर्छियों का वार जो वक्ष पर सहन करता है वह उबलती कड़ाही से क्यों डरेगा ।` (देखिए परि० २, क्रमांक ३८२)

- `आज़ाद` - `पुष्प` - पृ० ४८ ` वतनुक सोज़`

३. प० म० ५, गीत २३ ।

एक नवीन किरण फूट पड़ी जगा दी थी । शेरवानी के आत्म-बलिदान से द्रवित 'महजूर' नृशंस शत्रुओं की बर्बरता का उल्लेख इस प्रकार करता है:-

'यह ऐसी ही बात है मानो बुलबुलों पर बाण-वर्षा हो रही है । कांच के महल पर पत्थराव हो रहा हो । यदि तुम निशस्त्र न होते तो तुम्हें कौन मार सकता था । वास्तव में तुम्हारी अयोग्यता ने इन्हें सुअवसर प्रदान किया ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३८४)

'शत्रु ने जब देश पर आक्रमण किया तो कवि इसकी सूचना जनता को देते हुए उन्हें अपने पुनीत कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व की याद दिलाते हैं :-

'शत्रु की सेना आ पहुँची है । तुम उठो, सजग हो जाओ और अपने देश की रक्षा करो । 'कांगड़ी' एवं 'फिरन' को छोड़कर तुम कश्मीर के उज्ज्वल अतीत की रक्षा करो । तुम शीघ्र गति से कदम बढ़ाओ और साथ ही सजग भी रहो । तुम्हारे साथ तुम्हारी विजय-पताका है, इसकी भलाई के लिए तुम आगे बढ़ो और अपने वीरत्व का प्रदर्शन करो ।'[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ३८५)

श्री दीनानाथ 'नादिम' ने भी देशवासियों को शत्रु से जूझने के लिए प्रोत्साहित किया[३] और इधर 'महजूर' जनता से सेना में भर्ती होने के लिए विशेष आग्रह करते हैं क्योंकि यही समय की सबसे बड़ी आवश्यकता थी :-

---

१. 'गाए जा कश्मीर' - 'पैगाम शेरवानी' - 'महजूर' , पृ०५८-५९ ।

२. प० म० ६, गीत ३५ ।

३. 'तुम कश्मीर के वीर युवक हो, तुम्हें अपनी ध्वजा हाथ में लेनी है । देखो, तुम्हारी ओर सारा संसार देख रहा है । तुम कमर कस कर हाथ में धनुष लेकर आगे बढ़ो और हमारे भाग्य को उज्ज्वल करो । तुम देश के लिए अभिमान का कारण बन जाओ । तुम नेता बनकर जनता का पथ-प्रदर्शन करते जाओ ।' (देखिए परि०२, क्रमांक ३८६)

- 'गाए जा कश्मीर' - 'नहर-ए-इंकलाब' - 'नादिम', पृ० १९.

'तुम 'महजूर' के गीत पढ़ते रहना । तुम्हारा भय दूर होगा, तुम में इच्छा प्रबल होगी और तुम्हें आत्मिक बल प्रदान होगा । तुम भी सेना में मिल जाओ और गीत गाते-गाते आगे बढ़ो ।'[१] (देखिए परि०२,क्रमांक३८७)

कश्मीरी जनता के जीवन की कालरात्रि का अन्त निकट भविष्य में अवश्य होगा - यह सोच कर 'महजूर' देश-रक्षकों को राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक मानकर उनका अभिनन्दन करता है । उसे उनकी सफलता पर अडिग विश्वास है, इसी कारण संकटकाल में वह उन्हीं के भुज-बल पर अवलम्बित रहता है :-

' हे बहादुरो ! तुम शीघ्रातिशीघ्र रण-क्षेत्र की ओर चले जाओ । मधु-पान करते करते एवं गीत गाते-गाते आगे बढ़ो । तुम बाहर निकल आओ और अपने वीरत्व की धाक जमा लो । तुम वन के राजा के समान भयंकर रूप धारण करो और कूदते फपटते आगे बढ़ो ।'[२] (देखिए परि०२, क्रमांक३८८)

नवयुग का अभिनन्दन भी 'महजूर' ने विशेष रुचि के साथ किया है :-

'महजूर जब स्वतंत्र होकर उपवन में प्रविष्ट होगा तो 'पोशिनूल' पक्षी बाजे बजाएँगे और सुमन पूर्णरूपेण खिल उठेंगे ।'[३] (देखिए प०२, क्रमांक ३८६)

अत: यह स्पष्ट होता है कि 'महजूर' ने अपने राष्ट्रीय काव्य में

---

१. प० म० ६, गीत ३१ ।

२. प० म० ६, गीत ३१ ।

३. क० म० १०, गज़ल ६७ ।

राष्ट्रीय वीरों, सैनिकों एवं शहीदों की स्मृति में अनेक छन्द लिखे हैं । उनके प्रति श्रद्धा के सुमन अर्पितकिए हैं और इस प्रकार उऋण होने का प्रयास किया है ।

राष्ट्रीय काव्य में आशावादी सन्देश :

उज्ज्वल भविष्य के निर्माण हेतु क्रूर वर्तमान से निरन्तर संघर्ष के कारण देश-प्रेमियों का साहस टूट रहा था परन्तु 'महजूर' की गम्भीर वाणी ने उन्हें बलिवेदी पर हँसते-हँसते चढ़ने का आग्रह किया । उसे देश के उज्ज्वल भविष्य पर पूर्ण विश्वास था ।[१] परन्तु देशवासियों में अज्ञान एवं शोषण के कारण जो कायरता फैली हुई थी, वे उस पर व्यंग्यपूर्ण चोटें करते रहे । देश का भाग्योदय अवश्य होगा और तब उफक (क्षितिज) पर एक नवीन सूर्य चढ़ आएगा ।[२] उस सूर्य की किरणें अन्यायी एवं अत्याचारी

---

१. 'He was quite optimistic about the future of his land; he, therefore, assured the struggling victims: 'Winter will flee and snow will met away, and will come the spring:'
'Kashmir' - Feb. 1959; Page 29; 'Freedom in Kashmiri verse' - P.N. 'Pushp'.

२. 'In fact much of the recent Kashmiri poetry is dominated by the idea of what the common man is capable of achieving if a safe and favourable future is guaranteed to him. The Poet therefore sings of the bright sun appearing on the horizon with a new massage:'
'Kashmiri Litt.' - P.N. Pushp - Page 120.

के लिए घातक सिद्ध होंगी । भविष्य के सुनहले स्वप्नों की पूर्ति के लिए वर्तमानकाल में हलाहल का घूँट पीने के लिए कवि देशवासियों को ललकार रहे हैं । उनकी ललकार में आत्म अभिमान है, विद्रोह कीअग्नि है एवं देश के प्रति सच्ची लगन है । वे देशवासियों को विश्वास दिलाना चाहते हैं कि बहुत शीघ्र स्वतंत्रता देवी अपनी आभा समस्त देश में बिखेर देगी :-

"मेरे भाइयो ! दुख की चिन्ता मत करो, निराशा छोड़ दो, हम शीघ्र ही स्वतंत्रता देवी के दर्शन करेंगे । स्वतंत्रता ही हमारे सौभाग्य का कारण बन जाएगी । स्वतंत्र देश में हम सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करेंगे और अपना उत्पादन बढ़ाएँगे । कोई हमें कष्ट पहुँचाने का प्रयत्न नहीं करेगा । हम शीघ्र ही स्वतंत्रता देवी के दर्शन करेंगे । 'महजूर' बहुत पहले इस बात की ओर संकेत करता है कि अन्धेरे पर प्रकाश की विजय होगी । यह बात सत्य है जो उस्ताद कह गया कि हम शीघ्र ही स्वतंत्रता देवी के दर्शन करेंगे ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ३६०)

धार्मिक संकीर्णता के कारण परस्पर विद्वेष की भावना बढ़ रही थी । 'महजूर' इस तथ्य से भलीभाँति परिचित थे कि आन्दोलन की सफलता जनता के संगठन पर निर्भर है । शासकों की नीति 'बाँटो और राज्य करो' की थी । 'महजूर' भविष्य में कश्मीर को 'नन्दनवन' के समान देखना चाहता था । अत: उच्च कल्पना की पूर्ति के लिए उच्च आदर्शों को अपनाना नितान्त आवश्यक था । राष्ट्र की सुदृढ़ नीति के निर्माण हेतु परस्पर एकता एवं संगठन भी नितान्त आवश्यक है । कवि इस भयंकर रोग का उपचार करना चाहते हैं, नहीं तो आशा निराशा में परिवर्तित हो जाएगी :-

---

१. प० म० ६, गीत ३३ ।

'हिन्दू दूध के समान है और मुसलमान शक्कर । इस दूध और शक्कर को आपस में मिला दो । इस देश की नैया को पार करने के लिए मुसलमान हाथ में पतवार लेगा और हिन्दू नैया के सिरे पर बैठकर दिशा-निर्देश करेगा ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६१)

अपने जीवनानुभव के आधार पर कवि ने भविष्य-वाणी की थी कि देश का उद्धार बहुत शीघ्र होगा । श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'उन दिनों उसने सामूहिक आशावाद के जो नग्मे रचे उनमें कश्मीरी कविता एक नई लय से परिचित हो गई ।'[२] देशवासियों को अनेक विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ता था परन्तु 'महजूर' उन्हें शीश नवाने की सम्मति नहीं देते अपितु दुर्गम पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं । वह उनसे अचल शिला के समान दृढ़ एवं कठोर रूप धारण करने के लिए आग्रह करता है । 'महजूर' अपने सहगामियों के सम्मुख महान जीवन-लक्ष्य की ओर संकेत करते हैं :-

'तुम अपने आपको पतन के गर्त से निकाल लो और अपना निवास-स्थान ऊँचाई पर बना लो । क्योंकि सर्वप्रथम सूर्य का प्रकाश पर्वतमालाओं पर ही पड़ता है ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६२)

श्री श्रीनिवास लाहोटी ने लिखा है -- 'महजूर' की कविता में भविष्य का सन्देश भी निहित है । नव-युग से उनका अटूट सम्बन्ध है । इस प्रकार 'महजूर' के गीतों में काश्मीर की स्वतंत्रता एवं मुक्ति के संघर्ष की

---

१. प० म० २, गीत ६ ।
२. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - प्रो० 'पुष्प' , पृ० २१ ।
३. प० म० ४, गीत २० ।

तड़प मिलती है ।[१] 'महजूर' की दृष्टि यहाँ के दास्य-जीवन पर पड़ी परन्तु वे उस समय के लिए स्वागतार्थ प्रतीक्षारत रहे जब कि यही विभुक्षित जन-समुदाय मातृभूमि की नैया के खेवनहार बन जाएँगे । वे आने वाले कल की प्रतीक्षा सोद्देश्य करते रहे :-

"मैं आने वाले कल के उस शुभअवसर की प्रतीक्षा में हूँ जब कि मेरा उपवन स्वतंत्र हो जाएगा । मैं वही शुभ समाचार सुनना चाहता हूँ । मेरे प्रिय साथी ! ध्यानपूर्वक सेना, मैं प्रेम की कथा सुनाऊँगा ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६३)

हताश जन-समुदाय की किंकर्तव्य विमूढ़ता देखकर 'महजूर' उन्हें पुन: उत्साहित करते हैं । वे उनके हृदय में नवीन आशा का बीज बो देते हैं । वास्तव में यह निराशा बहुत समय से उनके हृदय में घर कर गई थी । उन्हें अपने भाग्योदय की कोई आशा नहीं थी परन्तु कवि महोदय की रचनाएँ मरुस्थल में जलस्रोत के समान नवीन आशा को बंधाती हुई जनता में लोकप्रिय हुई ।[३] वे इस सुनसान प्रदेश में स्वर्ग स्थापना की कामना करते हैं :-

---

१. 'तामीर' - 'महजूर'-अंक - १९५७ - 'कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि-महजूर - श्रीनिवास लाहोटी, पृ० २० ।

२. प० म० ३, गीत १३ ।

३. "There is a hidden message for the future in his poetry. His is not poetry of love or romance alone, nor even of roses and rivers inviting lovers into their midst, but a song of the changing times. Nature's elements, the rivers, the gardens, and the mountains are involved to answer not the call of beauty, but the call of action".
'Kashmir: its cultural Heritage'-By Kaumudi - Page 88.

'मैं एक ऊँचे टीले पर विश्राम हेतु सो गया परन्तु मेरा मन जाग्रत था । मैंने एक नवीन गीत सुना । हे मेरे प्रिय साथी ! ध्यानपूर्वक सुनो । मैं प्रेम की कथा सुनाऊँगा । प्रात:कालीन मन्द बयार उपवन को आने वाले कल का शुभ-समाचार सुना रही थी । तुम भी उसको सुनो, वास्तविक बात से परिचित हो जाओगे । 'वीरान (नष्ट-भ्रष्ट) उपवन पुन: फुलवाड़ी बन जाएगा । हे मेरे प्रिय साथी ! ध्यानपूर्वक सुनो, मैं प्रेम की कथा सुनाऊँगा ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६४)

'महजूर' पूर्णरूपेण विश्वस्त थे कि अनाचार एवं अत्याचार का युग निकट भविष्य में समाप्त हो जाएगा और जनता की आशाएँ पुन: प्रतिफलित हो उठेंगी ।[२] वे उस युग के लिए व्याकुल हैं, जब :-

'कुसुम ~~स्वं-कलियाँ~~ स्वयं अपना मूल्य परख लेंगे, और बुलबुल अपने मधुर गीतों पर भारी कर लगा देंगे । बहुत शीघ्र ही वह युग आएगा । हे मेरे प्रिय साथी ! ध्यानपूर्वक सुनो, मैं प्रेम की कथा सुनाऊँगा । काँटे उपवन की रक्षा करेंगे - चौकीदार के रूप में । और बल्लियाँ लेकर सब खड़े रहेंगे कि कहीं कोई मूर्ख फूलों को निष्प्रयोजन न तोड़े । डल-झील में डुबकी लगाने वाले तैराक जवाहिर निकालेंगे और झील-वुलर की गहराई में से मोती मिलेंगे।

---

१. प० म० ३, गीत १३ ।

२. 'Mahjoor believed that a day would come when his mother-land would be free and the people would live happy, contented and prosperous lives.'

'Struggle for freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz - Page 297.

'तारसर' और 'मारसर' अमृतसर के समान औद्योगिक-केन्द्र बन जाएँगे और 'तोसिमा दान' सूरत बन्दरगाह के समान सुन्दर रूप धारण करेगा। 'कोंगि-वटन' में कारखाना खोला जाएगा। हे मेरे प्रिय साथी! ध्यान पूर्वक सुनो, मैं प्रेम की कथा सुनाऊँगा।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६५)

'महजूर' के अन्तरंग मित्र श्री अब्दुल अहद 'आज़ाद' ने भी देशवासियों को आशावादी सन्देश देते हुए समय को एक आवश्यक तत्व बताया है।[२] एक अन्य समकालीन कवि श्री 'आरिफ' ने तो स्पष्ट शब्दों में शत्रु का अस्तित्व मिटाने की बात कही है।[३] परन्तु विशाल हृदय 'महजूर' शत्रु को भी मित्र बनाने की सम्मति देते हैं। अन्यायी को अधीन बनाकर उस पर अन्याय करना धर्म विरुद्ध है। 'महजूर' को उनकी कुटिल बुद्धि पर दया आती है :-

'शत्रु को दण्ड देना और प्रतिशोध लेना कोई महान् कार्य नहीं है।

---

१. प० म० ३, गीत १३।

२. 'जब समय बराबर आ जाता है तो दासता स्वयं अपना नाम मिटा देती है। समय आने पर क्षुद्र सरसों के दाने भी पर्वतों एवं विशाल चोटियों से लोहा लेने के लिए तत्पर रहते हैं। दासता को ज्ञात हुआ कि अब अधिक देर तक रहना नहीं है यही कारण है कि अन्त पर वह कश्मीर वासियों को अत्यधिक कष्ट पहुँचाती है।' (देखिए परि० २, क्रमांक ३६६)।

३. 'हमें कश्मीर स्वर्ग बनाना है और सदा के लिए दासता के काले दब्बे को मिटाना है। हमें अत्याचारी को मृत्यु की नींद सुलाना है। सत्य का प्रकाश फैल गया, धूप चारों ओर निकल आई और असत्य का 'यख' (बर्फ) पिघल गया।' (देखिए परि० २, क्रमांक ३६७)

तुम उसके साथ ऐसा व्यवहार करो कि वह प्रेम से एवं आदर से तुम्हारा नाम लेने लगे। घातक पक्षी जब उपवन छोड़कर चले गए तो पक्षियों में नवीन प्राणों का संचार हुआ। यदि तुम भी घातक पक्षी का रूप धारण करोगे तो फिर शोषक और तुम में क्या भिन्नता है ?'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ३६८)

दयनीय स्थिति पर विवश आहें भरने वाली जनता को 'महजूर' आश्वासन दिलाता है कि अब अधिक समय के लिए चंगेज़ों का क्रूर राज्य नहीं रहेगा क्योंकि इस वर्ष बसन्त की वायु एक नवीन सन्देश लेकर आयी है। बसन्त सन्देशवाहक बन गया है - आशा का, साहस का एवं संघर्ष का। अत: कवि उसका स्वागत सहर्ष करता है :-

'तुम पुन: मृत-प्राय: जनता में नव-जीवन का संचार करते हुए आये हो। हे बसन्त। आज पुन: तुम रोगियों के हृदयों में शान्ति प्रदान करते हो, अत: तुम्हारा स्वागत हो।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ३६६)

संघर्ष-रत देशवासियों के सम्मुख वह प्रण करता है कि बहुत शीघ्र तुम्हारा दग्ध उपवन पुन: सुन्दर पुष्प-वाटिका में परिवर्तित होगा।[३] देश-

---

१. प० म० ५, गीत २७।

२. क० म० ८, गज़ल ४६।

३. 'His verses thus embody the spirit of New Kashmirs' struggle for freedom and emancipation. Mahjoor inspires his suffering countrymen with the promises of a happier world when the gardens would be in full bloom and the lot of the people would be free from misery and unhappiness
'Kashmir - Its cultural heritage', Kaumudi, Page 88-89.

द्रोही स्वयं लज्जित होंगे और वे अपने कुत्सित व्यापारों के प्रायश्चित के लिए व्यग्र चित तुम्हारी ही शरण लेंगे । तुम अपने देश के स्वामी बन जाओगे। देश के प्रत्येक कण-कण पर तुम्हारा अधिकार स्थापित होगा और तुम्हारा प्रभुत्व शासक अधिकारियों के लिए शिरोधार्य होगा :-

"महजूर जब स्वतंत्र होकर उपवन में घूमने निकलेगा तो 'पोशिनूल' पक्षी मधुर कल-कंठ से उसका स्वागत करेंगे और सुमन मशाल जलाएँगे ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४००)

जब स्वतंत्रता के दिन समीप आने लगे तो 'महजूर' इसकी सूचना जनता को देते हैं :-

"अब कृष्ण-पक्ष की गहन कालिमा दूर हो जाएगी । शीघ्र ही शुक्ल पक्ष में चाँद निकल आएगा और चाँद के समान मेरे पर्वत-शृंग एवं गुफाएँ चमकने लगेंगी ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४०१)

'महजूर' के इन उत्साहवर्द्धक शब्दों ने जनता को सशक्त क्रान्ति के लिए प्रोत्साहित किया और जब देश में आन्दोलन अन्तिम सीमा पर पहुँचा तो 'महजूर' अपना मुक्ति गान स्पष्ट शब्दों में गाने लगा :-

"कुछ क्षण सब एकत्रित होकर यह गाओ कि हमारे घरों में स्वतंत्रता देवी पधारी हैं । यह देवी बहुत बहुत समय के पश्चात् हम पर कृतार्थ हुई और इसने दर्शन दे कर हमें अनुगृहीत किया ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४०२)

---

१. प० म० ४ , गीत २०।
२. प० म० ४ , गीत १८ ।
३. प० म० ६ , गीत २६ ।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि कविवर 'महजूर' के राष्ट्रीय काव्य में आशावादी सन्देश यत्र-तत्र बिखरा पड़ा है। 'महजूर' जनता को निरन्तर संघर्षरत देखना चाहते थे और इस कारण उन्हें आत्म-बल प्रदान करने के लिए वे भविष्य के सुनहले स्वप्न देखते थे। भविष्य के विषय में उन्होंने जो सुंदर कल्पनाएँ कीं उन सब को अपने जीवन-काल में ही साकार रूप में देखा है। यद्यपि कभी-कभी उन्हें निराशा भी हुई थी। वे अदम्य साहस के पुंज थे, अत: कायरता को जीवन का कलंक समझ कर समस्त समाज को भी उसे दूर रहने की चेतावनी देता है। यह आलस्य का समय न था, क्योंकि अधिक देर तक सोना हमारे लिए घातक सिद्ध होता।

क्रान्तिकारी काव्य -

राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक अत्याचारों से मुक्ति पाने के हेतु आरम्भ में कवि ने संकेतों के माध्यम से हृदय स्थित भावनाओं को अभि-व्यक्ति दी, परन्तु जब उद्देश्य पूर्ति में वे सफल न हुए तो अन्य देशवासियों के साथ सामन्ती राज्य के विरुद्ध स्पष्ट शब्दों में अपने आक्रोश को प्रकट करने लगे। उनके हृदय-सागर में क्रान्तिकारी भावनाएँ हिलोरें मारने लगीं और वे नाश का स्वागत करने के लिए आतुर हो उठे। सम्पूर्ण राष्ट्र में सामन्ती राज्य के विरुद्ध जनता उठ खड़ी हुई और शासक का आसन डगमगाने लगा।[१]

---

१. 'Disappointed in every manner and finding no other way of escape from the tyrannies of life, the masses stood up against the extant order which was maintained by the undemocratic and wooden Government of the time'.
'Inside Kashmir(- P.N. Bazaz)- Page 178.

कवि ने स्पष्ट शब्दों में देशवासियों को अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए उत्तेजित किया । क्रान्तिपूर्ण वातावरण में अत्यन्त ओजस्वी वाणी में 'महजूर' स्वतंत्रता सैनिकों को रक्त की नदियाँ बहाने के लिए आमंत्रित करते हैं । अपने घर बार की रक्षा के लिए इसके अतिरिक्त और कोई उपाय न था ।[१] 'महजूर' स्वतंत्रता और क्रान्ति का आवाहन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में करने लगे । आज की दूषित व्यवस्था को मिटाए बिना स्थायी शान्ति सम्भव नहीं । उनके क्रान्तिकारी विचारों में नाश के साथ-साथ नव-निर्माण की भावना भी निहित है । सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है – " 'महजूर' एक नई क्रान्ति चाहता है, परिवर्तन चाहता है । वह प्राचीन रूढ़ियों का समूल नाश करना चाहता है । क्योंकि उन्हीं के फलस्वरूप मनुष्य की अवस्था शोचनीय बन गई है ।"[२] वास्तव में 'महजूर' शोषकों की बर्बरता को अधिक समय तक कायरों के समान सहन नहीं कर सके । केवल मात्र आहें भरने से कोई लाभ नहीं हो सकता । वह एक सच्चे देश-भक्त की भाँति जनता को समझाने लगे कि :- 'तुम दास हो, अपने में ऐसी जान डाल दो कि यह बेड़ियाँ सदा के लिए टूट जाएँ ।' उस समय राजनीतिक जागरण के साथ ही साथ सांस्कृतिक नवचेतना का उदय भी हुआ था । हमारी प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा को

---

१. 'Patriotic blood coursed through the veins of the Poet. His meck, rugged and puckered countenance stood in sharp contrast in his militant heart which burst forth into effusions of exhortation to his countrymen to shed blood for protecting their hearts and homes'-. 'Kashmir - Feb.1959' - A Patriotic song by Mahjoor - O.N.Kak P.48.

२. 'योजना' - मार्च १९६२ - 'महजूर' - एक अध्ययन -सुश्रीकृष्णा कौल , पृ०२४ ।

शासक अधिकारियों ने जो कठोराघात किए थे वह जनता के लिए अब असहनीय बन गए, फलत: क्रान्तिकारी विचारधारा को अधिक बल प्राप्त हुआ। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - 'और यह भी एक सत्य है कि गुलाम देशों में जनता के साम्राज्यवाद-सामन्तवाद-विरोधी राष्ट्रीय संघर्ष के साथ ही साथ सांस्कृतिक नव-जागरण का भी सूत्रपात होता है। जो धीरे-धीरे इस निविड़ अन्धकार को चीरकर जन-जन तक नवचेतना की जीवनदायी किरणें ले जाता है ; जनता को अपनी दुर्दशा के कारणों से अवगत कराता है और उसकी दबी पड़ी, अव्यक्त-अभिलाषाओं और आकांक्षाओं को पूर्व, सक्त अभिव्यक्ति देकर उसे अपनी मुक्ति के संघर्ष-पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा और मनोबल प्रदान करता है। आज़ादी की तहरीक के समान ही, यह सांस्कृतिक नवजागरण भी दुर्दमनीय होता है, क्योंकि उसके मूल में न्याय और सत्य की सजग मानववादी भावना होती है।'[१]

जर्जरित सामन्ती व्यवस्था की लौह-शृंखलाओं को भस्मासात करने के लिए कवि महानाश की मट्ठी को जल उठने का आह्वान करता है। और उस अग्नि से खेलने के लिए राष्ट्रीय-हितैषियों के हृदय-स्थित पौरुष को ललकारता है :-

'अरे उठो। प्रकाश चारों ओर फैल गया। इंकलाब (क्रान्ति) का सूर्योदय हुआ। नव-बसन्त यह शुभ समाचार लेकर आया है कि तुम्हारा दग्ध उपवन पुन: खिल उठेगा। पुराने रिवाजों एवं रीतियों की ज़ंजीरों को तोड़ दो। तुम रण-क्षेत्र में आ जाओ। भय छोड़ दो और वीर बनकर शत्रु से लोहा ले लो।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४०३)

---

१. 'साहित्यानुशीलन' - शिवदानसिंह चौहान - 'नयी कश्मीरी कविता' पृ० १२१।

२. प० म० नं० ५, गीत २४।

'महजूर' एक ऐसी क्रान्ति का स्वागत करते हैं जो अन्दर से खोखली न हो। श्री हबीब-उला- 'हामिदी' ने लिखा है – 'वह क्रान्ति चाहता है, ऐसी क्रान्ति जो मात्र खोखली नाराबाज़ी तक ही सीमित न हो। वह ऐसी क्रान्ति चाहता है जो उसके देश के भाग्य को ही बदल दे। क्रान्ति की इस ध्वनि में व्यापकता है, विद्रोह है एवं विश्वास है।'[१] वह देशवासियों को सूचित करता है कि अब भीख माँगने का समय नहीं :-

'नया युग आगया है अब भीख माँगने और विनति करने की आवश्यकता नही। जिसकी भुजाओं में शक्ति होगी वही सफल रहेगा। जब लोगों के हृदयों में जोश, साहस, इच्छा एवं शक्ति उत्पन्न होगी तो उसी को इंकलाब कहते हैं।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४०४)

सन् १६३८ ई० में सरकार और जनता की जो भारी टक्कर हुई, उसे प्रभावित होकर 'महजूर' ने भी क्रान्ति और सक्रियता का एक अपूर्व सन्देश मातृभूमि के वीर सपूतों को दिया। समूल परिवर्तन के लिए वह जनता का सक्रिय सहयोग चाहता है, उनकी कायरता पर वह कभी-कभी खीझ उठता है:-

'तुम अब और कितने समय तक अपने पँख समेटे बैठे रहोगे। अपने पँख फड़फड़ाओ और बाहर निकल कर संसार को देख लो, स्वतंत्र होकर तुम पुष्पों की ओर अपनी दृष्टि डालो। तुम 'जी हुजूरी' करना छोड़ दो क्योंकि अब तुम मुक्त हो। तुम्हारा हृदय ही तुम्हारा स्वामी है और जीभ उसकी दासी है। फूलों को चुन कर तुम उपवन के सौन्दर्य से आनन्दित हो जाओ।'[३]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४०५)

---

१. 'तामीर' - 'महजूर' अंक - 'महजूर' के काव्य में देश प्रेम' - 'हामिदी', पृ० ४५।
२. प० म० ५, गीत २६।
३. प० म० ४, गीत १६।

राज्य-व्यवस्था में पूर्णरूपेण परिवर्तन लाने के लिए वह स्पष्ट शब्दों में शासकाधिकारियों का विरोध करता है :-

'शक्ती-राज्य का बोलबाला अब बहुत पुराना हो चुका है, उसके बदले अब नये नियम, नया दफ्तर एवं नया राज्य दरबार होना चाहिए, अब यहाँ पर हमारा अपना राज्य होगा, क्योंकि अब और कितने समय तक हम बलहीनों पर शक्तिशाली पुरुष राज्य करेंगे।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४०५)

'महजूर' को पूर्ण-विश्वास है कि अब इस देश में यह लुटेरे अधिक समय के लिए नहीं रह सकते हैं। यहाँ के वीर-सपूत उनकी जड़े उखाड़ कर फेंक देंगे।[२] इधर सन् १९४२ में 'भारत छोड़ दो' आन्दोलन से यहाँ की जनता को विद्रोह के लिए प्रेरणा मिली।[३] उधर 'महजूर' अपनी मातृभूमि

---

१. प० म० ३, गीत ११।

२. 'वारिल' पक्षी धीरे-धीरे नष्ट हो जाएँगे और बुलबुल एवं 'कस्तूर' निर्भय हो जाएँगे एवं मधुर कंठ से उपवन का यशोगान करेंगे। हमारा उपवन स्वर्ग से होड़ लेने लगेगा। परन्तु हमें अपने उपवन से परिचित होना पड़ेगा।' (परि० २, क्रमांक ४०६)

- प० म० ४, गीत १७.

३. 'The 'Quit India' movement launched by the Indian National Congress in 1942, which resulted in the arrest of the leaders of the congress and the consequent turmoil deeply moved the politically awakened people of the State'.

'A History of Kashmir(P.N.K. Bamzai - Page 665.

पर अपने जन्मसिद्ध अधिकार को घोषित करने लगा :-

'पुन: जीवन का एक नवीन साज़ बजने लगा, यही साज़ मेरे रहस्य को प्रकट करेगा । उपवन मेरा है । उसके कुसुम मेरे हैं, 'सोम्बुल' मेरे हैं और उस उपवन का मधुर-भाषी बुलबुल भी मेरा है ।'[१] (देखिए परि० २ , क्रमांक ४०७)

श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - 'सचमुच शोषण करने वाले कारणों को समाप्त किए बगैर हमारे गुलों और बुलबुलों को कभी शान्ति नहीं मिलेगी । लेकिन यह कारण तो स्वत: ही समाप्त नहीं हो सकते , इन्हें समाप्त करना पड़ेगा ।'[२] इसी कारण 'महजूर' क्रुद्ध होकर आँधी, तूफान एवं भूचाल (भूकम्प) का स्वागत करता है ।

'चमन वीरान है, ओस आँसू बहा रही है । यहाँ के गुल (जनता) अपनी दीन-हीन दशा पर चिन्तित हैं । तुम इन गुलों और बुलबुलों में नवीन प्राण फूँक दो । यदि तू अपने देशवासियों को जागृत करना चाहता है तो राग-रंग एवं भोग-विलास को तिलाँजलि देकर भूचाल ला , आंधी मचा, गर्जना कर और साथ ही तूफान को जन्म दे ।'[३] (देखिए परि० २ , क्रमांक ४०८)

'महजूर' की यह रचना 'वलोहा बागवानो' उस समय विशेष रूप से

---

१. प० म० ५, गीत २३ ।
२. 'हिन्दी गद्य-प्रवेशिका' - 'पुष्प' - 'महजूर' के काव्य में नया कश्मीर , पृ० १५२ ।
३. प० म० १, गीत १ ।

प्रसिद्ध हुई ।[१] इसका अंग्रेज़ी में भी अनुवाद हुआ है ।[२] इसमें अराजकतामय क्रान्ति की ओर संकेत न होकर स्वस्थ समाज के निर्माण की ओर संकेत है । इस में वर्तमान जीवन के प्रति ग्लानि की भावना प्रकट हुई है । इसके द्वारा प्रलय की शोक-ध्वनि गूँज उठी है । कवि महोदय प्रचलित व्यवस्थाओं, रूढ़ियों, अत्याचारों के विरुद्ध समस्त जन-समूह को उत्तेजित करता है । इस कविता में जनतंत्रात्मक संघर्ष के भूकम्प और तूफान को सफल बनाने के लिए

---

१. `मुझे याद है कि उन दिनों राष्ट्रीय आन्दोलन के सिलसिले में जितने भी जलसे हुए उनका कार्यक्रम इसी कविता से आरम्भ होता था और इस प्रकार `महजूर` का यह गीत हमारा राष्ट्रीय गीत बन गया ।`
- `तामीर` - `महजूर`-अंक - `महजूर` - मेरी नज़र में` - `पुष्प` , पृ० ६ ।

२. The garden in ruins
the dew in tears
the roses in tatterdd leaf -
let roses and bulbuls be kind led a new with life !
If thou wouldost rouse this habital of roses,
leave toying with kettle drums;
Let there be thunder, Storm and tempest
Yea; an earthquake.
- "Kashmiri Lyrics' - Selected and Translated by
J.L. Kaul - Page 121.

कवि मानव को महान त्याग के लिए ललकारता है । एक कुशल कलाकार की भाँति कवि मुक्ति-कामना के अनेक कण अग्नि-स्फुलिंग के समान चारों ओर बिखेर देता है । साथ ही कवि शत्रु को सचेत करता है :-

" तुम इस बात को याद रखो कि जब मेरे यह दीन-दु:खी एवं बि-भुक्षित जन पुन: संगठित हो जायेंगे तो समस्त धन-राशि पर उनका आधि-पत्य हो जायेगा । अन्त पर यही मेरे अनजान भाई यहाँ के स्वामी बन जायेंगे ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४०६)

क्रान्तिकारी काव्यों के द्वारा कवि, देशवासियों को आँधी और तूफान से खेलने के लिए बल एवं साहस प्रदान करता है । वह गर्व स्फीत ओज भरी वाणी में जनता को अन्धकार से बाहर निकलने की सम्मति देता है । क्योंकि इसी अज्ञान के अन्धकार ने उन्हें साधारण अधिकारों से भी वंचित रखा है :-

" तुम पिंजरे में ही जन्मे और उसी में अपना जीवन व्यतीत किया, परन्तु आज तुम स्वच्छन्द आकाश में उड़ना सीखो, अपने पँख फड़फड़ाओ और भय छोड़ दो ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४१०)

भारत में राजनीतिक आन्दोलन दिन प्रतिदिन बढ़ता गया । सन् १६४२ के पश्चात् कश्मीर में महाराजा के विरुद्ध 'नेशनल कांफ्रेंस' ने 'कश्मीर छोड़ दो' का आन्दोलन चलाने पर विचार-विमर्श किया । शासक अधिकारियों ने अनेक कुचक्र चलाए जिन के परिणामस्वरूप घृणा की अग्नि अत्यधिक प्रज्वलित

---

१. प० म० ४, गीत १८ ।

२. प० म० ५, गीत २७ ।

हो उठी । शासकों की कठोर दण्ड-नीति ने अग्नि में घृत का काम किया ।[१] इसके अतिरिक्त यहाँ की सामाजिक एवं आर्थिक दुर्दशा ने भी क्रान्ति की भावना को पुष्ट किया ।[२] `महजूर` इन सब विषमताओं का उपचार क्रान्ति एवं भयानक महानाश से करना चाहता है यही कारण है कि :-

`वायु फूलों को हँसाता है और `महजूर` जनता के हृदयों को जाग्रत करता है ।[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४११)

`महजूर` के समकालीन स्वर्गीय `आज़ाद` के काव्य में भी जागृति की शंख-ध्वनि सुनाई पड़ती है । इस प्रकार की विद्रोहात्मक रचनाओं की प्रेरणा उन्हें तत्कालीन समाज एवं राजनीति से मिली है । उन्होंने अपनी एक रचना में लिखा है :-

---

१. 'Following the 'Quit India' movement, in 1942, the Jammu & Kashmir National Conference prepared the people for the launching of 'New Kashmir Plan'. This brought the people in clash with the Maharaja's government.'
'Kashmir' - May 1958 - 'Singer of Kashmir's Freedom' - Farooq A. Qureshi Page 139-146

२. To understand the main principal underlying the emergence of Mahjoor as a revolutionary Poet as one must know about the socio-political system prevalent at that time. The spirit of the age which the poet tries to express, itself dictates the form of poetic embodiment and exercises a high effective control over the quality and acceptability of that form.
'Kashmir' - May, 1958 -'Singer of Kashmir's Freedom' - Farooq A. Qureshi, Page 139.

३. प० म० ५, गीत २६ ।

'एक तो उसको मार डालता है, दूसरा उसका रक्त चूसता है। भला भेड़-बकरी के लिए कसाई और भेड़िया एक समान है। राज्य-नियमों ने मानव-रक्त को आज उनके लिए 'हलाल' बना दिया है जिस कारण यह पाजी गीदड़ सिंहों का खून चूस रहे हैं। आह! दासता एक विवशता है जो हमारे आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाती है। दासता के कारण ही जनता असंतुष्ट है, विवश है एवं लज्जित है। तुम क्रान्ति लाओ, क्रान्ति लाओ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४१२)

'महजूर' की क्रान्तिकारी कविताओं में समझौता या सुधार की भावना नहीं मिलती अपितु विद्रोह की प्रचण्ड अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए एक विशेष प्रकार का उत्साह मिलता है। वे पथ-प्रदर्शक के रूप में हमारा दिशा-निर्देशन करते हैं।[२] आत्म सम्मान की रक्षा के लिए वे देश-वासियों एवं समकालीन कवियों को कोसते हैं।[३] उनके विचारानुसार ईश्वर ने दो विशेष तत्वों से मनुष्य का निर्माण किया है :-

---

१. 'आज़ाद' - 'पुष्प' - 'क्रान्ति' - पृ० ७०।

२. 'It speaks highly of Mahjur's intelligence that when the revolution came he rose equal to the occasion and imbibing the spirit of the times because the champion of the cause of freedom. ' Struggle for freedom in Kashmir. - P.N. Bazaz - Page 295.

३. 'तुम संसार में आत्म सम्मान एवं निजी स्वतंत्रता को बनाये रखो। परन्तु यही विशेष गुण आज के कवियों में अप्राप्य है।' (देखिए परि० २, क्रमांक ४१३) - प० म० ५, गीत २८.

'या तो तुम मिट्टी के नीचे अपने बिल में छिप जाओ या पँख लगाकर आकाश में विचरण करो। यही दो शक्तियाँ ईश्वर ने मनुष्य को प्रदान कीहैं।'[१]
(देखिए परि० २ , क्रमांक ४१४)

'महजूर' देशवासियों को अनेकों कठिनाइयों से जूझने के लिए शक्ति प्रदान करते हैं क्योंकि आततायियों को सदा के लिए समूल उखाड़ फेंकना ही उनका प्रथम कर्त्तव्य है और जीवन-लक्ष्य है ; अत: वे राष्ट्रीय वीरों को सचेत करते हैं कि :-

'तुम्हारे सम्मुख अनेकों वीर आएँगे परन्तु तुम उन पर वार करके उन्हें सदा के लिए पृथ्वी पर सुला दो। पकड़ कर उनका हृदय चीर डालो, ताकि पुन: शोषण न कर सकें। इस प्रकार अपनी वीरता का प्रदर्शन करो।'[२]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४१५)

'महजूर' के काव्य में क्रान्ति का स्वस्थ रूप मिलता है। 'नया कश्मीर' के स्वप्न को यथार्थ रूप देने के लिए वह विप्लव एवं विद्रोह को आह्वाहन देता है साथ ही उस महानाश के पश्चात् एक नवीन-सृष्टि के विकास हेतु वर्तमान सामाजिक एवं राजनीति व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करना चाहता है। देशवासियों के अदम्य साहस एवं शक्ति पर उन्हें पूर्ण विश्वास है :-

'इस समय उपवन के पक्षियों में एक नवीन हलचल मची हुई है और 'पोशिन्दुल' पक्षियों ने पिंजरों में एक नवीन शोर उठाया है। यद्यपि मैंने अपने जीवन का अधिक समय पिंजरे में ही व्यतीत किया परन्तु अभी भी मेरे

---

१. क० म० ११, गज़ल ७४।
२. प० म० ७, गीत ३५।

पंखों में उड़ने की शक्ति बाकी है ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४१६)

यह बात निर्विवाद रूप से सत्य है कि शोषकों को समाप्त किए बिना उपवन के 'गुल' और 'बुल बुल' सुख-चैन की बंसी नहीं बजा सकते । लूट-खसूट करने वाले इन प्रशासकों और पूंजीपतियों की असहनीय चोटें देश-वासियों में उन के प्रति घृणा एवं उपेक्षा को फैला रही थीं । शोषकों के दानवीय कुकर्म जब चरम सीमा पर पहुँचे तो 'महजूर' ने भयंकर विध्वंस का स्वागत किया और शतशत कण्ठों से उसके स्वागत के लिए मंगल-गान गाने लगा । इस प्रकार उनके क्रान्तिकारी काव्य ने समय की सबसे बड़ी माँग को पूरा किया ।

मूल्यांकन :

ब्रिटिश सरकार ने अन्ततोगत्वा १५ अगस्त सन् १९४७ से भारत के स्वाधीन होने की घोषणा कर दी,[२] जिस समय यह घोषणा हुई, कश्मीर में आन्दोलन पूरी तरह शिखर पर था । देशी रियासतों को भारत या पाकिस्तान के साथ अपनी इच्छानुसार मिलने की स्वतंत्रता दी गयी परन्तु यहाँ के महाराजा की अनिश्चितता से लाभ उठाकर पाकिस्तान की ओर से अक्टूबर सन् १९४७ में कश्मीर पर भयंकर आक्रमण हुआ । श्री हरिकृष्ण कौल ने लिखा है — 'सन् १९४७ की शरद् ऋतु कश्मीर के इतिहास में चिर स्मरणीय रहेगी । पाकिस्तान ने कबाइलियों से मिलकर कश्मीर पर आक्रमण किया । शासन की बागडोर जनता के हाथ में आई । जिन युवकों ने इससे पहले बन्दूक को छुआ तब नहीं था , शत्रु से लोहा लेने के लिए मोर्चों की ओर अग्रसर

---

१. प० म० ५, गीत २८ ।

२. 'मार्ग दर्शक' - जून १९६५ - 'कश्मीर छोड़ो-आन्दोलन' - मणिराम 'कंचन', पृ० १० ।

हुए । साथ ही एक सांस्कृतिक मोर्चे की भी स्थापना हुई और पहली बार कश्मीरी साहित्यकार एक जगह एकत्रित हुए ।"[१] शत्रु से लोहा लेने के लिए परस्पर एकता एवं संगठन उस समय नितान्त आवश्यक था । कविवर 'महजूर' ने आरम्भ से ही परस्पर एकता (हिन्दू मुस्लिम एकता) पर विशेष बल दिया था ।[२] वे दलित और पीड़ित की असहनीय दशा देखकर स्वयं भी पीड़ित होते थे । वास्तविक सत्य की ओर संकेत करते हुए उन्होंने लिखा है :-

'भारी कठिनाई के समय परस्पर सद्भाव एवंसहयोग से रहना चाहिए। और एक दूसरे की सहायता करनी चाहिए । कश्मीरियों की जातपांत एक है । अत: आपस में अकारण भेद भाव को नहीं बढ़ाना चाहिए । जो गरीब होंगे उनकी सहायता करो । तुम सब परस्पर भाई भाई हो अत: मिलजुल कर रहो । कवि 'महजूर' ने एकता का यह उपदेश जनता को दिया । इसको स्मरण रखो और इसका प्रचार करो ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४१७)

भविष्य निर्माण के हेतु भी परस्पर सद्भाव एवं सहयोग उपयोगी सिद्ध होता है । उस समय जनता के सम्मुख अनेक ज्वलन्त समस्याएँ थीं । 'महजूर' के अतिरिक्त स्वर्गीय 'परदेसी' ने भी 'आवाज़ दो हम एक हैं'' वाले सिद्धान्त को मर्मस्पर्शी ढंग से अभिव्यक्त किया है :-

---

१. 'आधुनिक कश्मीरी साहित्य' - हरिकृष्ण कौल - 'योजना' - फरवरी १९६० , पृ० १० ।

२. 'His Poetry infuses aspirits of fraternity and harmoney and is partly responsible for keeping ablaze the torch of brotherhood'.
'Kashmir' - Feb.1959 'A Patriotic Song by Mahjur'.O.N.Kak, Page 98.

३. प० म० २, गीत ६ ।

"सवाल अब नहीं रहा किसी की खास जात का
यह मसलाह नहीं है एक दो या पाँच सात का
सवाल है यह कौम की हयात का मुजात का
कदम कदम बढ़ेंगे हम महाज़ पर लड़ेंगे हम ।"[१]

श्री मही-उल-दीन 'हाजिनी' ने लिखा है - " यह राजनीतिक जागृति का परिणाम है कि हमारे काव्य में निम्न जातियों को भी वही महत्व दिया गया जो प्राचीन समय में उच्च वर्ग को दिया गया था । - - - - - इस प्रकार कुछ समय पूर्व जिस काव्य पर लोग व्यंग्य कसते थे उसी पर आज कविगण गर्व करने लगे ।"[२] मानव मानव में परस्पर समता एवं साम्प्रदायिक एकता पर 'महजूर' ने विशेष बल दिया है । उनके विचारानुसार सारे धर्मों का एक ही लक्ष्य है परन्तु धर्मावलंबियों की संकीर्णताओं ने धर्म के नाम पर कलंक लगा दिया है । वे धर्म की आड़ में शिकार खेलते थे । अत: 'महजूर' ने लिखा है :-

"मसजिदों, मंदिरों, ~~मीरजाफरों~~ गिरजाघरों एवं धर्मशालाओं का प्रवेश-द्वार एक ही होना चाहिये था ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४१८)

वे धर्म के सैद्धान्तिक पक्ष की अपेक्षा उसके व्यावहारिक पक्ष पर विशेष आस्था रखते हैं । वह धर्म-सिद्धान्तों का व्यवहार रूप में पालन करना

---

१. 'वतन की पुकार' - संकलनकर्ता - मुहम्मद यूसुफ टेंग - 'कदम-कदम' - 'परदेसी' , पृ० ८ ।
२. 'गुलरेज़' - मई १९६१ - 'हमारे आधुनिक काव्य की प्रवृत्तियाँ' - 'हाजिनी' , पृ० १६ ।
३. प० म० २, गीत ६ ।

चाहते हैं । धार्मिक संकीर्णता के बदले कवि धार्मिक सहिष्णुता का पाठ पढ़ाते हैं :-

'धर्म ग्रन्थों में लिखे गए धार्मिक सिद्धान्त एवं नियम तथा लोगों की प्रतिज्ञाएँ अब बहुत प्राचीन हो गई हैं । जनता के मानस में नवीन प्रेम की भावना होनी चाहिये थी ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४१६)

स्वतंत्रता प्राप्ति पर 'महजूर' मुक्त कण्ठ से स्वातंत्र्य देवी का स्वागत करते हैं ।[२] जीवन की महान साधना का फल उन्हें प्राप्त हुआ परन्तु कर्तव्य का उत्तरदायित्व अभी पूरा नहीं हुआ । राष्ट्र-निर्माण की मात्र नींव डाली गयी है । उस सुदृढ़ नींव पर भव्य-महल का निर्माण अब देशवासियों को करना है । स्वतंत्रता और दासता में प्रकाश और अन्धकार का अन्तर है :-

'शोषण का युग समाप्त हुआ अब न्याय एवं सच्चाई का युग है । पुराना युग बीत गया । अब तुम नये युग का निर्माण करो । तुम्हें फिर से अपना देश बनाना है, अत: इसके लिए तुम आवश्यक सामग्री को जुटा लो। इस नये युग में सर्वस्व तुम्हारा है ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२१)

---

१. प० म० ३, गीत ११ ।

२. 'हे बुलबुल । स्वतंत्र होने पर तुम प्रसन्न हो जाओ । फूलों को चुन लो और अपने उपवन के सौन्दर्य से आनन्दित हो जाओ । पिंजरों को सदा के लिए त्याग कर तुम बाहर निकल आओ । इससे पहले तुम पिंजरे में भय-भीत होकर बोल रहे थे , परन्तु अब तुम अपनी हृदयगत भावनाओं को निर्भय होकर व्यक्त कर सकते हो । अब तुम्हें किसका डर है ? फूलों से परिचित हो जाओ और उपवन के अपूर्व सौन्दर्य का दर्शन-सुख प्राप्त कर लो ।' (देखिए परि० २, क्रमांक ४२०) - प० म० ४, गीत १६.

३. प० म० ५, गीत २४ ।

श्री बल्शी गुलाम मुहम्मद ने लिखा है - 'महजूर वह कवि हैं जो स्थायी रूप में देश के सब से बड़े राजनीतिक दल से सम्बन्धित रहे और स्वतंत्रता-संघर्ष में निरन्तर भाग लेते रहे ।'[१] स्वतंत्रता के पश्चात् राष्ट्र-निर्माण एवं सामाजिक सुधार के लिए सतत प्रयत्नशील रहे । उनके अनेक समकालीन एवं परवर्तीय कवियों ने इस विचारधारा को आगे बढ़ाया ।[२] जिनमें 'आज़ाद', परदेसी, आरिफ एवं 'नादिम' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । स्वर्गीय परदेशी ने 'चमका देश हमारा' कविता में स्वतंत्रता संघर्ष के भयानक क्षणों की याद दिलाकर देश को प्रगति के पथ पर लाने के लिए जनता को संकेत किया और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए उन्हें ललकारा :-

'इस आज़ादी की वेदी पर क्या-क्या भेंट चढ़ाई -
जेल काटे, खून बहाया, कितने लाल गँवाए ,
सत्रह साल से मिल जुल कर जब लड़ते लड़ते आए -
तब जाकर तकमील को पहुँचा प्यारा ख्वाब हमारा ।

चमका देश हमारा

उठो, हिम्मत वालो उठो, आज़ादी को आम करें -
मुलक को आगे ले जाएँ और कुछ तामीरी काम करें ।

---

१. 'तामीर' - 'महजूर'-अंक - 'महजूर का सियासी शऊर - 'बल्शी' - गुलाम मुहम्मद , पृ० ७ ।

२. 'By this time Mahjoor was not alone; Azad, Arif, Agi, his younger contemporaries, happily joined the singer of Kashmir's freedom in producing beautiful patriotic poetry.' 'Kashmir' - May, 1958 - 'Singer of Kashmir's Freedom'. Farooq A. Qureshi, Page 146.

गुरबत और इफलास मिटाएँ जग में पैदा नाम करें -
इस आज़ादी की रखवाली है अब काम तुम्हारा
चमका देश हमारा ।"[१]

श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है -- 'सन् १९४७ के पश्चात् कश्मीरी कविता ने नई करवटें लीं । पहले दो वर्ष तो शत्रु के प्रतिरोध और नई आज़ादी के संरक्षण की उमंग ही गूँजती रही । उसके बाद नये कश्मीर के निर्माण की मूलभूत अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए 'आर्थिक प्रजातंत्र' की स्थापना और 'विश्वशान्ति' की प्रतिष्ठा पर ज़ोर दिया जाने लगा ।"[२]

'महजूर' ने 'नया कश्मीर' के निर्माण का जो दृढ़ संकल्प किया था उसी की पूर्ति के लिए वे सदा चिन्तित रहे । उनकी वाणी में अद्भुत ओज एवं दर्प है वे सांस्कृतिक पुनरोद्धार के लिए मानव में स्थित पाश्विक एवं नाशक वृत्तियों को कोसते रहे । उन्होंने अपना काव्य-विषय सामान्य मानव को बनाया[३] और उसके जीवन के प्रत्येक पक्ष के मर्म तक पहुँचने का प्रयास किया । वे जीवन के महान आदर्शों की पुनर्स्थापना के लिए जीवन-पर्यन्त प्रयत्नशील रहे । वे सच्चे अर्थों में एक जन कवि थे ।

स्वतंत्रता प्राप्ति पर 'महजूर' का एक स्वप्न तो पूरा हुआ परन्तु

---

१. 'गाए जा कश्मीर' - 'चमका देश हमारा' - 'परदेसी' - पृ० ४४-४५ ।
२. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - 'पुष्प' - पृ० २२ (बिहार राष्ट्र-भाषा प्रकाशन , पटना-३)
३. प० म० ६, गीत २६ ।

देश की बहुत समय तक अवनत अवस्था देखकर वे राष्ट्रीय नेताओं के प्रति निराश हो गए । धीरे-धीरे यह निराशा उनके हृदय में घर कर गयी । नेताओं की स्वार्थपरता, लोलुपता, घूसखोरी एवं पाश्विकता देखकर वे हृदय मसोस कर रह गये । स्वतंत्रता एक वरदान न रहकर जनता के लिए अभिशाप बन गयी । कवि ने अपनी एक व्यंग्य प्रधान कविता में इस ओर संकेत करते हुए लिखा है :-

'दरिद्रता, अभाव, अन्याय एवं नाश का सामान जुटाती हुई स्वतंत्रता रानी ने पदार्पण किया । यह स्वतंत्रता स्वर्ग की एक अप्सरा है जो प्रत्येक घर में अपनी आभा बिखेर देती थी, परन्तु आज चन्द घरों में ही यह स्वतंत्रता रानी इठलाती है । स्वतंत्रता का एक उद्देश्य पूंजीपति वर्ग का सर्वनाश था परन्तु आज कुछ लोग अपने घरों में धनराशि एकत्र करने में तन-मन से जुटे हैं । लोगों पर यह स्वतंत्रता आज हारी-पर्वत के समान एक भारी बोझ बन गयी है । परन्तु कुछ सौभाग्यशाली व्यक्तियों के लिए यह फूलों से भी कोमल है ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२२)

इसी प्रकार शासक अधिकारियों की शासन-नीतियों पर व्यंग्य करते हुए 'महजूर' ने लिखा है :-

'अधिकारीजन गरीबों की दुर्दशा को सुधारते परन्तु दुर्भाग्यवश उन्हें समय नहीं , क्योंकि उन्होंने मोटरकारों में बड़ी तेज़ गति से जाने वाली स्वतंत्रता रानी को पाया है । सब चुप हो गए हैं । उनके हृदय अशान्त हैं । जनता अपनी दुर्दशा का वर्णन करना चाहती है परन्तु डर है कि कहीं स्वतंत्रता रानी का कोपभाजन न बनना पड़े ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२३)

---

१. प० म० ६ , गीत २६ ।

२. प० म० ६ , गीत २६ ।

इस प्रकार देश का यथार्थ चित्रण करने में वे कभी पीछे नहीं बैठे हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'महजूर' सच्चे अर्थों में काश्मीर के राष्ट्रीय कवि, जनता के हितैषी और मातृभूमि के सच्चे प्रेमी थे। उनकी महानता इन्हीं रचनाओं में निहित है। उन्हें यहाँ के कण-कण से और यहाँ की अबोध एवं निरीह जनता से अथाह प्यार था। वे राष्ट्रीय-नेताओं के लिए पथ-प्रदर्शक[१], निरीह जनता के लिए सन्देशवाहक और शत्रु के लिए महा-काल थे। उनके समस्त राष्ट्रीय काव्य में मानव-मात्र के कल्याण की भावना निहित है। वे शान्ति चाहते थे परन्तु ऐसी शान्ति नहीं जिसकी नींव खोखली हो। उन्होंने जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व किया। वे जनता के सुख में सुखी और दुःख में दुःखी रहे। उनकी वाणी में जनता के धड़कते हुए हृदयों का संयोग है। उन्होंने सामूहिक कल्याण के लिए व्यक्तिगत हानि-लाभ की कोई चिन्ता नहीं की और कई समय उन्हें शासनाधिकारियों का कोपभाजन भी बनना पड़ा। उनका राष्ट्रीय-काव्य युग की एक महान देन है।

---

१. 'Mahjoor was held in high esteem by the nationalists and he too was their great admirer'.
'Struggle for freedom in Kashmir' page 298.
-By Prem Nath Bazaz.

'नवीन' का राष्ट्रीय-काव्य

विषय-प्रवेश एवं पूर्व पीठिका :

'राष्ट्र' शब्द की व्यापक परिभाषा देते हुए डा० सुधीन्द्र ने लिखा है – 'भूमि' भूमि-वासी 'जन' और जन-संस्कृति' तीनों के सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है। भूमि अर्थात् भौगोलिक एकता, जन अर्थात् जन-गण की राजनैतिक एकता, और जन-संस्कृति अर्थात् सांस्कृतिक एकता – तीनों के समुच्चय का नाम राष्ट्र है।'[१] अतः स्पष्ट है कि राष्ट्र की आधार-शिलाएँ भौगोलिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इकाइयाँ हैं जिनके स्वस्थ संयोग से एक राष्ट्र का निर्माण होता है। इन आधार शिलाओं के निर्माण के लिए एक कवि जब अपनी लेखनी के द्वारा सहयोग प्रदान करता है तब राष्ट्रीय-काव्य का जन्म होता है। राष्ट्रीय-काव्य एवं राष्ट्र कवि के विषय में श्री यज्ञदत्त शर्मा ने लिखा है - 'राष्ट्रीयता का संकीर्ण अर्थ है देश-भक्ति और व्यापक अर्थों में राष्ट्रीयता का अर्थ होता है राष्ट्र के विचार, राष्ट्र की संस्कृति और राष्ट्र की भाषा। विचार, संस्कृति और भाषा का समुदाय कहलाता है - राष्ट्रीयता। एक राष्ट्रीय कवि वह है जिसने राष्ट्र की भाषा में राष्ट्रीय संस्कृति को लेकर राष्ट्र के विचारों का प्रतिपादन किया हो।'[२] श्री रामाधार शर्मा ने राष्ट्रीय-काव्य को राजनीतिक चेतना का प्रतिबिम्ब

---

१. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र, पृ० १६४।

२. 'प्रबन्ध सागर' - यज्ञदत्त शर्मा - 'हिन्दी कविता में राष्ट्रीयता', पृष्ठ ३२६।

माना है ।[१] प्रो० राजमल वोरा ने राष्ट्रीय साहित्य को देश की जातीय विशेषताओं का परिचायक माना है ।[२] 'राष्ट्र की चेतना, सुधार एवं नव-निर्माण को ध्यान में रखकर यह काव्य लिखा जाता है । राष्ट्रीय-हित के लिए राष्ट्रीय जागरण एवं क्रान्ति के बीज भी इस काव्य में निहित रहते हैं । प्रो० राजमल वोरा ने लिखा है – 'राष्ट्रीय-साहित्य किसी देश की सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक परम्पराओं से प्रेरणा लेकर उसके आधार पर राष्ट्र में चेतना पैदा करने वाला साहित्य है ।'[३] निर्विवाद रूप से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय काव्य किसी राष्ट्र के सामूहिक कल्याण का परिचायक, सांस्कृतिक उत्थान का अग्रदूत एवं राजनीतिक जागृति का सन्देश-वाहक होता है । प्रत्येक राष्ट्र में राष्ट्रीय-साहित्य का अपना एक विशिष्ट स्थान है और उसके निर्माण के कारण इतिहासों में उपलब्ध हैं एवं सुरक्षित हैं । राष्ट्रीय-काव्य के प्रधान उपकरणों पर प्रकाश डालते हुए केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है – 'राष्ट्रीय कविता के दो उपकरण हमारे सम्मुख हैं । एक है रूपात्मक एवं दूसरा भावनात्मक । रूपात्मक स्वरूप में राष्ट्र की धरती, वन, पर्वत, नदी, नर, नारी इत्यादि के चित्रण होते हैं । एवं भावनात्मक स्वरूप में चिन्तन की एक सूक्ष्मता दिखाई देती है । चिन्तनशीलता सृजन और संहार दोनों ही पक्षों से युक्त हो सकती है । व्यक्ति की राष्ट्रीय भावना राष्ट्र

---

१. 'राष्ट्रीय-काव्य से हमारा तात्पर्य उस काव्य से है जिस में देश की तत्कालीन राजनीतिक चेतना का प्रतिबिम्ब हो ।'
- 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' - (एक अध्ययन) - रामाधार शर्मा एम०ए० , १९५५ , पृ० ४४ ।

२. 'साहित्य-सन्देश' - अप्रैल १९६३ - 'राष्ट्रीय साहित्य' - प्रो० राजमल वोरा , पृ० ४१५ ।

३. वही ।

के सभी तत्वों को प्यार करती है । उसे भूत, वर्तमान और भविष्य सभी में एक आन्तरिक अपनेपन का अनुभव होता है ।"[१]

हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का प्राचीनतम रूप हमें आदि कालीन साहित्य में मिलता है यद्यपि उस समय की राष्ट्रीय विचारधारा आधुनिक युग की विचारधारा से बहुत अर्थों में भिन्न है एवं संकुचित है । सामन्ती वातावरण में पली कविता-कामिनी का उद्देश्य अपने आश्रय-दाता के शौर्य एवं पराक्रम का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करना था । राष्ट्रीय-भावना अपने-अपने भू-खण्डों तक ही सीमित थी । भारतीय सीमाओं पर विदेशी आक्रान्ता क्रुद्ध-स्वरूप धारण करके अत्याचार एवं नाश की शंख ध्वनि करते थे । भारतीय शासक निजी गृह-कलह के कारण आपस में ही नाश की होली खेल रहे थे । केन्द्रीय सत्ता के अभाव के कारण शासकगण विदेशियों के आक्रमण को न रोक सके और इधर उनके दरबारी कवि-गण आँसू मूँद कर उनकी प्रशंसा में जुटे थे । डा० किरणकुमारी गुप्त ने लिखा है - 'हिन्दी साहित्य का जन्म युद्ध के हा-हाकार और तलवारों की फंकार से हुआ । सम्राट हर्षवर्द्धन के चक्रवर्तित्व के अनन्तर भारत में एकछत्रता समाप्त हो गई और वीरों की शक्ति अपने-अपने भूखण्डों में सीमित हो गई । उनकी राष्ट्रीय भावना अपने भू-खण्ड की संरक्षा और अपर शासक के अपमान में ही सार्थक थी । उनकी मर्यादा और मानहानि का क्षेत्र संकुचित था । सुन्दरी राजकन्याओं के अपहरण, ईर्ष्या, सौन्दर्य-प्रियता और पारस्परिक वैमनस्य का विस्फोट भयंकर गृह-युद्धों में होता था ।"[२] यह सत्य है कि प्रत्येक युग के साहित्य में

---

१. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० केशवदेव उपाध्याय, पृ० १६ ।

२. 'साहित्य-सन्देश' - अक्टूबर १६६३ - पृ० १५० - 'हिन्दी साहित्य में वीर काव्य का विकास' - डा० किरणकुमारी गुप्त ।

समकालीन परिस्थितियों के अनुकूल ही राष्ट्रीय भावना विकसित होती है परन्तु वीरगाथा काल के विषैले वातावरण में जिस वीररस प्रधान एवं उत्साहवर्द्धक काव्य का जन्म हुआ है उसे हम शुद्ध राष्ट्रीय काव्य नहीं कह सकते। पण्डित कृष्णचन्द्र विद्यालंकार ने लिखा है – 'एक समग्र राष्ट्र के नागरिक के रूप में अपने आपको ग्रहण करना उस समय कदाचित सम्भव नहीं रहता। - - - चारणों की वीरगाथायें राष्ट्र-भावना शून्य हैं। उनमें कहीं भी अपने सांस्कृतिक गौरव को समग्रता में ग्रहण करने की चेष्टा नहीं मिलती। अपने आश्रयदाता अथवा राजा की स्तुति चाहे किसी रूप में भी क्यों न की जाय, किन्तु उसे हम राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति नहीं मान सकते।'[१] इस युग के ऐतिहासिक वीर-काव्यों में भी अतिशयोक्ति का समावेश हो गया है। गृह-युद्धों में वीरता का मात्र प्रदर्शन ही उनका क्षात्रिय धर्म रह गया था। युद्धों का सजीव वर्णन यद्यपि इनके काव्य ग्रन्थों में मिलता है तथापि इनमें कोई ऐसा सबल कवि नहीं था जो भारतवासियों में उत्कट राष्ट्रीय भावना जाग्रत करता। डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'उस युग में एक तो यह भावना अत्यन्त विरल है, दूसरे यह देशभक्ति के वर्तमान स्वरूप से भी अत्यन्त भिन्न है। शौर्य अथवा वीर-भाव का प्रत्येक रूप देशभक्ति के अन्तर्गत नहीं आता। - -वीर - गाथा-काल के राजपूत राजाओं और सामन्तों का शौर्य प्राय: वैयक्तिक शौर्य ही था, वह अपने व्यक्तिगत गौरव अथवा अपने राज्य या अपने राजा के निमित्त प्रदर्शित किया जाता था। उस युग में देश एक इकाई नहीं था, राज्य ही एक इकाई था।'[२]

---

१. 'निबन्ध-प्रभाकर' - सम्पादक डा० भोलानाथ तिवारी - 'हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना' - लेखक पं० कृष्णचन्द्र विद्यालंकार, पृ० ६७।

२. 'राष्ट्रीय-सांस्कृतिककाव्य' - डा० नगेन्द्र 'हिन्दी साहित्य संग्रह' भाग १ - अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय प्रकाशन, पृ० ११८।

हिन्दी के भक्ति-काल में वीररस का स्वर अधिक मुखर नहीं रहा। श्री फूलचन्द जैन ने लिखा है - 'सन्तों की पावन कुटिया में उठने वाले स्वर ईश्वर गुणगान और भक्ति के वाहक बने।'[१] संसार से विरक्त भक्त-कवियों को किसी राजा के गुणगान की आवश्यकता न थी परन्तु तत्कालीन सामाजिक दुर्दशा एवं राजनीतिक दासता से प्रभावित होकर तुलसी ने लोक-नायक के उज्ज्वल चरित्र को जनता के सामने प्रस्तुत किया और जनता को न्याय एवं कर्त्तव्य के पथ पर चलने का आदेश दिया। तुलसी का उद्देश्य राष्ट्रीय कल्यान एवं पर-दुख निवारण था। डा० किरणकुमारी गुप्त ने लिखा है - 'प्रथम युग की वीरता संकुचित थी - व्यक्तिगत स्वार्थ और व्यक्तिगत दुख ही उसका आधार था किन्तु दूसरे युग की वीरता का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक था। जहाँ मानव स्वार्थ को भूल कर परमार्थ के लिए व्यग्र था, लोक-मंगल और लोकत्राण इसके आधार थे। पर वीरता पर-पीड़न के लिए नहीं थी, परदुःख निवारण के लिए थी। तुलसी और सूर जैसे महाकवियों ने राम और कृष्ण के इसी वीर स्वरूप के दर्शन कराये।'[२] इस प्रकार वीरता का व्यापक, शुद्ध और हितकारी रूप 'सर्वजन सुखाय' था।

रीतिकालीन साहित्य में शृंगारिक भावनाओं को प्रमुखता मिली परन्तु इस युग में भूषण और लाल की कविताओं में देशभक्ति के स्वर मिलते हैं। भूषण को राष्ट्रीय कवि स्वीकार करने के विषय में विद्वानों में मतभेद

---

१. 'प्रबन्ध-प्रबोध' - फूलचन्द्र जैन - 'हिन्दी कविता में वीर एवं राष्ट्रीय भावना', पृ० १६५।

२. 'साहित्य-सन्देश' - अक्टूबर १६६३ - पृ० १५०-१५१ - 'हिन्दी साहित्य में वीर-काव्य का विकास' - डा० किरणकुमारी गुप्त।

है । डा० नगेन्द्र का कथन है – " 'छत्रसाल' और 'शिवाजी' में भी राष्ट्रीयता का अर्थ हिन्दुत्व ही था । भूषण और लाल की कविता में देश-भक्ति के इसी रूप को वाणी दी गई है । परन्तु यह भावना भी कुल मिलाकर इतनी विरल थी कि रीति युग में शृंगार की सहस्र धारा में तुरन्त ही विलीन हो गई ।"[१] भूषण का राष्ट्रीय काव्य यद्यपि ओजपूर्ण है, उत्साहवर्द्धक है, जागृति का सन्देश लेकर मृतक जनता में नवीन प्राणों का संचार कर रहा है तथापि उसका सम्बन्ध एक विशेष जाति एवं वर्ग से है:-

" इन्द्र जिमि जम्भ पर बाडव सुअम्भ पर,
रावण सदम्भ पर रघुकुल राज है ।
पौन बारिबाह पर सम्भु रतिनाह पर ,
ज्यों सहस्र बाह पर राम द्विजराज है ।।
दावाद्रुम - दंड पर चीता मृग-झुंड पर,
भूषण वितुण्ड पर जैसे मृगराज है ।
तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलिच्छ-बंस पर सेर सिवराज है ।।"[२]

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग में राष्ट्रीय काव्य में समुन्नत विकास हुआ । विदेशी शासन के विरुद्ध दीर्घकालीन राष्ट्रीय आन्दोलन में यहाँ के कवियों ने आरम्भ से ही सक्रिय भाग लिया और जनता की हृदय-

---

१. 'राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य' - डा० नगेन्द्र 'हिन्दी साहित्य संग्रह भाग-१' अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय प्रकाशन , पृ० ११८ ।
२. (शिवराज भूषण से उद्धृत) काव्य निर्झरिणी , सम्पादिका - कंचनलता सब्बरवाल, पृ० ८१-८२ . ~~'हिन्दी कविता में वीर एवं राष्ट्रीय भावना' , पृ० १६७ ।~~

सुप्त भावनाओं को नवीन वाणी प्रदान की । सन् १८५७ से लेकर सन् १९४७ तक के संघर्ष काल में अनेक आन्दोलनों एवं हत्याकाण्डों के फलस्वरूप राष्ट्रीय भावना पूर्णरूपेण जागृत हो उठी । अनेक सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं साहित्यिक आन्दोलनों के परिणामस्वरूप जनता निजी जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त करने के लिए लालायित हो उठी । श्री फूलचन्द्र जैन ने लिखा है :- "हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना का वास्तविक विकास आधुनिक काल में हुआ है । आधुनिक हिन्दी कविता का जन्म ही देशप्रेम, समाज-सुधार ,अतीत गौरव गान की कविताओं के साथ हुआ । सामन्ती राजदरबार में पलने वाली रीतिकालीन कविता आधुनिक काल में आकर जन-जीवन की वासिनी बनी ।"[१] डा० नगेन्द्र ने इसे आधुनिक युग में हिन्दी की एक प्रबल प्रवृत्ति माना है ।[२] सन् १८५७ का प्रथम स्वतंत्रता युद्ध, सन् १८८५ में कांग्रेस की स्थापना, सन् १९२० का असहयोग आन्दोलन,सन् १९३० का सत्याग्रह एवं सन् १९४२ की क्रान्ति ने विदेशी शासन की जड़ें हिलादीं थीं ।

आधुनिक युग में सर्वप्रथम भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के नेतृत्व में राष्ट्रीय एवं देश-प्रेम पूर्ण रचनाएँ लिखीं गयीं । स्वयं इस क्षेत्र में भारतेन्दु जी ने प्रशंसनीय रचनाएँ लिखी । भारतेन्दु युग से ही यहाँ के कवियों ने अपनी राष्ट्रीय कविताओं में असंतोष की भावना को प्रकट किया । इसके अतिरिक्त देश-प्रेम, स्वर्णिम अतीत का गौरवगान एवं वर्तमान दुर्दशा पर भी अनेक रचनाएँ लिखी गयीं हैं । स्वयं भारतेन्दु जी ने लिखा है :-

---

१. प्रबन्ध - प्रबोध - फूलचन्द्र जैन - 'हिन्दी कविता में वीर एवं राष्ट्रीय भावना, पृ० १९७ ।

२. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' - डा० नगेन्द्र , पृ० १९ ।

'रोवहु सब मिलि के आवहु भारत भाई
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ।
सब कें पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो
सबके पहिले जो रूप रंग रस पीनो
अब सब के पीछे सोई परत लखाई ।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ।'[१]

भारतेन्दु जी के साथ-साथ सर्वश्री बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, बालमुकुन्द गुप्त, प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी एवं राधा-कृष्णदास तथा अन्य कवियों ने मातृभूमि के प्रति उऋण होने का प्रयत्न किया। विदेशी सरकार द्वारा दिए गए अनेकों आश्वासनों के कारण भारतीय कवियों ने इस युग के आरम्भिक वर्षों में महारानी के प्रति प्रशंसा पूर्ण गीत भी लिखे हैं[२] परन्तु जब वे प्रण पूरे नहीं हुए तो दुखद जनता अत्यधिक क्रुद्ध हो उठी । इस युग के कवियों ने विशेष रूप से हिन्दू जाति में देश प्रेम की भावना को उभारने का प्रयत्न किया । डा० केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है — 'इन कवियों ने हिन्दुओं को देश की उन्नति के लिए काम करने को उत्साहित किया । देशभक्ति की भावना से भरकर ही हिन्दू-जाति ने अपने सामान्य लक्ष्य-भारत की स्वाधीनता - की प्राप्ति के लिए दूसरी जातियों के प्रति प्रेम का हाथ बढ़ाया ।'[३] इस प्रकार स्वस्थ राष्ट्रीय भावना का जन्म भारतेन्दु युग

---

१. नये पुराने झरोखे - 'बच्चन', पृ० ११७ ।
२. 'जयति धर्म सब देश जय भारत - भूमि- नरेश ,
जयति राज राजेश्वरी जय जय जय परमेश ।'
- अंबिकादत्त व्यास - 'मन की उमंग' -आधु० काव्यधारा, पृ० ३०.
३. आधु० काव्य धारा - शुक्ल , पृ० ६० ।

में हुआ । वह युग (१८५७-१९००) विवशता का युग था और सर्वप्रथम कांग्रेस की स्थापना के फलस्वरूप शत्रु के विरुद्ध संयुक्त मोर्चे का प्रयत्न किया जा रहा था । डा० श्रीकृष्णलाल ने लिखा है – `हिन्दी में राष्ट्रीय कविता के जन्मदाता हरिश्चन्द्र हैं ।`[१]

द्विवेदी-युग में संघर्ष के कारण चेतना का जागरण हुआ और भारत के राजनीतिक रंगमंच पर लोकमान्य तिलक और फिर गांधी जी का पदार्पण हुआ । असन्तोष की भावना दिन प्रतिदिन बढ़ रही थी और विदेशी शासकों के अत्याचार अग्नि में घृत का कार्य कर रहे थे । श्री केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है – `द्वितीय उत्थान की देशभक्ति-सम्बन्धी रचना का क्षेत्र भारतेन्दु युग की देशभक्ति-विषयक कविता से अधिक व्यापक है । - - - कवियों का एकता के लिए विशेष आग्रह है । साम्प्रदायिक सामंजस्य और सदिच्छा के लिए कवि विशेष रूप से यत्नशील हैं । भारत की उन्नति के लिए ये कवि सभी जातियों से सच्चा मेल चाहते हैं ।`[२] इस युग के प्रसिद्ध कवियों में सर्वश्री श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, रामचरित उपाध्याय , गोपालशरणसिंह, गयाप्रसाद शुक्ल `स्नेही` एवं राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त हैं जिन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन में मातृभूमि के लिए सक्रिय योद्धा के समान अनथक कार्य किया । इस युग की प्रसिद्ध रचना `भारत-भारती` है । श्री फूलचन्द्र जैन ने लिखा है – `गुप्त जी की `भारत-भारती` तो राष्ट्रीय गीता रही है । उसने देश के लाखों युवकों को देशप्रेम और बलिदान की प्रेरणा दी है ।`[३]

---

१. आधु० हिन्दी साहित्य का विकास - श्री कृष्णलाल - `राष्ट्र अथवा जन्मभूमि` , पृ० ८२ ।

२. आधु० काव्य धारा - शुक्ल, पृ० १५६ ।

३. `प्रबन्ध-प्रबोध` - फूलचन्द्र जैन - `हिन्दी कविता में वीर एवं राष्ट्रीय भावना` , पृ० १६७ ।

इसकी मूल प्रतिज्ञा ही वास्तविक समस्या का उद्‌घाटन करती है :-

हम कौन थे क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी ।
आओ विचारें आज मिल कर ये समस्याएँ सभी ।।[१]

इसी प्रकार 'अनघ' नामक गीति-नाट्य का मुख्य सूत्र राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है :-

'न तन सेवा न मन सेवा, न जीवन और धन सेवा ।
मुझे है इष्ट जन-सेवा, सदा सच्ची भुवन-सेवा ।।'[२]

डा० प्रेमनारायण शुक्ल ने लिखा है – 'साहित्य में भी राष्ट्रीयता की भावना आधुनिक युग विशेषकर स्वातंत्रय-युद्ध-काल की देन है । देश के उत्थान के लिए भारत-माता के अनेक सपूतों ने अपनी पवित्र वाणी की ओज-मयी ध्वनि को घर घर में गुँजा दिया । इस प्रकार हिन्दी साहित्य में एक रा-ष्ट्रीय धारा चल पड़ी । इस राष्ट्रीय कविता के विषय थे - मातृभूमि का स्तवन, स्वदेश-गौरव-गान, अतीत चिन्तन, वीर-प्रशस्ति, राष्ट्रीय चेतना, संघर्ष की भावना, अंग्रेज़ों के प्रति घृणा, स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार तथा विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, चरखा और खादी, अछूतोद्धार आदि ।'[३]

आधुनिक युग के तृतीय उत्थान में भारतीय साहित्य एवं राजनीतिक रंग-मंच पर नवीन साहित्यकारों एवं नेताओं का आगमन हुआ और अहिंसा

---

१. 'भारत-भारती' - 'गुप्त' , पृ० १० , प्रकाशन तिथि २०१३ वि०, प्रकाशक साहित्य-सदन चिरगाँव, झाँसी ।
२. 'अनघ' - 'गुप्त' , पृ० , प्रकाशन तिथि ।
३. 'हिन्दी साहित्य में विविध वाद' - डा० प्रेम नारायण शुक्ल, पृ० २१८ ।

के माध्यम से हिंसा पर विजय पाने का संघर्ष दिन प्रतिदिन ज़ोर पकड़ने लगा । इन्हीं दिनों गुप्त जी के अतिरिक्त सर्वश्री माखनलाल चतुर्वेदी, बाल कृष्ण शर्मा 'नवीन' जयशंकर प्रसाद, दिनकर एवं सुभद्रा कुमारी चौहान ने राष्ट्रीय काव्यधारा को आगे बढ़ाया । अब राष्ट्रीय-आन्दोलन का उद्देश्य देश एवं देश के प्रत्येक प्राणी को विदेशी शासन से मुक्त करना था । डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'राष्ट्रीयता के तृतीय उत्थान में कांग्रेस ने शक्ति प्राप्त कर ली थी और उसका नेतृत्व गाँधी जी के हाथ में आ गया था । यहाँ राष्ट्रीयता का वास्तविक स्वरूप स्पष्ट हो गया था । राष्ट्र अब प्रादेशिकता, प्रान्तीयता, साम्प्रदायिकता आदि से ऊपर सम्पूर्ण हिन्दुस्तान की एक संगठित इकाई बन गया था ।'[१] विषम परिस्थितियों में 'नवीन' जी ने अपनी काव्य-साधना आरम्भ की । स्वयं उन्होंने 'कुंकुम' की भूमिका में लिखा है – 'आज आप की इस वृद्धा जननी-जन्मभूमि के आँगन में नई बातें, नई समस्याएँ, नई भावनाएँ, नई आकांक्षाएँ, खेल रही हैं – वही ऊधम मचा रही हैं । ऐसे समय यदि हृदय में आकुलता उमड़े तो क्या आश्चर्य ?'[२] उन्हें जीवन में सुख प्राप्त नहीं था । स्वयं 'नवीन' जी कांग्रेस के प्रधान स्तम्भ थे और मृत्यु-पर्यन्त देश सेवा में व्यस्त रहे । उन्होंने अपने को 'संक्रान्ति काल का प्राणी' कहा है :-

'हम संक्रान्ति काल के प्राणी बदा नहीं सुख भोग,
हमें क्या पता क्या होता है स्निग्ध-सुखद संयोग ?
हम विक्षोह के पले, खूब जाने हैं पूर्ण वियोग

---

१. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ'- डा० नगेन्द्र, पृ० १२ ।
२. 'कुंकुम' - कुछ बातें, पृ० १२ ।

घर उजाड़ कर जेल बसाने का है हम को रोग - !'[१]

राजनीतिक आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेने के कारण वे जन-गण की कठिनाइयों से भली भाँति परिचित थे परन्तु उन कठिनाइयों से वे एक योद्धा के समान जूझने का आदेश देते हैं और जनता की सुषुप्त भावनाओं को जाग्रत करने का प्रयत्न करते हैं :-

'भूखा देख तुझे गर उमड़े आँसू नयनों में जग-जन के, -
तो तू कह दे : नहीं चाहिए हमको रोने वाले जनखे ;
तेरी भूख ; असंस्कृति तेरी, यदि न उभाड़ सके क्रोधानल, -
तो फिर, समझूँगा कि हो गयी सारी दुनिया कायर निर्बल !'[२]

देश के विषैले वातावरण ने उनके हृदय पर इतनी गहरी चोट की कि वे सहन न कर सके और अपनी कविताओं द्वारा उसका स्फुटीकरण करने लगे :-

'आज दानवी मद गरजा है गहरतिमिर आवृत होकर,
फूला नहीं समाता है वह इस तम में निज को खोकर,
ध्वान्त-दुर्ग में आज हो रहा आसुर भावों का गर्जन ,
वहाँ हो रहा है क्षण-२ में पैशाचिकता का सर्जन ,
अन्त हो गया है मानो अब मानवता की सद्गति का,
दनुजों ने जग में खोदी है गहन तमिस्रा की परिखा ।'[३]

---

१. 'हम विषपायी जनम के' - 'राखी की सुध' , पृ० ४६७ ।
२. वही - 'झूठे पत्ते' , पृ० ४६४ ।
३. वही - 'गहन तमिस्रा की परिखा' , पृ० ४६५ ।

'नवीन' को व्यक्ति-गत सुख अभीष्ट नहीं था यही कारण है ,गांधीजी से प्रभावित होकर वे राजनीतिक क्षेत्र में उतर आए । उस समय की राजनीति का अवसर-वादिता से कोई खास गठबन्धन नहीं था क्योंकि राजनीति कभी अन्धेरे तो कभी उजाले में, कभी काँटों पर तो कभी फूलों पर चल रही थी और मंजिल तो कुहरे में डूब गई थी । पर उत्साह था कि कभी तो कुहरा हटेगा ।[१] इसी कारण 'नवीन' जी का कथन सार्थक है :-

'यह क्रान्ति-काल , संक्रान्ति-काल ,
यह सन्धि-काल युग-घड़ियों का ,
हाँ ! हमीं करेंगे गठ-बन्धन ,
युग-ज़ंजीरों की कड़ियों का ।[२]

अनेकानेक कठिनाइयाँ सहन करते हुए 'नवीन' जी ने कारागृह के शून्य कक्षों में प्रणय एवं देश-प्रेम की रचनाएँ लिखी हैं और इनमें उन्हें अपनी आत्मा का रस उंडेलना पड़ा ।[३] पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा है — 'अपने जीवन को बालकृष्ण जी ने राष्ट्रसेवा के पथ में दोनों ओर से जलने वाली मोमबत्ती की तरह बना लिया ।'[४] अनेक बार उनके हृदय में असंतोष

---

१. 'राष्ट्र वीणा' - '(महाराष्ट्र राष्ट्र भाषा सभा) सम्पादकीय - पृ० २ , जून १९६० (पाहुन आए औ चले गए ।)

२. 'हम विषपायी जन्म के' - विद्रोही , पृ० ४८५ ।

३. 'नवीन' को सांस्कृतिक कविताओं में अपने आत्मा का रस उंड़ेलना पड़ा और जो ऐसा नहीं कर सके वे काव्य-इतिहास के पृष्ठ से लुप्त हो गये।
- हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृतियाँ - डा० नगेन्द्र , पृ० ३६.

४. 'सरस्वती' जून १९६० - 'त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा' 'नवीन' - माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० ३८२ ।

एवं कटुता उत्पन्न हुई परन्तु उस विष को पीकर उन्होंने अपनी सहनशक्ति एवं दृढ़-प्रतिज्ञा का परिचय दिया। डा० केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है — 'समय के साथ भारतेन्दु-युग की राजनीतिक चेतना और जागृति बढ़ती गई और इसी के साथ-साथ उस कटुता और असंतोष की वृद्धि हुई जो राजनीतिक स्वत्वों की व्यंजना और अभाव से जन्म लेती है।'[१] अपने दुख का कारण स्वयं भी उन्होंने प्रकट किया है।[२]

राष्ट्रीय जागरण के साथ-साथ विदेशियों की कूट-नीति के कारण साम्प्रदायिक झगड़ोंने जन्म लिया और इन्हीं साम्प्रदायिक झगड़ों में 'नवीन' जी के परम गुरु श्री गणेश शंकर विद्यार्थी देश की एकता के लिए बलिदान हुए। स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है :-

'राष्ट्रीय भावना जब उभरी , तब भाव साम्प्रदायिक उमड़े ,
चमकी जब मुक्ति छटा चपला तब ये दल-बादल भी घुमड़े ,
विंशति शताब्दि का प्रथम चरण लाया जब नवल-२ सपने ,
जब महाराष्ट्र उभरा ; उभरा जब बंग तोड़ बन्धन अपने ,
तब घोर साम्प्रदायिकता के दावानल की फैली ज्वाला !'[३]

'नवीन' जी के समस्त राष्ट्रीय काव्य को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है :-

(१) मुक्तक रचनाएँ— 'कुंकुम' , 'रश्मि रेखा' , 'क्वासि' एवं 'हम विषपायी जन्म के' में संग्रहीत कविताएँ।

---

१. आधुनिक काव्यधारा — केसरी नारायण , पृ० २५६ ।
२. 'हम लोग संक्रान्ति काल के प्राणी होने के नाते अपनी अतृप्त अभिलाषाओं के कारण दुखी हैं।' — 'कुंकुम' - कुछ बातें , पृ० १३ ।
३. 'प्राणार्पण', पृ० १४ ।

(२) प्रबन्ध रचना - 'प्राणार्पण' ।

उनके राष्ट्रीय-काव्य में विभिन्न प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर, हम निम्नलिखित रूप से उसका विभाजन कर सकते हैं :-

(क) स्वर्णिम अतीत का गौरवगान, (ख) वर्तमान दुर्दशा, (ग) देशभक्ति की कविता - जन्मभूमि के प्रति गीत एवं बलिदान की भावना, (घ) पीड़ित श्रमिकों एवं कृषकों का चित्रण, (ङ) विदेशी शासन पर आक्रोश - जागरण गीत, (च) वीर पूजा एवं बन्दी जीवन, (छ) सामाजिक सुधार एवं भविष्य-निर्माण, (ज) राष्ट्रीय काव्य में संकेतात्मकता, (झ) राष्ट्रीय काव्य में आशावादी सन्देश, (ञ) क्रान्तिकारी काव्य एवं विप्लवधारा। इन्हीं प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर 'नवीन' के सम्पूर्ण राष्ट्रीय-काव्य का विवेचन किया जाएगा।

(क) स्वर्णिम अतीत का गौरव गान :-

प्राचीन संस्कृति के स्वर्णिम युग का वर्णन 'नवीन' जी ने मुक्त कंठ से किया है। उन्होंने प्राचीन धार्मिक एवं साहित्यिक ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन किया था और उस वैभवशाली अतीत के गुणगान द्वारा वे किंकर्तव्य-विमूढ़ जनता में नवीन प्राणों का संचार करना चाहते थे। इस युग के समस्त कवियों की यह एक बड़ी भारी विशेषता रही कि वे भारत के गौरवपूर्ण अतीत के बड़े प्रेमी और भक्त थे। प्रत्येक कवि ने किसी न किसी रूप में अतीत का गौरव गाया है। भारत का अतीत धर्म, ज्ञान, विज्ञान, कृषि, योग, दर्शन, धन, वैभव, सभ्यता, संस्कृति सब में संसार के सब देशों से आगे था। देश की परतंत्र गिरी हुई दशा में उसका यह गौरवपूर्ण अतीत, उसकी स्वाभिमान-रक्षा का एकमात्र आधार और उसकी प्रगति-प्रेरणा का एकमेव तत्व था।[१]

१. 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' - एक अध्ययन - रामाधार शर्मा, पृ० ५७।

राष्ट्रीय-जागरण में साहित्यकारों ने इससे बड़ी सहायता ली है। 'नवीन' जी अपने उज्ज्वल अतीत का संकेत करते हुए लिखते हैं :-

'ओ, मेरे उज्वल विगतकाल, ओ मेरे बल-विक्रम-निधान,-
है रमा हुआ जो विगत काल इस भारत के रज-कण-कण-कण में,-
लहराता है जो नित मेरे जन-गण के शोणित-नर्तन में, -
जिसकी महिमा के साक्षी हैं मेरे पहाड़, मेरे जंगल, -
मेरी नदियाँ जिसकी गाथा गाती रहती हैं कल-२-२ ;'[१]

'नवीन' जी उन ऋषियों, पण्डितों, विद्वानों, ज्योतिषियों एवं समाज सुधारकों का स्मरण करते हैं जिन्होंने प्राचीनकाल में इस देश के निर्माण में तथा इसकी उन्नति में प्रशंसनीय योगदान दिया है :-

'वे व्यासदेव, वे वाल्मीकि, वे भारवि, वे भवभूति करुण,
धन्वन्तरि, कापणक, अमरसिंह, वेकालिदास नित तरुण अरुण,
बेताल भट्ट, वे घटकर्पर, ज्योतिष आचार्य वराह मिहिर,
वे नागार्जुन, भास्कराचार्य, जिनने मेरा अज्ञान-तिमिर,
वे मध्व, और वे रामानुज, वे वल्लभ, वे दिग्गज शंकर,
अब भी जग के नीलाम्बर में लहराता जिन की ज्योति लहर।'[२]

डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'भारत का अतीत सभी दृष्टियों से महान् और गौरव मंडित है। भारत का प्राचीन समृद्धि-वैभव, शौर्य-पराक्रम, दया-दाक्षिण्य, ज्ञान-गरिमा, जीवन-दर्शन, सभी अत्यन्त भव्य हैं। भारत की विराट्, उज्ज्वल-मूर्ति के प्रतिष्ठान के साथ उसके प्राचीन गौरव का पुनरुत्थान

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'मेरे अतीत की ज्योति-लहर', पृ०५०१।
२. वही वही , पृ०५०५।

भी आरम्भ हुआ । देशभक्ति-काव्य का यह प्रसंग कविता की दृष्टि से सबसे समृद्ध है ।'[१]

वास्तव में यही कविताएँ वर्तमान युग में पाठकों को भूतकालीन समृद्धि का स्मरण दिलाती हैं । एक ओर जहाँ इन कविताओं में गौरवशाली अतीत का गौरव-गान मिलता है वहाँ दूसरी ओर वर्तमान दुर्दशा एवं दुर्गन्ध को मिटाने का सांकेतिक सन्देश भी इनमें निहित है :-

'शतियों से नदियाँ इस भू की गरज रही हैं क्रोध-भरी ।
शतियों से सागर की लहरें गरज रहीं प्रतिशोध-भरी ।
यह वृद्धा पृथिवी माता भी गरज रही है , गोद-भरी।
बस, तुम ही भूले हो अपनी विकट गर्जना प्रलयंकर ;
गरजो , सोने वालो , गाओ , जागृति के ये भैरव-स्वर ।'[२]

प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है - 'एक समय था जब भारत की धरती पर जन्म लेने के लिए देवता भी ललचाते थे । रामकृष्ण की वही राग-मयी धारा आसुरी सुरा से एक दीर्घ काल तक सिक्त रही ।'[३] इस पावन धरती पर आज दानव लीला स्वच्छन्द रूप से हो रही है । यह वही धरती है जिसके विषय में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने लिखा है :-

' जहँ शाक्य भए हरिचंदक नदुष ययाती,

---

१. 'राष्ट्रीय - सांस्कृतिक कविता' - डा० नगेन्द्र - 'हिन्दी साहित्य संग्रह-भाग १' - पृ० १२८ , अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, प्रकाशन ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सुनो,सुनो ओ सोने वालो !', पृ०४६२।
३. 'नवीन-दर्शन'- 'उपाध्याय' , पृ० ५४ ।

जहँ राम युधिष्ठिर वासुदेव सयाती ।
जहँ भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती,
तँह रही मूढ़ता कलह अविद्या राती ।
अब जहँ देखहु तहँ दु:खहि दु:ख दिखाई,
हा हा भारत दुर्दशा न देखी जाई ।"[१]

इस देश में महान पुरुषों ने जन्म लिया है जिन्होंने संकट में इसका उद्धार किया । वे ही महान् पुरुष आज इस धरती के गौरव स्तम्भ हैं । उन कीर्ति स्तम्भों का ध्यान दिलाकर 'नवीन' जी अपने जन-गण को मातृ-सेवा के लिए ललकार रहा है :-

'वेदों के महा यन्त्र द्रष्टा गुंजित है जिन का अमर नाद,
वे गूढ़ तत्व दर्शी योगी, सिद्धेश कपिल , गौतम, कणाद,
वे महावीर, वे शुद्ध बुद्ध , मानवता के वे सब त्राता ,
उनकी सबकी प्यारी जननी है यही वृद्ध भारत-माता ।
है यही तुम्हारी माँ, यह लख क्या तुम उठते हो नहीं सिहर ?
लहराओ अपने अम्बर में अपने अतीत की ज्योति-लहर ।"[२]

श्री 'दिनकर' जी ने भी अपनी प्रसिद्ध कविता 'हिमालय के प्रति' में ऐसी ही भावनाओं को व्यक्त किया है :-

'तू पूछ अवध से, राम कहाँ ? वृंदा ! बोलो, घनश्याम कहाँ ?
ओ अवध ! कहाँ मेरे अशोक , वह चन्द्रगुप्त बल-धाम कहाँ ?

---

१. 'भारतेन्दु नाटकावली' - भारत-दुर्दशा , पृ० ५७८ (आधु० काव्य धारा, पृ० ५२) ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'मेरे अतीत की ज्योति-लहर', पृ०५०५ ।

पैरों पर पड़ी हुई मिथिला भिखारिणी सुकुमारी,
तू पूछ कहाँ उसने खोयी अपनी अनन्त निधियाँ सारी ।
री कपिलवस्तु । कह बुद्धदेव के वे मंगल उपदेश कहाँ ?
तिब्बत, ईरान, जापान, चीन तक गये हुए सन्देश कहाँ ?'[१]

यह नितान्त आवश्यक है कि वर्तमान दुर्दशा का सजीव चित्रण करने के लिए उसके दूसरे-पक्ष (अर्थात् स्वर्णिम-अतीत) का भी सर्वप्रथम विशद् वर्णन हो । पाठक अपने भूतकालीन स्वर्णिम युग से परिचित होता है और तत्पश्चात् वर्तमान असहनीय - विषम परिस्थितियों से उनकी तुलना कर सकता है, इस प्रकार परिस्थिति को समझने का उसे सुअवसर प्राप्त होता है । 'नवीन' जी इस तथ्य से भलीभाँति परिचित थे, अत: उन्होंने लिखा है:-

' तुम अपने सुविगत की गाथा पूछो बाली से, लंका से ,
तुम हिन्द महार्णव से पूछो ; हो क्यों आक्रान्त कुशंका से ?
प्राचीन चीन से तुम पूछो अपने गत गौरव की गरिमा ,
ह्यूएन्थसग औ' फ़ाह्यिान गा गये तुम्हारी वह महिमा ।
अपने इतिहास पुरातन का तुम स्मरण करो वह स्वर्ण-प्रहर,
लहराओ अपने अम्बर में अपने अतीत की ज्योति-लहर ।'[२]

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने लिखा है - 'प्राचीन जीवन के सद्गुण भारत के नव-निर्माण में क्या योग दे सकते हैं , इसका टकसाली उदाहरण

---

१. 'हिमालय के प्रति' - 'दिनकर' - प्रवाहिणी (खण्ड२) संकलनकर्ता - प्रो० क०न० दर , पृ० ५० ।

२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'मेरे अतीत की ज्योति-लहर' , पृ० ५०३-५०४ ।

'नवीन' जी का व्यक्तित्व था । उनकी प्राचीन निष्ठा 'नवीन' की प्रतिष्ठा के लिए थी ।'[१] नैराश्यपूर्ण वर्तमान के कारुणिक दृश्य को मिटाने के लिए 'नवीन' की वाणी प्रखर और तीव्र गति से फूट पड़ती है:-

'जागो, ओ अपने अतीत का उज्ज्वल गौरव खोने वालो,
जागो, निज आकांक्षाओं के नित शत-शत शव ढोने वालो ।
जागो , मेरे मानव, जिनके हाथ-पाँव हैं, सूखे - सूखे ,
जागो नर कंकाल करोड़ो, जागो, मेरे नंगे - भूखे ।'[२]

विदेशी आक्रमणकारियों ने भारत के प्राचीन वैभव को नष्ट-भ्रष्ट किया । निरन्तर संघर्ष के कारण एवं विदेशी संस्कृति के पदार्पण से भारतीय संस्कृति की नींव हिलने लगी, और जब विदेशी शासक अधिकारी बने तो हमारी प्राचीन सुरक्षित निधि अकारण मिट्टी में मिल गयी । प्रो० राजमल बोरा ने लिखा है – 'राष्ट्रीय साहित्य में परम्परा के प्रति मोह होता है । वह वर्तमान की अपेक्षा भूत की अधिक चिन्ता ही नहीं करता बल्कि उसकी सुरक्षा का आग्रह भी करता है । राष्ट्रीय साहित्य एक प्रकार से जागरण का साहित्य है । जब देश या जाति अपने गौरव को भूलने लगती है, या उसका पतन होने लगता है या उसकी आत्मा को ज़बरदस्त धक्का लगता है तो राष्ट्रीय साहित्य का सर्जन होना आवश्यक हो जाता है । यही साहित्य उनमें सामूहिक उत्थान का भाव पैदा कर सकता है । अतीत की गौरव गाथाएँ उनमें फिर आत्माभिमान का भाव जागृत करती हैं । खोया हुआ बल उन्हें प्राप्त होता है और वे फिर

---

१. 'विशाल-भारत' - संख्या (१-६) जनवरी - जून १९६० , लेख - स्वर्गीय नवीन जी , लेखक - डा० वासुदेव शरण अग्रवाल , पृ० ४७९ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ० ४७९।

आगे बढ़ने में समर्थ होते हैं ।"[१] निर्बल जनता को पुन: संघर्ष करने के लिए 'नवीन' जी के गीत प्रेरित करते हैं :-

> 'अहंकार, मस्तिष्क, बुद्धि, मन, यह भव-रूप और अभ्यन्तर, -
> कला, काव्य, इतिहास पुरातन, ललित कलित कोमल गायन-स्वर,
> तत्व-लक्ष्य एकान्त साधना, दर्शन, चिन्तन, मनन निरन्तर,-
> यह अपूर्ण सम्पत्ति तुम्हारी है भारत की माटी का धन ;
> भारत - खण्ड के तुम हे जन - गण ।"[२]

कवि भविष्य का कल्याण इसी में देखता है । इसी के द्वारा वह सु-षुप्त जनता को जागृति की ओर उन्मुख करता है । वे देशवासियों को प्राचीन गौरव की ओर संकेत करते हैं । श्री केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है –"इससे कवियों में आत्म सम्मान और आत्म निर्भरता आई । इसने संकट के समय में उत्साह और साहस दिया । अतीत की भव्यता कवियों के हृदय में आशा का संचार करती है और उन्हें देश के आशापूर्ण भविष्य का विश्वास दिलाती है।"[३]

'नवीन' जी ने श्रीमद्भगवतगीता का गूढ़ अध्ययन किया था और इसके सन्देश को (कर्म की प्रेरणा) स्वयं उन्होंने अपना जीवन-लक्ष्य बनाया। वे सदा कार्यरत रहे और दुर्दम अन्धकार को मिटाने के लिए जनता का सहयोग चाहते थे :-

> 'ज्योतिष्पुंजों के हम सृष्टा, हम अनल-मन्त्र के छन्द-कार,

---

१. 'साहित्य-सन्देश' - अप्रैल १९६३ - 'राष्ट्रीय साहित्य' - प्रो० राजमल वोरा , पृ०४१५ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'भारत खण्ड के तुम हे जन-गण ।',पृ०४१०।
३. आधु०काव्यधारा - केसरी नारायण 'शुक्ल', पृ० १६१ ।

हम दुर्दम तम को क्यों न दलें ? हम सूर्यकार, हम चन्द्रकार !'[१]

इस गहन अन्धकार को मिटाने के लिए गुप्त जी अपनी कविता 'शुभ कामना' में पूर्वजों के पथ-चिह्नों पर चलने का आदेश देते हैं और उन्हीं के समान गुणवान बनने के इच्छुक हैं :-

'सब की नसों में पूर्वजों का पुण्य रक्त-प्रवाह हो,
गुण, शील, साहस, बल तथा सब में भरा उत्साह हो ।
सब के हृदय में सर्वदा समवेदना का दाह हो ,
हमको तुम्हारी चाह हो , तुम को हमारी चाह हो ।'[२]

'नवीन' जी के राष्ट्रीय काव्य में अतीत का गौरव गान अनेक स्थलों पर मिलता है, इसका प्रमुख उद्देश्य दलित एवं पीड़ित जनता को अपने उज्ज्वल अतीत से परिचित कराना था और उसे प्रेरणा साहस एवं बल प्राप्त कर वर्तमान विकट स्थिति से जूझना था ।

वर्तमान दुर्दशा :

अतीत गौरवगान के साथ-साथ 'नवीन' जी ने वर्तमान विषम एवं हृदयविदारक परिस्थितियों का बड़ा ही सजीव चित्रण किया है । देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विषमता से उनके हृदय में व्यथा का पारावार उमड़ पड़ा था । भारतीय आत्मा अंग्रेज़ों के निरन्तर होने वाले अत्याचारों तथा शोषण से कराह उठी थी । विदेशी शासकों ने भारत का

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विद्रोही' , पृ० ४८३ ।
२. 'शुभ कामना' - मैथिली शरण गुप्त - 'साहित्य-सुधा' - डा० गिरिधारी लाल शास्त्री , पृ० ८१ ।

सभी प्रकार से पराभव चाहा । सतत शोषण एवं अत्याचारों की वृद्धि ने भारतीय आत्मा में भीषण दावाग्नि प्रज्वलित की थी । कवि ऐसी स्थिति में विष का घूँट पीकर रह जाता है :-

'परामूत, पददलित, प्रताड़ित, भीषण अत्याचार विमर्दित,-
दण्डित, व्रण-मंण्डित, खण्डित तन, निरानन्द, पद-पद परवर्जित,
मानव को मैं देख रहा हूँ आज सतत ठुकराये जाते ;
देख रहा हूँ , टूट रहे हैं मानव मन के सारे नाते ।
देख रहा हूँ अनाचार का महा भयंकर ताण्डव नर्तन ,
और सुना रहा हूँ मानव का यह विकराल पाशविक गर्जन ।'[१]

अज्ञान का तमस अन्धकार चारों ओर फैला हुआ था । विदेशी पग-पग पर भारतीयों का अपमान करते थे और उन्हें घृणा की दृष्टि से देखते थे । डा० श्री कृष्णलाल ने लिखा है - 'राष्ट्रीय कविता का दूसरा पक्ष भारत के अतीत गौरव का भान और वर्तमान अवनति के प्रति विक्षोभ की भावना है ।'[२] तत्कालीन सामाजिक विशृंखलता के कारण कवि हृदय मसोस कर रह जाता है :-

'जड़ता बनी धर्म का भूषण, शठता आचार्या बन बैठी,
भूतदया का रूप धरे यह निपट निपुंसकता है ऐंठी ;
सामाजिक औदास्य - भावना बनी भाग्य का फेर निराला,
निरुत्साह, दौर्बल्य, भीति का पड़ा हुआ है उस पर पाला ।'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'घूँट हालाहल' , पृ० ४६२ ।
२. 'आधु०हिन्दी साहित्य का विकास' - श्री कृष्णलाल , पृ०८५ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अरी धधक उठ' , पृ० ५३४ ।

भूख, जड़ता एवं अशिक्षा बिन बुलाए अतिथि के समान सर्वत्र व्याप्त है । देश दो वर्गों में बटा हुआ है - शोषक एवं शोषित । एक ओर खाने के लिए अन्न नहीं तो दूसरी ओर विलास के असंख्य साधन संग्रहीत हैं । डा० लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है - 'अतीत गौरव के साथ ही साथ, 'नवीन जी ने वर्तमान दशा का भी अनावरण किया । अतीत जहाँ मार्ग-दर्शन तथा ज्योति-लहर प्रदान करता है; वहाँ वर्तमान चिन्ता, आक्रोश तथा निदान की ओर उन्मुख करता है ।'[१] भयंकर अकाल का वर्णन करते हुए 'नवीन' जी लिखते हैं :-

> आज चतुर्दिक धधक रही है अति विकराल भूख की होली ,
> और बनी जन-गण की आँखें फैली, फटी भीख की झोली ।
> देखो छाती पर पत्थर रख, वह समूह नर - कंकालों का ।
> देखो, झुण्ड आ रहा है वह भूखे, नंगे कंगालों का ।'[२]

दरिद्रों के शिशु एक चम्मच दूध के लिए बिलख-बिलख कर दम तोड़ देते हैं । साधारण व्यक्ति को तन ढाँपने के लिए वस्त्र, खाने के लिए रोटी और रहने के लिए घर नहीं । प्यारी जन्मभूमि अन्याय के भार से अवनत, पराधीनता के बन्धनों में बंधी अपनी भावी सम्पति को लुटते देख कर अवाक् खड़ी है :-

> मैंने भूखे शिशु को भूखी माँ के स्तन चिचोड़ते देखा,
> मैंने भूखे शिशु की भूखी माँ के प्राण तोड़ते देखा ।
> सुन लो उस शव की छाती से चिपटे भूखे शिशु का क्रन्दन ।

---

१. 'बालकृष्ण शर्मा नवीन : व्यक्ति एवं काव्य'- डा० दुबे , पृ०१६७ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'दग्ध हो रहे हैं मेरे जन' , पृ० ५४२ ।

देखो, विकट भूख-ज्वाला में दग्ध हो रहे हैं मानव-तन ।
देखो भूख-भरी वे आँखें, देखो प्यास-भरे वे लोचन ,
साँस-भरे, उच्छ्वास् भरे वे, दुस्सह त्रास भरे वे लोचन ।
याचनार्थ फैली वह हड्डी, देखो, इसे हाथ कहते हैं ।"[१]

विदेशी शासक की कूटनीति तथा असहनीय अत्याचार भारतीय जनता की कमर तोड़ रहे हैं । उन्होंने सम्पूर्ण भारतवर्ष में साम्प्रदायिकता की अग्नि भड़कायी । भाई को भाई से लड़वा कर पुन: मध्यस्थ का कार्य करने लगे । हिन्दू-मुसलमान के मध्य वैमनस्य का विष बो दिया । अशिक्षित जन-समुदाय उनकी चालों को न समझ सके और आपस में ही अनेकों कट मरे । ऐसी करुणाजनक परिस्थितियों का 'नवीन' जी ने बड़ा ही मार्मिक चित्र खींचा है :-

" जब हाय ! ठन गया था सहसा भाई-भाई में भीषण रण,
जब लोप हुआ था करुणा का, हिंसा की बिजली कड़की थी,
जब नाच उठी थी निर्दयता, जब आग भयानक भड़की थी,
जब लिए पलीता दौड़े थे जन आग लगाने घर-घर में,
तब की है यह मेरी गाथा जब प्रलय हँसा था अम्बर में ।"[२]

भारत देश वास्तव में ग्राम-समूह है । ग्रामीण-जनता की तत्कालीन दशा अकथनीय है । वहाँ यमराज का भयकर साम्राज्य चारों ओर फैला हुआ है । अशिक्षा एवं अन्ध विश्वास उनके जीवन-साथी हैं । भयंकर रोगों के कारण नर-कंकालों के विकराल रूप वहाँ चारों ओर दीख पड़ते हैं :-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'दग्ध हो रहे हैं मेरे जन' , पृ० ५४३ ।
२. 'प्राणार्पण' , पृ० ५ ।

ऐसे ग्राम, भरा है जिन में अति अगाध अज्ञान भयंकर,
मंडराती है जहाँ मूख की उत्कट ज्वालाएँ प्रलयंकर,
जहाँ चू रहा पूति, घृणित अति परिपाटी का, कोढ़ दिवस-निशि,
जहाँ भरी दुर्गन्ध भयानक, जहाँ महामारी है दिशि-दिशि।
निज हतभाग्य राष्ट्र के वे सब ग्राम समूह कुचैले, मैले,
जन-कृति के उपहास-चिह्न ये, वे मानव के रुदन विषैले ;[१]

श्री रामाधार शर्मा ने लिखा है - 'इस युग के कवियों की यह सामान्य प्रवृत्ति रही है कि उन्होंने वर्तमान हीन दशा का सर्वांगीण चित्रण करने का प्रयास किया है। देश की सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि समस्त स्थितियों पर उन्होंने असंतोष प्रकट किया और देश की वास्तविक स्थिति को जनता के सामने स्पष्ट किया।'[२] कवि को ऐसा प्रतीत होता है मानो सारी मानवता विपदा-ग्रस्त हुई है और दानव निरंकुश होकर अपनी संहार लीला कर रहे हैं :-

आज मानवता हुई विकट विपदा-ग्रस्त ;
आज मानव हो रहा है भीति से संत्रस्त ;
आज संस्कृति सूर्य, देखो, हो रहा है अस्तु ;
क्यों करें ऐसे समय हम दैन्य का विस्तार ?'[३]

देश में सर्वत्र विषमता फैली हुई है। कृषि कर्म एक अभिशाप बन गया है। धर्म एवं मज़हब के नाम पर अन्याय एवं अत्याचार भी क्षम्य हो

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ०४६६।
२. 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' एक अध्ययन - रामाधार शर्मा, पृ० ४८।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'ऐसा क्या हमें अधिकार', पृ० ५१४।

गए हैं । धर्म केवल व्यवहार की वस्तु बन गया है । धर्म का वास्तविक रूप धर्मान्धता के कारण अज्ञान के काले मेघों के खण्डों के नीचे छिप गया है । धर्म का नाम लेकर मनुष्य मानवता पर सबसे अधिक अत्याचार कर रहा है:-

'रह गया धर्म, मज़हब इतना ? क्या दीन यही ? ईमान यही ?
कहलाता है क्या धर्म-भाव मानवता का अपमान यही ?
साधारणत: हिंसक पशु भी निज सजातीय के रक्षक हैं,
एकदम मानव हैं जो कि हाय, बनते अपने ही भक्षक हैं ।
सो भी स्वधर्म की छाया में, ले नाम मजहबों - धर्मों का ,
हम गला काटने चलते हैं, ईश्वर के बने इन्सानों का ।'[१]

डा० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ने लिखा है – 'श्याम नारायण पाण्डेय , आनन्द मिश्र, दिनकर और 'नवीन' जी ने खड़ी बोली के 'कोमल-कोमल' युग में उग्र भावनाओं का वर्णन करके, काव्य के - वैविध्य को सुरक्षित रखा है । यह दुरूह न होने के कारण और 'महाभारत', 'आल्हा' पढ़कर उत्साह ग्रहण करने वाली सामान्य जनता में ही नहीं, शिक्षित जनता में भी प्रचलित हुआ । इस काव्य से विदेशी साम्राज्यवाद से लड़ने में भी मदद मिली।'[२] 'नवीन' जी का यह अडिग विश्वास है :-

' जब तक अवश्य रहेंगे ये रिपु -
तब तक कहाँ नवल युग जग में ?
बन्धन ही बन्धन उलझेंगे
इस मानवता के पग-पग में ।'[३]

---

१. 'प्राणार्पण' , पृ० ८ ।
२. 'आधु० हिन्दी कविता : सिद्धान्त और समीक्षा' - डा० विश्म्भरनाथ उपाध्याय, पृ० ३३५ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सिरजन की ललकार मेरी', पृ०६४ ।

विदेशियों ने स्वयं अपने पाऊँ पर कुल्हाड़ी मारी । विदेशी शिक्षा-प्रणाली का प्रचार तीव्र गति से भारत में हुआ । भारतीय जनता को पश्चिमी आन्दोलनों एवं जन-क्रान्तियों का ज्ञान प्राप्त हुआ , फलत: अपनी वर्तमान स्थिति से जूझने के लिए उनमें एक नवीन शक्ति का संचार हुआ । डा० ज्ञानवती दरबार ने लिखा है – "इस प्रवृत्ति को स्वयं विदेशी सत्ता द्वारा प्रसारित पाश्चात्य विचारधारा से पर्याप्त बल मिला ।"[१] 'नवीन'जी 'अनलगान' में भारतीय जनता को वर्तमान हृदय विदारक परिस्थितियों के विरुद्ध संघर्ष के लिए प्रेरित करते हैं :-

" कितनी सदियों से लादे है तू उर पर यह भार बड़ा ?
अरे, तनिक तो बता कि कैसे तेरा यह अविचार बढ़ा ?
जीवन-कुन्दुक ठुकराने का तूने स्वांग भरा, क्यों रे ?
रंच बता तो , किन गतियों में अब तक तू विचरा यों, रे ?
अब उठ, आज जलादे सत्वर निज व्यक्तित्व , मोह, ममता,
माँग अलख से भीख कि तुझ को मिले ज्वलित पावक क्षमता ।"[२]

आज का अध: पतन 'नवीन' जी के राष्ट्रीय काव्य का प्रभावोत्पादक विषय रहा है । जनता की आर्थिक स्थिति शोचनीय है और देश में गरीबी विकराल दानव के समान भयानक नाशकारी रूप धारण किए विचर रही है । श्री जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है – "देशवासियों के मन में दासता की बेड़ियों से जकड़े होने के फलस्वरूप ग्लानि की भावना उत्पन्न हो गई थी जिसके निवारणार्थ देश में कुछ ऐसे नेता उत्पन्न हुए जिन्होंने धार्मिक सांस्कृतिक पुनरुत्थान की आवाज़ ऊँची उठाई । ऐसा करके उन्होंने दासता की बेड़ियों पर

---

१. 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा' - डा० ज्ञानवती दरबार, पृ०३८ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अनलगान' , पृ० ४४२ ।

आघात किया था ।[१] शोषण की चक्की में पिसती हुई भारतीय जनता के प्रति 'नवीन' जी की ललकार, अन्यायी के विरुद्ध संघर्ष में, नवीन साहस प्रदान करती है :-

" ओ भिखमंगे, अरे पराजित, ओ मज़लूम , अरे चिरद्रोहित,
तू अखण्ड भाण्डार शक्ति का ; जाग, अरे निद्रा - सम्मोहित,
प्राणों को तड़पाने वाली हुंकारों से जल-थल भर दे,
अनाचारा के अम्बारों में अपना ज्वलित फ़लीता धर दे । [२]

अज्ञान के तमस-अन्धकार में जीवन की स्वाभाविकता नष्ट हो गई थी । विपन्नता के घने बादल चारों ओर फैले हुए थे और साम्प्रदायिक-झगड़ों के फलस्वरूप गृह-युद्ध की अग्नि भड़क उठी थी । मानव अपनी धर्मान्धता के कारण दानवता पर उतर आया है और यह पयस्विनी वसुधा रक्त-भूमि में परिवर्तित हो गई है :-

" नर ही स्वयं बना है नर के रक्त-मांस का प्यारा भक्षक ;
आज पुष्प - से मानव हिय में आ बैठा है कोई तक्षक ।
रक्त-भूमि बन गयी हाय , यह पयस्विनी वसुधा मानव की;
शुक कपोत कोकिला कूजिता कहाँ गयी वीथी माधव की ?
वे देखो माँएँ भय त्रस्ता , लिये गोद में भावी मानव
जूझ रही हैं उसे बचाने , उनसे , जो आये हैं दानव ;
बालक लिये स्तनों को मुख में फैलाये अपने विशुद्ध दृग, -
देख रहे हैं स्तब्ध-चकित - से, ज्यों आखेटक को घायल-मृग ;" [३]

---

१. 'नवीन' और अनकाकाव्य - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ०१३२ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - जूठे पत्ते, पृ० ४६४ ।
३. " वही - सिरजन की ललकारें मेरी , पृ०४७-५२ ।

श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है – 'भावना-प्रधान प्राणी होने के नाते देश-कल्याण और जन-हित पर उन्होंने अपने आप को समर्पित कर दिया । जीवन का श्रेष्ठतम और अधिक से अधिक मूल्यवान भाग उन्हें जेलों में बिताना पड़ा ।'[१] भारतीय जीवन के प्रत्येक पार्श्व को कवि ने देखा था और परखा था । भारत का वर्तमान दारिद्र्य एवं दुर्भिक्ष उसे विकल करता है और वह वर्तमान व्यवस्था को येन-केन-प्रकारेण बदलने के लिए व्याकुल हो रहा है । पराधीनता एवं दमन का अपमान कवि के लिए असहनीय है । वह इस कालिमा को धोने के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है, पर उस गहन अन्धकार में कहीं प्रकाश की एक किरण भी दिखाई नहीं देती :-

'यहाँ लुट चुकी है शतियों से मानव की प्रकाश की थाती
तम ही तम है यहाँ, बुझी है जब से हृदय-दीप की बाती ;'[२]

देश के सारे शिल्प नष्ट हो गए थे । व्यापार विदेशियों के हाथ में चला गया । और भारतीय जनता अपने ही घर में दासता की ज़ंजीरों में जकड़ी हुई थी । भारत का प्राचीन गौरव नष्ट हो गया था और वीरों की जननी कायरों का निवास-स्थान बन गयी थी । श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' ने अपनी एक कविता 'हिमालय के प्रति' में लिखा है :-

'कितनी मणियाँ लुट गयीं, मिटा कितना मेरा वैभव अशेष ।
तू ध्यान - मग्न ही रहा, इधर वीरान हुआ प्यारा स्वदेश ।।
कितनी द्रुपदा के बाल खुले, कितनी कलियों का अन्त हुआ ?
कह हृदय खोल चित्तौर ! यहाँ कितने दिन ज्वाल बसन्त हुआ ?

---

१. 'आजकल' - दिसम्बर १९५७ - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - भगवतीचरण वर्मा, पृ० ७ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - आज क्रान्ति का शंख बज रहा , पृ०४७१ ।

पूछो सिकता-कण से हिमपति ! तेरा वह राजस्थान कहाँ ?
वन-वन स्वतंत्रता दीप लिये फिरने वाला बलवान कहाँ ?'[१]

ऐसी अवस्था में 'नवीन'जी ने लिखा है :-

'हा-हाकार भरा दिशि-दिशि में, नभ रक्ताक्त अश्रु रोता है;

'नवीन' जी की आत्मा निरन्तर होने वाले शोषणों एवं अत्याचारों से कराह उठी और जनता की कायरता पर वे कभी-कभी निराश भी हो गए। श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने लिखा है - 'नवीन जी का कवि एक ओर विद्रोही बनकर क्रान्ति की पुकार करता है तो दूसरी ओर क्षोभ और ग्लानि से पीड़ित और परास्त होकर पलायन भी करता है।'[३] 'पराजय-गीत'[४] उन्होंने ऐसी ही निराशा एवं व्याकुलता में लिखा है :-

---

१. 'हिमालय के प्रति' - 'दिनकर' - 'साहित्य सुधा' संकलनकर्ता- डा० गिरिधारीलाल शास्त्री, पृ० ६८।

२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरल पियो तुम। गरल पियो तुम॥' पृ० ४१७।

३. 'हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी - लेख (नई धारा), पृ० ३४६।

४. 'पराजय-गीत' की लेखन तिथि के विषय में विद्वानों में काफी मतभेद है। इस विषय में मैंने जब आदरणीय श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी से अपनी एक भेंट में पूछा तो उन्होंने कहा - 'यह गीत 'नवीन' जी ने सन् १९२० के आन्दोलन की विफलता के परिणामस्वरूप नहीं लिखा है अपितु सन् १९३२ में, जब आन्दोलन की गति मन्द पड़ गई तो उनकी वाणी से यह गीत फूट पड़ा। 'नवीन' जी एक शीघ्र प्रभावी व्यक्ति थे अत: आंदोलन मन्द पड़ने पर उनका आक्रोश इस कविता में व्यक्त हुआ।' - १९फरवरी सन् १९६५ को पालीवाल जी से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात।

"आज खंग की धार कुण्ठिता है खाली तूणीर हुआ ,
विजय-पताका झुकी हुई है, लक्ष्य भ्रष्ट यह तीर हुआ ।
बढ़ती हुई कतार फौज़ की सहसा अस्त-व्यस्त हुई
त्रस्त हुई भावों की गरिमा महिमा सब सन्यस्त हुई ।"[१]

इस कविता में 'नवीन' जी के निजी हृदय की वेदना व्यक्त हुई है, और समकालीन परिस्थितियों का भी मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है :-

"गगन भेद कर वरद करों ने विजय प्रसाद दिया था जो ,
जिसके बल पर किसी समय में मैंने विजय किया था जो,
वह सब आज टिमटिमाती स्मृति - दीप शिखा बन आया है,
कालान्तर ने कृपा आवरण में उसको लिपटाया है ,
गौरव गलित हुआ गुरुता का निष्प्रभ क्षीण शरीर हुआ,
आज खंग की धार कुण्ठिता है खाली तूणीर हुआ ।"[२]

निरन्तर संघर्ष में विफल होने के कारण 'नवीन' जी का हृदय चीत्कार कर उठता है । श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है – "स्वाधीनता युद्ध के वीर सेनानी की इस मर्मस्पर्शी वेदना को उन दिनों जिसने पढ़ा था, नवीन जी की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी ।"[३]

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान दुर्दशा का चित्रण 'नवीन' जी ने सजीवता के साथ किया है । कहीं विदेशियों के प्रति आक्रोश प्रकट किया

---

१. 'कुंकुम' - 'पराजय गीत' , पृ० ६३ ।
२. वही वही ,पृ० ६४-६५ ।
३. 'रेखा चित्र' - श्री बनारसीदास चतुर्वेदी - (लेख) श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' , पृ० २०४ ।

है, कहीं अपनी गलित एवं विपन्न अवस्था पर आँसू बहाये हैं। कहीं जनता को संघर्ष के लिए ललकारा है और कहीं अपनी विफलता पर खेद प्रकट किया है। श्री केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है – 'कवि के हृदय का आन्तरिक मंथन फुफकार लेकर निकल पड़ा और वह देश की असहनीय कातरता को समूल उखाड़ फेंकने के लिये दृढ़ता से भर उठा।'[१]

देशभक्ति की कविता : (जन्मभूमि के प्रति गीत एवं बलिदान की भावना)

डा० केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है – 'देशभक्ति की भावना समाजगत एवं जातिगत होती है। यह एक मनोभाव है जिसका उद्देश्य मातृ-भूमि की स्वतंत्रता और उसकी संस्कृति की रक्षा है। देशप्रेम स्वदेश और संस्कृति की रक्षा के लिए साहस और त्याग का आह्वान करता है, - - - इसका लक्ष्य स्वाधीन देश की स्वतंत्रता की रक्षा और परतंत्र देश की पराधीनता से मुक्ति है।'[२] प्रत्येक मनुष्य को अपने देश के साथ स्वाभाविक प्रेम होता है। बालकृष्ण ने अपने जीवन को मातृभूमि के लिए समर्पित किया था। वह राज-नीति के खिलाड़ी नहीं, स्वतंत्रता के सैनिक और देश के सच्चे सेवक थे। उन्होंने सदा भाँति-भाँति के कष्ट झेल कर अपने देश की निस्वार्थ सेवा की।[३] 'नवीन' जी ने इन कविताओं में मातृभूमि की स्वतंत्रता, प्रशंसा एवं वन्दना के भाव प्रकट किए हैं परन्तु वर्तमान दुर्दशा उन्हें सदा खटकती रही :-

' इस धरती पर लाना है,

---

१. 'नवीन-दर्शन'- उपाध्याय, पृ० २५।

२. 'आधुनिक काव्यधारा' - केसरीनारायण शुक्ल, पृ० ५१।

३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' १२ दिसम्बर १९६५ - पृ० १३ -'विषपायी बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - रत्नलाल शर्मा।

हमें खींच कर स्वर्ग, कहीं यदि उसका ठौर ठिकाना है,
इस धरती पर लाना है।
यदि वह स्वर्ग कल्पना ही हो,
यदि वह शुद्ध जल्पना ही हो,
तब भी हमें भूमि माता को अनुपम स्वर्ग बनाना है ;
जो देवोपम है उसको ही इस धरती पर लाना है।"[१]

भारत-माता का जो रूप उन्होंने चित्रित किया है उसमें देश के प्राचीन गौरव एवं वर्तमान दुर्दशा का संकेत भी मिलता है :-

" हम आज देखते हैं जगती, यह जगती, यह अपनी जगती,
यह भूमि हमारी विनिर्मिता, शोषिता, परायी-सी लगती।
रवि-निर्माताओं के भू पर, बोलो, यह कैसा अन्धकार ?
क्या निद्रित थे हम अतिकोही , हम विद्रोही, हम दुर्निवार !"[२]

इस शस्य-श्यामला धरती-माँ के विषय में स्वर्गीय प्रसाद ने लिखा है :-

" अरुण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।
सरस तामरस-गर्भ-विभा पर, नाच रही तरु शिखा मनोहर,
छिटका जीवन-हरियाली पर मंगल-कुंकुम तारा ।"[३]

---

१. 'विनोबा स्तवन' - 'इस धरती पर लाना है' , पृ० ३० ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विद्रोही' , पृ० ४८३ ।
३. 'प्रसाद' - चन्द्र-गुप्त नाटक, पृ० ।

परन्तु आज इसी देश को देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो :-

"रुद्ध श्वास, धरती माता का मानो उभर उठा है सब तन ,
मानो ये हैं चिह्न कि क्षण में होगा भीषणतम भूकम्पन ;
अपनी गहरी लम्बी साँसें कब तक रोकेगी भू-माता ?
सोया हुआ रहेगा कब तक यह मानव निज भाग्यविधाता ?"[१]

डा० प्रेमनारायण शुक्ल ने लिखा है —मातृभूमि की वन्दना करते समय साहित्यकारों ने भारत की भौगोलिक-स्थिति, प्राकृतिक सुषुमा तथा भारत की विद्या, बल, वैभव आदि का वर्णन किया है। मातृ-भूमि की वन्दना करते समय कहीं उसकी संस्कृति, उसकी सभ्यता, उसकी शक्ति, उसके कृतित्व तथा उसके निवासियों आदि का भी वर्णन करता है।"[२] जनता के पारस्परिक गृह-कलहों से क्षुब्ध-कवि उन्हें अपनी धरती माँ की याद दिलाता है :-

"यों लगता है मानो यह अपनी वसुधा हो गयी परायी,
इक-दूजे को भूल गये हैं मानो दोनों भाई-भाई ;
इस धरती के दोनों बेटे भूले अपनी धरती-माई ;
ये सब भूले हैं कि इन्होंने सँग-सँग इसकी मिट्टी खायी ;
कितना दूध मिला है इनको इस वृद्धा हिम-गिरि-लाला से,
कितना प्यार, दुलार, मिला है इसको इस धरती माता से ।।"[३]

भारत की महानता इसी में है कि यहाँ विभिन्न जातियों एवं वर्गों

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ०४७० ।
२. 'हिन्दी साहित्य में विविधवाद' --डा० प्रेमनारायण शुक्ल, पृ०२७,२११।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विनिपात' , पृ० २०४ ।

के लोग एक साथ रहते हैं। भारत देश विभिन्न संस्कृतियों एवं सभ्यताओं का संगम है परन्तु आधुनिक युग में विदेशियों ने जो विष यहाँ बोया उसके कारण इस देश की अखण्डता छिन्न-भिन्न होने का डर है, अत: कवि-हृदय व्यथित हो उठता है :-

"हिन्दू-मुस्लिम क्यों लड़ते हैं ? उनको क्या मिल जाता है ?
आपस में हत्याएँ करना, उनको क्यों यह भाता है ?
भारत देश जगन्नायक की है अप्रतिम प्रयोगशाला,
पृथिवी भर के सब धर्मों का फैल रहा याँ उजियाला;
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, पारसी, बौद्ध, यहूदी, इसाई,
भारत में हैं सभी धर्म के एकत्रित, प्रतिनिधि, भाई।"[१]

'नवीन' जी के रोम-रोम में मातृ प्रेम की भावना परिप्लावित थी। भारत-भूमि की महत्ता, ज्ञान, परम्पराओं आदि का कवि ने मुक्त कण्ठ से वर्णन किया है।[२] डा० नगेन्द्र ने लिखा है – "भारत की दिव्य मातृभूमि के शत-शत भव्य-चित्र हमारी राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता की अमूल्यनिधि हैं। मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त, 'नवीन', निराला, पन्त, दिनकर आदि सभी प्रमुख कवियों ने मातृभूमि के दिव्य-चित्रों का आंकन कर अपनी कल्पना को पवित्र किया है।"[३]

नवीन जी की अधिकांश देश-भक्ति-परक रचनाओं में त्याग एवं बलिदान की भावना सर्वप्रमुख है। वह युग घोर पराभव का युग था। माँ अपने उद्धार के लिए अपने सपूतों को ललकार रही थी और देश-सेवा के महान यज्ञ में आहुति स्वरूप अपने जीवन को समर्पित करने वाले वीरों की आवश्यकता

---

१. 'प्राणार्पण', पृ० २५।
२. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, पृ० १६३।
३. 'आधु० हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' - नगेन्द्र, पृ० २८-२९।

थी । स्वयं उनके निजी जीवन के विषय में श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है — 'जेल की कोठरियों में या 'प्रताप' प्रेस के एक संकरे-से कमरे में उनका जीवन बीता । त्याग, तपस्या और बलिदान के वे प्रतीक थे ।'[१] उनकी कविताओं ने लाखों युवकों को देश-प्रेम और बलिदान की स्फूर्ति दी है :-

'चढ़ चल, चढ़ चल, थक मत रे तू बलिदानों के पुंज ,
देख कहीं न लुभावे तुझको यह जीवन की कुंज ,
मधुर मृत्यु का नृत्य देख तू देने लग जा ताल,
अपना सीस पिरा कर कर दे पूरी माँ की माल ,'[२]

'नवीन' जी ने तत्कालीन जन-समूह के सम्मुख आत्म-त्याग, आत्म-गौरव और शौर्य के आदर्श प्रस्तुत किये हैं :-

" तब बलिदानों की देख लड़ी, शिवि की गाथा भी मन्द पड़ी,
तब प्राणदान के निकट पड़ा - फीका दधीचि का अस्थि-दान;
संकुचित स्वार्थ की, यश, धन की लौकिकता की, या जीवन की,
यह चाह कभी व्यापी न तुझे , तुम सदा अनिंगित, सावधान ,
तुम मेरे गौरव मूर्तिमान ।'[३]

श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध ने लिखा है — 'उनका मानसिक उद्‌गार ओजमय होता है । इसलिए उनकी रचनाओं में भी यह ओज पाया जाता है । वे कभी ऐसी रचनाएँ करते हैं जिनसे चिनगारियाँ कढ़ती दृष्टिगोचर होती हैं । परन्तु जब शान्तचित्त से कविता करते हैं तो उनमें सरसता और मधुरता भी

---

१. 'कादम्बिनी' , नवम्बर १९६० - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (श्रद्धांजलियाँ)- भगवती चरण वर्मा, पृ० १९ ।
२. 'कुंकुम' - 'शिखर पर' , पृ० ८१ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'ओ तुम मेरे प्यारे जवान ।' , पृ०५१० ।

पायी जाती है। उनकी कविता भावमयी के साथ प्रवाहमयी होती है। उनमें देश-प्रेम भी है।"[१] जिस देश की प्रशंसा करते हुए श्रीधर पाठक ने 'भारत गीत'[२] नामक कविता लिखी है। उसी देश में रहने वाले देशवासियों की कायरता पर 'नवीन' जी खीझ उठते हैं :-

'रग-रग में ठण्डा पानी है, अरे उष्णता चली गयी,
नस-नस में टीसें उठती हैं, विजय दूर तक टली सही,
विजय नहीं, रण के प्रांगण की धूल बटोरे लाया हूँ,
हिय के घावों को वर्दी के चिथड़ों में ले आया हूँ !
टूटे अस्त्र, धूल माथे पर, हा ! कैसा मैं वीर हुआ,
आज खड्ग की धार कुण्ठिता है, खाली तूणीर हुआ।'[३]

'नवीन' जी के साथ-साथ 'दिनकर' जी भी देशवासियों को मातृभूमि की बलिवेदी पर वीर सेनानी की भाँति न्योछावर होने का आदेश देते हैं।

---

१. 'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास' - 'हरिऔध', पृ० ४६६।

२. 'जय जय प्यारा भारत देश।
जय जय प्यारा जग से न्यारा,
शोभित सारा देश हमारा,
जगत मुकुट जगदीश दुलारा,
जग सौभाग्य सुदेश।
जय - जय प्यारा भारत देश।।'
- 'भारत गीत' - श्रीधर पाठक
'साहित्य सुधा' - संकलनकर्ता -डा०गिरिधारीलाल शास्त्री, पृ० ६७।

३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'पराजय-गीत', पृ० ४२४।

वे प्राचीन भव्य एवं विशाल नगरों की वर्तमान स्थिति पर क्षोभ प्रकट करते हैं:-

" देखा शून्य कुँवर का गढ़ है फाँसी की वह शान नहीं है ।
दुर्गादास प्रताप बली का प्यारा राजस्थान नहीं है ।।
समय माँगता मूल्य मुक्ति का देगा कौन मांस की बोटी ।
पर्वत पर आदेश मिलेगा खाँए चलो घास की रोटी ।।"[१]

कवि स्वतंत्रता-संग्राम के केवल अग्रगण्य-नेताओं की प्रशंसा से ही संतुष्ट न हुये ।इन्होंने सामान्य सैनिकों की अभ्यर्थनाभी की । `नवीन` जी बन्दीगृह से छूटे हुए सत्याग्रहियों का स्वागत कर रहे हैं । वास्तव में यह उनके हृदय के निस्वार्थ एवं निश्छल उद्‌गार हैं जो मातृभूमि के प्रेम से परिप्लावित हैं । वे एक सिद्धहस्त साहित्य स्रष्टा ही नहीं, एक कुशल राजनीतिज्ञ और एक अनन्य देशभक्त भी थे[२] ।- उन्होंने अपनी ओजस्विनी वाणी में जनता को बलिदान के लिए प्रेरित किया :-

" माँ ने किया पुकार बढ़ा तू चढ़ा हुआ कुरबान ।
हमने देखा तुझे टहलते सिकचों के दरम्यान ।।
हाथों में थी मूँज कभी बैठा चक्की पर गाते ।
कम्बल बिछा ओढ़ कम्बल दिन बिता दिए मदमाते ।।
बहुत दिनों के बिछुड़े प्यारे अन्तर हिय से सहजा ।
आज रिहाई हुई दौड़ आ मोहन गले लिपट जा ।।"[३]

---

१. `हुंकार` - `दिनकर` , पृ० ६८ ।
२. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - १५ मई , १९६० - `एक और नरकेहरी चल बसा` - सम्पादकीय , पृ० ३ ।
३. `कैदी का स्वागत` - `नवीन` - `आधुनिक काव्यधारा` , पृ० २६२ ।

श्री रामधारीसिंह `दिनकर` ने लिखा है - `भारत माता के आप लाड़ले लाल थे , ऐसा वीर लाल, जो माता की गौरव रक्षा के लिए कोई भी बलिदान बिना हिचकिचाहट के दे सकता था ; ऐसा वीर लाल, जिसकी दृष्टि में देश के सामने किसी भी चीज़ की कोई कीमत नहीं थी, न वैयक्तिक सुयश और सुख की, न मित्र और बन्धु-बान्धव की । और ऐसा वीर लाल, जिसे पाकर किसी भी माता की गोद निहाल हो सकती है ।`[१] आए दिन देश के वीर-सपूत राष्ट्रीय आन्दोलन में अपनी जानें गवाँ देते हैं । `नवीन` जी के कथनानुसार यह मृत्यु उन वीरों के लिए अमरता का वरदान लेकर आई है,उनका नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों से लिखा जाएगा :-

> डाल श्यामल केश मुख पर, और चादर ओढ़ काली ,
> यह पधारी मृत्यु रानी छद्म भूषा-वेश वाली ,
> है नहीं यह असित ; समझे मत इसे काली-कराली ;
> अमरता लाई छिपाकर यह मरण के आवरण में ।`[२]

उन वीरों को चुनौती देकर कवि उनमें नवीन उत्साह भर देता है । उनके स्वतंत्रता-प्रेम की प्रशंसा एवं उनसे सम्बंधित घटनाओं का ओजपूर्ण वर्णन करके `नवीन` जी उनमें नवीन प्रेरणा फूँक देते हैं । डा० नगेन्द्र ने लिखा है -`देश भक्ति में स्व का वृत्त समग्र देश और उसके निवासियों तक विस्तृत हो जाता है । इस विस्तार-प्रक्रिया में राग के साथ उत्साह का मिश्रण भी हो जाता है क्योंकि देशवासियों के प्रति राग का अभिप्राय है उनके कष्टों का निवारण, उनकी सेवा सहायता, उनके विकास का प्रयत्न और ये सभी उत्साहमूलक क्रियाएँ हैं । इस

---

१. `वट-पीपल` - दिनकर , पृ० ३३ ।
२. `क्वासि` - `बज उठा आनन्द लय का` , पृ० २० ।

प्रकार देश भक्ति में राग उत्साह के साथ मिलकर उदात्त रूप धारण कर लेता है ।[१] कवि का पूरा विश्वास है कि अन्त में सफलता देश के वीर योद्धाओं के पाँव चूमेगी । विजय साहसी एवं शूरवीर पुरुषों की होगी :-

`सुन लो ओ नवीन दीवाने , सुन लो मेरी बात ज़रा ,
अरे , रही है विजय जगत् में सदा काल से स्वयंवरा ;
जिसके गट्ठे में ताक़त है , है उसकी ही बसुन्धरा ;
देकर सीस, असीस मिले हैं यही विश्व की परम्परा ;
विजय और वसुधा ये दोनों बड़े बाप की बेटी है ;
का पुरुषों की नहीं , सदा ये बलवानों की चेरी है ।`[२]

देशप्रेम का भव्यस्वरूप जो `नवीन` जी ने जनता के सामने प्रस्तुत किया वह सर्वथा वन्दनीय है । वे महान त्यागी थे । श्री माखनलाल चतुर्वेदी के शब्दों में — `त्याग मानो स्वामी रहते -२ बालकृष्ण का ऐसा सेवक हो गया था कि वह कल और काल दोनों को बेधते समय बालक बालकृष्ण की मेहर नज़र पर दृष्टि रखता था । उनका हँसना, बोलना, काम करना, सब कुछ मानों मातृ-भूमि पर चढ़ा हुआ था । उस सेवा से दूर हटा कर बालकृष्ण को कोई सुखी नहीं देख सकता था ।`[३] देश के एक सच्चे सिपाही के समान वे सदा शीश-दान देने के लिए तत्पर रहते थे :-

`विजय ? न सोचो कि वह मिलेगी, कब, किस दिन, किस घड़ी, अरे,`

---

१. `राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता` - डा० नगेन्द्र - हिन्दी साहित्य संग्रह भाग १ - अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय , पृ० ११७ ।
२. `हम विषपायी जन्म के` - `पथ-निरीक्षण` , पृ० ४१८ ।
३. `सरस्वती` - जून १९६० - `त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा `नवीन`- माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० ३८१ ।

विजय नहीं कंकड़ी मिले जो यों ही पथ में पड़ी अरे ?

\+ + +

तुम हो अग्नि कुमार अरे ओ युवक धुनी, ओ मतवाले ,
इस स्वातन्त्र्य-चण्डिका को दो भर निज शोणित के प्याले ।"[१]

मातृभूमि की वेदी पर अपने मस्तकों को फूल बना कर चढ़ा देने वालों की वन्दना करते हुए 'नवीन' जी ने लिखा है :-

"तव शोणित कण अब पुष्पित हैं नव यत्नों के अवतरणों में;
वन्दन कर लूँ आज तुम्हारे अडिग अकम्पित उन चरणों में ।"[२]

सुश्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने भी 'राखी की चुनौती' कविता में अपने वीर भाइयों के पराक्रम एवं शौर्य का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है :-

"मैं हूँ बहिन किन्तु भाई नहीं है, है राखी सजी, पर कलाई नहीं है ।
है भादों घटा , किन्तु छाई नहीं है , नहीं है खुशी, पर रुलाई नहीं है।।
मेरा बन्धु माँ की पुकारों को सुनकर, - कि तैयार हो जेल खाने गया है ।
छीनी हुई माँ की स्वाधीनता को , वह ज़ालिम के घर से लाने गया है।।"[३]

राष्ट्रीय साहित्य में देश-प्रेम की भावना प्रबल होती है, अत: इस प्रकार के साहित्य में जहाँ देश का गौरव का गान होगा , उसकी गरिमा का वर्णन होगा , वहाँ श्रद्धा और भक्ति की व्यंजना भी होगी । इस तरह जहाँ देश की दयनीय अवस्था का वर्णन होगा वहाँ करुणा की व्यंजना होगी । किन्तु इस प्रकार के वर्णनों के पीछे भी कवि का मूल उद्देश्य कर्म की प्रेरणा ही है क्योंकि

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'पथ-निरीक्षण', पृ० ४१६ ।
२. वही - 'अदृष्ट चरण-वन्दना', पृ० ४०६ ।
३. 'राखी की चुनौती' - सुभद्रा कुमारी चौहान - प्रवाहिणी-खण्ड १, संकलन कर्ता - प्र० क०न० दर, पृ० ५३ ।

कर्म समाज का पोषक है ।[१] 'नवीन' जी भी देश की दयनीय अवस्था देखकर अपने युवकों को महान कर्म करने के लिए प्रेरित करता है :-

"हे बलि-वेदी, सखे, प्रज्वलित माँग रही ईंधन क्षण-क्षण,
आओ युवक, लगा दो तो तुम अपने यौवन का ईंधन ,"[२]

'कुंकुम' की भूमिका में स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है – 'हृदय के उष्ण रक्त का समागम जब तक हमारी कृतियों के साथ न होगा तब तक उसमें जीवन और ओज कहाँ से आयेगा ? हमें अपने काव्य साहित्य को वीर्यवान एवं जीवनी-शक्ति सम्पन्न बनाये रखने का उद्योग करते रहना चाहिए ।'[३] युग की विह्वल जवानी को क्रूर बानी का पाठ पढ़ाने वाली यह अदा ही निराली थी ।[४] पराधीनता में होली और दीवाली के त्योहारों पर कोई प्रसन्नता नहीं है । स्वातंत्र्य-समर में जीवनदान देने वाले वीर-सैनिकों के लिए यह त्योहार निष्प्रयोजन है :-

"उनकी क्या होली - दीवाली ? उनके क्या त्योहार ?
जिनने निज मस्तक पर ओढ़ा जन-विप्लव का भार ।।
कर्म पथ है खाँडे की धार ।"[५]

---

१. 'साहित्य सन्देश' - अप्रैल १९६३ - राष्ट्रीय साहित्य - प्रो० राजमल बोरा , पृ० ४१६ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'पथ-निरीक्षण' , पृ० ४१६ ।
३. 'कुंकुम' - कुछ बातें , पृ० १८ ।
४. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - पण्डित बालकृष्ण शर्मा नवीन - डा० शिवमंगल सिंह 'सुमन' , पृ० ६ ।
५. 'रश्मिरेखा' — पृ० २६

'नवीन' के लिए यह धरती ही स्वर्ग है । वे देश की सेवा को ही जीवन का महान कर्म समझते हैं और भगवत्प्राप्ति का एक साधन मानते हैं । उन्होंने अपनी मातृभूमि की परवशता का यथार्थ-चित्रण किया है और कभी भी काल्पनिक देवत्व का आरोप अपनी जननी जन्म-भूमि पर नहीं किया है । उनके जीवन का महान उद्देश्य कर्म था और कर्म-रत उन्होंने अपना जीवन देश पर समर्पित किया था । उन्होंने भारत भूमि को पुण्य स्थल घोषित किया पर इस पुण्य स्थल पर पलने वाले अनेक राक्षसों का भी सजीव चित्रण किया है । पराधीनता एवं दमन के विरुद्ध संघर्ष में, कवि की वाणी का स्वर अत्यन्त प्रखर है ।[१] भारत माँ की परतंत्रता की बेड़ियों को काटना ही उनका एकमात्र लक्ष्य था :-

> 'चमके स्वतंत्रता का सूरज, परवशता का अभ्र टले ;
> शोषण के शासन की इति हो, तुम ऐसा प्रण ठान, उठो,'[२]

भारत स्वाधीन होने पर 'नवीन' जी ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'हिन्दुस्तान हमारा है' लिखी जिसमें उन्होंने मुक्त कण्ठ से भारत माँ की प्रशंसा की है :-

> 'कोटि-२ कण्ठों से निकली
> आज यही स्वर धारा है ,
> भारतवर्ष हमारा है, यह
> हिन्दुस्तान हमारा है ।'[३]

---

१. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य -डॉ०दुबे , पृ० २०४ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'ओ मज़दूर किसान, उठो', पृ०५३१ ।
३. 'नये पुराने झरोखे' - डा० 'बच्चन' , 'आधु० हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना' , पृ० १२१ ।

इस कविता के विषय में डा० लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है – 'इस कविता में, वन्दना, प्रशस्ति, वीर-पूजा तथा अतीत गौरव-गायन आदि समग्र सांस्कृतिक सोपान एकत्रित हो गये हैं। इस रचना में हमारे स्वर्णिम भूतकाल के कपाट खोले गये हैं और प्राचीन संस्कृति का सिंहावलोकन प्रस्तुत किया गया है।'[१] इस प्रकार देश-भक्ति काव्य के कुछ उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि 'नवीन' जी एक सच्चे देशभक्त थे। देश की पीड़ा उनकी अपनी पीड़ा थी मानो उनके हृदय पर एक फोड़ा था जिससे छुटकारा पाने के लिए वे सदा तिलमिलाते रहे।

पीड़ित श्रमिकों एवं कृषकों का चित्रण :

'नवीन' जी ने तत्कालीन पीड़ित श्रमिकों तथा कृषकों का बड़ा ही सजीव, मार्मिक एवं करुणाजनक चित्रण किया है। स्वयं वे निम्न वर्ग से सम्बन्धित थे। गाँव में रहकर कृषकों एवं नगर में रहकर श्रमिकों के प्रति उनकी सहानुभूति जागी थी। श्री वेंकटेश नारायण तिवारी ने लिखा है – 'पर-पीड़ा को देख कर वे कातर हो उठते और उसे मिटाने की पूरी चेष्टा करते।'[२] 'नवीन' जी ने श्रमिकों के निवास स्थानों का यथार्थवादी ढँग से चित्रण किया है। आर्थिक अभाव के कारण उनका जीवन स्वयं उनके लिए एक अभिशाप बन गया है :-

'उधर बिलबिलाते थे कीड़े नावदान में किल-बिल-किलबिल ;
इधर सड़ी, गन्दी, कच्ची-सी नाली का पानी था पंकिल।

---

१. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य - डा० दुबे, पृ० २२७।
२. 'नवनीत' (हिन्दी डाइजेस्ट) अक्टूबर १९६० - 'नवीन जी' - श्री वेंकटेश नारायण तिवारी, पृ० ६४।

उठते थे अब खरे भयंकर सड़न और बदबू के वाँ पर ;
और वहीं पर बने हुए थे मानव नामक कीड़ों के घर ।
क्या उन मलिन घरौंदों को भी घर कह सकते हो तुम, यारो ?
घर कहने के पहले यदि तुम साहस करके वहाँ पधारो - ,
तो तुम देखो गे माँद- सी तँग कोठरी है गीली-सी –
जिस की दीवारें दिखती हैं दरकी-सी, मैली, सीली-सी ।"[१]

भारत के भविष्य-निर्माता उन्हीं कोठरियों में पलते हैं जहाँ सदा जीवन और मरण के मध्य संघर्ष रहता है, जहाँ सूर्य देवता कभी झाँक कर भी नहीं देखता :-

"जिन कोठरियों में कुत्ते भी नहीं चाहते क्षिन भर रहना –
उनमें श्रमिकों के बच्चों को पड़ता है दिन-२ भर रहना ,
गन्दी बदबू में पलते हैं दुनियाँ के नागरिक सलोने ;
चिथड़ों में लिपटे, बढ़ते हैं मानवता के ये मृदुछौने ।"[२]

भूखे मनुष्यों को जूठा-पत्तल[३] चाटते देखकर उनका मन मनुष्य की दीन-

---

१. "हम विषपायी जन्म के" - नरक-विधान, पृ० ४५६ ।
२. वही वही , पृ० ४६० ।
३. "सन् १९३५-३६ की बात है, नवीन जी प्रांतीय कांग्रेस कमेटी की मीटिंग में सम्मिलित होकर लखनऊ से कानपुर लौट रहे थे । रास्ते में एक दुकान पर गरम-२ जलेबियाँ खाने बैठे । खाकर दोना फेंका तो एक भिखमंगा लपककर दोना उठा चाटने लगा । भावुक "नवीन" भाव-विभोर और अश्रुविगलित हो उठे, आवेश में उन्होंने अकिंचित मनीबेग उस की फटी झोली में खाली किया और भरे-भरे "प्रताप-प्रेस" लौट आए । उस दिन न उन्होंने अन्न ग्रहण किया, न जल और दिन भर कोठरी बन्द किए बैठे रहे ।"
- साप्ताहिक हिन्दुस्तान २०मई १९६२ , पृ० ८ - पण्डित बाल कृष्ण शर्मा "नवीन" - डा० शिवमंगलसिंह "सुमन" ।
नोट - इसी घटना के परिणामस्वरूप "जूठे पत्ते" कविता नवीन जी ने लिखा है ।

हीन स्थिति पर रो उठा । उन्हें भूखे और नंगे मानव के प्रति गहरी सहानुभूति हुई । सर्वहारा, मज़दूर और सभी निर्धन प्राणियों के प्रति कवि का मन करुणा से भर उठा । उनके प्रति उमड़ती हुई करुणा ने उसकी आँखों के सामने विषमता का कलंक पूर्ण चित्र उपस्थित किया और वह उस दुनिया में ही आग लगा देने को उत्सुक हो उठा जिसमें इतनी विषमता, इतनी लाचारी और इतनी अकिंचनता भरी हुई है ।[१] भूख और जड़ता का मर्मान्तक चित्रण 'नवीन' जी ने इस प्रकार किया है:-

'क्या देखा है तुमने नर को नर के आगे हाथ पसारे ?
क्या देखा है तुमने उसकी आँखों में खारे फ़व्वारे ?
देखे हैं ? फिर भी कहते हो कि तुम नहीं हो विप्लवकारी ?
तब तो तुम हिंजड़े हो, या हो महा भयंकर अत्याचारी ।
अरे चाटते जूठे पत्ते जिस दिन मैंने देखा नर को -
उस दिन सोचा : क्यों न लगा दूँ आज आग इस दुनिया-भर को ?'[२]

दीन जनों के प्रति कवि की सहानुभूति इस कविता में जागृत हो उठी है । श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है -- 'इस प्रकार की कविताओं में मानवता के शोषण के विरुद्ध पृष्ठभूमि तैयार करने की क्षमता है । 'नवीन' जी की लगभग सभी ऐसी राष्ट्रीय रचनाओं में क्रान्ति और विद्रोह की भावना की ही प्रमुखता मिलती है ।'[३] यह विद्रोह की भावना उनके मन में जगपति के विरुद्ध भी तीव्र हो उठती है :-

---

१. 'कवि-समीक्षा' - प्रो० श्यामलाकान्त वर्मा - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', पृ० २२६ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'जूठे पत्ते' , पृ० ४६३ ।
३. 'नवीन' और उनका काव्य - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव , पृ० १०७ ।

'जगपति कहाँ ? अरे, सदियों से वह तो हुआ राख की ढेरी ;
वरना समता - संस्थापन में लग जाती क्या इतनी देरी ?
छोड़ आसरा अलख शक्ति का, रे नर, स्वयं जगत्पति तू है ,
तू यदि जूठे पत्ते चाटे , तो तुझ पर लानत है , थू है ।'[१]

दिन-रात कठिन परिश्रम करने के पश्चात् दो जून रोटी जुटाना भी मज़दूर के लिए असम्भव है । उसकी शारीरिक शक्ति दिन प्रतिदिन क्षीण होती जाती है और उसके परिवार की आर्थिक दशा दयनीय बन जाती है । काम न मिलने के कारण वह बड़ा दुखी है और उसका मनो-विश्लेषण कवि ने इन शब्दों में किया है :-

'मज़दूर लिये अपना नम्बर पीतल का था कि क्षय टिन का,
बे भरम सड़क पर जाता है , वह भूखा है सारे दिन का ;
पत्नी बच्चों से मिलने के , मन के लड्डू खाता जाता ,
कर याद जिगर के टुकड़ों की, मन ही मन है वह मुसकाता;'[२]

'निराला' जी ने भी सड़क पर पत्थर तोड़ने वाली एक युवती का बड़ा ही करुण चित्र 'तोड़ती-पत्थर' कविता में किया है । कड़कती धूप में पत्थर तोड़ना उसके भाग्य में लिखा गया था -

'वह तोड़ती पत्थर ;
देखा मैंने उसे इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर ।
कोई न छायादार —

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - जूठे पत्ते , पृ० ४६४ ।
२. 'पाषाणपर्ण' - , पृ० ५ ।

पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार ;
श्याम तन, भरा बंधा यौवन ,
नत नयन प्रिय कर्म-रत मन ;"[१]

श्री केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है – 'करुणा भारतीय साहित्य जीवन की भूमिका है । संक्रमण कालीन जीवन में जब स्वदेश और स्वराष्ट्र की विमल राका परवशता के गहन तिमिर से आच्छादित हो जाती है और जीवन का समाधान डगमगा जाता है तो मानव की अन्तर्निहित करुणा स्वत: उभर आती है । 'नवीन' के जीवन की दृढ़ता में भी करुणा मिली हुई है ।"[२] मानव-पतन की अन्तिम सीमा को देखकर कवि कराह उठता है :-

'सड़े भात के लिए श्वान को औ' मानव को लड़ते देखा,
पति-पत्नी को इक रोटी के हेतु नितान्त झगड़ते देखा ;
मानव ने कुत्ते को मारा ; कुत्ते ने मानव को काटा ;
पत्नी ने पति को नोंचा औ पति ने एक जमाया चाँटा ।"[३]

हमारे वास्तविक धन-प्रदाता ही निर्धन होकर भीख माँगने पर विवश हो जाते हैं । ऐसे ही एक भिखारी का वर्णन निराला जी ने 'भिखारी' नामक कविता में किया है :-

" वह आता -
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ।

---

१. 'तोड़ती पत्थर' - 'निराला' - 'काव्य निर्झरिणी' - कुमारी कंचन लता सब्बरवाल , पृ० १३४ ।
२. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय , पृ० २७ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'दग्ध हो रहे हैं मेरे जन', पृ०५४३ ।

पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक ,
मुट्ठी भर दाने को - भूख मिटाने को
मुँह फटी-पुरानी झोली को फैलाता -
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ।"[१]

निरन्तर अन्याय , अत्याचार एवं शोषण के कारण श्रमिक वर्ग में संगठन शक्ति का अभाव था । उन में एका का नाम न था । 'नवीन' जी उनका संगठन चाहते थे[२] और देश के राष्ट्रीय आन्दोलन में उनकी सामूहिक शक्ति का उपभोग करना चाहते थे । श्री राम-इकबाल सिंह 'राकेश' ने लिखा है – 'अभद्र आवरण से आवृत्त बर्बरता , नृशंसता, उत्पीड़न और अनाचार के विरुद्ध जूझने में वे आंधी-पानी की सृष्टि कर देते थे – कभी कतराते, पीछे कदम रखते अथवा लड़ते-लड़ते थकते न थे । सन् १९३६-३७ में कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष की हैसियत से उनके नेतृत्व में दक्षता के साथ संचालित लगातार सात-आठ सप्ताह तक चलने वाला कानपुर का प्रसिद्ध मज़दूर हड़ताल आन्दोलन उनकी इस कर्त्तव्य-प्रेरित वीर-वृत्ति का सर्वोत्तम प्रमाण है ।'[३] कानपुर की प्रसिद्ध मज़दूर हड़ताल राष्ट्रीय संघर्ष के इतिहास में एक महत्वपूर्ण एवं लाभदायक घटना सिद्ध हुई है । 'नवीन' जी अपने दृढ़ विश्वास को जनता तक इन शब्दों में पहुँचाते हैं :-

---

१. 'भिखारी' - निराला - प्रवाहिणी (खण्ड १) संकलनकर्त्ता क०न०दर, पृ०३१।
२. 'मैं बरसों से यह बात कह और लिख रहा हूँ कि कांग्रेस को देश की मज़दूर समस्या को अपने हाथ में लेकर, मज़दूरों की शक्ति का राष्ट्रीय उपयोग करना चाहिए । - -- इन मज़दूरों की राजनैतिक शक्ति अटूट बनाई जा सकती है । इनका उपयोग भारतीय क्रान्ति को आगे बढ़ाने में किया जाना चाहिए ।'
-- 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - १९६३ - 'गांधी युग का अन्त : हम चर्खे का मोह छोड़ें' - 'नवीन' , पृ० १०३ ।
३. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक १९६३ , पृ० ५८ , पण्डित श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - श्रीराम इकबालसिंह 'राकेश' ।

'हम क्यों न करें विश्वास किये नंगे-भूखे भी तड़पेंगे ?
घुएँ के छितरे बादल भी, कड़केंगे, हाँ-ये कड़केंगे !
जमकर हाँगे ये भी संयुक्त ये भी बिजलियाँ गिरायेंगे ;
अपनी नीचे की धरती का ये भी सन्ताप सिरायेंगे ;'[१]

श्रमिकों के साथ-साथ 'नवीन' जी ने कृषकों की दयनीय अवस्था का भी बड़ा ही सजीव चित्रण किया है। ज़मींदारी प्रथा के कारण हमारे कृषक पीड़ित हैं। उनके जीवन की सबसे बड़ी ट्रेजडी यही है कि पूरे वर्ष वे खेत में खून पसीना एक करके अन्न उत्पन्न करते हैं परन्तु अन्त में उन्हें कुछ नहीं मिलता। वास्तव में वे परिश्रम के फल से वंचित रह जाते हैं। उस समय गाँव वेदना एवं व्यथा के केन्द्र बने हुए थे :-

'वह पतली-२ पगडण्डी, जिस पर मानव नँगा, भूखा, -
चलता रहता है निश्विासर, ले अपना मुँह रूखा-२ !
ग्राम नहीं है ; ये सदियों की आहें पूंजीभूत हुई हैं ,
मानव की वेदना , व्यथाएँ, बनकर ग्राम प्रसूत हुई हैं ;'[२]

अन्धविश्वास एवं अज्ञान का अन्धकार ग्रामीण वातावरण को अत्यधिक विषैला बना देता है :-

'जितना सघन अंधेरा है इन ग्राम्य जन-गणों के अन्तर में,
उतना तम तो नहीं मिलेगा तारकहीन गहन अम्बर में।
उन ग्रामों में, जिनमें जीवन नित-प्रति कीचड़ में सड़ता है,-
वहाँ, जहाँ दिन-रात मृत्यु का काँटा जीवन में गड़ता है , -

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - विद्रोही , पृ० ४८८-४८९ ।
२. वही - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ० ४६९-४७०।

वहाँ, जहाँ अज्ञान तमिस्रा इतनी शतियों से छायी है"[१]

सच तो यह है कि असफल-हताश आत्माओं के दुर्भाग्य की आंच से उनका हृदय जलने लगा था, और वे उनकी चिन्ता या पीड़ा को स्वयं अपनी चिन्ता या पीड़ा समझते थे।[२] सम्पूर्ण भारत में व्याप्त दारिद्र्य के कारण जनता दुखी थी और कृषि-कार्य तो किसी भी प्रकार से लाभदायक न था। ऋण-भार से ग्रस्त किसान विवशता का जीवन व्यतीत कर रहा है :-

"वह नंगे पैरों नित रहता, वह निःसाधनता सारी,
अपर्याप्त वे वस्त्र तुम्हारे वह दारिद्र्य कष्टकारी ;
ये तो बचपन के साथी हैं, अब तक साथ निभाते हैं,
अति दारिद्र्य-दैन्य-पीड़ा के तुम हो शूल-मुकुट-धारी।"[३]

महाजन, चकदार, जागीरदार, पूंजीपति एवं विदेशी राज्य के कर्मचारी उनका रक्त चूसने में कोई कसर उठा नहीं रखते थे। कठोर परिश्रम के पश्चात् सायम् पारिश्रमिक के रूप में उन्हें हन्टर मिलते थे और इस प्रकार वे खून के घूँट पी कर रह जाते थे :-

"जिन के हाथों में हल-बक्खर,
जिनके दृढ़ हाथों में धन है ;
जिन के हाथों में हँसिया है,
वे ही भूखे हैं, निर्धन हैं ;"[४]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ०४७२।
२. 'नर्मदा'-'नवीन'-विशेषांक - १९६३ - पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'- श्री रामइकबालसिंह।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - धरती के पूत, पृ० १८३।
४. वही - 'कस्त्वं ? कोऽहं ?, पृ० १५५।

डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'भारत की दीन दुखी' अशिक्षित और असहाय जनता के प्रति करुणा जगाने वाली अनेक कविताएँ इसी वर्ग में आती हैं। किसान, मज़दूर और ग्राम का अशिक्षित भूखा-नंगा जन-समुदाय काव्य का आलम्बन बना। - - - उसे अपने कर्त्तव्य और अधिकार के प्रति जागरूक करके दमन और शोषण के विरुद्ध संगठित करने के लिए उत्साह-पूर्ण कविताएँ लिखी गईं।'[१] 'नवीन' जी ने अपनी अनेक कविताओं में श्रमिकों और कृषिकों को चेतावनी दी है :-

'उठो, उठो ओ नंगो भूखो ओ मज़दूर किसान, उठो,
इस गतिमय मानव-समूह के ओ प्रचण्ड अभिमान, उठो,
आज मुक्ति के अरमानों ने मिल कर यों ललकारा है !
ओ सब सोने वालो जागो, गूँज रहा नक्कारा है !
कैसी रात ? कहाँ के सपने यह नव प्रात पधारा है।
ऐसे हँसते - से प्रभात का तुम करने सम्मान , उठो !'[२]

'नवीन' जी ने राष्ट्रीय स्वाधीनता के युद्ध में एक वीर सैनिक की भाँति भाग लिया और देश के लिए मर मिटने की प्रत्येक बेला में उन्होंने अपना योग दिया। गरीब, मज़दूर, कर्मचारी तथा किसानों पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध वह लड़े और मानव अधिकारों के लिए सामाजिक पाखण्ड से भी जूझने में वह पीछे नहीं रहे।[३] पुलिस कर्मचारियों के अत्याचार[४] देखकर उन्होंने स्पष्ट

---

१. 'आधु० हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ'- डा० नगेन्द्र , पृ० २८।
२. 'हम विषपायी जन्म के'- 'ओ मज़दूर किसान, उठो' , पृ० ५२६-५३०।
३. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - ३ जुलाई १९६० - 'त्यागी' देशभक्त और सहृदय' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ३६।
४. 'नालदार बूटों के नीचे
रौंदा गया त्रस्त मानवपन ;
धन, बल, पैदा करने वाला
स्वयं रह गया, निर्बल निर्धन।'
-'हम विषपायी जन्म के'- नरक-विधान, पृ० ४६०.

शब्दों में घोषणा की :-

" है स्वर्ग-राज्य स्थापित करना
मानव को इस लीला-स्थल में ;
सुख-समता का विस्तार यहाँ-
करना है इस जगती तल में ।"[१]

देश में किसान और मज़दूर संगठनों का निर्माण हुआ । गुजरात में 'बारदोली' के सत्याग्रह ने सम्पूर्ण देश के कृषकों में चेतना की लहर उत्पन्न कर दी और कांग्रेस के अन्दर संगठित होकर सबने पूर्ण स्वराज्य की माँग की। विदेशी शासन-नीति असफल हुई और राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचलने के लिए शोषण एवं अत्याचार प्रत्यक्ष रूप से होने लगे :-

'लो , मासूम नौजवानों के क्षिन में चिथड़े उड़ जाते हैं ;
लग जाते हैं ढेर शवों के गीदड़ भी न उन्हें खाते हैं ।"[२]

ऐसी स्थिति में जनता का साहस टूट जाता है परन्तु 'नवीन' जी अपनी ओजस्विनी वाणी द्वारा उन्हें रण-क्षेत्र में जूझने के लिए ललकारते हैं:-

'किसका साहस है कि रख सके तुम को यों चिर बन्धन में ?
स्वयं मुक्ति ही नाच रही है सदा तुम्हारे स्पन्दन में ।
तुम में विप्लव अन्तर्हित है, जैसे ज्वाला चन्दन में ,
टेर रहा है तुम्हें विश्व यह ओ जग के बलवान, उठो ;
उठो, उठो ओ नंगों भूखो , ओ मज़दूर किसान, उठो !"[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - कस्त्वं ? कोऽहं ? , पृ० १५५ ।
२. वही - 'सिरजन की ललकारें' , पृ० ४६ ।
३. वही - 'ओ मज़दूर किसान, उठो' , पृ० ५३२-३३ ।

'नवीन' जी के काव्य में किसानों की दुरवस्था के चित्र निष्प्रयोजन नहीं हैं । ये रचनाएँ प्रेरणा स्वरूप हैं और जागृति का सन्देश इनमें मिलता है । देशवासियों को भारतीय-क्षितिज पर स्वतंत्रता की सुनहली आभा लाने की उत्तेजना मिलती है । प्रस्वेद-कणों से सिंचित लहलहाते खेत उजड़ते देख कर 'नवीन' जी की अन्तर्ज्वाला भभक उठती है :-

'सुलगा दो निज अन्तर्ज्वाला, विकट लपट लम्बी धधके ,
होने भस्म दासता, शोषण, ऐसी यह होली भभके !
हो जाओ तुम मुक्त, कि विहँसे ये सब तारा गण नभ के ,
दुर्निवार तुम, सदा मुक्त तुम , करो विजय के गान, उठो ;
उठो,उठो ओ नंगो भूखो , ओ मज़दूर किसान, उठो ।'[१]

विदेशी शासन पर आक्रोश : (जागरण गीत)

सन् १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता युद्ध के पश्चात् देश में राजनीतिक आन्दोलन कुछ मन्द पड़ गया परन्तु सन् १८८५ में कांग्रेस की स्थापना हुई और युद्ध के पश्चात् सर्वप्रथम अंग्रेज़ी राज्य के 'शोषण' एवं दमन-चक्र के विरुद्ध तीव्र आलोचना होने लगी । आरम्भिक वर्षों में कांग्रेस का अधिक ज़ोर नहीं रहा परन्तु सन् १९०५ में बंग-भंग के कारण असंतोष की लहर स्वदेशी आन्दोलन के रूप में चल पड़ी । जो साम्राज्यवादियों के लिए भयानक सिद्ध हुई । डा० श्रीकृष्णलाल ने लिखा है -- 'भारत में अंग्रेज़ी राज्य एक अभूतपूर्व घटना थी । अंग्रेज़ों ने मुग़ल और पठानों की भाँति बड़ी-बड़ी सेनाएँ ले कर भारत पर धावा नहीं किया । वे जहाज़ों पर व्यापार का माल लाद कर आए और उन्होंने भारत में साम्राज्य स्थापित किया ।'[२] उसी साम्राज्य की नींव पर स्वदेशी-आन्दोलन प्रथम-आघात था । स्वदेशी आन्दोलन के पश्चात् महात्मा गान्धी का १९११ का, सत्याग्रह

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - ओ मज़दूर किसान, उठो', पृ०५३१ ।
२. 'आधु० हिन्दी साहित्य का विकास' - डा० श्रीकृष्णलाल, पृ० ७ ।

आन्दोलन विदेशी शासन पर द्वितीय आघात था जिसने सम्पूर्ण देश में मध्यम एवं निम्न वर्ग के लोगों को जाग्रत किया । इन आन्दोलनों का तत्कालीन साहित्य पर प्रभाव पड़ा और कवियों ने जनता की वाणी को अभिव्यक्ति दी । डा० ज्ञानवती दरबार ने लिखा है – ' कोई भी सार्वजनिक आन्दोलन तब तक सच्चा आन्दोलन नहीं कहला सकता, जब तक कि उसकी छाप समकालीन साहित्य पर न पड़ी हो और इसी प्रकार वही साहित्य जनता का प्रतिनिधि-रूप माना जायगा, जिसमें जन-गण की महत्वाकांक्षाओं, उनकी मांगों और उन्हें प्राप्त करने के लिए उनके सामूहिक प्रयत्नों का केवल उल्लेख ही न हो, वरन् वे उस साहित्य के कलेवर का एक अंग बन गये हों ।'[१] अंग्रेज़ों की शोषण-नीति का पर्दा फाश करने के लिए और देश की सुप्त चेतना को जगाने के लिए 'नवीन' जी कटिबद्ध हुए :-

' वंचक ! सावधान !! पुण्य स्थल
है यह , हृदय टटोलो तुम ,
राष्ट्रों के जीवन में होता
है न कहीं कुत्सित व्यापार ।
अपने निर्बल अविश्वास का
कालकूट मत घोलो तुम
यहाँ तेज कण झर-झर कर हैं,
बना चुके निर्मल का सार ;'[२]

अंग्रेज़ों की स्वार्थान्धता एवं लोलुपता की भर्त्सना करते हुए 'नवीन' जी लिखते हैं :-

---

१. 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा' - डा० ज्ञानवती दरबार, पृ०३१ ।
२. 'कुंकुम' - सावधान, पृ० ३ ।

'इक हैरत होती है हमको ; कुछ ज़रा तरस भी आता है -
मुख़्तसर ज़िन्दगी में यह मानव कैसा गुराता है ;
तानाशाही, नाना गदीं, खूँरेज़ी , यह बे-ईमानी ।
गर आज मरे कल , कल दूजा दिन , फिर भीतर यों हतराता है ।'[१]

महात्मा गान्धी के अद्भुत नेतृत्व में राजनीतिक आन्दोलन दिन प्रति-दिन उग्र रूप धारण करने लगा और शोषक और शोषित के मध्य संघर्ष बढ़ने लगा । डा० शम्भूनाथ सिंह ने लिखा है – 'इस तरह सन् १९२१ के बाद एक तरफ तो ब्रिटिश सरकार, भारतीय नौकरशाही और सामन्तवाद में राष्ट्रीय शक्तियों को कुचलने के लिए साँठ-गाँठ हो रही थी और दूसरी तरफ साम्राज्य-वाद और सामन्तवाद के बन्धनों से मुक्ति पाने के लिए पूंजीपति-वर्ग, किसान-मज़दूर-वर्ग और नौकरीपेशा मध्यवर्ग के बीच भी सहयोग बढ़ रहा था ।'[२] 'नवीन' जी निशाचरों को चेतावनी देते हुए लिखते हैं :-

'आज निशाचर खूब मस्त हैं, बड़े मगन हैं वे मन में ,
समझे हैं कि रहेगा तम नित नभ, जल, थल, वन, उपवन में !
चिर प्रकाश के घन-प्रहार को भूल गये हैं ये तमचर ,
इन्ने सोचा है कि रहेगा बस तम ही तम जम-जमकर ।'[३]

सत्याग्रही अपने पुनीत कर्त्तव्य को निभाने के लिए बलि-वेदी के सुन्दर जीवों की भाँति आगे बढ़े और शासकों ने इन पर महानाश के चक्र फेरे और इन्हें सीखचों के पीछे कर दिया गया एवं अनेकों का हृदय गोलियों से छलनी कर

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तन-मन से तुमको प्यार किया', पृ०४३२।
२. 'छायावाद युग' - डा० शम्भुनाथसिंह , पृ० ४६ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के - 'गहन तमिस्रा की परिखा' , पृ० ४६५ ।

दिया गया ।[१] डा० प्रेमनारायण शुक्ल ने लिखा है – 'भारत में राष्ट्रीय चेतना की भावना दमन के साथ विशेष रूप से प्रज्वलित हुई , यद्यपि विदेशी शासन के परिणामस्वरूप क्रान्ति की आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी ,..... ठंडे रक्त में उष्णता लाने के लिए और आत्म शक्ति का ज्ञान कराने के लिए अनेकानेक जागृति-सन्देश उद्‌बोधन के रूप में दिये गये ।...इस राष्ट्रीय चेतना का परिणाम यह हुआ कि भारत के कोटि-कोटि जन स्वतंत्रता के भीषण रण में कूद पड़े ।'[२] इन सत्याग्रहियों के बन्दी जीवन के बड़े ही मार्मिक चित्र 'नवीन' जी ने प्रस्तुत किए हैं । श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के द्वितीय बार जेल जाने पर उन्होंने लिखा है :-

'तालाकुंजी लालटेन जँगला कैदी ये सब हैं ठीक ।
खींच चुकी है नौकर शाही अपने सर्वनाश की लीक ।।
'चक्कर' से रोटी आयेगी , 'डब्बू' भर आयेगी दाल,
तू शकटार बना है - पापी नन्दवंश का जीवित काल ।
तेरी चक्की के ये गेहूँ पिसते हैं पिस जाने दो ।
चक्की पिसवाने वालों को मिट्टी में मिल जाने दो ।'[३]

अंग्रेज़ों की दमन-नीति एवं अत्याचारों का चित्रण करते हुए 'नवीन' जी ने असहाय एवं नि:शस्त्र जनता पर गोलीकाण्ड का भी सुन्दर एवं करुण चित्रण किया है :-

' वह देखो, खन्दक में सिकुड़ी - सिकुड़ाई बैठी है पल्टन ;

---

१. 'नवीन-दर्शन' - उपाध्याय, पृ० ३० ।
२. 'हिन्दी साहित्य में विविध वाद' - डा० प्रेमनारायण शुक्ल, पृ०२२४,२२५।
३. 'कुंकुम' - 'जाने पर' , पृ० २ ।

धरती माता की छाती पर मृत्यु उगलती है मशीन गन;
दिग्-दिगन्त को कँपा रहा है तोपों के गोलों का गर्जन,
सखे , खन्दकों में होता है मानवता का पूर्ण विसर्जन ।"[१]

साम्प्रदायिक झगड़ों का मूलकारण भी विदेशी शासक हैं । सन् १९३१ के साम्प्रदायिक दंगों का चित्रण 'नवीन' जी ने 'प्राणार्पण' में किया है । कवि ने इस साम्प्रदायिकता को भड़काने और फैलाने के लिए विदेशियों को उत्तरदायी ठहराया है ।[२] डा० नगेन्द्र ने लिखा है - 'यह निश्चित हो गया था कि सभी विषमताओं का मूल कारण, चाहे वे सामाजिक हों या आर्थिक- या नैतिक - सांस्कृतिक, विदेशी शासन है ।'[३] चारों ओर धर्म के नाम पर अन्याय हो रहा था :-

" वे शहन्शाहियत के पुतले, जिन का है सब दिन यही काम,
लड़वाते हैं इन्सानों को लेकर मज़हब का पाक नाम ;
कारिन्दे शाही ने सोचा : है यही आत्म रक्षा का पथ,
धार्मिक झगड़े होते जायँ, औ' चलता जाय जीवन-रथ ।"[४]

डा० विजयेन्द्र स्नातक ने लिखा है कि - 'हमारे जीवन में जो वैषम्य है, आघात और असफलताओं का जो क्रन्दन है, संघर्ष से उभरने वाला जो विद्रोह है, वह सब 'नवीन' जी की कविताओं में ज्वालामुखी के समान फूट पड़ा है । आपकी कविताएँ राष्ट्र को जगाने वाली होती हैं ।'[५] ब्रिटिश

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सिरजन की ललकार मेरी', पृ० ४८ ।
२. 'प्राणार्पण' -'नवीन'जी का अप्रकाशित खण्ड काव्य' - विनयमोहन शर्मा - नर्मदा -'नवीन'-विशेषांक १९६३, पृ० ८८ ।
३. 'हिन्दी साहित्य संग्रह' - भाग १, अलीगढ़ विश्वविद्यालय प्रकाशन -राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य - डा० नगेन्द्र , पृ० १२० ।
४. 'प्राणार्पण' , पृ० १३ ।
५. ~~'हम विषपायी जन्म के' - 'गरल पियो तुम ! गरल पियो तुम !!', पृ०४१५ ।~~
'हिन्दी साहित्य और उसकी प्रगति' - डॉ० गोपालेन्द्र स्नातक तथा लेक्चरर 'सुमन' - पृ० १६१

राज्य की कूट-नीति एवं कूटनीति से संतप्त भारतीय जनता के लिए 'नवीन' जी ने अनेक जागरण गीत लिखे हैं। भारत के उद्धार के लिए कवि सभी प्रकार के लोगों को जगाने का पुनीत कार्य करता है। उनका दृढ़ विश्वास है कि अब देशवासी ही अपने देश का उद्धार कर सकते हैं :-

"आज रुद्र ललकार रहे हैं : अमृत पुत्र, लो, गरल पियो तुम,
आज अमर बेला आयी है, गरल पियो, चिरकाल जियो तुम ;
ओ तुम चिर जीवन के प्यासे, उनलो यह भैरव आवाहन ,
प्रिय गिरिवर के तुंग श्रृंग से गूँज रहा है घण्टा घन-घन ।
प्रलयंकर शंकर बैठे हैं खोले वरदानों की झोली ;
जागो, ग्रहण करो वर उनका, बढ़े चलो टोली की टोली ।"
'हम विषपायी जनम के' — 'गरलपियो तुम! गरलपियो तुम!!' पृ. १५

सिंह-दहाड़ के लिए वह अपने देशवासियों को ललकार रहे हैं। उस समय आन्दोलनकारियों के साथ बड़ा ही क्रूर-व्यवहार किया जाता था। उन्हें कठोर यातनाएँ सहन करनी पड़ती थीं। वास्तव में यह उनके जीवन में परीक्षा की घड़ी थी और अनेकों साहित्य-जन लौह-शृंखलाओं में जकड़े हुए अपने मातृ-प्रेम का प्रमाण देने लगे। डा० ज्ञानवती दरबार ने लिखा है — "हिन्दी के अधिकांश साहित्य-सेवी सार्वजनिक आन्दोलनों की आँच में ही पके तपे हैं। अत: विचाराधीन काल का हिन्दी साहित्य हमारे विभिन्न जन-आन्दोलनों, विशेषकर राजनीतिक जागृति का भी इतिहास है।"[१] 'नवीन' राष्ट्रीय-नेता थे और कई बार आन्दोलन के रण-क्षेत्र में कूद पड़े। वह अपने देशवासियों को उनकी वास्तविक स्थिति का ज्ञान निम्नलिखित काव्य-पंक्तियों में कराते हैं :-

"तेरा स्वरूप जो अति अनूप

---

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - ११ मार्च १९६२ - 'भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा - एक दृष्टि - ज्ञानवती परबार , पृ० ७ ।

वह बिगड़ बना है अति कुरूप,
तू अपना स्वामी स्वयं, अरे,
तेरा ~~कहिं~~ कोई भी नहीं भूप।
अन्तस्तल की ज्वाला उभाड़
सिंहों की-सी करके दहाड़।"[१]

'नवीन' जी ने राजनीतिक आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया और गान्धी जी के नेतृत्व में अनेक आन्दोलनों को सफल बनाने के लिए भरसक प्रयत्न किए यद्यपि कई बार गान्धी जी के अहिंसावाद का भी विरोध किया। अपनी एक भेंट में 'नवीन' जी ने 'कमलेश' जी से कहा - "मैंने देश की स्वतंत्रता को ही अपना प्राप्तव्य मान लिया था तब मैं राजनीति से अलग कैसे रह सकता था ? तब राजनीतिक भी प्राण दान की थी।"[२] अतः अपने प्राप्तव्य को पाने के लिए वह पराजित जनता को पुनः संगठित होकर जूझने का सन्देश देते हैं :-

"अरे, अरे, ओ निपट निराशा की श्वासें भरने वाले,
अरे पराजित, अरे पराजयवादी, ओ मरने वाले,
ओ शंकित चितवन वाले, ओ आत्म-रूप-विस्मृति वाले,
ओ विजयेच्छुक, ओ गमनोत्सुक, ओ निदाघ-संस्कृति वाले,
दूर पार से आज आ रही अनल-गान की तान नयी,
आज वायु में निष्पन्दन है, कण-कण में है जान नयी।"[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरजे मेरे सागर पहाड़', पृ० ४१३।
२. 'मैं इन से मिला' - दूसरी किस्त - 'कमलेश', पृ० ५०।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अनलगान', पृ० ४४१।

कवि के जागरण गीतों में चेतना और स्फूर्ति का जलनद उमड़ रहा है।[१] उनका मानसिक उद्‌गार ओजमय होता था। 'स्वतंत्रता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है' और इसे पुन: प्राप्त करने के लिए वह छटपटा रहे थे। डा० नगेन्द्र ने लिखा है - 'भारत हमारा देश है वह हमारी जन्मभूमि है, उस पर हमारा स्वत्व है। हमारी जन्मभूमि पर विदेशी आकर शासन करें, अपने घर में ही हम बन्दी रहें, यह घोर लज्जा की बात है। इस लौह श्रृंखला को प्राणों की बलि देकर भी छिन्न-भिन्न करना होगा। भारत की आत्मा मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, निराला, नवीन, सुभद्रा कुमारी चौहान, दिनकर तथा सोहनलाल द्विवेदी आदि कवियों के स्वर में चीत्कार कर उठी।[२] साम्राज्यशाही के उदय होने के साथ ही हमारी स्वतंत्रता पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में कठोराघात होने लगे। हमारे स्वत्व का अपहरण किया गया है, अत: -

> 'बनना है हम को निज स्वामी,
> ऊर्ध्व-वृत्ति, सत्-चित्-अनुगामी;
> वसुधा, सुधा सिंचिता करके, हमें अमर फल खाना है;
> जो कि देव दुर्लभ है उसको इस धरती पर लाना है।'[३]

जब राष्ट्र के जन-जीवन में स्वराज्य की विराट हलचल हो रही हो तब उनके प्रतिनिधि कवियों की काव्य-वीणा पर राष्ट्रीय चेतना की झंकृतियाँ उठना सहज-स्वाभाविक था।[४] उस समय कानपुर के प्रसिद्ध जन-नायक स्वर्गीय

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' -ओंदुबे, पृ० १६५।
२. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृतियाँ' - डा० नगेन्द्र, पृ० २३।
३. 'विनोबा-स्तवन' -'इस धरती पर लाना है'-, पृ० ३१।
४. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - सुधीन्द्र, पृ० १८१।

गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा सम्पादित 'प्रताप' में राष्ट्रीय रचनाएँ प्रकाशित होती थीं। राष्ट्र का दर्प एवं ओज उन कविताओं में मुखरित हो रहा था। 'नवीन' जी इसी प्रताप-परिवार के एक सदस्य थे और सह-सम्पादक के रूप में राष्ट्र सेवा का पुनीत कार्य कर रहे थे। उनकी ओजमयी वाणी शत-शत बन्धनों से भी निकल कर फूट पड़ती थी :-

'जागो एक कतार बनालो, जीभ खींच लो इस शोषण की,
तोड़ो डाढ़ें, करो इतिश्री तुम मिलकर निज उच्छोषण की;
विजित करो निज बाह्य परिस्थिति विजित करो अन्तस्तल अपना
ऐसे जागो, मेरे मानव, फिर न आ सके दु:ख का सपना।'[१]

राष्ट्र पर परतंत्रता रूपी कलंक का टीका लगा था और इसे मिटाना भारतवासियों का प्रथम कर्त्तव्य था। श्री पन्नालाल त्रिपाठी ने लिखा है - 'कर्त्तव्य का मार्ग असि धारा से भी भयावह है। वहाँ तो सच्चे रूप में ही मोर्चा लिया जा सकता है। जीवन की कृत्रिमताएँ लिए उस मार्ग में प्रवेश सम्भव नहीं है।'[२] 'नवीन' जी देशवासियों को अपने कर्त्तव्य की याद दिलाते हैं :-

'मैं उग्र मुक्ति-सन्देश-दूत कहता हूँ अपने जग जन से,
'ओ मृत-को' उठो, खीर खाओ, भूखे हो तुम अपने मन से;
ओ सिंह पूत, हैं खींच रहे ये स्यार तुम्हारा कौर, अहो,
फैलाओ तो अपने पंजे, मन मारे यों मत बैठ रहो;'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ० ४७८-४७९।
२. नर्मदा - 'नवीन'-विशेषांक - १९६३ - महाकवि नवीन जी - पन्नालाल त्रिपाठी, पृ० ७७।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'कस्त्वं कोऽहं'?, पृ० १५३।

डा० इन्द्रपालसिंह ने लिखा है – 'कुछ कवि ऐसे भी थे जो गांधीजी से प्रभावित होते हुए भी, अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व रखते थे । उनके काव्य में क्रान्ति का शंखनाद है जो अहिंसात्मक होने की अपेक्षा, विद्रोह की ओर अधिक उन्मुख है । 'दिनकर' और 'नवीन' का नाम हम ऐसे ही कवियों में ले सकते हैं ।'[१] 'नवीन' जी भारतीय शूरवीरों को गरल पान के लिए आह्वान करते हैं:-

'तुम कैसे नवीन मतवाले ? तुम कैसे पीने वाले ?
फेर रहे हो अपना मुँह तुम देख हलाहल के प्याले ?
विकट नाम पीने वालों का, तुम न लजाओ उसे, अरे ,
हँसते-२ , हाथ-बढ़ा यों, ले लो प्याले गरल भरे ।'[२]

राष्ट्रीय चेतना की भावना बढ़ने लगी और दासता की श्रृंखलाएँ तोड़ने के लिए कवि ने युवकों के यौवन को ललकारा । डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है – 'सर्वप्रथम हमारे कवि का ध्यान, भारतीय पराधीनता पर गया। उसको विनष्ट करने की प्रबल भावना, उसके मानस तथा काव्य में हुंकार भरने लगी । उसने नौकरशाही को ललकारते हुए नई कविता लिखी ।'[३] सुप्त जनता को जगाने के लिए भैरवी स्वर अलापा :-

'सुनो, सुनो ओ सोने वाले ।
जागृति के ये भैरव स्वर -
जिनसे आज तरंगित है यह
अपना अति विस्तृत अम्बर ।'[४]

---

१. 'हिन्दी साहित्य चिन्तन' - डा० इन्द्रपालसिंह , पृ० १२२ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विष-पान' , पृ० ४५६ ।
३. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० १६८ ।
४. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सुनो, सुनो ओ सोने वालो !', पृ० ४६० ।

कवि ने युग-चेतना के अन्तर्गत, तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलन, क्रान्तिकारियों के कार्य, गान्धी जी तथा उनका सत्याग्रह आन्दोलन, जनजागृति, ब्रिटिश सरकार की फूट की नीति[१] और साम्प्रदायिकता के भेद-भाव को हटाने के लिए भारत वासियों ने जो आन्दोलन चलाए उन पर भी प्रकाश डाला है। लवण-सत्याग्रह का एक चित्र इस प्रकार उन्होंने खींचा :-

" झूमा भारत का युवक वृन्द, झूमे भारत के नारी-नर,
झूमा भारत का गाँव-२, आन्दोलित हुए विशाल-नगर।
डटा कानपुर युद्ध बीच, भिड़ गया बहादुर पेशावर,
पूरब, पच्छिम, उत्तर, दक्खिन, सब ओर उठी विद्रोह लहर।
नभ बीच लवण-सत्याग्रह के उमड़े दल-बादल घहर-घहर,
जनगण के आये भाव उभर, नौकरशाही काँपी थर-थर।"[२]

स्वतंत्रता के प्रश्चात् भी 'नवीन' देश-निर्माण के लिए जनता को सचेत करते हैं। अभी सोने का समय नहीं। राष्ट्र के अस्त-व्यस्त खण्डहरों पर भव्य प्रासाद बनाने के लिए अनथक परिश्रम की आवश्यकता है। अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए 'नवीन' जी देशवासियों को कर्म का सन्देश देते हैं :-

" भारत-खण्ड के तुम, हे जन-गण
चमक रहे हैं तब शोणित में इस भारतमाता के रज-कण,
भारत-खण्ड के तुम, हे जन-गण!
आमन्त्रण यह तुम्हें है कि इस माटी का श्रृंगार करो तुम;
आवाहन है तुम्हें कि अपनी जननी का भण्डार भरो तुम;
युग कहता है कि इस भूमि का यह दरिद्रता-भार हरो तुम,"[३]

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० २३६।
२. 'प्राणार्पण', पृ० १७।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'भारत-खण्ड के तुम हे जन-गण!', पृ० ४१०।

वीर पूजा एवं बन्दी जीवन :

अपने समय के महान् पुरुषों, राजनीतिक नेताओं एवं सामाजिक सुधारकों के प्रति 'नवीन' जी ने श्रद्धांजलि के पुष्प अर्पित किए हैं। राष्ट्रीय वीरों का गुणगान भी इसके अन्तर्गत लिया जा सकता है। डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है – " 'नवीन' जी के कृतित्व तथा व्यक्तित्व का एक मार्मिक अंग, श्रद्धा भी रहा है। कवि ने इस पावन भावना का पर्याप्त विस्तार किया और अन्य राष्ट्रीय कवियों के सदृश्य, अपनी वीर-पूजा की वृत्ति का प्रस्फुटन किया। 'नवीन' जी की वीर-प्रशस्तियों में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक, तीनों ही क्षेत्र के व्यक्ति समाविष्ट हो जाते हैं।"[१] आरम्भ से ही आर्य-समाज से प्रभावित होने के कारण नवीन जी ने कृषि दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा है :-

" इन ज़ंजीरों की ये लोहे
की कड़ियां अब भस्म हुईं ; -
तूने फूँका, इन को अपने
महाप्राण की ज्वाला से ;
लुढ़क गए सौ बरस भूत के
अंचल में , नव माला से,
लाज सजी है वेदी, कृषि!
बलिदानों की यह रस्म हुई ।।"[२]

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे , पृ० २०० ।

२. 'कुंकुम' - 'कृषि दयानन्द की पुण्य स्मृति में' , पृ० ४० ।

तिलक[१] और गान्धी दोनों के चरणों में 'नवीन' जी ने अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ाए हैं। दोनों महान् पुरुषों के जीवन-सिद्धान्तों से वे परिचित थे। तिलक-दल की उग्र नीति तथा गांधी के अहिंसा सिद्धान्त एवं सहिष्णुता ने उन्हें प्रभावित किया था। उन्होंने तिलक की तेजस्विता तथा बापू की विह्वलता दोनों को ही अपने में आत्मसात् किया था और कभी एक पक्ष प्रबल हो पड़ता था और कभी दूसरा।[२] गान्धी जी को चालीस करोड़ भारतीय जनता का पथ-प्रदर्शक घोषित करते हुए 'नवीन' जी ने लिखा है :-

> ' इन चालीस करोड़ जनों की आशाओं का पुंज सनातन
> इन चालीस करोड़ जनों के गौरव का प्रतीक सु-पुरातन ,
> इन चालीस कोटि मूकों की घन-गर्जन गम्भीर गिरावह
> तिमिर-ग्रस्त चालीस कोटि की तेज-पुंज चिर ज्योति शिरावह,'[३]

---

१. 'नवीन' जी ने 'स्वराज्य का माझा जन्मसिद्ध अधिकार आहे' मन्त्र के उद्‌भाता एवं राष्ट्रीय-स्वतंत्रता संग्राम के दधीचि महात्मा तिलक को भी अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत की है। तिलक जी की मृत्यु के पश्चात् 'प्रभा' पत्रिका में सन् १९२० में लिखित अपनी एक असंग्रहित कविता में कवि ने तिलक को 'दीपक-राज' की पुनीत संज्ञा से विभूषित कर, भारतमाता से यह गीत गवाया है :-

> 'बुझ गया मेरा दीपक राज।
> अंचल से ढांका था मैंने तो भी हुआ अकाज।
> तिमिराच्छन्न कर्म्मपथ की वह 'माफलेषु' की ज्योति,
> मेरे नैश गगन नक्षत्रों का वह सिरताज।'
>
> - 'कविवर नवीन के काव्य में दीपमाला' - डा० दुबे, पृ० ८
> (साप्ताहिक हिन्दुस्तान , १७ नवम्बर १९६३)

२. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे , पृ० २०१।

३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आ सदियों में आने वाले', पृ० ४४५।

डा० इन्द्रनाथ मदान ने लिखा है - 'नई कविता पर महात्मा गान्धी और कांग्रेस के आदर्शों का गहरा प्रभाव पड़ा है। इस प्रकार की कविता रचने वालों में श्री माखनलाल चतुर्वेदी, श्री बालकृष्ण 'नवीन', श्री रामनरेश त्रिपाठी, श्री सोहनलाल द्विवेदी आदि हैं।'[१] उन्होंने गान्धी को अहिंसा का ज्योति-पुंज एवं त्याग तथा बलिदान की मूर्ति माना है। गान्धी के महान जीवन पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने लिखा है :-

"एक लंगोटी के बल उसने किया दिग्विजय जगती तल में,
नव्य मार्ग-निर्माण किया है शोणित सिंचित इस दल दल में;
उसका जीवन सदासत्य के शुद्ध प्रयोगों की शाला है,
जग टटोलता है अपना पथ, उसके कर में उजियाला है;"[२]

परमपूज्य गणेश शंकर विद्यार्थी का 'नवीन' जी पिता तुल्य सम्मान करते थे। वे एक सच्चे देशभक्त एवं राष्ट्र-सेवक थे। उनके असमय निधन से देश को महान क्षति पहुँची है परन्तु जिस उद्देश्य के लिए उन्होंने अपना जीवन बलिदान किया - वह एक महान उद्देश्य था। संकीर्ण-हृदयी देशवासियों की कुटिल नीति के परिणामस्वरूप :-

" दया माया रोयी, लोक-रंजन बिलख उठा,
जब धरा शाही हुआ वह चिर धीर श्रेष्ठ;
अम्बर का छोर कँपा, धरित्री सिहर उठी,
जब धरती पर गिरा वह वीर श्रेष्ठ;
आत्मोत्सर्ग वेदी को प्रपूर्ण द्रव्य-भाग मिला,

---

१. 'काव्य सरोवर' सम्पादक एवं संकलनकर्ता इन्द्रनाथ 'मदान', पृ० ६।
२. 'हम विषपायी जन्म के', - 'सिरजन की ललकार मेरी', पृ० ८२।

यज्ञ-भावना की हुई प्राप्त आहुति यथेष्ट ;
लेकिन कलंकिनी सदा को हुई मानवता ,
जब श्री गणेश का शरीर हो गया अवेष्ट ।"[१]

'नवीन' जी ने स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी के महान आत्मोत्सर्ग पर एक स्वतंत्र खण्ड-काव्य 'प्राणार्पण' लिखा जिसमें उनके बलिदान की गाथा एवं विदेशियों की फूट-नीति के परिणामस्वरूप सन्त विनोबा के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए उन्होंने 'विनोबा स्तवन' लिखा । आधुनिक युग में राष्ट्र के लिए आत्मोत्सर्ग करने वाले महामानव के पावन चरित्र को लेकर लिखा गया यह खण्ड-काव्य राष्ट्रीय वीर-काव्य के इतिहास में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है । इस पुस्तक की भूमिका में स्वयं उन्होंने लिखा है :- 'यह हमारे देश का सौभाग्य, यह हमारा अहोभाग्य कि हमारे बीच, आजकल सन्त विनोबा विचरण कर रहे हैं । विनोबा का यह विरथ भ्रमण, उनका यह पाँव-२ परिव्रजन, हमारे देश की अतीत परिव्राजक परिपाटी का पुनरुद्धार है । और इतना ही नहीं कि यह उस परम्परा का पुनरुद्धार मात्र ही हो, उनका यह दैनंदिन मार्ग-क्रमण उस पुरातन, चरैवेति, चरैवेति - चलते जाओ, चलते जाओ, के आदर्श का अभिनव विकास भी है । - - - - परम पूजार्ह, एकनिष्ठ, बाल-ब्रह्मचारी, तपोधन, सत्त-शिरोमणि विनोबा हमारे देश में सत्युग की स्थापना के अर्थ नित्य प्रति चल रहे हैं । - - - विनोबा कौन है । विनोबा युग-२ की भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं ।"[२] विनोबा के जीवन-सन्देश को अपनाकर यह धरती स्वर्ग बन सकती है :-

---

१. 'प्राणार्पण' , पृ० ५१ ।

२. 'विनोबा-स्तवन' - भूमिका, पृ० १ ।

" सन्त विनोबा की वर वाणी
यदि सुन सकें द्विपद हम प्राणी,
तो देखेंगे धरा बन गई उन्नत स्वर्ग समाना है;
देव कहेंगे कि उनसे अच्छा नर का बाना है । "[१]

निरन्तर संघर्ष एवं कठिनाइयों को ही जीवन का यथेष्ट समझ कर श्रीमती कमला नेहरू ने अपने परिवार के अन्य सदस्यों के साथ स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया । राष्ट्र के सामूहिक कल्याण के लिए उसने आत्म-आहुति के ज्वलन्त खेल खेले और अन्त में अनेकों कष्ट झेलकर उनका शरीर टूट गया और वे स्वर्ग सिधारी :-

" तोड़ कर उस शृंखला को जो पड़ी थी मृदुल पग में ?
राजहंसिनी, उड़ चली इतनी सुबह अज्ञेय मग में ?
हो गये सम्पूर्ण क्या तब काज सब इस अनित जग में ?
आत्म-आहुति के ज्वलित ये खेल तुम ने खूब खेले ;
हन्त ! शुचि आदर्श के हित कौन दुख तुम ने न झेले ? "[२]

स्वातन्त्र्य-युद्ध में भाग लेने वाले सैनिकों के त्याग और तपस्या की भी कवि ने प्रशंसा की और इस तरह जनता में राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न की ।[३] यह सत्य है कि आरम्भ में कवियों का ध्यान नेताओं की ओर अधिक गया।[३]

---

१. 'विनोबा-स्तवन' - 'इस धरती पर लाना है' , पृ० ३१ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'कमला नेहरू की स्मृति में' , पृ० ४६८ ।
३. 'देशभक्ति की प्राथमिक अभिव्यक्ति उन नेताओं की प्रशंसा के रूप में प्रकट हुई जिन्होंने देश का नेतृत्व ग्रहण किया और फलत: औरों से पहले कठिनाइयाँ झेलीं । जनता की दृष्टि स्वाभाविक रूप से उन नेताओं की ओर सबसे पहले गई ।"
-'आधुनिक काव्यधारा' - केसरीनारायण शुक्ल , पृ० २६१ ।

परन्तु 'नवीन' जी ने नेताओं के साथ-साथ वीर सैनिकों की भी अभ्यर्थना की है :-

'तुम अज्ञात नाम जन-सेवक, तुम सैनिक, तुम धीर, वीरवर,
तुमने नव सन्देश-श्रवण की क्षमता दिखलाई साहस कर ;
चरण तुम्हारे चले अशंकित , अति सत्वर अनजाने पथ पर,
-- -- --
चरण तुम्हारे वे कि जिन्होंने दुर्गम शैल किये अति लंघित,
जिन की निर्भय अच्युतता ने किये अनेक हृदय निस्पन्दित ;
जो नवीन निर्दिष्ट मार्ग पर मुदित बढ़ चले निपट अशंकित ;'[१]

ऐतिहासिक वीरों के स्वतंत्रता प्रेम की रोमांचक कहानी की याद दिलाकर भी स्वतंत्रता की भावना जाग्रत की गई।[२] सुभद्रा कुमारी चौहान ने 'झांसी की रानी' कविता में लक्ष्मीबाई के अद्भुत साहस का सुन्दर वर्णन किया है और सांकेतिक रूप में विदेशियों के विरुद्ध घृणा की अग्नि भड़का दी :-

'सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में थी आयी फिर से नई जवानी थी,
गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी ।'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अदृष्ट चरण - वन्दना' , पृ० ४०६ ।
२. 'छायावाद युग' - शम्भूनाथ सिंह , पृ० १६६ ।
३. 'झांसी की रानी' - सुभद्रा कुमारी चौहान - 'काव्य सरोवर' - संकलनकर्ता -ॐ मदान , पृ० ६६ ।

अमर शहीद भगतसिंह की फाँसी का वर्णन करके जहाँ 'नवीन' जी ने विदेशियों के कुकर्मों का पर्दाफाश किया है वहाँ अपने देश के वीर सपूतों की वीर लीलाओं का भी उत्साहवर्द्धक वर्णन किया है :-

"फाँसी पर झूले भगतसिंह, उनके साथी भी झूल गये ,
भारतवासी हो उठे क्रुद्ध , वे अपनी सुध-बुद्ध भूल गये ;
भड़की घृणाग्नि, उमड़ी ज्वाला, आवाज़ लगी, हड़ताल हुई,
विद्रोह जगा, उठ पड़ा क्लेश, जनता की आँखें लाल हुईं ;
उन्मत्त विजातियों के प्रति उठ भड़का क्रोधानल अपार ,
भारत का शान्त महासागर उफना, उसमें आगया ज्वार ।"[१]

'एक भारतीय आत्मा' ने ऐसे ही वीर सपूतों के बलिदानों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा था :-

" चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ ,
चाह नहीं, प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ,
चाह नहीं सम्राटों के शव पर हे हरि डाला जाऊँ ,
चाह नहीं देवों के सिर पर चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊँ ।
मुझे तोड़ लेना वनमाली उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने-जिस पथ जावें वीर अनेक ।"[२]

श्री केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है -- 'मानव जीवन पाकर कीट-पतंगों की जिन्दगी से अच्छी तो मौत ही है । वह मौत भी सुक्कर है क्योंकि उस शव

---

१. 'प्राणार्पण' , पृ० १३ ।
२. 'पुष्प की अभिलाषा' कविता से - माखनलाल चतुर्वेदी - 'नये पुराने झरोखे' - 'बच्चन', पृ० १२० ।

पर ही स्वतंत्रता की भित्ति उठने वाली है। कवि कुत्सित जीवन की अपेक्षा मृत्यु को ही श्रेयस्कर समझता है। यह आत्म बलिदान नवनिर्माण के लिए ही तो है।[१] लोह-शृंखलाओं में जकड़े हुए वीर देशवासियों की अपार सहन-शक्ति की प्रशंसा कवि ने मुक्त कण्ठ से की है :-

"एक बार तो देख, अरे जग मेरी डण्डा-बेड़ी ,
एक बार तो देख : कट गयी है यह मेरी एड़ी;
टेढ़ी-मेढ़ी यह मदमाती मेरी चाल निहार ,
झन-२-२-२ करता है हम मस्तों का संसार ;
गुरातें , झन्नाते फिरते हैं ये मेरे शेर
ओ जग, जरा देख तो हैं यों कैसे विकट दिलेर।"[२]

'नवीन' जी की अनेक कविताओं में सत्याग्रहियों के बन्दी जीवन का मार्मिक चित्रण मिलता है। राष्ट्र की युगीन चेतना को सर्वाधिक प्रखर वाणी इन्हीं कविताओं में मिली है। स्वातन्त्र्य-युद्ध में भाग लेने वाले सैनिकों के त्याग , तपस्या तथा आत्म बलिदान का गौरव गान राष्ट्रीय काव्य की अमूल्य निधि है। डा० श्रीकृष्णलाल ने लिखा है – 'यह सत्याग्रही-वीर ही आधुनिक काल के राष्ट्रीय वीर हैं और इन्हीं का गान राष्ट्रीय कविता की सम्पत्ति है।'[३] सत्याग्रह के प्रति निष्ठा के कारण सत्याग्रहियों के प्रति उनका स्वाभाविक प्रेम था :-

"वह इठलाता, मृदु मुसकाता ,

---

१. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० २६।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'एक बार तो देख' , पृ० ४६१।
३. 'आधु० हिन्दी साहित्य का विकास' - श्रीकृष्णलाल , पृ० ८७।

खनन - खनन करता मदमाता,
इधर - उधर से आता-जाता,
नूपुर के स्वन को शरमाता
कुलिश बेड़ियाँ झनकाता वह चलता मादक चाल,
सलोना वह मन-मोहन लाल ।
देखा बेड़ी पहने मैंने अपना मृदु गोपाल ,
सलोना वह मन-मोहन लाल ।"[१]

कैदी जीवन की स्वत: अनुभूति के कारण `नवीन` के बन्दी-गृह-चित्रण बड़े स्वाभाविक एवं प्रभावोत्पादक हैं । अपने जीवन का सर्वस्व न्योछावर करने वाले वीर सपूतों के शौर्य एवं पराक्रम को देखकर सत्ताधारियों के पाँव उखड़ जाते हैं । क्रूर विदेशियों की पाश्विकता एवं बर्बरता स्वयं उनके विनाश का कारण बन जाती है । अपने रक्त से मातृभूमि के घोर अपमान का प्रतिशोध लेने वाले वीर सैनिक `नवीन` जी के लिए पूजनीय हैं :-

" मेरे साथी, ओ तुम मेरे सह-सैनिक नित धीर ,
बाणों की वर्षा में भी तुम अडिग, अचल, ओ वीर,
ताल ठोंक कर किया निमंत्रित रण में तुम ने काल ।
कब विचलित कर सकी तुम्हें यह कारा की प्राचीर ?"[२]

`नवीन` जी का दृढ़ विश्वास था कि महान त्याग के पश्चात् ही हमें अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त हो सकती है । श्रीमद्भगवतगीता से प्रेरणा ग्रहण करके उन्होंने कर्म को महत्व प्रदान किया । यही कारण है कि कर्म-रत भारत

---

१. `हम विषपायी जन्म के` - `अपना मृदु गोपाल` , पृ० ४६३ ।
२. वही - `ओ तुम अविचल वीर` , पृ० ४६६ ।

माँ के अनेक महान पुत्रों को वे शत-शत नमस्कार करते हैं :-

" थे तुम्हीं न, जिनमें सर्वप्रथम विद्रोहों का सन्देश सुना ?
थे तुम्हीं न , जिनने जीवन में कण्टकित मार्ग का क्लेश चुना ?
पथ की कण्टक-कीर्णता अमित, बोलो, तुमको कब डरा सकी?
तुम तो बढ़ते ही गये, वीर, तुमको मेरे शत-२ प्रणाम ।" [१]

डा० नगेन्द्र ने लिखा है - " 'नवीन' जी स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनिक रहे हैं, उनका व्यक्तित्व निर्भीक शौर्य का प्रतीक है । उनकी वाणी तेज के स्फुलिंग उगलती है । आत्मा की वाणी होने के कारण इन कवियों की देशभक्ति की कविताओं में अपूर्व प्रभाव क्षमता है । देश का युवक समाज इनको सुनकर हथेली पर प्राण ले घर से निकल पड़ा था ।" [२] वीर-सैनिकों के प्रति अपनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित करते हुए 'नवीन' जी ने कायर देशवासियों को भी ललकारा है । स्वतंत्रता आन्दोलन में क्षणिक असफलताओं के कारण निराश देशवासियों में वे नवीन उत्साह भर देते हैं, उन्हें जूझने के लिए प्रेरित करते हैं :-

'वरण करोगे विजय ? बनोगे जग में क्या तुम धरणीधर ?
तो सीखो कैसे देते हैं जन शोणित अंजलि-भर-भर ?
विजय वरण करने निकले हो, पग धरते हो यूँ डर-डर ?
कायर ! समझा था कि चले हो तुम अपनी खाला के घर ?
खबरदार ! पीछे मत देखो, लानत है गर तुम फिर झुको ,

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'मेरे साथी अज्ञात नाम' , पृ० ५१८ ।
२. 'हिन्दी साहित्य संग्रह' भाग १, अलीगढ़ विश्वविद्यालय प्रकाशन - राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता - डा० नगेन्द्र , पृ० १२३ ।

क्या है मोल तुच्छ जीवन का, अरे खपा दो तुम निज को ।"[१]

इस प्रकार 'नवीन' जी के राष्ट्रीय-काव्य में वीर पूजा एवं जागरण गीतों का एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान है । सुषुप्त जनता को संगठित करके विदेशी आक्रान्ता के विरुद्ध राष्ट्रीय-आन्दोलनों में नवीन ने स्वयं भी सक्रिय भाग लिया और अन्य देशवासियों को भी अग्नि में कूदने के लिए ललकारा।

सामाजिक सुधार एवं भविष्य निर्माण :

सामाजिक अव्यवस्था के कारण ही भारतवासी बहुत समय तक सामूहिक रूप से विदेशी शासकों से लोहा न ले सके । प्राचीन भारत की सामाजिक व्यवस्था अब छिन्न-भिन्न हो गई थी । हमारे समाज को अनेक रोग लग गए थे जिनके परिणाम स्वरूप उसमें अनेक कुत्सित एवं घृणित व्यापार भी चाम्य बन गए थे । समाज अनेक वर्गों में बंट गया था और इस वर्ग-विभाजित समाज में विधवा विवाह निषेध, बहु विवाह, खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्ध , पर्दा , स्त्रियों की हीनावस्था एवं अन्य अनेक कुप्रथाओं का चलन था । व्यक्तिगत हानि-लाभ के लिए सामूहिक कल्याण की उपेक्षा की जाती थी ।[२] 'नवीन' जी के लिए यह अवस्था असहनीय थी । और ऐसे समाज में रहकर वे अपना जीवन नष्ट नहीं करना चाहते थे । वे मनुष्य को समाज का पोषक मानते थे, शोषक नहीं । उनका दृढ़ निश्चय था :-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'पथ-निरीक्षण', पृ०४१६ ।

२. 'होता है परिगणित युगों में जन-समाज अस्तित्व जहाँ, -
शत-२ कल्पों तक फैला है सामूहिक व्यक्तित्व जहाँ -
वहाँ एक जीवन की चिन्ता क्यों हो, बोलो तो ?
कहो ? निभाओगे क्या यों ही तुम अपना दायित्व यहाँ ?
- 'हम विषपायी जन्म के' - 'चिन्ता' , पृ० ५२४.

जब तक वैयक्तिक-सामाजिक आचरणों में भेद रहेगा -
जब तक व्यष्टि-समष्टि धर्म का स्रोत अलग से यहाँ बहेगा-
अरे सत्य-शान्ति की सरणि जब तक न विश्व व्यापिनी बनेगी,
जब तक न यह नदी छोटी , जग-पलावक मन्दाकिनी बनेगी ,
कहता हूँ सामाजिक ढाँचा बदलो, उसमें हो परिवर्तन ,
किन्तु साथ ही व्यक्ति-भावना में भी हो नव जागृति-नर्तन;
यदि न ऊर्ध्व गामिनी बनेगी वैयक्तिक प्रवृत्तियाँ सारी ,
तो सामाजिक परिवर्तन की होने लग जायेगी ख्वारी ।[१]

रूढ़ि, रीतियों नीतियों, लोकाचारों और पाप-पुण्य के मनगढ़ंत व्याख्याओं ने जीवन के स्वाभाविक स्रोतों को सुखा दिया था।[२] जीवन का रागोल्लास तिमिराच्छादित हुआ था। सामाजिक विषमताओं ने मानव के जीवन में जीवन और मरण के भेद को मिटा दिया था। सामाजिक कुरीतियों के कारण मानव दग्ध हो रहे थे। विदेशी शासक एवं सामाजिक - कुप्रथाओं के कारण देशवासियों पर दोहरी मार पड़ रही थी :-

'यों तो वह नहीं रहा है, वह तो रंच लड़खड़ाता है,
सामाजिकता के पिंजड़े में पंछी तनिक फड़फड़ाता है!
आज सुन रहा हूँ मैं भीषण प्राण-हरण का घण्टा घन-घन !
देख रहा हूँ विकट भूख की ज्वाला में लिपटे मानव-तन ।'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सिरजन की ललकार मेरी !' , पृ० ६७-६८ ।
२. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - १९६३ - कविवर नवीन जी - 'बच्चन', पृ० ११६ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'दग्ध हो रहे हैं मेरे जन' , पृ० ५४२ ।

भारतीय जन-समाज की नाना कुरीतियों पर प्रकाश डालते हुए 'नवीन' ने उन पर कठोर व्यंग्य किये हैं। वे उस दूषित व्यवस्था में पली जनता के प्रति सहानुभूति भी प्रकट करते हैं और उन्हें जागरण का सन्देश भी देते हैं। श्री लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है – 'राजनीति के अतिरिक्त, 'नवीन' जी ने अपनी अनुभवी आँख भारतीय जन-समाज की ओर उन्मुख कीं। कृषक, श्रमिक, भिक्षुक, नारी आदि सामाजिक सदस्यों को कवि ने अपने प्रखर स्वर में आलंगित किया। कवि की दृष्टि समाज के त्रस्त एवं पददलित अंगों की ओर भी गई और उसने अपने सहज स्नेह तथा उदार मन से उन्हें अंगीकृत किया।[१] देश की वर्तमान सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक दशा का यथार्थ चित्रण करते हुए वे जनता को देशोद्धार की प्रेरणा देते हैं :-

'मान और मर्यादा छूटी, बिखर गयी गरिमा क्षण-भर में,
रण-हुंकार कारिणी क्षमता लुप्त हो गयी है अम्बर में,'[२]

तत्कालीन समाज में नारी की दुर्दशा पर क्षोभ प्रकट करते हुए कवि ने 'नरक के कीड़े' नामक कविता लिखी है। नारी को वासना की तृप्ति का साधन मात्र समझ कर वास्तव में उसके गौरवोज्ज्वल मस्तक का अपमान हो रहा था। नारी को विश्वास की मूर्ति एवं जीवन-दायिनी न समझ कर उसे क्षणिक भोग की वस्तु समझा जाता था :-

' असफल, कलुषित वासना भ्रष्ट, बन गयी ग्रन्थि इनके मन की,
ये लोग कोसते नारी को, सुध भूले ये माँ के स्तन की !
प्रत्यक्ष रूप में नारी को कर सके न कभी पराजित ये,

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० १६८।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अरी घहक उठ', पृ० ५३७।

तो क़लम-कुल्हाड़े से उसको करते हैं खण्ड-२ नित ये ?
निज माताओं का यों ही क्या ये पामर करते तर्पण हैं?
ये षण्ढ, नरक के कीड़े हैं, ये कायर हैं, दुर्बल मन हैं ।"[१]

'नवीन' जी ने देखा था कि हमारा समाज आर्थिक दुर्दशा से ग्रस्त है ।[२] पराधीन भारत में कला-कौशल सब नष्ट हो चुके थे । विदेशियों ने भारतीय कलाओं को समूल उखाड़ फेंका था । श्रमिक वर्ग में बेकारी फैल रही थी और खेती का काम भी उस समय अभिशाप था, वरदान नहीं । आर्थिक विपन्नता के शिकार मानव की विकृतावस्था को देख कर कवि ने 'जूठे पत्ते' नामक कविता लिखी ।[३] आर्थिक विपन्नता के कारण भविष्य की चिन्ताएँ उसके सामाजिक तारतम्य को क्षीण बना देती हैं :-

" उलझा है वैयक्तिक, सामाजिक तारतम्य,
भावी क्षण नहीं रहे कल्पना-विचार - गम्य;
हिय में कैसे आए कोई मनुहार रम्य ?
आज अनिश्चितताएँ सभी ओर छाई हैं ,
भावी की चिन्ताएँ सम्मुख अब आई हैं ।"[४]

सामाजिक विषमताओं को मिटाने के लिए एवं एक नवीन समाज के निर्माण हेतु 'नवीन' जी जन-शक्ति को एकत्रित करने का प्रयत्न करते हैं ।

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'नरक के कीड़े' , पृ० ५२१ ।
२. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - १२ दिसम्बर १९६५ - विषपायी बा०कृ०श०न० श्री रत्नलाल शर्मा, पृ० १३ ।
३. 'हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ३४४ ।
४. 'क्वासि' - 'भावी की चिन्ताएँ', पृ० ५४ ।

राह पार करने के लिए वे पहले अनेक बिखरे तन्तुओं में एक क्षीण सामंजस्य की रेखा का भी स्वागत करने के लिए प्रस्तुत हैं। उन्हें विश्वास है कि हमारा पारस्परिक वैमनस्य एवं अराष्ट्रवादी भावनायें ही इस नैराश्य-तिमिर के पारावार का सृजन कर रही हैं।[१] कवि 'नवीन' सामाजिक क्रम की स्थापना के लिए आतुर-हृदय पुकार उठता है :-

> " हम पत्थर हैं, या कायर हैं जो यह सर्वनाश लख कर भी -
> रच न सके नव सामाजिक क्रम, यह इतने कटु फल चखकर भी!
> क्या यह बात असम्भव थी कुछ कि सब सूत्र अपने कर होते ?
> अपना घर अपना ही होता यदि हम कुछ कम कायर होते ?"[२]

नव समाज के नवल सृजन का नूतन संदेशा पाकर जनता में एक नवीन शक्ति का संचार हुआ। वे प्राचीन सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन लाने के लिए आतुर मन निकल पड़े। यह रूढ़ि एवं परम्परा के विरुद्ध संघर्ष था और इस संघर्ष में निरन्तर जूझने के लिए कवि 'नवीन' ने अन्य देशवासियों को ललकारा और सत्ताधारियों का खुल कर विरोध किया। प्रो० राजमल वोरा ने लिखा है – 'साहित्य युग की आवश्यकता की पूर्ति करता है। - - - वैयक्तिक समस्याओं और अनुभूतियों को लेकर लिखे जाने वाले साहित्य की अपेक्षा सामाजिक समस्याओं को लेकर लिखे जाने वाले साहित्य पर युग की छाप अधिक प्रत्यक्ष रूप में पड़ती है। राष्ट्रीय साहित्य में इस दृष्टि से युग का यथार्थ होता है।'[३] समाज की असहनीय वेदना ही मानव को नूतन सृजन के लिए प्रेरित

---

१. 'नवीन-दर्शन' – उपाध्याय, पृ० ३५।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'दग्ध हो रहे हैं मेरे जन', पृ० ५४४।
३. 'साहित्य-सन्देश' अप्रैल १९६३ - 'राष्ट्रीय साहित्य' - प्रो० राजमल वोरा, पृ० ४१६।

कर रही थी :-

" पर, मानव ने लखी विवशता ; उसने देखे बन्धन अपने ;
और लगा वह दाँत पीसने ; उसके लगे होंठ भी कँपने ;
मानव की आँखों के आगे लहराये भावी के सपने !
और झिट-किटा कर वह दौड़ा करने नाश, सृजनित नव-नव !! "[१]

नव-निर्माण के लिए संघर्ष-रत देशवासियों को आश्वासन देते हुए 'नवीन' जी कहते हैं :-

" है तेरा रण पुण्य-प्रणोदक, तेरा रण जन-मंगलकारी,
तेरा जीवन नित्य निवेदित, तेरे कर्म अभय - संचारी ;
देख रही है यह मानवता आतुरता से तेरी गति-विधि,
क्षण-क्षण तुझे निहार रहे हैं, ये सब बूढ़े भूधर,वारिधि ; "[२]

'नवीन' जी अपने जीवन में संघर्ष से जूझने वाले एक सिपाही थे ।[३] अपने दृढ़ नेतृत्व, परम साहस एवं अपार सहनशक्ति का उन्होंने अनेक बार परिचय दिया है । यही उनकी जीवन-निधि थी । सामूहिक कल्याण के लिए अपने जीवन-लक्ष्य को उन्होंने स्पष्ट शब्दों में अभिव्यक्त किया :-

" हम घर से निकले हैं गढ़ने नव चन्द्र, सूर्य, नव-२ अम्बर ,
नव वसुन्धरा, नव जन-समाज नव राज-काज, नव काल, प्रहर । "[४]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'क्या परवश, डग-मग-पग मानव ?', पृ० ५१६।
२. वही - 'सैनिक , बोल !' , पृ० ५२६ ।
३. 'कल्लोल' (आधु० कविताओं का संकलन) संकलनकर्ता - प्रो० दुर्गादत्त शास्त्री-पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' , पृ० ११३ ।
४. 'हम विषपायी जन्म के' - विद्रोही , पृ० ४८५ ।

पुनर्निर्माण के लिए कवि देशवासियों को आमंत्रित करता है। भारत माँ की बेड़ियाँ तोड़कर कवि सामाजिक वैषम्य, दीनता, दुख और विवशता का गढ़ भी ढहा देना चाहता है। वह निर्भ्रान्त, निर्द्वन्द्व, सुखी और सम्पन्न जीवन देखना चाहता है।[१] श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा है – 'पं० बालकृष्ण इस बात को जानते थे कि भारतीय समाज में कौन से गुण ऐसे हैं, जिन्हें वे दोष की तरह मानते थे, और बहादुर की तरह उन पर आक्रमण किया करते थे। ऊँचाई का ख्याल भी यदि वह समाज रचना को तोड़ दे और उसके पुनर्निर्माण की क्षमता न रखे, उनकी नज़र में गिर जाता था।'[२] 'बढ़े चलो।' उनका प्रिय वाक्य था। वे देशवासियों को त्योहारों का सुख आनन्द छोड़कर कँटीले पथ पर आगे बढ़ने के लिए आवाहन करते हैं :-

'बढ़े चलो, अरे, मत पीछे मुड़ देखो आज,
राखी आयी, होली औ' दिवाली भी तो आयेंगी,
रस की लगे गी भीर, संस्मृतियाँ कसकेंगी,
आँखों में अतीत की घटाएँ घोर छायेंगी,
पर, तुम रुकना न एक क्षण को भी, बन्धु,
मानवता देख तुम्हें क्षण-२ सिहायेगी;
आँखें पोंछती-सी, हिय-कसक टटोलती-सी,
जाती की करुणा तुम्हारे गुण गायेगी।'[३]

ध्येय-प्राप्ति के हेतु अनवरत संघर्ष में लीन सामान्य भारतीय जनता को पथ के शूल भी फूल प्रतीत होते हैं, क्योंकि :-

---

१. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० ५३।

२. 'सरस्वती' - जून १९६० - त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा नवीन- पं० माखन लाल चतुर्वेदी, पृ० ३८१।

३. 'हम विषपायी जन्म के' - कारा में सातवीं श्रावणी रक्षा पूर्णिमा, पृ० ४६५।

`सामूहिक उत्थान हेतु हैं अर्पित जिन के प्राण, -
उनको निज का वैयक्तिक सुख क्यों रोके हठ ठान ?'[१]

`कर्म-अलसता औ' कायरता सब जल जायें बारी बारी' - नवीन की ओजस्वनी वाणी द्वारा निसृत इस शुभ कामना की प्रतिध्वनि चारों दिशाओं में गूँज उठी । उन्होंने सामाजिक जीवन में निराशा को कभी स्थान नहीं दिया । वे सदा भविष्य के प्रति सजग एवं सचेत थे , और इसके निर्माण के लिए एक सफल निर्माता के रूप में जनता के सम्मुख आए । श्री केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है — 'देश भक्ति - सब से प्रमुख सामाजिक और जातीय मनोभाव की शक्ति इस तथ्य में निहित है कि वह साधारण स्त्री-पुरुष को साहस के प्रदर्शन के लिए आमंत्रित करती है ।'[२] इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज के पुनर्निर्माण में कवि 'नवीन' ने प्रशंसनीय कार्य किया है । उनके अथक परिश्रम के परिणामस्वरूप ही :-

' जागी श्रम की शक्ति अपरिमित,
स्वाभिमान का शंख बजाया ।
श्रमिक समाज गठित हो सत्वर-
कर्म-क्षेत्र में आगे आया ।'[३]

राष्ट्रीय काव्य में संकेतात्मकता :

कांग्रेस में सक्रिय भाग लेने के कारण 'नवीन' जी विदेशी शासकों का

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'क्यों रोते हो, यार ?' , पृ० ४३८ ।
२. 'आधुनिक काव्यधारा' - केसरी नारायण शुक्ल, पृ० २७२ ।
३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' १३ जुलाई १९६० - 'एक बहन के उदगार' - कमलेश सक्सेना, पृ० ३० ।

खुल कर विरोध करते थे, अत: उनके राष्ट्रीय काव्य में संकेतात्मक वर्णन बहुत कम मिलता है। पुरन्तु फिर भी कहीं-कहीं पर सुन्दर संकेतों द्वारा उन्होंने अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त किया है। इन गीतों में उनकी भावनाओं की पूर्ण व्यंजना हुई है तथा इनमें प्रवाह, प्रभाव एवं सच्चाई मिलती है। व्यंग्य का पुट भी इन गीतों में विद्यमान है। अपरिमित पाप की गट्ठरी को समूल उखाड़ फेंकने के लिए 'नवीन' जी कटिबद्ध हैं :-

'यह शताब्दियों का पाप महा,
एकत्रित है बेमाप यहाँ ,
इसको तू खोद बहा दे , रे ,
तेरा जो यह अभिशाप यहाँ ;'[१]

इस पुण्य स्थली को कलंकित होते देख कवि घूर्त अत्याचारियों को चेतावनी देता है :-

'हे ठग ! उसी पुण्य सर को तुम
करो न परिणत अब मल में ;
निश्चेष्टता तथा निर्बलता ,
का न करोगे क्या अब शेष ?'[२]

पुण्य जीवन का प्रकाश है, परन्तु हमारे पुण्य-स्थल पर तो महानाश की काली छाया मंडरा रही थी। इस क्रूर कालिमा को हटाने के लिए जीवन की होली जलानी होगी।[३] तमसान्धकार को हटाने के लिए ज्ञान का प्रकाश

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरजे मेरे सागर पहाड़' , पृ०४१२ ।
२. 'कुंकुम' -'सावधान', पृ० ४ ।
३. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० २८ ।

अनिवार्य है, तभी भय का हरण होगा :-

"मानव ने देखा कि तिमिर में परिचित भी बन गये अपरिचित ;
मानव ने देखा कि तिमिर में भय ही भय है मरा अपरिमित ;
मानव ने सोचा कि कर सकूँ यदि मैं स्ववश प्रकाश अमाहर ,
तो भय भागे ; ज्ञान जग उठे यदि धधके प्रचण्ड वैश्वानर ।"[१]

इस महानाश की काली छाया में जीवन की हरियाली सूख गयी । मालाओं के फूल बिखर गए , दमन और शोषण के चिक्र में जीवन एक अभिशाप बन कर रह गया और नि:श्वासों की केन्द्रीभूत पूँजी ही मानव के लिए शेष रह गयी :-

"मालाओं के फूल हज़ारों बिखर गये सब ओर ;
ढूँढा बहुत मिला न कहीं , धागों का ओर न छोर ।
हँस-हँस पूछा हो कि बताऊँ मैं कुछ अपना हाल ;
हे निष्ठुर , मेरे ये सारे हाल हुए बेहाल ।
मुझ से मत हिसाब मांगो, है लम्बा चौड़ा खाता ;
लाखों नि:श्वासों की गिनती कहो कौन बतलाता ।"[२]

राम और कृष्ण की यह पावन भूमि क्रूर कंस के अत्याचारों से शोषित एवं उत्पीड़ित है । हमें ऐसी ब्रजभूमि का निर्माण करना है जहाँ परतंत्रता का गहनान्धकार स्वतंत्रता की उज्ज्वल आभा में विलीन हो गया हो एवं परवश तथा असहाय जन-समूह में अपार शक्ति का संचार हुआ हो :-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'धधक उठो अब, ओ वैश्वानर', पृ० १७६ ।
२. 'कुंकुम' - 'प्रजल्पना' , पृ० १०३ ।

" दिक्-काल नये, दिक्-पाल नये, सब ग्वाल नये, सब बाल नये,
हम सिरजें गे ब्रजभूमि नयी, गोपियाँ, गोपाल नये !!
हम क्यों न करें विश्वास कियह टिक नहीं सकेगा तम अपार ?
हम महाप्राण, हम इक उठान, हम विद्रोही, हम दुर्निवार ! "[१]

कवि को पूर्ण विश्वास है कि आज की दीन-हीन-दशा निकट भविष्य में नहीं रहेगी । हम अपने ही घर में अधिक समय के लिए पिंजर-बद्ध पक्षी के समान नहीं रहेंगे । हमारी विजय-पताका बहुत शीघ्र राष्ट्रीय-सम्मान प्राप्त करेगी । प्रो० केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है - `पराधीन धरती स्वतंत्र होगी। हमारी गंगा हमारी होगी, हमारा हिमालय हमारा होगा` देश का कण-कण स्वतंत्र होगा, प्रत्येक अणु परमाणु अपनत्व की भावना से भर उठेगा और समस्त चराचर प्राणमयी, ओजमयी एवं अधिकारमयी स्वतंत्रता की भित्ति पर खड़ा होकर परमानन्द का अनुभव करेगा ।"[२] कवि देशवासियों को जागृति का सन्देश देता है । आशा पूर्ण भविष्य का उज्ज्वल चित्र प्रस्तुत करता है :-

" गंगा गाती कल-कल ध्वनि में भावी के कल की बातें ,
यमुना गाती है कल-कल- कर कि अब गयी कल की रातें ;
सावरमती गरज कर बोली : अब कैसी निशि की घातें !
दिन आया, अपना दिवा आया, यों गाती है लहर-लहर ,
सुनो-२ , ओ सोने वालो, जागृति के ये भैरव-स्वर ।"[३]

अन्धकार पर आलोक की विजय होगी और ऊषा रानी हँसती हुई प्रकृति में नवीन प्राणों का संचार करेगी । शस्य-श्यामला भारत माँ फिर से

---

१. `हम विषपायी जन्म के` - `विद्रोही` , पृ० ४८६,४८८ ।
२. `नवीन-दर्शन` - प्रो० उपाध्याय, पृ० ४६ ।
३. `हम विषपायी जन्म के` - `सुनो, सुनो ओ सोने वालो !` , पृ०४६१।

विहँस उठेगी :-

"फिर आएगी ऊषा हँसती ; फिर होगा विहान चिरसुन्दर,
फिर से नव भैरवी छिड़ेगी ; फिर होगी पंखों की फर-फर;
फिर से अरुण छटा छाएगी, फिर होगा द्रुम-दल का मर्मर,
फिर से समुद्र बहेगा सन-सन-स-न-न-सन-न जागरण-समीरण
लख अम्बर में तमावरण घन, क्षण-२ क्यों अकुलाएँ लोचन ।"[१]

शासकों के कुचक्रों से 'नवीन' जी भली भाँति परिचित थे । अत: संकेतात्मक रूप में देशवासियों को सचेत रहने का प्रयत्न करते हैं :-

" ये दानवता के मदमाते सर्वनाश की सोच रहे ,
सत्य, न्याय, करुणा, सहृदयता, सब का गला दबोच रहे ;
मत हिय हार, अरे ओ मेरे मानव, तू ललकार इन्हें ,
अपने मस्तक तेज-पुंज से कर दे क्षण में क्षार इन्हें !"[२]

दीर्घकालीन स्वातन्त्र्य-समर में निरन्तर संघर्षशील वीर सेनानी की भाँति 'नवीन' जी देशवासियों को प्रति क्षण एवं प्रति पल जागृति का मोहक गान सुनाते रहे । उनका दृढ़ विश्वास था कि देश का उद्धार इन्हीं से सम्भव है और इनकी सामूहिक शक्ति का सदुपयोग किया जा सकता है । कवि प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपने दृढ़ निश्चय का परिचय देता है :-

" हम लगन बटोही, टोह लीन,
हम पथिक पुरातन, चिर नवीन,
क्यों आज बने हैं हम थकित दीन ?

---

१. 'रश्मिरेखा' - 'क्यों उलझे मन' , पृ० ११३ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गहन तमिस्रा की परिखा' , पृ० ४६६ ।

यद्यपि मग मरुमय, कण्टमय, प्रतिकूल जगत है पौन यहाँ !
थक कर बैठे हम कौन यहाँ ?'[१]

विश्वासघात करने वाले धनलोलुप 'जी हुजूरों' के प्रति 'नवीन' जी का व्यंग्य बड़ा कठोर एवं तीक्ष्ण है। चांदी के चन्द खनखनाते टुकड़ों के लिए अपना धर्म बेचने वाले देशद्रोहियों की ओर संकेत करते हुए 'नवीन' जी ने लिखा है :-

' ये चन्द ज़िन्दगी के लमहे गर धन बटोरते ही बीते, -
गर, इस कोशिश से पा जाये मानव सब फल मनके चीते,-
तो भी क्या दिल भर जायेगा सोने चान्दी की खन-२ से ?
यदि हिय टटोल कर देखोगे, पाओगे अपने को रीते ,'[२]

कवि स्वतंत्रता देवी की आराधना संकेतात्मक रूप में करता है। वह उस पुण्य स्थल तक पहुँचने के लिए व्याकुल है जहाँ आलोकमयी स्वतंत्रता देवी का निवास-स्थान है। वर्तमान की घोर तमिस्रा से ऊब कर कवि मंगल प्रभात का दर्शन चाहता है और अपनी चिर निद्रामयी काली रात का विहान खोजता है।[३] वह सेवक के रूप में अपने स्वामी तक (इष्ट स्थल तक) पहुँचने के लिए लालायित है :-

' इस सेवक को ज़रा बता दो -
वह सुन्दर सुरम्य सुस्थल ,
जहाँ तुम्हारे चरण-कमल , -
चल कर कीर्णित कर आते हैं

---

१. 'अपलक' - 'थकित' , पृ० ५७ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तन-मन से तुम को प्यार किया' , पृ० ४३३।
३. 'नवीन-दर्शन' डॉ० उपाध्याय , पृ० ४५ ।

अपना मोहनमय परिमल ;
वहीं मैं चला जाऊँगा ;
और तुम्हारे चरण पँखुड़ियों
के, पराग को पाऊँगा ।"[१]

भविष्य के अनेक उज्ज्वल स्वप्न 'नवीन' जी के हृदय में एक विचित्र हूक उत्पन्न करते हैं । चारों ओर जनता के अकुलाए लोचन देखकर वे क्षुब्ध हो उठे हैं । उनकी विचारधारा और मनोदृष्टि में परिवर्तन हुआ । दासता का करुण क्रन्दन सुनाने की अपेक्षा वह देश को पुन: गौरवगरिमा युक्त बनाने के लिए देशवासियों को ललकारने लगा :-

" क्यों कलेजे की तड़प धीमी पड़ी -
आज दिल सुनसान-सा क्यों हो गया ?
आँख के अव्यक्त भावों की लड़ी -
तोड़ दी किसने ? कहाँ धन खो गया ?
इस विपिन में वह कुहुकिनी कूक कर -
किस निनादित वेणु-वन में सो गई ?"[२]

डा० रामधारीसिंह'दिनकर'ने लिखा है – "आप कवि थे, ऐसा कवि जिसकी भावना का एक छोर आकाश से और दूसरा पृथ्वी से लगा था ; जो एक कान से महारुद्र के ढक्के का निनाद और दूसरे से प्रियतमा के वक्ष की निगूढ़ धड़कनें सुना करता था ; जिसने देश की छाती में धधकती हुई आग को उसी तेजस्विता से व्यक्त किया था, जिस तेजस्विता से ज्वाला मुखी पर्वत प्रज्वलित लावा उद्गीर्ण करता है ।"[३] कवि सिंह दहाड़ के साथ सागर और

---

१. 'कुंकुम' - 'वेबसी' , पृ० ४६ ।
२. 'कुंकुम' - 'सूखे आँसू' , पृ० २० ।
३. 'वट-पीपल' - 'दिनकर' , पृ० ३४ ।

पहाड़ों को गरजने का आदेश देता है । संकेत स्पष्ट है :-

'गरजे मेरे सागर' पहाड़
सिंहों की-सी करके दहाड़ !
मेरे सागर गम्भीर गहन,
करते हैं जो बड़वाग्नि वहन,
कहते हैं : मानव, जाग-२ ,
सुलगा दे ज्वाला सर्व दहन
बाधाओं को जड़ से उखाड़
सिंहों की सी करके दहाड़ ।' [१]

'पथ यदि स्पष्ट है तो चाहे कितना दुर्गम हो, पार किया जा सकता है । यही भावना लेकर 'नवीन' जी रण-क्षेत्र में कूद पड़े और अपनी लेखनी द्वारा समस्त भारतवर्ष में विदेशी राज्य के प्रति घृणा की अग्नि प्रज्वलित की। उनका लक्ष्य स्पष्ट था परन्तु लक्ष्य-प्राप्ति के लिए बलिदान की आवश्यकता थी। 'नवीन' जी के संकेतात्मक राष्ट्रीय काव्य में भारतोद्धार की कामना की गयी है और पददलित जनता को सामूहिक रूप से शत्रु से जूझने का सन्देश दिया गया है ।

राष्ट्रीय काव्य में आशावादी सन्देश :

जनता आए दिन की असफलताओं से हताश हो रही थी और इधर प्रतिदिन की घोर हिंसा ने उन्हें भयभीत कर दिया था । अंग्रेज़ों की कूट-नीतियों से त्रस्त मानव का हा-हाकार सुन कर 'नवीन' जी नवीन आशा एवं उत्साह का संचार करने में संलग्न थे । हताश जनता के प्रति 'नवीन' जी उत्साह-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरजे मेरे सागर पहाड़' , पृ०४११ ।

वर्धक शब्दों में कहते हैं :-

'आशाओं का नाश देखकर - काँप रहे हो क्यों जन-गण ?
यह है नहीं तमाशा कोई यह है भीषण जीवन-रण !
आग बिना क्या कहीं हुए हैं जग में मुर्दे भस्म कभी ?
बिना हथौड़े के प्रहार के टूटे हैं क्या अश्म कभी ?
तुम हो अग्नि कुमार और तुम लपट देख क्या आज डरे ?
अमृत पुत्र हो , फिर क्या तुम चीख उठे हो अरे मरे ।'[१]

मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए यह परमावश्यक था कि देशवासियों में अपार सहनशीलता, दृढ़ता और आत्म बलिदान की भावना जगायी जाय ।[२] 'नवीन' जी को अपने उद्देश्य की सफलता में पूर्ण विश्वास था, अत: वे अपने देशवासियों को एकता और संगठन तथा आशापूर्ण उत्साह का सन्देश देते हैं । वे जनता को, परस्पर भेदभाव छोड़कर, गरलपान के लिए आमंत्रित करते हैं:-

'नर हो तो क्यों भूल रहे हो कि तुम शुद्ध नारायण छवि हो ?
यदि लव हो तो अग्नि पुंज हो, एक किरण हो तो तुम रवि हो
आओ तो निर्लिप्त भाव से निज विकार अन्तर में धारो ;
यदि न कर सके इतना भी तो सर्वनाश है, ज़रा विचारो !
इतनी यह विज्ञान-सम्पदा, इतना यह बल बुद्धि पराक्रम ,
भस्मसात होवेगा क्षण में , त्यागो अपने मन का सम्भ्रम !'[३]

राष्ट्रीय नेताओं के पुनीत कर्त्तव्यों एवं आत्म बलिदानों की स्मृति दिलाकर

---

१. 'अभय' कविता से - 'नवीन' जी की यह कविता मुझे स्वर्गीय पण्डित श्रीराम शर्मा ने सुनाई थी।

२. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय , पृ० २२ ।

३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरल पियो तुम ! गरल पियो तुम', पृ० ४१७-१८।

'नवीन' जी जनता में एक नवीन स्फूर्ति का संचार करते हैं :-

'प्राण दिया, रण ठान दिया,
जीवन डाला , हिन्दुत्व खिला,
तेरे पदाघात से वसुधा
काँपी , - झण्डा लहर उठा ;
खिसक रही परिपाटी- पूजा
की यह नाशक अचल शिला ,
हृदयाकाश नई आशा के
घोर नाद से घहर उठा ।'[१]

श्रीभगवतीचरण वर्मा ने लिखा है – ''नवीन' में अडिग आस्था है, और इसी आस्था के कारण वह निराश नहीं हुए, श्रीहत नहीं हुए । कटुताओं और निराशाओं से जीवन-पर्यन्त लड़ते रहने पर भी उनका सत और कल्याण पर अडिग विश्वास रहा है ।''[२] 'मस्त रहो' कविता में 'नवीन' की आस्था मूर्तिमान हो उठी है :-

' यही साधना साधो , मानव, कि तुम अडिग औ अटल रहो,
प्रतिकूलता पधारे सम्मुख तब भी तुम नित अचल रहो ;
समझो बन्धु कि आते ही हैं पथ में आँधी के झोंके ;
क्या कर लेंगे ये बेचारे यदि तुम मन में सबल रहो !'[३]

---

१. 'कुंकुम' - 'ऋषि दयानन्द की पुण्य स्मृति में' , पृ० ४७ ।
२. 'आजकल' - दिसम्बर १९५७ - बालकृष्ण शर्मा नवीन - भगवतीचरण वर्मा , पृ० १० ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'मस्त रहो' , पृ० ४५५ ।

मरण का भय मानव को अकर्मण्यता की ओर ले जाता है और यही अकर्मण्यता उसकी दीन हीन दशा का कारण बन जाती है। कवि अपने देश-वासियों को अभय-दान देते हुए लिखते हैं :-

"हम रहे न भय के दास कभी हम नहीं मरण के चरण-दास;
हमको क्यों विचलित करे आज यह हेय प्राण-अपहरण-त्रास ?
माना कि लग रहा ऐसा , मानो प्रकाश है बहुत दूर ,
तो क्या इस दुश्चिन्ता ही से होगा तमका गढ़ चूर-चूर ?"[१]

'नवीन' का कवि सर्वथा समर्थ है। वह सब कुछ सह लेने का साहस रखता है। जीवन की भयंकर विभीषिकायें चाहे शतश: ज्वाला मुखियों के उद्गार से भी भयानक बन जाँय परन्तु वह अपनी आशा को छोड़ नहीं सकता।[२] विदेशी शासकों ने जब-जब देश को महान क्षति पहुँचाई 'नवीन' अपने वीर सैनिकों को पथ पर डटे रहने का आदेश देते हैं :-

" जब जग विचलित होता दीखे, जब सब छोड़ें संग अहो ,
जब दुनिया-दारों की होवे धीमी हृदय-उमंग अहो,
जब कि पड़े जय-जय की ध्वनि का कुछ-कुछ फीका रंग अहो,
तब तुम, अरे युवक, पथ डालो, पथ पर डटे अभंग रहो ,"[३]

विकट परिस्थितियों में केवल साहस ही मनुष्य की आशा बाँधता है, यदि साहस टूट गया तो मनुष्य इस अन्धकार में नाश की ओर विमुख होता है। 'नवीन' देशवासियों को अनेक यातनाएँ सहने के लिए प्रेरित करता है :-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - विद्रोही , पृ० ४८८ ।
२. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० ४६ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'पथ-निरीक्षण' , पृ० ४१६ ।

"जूझो-जूझो , लड़ते जाओ, गिरते जाओ, पड़ते जाओ,
नीचे गिर-२ कर फिर संभलो फिर ऊपर को चढ़ते जाओ;
अन्यायों के आधारों को भुज-बल से नष्ट-भ्रष्ट करो ;
तुम नाश करो, नव-सृष्टि करो, मानवता के सब कष्ट हरो ;"[१]

स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद भी अपने देशवासियों को संघर्षरत रहने का आदेश देते हैं तथा दृढ़-प्रतिज्ञ बनकर असंख्य कीर्ति-रश्मियाँ विकीर्ण करने के लिए अमरता का वरदान देते हैं :-

"हिमाद्र-तुंग-शृंग से,
प्रबुद्ध शुद्ध भारती ।
स्वयं-प्रभा, समुज्ज्वला,
स्वतंत्रता पुकारती ।
अमर्त्य वीर-पुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है - बढ़े चलो, बढ़े चलो ।।
असंख्य कीर्ति-रश्मियाँ ,
विकीर्ण दिव्य दाह-सी ।
सपूत मातृभूमि के ,
रुको न शूर साहसी ।।
अराति-सैन्य सिन्धु में सुबाडवाग्नि से जलो,
वीर हो जयी बनो - बढ़े चलो - बढ़े चलो ।।"[२]

सन् १९२९ में भारत की आन्तरिक स्थिति और भी विद्रोहपूर्ण हो गई थी । मध्य-वर्ग के युवक हिंसानीति की ओर झुक रहे थे । मज़दूरों की स्थिति

---

१. "हम विषपायी जन्म के" - "कस्त्वं ? कोऽहं ? - पृ० १५७ ।
२. "चन्द्रगुप्त" (नाटक) - जयशंकर प्रसाद - "बढ़े चलो! बढ़े चलो !!", पृ० १७०
(बारहवाँ संस्करण) ।

बिगड़ती ही जा रही थी । २६ जनवरी, सन् १९३० को घोषित किया गया कि कांग्रेस का लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति है ।[१] विदेशी शासकों के पाँव लड़खड़ाने लगे और उनका दमन चक्र भी तेज़ी से चलने लगा । 'सन् १९३० वें वर्ष की समाप्ति पर', कविता में 'नवीन' जी ने लिखा है :-

'उस दिन भारत के दिङ् मण्डल में, गूँजा उद्घोष नया ;
उस दिन बन-ठन कर झुन-झुन करती, आयी आशा विजया ;
मुझे याद है ; उस दिन झण्डे के नीचे कुछ गान हुआ ;
अथवा सोते हुए देश की , जागृति का कुछ भान हुआ ;
वह प्यारा कप्तान जवाहर, उस दिन नाचा फिर वहाँ;
आशाओं का पुंज याद है, उस दिन जैसा घिरा वहाँ ।'[२]

अपार धैर्य के साथ एक वीर योद्धा की भाँति वे लक्ष्य की ओर अग्रसर हो रहे थे । वर्तमान की काली कुहा उसे हू हू करती हुई सुनाई पड़ती है, परन्तु वह आशान्वित है अपने जागरण की प्रभाती देखने के लिए । इसके लिए उसके पास बल है , चेतना है और है अक्षय विश्वास ।[३] लक्ष्य-प्राप्ति उनके जीवन का एक महान व्रत है । कवि पीड़ित एवं शोषित जनता को भविष्य के सुनहले स्वप्न दिखाकर संकटमय वर्तमान से जूझने के लिए प्रेरित करता है :-

'निरख-२ कर चहुँ दिशि तम घन, क्यों लरजे हिय ? क्यों उलझे मन?
लख नभ-आँगन गहन तमोमय क्षण-२ क्यों अकुलाएँ लोचन ?
दूर नहीं, है, अरे , निकट ही वह प्रकाशमय, मंगलमय क्षण,
और सदा ही होता है अरुण और तमिस्रा का रण !

---

१. 'युगचरण दिनकर' डॉ०सावित्री सिन्हा, पृ० ३६ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - '१९३० वें वर्ष की समाप्ति पर', पृ०४२७ ।
३. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० ४५ ।

जो डूबे हैं आज तिमिर में, हुलसेंगे वे ही रज-कण-कण ;
ये भूधर , यह भू, यह अम्बर, सब फिर पाएँगे अपनापन ,
निरख-२ कर चहुँ दिशि तम घन, क्यों लरजे जिय ? क्यों उलझे मन ?[१]

डा० केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है – 'हर्ष का विषय है कि वर्तमान कवि देश की आशा और भावना के अनुरूप ही समर्थ प्रमाणित हुए । इन कवियों को हम कोरे वाग्वीर नहीं कह सकते । कुछ कवियों ने सत्याग्रह-आन्दोलन में उत्साहपूर्वक योग दिया और हँसते-२ अनेक यातनाएँ सहीं । - - - वर्तमान कवियों ने स्वतंत्रता के आन्दोलन का स्वागत किया और इसके प्रचार में पूरा-पूरा योग दिया ।'[२] इन्हीं कवियों में 'नवीन' जी अग्रगण्य थे । उनका दृढ़ विश्वास था कि विजय-श्री अन्त में हमें प्राप्त होगी और इसी आश्वासन पर वह शताब्दियों से पददलित मातृभूमि के उद्धार के लिए तत्पर थे :-

'चिर विजय दासी तुम्हारी, तुम जयी उद्‌बुद्ध ;
क्यों बनो हतआश तुम, लख मार्ग निज अवरुद्ध ?
फूँक से तुमने उड़ायी भूधरों की पाँत ;
और तुम ने खींच फेंके काल के भी दाँत ;
क्या करेगा यह विचारा तनिक-सा अवरोध ?
जानता है जग : तुम्हारा है भयंकर क्रोध !'[३]

'कर्मयोग' की दीक्षा देने वाले 'नवीन' जनता की क्षणिक निराशा पर खीझ उठते हैं ।[४] विवश जनता में उनके गीत अद्‌भुत शक्ति का संचार

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'क्यों उलझे मन ?' , पृ० १११-११२ ।
२. 'आधु० काव्यधारा' डॉ० केसरी नारायण शुक्ल, पृ० २६० ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अरे तुम हो काल के भी काल', पृ० ५१२ ।
४. 'धिक हम को यदि मरण-भीति यह आकर आज सताये' -
-'हम विषपायी जन्म के'- 'मर-२ हम फिर-२ उठ आये',पृ० ४२२ ।

करते थे । 'प्रताप' के माध्यम से 'नवीन' जी जन-गण की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करते थे और यदाकदा अग्नि-परीक्षा के लिए ललकारते थे:-

'यदि तेरी नस-२ में बहती वेगवती शोणित की धारा,
राख हुआ है नहीं अभी यदि, तेरे यौवन का अंगारा ,-
तो क्यों झाँक रही है तेरी नयनों से यह निपट निराशा ?
तू क्यों है उदास निज मन में ? क्यों मुरझी है तेरी आशा ?'[१]

इस प्रकार जन-मन में आशा बाँधते हुए उनका राष्ट्रीय काव्य अन्धकार को चीरते हुए तथा भविष्य के सपनों की सुखद कल्पना करते हुए आगे बढ़ा । श्री केशवदेव उपाध्याय ने लिखा है – 'इन कवियों की ओजभरी सात्त्विक पुकार लोगों की आत्मा तक पहुँची और फलस्वरूप सारे देश में एक प्रकार की सात्त्विक उत्तेजना की लहर सी दौड़ गई । कवियों की वाणी ओजपूर्ण थी और उनका जीवन कर्मठ था ।'[२] निस्सन्देह 'नवीन' की वाणी में सिंह गर्जना थी :-

'मेरे ऊँचे-२ भूधर , -
गर्जन करते हैं हर-हर-हर ;
बोलो : मानव तू क्यों उदास ?
तू भी गर्जन कर हहर - हहर ।
इस लौह भीम को दे पछाड़ ,
सिंहों की सी करके दहाड़ !'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सैनिक, बोल !' , पृ० ५२५ ।
२. 'नवीन-दर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० २१-२२ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरजे मेरे सागर पहाड़' , पृ०४११ ।

क्रान्तिकारी काव्य एवं विप्लव-धारा :

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' हमारे क्रान्तिदर्शी कवि थे। देश की गुलामी, शोषण, निरीह जनता का हाहाकार, सामाजिक वर्ग भेद और पीड़ित मानवता के कराहने ने उनके हृदय में विद्रोह की ज्वाला सुलगाई है। यह विद्रोह उनकी कविताओं में ज्वालाओं की शत-शत चिनगारी बनकर फूट पड़ा है।[१] उस समय की असंतोषजनक स्थिति ने उनकी क्रान्ति-कारी भावनाओं को और भी उत्तेजित किया। चारों ओर आर्थिक शोषण एवं पाश्विक बल का बोलबाला था। 'नवीन' ऐसी स्थिति से खिन्न हो उठे और समूल परिवर्तन के हेतु क्रान्ति का भयानक शंखनाद करने लगे। परिस्थितियों से ऊब कर कवि शोषक को समूल उखाड़ फेंकने के लिए कृद्ध हो उठा और नवीन सामाजिक व्यवस्था की कल्पना उनके मानस में साकार हो उठी। श्री केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है – 'क्रान्तिवादी कविता को हम वायु के आकस्मिक आघात से उठी हुई सामान्य हिलोर कह कर नहीं टाल सकते। यह जीवन-सागर के उस क्षोभ और अव्यवस्था की लहर है जिसके दर्शन भयंकर झंझावात के आने पर ही होते हैं। हमारे वर्तमान जीवन में इसी प्रकार का झंझावात चल रहा है और क्रान्तिवादी कविता इसी अशान्ति तथा आन्दोलन की भूमिका है।'[२] साम्राज्यवाद की काली छाया से छुटकारा पाने के हेतु वे नवीन क्रान्ति का स्वागत करते हैं :-

'आओ क्रान्ति, बलायें ले लूँ अनाहूत आगयी भली;
वास करो मेरे घर-आँगन, विचरो मेरी गली-गली;
सड़ी-गली परिपाटी मेरी, इसे भस्म तुम कर जाओ;

---

१. 'प्रबन्ध-प्रबोध' - फूलचन्द्र जैन 'सारंग' - 'हिन्दी कविता में वीर एवं राष्ट्रीय भावना, पृ० १६६।
२. 'आधुनिक काव्यधारा', डॉ० शुक्ल, पृ० २७४।

विकट राज-पथ में मँडराओ जन-पद में डोलो आओ,
नयी अग्नि ज्वाला भड़का दो तुम मेरे अन्तरतर में
अरी , नये , नक्षत्र जगादो मेरे धूमिल अम्बर में ।'[१]

आधुनिक युग की क्रान्तिकारी कविता के विषय में डा० रवीन्द्र सहाय ने लिखा है – 'फ्रान्सीसी क्रान्ति के आदेशों का दो युद्धों के बीच की हिन्दी कविता पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव अंग्रेज़ी के रोमांटिक काव्य और विशेष कर 'शेली' के काव्य के माध्यम से आया है। सच तो यह है कि हम भारतवासियों ने अपने स्वतंत्रता के युद्ध में फ्रान्सीसी क्रान्ति के मूलभूत आदर्शों से निरन्तर प्रेरणा ली है। हमारे राष्ट्रीय कवियों, उदाहरणार्थ - माखनलाल चतुर्वेदी, 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहान आदि पर भी किसी न किसी रूप में फ्रान्सीसी क्रान्ति का प्रभाव पड़ा है।'[२] इस प्रकार विदेश की जन क्रान्तियों ने हमारे देश के महान कलाकारों को प्रभावित किया और स्वदेश की करुण दशा देखकर उनका कवि जाग पड़ा। विद्रोही कविताओं के विषय में स्वयं 'नवीन' जी ने 'कमलेश' जी से कहा था – 'जहाँ तक विद्रोही कविताओं का सम्बन्ध है, उनकी प्रेरणा समाज की अवस्थाओं से मिलती हैं। जैसे मेरी कविता 'नंगे भूखों का यह गाना' है। सन् १९३६-३७ में सूती मिल के ५० हज़ार मज़दूरों ने ५२ दिन की हड़ताल की थी। मैं उसका नेता था। उस समय २५-३० हज़ार व्यक्तियों को कानपुर की जनता से माँग कर खाना खिलाया। - - - विजयी होने पर 'जन-बल का गुण-गान करने वाली एक भावना जागृत हुई और उसके फलस्वरूप उक्त कविता लिखी गई।'[३] ऐसी कविताओं में 'नवीन' जी देशवासियों को प्राणों की होली खेलने का

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'क्रान्ति', पृ० ४४१।
२. 'हिन्दी काव्य पर आंग्ल प्रभाव' - डा० रवीन्द्र सहाय, पृ० १७९।
३. 'मैं इन से मिला' - दूसरी किस्त - 'कमलेश', पृ० ५४।

आदेश देते हैं :-

"शोलों के फूलों से संचित सुख-शय्या हो जाने दे ,
भर ले अंगारे करवट में, हूक-लूक उठ आने दे ;
अरे, अकर्मण्यता शिथिलता भस्मसात हो जाने दे ,
अग्नि-चिता में विजित भाव को तू अब तो सो जाने दे ;
त्राहि ? त्राहि ? रे, प्राण कौन-सा ? आज प्राण की होली है ।
तेरी दाहक स्वर-लपटों में स्वयं त्राण की होली है ।।"[१]

क्रान्तिकारी कविता का क्षेत्र व्यापक एवं विस्तृत होता है । युगीन परिस्थितियों से प्रभावित कवि सम्पूर्ण राष्ट्र में विद्रोही रचनाओं द्वारा जागरण का पुनीत कर्त्तव्य करता है । डा० केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है – "क्रान्तिवादी कवि सारे संसार में क्रान्ति का आवाहन करता है और किसी देश विशेष की राजनीतिक उन्नति तथा स्वतंत्रता की कामना न कर सारे राजनीतिक , आर्थिक और सामाजिक अत्याचारों से मुक्ति चाहता है । क्रांतिवादी कवि ऐसी सभ्यता का विकास और नई व्यवस्था का जन्म देखना चाहता है जिसमें सारी मानवता दासता, दरिद्रता और अंधविश्वास के पाश से मुक्त होकर शान्ति और समता का अनुभव कर सके ।"[२] नई व्यवस्था को जन्म देने के लिए कवि प्राचीन रूढ़ियों एवं परम्पराओं का नाश चाहता है । जनता को प्रलयंकर रूप धारण करने के लिए स्फूर्ति प्रदान करता है :-

"तू नाशक ध्वनियों का गायक, तू विकराल क्रान्ति द्रष्टा,
तू विद्रोह रूप प्रलयंकर, तू है अनल-राग-सृष्टा ;

---

१. "हम विषपायी जन्म के" - "तू विद्रोह रूप, प्रलयंकर", पृ० ४१४ ।
२. "आधु० काव्यधारा" डॉ० केसरी नारायण शुक्ल, पृ० २७४ ।

तेरे प्राणों में तड़पन है, नीच भावना अब कैसी ?
यह विश्वासघात अब कैसा? दुष्कृतियाँ क्यों, अब ऐसी ?
कर दे चार-२ अपनी इन प्राण मोहिनी कृतियों को ,
खण्ड-२ कर दे , रे मोही, निज निर्बल सस्मृतियों को ।'[१]

परिस्थितियों के अनुकूल होने के कारण 'नवीन' जी की क्रान्तिकारी कविताओं ने अत्यधिक ख्याति पाई क्योंकि जब हमारा घर जल रहा था, तब एकान्त-चिन्तन या पूजा करने का ध्यान अनुचित और असामयिक लगता ।[२] 'करो या मरो' की भावना से शस्त्र क्रान्ति के रूप में भभक उठी । भारतीय नव-युवक देश के पुनरुत्थान के लिए फाँसी के झूले पर झुलने लगे और 'नवीन' जी ने उनसे प्रेरणा ग्रहण करके उग्र वाणी में जन-मन की भावनाओं को अभिव्यक्त किया । श्री ठाकुर प्रसाद सिंह ने लिखा है – 'क्रान्ति और कविता-नवीन जी ने इन दोनों को पर्याय समझा था, इसलिये कानपुर में असहयोग आन्दोलन की विशाल सभाओं में उन्होंने ललकार भरी कविताएँ पढ़ीं और कवि सम्मेलनों में क्रान्ति के राग अलापे । वे जिस पीढ़ी में जीवित थे उसकी रगों में खून की जगह पिघला हुआ रोष प्रवाहित होता था, सांसों की जगह उद्वेग तपता था, आँखों में पुतलियों की जगह सपने लगे हुए थे । इस पीढ़ी के सच्चे प्रतिनिधि 'नवीन' जी थे ।'[३] 'नवीन' विदेशियों के षड्यंत्रकारी दलदल से सदैव सचेत रहे । समझौते की भावना उनके लिए असह्य थी । उनके पद-चिह्न

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तू विद्रोह रूप, प्रलयंकर' , पृ० ४१४ ।
२. 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास' - राम बहोरी शुक्ल एवं भगीरथ मिश्र , पृ० २२० ।
३. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक - १९६३ - 'तुम हट्टोगे रात का भय' - ठाकुर प्रसादसिंह, पृ० १०६ ।

क्रान्तिकारी के पद-चिह्न थे[१] और क्रान्ति का योद्धा अन्तिम क्षण तक युद्धरत रहा :-

> 'क्रान्ति ? क्रान्ति ? मेरे आँगन में यह कैसा हुंकार मचा ?
> बोलो तो यह किसने अपने श्वासों का फुंकार रचा ?
> झंकारों, धनु टंकारों का यह चिर परिचित स्वर छाया;
> रण-भेरी का यह भैरव-रव, कहो कहाँ से घिर आया ?
> क्या सचमुच ही महाप्रलय की आँधी उठ आयी क्षण में ?
> ऐं ? क्या महा क्रान्ति मतवाली आयी मेरे प्रांगण में ?'[२]

'विप्लव-गायन' 'नवीन'जी की सर्व प्रसिद्ध रचना है एवं बहुचर्चित है। इसकी लेखन-तिथि के विषय में विद्वानों में मतभेद है। पण्डित श्रीराम शर्मा ने अपनी एक प्रत्यक्ष भेंट में मुझे बताया कि यह रचना सन् १९३० में लिखी गई है।[३] श्री लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है - 'प्रताप-मण्डल के पुराने सदस्य एवं कवि श्री देवीदत्त मिश्र ने इसे सन् १९३० की ही रचना माना है और शहीदे-आज़म सरदार भगतसिंह के प्राण-दण्ड की घोषणा से उत्पन्न भारतव्यापी हड़कम्प का जीवित प्रतिध्वनि माना है।[४] यद्यपि यह उद्घोष गांधीवादी विचारधारा के विरुद्ध है परन्तु इसकी प्रेरणा कवि को गान्धी जी से ही मिली है। स्वयं 'नवीन' जी ने श्री पद्मसिंह शर्मा से इस रचना के विषय में कहा था - 'यह बात नहीं है। गान्धी जी की प्रेरणा से ही वह 'विप्लव-गायन' आया है। उसका रहस्य यह है कि प्रारम्भिक क्रान्ति करने की भावना

---

१. 'कृति' - मई १९६० 'महाप्रस्थानेर पथे' -श्री नरेश मेहता, पृ० ५१।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - क्रान्ति, पृ० ४४०।
३. पण्डित श्रीराम शर्मा से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (२-२-१९६५)।
४. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य', डा० दुबे। पृ० २१५

सर्वग्राही होती है । उस समय नई भावना के आवेश में विचारों पर नियन्त्रण नहीं रहता । नियंत्रण होता तो 'माता की छाती का मधु रसमय पय काल कूट हो जाये' जैसी पंक्ति, जिस का सीधा अर्थ नहीं निकलता, कैसे आती । उस समय तो केवल यही भावना थी कि 'नया आकाश, नई पृथ्वी और नया मानव निकले ।'[१] 'नवीन' जी युग परिवर्तन के लिए महा नाश को आमंत्रित करता है :-

'कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये,
एक हिलोर इधर से आये एक हिलोर उधर से आये ,
प्राणों के लाले पड़ जायें, त्राहि-त्राहि स्वर नभ में छाये,
नाश और सत्यानाशों का धुआँधार जग में छा जाये ,
बरसे आग, जलद जल जाये, भस्मासात् भूधर हो जायें,
पाप-पुण्य सद्-२ भावों की धूल उड़ उठे दायें-बायें ;
नभ का वक्षस्थल फट जाये, तारे टूक-टूक हो जायें ,
कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये ;'[२]

कवि क्रान्ति का आवाहन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में करने लगे और क्रान्ति के साथ नाश का स्वागत भी करने लगे । उस समय की शोचनीय व्यवस्था को बिना मिटाए शान्ति और समता की स्थापना आपको असम्भव प्रतीत होती थी । श्री पन्नालाल त्रिपाठी ने लिखा है - 'किन्तु, इस कविता में भी विप्लव से किसी अराजकतामय क्रान्ति की ओर संकेत न होकर मानवोचित गुणों की प्राप्ति की ओर संकेत है । कवि सबलों की बर्बरता को कायरतापूर्ण विधि से सहन नहीं कर सकता ।'[३] कृत्रिम शान्ति की स्थापना कवि को प्रिय

---

१. मैं इनसे मिला - दूसरी किस्त - 'कमलेश' , पृ० ५१ ।
२. 'कुंकुम' - विप्लव-गायन , पृ० ६-१० ।
३. 'नर्मदा'-'नवीन'-विशेषांक १९६३ - 'महाकवि नवीन' - पन्नालाल त्रिपाठी, पृ० ८० ।

नहीं । यह कायरों का छल-कपट है जिसको मिटाने के लिए कवि मचल उठता है :-

" माता की छाती का अमृत मय पय काल कूट हो जाये,
आँखों का पानी सूखे, हाँ, वह खून की घूँट हो जाये,
एक ओर कायरता काँपे, गतानुगत विगलित हो जाये ,
अन्धे मूढ़ विचारों की वह अचल शिला विचलित हो जाये,
और दूसरी ओर कँपा देने वाला गर्जन उठ धाये ,
अन्तरिक्ष में एक उसी नाशक तर्जन की ध्वनि मँडराये ,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ जिसे उथल-पुथल मच जाये ! "[१]

कवि ने क्रान्ति की चिनगारी सुलगाने के लिए प्रलय का आह्वान किया और संघर्ष की इस पावन बेला में बड़ी उमंग और उत्साह के साथ मरण-त्यौहार मनाने के लिए कवि ने अपनी भावनाएँ व्यक्त कीं ।[२] राष्ट्रीय रंग में रंगी हुई उनकी आत्मा क्रान्ति का आवाहन करने के लिए तड़प उठी है। दिशाएँ उनके भयंकर गर्जन से गूँज उठी हैं और कण-कण में आज वही ध्वनि व्याप्त है । 'नवीन' की भीम-गर्जना जग को चकनाचूर करने के लिए विकल है:-

" कण-२ में है व्याप्त वही स्वर, रोम-२ गाता है वह ध्वनि,
वही तान गाती रहती है कालकूट फणि की चिन्तामणि ,
जीवन ज्योति लुप्त है अहा ! सुप्त है संहार की घड़ियाँ ।
लटक रही है प्रतिफल में इस नाशक संहार की लड़ियाँ ।
चकनाचूर करो जग को गूँजे ब्रह्माण्ड नाश के स्वर से ।

---

१. 'कुंकुम' - 'विप्लव-गायन', पृ० १०-११ ।
२. 'हिन्दी साहित्य में विविध वाद' - डा० प्रेम नारायण शुक्ल, पृ० २२८

रुद्ध गीत की क्रुद्ध तान निकली है मेरे अन्तरतर से ।'[१]

प्रो० दुर्गादत्त शास्त्री ने लिखा है – 'विप्लव-गायन से कई तरुणों को ऐसी बलवती प्रेरणा मिली है कि वे देश पर हँसते-हँसते निछावर हो गये हैं । आज यह भी कहा जा सकता है कि उस रचना का पहला श्रोता अमर शहीद सरदार भगतसिंह था ।'[२] प्रलय, प्रलय के बाद सृष्टि, उत्थान, फिर पतन, शान्ति उसके पश्चात् क्रांति यही समय-चक्र सभ्यता, संस्कृति, जीवन एवं संसार के मूल में निहित है ।[३] कवि 'नवीन' सृष्टि के लिए क्रान्ति की ज्वाला धधका कर सब कुछ स्वाहा कर देने की बात कहते हैं :-

'हम ने नव सृजन-प्रेरणा से छिटकाये तारे अम्बर में,
हम भी विनाश भर आये हैं इस निखिल विश्व-आडम्बर में;
हम सृष्टा हैं, प्रलयंकर हम, हम सतत क्रान्ति की प्रखर धार -
हम विप्लव-रण-चण्डिका - जनक, हम विद्रोही, हम दुनिवार ।'[४]

वर्तमान के प्रति घोर असंतोष की भावना अत्यन्त ओजपूर्ण शब्दों में 'नवीन' ने व्यक्त की है । विद्रोह की भावना से ओतप्रोत उन का काव्य प्राचीन धार्मिक एवं सामाजिक आदर्शों को चुनौती देता है । उनके काव्य में तत्कालीन मानव जीवन की दरिद्रता और दुर्दशा का यथार्थ चित्रण[५] मिलता है:-

इतना गर्जन, इतना तर्जन, इतना घर्षण, इतना घर्षण
इतना मर्दन दुर्मनशील, यह अध:पतन का आकर्षण ,

---

१. 'कुंकुम' - 'विप्लव-गायन', पृ० १२ ।
२. 'कल्लोल' - आधु०कविताओं का संकलन- संकलनकर्ता-प्रो०दुर्गादत्त शर्मा, पृ०११४।
३. 'चिड़वा कालेज पत्रिका'-फरवरी १९६३-हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय कविता-श्री राजेश , पृ० ३ ।
४. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विद्रोही', पृ० ४८१ ।
५. 'क्रान्तिवादी कवि यथार्थवाद के अत्यधिक प्रेमी होते हैं और इसीलिए इनकी रचनाओं में यथार्थ जीवन की दरिद्रता और दुर्दशा के चित्र अत्यधिक मिलते हैं।' - 'आधु० काव्यधारा' डॉ० केसरी नारायण शुक्ल, पृ०२८५ ।

ये घृणित धर्म के घटाटोप, ये घृणित दीन की आकृतियाँ,
ये सब मिलकर कर रहे आज मानव की भ्रष्ट, विकृत कृतियाँ,
अबलाओं, अरक्षिताओं की हत्या करना बन गया धर्म,
पथ-चलते अनजाने जन का उत्सादन है कर्तव्य-कर्म !"[१]

विषाक्त परिस्थितियों से क्षुब्ध 'नवीन' ने गान्धी जी की अहिंसात्मक नीति का खुल कर विरोध किया। सन् १९४० के पश्चात् विदेशियों के अमानुषिक व्यवहार के कारण 'नवीन' ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहते हैं। गान्धी जी उनके लिए पूजनीय थे परन्तु ~~उनके~~ कभी-कभी उनके महान् आदर्शों को अपनाने में उन्होंने असमर्थता प्रकट की है। स्वयं 'नवीन' जी ने लिखा है - "अब समय है कि हम सम्मोहन-पाश से निकल कर वास्तविकता की ओर दृष्टि-पात करें। गांधी महान् है ; पर हम उसके माप-दण्ड पर खरे नहीं उतर रहे हैं। इसलिए हमें हिम्मत के साथ बातें स्पष्टतापूर्वक कह देनी चाहिये। हमारी आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी और वर्किंग कमेटी गांधी जी से साफ कह दे कि चर्खा, वैज्ञानिक दृष्टि से अकाट्य होते हुए भी अव्यवहार्य: , और खादी गरीबों के लिए एक ऐश की चीज़ है - हम आपको धोखे में नहीं रखना चाहते ; हम चर्खा-खादी के चलाने में नितान्त असमर्थ हैं, अत: हमें राष्ट्र के क्रान्तिमूलक संगठनात्मक बल को बढ़ाने के लिए अन्याय उपायों को खोजने की ज़रूरत है।"[२] महानाश की भट्ठी को धधक उठने के लिए 'नवीन' जी आवाहन करते हैं ताकि दासत्व की शृंखलाएँ भस्म हो जाएँ :-

"सिंह-द्वार मरण-जीवन का आज मुक्त होजाये, सजनी

---

१. 'प्राणार्पण' , पृ० ८।
२. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - पृ० १०१ - गान्धी युग का अन्त : हम चर्खे का मोह छोड़ें - नवीन।

आज उगादे सूर्य न या तू हो अब शेष उसकी रजनी ।
कर दे भस्म शृंखलाओं की ये सब कड़ियाँ न्यारी-न्यारी ।
अरी, धधक उठ, धक-धक कर तू, महानाश की भट्ठी प्यारी ।'[१]

जिस समय बालकृष्ण राष्ट्र के उस काव्य को लिखते, जिससे युग जग जाया करता है, उस समय ढला हुआ गरम-गरम फौलाद मानों उनकी पंक्तियों में आ बैठता ।[२] सन् १९४२ की महान जन-क्रान्ति के समय 'नवीन' जी की लेखनी ने उग्रतम रूप धारण किया । कांग्रेस ने 'भारत छोड़ दो' का प्रस्ताव पास किया और देश में जन-संहार भयंकर रूप से होने लगा । कवि ने हलाहल-पान के लिए देशवासियों को ललकारा और क्रान्ति का सजीव चित्रण निम्न-लिखित पंक्तियों में किया :-

'आज वही सागर-मन्थन है जो होता है कालान्तर में,
आज वही भीषण घर्षण है, कर्षण है जन के प्रान्तर में !
जन-उद्यम का मेरू - गिरीश्वर : मन्थन दण्ड बना बलशाली;
भोग-भाव के शेष नाग की मन्थन-रज्जु बनी विकराली ;
यह अथाह, अज्ञात तत्व का अतल महार्णव लहर रहा है ।
मथित व्यथित उसका अन्तस्तल उफन रहा है, घहर रहा है ।'[३]

डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है - 'भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की अन्तिम गगन भेदी हुंकार सन् १९४२ की महान् क्रान्ति है । कवि की राष्ट्रीय-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अरी धधक उठ' , पृ० ५३३ ।
२. 'सरस्वती' - जून १९६० - त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - पं० माखनलाल चतुर्वेदी , पृ० ३८१ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरल पियो तुम ! गरल पियो तुम !! , पृ० ४१६।

चेतना भी धीरे-धीरे विकसित होते, इस क्रान्ति के समय, कालानुसार अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गई।"[१] सन् १९४३ में बंगाल के भयंकर अकाल के कारण देश की आर्थिक स्थिति दयनीय बन गई। 'नवीन' जी ने सन् १९४४ में केन्द्रीय कारागार, बरेली में भारतवासियों को अपने महान् दायित्व की स्मृति दिलाई है :-

"आज तुम्हारे ऊपर कितना है महान् दायित्व, निहारो !
तुम्हें विनाश और सिरजन का करना है यह काज, विचारो !
इन चालीस कोटि मुरदों में प्राण फूँकने तुम आये हो ;
नवल जागरण और संगठन का सन्देश तुम्हीं लाये हो ;"[२]

'नवीन' जी अपने मार्ग की बाधाओं से अच्छी तरह परिचित थे। परन्तु वे 'सर कटाना जानते थे, सर झुकाना नहीं'। श्रीमती महादेवी वर्मा ने लिखा है - "एक क्रान्तिकारी का आत्मत्याग, एक योद्धा का शौर्य और एक कवि की भावुकता — ये तीनों ऐसे तत्व हैं, जिन्हें एक साथ रखना सम्भव नहीं होता। परन्तु उनके जीवन में, उनके चरित्र में इन तीनों ही विशेषताओं ने एक त्रिवेणी बना दी थी। वे गोलियों के सामने स्थिर रह सकते थे।"[३] 'नवीन' जी एक अग्निमयी क्रान्ति[४] चाहते थे, यही कारण है कि सर्वनाश

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० २०६।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ० ४७७।
३. 'कृति' - मई १९६० - 'दो श्रद्धांजलियाँ' -श्रीमती महादेवी वर्मा, पृ० ५२।
४. "कवि एक अग्निमयी क्रान्ति चाहता था, जिसमें परतन्त्र राष्ट्र का कण-२ भस्मीभूत हो जाये। इस भयानक महानाश के आह्वान के पीछे सुन्दर निर्माण की भावना ही कवि को इसके लिये अनुप्रेरित करती सी जान पड़ती है। इसके लिये वह देश की आँखों में पानी नहीं अपितु लहू तिरता हुआ देखना चाहता था।"

- 'नवीनदर्शन' - प्रो० उपाध्याय, पृ० २३।

का अभय सन्देश वह जनता को देने लगे :-

"मानव, क्या तू न सुनेगा यह,
युग - वाणी का गर्जन अह-रह ?
यह सर्व-नाश - सन्देश अभय,
यह निर्वाणआह्वाहन दुर्वह ;
तू बन विजयी, जय-ध्वजा गाड़
सिंहों की - सी करके दहाड़ ।"[१]

देश-भर के क्रान्तिकारियों को उस समय प्रताप-प्रेस में आश्रय मिलता था। 'नवीन' जी प्रताप परिवार के सदस्य थे और जीवन होली खेलने के लिए यहीं से उन्हें प्रेरणा मिली थी । डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है – 'उथल-पुथल या क्रान्ति के गीतों से उनका काव्य जनमा और उसी मार्ग पर वह बढ़ा। कवि होने के नाते वे अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि थे । पर यहाँ भी सहृदयता उनकी विशेषता थी ।"[२] निरन्तर संघर्षमय जीवन व्यतीत करते हुए उन्होंने बीहड़, भीषण एवं दुर्गम पथ पार किए, यातनाएँ झेलीं एवं जीवन को सफल एवं सप्रयोजन सिद्ध किया :-

"आज ठिठक कर खड़ा हो गया विप्लव के पथ का यह राही,
टेक लकुटिया लगा देखने पीछे को यह क्रान्ति सिपाही ,
कितना बीहड़, कितना भीषण, दुर्गम पथ यह तै कर आया !
कहाँ-२ के अमित धूल कण निज वसनों में यह भर लाया ।"[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरजे मेरे सागर पहाड़' , पृ० ४१२ ।
२. 'विशाल-भारत'-(जनवरी-जून १९६०)- स्वर्गीय नवीन जी - वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० ४७९ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा ।',पृ०४६७।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'नवीन' जी का क्रान्तिकारी काव्य सबल एवं सशक्त है। जहाँ एक ओर महानाश का आमंत्रण है वहाँ दूसरी ओर नव-निर्माण की भावना भी इसमें निहित है। वे क्रान्तिकारी कवियों में अग्रगण्य थे। चिरकालीन स्वातन्त्र्य-समर में उन्होंने एक वीर सेनानी की भाँति जीवन अर्पण किया और मृत्यु-पर्यन्त सबल योद्धा के समान जीवन से संघर्ष करते रहे।

मूल्यांकन :

राष्ट्रीय साहित्य की एक बड़ी विशेषता सामूहिक उत्थान के लिए कर्म करने की प्रेरणा देना है। कर्म के लिए उत्साह की आवश्यकता है।[१] स्वतंत्रता संग्राम के एक सेनानी के रूप में और सबसे बढ़कर अत्यन्त सहृदय और पर-दुःख-कातर व्यक्ति के रूप में 'नवीन' जी सदा देशवासियों को उत्साहित करते रहे। वे निराश जन-समूह को अपनी ओजपूर्ण कविताओं द्वारा उच्च-शिखर पर पहुँचने के लिए प्रयत्नशील रहने की शिक्षा देता है :-

> चढ़ चल, चढ़ चल, थक मत, रे बलि-वध के सुन्दर जीव,
> उस कठोर शिखर के ऊपर है मन्दिर की नींव,
> बड़े-बड़े थे शिलाखण्ड मग रोके पड़े अचेत,
> इन्हें लाँघ तू, यदि जाना है तुझे मरण के हेत,
> ऊपर, अगम शिखर के ऊपर, मचा मृत्यु का रास!
> नीचे, उपत्यका में, है जीवन-पंकिल नव त्रास।[२]

पृथ्वी के कण-कण को अपनी रक्त की बूंदों से सींचने वाले वीर सपूतों

---

१. 'साहित्य-सन्देश', अप्रैल १९६३ - राष्ट्रीय साहित्य - राजमल बोरा, पृ० ४१६।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'शिखर पर', पृ० ४२६।

के प्रति 'नवीन' जी नत-मस्तक श्रद्धांजलि अर्पित करता है :-

'यह पथ अनन्त, यह पथ दुर्गम, जिसका कहीं है ओर-छोर,
यह पथ, विकराल काल - अर्णव घहराता जिसकी अभय ओर।
यह पथ , जिस पर मँडराती हैं घन घोर मरण-घड़ियाँ अथोर ।
यह पथ , जिसके उस छोर कहीं हैं लक्ष्य मनोहर, चितचोर,
ऐसे ही पथ के कण-कण में सींचा तुमने निज रक्त स्वेद ।'[१]

श्री वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है - 'अपने सैनिक रूप में वे सर्वथा फाणा कसे रहने वाले योद्धा थे । उनका जुझार रूप ऊपर ही रखा रहता था । आदेश हुआ नहीं कि समर में कूद पड़े । आगा-पीछा सोचने का समय और स्वभाव ही न था । द्विधा से ऊपर उठ गए थे । एक ही व्रत, एक ही नित्य नियम रह गया था - समय पर आदेश का पालन ।'[२] आज्ञापालन करते समय उन्हें धूप और छाँव की चिन्ता नहीं, जीवन और मरण का भय नहीं । वे दुःख और सुख का समान रूप से स्वागत करते हैं । विपदाएँ झेलने का आदेश देते हुए देशवासियों के प्रति उनका कथन मर्मस्पर्शी है :-

'क्या जीवन ? क्या मौत, बहादुर !
धूप- छाँह क्या ? क्या दिन रातें !
क्या प्रकाश औ' अन्धकार यह ?
दुख-सुख की अब क्या ये बातें !
तत्कालिक असफलता क्या है ?
है यह तो बस आनी - जानी !

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'मेरे साथी अज्ञात नाम', पृ० ५१६ ।
२. 'विशाल-भारत'(जनवरी जून १९६०)-स्वर्गीय नवीन जी - वासुदेवशरण अग्रवाल , पृ० ४७३ ।

लखाँ दूर पर , क्रान्ति सफलता
विहँस रही है चिर कल्याणी ।"[१]

'नवीन' जी के काव्य में राष्ट्रीय भावना बहुमुखी होकर प्रवाहित हुई है । देश-प्रेम, त्याग बलिदान, क्रान्ति-साधना, अतीत गौरवगान , वीर-प्रशस्तियाँ, जागरण का उद्घोष, दीनदलित जनों की पुकार, स्वतंत्रता का शंखनाद, जन-क्रान्ति का आह्वान तथा यदाकदा अहिंसक राष्ट्रवाद का भी उन्होंने चित्रण किया है । डा० लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है – 'राष्ट्रीय कारणों से कारागृह-यात्राओं में, उन्होंने अपनी प्रतिभा तथा स्वाध्याय की पुष्टि की। उन्होंने अपने युग तथा राष्ट्र की तलवार तथा लेखनी, दोनों से ही, सेवा की। मूलत: 'नवीन' जी गरम दलीय व्यक्ति थे परन्तु महात्मा गान्धी के अनन्य भक्त बने रहे ।"[२] 'नवीन' जी ने निकट भविष्य में देश के भव्य रूप की जो कल्पना की थी उसे साकार रूप में देखने के लिए वे उत्सुक थे :-

" मेरा यह सपना है जिसको
मैंने देखा बड़े जतन से,
जिसे देखने की चेष्टा में
लगा रहा प्राणों के पण से ;"[३]

बालकृष्ण केवल कविता लिखने वाला ही कवि नहीं था । उस बलिदानी का समस्त जीवन ही एक काव्य था ।[४] मातृभूमि के लिए सब कुछ न्यौछावर करता हुआ और सब कुछ सहन करता हुआ स्वतंत्रता संग्राम का यह सैनिक, देश-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'आज क्रान्ति का शंख बज रहा', पृ० ४७७ ।
२. 'नवीन-व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे , पृ० १६१ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सिरजन की ललकारें मेरी !' , पृ० ७६ ।
४. 'युवक' - जून १९६० - 'भाई बालकृष्ण' , पृ० २० – पं० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ।

भक्ति के लिए मर मिटने वाला यह वीर अपनी अमर-निधि छोड़ कर हमसे बिछुड़ गया। उनका यौवन कारागृहों में गल गया, जीवन राष्ट्रार्पित रहा। तिलक, गणेशशंकर विद्यार्थी, विनोबा भावे, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि ने तो तलवार की धार पर धावनी है' को ही अपना जीवन तत्व बना रखा था।[१] वे सदा अग्नि-परीक्षा देते रहे। उन्होंने स्वयं लिखा है :-

'अवरोधों के अग्नि-शैल जो तेरे सम्मुख आज खड़े हैं, -
ये प्रज्वलित प्रखर अंगारे जो नव-पथ में आन पड़े हैं,
ये आये हैं तुझे बनाने एक बार फिर अग्नि-परीक्षित,
ये आये हैं करने तुझको फिर से जीवन-रण में दीक्षित।'[२]

सन् १९४० के पश्चात् 'नवीन' जी के राष्ट्रीय काव्य में बलिदान की भी भावना प्रखर हो उठी है। गान्धी जी तथा सनसामयिक राजनीति का उन पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। भारत के ऐतिहासिक वीरों तथा उनके विगत-वैभव का भी 'नवीन' ने सजीव चित्रण किया है। डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'परन्तु 'नवीन' जी की कविताओं ने मुझे अनायास ही आकृष्ट कर लिया क्योंकि उनका उत्साह और उनकी उत्क्रान्ति सहज अनुभूत और जीवन्त थी : भारत के युग-जीवन में प्रवाहित विद्युत्-धारा का उनको ज्वलन्त अनुभव था। अत: चाहे वे गांधी का प्रशस्ति-गान करें या उनकी पराजय-नीति के विरुद्ध आक्रोश की अभिव्यक्ति या उद्दाम शृंगार का उद्गीथ, उनकी वाणी अनिवार्यत: प्राण-रस से अभिषिक्त रहती थी।'[३] देशवासियों के आत्म-अभिमान को जागरित करने के लिए कवि उन्हें आत्म ग्लानि पर विजय पाने के हेतु निरन्तर कर्मरत रहने का आदेश देते हैं। देशभक्ति की ऐसी रचनाओं के लिए एक तथ्य

---

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - १७ नवम्बर १९६३ - कविवर 'नवीन' के काव्य में 'दीप-माला' - पृ० ८ -- डा० लक्ष्मीनारायण दुबे।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सैनिक, बोला!', पृ० ५२८।
३. 'आजकल' - मार्च १९६१ - दादा : बालकृष्णशर्मा 'नवीन' -नगेन्द्र, पृ०८।

और लक्ष्य है कि इन रचनाओं में सक्रियता है, क्रियात्मकता है। 'नवीन' जी तथा इस युग के अन्य राष्ट्रीय कवि स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेते रहे। वे जन-जीवन के लिए आवश्यक कर्म प्रवणता से दूर कहीं बैठकर केवल गाते ही नहीं रहे।[१] 'नवीन' जी ने स्वयं लिखा है :-

'किसने हमें सुनाया आकर यह कठोर सन्देश।
कि तुम डटे ही रहना, विचलित मत होना लवलेश ?
किसने भरे हमारे दृग में ये सपने साकार ?
किसने पहनाया है हम को यह यात्री का वेश ?'[२]

'नवीन' ने राष्ट्रीय काव्य के सांस्कृतिक पार्श्व पर विशेष बल दिया है। वे अपनी संस्कृति के अनन्य भक्त थे और इसे समूल नष्ट होते देख वे विचलित हो उठे। वास्तव में राष्ट्रवाद का सांस्कृतिक पार्श्व शाश्वत एवं पुष्ट होता है। यहाँ सामयिकता को अधिक स्थान प्राप्त नहीं होता और स्थायित्व प्राप्ति के लिए कवि, इसी पक्ष का अधिक अवलम्बन ग्रहण करता है।[३] डा० नगेन्द्र ने लिखा है :- 'नवीन' को सांस्कृतिक कविताओं में अपनी आत्मा का रस उंडेलना पड़ा और जो ऐसा नहीं कर सके वे काव्य इतिहास के पृष्ठ में लुप्त हो गये।'[४] संस्कृति की रक्षा में असफल देशवासियों की कायरता, दरिद्रता एवं सुषुप्ति को देख कवि आग उगलने लगता है :-

'दशों दिशाएँ घन तममय हैं, अंधियारा है मम अम्बर में -

---

१. 'नवीन और उनका काव्य' - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १३४-३५।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'उत्सीदेयुरिमे लोकाः', पृ० ४३६।
३. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० १६३।
४. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' - डा० नगेन्द्र, पृ० ३६।

बुझे-२ लगते हैं दीपक, अन्धकार है जन-अन्तर में -
आज अन्धेरे ने बढ़-चढ़ कर मुक्ति मार्ग आक्रान्त किया है;
उठ-२ शत-२ सन्देहों ने जन-गण-मन उद्भ्रान्त किया है ;
आज स्वतंत्रता भावना उनकी रुद्ध हुई, हत बुद्धि हुई है ;
निरलस कर्म-प्रेरणा मानो सहसा आज अशुद्ध हुई है ।'[१]

बालकृष्ण नवीन का सम्बन्ध देश के असहयोग आन्दोलन से रहने के कारण उनकी कविताओं में जीवन की सफलताओं और विफलताओं का घोर क्रन्दन और विप्लव है।[२] 'नवीन' देशवासियों की अज्ञान की गहरी निद्रा भंग करने के लिए सतत प्रयत्नशील थे। यही समय की मांग थी। वह देशवासियों के अकुलाए हुए लोचन देख कर निराश नहीं हुए उन्होंने जीवन से पलायन नहीं किया। वे कर्मठ योद्धा की भाँति सच्चाई के मार्ग पर आगे बढ़े। श्री सुधाकर पाण्डेय ने लिखा है - 'उन्होंने अपने मन की अनुभूतियों को उसी रूप में चित्रित किया है जिस रूप में अनुभूतियाँ उत्पन्न हुई हैं। वह अपने कवि के प्रति ईमानदार रहे हैं। उनकी रचनाओं में एक प्रकार का आक्रोश, वेग, गति, फंकार है किन्तु साथ ही टूटे हृदय के तार, जीवन की अस्त व्यस्तता सभी कुछ एक स्थान पर एकत्र हो गए हैं।'[३] गहन् तिमिर-आवरण में भी कवि-हृदय चट्टान के समान दृढ़ और वज्र के समान कठोर बनाने और उसकी वाणी चहुँ ओर गूँज उठी :-

' ये कज्जल के कोट भयानक उठे हुए हैं भू से नभ तक ;
दुर्निवार यह घोर अन्ध तम घिरा रहेगा, बोलो, कब तक ?

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विनिपात', पृ० २०५।
२. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' डॉ० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, पृ० ३१०।
३. 'हिन्दी साहित्य और साहित्यकार' - श्री सुधाकर पाण्डेय, पृ० २०६।

क्यों अकुलाते हो मन मेरे ? देखो बाट प्रभा की अपलक ।
हिय में भर उसाँस आशा की, गाओ भैरव के मंगल स्वन !!
निरख गहन, घन तिमिर-आवरण, क्षण-२ क्यों अकुलाएँ लोचन ?'[१]

'नवीन'का अधिकांश राष्ट्रीय-काव्य स्वतंत्रता पूर्व की देन है । उन्होंने देश के भविष्य का उज्ज्वल स्वप्न गर्वस्फीत स्वर में प्रकट किया है । निकट भविष्य में होने वाली जन-क्रान्ति का संकेत करते हुए उन्होंने लिखा है:-

'अपने यह सब बीहड़ जंगल, अपने ये सब ऊँचे पहाड़,
इक दिन निश्चय हिल डोलेंगे, सिहों की-सी करके दहाड़ ।
उस दिन हम विस्मित देखेंगे यह निविड़ तिमिर होते विलीन,
उस दिन हम सस्मित देखेंगे, हम हैं अमदीन, हम शक्ति-पीन !!'[२]

इस प्रकार राष्ट्रीय-धारा का प्रौढ़ एवं परिष्कृत रूप हमें 'नवीन' के काव्य में मिलता है । डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है -- ''नवीन' जी का राष्ट्रवाद रूपी 'तीर्थराज' ऐसी 'त्रिवेणी' पर अवस्थित है जिसमें क्रान्तिकारियों, बलिपन्थियों, लाल-बाल-पाल तथा कांग्रेस की वामपन्थी धारा, विश्व बंधु बापू की निष्ठा, अहिंसा तथा तन्मयता और कोटि-कोटि जन की वेदना, यथार्थ स्थिति तथा जागरण की तीन प्रबल धाराएँ अपना गठ-बन्धन स्थापित करती प्रतीत हो रही हैं । राष्ट्रीय-योद्धा एवं राष्ट्रवाद के वैतालिक होने के नाते, उन्होंने विप्लव और क्रान्ति, आशा तथा आस्था, विष और अमृत के गीत गाये । क्रान्ति के दिनों में, अत्याचारों, आतंक-दमन तथा विपरीत परिस्थितियों के जीवित गरल को, वे नील कण्ठेश्वर बनकर , पान कर गये । वे तो जन्मत: ही विषपायी थे । उनके काव्य में जीवन्त तथा

---

१. 'रश्मिरेखा' -'क्यों उलझे मन', पृ० १११ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - विद्रोही, पृ० ४८८ ।

खरी प्रेरणाओं और अनुभूतियों ने ही अपने मण्डप बनाये हैं।"[१] कवि विष-पान के लिए सभी जनों को आमंत्रित करता है :-

"अब विष की बारी आयी, ओ,
मधुरामृत पीने वाले ;
फेर रहे हो क्यों अपना मुख
देख हलाहल के प्याले ?"[२]

राष्ट्रीय कविता के इतिहास में १५ अगस्त सन् १९४७ का दिवस चिर-स्मरणीय रहेगा। आज से राष्ट्रीय कविता का स्वर बदला। पराजय और बलिदान का स्वर विजय-घोष में परिणत हुआ।[३] ध्वंस के स्थान पर नव-निर्माण की भावना जागृत हुई। 'नवीन' नव-निर्माण के हेतु सेवा, त्याग एवं बलिदान के लिए तत्पर रहे परन्तु राजनीति के दल-दल में फंसे नेता-गणों की स्वार्थ लिप्सा से वे खिन्न हो उठे और यह भी एक कारण है कि जीवन के अन्तिम दिनों में वे निराश रहे। चिन्तन की ओर उनका ध्यान आकृष्ट हुआ, फलत: रहस्यवादी रचनाओं का जन्म हुआ। परन्तु स्वातंत्र्योत्तर युग में भी उन्होंने कई राष्ट्रीय कविताएँ लिखी हैं जिनमें 'हिन्दुस्तान हमारा है' विशेष प्रसिद्ध है।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि 'नवीन' का राष्ट्रीय काव्य उस युग की महान देन है। उन्होंने अपनी लेखनी का प्रयोग सर्व जन हिताय के लिए

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० २२४।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विष-पान', पृ० ४५७।
३. हिन्दी साहित्य संग्रह - भाग १ (अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय प्रकाशन)
राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता - डा० नगेन्द्र, पृ० ४३०।

किया और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना उनमें प्रबल थी । सामूहिक कल्याण के लिए उन्होंने अपने जीवन के स्वर्णिम काल को राष्ट्रीय आन्दोलन में स्वाहा किया । डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'उनके प्रत्येक काव्य चाहे वह प्रणय का काव्य हो, चाहे वह वीररस का काव्य हो, चाहे राष्ट्रीय काव्य हो, उनके प्राणों की ऊर्जा ही ज्वलन्त रूप से व्यक्त होती है ।'[१] उनकी राष्ट्रीय भावनाओं में स्वाभाविक उन्मेष है । उनमें हृदय की सच्ची अनुभूतियों का अभिव्यंजन है तथा दृढ़ता एवं साहस का पूर्ण विकास है ।[२] देश के इस सतत उद्धारक का मन, विपत्तियों में घिर जाने पर भी, कर्त्तव्य-पथ से कभी विचलित नहीं हुआ । श्री हरिशंकर शर्मा ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा है :-

'तुम मानवता की मंजु मूर्ति ,
दीनों-दुखियों की प्रीति-पूर्ति ;
स्वातन्त्र्य-समर के नायक थे ,
सब के सब भाँति सहायक थे ;
चल दिए ~~उन्नत~~ सुयश - सौरभ-प्रसार ,
कवि, सम्पादक , साहित्यकार ।'[३]

तुलनात्मक निष्कर्ष :

'महजूर' एवं 'नवीन' के राष्ट्रीय काव्य का सम्यक् विवेचन तथा विश्लेषण करने के उपरांत कुछ महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आते हैं । उनके राष्ट्रीय

---

१. 'धर्मयुग' - ५ जुलाई १९६४ (गोष्ठी समाचार), पृ० २३ ।
२. हिन्दी साहित्य चिन्तन - डा० इन्द्रपालसिंह , पृ० ११७-११८ ।
३. साप्ताहिक हिन्दुस्तान १० जुलाई १९६० - श्रद्धांजलि - हरिशंकर शर्मा, पृष्ठ २७ ।

काव्य में साम्य एवं वैषम्य को ध्यान में रखते हुए कुछ आवश्यक निष्कर्ष दिए जाते हैं। दोनों महानुभावों का राष्ट्रीय-काव्य युग की एक आवश्यक एवं अनिवार्य देन है। लगभग समान परिस्थितियाँ दोनों कलाकारों की लेखनी को एक विशिष्ट दिशा की ओर ले रही थीं और एक विशिष्ट काव्य-सृजन के लिए प्रेरित करती थीं। उस युग में राष्ट्रीय-नेता मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए छटपटा रहे थे, इन नेताओं की भावनाओं को `महजूर` एवं `नवीन` के द्वारा सच्ची अभिव्यक्ति मिली और इस प्रकार उनका सन्देश तत्कालीन साहित्य का अमर विषय बन गया। अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि युग की छाप दोनों कवियों पर स्पष्ट परिलक्षित होती है।

राजनीतिक आन्दोलन में नवीन जी ने सक्रिय सहयोग दिया है। स्वयं उनका जीवन राजनीतिक-झंझावात में व्यतीत हुआ है। गान्धी जी से प्रभावित होकर वे राजनीति के प्रांगण में प्रविष्ट हुए और अन्तिम समय तक इस प्रांगण के प्रवीण खिलाड़ी बने रहे। इसके ठीक विपरीत `महजूर` ने व्यक्तिगत रूप से राजनीति में कोई सक्रिय भाग नहीं लिया। यह सत्य है कि कई बार उन्हें भी अधिकारियों का कोपभाजन बनना पड़ा है परन्तु आन्दोलनों में सम्मिलित होकर सत्ताधारियों के विरुद्ध, राजनीतिक योद्धा के रूप में वे कभी भी नहीं आए। अत: यह स्पष्ट होता है कि व्यक्तिगत रूप से स्वतंत्रता संग्राम के महान यज्ञ में जो `आहुति `नवीन` जी ने दी और जिस सीमा तक वे पहुँचे थे, उससे बहुत दूर `महजूर` केवल अपनी लेखनी से ही आन्दोलन-विरोधियों पर करारी चोटें करते थे। `नवीन` जी ने समस्त भारतवासियों के स्वर में अपना स्वर मिलाया जब कि `महजूर` केवल कश्मीरवासियों के करुण-क्रन्दन से ही प्रभावित थे और उन्हीं की भावनाओं को सच्ची वाणी प्रदान करने में ईमानदारी से लगे रहे।

दोनों कवियों ने आर्थिक लूट-खसोट की चक्की में पिसती हुई जनता को

उत्साहित किया तथा मातृभूमि के लिए महान से महान त्याग करने के लिए ललकारा। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए और लक्ष्य तक पहुँचने के लिए दोनों लालायित थे। दोनों दासता की ज़ंजीरों को तोड़ने के लिए उत्सुक थे और दोनों ने सत्ताधारियों के दुष्कृत्यों का पर्दाफ़ाश अपने काव्य में किया है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि कश्मीरी साहित्य में `महजूर` राष्ट्रीय काव्य के जन्मदाता हैं। इससे पूर्व कश्मीरी साहित्य में वीर-प्रशस्तियाँ या फ़ारसी से अनुदित जंगनामे यत्र-तत्र अव्यवस्थित रूप में मिलते हैं। कश्मीरी साहित्य में `महजूर` इस नवीन काव्य-प्रवृत्ति के अग्रदूत थे। उन्होंने हमारे (जन) साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का सूत्रपात किया। इसके ठीक विपरीत हिन्दी साहित्य में `नवीन` जी इस विशेष काव्य-प्रवृत्ति के जन्मदाता नहीं अपितु इसके कोष में वृद्धि करने वालों में उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार यह तथ्य स्पष्ट होता है कि परम्परा के रूप में अपने पूर्व कालीन या समकालीन लेखकों से `महजूर` को पथ-प्रदर्शन के हेतु या दिशा निर्देशन के लिए कोई जलती हुई मशाल नहीं मिली अपितु उसे स्वयं इस मशाल को जलाना पड़ा।

दोनों उत्साही कवियों ने अपने-अपने राष्ट्रीय काव्य में स्वर्णिम अतीत का गौरवगान इसलिए किया है कि अन्धकारमय वर्तमान में निरीह जनता का पथ-प्रदर्शन हो। वे अपने-अपने वैभवशाली अतीत का वर्णन मुक्त-कण्ठ से करते हैं ताकि किंकर्त्तव्यविमूढ़ जनता में नवीन प्राणों का संचार हो सके। `महजूर` की अपेक्षा `नवीन` जी के काव्य में सांस्कृतिक-पार्श्व प्रबल है। उन्होंने भारत के गौरवशाली अतीत की तुलना निराशामय वर्तमान से की और भविष्य की उज्ज्वल मूर्ति के प्रतिष्ठान हेतु देशवासियों को सदा ललकारते रहे। कविवर `महजूर` ने भी शारदा-पीठ के प्राचीन समृद्धि वैभव एवं ज्ञान गरिमा का वर्णन अपने काव्य में किया है। उनका लक्ष्य `नया-कश्मीर` का नव-निर्माण था, जिस के लिए उन्होंने देशवासियों के पौरुष को ललकारा।

अतीत के गौरवगान के साथ-साथ दोनों सिद्धहस्त कलाकारों ने वर्तमान दुर्दशा का भी हृदय-विदारक चित्रण किया है। भारत-माँ अंग्रेज़ों के अधीन शताब्दियों से वैधव्य का जीवन व्यतीत कर रही थी। क्रूर विधाता ने उसके वर्तमान को कलंकमय बना दिया था। देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विषमता से उनके हृदय में व्यथा का पारापार उमड़ पड़ा था। अज्ञान का तमसान्धकार, भूख, जड़ता एवं अशिक्षा, विदेशी शासकों की कूट नीतियाँ देश की चिर संचित शक्ति और समृद्धि को छिन्न-भिन्न कर रहे थे। ठीक यही दशा उस समय कश्मीर की भी थी। युग-द्रष्टा 'महजूर' ने अपने काव्य में समकालीन परिस्थितियों को ही प्रतिबिम्बित किया है। उनका काव्य उस युग की मुँह-बोलती तसवीर है। उस समय दारिद्र्य मानवता के लिए सब से बड़ा अभिशाप था और इसी के परिणामस्वरूप अनेकों दुर्गुण देशवासियों के जीवन में समा गए थे, और मानवता कलंकित हो गई थी। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि दोनों कलाकारों ने वर्तमान दुर्दशा का चित्रण मर्मस्पर्शी शब्दों में अपनी-अपनी रचनाओं में किया है। कहीं विदेशियों के प्रति आक्रोश प्रकट किया गया है, कहीं अपनी विपन्नावस्था पर आँसू बहाये हैं और कहीं जनता को संघर्ष के लिए ललकारा है। उस युग के यथार्थ इतिहास को जानने के लिए दोनों कलाकारों की कृतियाँ ऐतिहासिक-स्रोतों का कार्य कर सकती हैं।

दोनों राष्ट्रीय कवियों के काव्य में देश-भक्ति की कविता का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है। 'महजूर' एवं 'नवीन' को अपने देश से असीम प्यार था। वे देश-प्रेम में मतवाले हो गए थे। 'नवीन' जी ने अपने जीवन को मातृभूमि के लिए समर्पित किया था। वे स्वतंत्रता के वीर सैनिक एवं देश के सच्चे सेवक थे। उन्होंने मातृभूमि की वन्दना अनेक बार अनेक प्रकार से की है। त्याग, तपस्या और बलिदान के वे साक्षात प्रतिरूप थे। यह उनके राष्ट्र-प्रेम का ही परिणाम था कि सदा देशवासियों से बलिदान की भीख माँगते रहे, क्योंकि 'सर कटाना' उनका लक्ष्य था, अभीप्सित था, पर 'सर झुकाना' नहीं। वे आग से जूझने

वाले प्राणी थे और रक्त से होली खेलने वाले जीव । मातृभूमि के सम्मान की रक्षा के हेतु वे अपने प्राणों की आहुति चढ़ाने के लिए सदा तत्पर रहे और इस प्रकार देश-प्रेम का भव्यस्वरूप उन्होंने जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया । ठीक इसी प्रकार `महजूर` कश्मीर के कण-कण से प्यार करते थे । `महजूर` ही यहाँ के पहले कश्मीरी कवि हैं जिन्होंने अपनी जन्मभूमि के सौन्दर्य और प्रेम के गीत गाए हैं । यहाँ की कल-कल करती नदियाँ, हिमाच्छादित पर्वत मालाएँ, लहलहाते खेत अर्थात् यहाँ के प्राकृतिक वैभव पर वे अपने को निछावर करने के लिए सदा तत्पर रहे । अत: इस रम्य-स्थली के पुनरुद्धार हेतु वे त्याग और बलिदान के लिए जनता को उत्साहित करते रहे । अत: यह स्पष्ट होता है कि दोनों कवि सच्चे अर्थों में देश भक्त थे , उनके लिए यह धरती ही स्वर्ग थी, और इसकी सेवा को ही वे जीवन का लक्ष्य समझते थे । `महजूर` की अपेक्षा `नवीन जी` ने अपने देश-प्रेम का सक्रिय प्रमाण दिया है । इस क्षेत्र में निस्संदेह `नवीन` जी `महजूर` से कई कदम आगे हैं ।

`महजूर` के जीवन का अधिक भाग गाँव में व्यतीत हुआ है, नवीन जी भी अपनी किशोरावस्था तक गाँव में ही रहे और तत्पश्चात् राजनीतिक नेता के रूप में वे अधिकांशत: किसानों के बीच में रहे । अत: कृषकों की दरिद्रता एवं विवशता को समीप से देखने एवं अनुभव करने का उन्हें अवसर मिला था । ज़मींदारी प्रथा का प्रचलन कश्मीर और भारत के अन्य भागों में समान रूप से था । ग्रामीण समाज दो वर्गों में बटा था - शोषक एवं शोषित , और इनके मध्य (२०वीं शताब्दी में) निरन्तर संघर्ष चल रहा था । शोषण और दमनचक्र की नीति सत्ताधारियों द्वारा अपनायी जाती थी । गाँव में शिक्षा, स्वास्थ्य लाभ, उद्योगधन्धों और गृहउद्योगों का कोई प्रबन्ध नहीं था । परिणामस्वरूप हमारा किसान,देश का भाग्यविधाता,जनता का अन्न-दाता स्वयं विवशता एवं दैन्य का जीवन व्यतीत कर रहा था । शासन अधिकारियों

को इनकी लूट करने की खुली छुट्टी मिली थी और निर्द्वन्द्व होकर ज़मींदार, जागीरदार, महाजन, जमींदार के कारिन्दे छोटे-छोटे सरकारी अफ़सर, पण्डित एवं मुल्लाह लूट खसोट का बाज़ार गर्म कर रहे थे। इसके साथ ही नगरों में श्रमिकों की दशा भी शोचनीय थी, उनके यहाँ जीवन और मरण के मध्य निरंतर संघर्ष चलता रहता था। भूख ने उनको झूठी पत्तलें चाटने के लिए विवश किया था। `महजूर` और `नवीन` ने इन श्रमिकों एवं कृषकों की जीवन-गाथा का समान रूप से वर्णन किया है। दीन-जनों के प्रति उनकी सहानुभूति ने अनेक अन्ध देशवासियों की आँखें खोल दी। किसानों और श्रमिकों के प्रति करुणा जगाने वाली अनेक सुन्दर रचनाएँ दोनों के काव्य में यत्र-तत्र मिलती हैं। इस क्षेत्र में भी `नवीन` जी महजूर से आगे हैं, अधिक सक्रिय हैं।

`महजूर` के राष्ट्रीय काव्य में प्रतीकों का महत्वपूर्ण स्थान है। परिस्थितियों से विवश होकर उन्होंने प्रतीकों का सहारा लिया है। वे स्वयं राजकर्मचारी (लेखपाल) थे, अतः आरम्भ में खुलकर सरकार का विरोध न कर सके। `गुल` और `बुलबुल` को उन्होंने नवीन अर्थों में ग्रहण किया। `बुलबुल` को स्वतंत्रता का सन्देशवाहक तथा `गुल` को नवीन उपवन (नया-कश्मीर) की शोभा घोषित किया है। इसके अतिरिक्त भी `महजूर` ने अन्य अनेक प्रतीकों के माध्यम से अपनी विचारधारा को अभिव्यक्त किया। आरम्भ में `महजूर` सरकारी कोपभाजन बनना नहीं चाहते थे। यही कारण है कि वे खुलकर सत्ताधारियों का विरोध न कर सके, अपितु इसकी ओर केवल मात्र संकेत देने लगे, यह उनकी व्यक्तिगत कमज़ोरी थी परन्तु साथ ही इसके द्वारा राष्ट्रीय काव्य लिखने की एक और सुन्दर परिपाटी का जन्म हुआ। `नवीन` जी ने अपने राष्ट्रीय काव्य में यदाकदा प्रतीकों का सहारा अवश्य लिया है परन्तु उन का महत्व उतना अधिक नहीं है जितना कि `महजूर` के काव्य में है। `नवीन` जी को इन प्रतीकों के उपयोग की आवश्यकता ही नहीं थी। फिर भी कभी-कभी

अपनी इच्छा के अनुसार उन्होंने इनका प्रयोग किया है। क्योंकि 'नवीन' जी स्वयं स्वतंत्रता संग्राम के एक वीर योद्धा थे, निडर थे, स्पष्ट वक्ता थे जिस कारण कुछ छिपाने की उन्हें आवश्यकता ही नहीं थी। अनेकों बार वे सरकारी कोपभाजन बने थे अत: इस बात का उन्हें रत्तीभर भी डर न था। दोनों का लक्ष्य एक था परन्तु दोनों के काव्य-संकेतों में विशेष साम्य नहीं मिलता। 'नवीन' जी की अपेक्षा 'महजूर' में प्रतीकात्मकता का अधिक प्रयोग है, परन्तु जिस कारण उन्होंने प्रतीकों का सहारा लिया वह एक राष्ट्रीय-कवि के लिए कुछ प्रशंसनीय नहीं है। भले ही काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से ग्राह्य हो।

दोनों महानुभावों के काव्य में विदेशी-शासन नीति के विरुद्ध घोर आक्रोश एवं भयानक विद्रोह भरा पड़ा है। साम्राज्यवादियों के कुचक्रों से भयभीत भारतीय जनता दम तोड़ रही थी। अंग्रेज़ व्यापार के हेतु आए और शताब्दियों तक यहाँ के स्वामी बन बैठे। देशवासियों को अपने स्वत्व की प्राप्ति के हेतु जागरण सन्देश सुनाने का पुनीत कार्य 'नवीन' जी ने पूरा किया। सुषुप्त जनता में प्राण-संचार हुआ और वह जूझने के लिए रण-क्षेत्र में कूद पड़ी। सिंह-नाद करते हुए दासत्व की लौह-शृंखलाओं को काटने के लिए 'नवीन' जी नवीन स्फूर्ति का संचार जनता में करने लगे। राजनीतिक आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के लिए 'नवीन' जी की ललकार भारत की चारों दिशाओं में गूँज उठी। ऐसा प्रतीत हुआ कि सिंह गरज रहा है - मातृभूमि के पुनरुद्धार के लिए। 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' - 'नवीन' जी इस तथ्य को जनता तक काव्य के माध्यम से पहुँचाना चाहते थे। इस प्रकार राष्ट्र-चेतना का पुनीत कर्त्तव्य उनके कर-कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। इधर 'महजूर' ने भी व्यक्ति-राज्य के विरुद्ध आवाज़ उठाई। उनके कुकर्मों का पर्दाफाश किया और जनता को अन्यायी एवं अत्याचारी से जूझने के लिए उत्साहित किया। मनुष्यत्व के उच्च आदर्शों की प्राप्ति के लिए वे सतत प्रयत्नशील रहे। 'महजूर' कश्मीर के सर्वप्रथम जन-कवि थे जिन्होंने अत्याचार की बेड़ियाँ

काटने के लिए प्रदेशवासियों की अर्धमृत चेतना में नव-स्फूर्ति का संचार किया, पुन: प्राण-रस उंडेल दिया। राजनीतिक परतंत्रता के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक परतंत्रता के कारण जनता अपनी प्रतिभा का विकास करने में असमर्थ थी, अत: इन बुझे हुए सुप्त कणों में 'महजूर' की काव्य-वाणी ने नवीन ज्योति जगादी। इस प्रकार हम इसनिष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बालकृष्ण 'नवीन' एवं 'महजूर' दोनों ने राष्ट्रीय-काव्य के अन्तर्गत विदेशी शासनाधिकारियों पर अपना आक्रोश प्रकट किया और अबोध जनता को राजनीतिक चेतना का पाठ पढ़ाया।

'महजूर' की अपेक्षा 'नवीन' जी ने वीर-पूजा एवं बन्दी जीवन का विशद-वर्णन किया है। इसका प्रधान कारण यह है कि स्वयं 'नवीन' जी ने अपने यौवन के अमूल्य वर्ष कारागृह की अन्ध कोठरियों में व्यतीत किए हैं। उन्हें उस भयानक जीवन का स्वयं कटु अनुभव था जिस पर समयान्तर में उन्होंने अपनी लेखनी चलाई। राष्ट्रीय वीरों की अभ्यर्थना के हेतु, स्वतंत्रता संग्राम के अमर शहीदों की पुण्य याद में तथा बन्दीगृह-जीवन व्यतीत करने वाले नव-युवकों की सहन शक्ति की 'नवीन' जी ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उनके त्याग तपस्यामय जीवन का अनुभव स्वयं आलोच्य-कवि को भी था, यही कारण है कि उनका यह वर्णन अत्यधिक सजीव, मार्मिक एवं हृदय ग्राहक बना है और इसका महत्व भी स्थायी है। स्वतंत्रता संग्राम का कर्मठ सैनिक होने के नाते उन्होंने जनता को अग्नि-परीक्षा के लिए बार-बार ललकारा। 'महजूर' के राष्ट्रीय काव्य में यह वर्णन सीमित रूप से हुआ है और इसकी ओर उन्होंने अत्यधिक ध्यान नहीं दिया है। इस विषय में उनकी एक दो रचनाएँ ही उल्लेखनीय हैं जिनमें उन्होंने कश्मीरवासियों को सैनिक बनकर देश की सीमाओं पर डट कर शत्रु से प्रतिशोध लेने के लिए ललकारा है, परन्तु उनकी ललकार में वह ओज एवं शक्ति नहीं जो 'नवीन' जी के काव्य एवं व्यक्तित्व का प्रधान अलंकरण था।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वीर-पूजा एवं बन्दी-जीवन के वर्णन में 'नवीन' जी 'महजूर' से बहुत आगे हैं। सामयिक वीरों के अतिरिक्त उन्होंने ऐतिहासिक वीरों को भी अपना काव्य-विषय बनाया है।

दोनों कवियों ने अपने राष्ट्रीय काव्य में 'समाज-सुधार तथा भविष्य-निर्माण' के हेतु कहीं उपदेशात्मक ढंग से और कहीं शुद्ध साहित्यकार के रूप में वर्णन किया है। उस समय देश का सामाजिक ढाँचा पूर्णरूपेण विशृंखलित हो गया था। रूढ़िग्रस्त समाज में संगठन शक्ति का अभाव था। धार्मिक अन्यायों, पाखण्डों एवं अत्याचारों ने समाज को कलंकित कर दिया। अत: दोनों कलाकारों ने वर्ग-विहीन समाज की स्थापना के हेतु जन-मानस को शुद्ध एवं परिष्कृत करने का प्रयत्न किया। आर्थिक-दुर्दशा के कारण कलाकौशल एवं उद्योग-धन्धों का ह्रास हो गया था। नारी की दशा भी बड़ी शोचनीय थी। अशिक्षा के अथाह अन्धकार में वह निष्प्रयोजन भटक रही थी। समाज के अनेक ठेकेदारों ने उसके जीवन को कलुषित बना दिया था। नारी के माता, बहन, सखी तथा अन्य रूपों (भोग्या के अतिरिक्त) की उपेक्षा की जा रही थी। इन सामाजिक विषमताओं को मिटाने के लिए एवं एक नवीन समाज के निर्माण हेतु दोनों कवियों ने अपनी काव्य-वाणी के द्वारा सक्रिय सहयोग प्रदान किया। देश के पुनर्निर्माण के हेतु वे अन्धकारमय वर्तमान से निकलकर स्वर्णिम अतीत की ओर झाँक कर देखते हैं, जहाँ से पुन: उत्साहित होकर वे नव-निर्माण के पुनीत-कार्य के लिए जन-शक्ति को आवाहन करते हैं। 'नवीन' जी का प्रिय वाक्य 'बढ़े चलो' इस दिशा में एक महामंत्र के समान जनता को उत्तरोत्तर आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रहा है। 'महजूर' की अपेक्षा 'नवीन' जी ने समाज सुधार की ओर अधिक ध्यान दिया है क्योंकि वे अखण्ड समाज के निर्माण का संकल्प कर चुके थे। 'महजूर' इस क्षेत्र में भी निस्सन्देह 'नवीन' जी से पीछे रह गए हैं और इसका कारण 'नवीन' जी का उदार दृष्टिकोण, परिपक्व बुद्धि एवं परिष्कृत-मानस है।

निराश जनता को दोनों महानुभावों ने अपने-अपने राष्ट्रीय काव्य में विभिन्न प्रकार से आशावादी सन्देश देने का प्रयास किया है। वे केवल आँसू बहाकर ही चुप रहने वाले जीव नहीं थे, अपमान को मूक रूप से पीने वाले ढोंगी एवं पंगु देशभक्त वे नहीं थे। उन्हें भयानक अन्धकार में भी कहीं से आशा की एक क्षीण डोर दिखाई दे रही थी जो अन्धकार को चीर कर अपनी आभा से प्रज्वलित हो रही थी। दोनों कवियों को मरण का भय नहीं था और अपार धैर्य के साथ वीर-योद्धाओं के समान वे देशवासियों को ललकार रहे थे। यही उस युग की आवश्यक माँग थी जिसको उन्होंने पूरा किया। भविष्य के स्वप्नों की सुखद कल्पना के कारण जनता वर्तमान को कुछ क्षण भूल गयी और उन मधुर-स्वप्नों की स्मृति ने उन्हें हलाहल पान के लिए शक्ति प्रदान की। स्वयं 'नवीन' जी ने अपने को 'विषपायी' कहा और यही विष 'मजूर' ने भी संघर्ष काल में (कुछ मात्रा में) सहर्ष पान किया। यह सत्य है कि उन दोनों को जीवन में घोर-निराशाओं का सामना करना पड़ा है और उस निराशा का स्पष्ट प्रभाव 'नवीन' के काव्य में परिलक्षित होता है, परन्तु यह निराशा भी क्षणिक प्रतीत हुई क्योंकि आशा का सूर्य पुनः अपनी अलौकिक आभा के साथ उदित हुआ और इस प्रकार मातृभूमि का भाग्योदय शताब्दियों के निरन्तर संघर्ष करने के पश्चात् और कठोर यातनाएँ सहने के पश्चात् हुआ।

दोनों कलाकारों के राष्ट्रीय काव्य में क्रान्तिकारी काव्य- अर्थात् विप्लव धारा का महत्वपूर्ण स्थान है। निरन्तर संघर्ष करने के पश्चात् एवं कठोर यातनाएँ सहन करने के उपरान्त भी जब देशवासियों को घोर विफलता का ही सामना करना पड़ा तो कवि-जन निर्द्वन्द्व होकर महानाश का स्वागत करने लगे और नाश की घन-घोर घटाओं को इस नीलाकाश में छा जाने के लिए तथा इस समस्त पृथ्वी को जल-मग्न करने के लिए आमंत्रित करने लगे। वे नाश का स्वागत करने के लिए आतुर हो उठे। सम्पूर्ण राष्ट्र में सामन्ती राज्य के विरुद्ध जनता उठ खड़ी हुई और शासक का आसन डगमगाने लगा। अब कवियों

ने स्पष्ट शब्दों में देशवासियों को शासन अधिकारियों के विरुद्ध संगठित होने के लिए उत्तेजित किया। ये आग के शोले थे, जो चारों तरफ भड़क उठे थे। दोनों कवियों ने जर्जरित सामन्ती व्यवस्था की लौह-शृंखलाओं को भस्मसात करने के लिए महानाश की भट्टी को जल उठने का आह्वान किया है और उस अग्नि से खेलने के लिए राष्ट्र-हितैषियों के हृदय-स्थित पौरुष को ललकारा। दोनों कवियों ने नाश का आह्वान सोद्देश्य किया है। क्योंकि उनका विश्वास था कि उस नाश के पश्चात् ही राष्ट्र का नव-निर्माण सम्भव है। अत: उनका क्रान्तिकारी काव्य स्वस्थ है, उस में नव-निर्माण की भावना निहित है। दोनों कवियों ने क्रान्ति का आह्वाहन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में किया है। उनके भयंकर गर्जन से दिशाएँ गूँज उठी। मरण-त्योहार मनाने के लिए दोनों कलाकार कटि बद्ध हैं। भूकम्प, तूफान, झंझावात एवं भयंकर जल-वृष्टि का वह सहर्ष स्वागत करने लगे। `नवीन` जी ने इस प्रकार का काव्य लिखते समय अहिंसात्मक नीति का कहीं-कहीं पर विरोध किया है और कहीं-कहीं उन्हें अपने गुरुजनों (गान्धी आदि) की भी कटु आलोचना करनी पड़ी। क्रान्तिकारी काव्य लिखते समय दोनों की लेखनी ने उग्रतम रूप धारण किया। `महजूर` ने अपने क्रान्तिकारी काव्य में `बुलबुल` को कभी-कभी क्रान्ति का सन्देश वाहक बनाया। गर्व स्फीत ओज भरी वाणी में उन्होंने भयंकर विध्वंस का स्वागत किया। चारों ओर आर्थिक शोषण एवं पाश्विक बल का बोलबाला देखकर दोनों कवियों की ओजस्वी वाणी विद्रोह एवं युग-परिवर्तन के लिए अग्रसर होने लगी। इस प्रकार यह तथ्य पूर्ण-रूपेण प्रकाश में आता है, कि दोनों कलाकारों के राष्ट्रीय काव्य में क्रान्तिकारी एवं विप्लवधारा का समान रूप से समुचित निर्वाह हुआ है।

दोनों कवियों ने दारिद्रय, अभाव, अन्याय, अत्याचार, शोषण एवं

उत्पीड़न के विरुद्ध अपने राष्ट्रीय काव्य में विद्रोहात्मक आवाज़ उठाई और अन्त में विजय उनकी हुई। उन्होंने व्यक्तिगत हानि लाभ की कोई चिन्ता नहीं की। यद्यपि अनेक बार उन्हें अधिकारी जनों का कोप भाजन बनना पड़ा तथापि वे राष्ट्रीय वीरों के लिए पथ-प्रदर्शक, निरीह जनता के लिए सन्देश-वाहक और शत्रु के लिए महाकाल थे। वे स्वयं महान् थे और उनका राष्ट्रीय-काव्य युग की एक महान् देन है।

पंचम-अध्याय

कलात्मक - उपलब्धियाँ

पंचम अध्याय

`महजूर` के काव्य में कलात्मक - उपलब्धियाँ

`महजूर` के काव्य का कला-पक्ष :

गहन अन्धकार में चन्द्रोदय से जो प्रकाश सर्वत्र फैल जाता है वही प्रकाश कश्मीरी साहित्य-क्षेत्र में उस समय फैला जब कविवर `महजूर` का उदय हुआ। अपनी काव्य-कला से उन्होंने इसकी श्रीवृद्धि की । अज्ञान के अथाह अन्धकार में भटकती हुई जनता एवं आध्यात्मक हवाई-लोक में विचरण करने वाले कवि अपनी अपनी भ्रांत धारणा से कश्मीरी साहित्य की जड़ खोखली कर रहे थे परन्तु `महजूर` के कर-कमलों द्वारा यह नीव इतनी सुदृढ़ हुई कि अब इस पर कश्मीरी साहित्य का भव्य-महल खड़ा है । निस्सन्देह `महजूर` का काव्य हमारे साहित्य की अमूल्य पूँजी है । `महजूर` ने उस समय कश्मीरी भाषा में लिखना आरम्भ किया जब कि साकार जनसमुदाय इस भाषा के प्रति पूर्ण रूपेण निराश था और फारसी तथा संस्कृत भाषा में रचनाएँ लिखा था । `महजूर` ने ऐसे विद्वानों, पण्डितों एवं साहित्यकारों को ललकारा और उसका सिंहनाद सम्पूर्ण घाटी में गूँज उठा । आरम्भ में उन्होंने हब्बाखातून और रसूलमीर की प्राचीन काव्य-परम्परा के आधार पर गज़लें लिखीं जिनका विषय एवं वस्तु की दृष्टि

से मूल्य नगण्य है परन्तु राष्ट्रीय हित एवं भाषा के दृष्टिकोण से वे अमूल्य हैं क्योंकि उनके सामने समस्या यह थी कि विद्वत् जन का ध्यान इस भाषा की ओर आकृष्ट हो। वे सबसे पहले अपने घर में ही इस भाषा को सम्मान देना चाहते थे और इसी दृष्टि से उन्होंने लेखनी चलाई। समय और परिस्थितियों के साथ-साथ उनके विषय, विचारधारा एवं चिन्तन-पद्धति में भी परिवर्तन आया। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है - "'महजूर' एक प्रसिद्ध कवि हैं, उस्ताद हैं और आधुनिक कश्मीरी साहित्य के पितामह हैं। उनके कलाम में क्लासिकी, सादगी, मिठास और अर्थ-गाम्भीर्य है।"[१]

'महजूर' प्राचीन एवं नवीन के संगम थे। उन्हें कश्मीरी साहित्य की भव्य-परम्परा भीतर से कुरेद रही थी और वर्तमान भयानक दुर्दशा झकझोर रही थी।[२] उन्होंने समय की मांग को पूरा किया। समय के साथ साथ उनकी कला में मौलिकता एवं प्रौढ़ता आती गई क्योंकि वे एक ऐसे पत्थर के समान थे जिसमें खराद पर चढ़ कर हीरा बनने की क्षमता थी। उन्होंने कश्मीरी काव्य को साधारण तुकबन्दी के सीमित क्षेत्र से निकाल कर उसमें नवीन रूप से प्राण-प्रतिष्ठा की। श्री 'पुष्प' ने लिखा है - "जिस समय उसने कश्मीरी भाषा को अपनाया, उस समय कश्मीरी कविता में ठहराव-सा आया था। रचनात्मक प्रतिभा के अभाव में साधारण कोटि के तुक्कड़ पुरानी लकीर पीटे जा रहे थे।

---

१. 'साहित्यानुशीलन' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १२४।

२. 'In ancient and medieval times Kashmir had become the home of music, dancing, paintings and other fine arts.... But all the arts of peace received a set-back during the dismal years of tyranny.'

'Struggle for freedom in Kashmir' - Prem Nath Bazaz, page 309.

जीवन की असारता का रोना रोने वाली तुकबन्दियों में कभी-कभी ही सप्राण अभिव्यक्ति का एक आध स्वर सुनाई पड़ता था। प्रधानता छिछले शब्द गुम्फन ही की थी।[१] 'महजूर' ने इस छिछलेपन को दूर करने का बीड़ा उठाया और जीवन-पर्यन्त निरन्तर साधनारत रहे। उन्होंने कश्मीरी काव्य की आत्मा और शरीर में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित किया और कला के क्षेत्र में नवीन उद्भावनाएँ कीं।[२] उनकी आरम्भिक रचनाओं में विदेशी प्रभाव अधिक परिलक्षित होता है क्योंकि उन्होंने आरम्भ में विदेशी भाषा में ही काव्य साधना की थी। कुछ ही समय के पश्चात् उन्हें अपनी जन्मभूमि ने ललकारा, धिक्कारा और तत्पश्चात् जीवन-पर्यन्त वे अपनी मातृ-भाषा में ही काव्य-साधना करते रहे और निरन्तर साहित्य-देवी के मन्दिर में अर्चना के पुष्प चढ़ाते रहे। उन्होंने जन-मानस को अपने काव्य में प्रतिबिम्बित किया। उनकी रचनाओं का स्वागत देश के कोने-कोने में हुआ और अनेकों उभरते साहित्यकारों को उनसे प्रेरणा मिली। वे साधना-पथ पर निरन्तर जलने वाली मशाल के समान थे और अपनी आभा तथा ज्योति से जन-मन को आलोकित कर गये। श्री 'पुष्प' ने लिखा है — "'महजूर' आज हमारी नज़रों से ओझल हैं परन्तु उनका व्यक्तित्व हमारे राष्ट्रीय-जीवन में सदा झिलमिलाता रहेगा और कश्मीरी साहित्य के इतिहास में उनका नाम अमर रहेगा।"[३]

---

१. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प', पृ० १६।

२. 'While it was Mahjur, who introduced the freshness of subject and outlook to interpret the awakening amongst his people.'
'Literary heritage' - Kaumudi - Page 81.

३. 'तामीर' - 'महजूर अंक' - लेख ('महजूर' - मेरी नज़र में)-'पुष्प', पृ० ८।

उनके काव्य की कलात्मक उपलब्धियों का विवेचन विभिन्न बिन्दुओं से किया जाएगा । इस क्षेत्र में उनकी मौलिक देन अद्भुत है । उन्होंने भाव एवं भाषा का सन्तुलित रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है ।

गज़लगो एवं गीतकार :—

गज़ल का मूल फारसी काव्य में निहित है । गज़ल फारसी काव्य का एक रूप है । यह शब्द अरबी भाषा का है और इसका अर्थ है — इश्क व मुहब्बत का वर्णन करना । गज़ल से ही एक और शब्द बना है — 'तगज़ुल', जिसका अरबी भाषा में अर्थ - औरतों से बातें करने का है । फारसी साहित्य में प्रशंसात्मक एवं वर्णनात्मक (कसीदा और मसनवी) कविताओं के साथ-साथ आरम्भ से ही गज़लें भी लिखी गईं हैं ।[१] फारसी में इस काव्य-रूप की बहुत उन्नति हुई यहाँ तक कि फारसी के प्रसिद्ध कवियों हाफिज़ और सेदी ने गज़लों के कारण ही प्रसिद्धि प्राप्त की । गज़ल में काव्य-पंक्तियों (शेरों) का कोई प्रतिबन्ध नहीं, फिर भी बड़े-बड़े कवियों ने कम से कम सात और अधिक से अधिक पन्दरह या बीस पंक्तियों की गज़ल कही है । कला की दृष्टि से गज़ल में कई तत्वों का होना आवश्यक है । इसमें काफिया और रदीफ होना आवश्यक है । 'गालिब' की प्रसिद्धि काव्य-पंक्तियों से इसको समझाया जा सकता है :-

" दिले नादान तुझे हुआ क्या है ,
आखिर इस दर्द की दवा क्या है । "

गालिब की इस गज़ल में 'क्या है' रदीफ है और 'हुआ' 'दवा' इत्यादि काफिया है । इसके अतिरिक्त गज़ल में छन्द (metre) की भी

---

१. डा० काशीनाथ पण्डित से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात - (१८-६-१९६७)

बड़ी पाबन्दी रहती है। गज़ल के लिये प्राय: वे छन्द प्रयुक्त नहीं होते हैं जो क़सीदा या मसनवी के लिये प्रयुक्त होते हैं। फारसी और उर्दू गज़लों में कुछ नियमित सर्व मानित एवं संगीतमय छन्दों का प्रयोग किया जाता है। गज़ल में शब्दों और मुहावरों का प्रयोग भी कलात्मक दृष्टि से होना चाहिए। डा० काशीनाथ ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया — ' यह आवश्यक नहीं है कि गज़ल में केवल 'इश्क व आशिकी' की ही बातें हों अपितु गज़ल उस हर विषय पर लिखी जा सकती है जिसका सम्बन्ध मानव-मन से हो। यह भी कहा जा सकता है कि गज़ल मनुष्य की समस्त आन्तरिक घटनाओं का वर्णन करती है। कवि केवल उन घटनाओं को उपयुक्त शब्दों द्वारा संगीतमय अभिव्यक्ति देने में समर्थ हो।'[१] प्राय: यह देखा गया है कि एक गज़ल की काव्य पंक्तियां अर्थ की दृष्टि से एक दूसरे से जुड़ी हुई होती हैं। ऐसी गज़ल को 'मुसलसल' गज़ल कहते हैं। परन्तु ऐसी गज़लों में भी यह विशेषता होती है कि प्रत्येक काव्य पंक्ति को अलग से पढ़ा जा सकता है और यह अर्थ-बोधन में समर्थ होती है। प्रो० रहमान 'राही' ने अपनी एक प्रत्यक्ष भेंट में मुझे बताया — 'गज़ल में प्राय: विषय विभिन्न होते हैं अर्थात् एक ही गज़ल में विभिन्न दुनियाओं की बात होती है। अच्छे कवियों की गज़लों की यही विशेषता होती है।'[२]

कश्मीरी में गज़ल फारसी से आयी है। कश्मीर में इस्लामी युग के आविर्भाव के साथ-साथ विदेशी साहित्य, सभ्यता एवं संस्कृति के अतिरिक्त भाषा -- विशेषकर अरबी और फारसी — का भी प्रभाव पड़ा। परिणाम-स्वरूप विदेशी काव्य रूपों को हमारे कवियों ने अपनाया और इनका प्रयोग साहित्य में होने लगा। फारसी गज़लों की यह विशेषता है कि उनमें प्रिय

---

१. डा० काशीनाथ पण्डिता से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (१८-६-१९६७)।
२. प्रो० 'राही' से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (२८-६-१९६७)।

और प्रेयसी दोनों पुरुष वाचक होते हैं। इसके विपरीत कश्मीरी गज़ल में प्राय: 'आशक' स्त्री और 'माशूक' पुरुष होता है।[१] भारतीय काव्य में प्राय: 'माशूक' नारी होती है और 'आशिक' पुरुष। इस दृष्टि से कश्मीरी गज़ल फारसी और उर्दू की अपेक्षा भारतीय काव्य के अधिक निकट है। कहीं-कहीं कश्मीरी गज़लों में 'माशोक' पुरुष और 'आशिक' स्त्री है परन्तु ऐसे गज़लों की संख्या अल्प है। यह सत्य है कि कश्मीरी गज़लों का मूल ईरानी गज़ल में है परन्तु इस दृष्टि से परस्पर दोनों भिन्न हैं। कश्मीरी साहित्य में सर्वप्रथम हब्बाखातून ने ईरानी ढंग पर गज़लें लिखीं। श्री आज़ाद ने लिखा है – 'वास्तविकता तो यह है कि कश्मीरी भाषा में वर्तमान काव्य का शिलान्यास हब्बाखातून की गज़ल है।'[२] इससे यह बात स्पष्ट होती है कि हब्बाखातून कश्मीरी गज़ल की जननी है। रानी की कई गज़लें कश्मीर में काफी लोकप्रिय हुई। इन गज़लों में फारसी संगीत के साथ लोक-संगीत का सुन्दर मिश्रण हुआ है। हब्बाखातून के पश्चात् दूसरे प्रसिद्ध गज़लगो कवि महमूद गामी है। महमूद गामी की गज़लें दो प्रकार की हैं – सूफियाना एवं शृंगारिक। महमूदगामी के पश्चात् मीर शाहाबादी (रसूलमीर) ने कश्मीरी गज़लों में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित किया। उनकी गज़लें दो प्रकार की हैं – प्रथम वे जिनमें 'आशक' (स्त्री) अपने हृदय को चीर कर रख देती है। दूसरी प्रकार की वे गज़लें हैं जिनमें 'माशोक' (पुरुष) की ओर से 'आशक' के प्रति सम्बोधन मिलता है।[३] रसूल मीर ने कश्मीरी गज़ल के भावपक्ष तथा

---

१. 'His poetry is appealing to the heart and it is in the traditional Kashmir form i.e. lover is the female and male is the beloved.'.

– 'An Interview With Dr. P.N. Ganjoo', 30-5-1965.

२. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' –'आज़ाद'– भाग १, पृ० १०६।

३. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' –'आज़ाद'– भाग २, पृ० २६१।

कलापक्ष में भारी परिवर्तन लाकर इसे अधिक कलात्मक बनाया। रसूलमीर के पश्चात् प्रसिद्ध गज़लगो कवि 'महजूर' हैं। आरम्भ में उन्होंने अपने पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव ग्रहण किया परन्तु कुछ ही समय के पश्चात् उनकी गज़लों में उनकी मौलिक प्रतिभा अभिव्यक्त हुई है। श्री चौहान से 'महजूर' ने अपनी एक भेंट में कहा था — 'मैंने कश्मीर के गुज़िश्ता शायर रसूल मीर और हब्बा-खातून मलिका कश्मीर की तर्ज पर गज़लें लिखनी शुरू कीं और मैंने देखा कि थोड़े ही दिनों में मेरी गज़लें मकबूले-आम (सर्वप्रिय) हो गईं।'[१] इसके अतिरिक्त 'महजूर' ने अपनी एक कविता में इसकी ओर स्पष्ट संकेत किया है — 'इश्क व मुहब्बत की देवी को रसूलमीर बेनकाब (घूँघट हटा) करके चला गया। अब 'महजूर' बनकर उसने पुनः जन्म लिया।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५१)

गज़ल ही 'महजूर' का एक विशेष क्षेत्र है जिसके माध्यम से उसने सामाजिक एवं राजनीतिक वातावरण का सजीव चित्रण किया है। उनकी गज़लों में मानव-जीवन मुखरित हुआ है। उनकी गज़लें उनके हृदय की सच्चाई और सादगी की साक्षात प्रतीक हैं।

श्री 'पुष्प' ने लिखा है — 'आरम्भ में निस्सन्देह 'महजूर' भी दूसरे कश्मीरी कवियों की तरह गुलो-बुलबुल, यम्बर ज़ल (नर्गिस) और बम्बूर (भौंरा), हीमाल और नागराय तथा तोता और मैना के 'राज़ो नियाज़' की गज़लों से ही कश्मीरी जनता को रिझाता रहा, परन्तु बहुत शीघ्र उसकी कविता ने अपने देश के सामाजिक और राजनीतिक जीवन से गहरा सम्बन्ध स्थापित कर ही लिया।'[३]

---

१. 'प्रगतिवाद' - चौहान, पृ० १८१।
२. क० म० २, पृ० १६।
३. 'गद्य प्रवेशिका' - 'पुष्प', पृ० १४६।

'आशक' माशोक' को 'मदनवार' कहकर उसकी अहंकार वृत्ति की निन्दा करती है :-

'हे कामदेव ! तुम छिपकर रह गए और मेरा शरीर प्रेम-अग्नि से भस्म हो गया । हे भाँरे ! मैं तुम्हारे लिये आँसू बहा रही हूँ , मेरे हृदय को कब शान्ति मिलेगी ?'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५२)

'आशक' अपने महबूब को देखने के लिये लालायित है अत: वह विनीत शब्दों में 'माशोक' से कहती है :-

'हे कामदेव ! वहीं ठहर जा, तनिक मेरी बात तो सुन । मेरे हृदय को शान्ति देने वाले प्रिय ! तुम्हें पूर्ण रूप से देखने की मुझे तीव्र इच्छा है । तनिक वहीं ठहर जा ।'[२] (देखिए परिशिष्ट २, क्रमांक ५५३)

प्रिय विरह की भयानक अग्नि से दग्ध 'आशक' अपने 'माशोक' के पुनर्मिलन की कामना करती है, वह उससे पुरानी बातें भुलाकर पुन: लौट आने का आग्रह करती है :-

'काश ! वह प्रियतम आ जाता, तनिक अपना मुखड़ा दिखा देता । मेरा वक्ष प्रेम-अग्नि से दग्ध है । काश अब वह पुरानी बातें भुला कर (मेरे प्रति क्रोध छोड़कर) आ जाता ।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५४)

इन गज़लों के द्वारा 'महजूर' ने प्रेम का मार्मिक, सजीव, हृदयस्पर्शी एवं सूक्ष्म चित्रण किया है । उनकी गज़लें समस्त घाटी में लोक-प्रिय हुईं ;

---

१. क० म० २ , पृष्ठ ६ ।
२. वही , पृ० १४ ।
३. वही ३ , पृ० ६ ।

नारी की ओर से ही उन्होंने प्रेम की घटनाओं का वर्णन किया है। श्री 'आज़ाद' ने 'महजूर' की गज़लों के विषय में लिखा है – "'महजूर' की 'हुस्न व इश्क' की अधिकांश काव्य-पंक्तियाँ इस प्रकार की हैं कि मालूम नहीं पड़ता कि ज्ञान-बूझकर लिखी गयी हैं। सीधी-सीधी बातें हैं जो प्रत्येक मनुष्य के हृदय में पहले से ही बसी हुई होती हैं। पढ़ने वाला 'शेर' की एक आध पंक्ति सुनाता है और सुनने वाला उसे पूरा करता है। उसके मुख से अनायास 'शेर' की दूसरी पंक्ति फूट पड़ती है।"[१] 'आशक' प्रेम की हाला के लिये 'माशोक' से विनीत शब्दों में कहती है :-

" हे मनचले प्रिय, मुझे आवारा बना दिया, तनिक मेरा उपाय भी सोच लो। एक बार आकर प्रेम-मदिरा प्रेम के कलाशों में उँडेल दो।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५५)

'माशोक' बिजली की भाँति एक बार आर और पुन: अन्धकार में विलीन हो गए। 'आशक' की दशा विचित्र हो जाती है। उसे यह भ्रम होता है कि माशोक मेरा हाल पूछने के लिये आया था परन्तु वह देखते ही रह जाता है :-

" प्रेम-ज्वर चढ़ा है और माशोक बिना सूचना दिए हाल पूछने के लिये आया। काश वह एक क्षण ठहर जाता, सम्भव था कि मैं कुछ संभल जाती।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५६)

और जब वह नहीं आए तो 'आशक' उलाहना देने लगती है। कितना सजीव एवं

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग ३ - 'आज़ाद', पृ०२३४।

२. क० म० ४, पृष्ठ १५।

३. वही , पृ० ८।

व्यंग्यपूर्ण उलाहना है :-

" मेरा रुग्ण-हृदय प्रेम-जाल में फँस गया है। अब तुम एक क्षण तमाशा देखने के लिए ही आ जाते। कभी कुछ क्षण निकालकर मेरी करुण दशा का तमाशा देखने के लिये ही आ जाओ।"[१] (परि० २ , क्रमांक ५५७)

'माशोक' की निर्दयता भी अकथनीय है। स्वयं तो नाव में बैठ गया और मुझे मंझधार में छोड़ गया :-

"जब मुझे अपने प्रिय की याद आई तो आँखों से आँसू निरन्तर बहने लगे। स्वयं तो नैया में बैठ गया और मुझे बाढ़ में अकेले छोड़ दिया।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५८)

'महजूर' की गज़लों की एक विशेषता यह भी है कि उनमें दैनिक जीवन की बातें कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त हुई है। उनकी गज़लों की भाषा सरल तथा अभिव्यक्ति में समर्थ है। फारसी की शब्दावली और काव्य-रूढ़ियों के बदले 'महजूर' ने अपनी गज़लों में स्वदेशीपन लाने का भरसक प्रयत्न किया। उनकी गज़लों में प्राय: एक विषय का वर्णन एक गज़ल में मिलता है। गज़ल की प्रत्येक पंक्ति अर्थवान होती है और गज़ल में एक पंक्ति का दूसरी पंक्ति के साथ तारतम्य जुड़ा रहता है। 'महजूर' की अधिकांश गज़ल हृदय की तारों को स्पर्श करती है। भावनाओं का तादात्म्य हो जाता है। हृदय में बाण से चुभ जाते हैं और अनायास हम मोतियों का व्यापार करते हैं।' दो उदाहरण दृष्टव्य हैं :-

---

१. क० म० ४, पृ० १५।

२. क० म० ५, पृ० ५ ।

`चमेली की कली के समान तुमने मुझे नष्ट कर दिया और प्रेम की अग्नि में जला दिया । तुम्हारे कारण मैं सूख कर काँटा हो गई और आज मज़ार तक पहुँच कर तुम मुझसे दूर चले गए ।`[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५६०)

` न जाने मेरे प्रिय कहाँ रह गए । मैं उनकी प्रतीक्षा में रहूँगी । न जाने कब वे इस नगर में आएँगे । मैं उन्हें अपना दुआ-सलाम भेजूँगी । कब मेरा प्रिय आएगा ।`[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५६१)

इन गज़लों में हृदय की धड़कनों को झंकृत करने की क्षमता है । उनकी गज़लों में विषय की नवीनता, कला की चुस्ती, शब्दों और मुहावरों की ताज़गी एवं संगीत की सरसता का सुन्दर समावेश हुआ है । `हुस्न व इश्क` की अभिव्यंजना विविध प्रकार से उनके काव्य में हुई है । श्री `आज़ाद` ने लिखा है - `हब्बाखातून ने कश्मीरी गज़ल का कालिब ( सांचा ) ढाला । मीरशाहबादी और मिसेज़ भवानीदास ( अरिणिमाल ) ने उसमें नवीन प्राण डाल दिए । कई अन्य कवियों ने उसका पालनपोषण किया, लेकिन इसके भोजन में कुछ ऐसे तत्वों को मिला दिया जो इसके स्वास्थ्य एवं स्वभाव के अनुकूल न थे । `महजूर` ने अपनी कला से पुन: इसे प्रतिष्ठित पद पर पहुँचा दिया ।`[३]

`महजूर` एक सफल गीतकार भी थे । किसी परिस्थिति, किसी भाव, किसी प्राण सम्पन्न विचार, किसी रूप व्यापार पर कुछ ऐसी गेय पंक्तियाँ जो अपने में पूर्ण और कवि के व्यक्तित्व में सनी रहती हैं, गीत कहलाती हैं । उनका प्रथम और मूल तत्व संगीत है ।`[४]` गीत में बाह्य जीवन की अपेक्षा आभ्यंतर

---

१. क० म० १, पृष्ठ ११ ।

२. क० म० २, पृष्ठ ७ ।

३. `कश्मीरी भाषा एवं काव्य` - `आज़ाद` , भाग ३, पृ० २३७ ।

४. `साहित्य तरंग` - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृष्ठ १२५ ।

अनुभूतियों को प्राथमिकता दी जाती है। श्री गुलाबराय ने लिखा है – 'इसमें निजीपन के साथ रागात्मकता रहती है। यह रागात्मकता आत्म-निवेदन के रूप में प्रकट होती है। रागात्मकता में तीव्रता बनाए रखने के लिए उसका अपेक्षाकृत छोटा होना आवश्यक है। आकार की इस संदिग्धता के साथ भाव की एकता और अन्विति लगी रहती है।'[१] अत: गीत में निजीपन, रागात्मकता, और अनुभूति का प्राधान्य सर्वत्र परिलक्षित होता है। श्री 'अवस्थी' ने लिखा है :-

'अनुभूतियों का संग्रहालय जब इतना पूर्ण हो जाता है कि वह कवि में अट नहीं पाता तो वह गीतों में छलक पड़ता है। अनुभूतियों की यह कोष-वृद्धि आयु के उतार के साथ ही सम्भव है। अस्त्व गीतों की सृष्टि भी कवि के अन्तिम युग की देन होती है।'[२]

कश्मीरी साहित्य में गीति-काव्य का आरम्भिक रूप हमें हब्बाखातुन और अरणिमाल के काव्य में मिलता है यद्यपि लल्लेश्वरी के 'वाक' भी संगीतमय हैं।[३]

कश्मीरी गीति-काव्य में 'महजूर' का स्थान उल्लेखनीय है। 'लोल गीत' (जो कि कश्मीरी गीति-काव्य की एक विशेष विधा है) के समान ही उनके गीतों में प्रेम-तत्व की प्रधानता है, विरह की आकुलता है, निश्छल हृदय के

---

१. 'काव्य के रूप' - 'गुलाबराय' - (संशोधित संस्करण १९६४), पृ० १०९।

२. 'साहित्य तरंग' - 'अवस्थी', पृ० १२६।

३. 'The lyrical trend which was already at work in the utterances of Lal Ded blossomed forth into the passionate - plants and hankerings of Habba Khateen and Arinmal.'
'Kashmir Literature' - P.N. Pushp - Page 115.

मार्मिक उद्‌गार हैं और लोक-संगीत का सुन्दर सम्मिश्रण है।[१] फूलों के मतवाले साजन के प्रति विरहणी का विलाप पाषाण-हृदय को भी द्रवित कर देता है–

"काश ! तुम आ जाते और मैं अपनी करुण कथा सुनाती । मैं अपना दग्ध-वक्ष तुझे दिखाता । फूलों के मतवाले साजन ! क्या तुम तब आओगे जब मैं मुर्झा जाऊँगी ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५६२)

'कौए' के द्वारा प्रिय तक अपना सन्देश पहुँचाना चाहती है, वह उससे कहती है :-

" हे काक ! क्या तुम निर्दयी बालम तक मेरा सन्देश ले जाओगे ? उससे यह कहना कि तनिक बीमार को देखने आए । आखिर हमसे इतनी दुश्मनी क्यों?"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५६३)

'महजूर' ने प्रेम-गीत, व्यंग्य-गीत, वीर-गीत, उपालम्भ-गीत एवं सम्बोधन-गीत लिखे हैं, जिनमें आत्म-निवेदन की कोमलता, मार्मिकता और

---

१. 'In his songs he can catch the melody of the earlier 'lo[illegible]yric of the sixteenth and the seventeeth centuries, but there is a singing quality and a rhythmic litt in him which was a kin to and perhaps inspired by the popular Hindustani 'geet' and Song of the early decades of this century'.
'Kashmir' - October 1956 - 'Modern Period of Kashmir literature' - By J.L. Kaul, Page - 230.

२. कं० म० १, पृष्ठ ६ ।
३. वही , पृष्ठ १४ ।

संगीतमयता प्रमुख रूप से मिलती है। उनके प्रणय-गीतों में मानव-हृदय की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। प्रत्येक गीत अपनी संक्षिप्तता, रागात्मकता और भाव - प्रवणता के कारण अपने में बेजोड़ है। गीति-काव्य-कोष में उनका योगदान प्रशंसनीय है।[१] उनके गीतों में माधुर्य-गुण सर्वत्र वर्तमान है। `पोशे मति जानानो` `महजूर` का सुन्दर गीत है जिसमें प्रियतमा साजन के चले जाने पर अपने भविष्य के विषय में सोचकर खिन्न हो उठती है :-

" छिप-छिप के तुम चले गए। फूलों के मतवालेमेरे साजन ! जादूगर ! तुम कहाँ जा रहे हो, वहीं रुको। पहले मेरा कोई प्रबन्ध कर लो। फूलों के मतवाले साजन।"[२]

`निशात बाग के गुलाब` , (बागि निशान के गुलो) `महजूर` का एक और प्रसिद्ध गीत है जिसमें फूलों का स्वागत कवि ने विविध प्रकार से किया है और फूलों के खिलने पर अपनी प्रसन्नता को अभिव्यक्त किया है :-

"निशात बाग के गुलाब। इठलाते हुए आओ। हँसते हुये शीघ्र आ जाओ और मोती बिखेरते हुये आओ।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ५६५)

गीतों के द्वारा `महजूर` ने मानव-हृदय की सुप्त भावनाओं को जागृत किया। उनकी मार्मिक उक्तियाँ मर्मस्थल को स्पर्श करती हैं। मानव हृदय की

---

१. 'Kashmiri Poetry reached a high water mark in the lyrics of Mahjoor'.
'Struggle for Freedom in Kashmir' P.N. Bazaz, Page -298.

२. क० म० १, पृष्ठ ५।

३. वही ३, पृ० ३ ।

भावनाओं और अनुभूतियों को कवि ने विभिन्न रंगों में चित्रित किया है। सूक्ष्म-शब्द-चित्रों के द्वारा कवि ने भाव-तरंगों के अद्भुत सौन्दर्य को अभिव्यक्त किया। ये भाव-लहरियाँ उसके हृदय में उमड़ रही थीं। 'महजूर' ने सुन्दर राष्ट्र-गीत भी लिखे हैं, जिनसे उनके अपार देश-प्रेम का परिचय मिलता है। विदेशियों के वैभवशाली जीवन के साथ स्वदेशियों के विपन्न-जीवन की तुलना उन्होंने अपने कई गीतों में की। एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

"स्वदेशीजन यही अभिलाषा लेकर मर जाते हैं और विदेशी इस उपवन के अपूर्व सौन्दर्य से लाभान्वित होते हैं। उनका हृदय प्रसन्न हो जाता है और वे यहाँ के नदी-नालों में अपने शरीर को नहलाते हैं।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५६७)

'महजूर' ने विदेशी-शासन-अधिकारियों को पशु माना है, जिन्होंने अपने घृणित कुकर्मों से स्वयं अपने माथे पर काला धब्बा लगा दिया :-

"चुपचाप पशु हमारे उपवन में प्रविष्ट हुए और चारों ओर साम्प्रदायिक भेद-भाव की फूट डाल दी। हम आपस में ही लड़ते रहे और उन्होंने उपवन के पुष्पों को नष्ट करना आरम्भ कर दिया।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५६८)

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'महजूर' एक सफल गीतकार एवं गज़लगो थे। उनके गीतों में माधुर्य और लय का विचित्र संयोग है और उनकी गज़लों में कलात्मक परिपक्वता के दर्शन होते हैं।

---

१. प० म० २, पृष्ठ ५।

२. वही , पृष्ठ ११।

काव्य भाषा :

कश्मीरी भाषा को साहित्यिक रूप देने में 'महजूर' का योगदान प्रशंसनीय है। अपनी पैनी दृष्टि, विलक्षण बुद्धि एवं असाधारण प्रतिभा से उन्होंने कश्मीरी भाषा में नवीन प्राण फूँक दिये। कश्मीरी भाषा को फारसी के दलदल से निकाल कर लोक-सामान्य के धरातल पर ले आए। उन्होंने अपनी रचनाओं में सरल, सरस एवं मधुर भाषा का प्रयोग किया है। श्रेष्ठ कवियों के इस दृष्टिकोण को 'महजूर' ने अपनाया था कि कवि की भाषा जनसाधारण की भाषा होनी चाहिए।[१] 'महजूर' जन-कवि थे, अतः जन-मानस उनके काव्य में प्रतिबिम्बित है। अपने विचारों एवं भावों के साथ जन-हृदय का तादात्म्य कराने में 'महजूर' सिद्धहस्त थे। जन-रुचि के अनुरूप उन्होंने अपनी लेखनी चलाई। प्राचीन-काल में (१४वीं शताब्दी तक) कश्मीरी भाषा पर संस्कृत का अत्यधिक प्रभाव था। यह भाषा उस समय तक अपनी जीवन-श्वास संस्कृत से ही प्राप्त कर रही थी। प्रदेश में जब मुस्लिम प्रभुत्व हुआ तो संस्कृत का स्थान फारसी ने ले लिया और १६वीं शताब्दी तक फारसी का एक छत्रराज इस भाषा पर था। परिणामस्वरूप कश्मीरी भाषा को स्वतंत्र रूप से विकसित होने का अवसर ही नहीं मिला। 'महजूर' ने दासता की इन ज़ंजीरों को तोड़ने का प्रयत्न किया और स्वतंत्र रूप से सुविधा के अनुसार फारसी एवं संस्कृत से शब्द ग्रहण करने लगे और साथ ही अपनी भाषा के शब्दों को भी

---

१. 'महजूर' ने वर्डस्वर्थ के इस दृष्टिकोण को अपनाया था कि कवि को वही भाषा प्रयोग में लानी चाहिए जिसे अधिक से अधिक लोग समझ सकें।'

- 'तामीर' - महजूर' - अंक - 'कश्मीरी भाषा का अवामी शायिर' - श्रीनिवास लाहोटी, पृ० २१।

सहर्ष अपनाया । आरम्भ में उनकी भाषा पर फारसी का अत्यधिक प्रभाव था क्योंकि स्वयं उन्होंने भी आरम्भ में फारसी में ही रचनाएँ लिखीं थीं , परन्तु दासता का यह मोह उनमें अधिक देर तक न रह सका और एक समय ऐसा आया जब वे शुद्ध कश्मीरी भाषा में रचनाएँ लिखने लगे । उनकी भाषा में फारसी और संस्कृत के शब्द एक साथ घुल मिल गए हैं । यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि `महजूर` ने अन्य भाषाओं के शब्दों को नहीं अपनाया । वे विदेशी भाषाओं तथा संस्कृत से सहर्ष शब्द लेते रहे परन्तु उन्होंने कहीं अंधानुकरण नहीं किया है । श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है :-

`मुस्लिम-काल में कश्मीरी भाषा भी फारसी लिपि में ही लिखी जाने लगी । ग्रियर्सन और दूसरे विद्वानों का मत है कि कश्मीरी-साहित्य की शैली में दो प्रवृत्तियाँ चलने लगी हैं । पण्डितों की कश्मीरी अधिक संस्कृत गर्भित होने लगी और मुसलमानों की कश्मीरी अधिक फारसी गर्भित होने लगी । परन्तु लेखक का स्वयं अनुमान है कि शैलियों का यह भेद अधिक गहरा नहीं है , क्योंकि साधारण कश्मीरी भाषा में आजकल यदि फारसी-व्युत्पत्ति के शब्दों की बहुलता है, तो साथ ही संस्कृत-व्युत्पत्ति के शब्द भी कम नहीं हैं ।[१]` `महजूर` के काव्य में जहाँ एक ओर फारसी, अरबी एवं उर्दू शब्दों की प्रचुरता है,वहाँ दूसरी ओर संस्कृत और हिन्दी शब्दों की भी कमी नहीं है । परन्तु यह तथ्य दोहराया जा रहा है कि उन्होंने विदेशी एवं प्राचीन स्वदेशी भाषाओं का अन्धानुकरण एवं दासता स्वीकार नहीं की । उन्होंने चुन-चुन कर विदेशी शब्दों को नहीं अपनाया । पाण्डित्य-प्रदर्शन का मोह उनमें नहीं था । अपितु युग की सामान्य प्रवृत्ति से वे प्रभावित हुए थे और युग - प्रभाव को उन्होंने

---

१. `कश्मीर : देश व संस्कृति` - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १४३ ।

सहर्ष ग्रहण किया था।[१] फारसी, अरबी एवं उर्दू शब्दों का प्रयोग 'महजूर' के काव्य में दृष्टव्य है :-

(१) "'महजूर' तुम्हारी चाह में तुम्हारे नाज़ो की ख़रीदारी कर रहा है। (अर्थात् तुम्हारे इठलाने से ही प्यार करता।) मेरे बचपन के साथी! अब वादा पूरा करो। सुन्दर मुख वाले! अब दूर मत होओ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२४)

(२) "'महजूर' अपने बेवफा और बाज़ीगर दोस्त को चारों ओर ढूँढ रहा है।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२५)

(३) "मैं सीधी-सादी थी, तुम्हारे वादे को लेकर मैंने उलफत का सौदा किया। मैंने सब कुछ राज़ रखा परन्तु बाज़ी हार गई और तुम मुझे घाटे में डाल कर चले गए।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२६)

---

१. "The present day Kashmiri literature is essentially in the spoken dialects of the people, which has had its roots planted deep in the fertile soil of the ancient past and which was enriched through the centuries by assimilation of all that was best in Sanskrit, Persian and Urdu classic literature".
'Literacy heritage' - Kaumudi - Page 80.

२. क० म० १, पृष्ठ ४।

३. वही , पृष्ठ ६।

४. वही , पृष्ठ १०।

(४) "तुम यारों के साथ ऐश कर रहे हो और मैं तन्हा (अकेले) ख़ुने-दिल बहा रही हूँ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ४२७)

(५) "मैंने बन्दूकों और तोपों के आगे अपना सीना तान दिया परन्तु तुम्हें मेरी यह जाँ-फिशानी याद नहीं रही। क्या पता, दुश्मनों ने तुमसे मेरे बारे में क्या कहा है, तुम्हारे दिल में बदगुमानी पैदा कर दी है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२८)।

'महजूर' ने यथासमय आवश्यकता अनुसार अरबी शब्दों का प्रयोग भी किया है। इसके अतिरिक्त माशोक, दिलबर, रफीक, संगदिल, बेवफा, माहरोह, हसीन, पाकदामन, सरक़द, दुर, मस्तूर, फिदा, देवाना, बेसबर, जुल्फ, काकल, सोम्बुल, गुफतार, चाल, दीदार, दरदसोज़, वसल, शराब, मजबूर आदि अनेक विदेशी शब्दों का 'महजूर' ने अपनी रचनाओं में खुलकर प्रयोग किया है। अरबी का एक उदाहरण देखिए :-

"यार जब मैदानों में घूमने के लिये चला गया तो फूलों ने आनन्-फानन् रंग पकड़ लिया।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४२६)

संस्कृत और हिन्दी शब्दों का प्रयोग भी 'महजूर' ने अपने काव्य में बड़ी सुविधा के साथ किया है। ये शब्द अधिकांशत: तद्भव और अर्द्ध तत्सम रूपों में ही विद्यमान हैं। इन शब्दों का प्रयोग हमारे दैनिक जीवन में अधिकांशत: होता है। 'महजूर' ने इनको विकृत रूप में (जैसा कि हम संस्कृत और हिन्दी शब्दों का कश्मीरी में उच्चारण करते हैं) अपनाया परन्तु इनके मूल को पहचानना

---

१. क० म० २, पृष्ठ २।
२. क० म० ११, पृष्ठ १।
३. क० म० ४, पृष्ठ १।

अधिक कठिन नहीं । कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :-

(१) "तुम चुप-चाप चले गए, हे जोगी ! मैं तुम्हारे लिए संन्यास धारण करूँगी । मेरे फूलों के साजन ! मुझे तुम्हारी चाह ने मार डाला है।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३०)

(२) "हे कामदेव ! तुमने पत्र लिख कर उनमें मेरे लिये ताने ही अधिक लिख भेजे हैं ।"[२] (देखिए परि० २ , क्रमांक ४३१)

(३) "हे श्याम सुन्दरी ! तुम्हारे वस्त्रों में अद्भुत सादगी है ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३२)

(४) "भवसागर के इस पार आँधी को देखकर हमारी जीवन-नैया निराश हो गई है और इस तूफान में मुहब्बत ही इस नैया को पार लगाएगी।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३३)

(५) "प्रेम-रस बाँटते-२ तुझे खन्नाबल में देखा गया । ओ बिजली के समान सुन्दरी ! तनिक पूरे दर्शन तो देती जाओ ।"[५] (देखिए परि०२,क्रं० ४३४)

(६) "तनिक ठहर जाओ मेरे प्रियतम । दर्शन तो कर लेने दो ।"[६] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३५)

---

१. क० म० १ , पृष्ठ ७ ।
२. वही , पृष्ठ ११ ।
३. क० म० ३ , पृष्ठ १३ ।
४. क० म० ८ , पृष्ठ ८ ।
५. वही , पृष्ठ १० ।
६. क० म० ६ , पृष्ठ ६ ।

(७) 'सोखनाग और तोसि मैदान में मैंने स्वयं भगवान को देखा जो भक्तों को दर्शन-सुख से लाभान्वित कर रहे हैं। हमारा देश फूलों से भरी फुलवारी है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३६)

देशज तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग भी 'महजूर' की कविताओं में यत्र-तत्र मिलता है। 'बाज़ी गारस', 'फिरन' (चोला) बाज़ीगार, लेक्खितम (लिखदी), न्यंशि पत्रे (जंत्री), सात (शुभ दिन), शत्र (शत्रु), मेथिर (मित्र), शुभ्या (शोभा), आदि अनेक शब्दों का 'महजूर' ने सुविधा के साथ प्रयोग किया है। कहीं-कहीं 'महजूर' की कविताओं में मिश्रित भाषा का भी प्रयोग किया गया है - यथा -

(१) 'ओ संगदिल ! सितमगर ! क्या तनिक भी तुझे रहम नहीं आता है। मैं सुन्दरी अकारण ज़ाया हो गई हूँ। तुम प्रेम-रस लेकर शीघ्र आ जाओ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३७)

(२) 'शत्रु भी सब अप्रसन्न हैं, परियाद कर रहे हैं और मित्र भी सब परेशान हैं। क्या प्रेम-नगरी में ऐसी हुकुमरानी शोभा देती है।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३८)

अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी है :-

'फिरन छोड़ दो, सिपाही बन जाओ। मशीनगन और रफल (राइफल) उठाकर आगे बढ़ो।'[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ४३६)

---

१. प० म० १, पृष्ठ १५।
२. क० म० ३, पृष्ठ ४।
३. क० म० १५, पृष्ठ २।
४. प० म० ६, पृष्ठ ६।

शताब्दियों तक मुसलमानों का राज्य कश्मीर में रहा है जिस कारण फारसी के अनेकों मुहावरे, कहावतें तथा शब्द कश्मीरी भाषा में घुल-मिल गये हैं। उन्नीसवीं शताब्दी तक फारसी भाषा का प्रभुत्व देश में रहा जिस कारण आज भी कश्मीरी फारसी-प्रधान भाषा है। परन्तु 'महजूर' ने इस दिशा में समन्वय बुद्धि से काम लिया। वे उस समय देश के महान् समन्वयकारी प्रतिभाशील कवि थे, जिन्होंने विभिन्न भाषाओं, धर्मों, साहित्यिक विचार-धाराओं एवं मतों का समन्वय अपने काव्य में किया। शब्द-चित्र प्रस्तुत करने में 'महजूर' सिद्धहस्त थे। इस दिशा में उनका निजी अनुभव एवं ज्ञान सहायक सिद्ध हुआ। चित्रात्मकता का गुण उनके काव्य में मार्मिक भाषा के ही कारण है। काव्य की दो पंक्तियों द्वारा कवि ने कितना सजीव चित्र प्रस्तुत किया है :-

"मेरे अफ्ताब ! (सूर्य) तुम बादलों के नीचे छिप गए क्योंकि मुझसे रूठ गए और मैं बिजली के समान प्रेम-अग्नि में जलकर भस्म हो गई।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४४०)

किसान-बालिका का चित्र भी मार्मिक एवं सजीव है :-

"आभूषणों के बदले तुम्हारे शरीर पर फूल सज रहे हैं। किस कारीगर ने इनको इतनी कलात्मकता से लगाया है। मैं इस कारीगरी पर कुरबान हो जाऊँ। हे किसान बालिका ! तुम अतीव सुन्दरी हो।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ४४१)

'डल' का चित्र बसन्त में देखते ही बनता है :-

---

१. क० म० २, पृष्ठ १६।

२. क० म० ३, पृष्ठ १५।

"`डल` पूर्ण-रूपेण खिल उठा है क्योंकि पम्पोश (कमल) खिल उठे हैं । मैं ज़ी ठियारि में नाव ठहराऊँगी तुम गुपकार में दर्शन देते जाओ ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४४२)

कामदेव रूपी प्रियतम के दर्शन मात्र से प्रेमिका की दशा का चित्र भी बड़ा मार्मिक है :-

"कामदेव सजधज के गर्व के साथ निकल रहा है उसे देखकर प्रेमी-जन के होश उड़ जाते हैं, अक्ल जवाब देती है और वे अपना हृदय खो बैठते हैं ।"[२]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४४३)

श्री अमीन `कामिल` ने लिखा है :-

"महजूर के द्वारा ही कश्मीरी भाषा को एक नवीन दिशा प्रदान हुई है । जिससे हम पर अदब के दरवाजे खुल गये हैं जो परतंत्रता के कारण हमारे लिये सदा के लिये बन्द थे ।"[३]

छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा ऐसी प्रभावोत्पादक कविताओं का ताना-बाना बुनते हैं कि पाठक पढ़कर दंग रह जाते हैं । यह शब्द खिलवाड़ नहीं अपितु उसकी गहरी-पैठ एवं सूक्ष्म अवलोकिनी शक्ति का ही परिणाम है कि कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक भावाभिव्यक्ति मिलती है । प्रेयसी प्रियतम से अपने घर रहने के लिये आग्रह करती है परन्तु उस निष्ठुर की निष्ठुरता देखते ही बनती है :-

---

१. क० म० ६, पृष्ठ ७ ।
२. क० म० ३, पृष्ठ ७ ।
३. `तामीर` - `महजूर अंक` - `महजूर की कविता एवं व्यक्तित्व` - अमीन `कामिल` , पृष्ठ २५ ।

"आज मेरे पास रहो, मेरे प्रिय ! कहीं तुम्हारी अनुपस्थिति में प्यार के उपवन में पतझड़ के ज़ालिम झोंके न आ जाये । सौन्दर्य युक्त प्रिय ! तनिक मेरा कहना मान ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४४४)

निस्सन्देह 'महजूर' का शब्द-चयन बड़ा सजीव एवं मार्मिक है । छोटी-छोटी काव्य-पंक्तियों एवं सीधे-सादे शब्दों द्वारा 'महजूर' अपनी हृदय-स्थित भावनाओं को अभिव्यक्त करने में सफल हुये हैं । शब्दों से उनका अर्थ स्वत: झलकता है । उनकी भाषा जन-रुचि के अनुकूल थी, यही कारण है कि उनकी रचनाओं का स्वागत प्रदेश के कोने-कोने में हुआ, वातावरण उनकी कविताओं से गूँज उठा । जनता के दुख में दुखी और जनता के सुख में सुखी 'महजूर' सदा जन-मानस का प्रतिनिधित्व करते रहे । उनकी भाषा स्वच्छ एवं प्रांजल थी ।

'महजूर' ने यदाकदा अपनी रचनाओं में ध्वनि-चित्र भी उपस्थित किये हैं । ये चित्र सजीव, सशक्त एवं मार्मिक हैं :-

"उपवनों, नदियों, झरनों, छोटी नदियों एवं नालों के द्वारा बसन्त ने अपने आगमन की सूचना दी । हमारा देश 'गुलशन' है ।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ४४६)

उपवनों में भ्रमरों की गुंजार, नदियों की कल-कल तथा झरनों की झर-झर ध्वनि ने 'महजूर' को वसन्तागमन के स्वागतार्थ गीत लिखने के लिये बाध्य किया । मादक-ध्वनियों ने मादक-वातावरण की सृष्टि की और कविता के लिये, उन्मादावस्था का सृजन । 'महजूर' की कविताओं में प्रत्येक शब्द सोद्देश्य आया है । परिस्थिति एवं वातावरण के अनुकूल उनका शब्द-चयन मार्मिक है । उन्होंने ठेठ कश्मीरी एवं ग्रामीण शब्दों का भी प्रयोग किया है । इन शब्दों का भी उनके काव्य में अपना एक अलग स्थान है । कश्मीरी शब्द-कोश 'महजूर' के द्वारा समृद्ध हुआ है । अपनी कविताओं में 'महजूर' ने सुन्दर मुहावरों का

---

१. क० म० ७, पृष्ठ ३-४ ।
२. प० म० १, पृष्ठ १२ ।

प्रयोग किया है। भावाभिव्यक्ति एवं प्रभावोत्पादकता की दृष्टि से इनका महत्व अमूल्य है। मुहावरों, लोकोक्तियों एवं कहावतों के द्वारा `महजूर` की भाषा अत्यधिक सशक्त एवं सबल बन पड़ी है :-

"मैं अपने प्रिय की बातें अच्छी तरह याद रखती हूँ। कभी मैं अपने दो होठों से भी नहीं कहती हूँ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ४४७)

(दो होठों से भी न कहना - यह कश्मीरी भाषा का एक मुहावरा है।)

`प्रेम के बाज़ार में मैं अपने लाल (जवाहिर) का मूल्य परखती हूँ, मैं प्रत्येक दुकान पर परखाने के लिये जाती हूँ क्योंकि इसमें बाल पड़ गया है अत: यह मूल्य नहीं पाता।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ४४८)

(लाल मोलिनावान (जवाहर परखना), बाल पड़ना, मूल्य नपाना, (ब्रूम गंछुनि , मोलि छुनि पावान) कश्मीरी भाषा में प्रचलित मुहावरे हैं जिनका प्रयोग `महजूर` ने प्रथम बार अपनी रचनाओं में किया है।

`महजूर` की भाषा में एक अद्भुत गाम्भीर्य है। भाषा भावों के अनुरूप है। विचारों की अनुगामिनी है। उसमें क्लिष्टता नहीं, दुरूहता नहीं और न अस्पष्टता का ही दोष है। उनकी प्रसिद्ध काव्य-पंक्तियाँ कश्मीरी भाषा में प्रसिद्ध उक्तियाँ बन गई हैं जिनका व्यवहार सामान्य जीवन में और बोलचाल की भाषा में किया जाता है। इनका प्रयोग कश्मीरी भाषा में सूक्तियों के रूप में भी किया जाता है :-

---

१. क० म० ४, पृष्ठ ५।

२. क० म० ४ ,पृष्ठ ६।

(१) 'क्यों जी ऐसी भी क्या नाराज़गी है।'[१] (देखिए परि०२ , क्रमांक ४४६)

(२) ' मेरी बारी आई तो इतनी निर्दयता।'[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ४५०)

(३) ' यदि अपना हृदय प्रसन्न है तो सम्पूर्ण जगत प्रसन्न दीख पड़ेगा।'[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५१)

(४) 'काश ! मेरा शुभ-चिन्तक आता, मैं उसके सम्मुख अपनी व्यथा का वर्णन करती।'[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५२)

(५) ' जिसे प्रिय विरह की बीमारी हो, उसे शबनम की शरबत पिलानी चाहिए।'[५] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५३)

(६) 'दिल खोलकर कहूँ, साफ कहूँ, साफ-साफ कहूँ।'[६] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५४)

(७) 'गुल व बुलबुल की आपसी बात-चीत को माली क्या समझे ?'[७] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५५)

---

१. क० म० १ , पृ० १४ ।
२. क० म० २ , पृ० ३ ।
३. क० म० ३ , पृ० २ ।
४. क० म० ३ , पृ० ५ ।
५. क० म० ३ , पृ० ११ ।
६. क० म० ४ , पृ० १३ ।
७. 'कश्मीरी भाषा एवं साहित्य', पृ० २३५ । 'आज़ाद' — भाग ३

यह सत्य है कि `महजूर` पर रसूलमीर और हब्बाखातून का प्रभाव पड़ा परन्तु `महजूर` की भाषा इन दोनों से सशक्त, सरल, स्वच्छ एवं देशीय है। उसमें एक विचित्र ठेठपन है, उसमें निजी जीवन की मस्ती है, अलबेलापन है।[१] उनकी शैली सरल, सीधी एवं बोधगम्य थी। उनकी भाषा में सौष्ठव अधिक है। खरी भाषा का प्रयोग उन्होंने अपनी रचनाओं में किया है। भाषा माधुर्य-गुण सम्पन्न है। आपकी आवाज़ जनता के धड़कते हुये हृदयों की आवाज़ है। विभिन्न रंगों के चित्र उन्होंने शब्दों के द्वारा उतारे हैं। उन्होंने एक अर्द्धमृत भाषा में नव-जीवन का संचार किया। वे भाषा के पण्डित एवं मर्मज्ञ थे। भाषा के क्षेत्र में उनकी देन महान है।

संगीतात्मकता :

कश्मीर की `अपूर्व सौन्दर्य-छटा में संगीत, कविता और कला की माधुरी यों सम्मिश्रित है जैसे शिव और शक्ति, भाव और शब्द, आकाश और उसकी नीलिमा एक स्वर में लय-बद्ध हो गए हों।[२] काव्य और संगीत का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। `महजूर` ने अपनी रचनाओं में इस सम्बन्ध को अन्त तक निभाया है। उनकी कोई भी गज़ल ऐसी नहीं जिसमें संगीत की लय न हो।

---

१. 'Our greatest homage must gok to our contemporary poets who have imparted a new life to our language and litt. Among those the greatest figures are Azad and Mahjoor.'
'Key to Kashmir' - 'Some Aspects of Kashmir Poetry' - Page 169.

२. योजना - `सांस्कृतिक विशेषांक` जनवरी १९६० , `कश्मीर की आदि कवियित्री` - महेन्द्र रेणा, पृ० १२७।

संगीत ने उनके काव्य को अधिक लोक-प्रिय एवं लोक-ग्राह्य बना दिया है, यही कारण है कि छात्र पाठशाला जाते समय, श्रमिक काम करते समय, किसान अपने खेतों में हल चलाते एवं अनाज काटते समय, युवतियाँ घास चुनते समय तथा मल्लाह नाव चलाते समय या मछलियाँ पकड़ते समय उनके गीतों को गाते हैं, गुनगुनाते हैं। तथा झूमते हैं। उन्होंने इस दिशा में भी समन्वय बुद्धि से काम लिया है। उन पर फारसी-संगीत का काफी प्रभाव पड़ा है परन्तु इसके साथ उन्होंने भारतीय-संगीत एवं लोक-संगीत को भी अपनाया है। कई लोकप्रिय गज़लों के साथ उन्होंने धुन का संकेत भी किया है। जैसे — `वलोहा बागबानो।` कविता जब प्रथम बार समाचार-पत्र में प्रकाशित हुई तो साथ ही शीर्षक के नीचे यह लिखा था— " बतरज़ अगर देनी थी हमको हूरे जन्नत तो यहाँ देते।" इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामाफोन-रिकार्ड सुनकर ही उनका ध्यान इस ओर गया होगा। इसी तरह `बुलबुल लांगित अछू लोलु बागस छावान लोलुक बहार।` की तरज़ हिन्दी के प्रसिद्ध फिल्मी गीत — `प्रेमनगर बनाऊँगी घर में तज के सब संसार`।

इसी प्रकार `गुलशन वतन छु सोनुइ, सोनुइ वतन छु गुलशन`। `सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा`। की तरज़ पर लिखा गया है।[१] हिन्दु-स्तानी-संगीत की अनेक राग-रागिनियों को उन्होंने कश्मीरी-कविता के लिये अपनाया, यही कारण है कि वे समस्त देश में सर्वप्रिय कवि बन गए और उनकी रचनायें यथेष्ट सम्मान पाने लगीं।[२] श्री अब्दुल-अहद `आज़ाद` ने लिखा है-

---

१. `महजूर` - `पुष्प` , पृ० १६।

२. 'Being musical and dealing with the emotions and sentiments of ordinary people these became popular. In a few years the counteryside, echoed and rechoed with Mahjur's lyrics'. 'Struggle for freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz .. Page 295.

"आपको भी संगीत एवं गज़ल में प्यार की मुँह बोलती तस्वीरें खींचने से विशेष रुचि है।"[१] संगीत एवं काव्य का सम्बन्ध निकट से देखने का प्रयत्न 'महजूर' ने किया। जिसके परिणाम-स्वरूप उसकी लोकप्रियता में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। संगीत के द्वारा ही उन्होंने कश्मीरी काव्य की प्राचीन-परम्परा को एक नवीन जीवन प्रदान किया। संगीत तत्व के समावेश से ही उनकी गज़लों में एक अद्भुत मिठास एवं सौन्दर्य आ गया है :-

" मेरा प्रिय शालीमार में कहीं अपने मित्रों के साथ घूम तो नहीं रहा। कहीं वह झरनों एवं सब्ज़ज़ारों को अपना सौन्दर्य पूर्ण रूप तो नहीं दिखा रहा। मैं विस्तृत रूप से अपनी दशा का वर्णन करती, परन्तु हृदय में भय है, क्योंकि वह बहाने-बाज़ यूँ ही कोई न कोई बहाना ढूँढ़ता है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५६)

'महजूर' के गीतों में संगीत का अद्भुत संयोग हुआ है। यह गीत-मानव-हृदय की सूक्ष्म तारों को छू लेते हैं, इनमें मर्मभेदनी शक्ति है और शाश्वत प्रभाव का गुण। यह गीत 'महजूर' के हृदय की सजीव धड़कनें हैं :-

"तुम रूठ-रूठ कर चले जाते हो, मैं तुम्हारा विरह सहन नहीं कर सकूँगी। मेरे चिल्लाने का तुम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अब तुम्हारे मिलने का क्या उपाय है। तनिक यह बताओ कि तुम मेरे कैसे बन सकोगे। मैं तुम्हारा विरह-सहन नहीं कर सकूँगी।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५७)

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार ने लिखा है – 'संगीत दो हृदयों को,

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - 'आज़ाद' - भाग ३, पृ० २२४।

२. क० म० ६, पृष्ठ ११।

३. क० म० ८, पृष्ठ १५।

दो अन्त: करणों को मिलाता है। ठुमरी कश्मीर में लोकप्रिय नहीं हुई, किन्तु गज़ल ने वहाँ अपना घर बना लिया। कश्मीर में संगीत, लोक-कथाओं और अन्य अनेक कलाओं की रक्षा भाटों - (भांडों) ने उसी प्रकार की जिस प्रकार राजस्थान में चारणों ने की। भाट (भांड) कश्मीर के गाँव-गाँव में जाते हैं, और संगीत, विनोदपूर्ण-गीतों तथा गीत-कथाओं, के माध्यम से जनता का मनोरंजन करते हैं।[१] लोक-संगीत का भी `महजूर` के काव्य पर काफी प्रभाव पड़ा है। उन्होंने लोक-गीतों के प्रभाव को सहर्ष गृहण किया और प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में लोक-हृदयों को अभिव्यक्ति दी। कश्मीरी-संगीत को `महजूर` ने अपनी रचनाओं द्वारा लोकधुनों के आधार पर गौरवान्वित किया। इस पर फारसी एवं भारतीय-संगीत का प्रभाव पड़ा और दोनों के संयोग से इसमें मार्मिकता आ गई। लोक-गीतों का प्रभाव `महजूर` की अनेक रचनाओं पर पड़ा है। ये रचनायें लोक-रंग में रंगी हुई सरल-जन-हृदय को अपनी ओर बरबस आकर्षित करती हैं।[२] `छक्करी` लोक-गीत का प्रभाव उनकी कई रचनाओं में परिलक्षित होता है :-

---

१. `योजना` - अक्तूबर - नवम्बर - १९६० - `कश्मीर और भारत के मध्य में संगीत-सम्बन्ध` - `अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार, पृ० ८।

२. 'The music of Kashmir has come to be characterized by a peculiarly sweet and melodious quality..... Music in Kashmir includes classical and folk music, as well as the vocal and instrumental. Kashmiri classical music is usually called 'Soofiana-Kalam'. This classical music, like the Indian classical, is based on the mixed Indo-Persian style .. But the most popular and the most widely played music of the people of Kashmir is the Chakri a kind of folk music and folk-dance combined together.'

'Literary Heritage' - Kaumudi', Page 104, 105, 109.

"तुम छिप-छिप कर चले गये, फूलों के मतवाले साजन ! तनिक ठहर जाओ, मेरे साजन ! तुम छिप-छिप चले गए ।"[१] (देखिए परि०२,क्र०४५८)

'बचनगमा' लोकगीतों का प्रभाव भी 'महजूर' की कई रचनाओं पर पड़ा है । बचनगमा और छक्करी में अब सूक्ष्म अन्तर आ गया है । छक्करी में नृत्य लुप्त हो रहा है परन्तु बचनगमा में उसका स्थान सर्वोपरि है । इनमें नर्तक विभिन्न अंग-भंगिमाओं के द्वारा भावाभिव्यक्ति करता है और साथ ही गीत या ग़ज़ल भी गाता जाता है । 'महजूर' की अनेक रचनाओं को आज कश्मीरी नर्तक अपनी नृत्य प्रदर्शिनियों के साथ गाते हैं :-

'मेरे दिलबर ! (प्रियतम) आज हमारे घर में ठहर जाओ, सुन्दर मुख वाले ! आज मेरी बात सुनलो, मैंने आज तुम्हारे लिये हर चीज़ तैय्यार रखी है । प्याले भर दिये हैं । शाला सजा दी है । मेरे प्रिय ! मेरी बात मान लो ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४५६)

'रोफ' - गीत हमारे लोकगीतों का प्रसिद्ध रूप है और इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे केवल स्त्रियाँ नृत्य के साथ गाती हैं । 'महजूर' के अनेक गीतों को रोफ के रूप में गाया जाता है क्योंकि जन-सामान्य की हृदय-स्थित भावनाओं की बड़ी ही सुन्दर अभिव्यक्ति इनमें मिलती है :-

"हे कामदेव ! मुझे तुम्हारी चाह ने तो मार ही डाला है । मेरा कुछ उपाय तो सोचो , मैं तुम्हारा पूरा सत्कार करूँगी, तनिक आ तो जाओ । मैं तुझे अपनी दो आँखों में बिठलाऊँगी । क्यों रूठ गये और शनैः-शनैः दूर-दूर रहने लगे । तुम दूर रहने लगे और मेरा शरीर (विरहाग्नि से) भस्म

---

१. क० म० १ , पृष्ठ ५ ।

२. क० म० ७ , पृष्ठ ३ ।

हो रहा है । तुम्हारा दिल कहीं और रम गया है । मेरे प्रिय ! तनिक आओ, मैं तुम्हारा पूरा सत्कार करूँगी ।"[१] (देखिए परि० २ , क्रमांक ४६०)

श्री रहमान `राही` ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया — " `महजूर` तक बल्कि उनके पश्चात् भी कुछ समय तक कश्मीरी-काव्य अधिकतर प्रकाशित नहीं हुआ था और नहीं इस उद्देश्य से लिखा जाता था । यह `प्रिंटिड पेज` (Printed-Page) की शायरी नहीं थी अपितु गायी जाने वाली चीज़ थी । अत: उस समय जो चीज़ लिखी जाती थी उसके लिये भी यह आवश्यक था कि वह गायी भी जा सके , इसका एक परिणाम यह निकला कि कश्मीरी-काव्य गीति-पद्धति पर अधिक लिखा गया । गीति-काव्य का प्राचीन रूप लोक-गीतों में मिलता है। `महजूर` की अधिकांश कविताओं की यह विशेषता है कि उनके द्वारा लोक-गीतों का समाँ बँध जाता है । यहाँ तक कि उनकी बहुत-सी नज़्में भी गीत जैसी प्रतीत होती हैं । उनमें लोक-गीतों का सा आनन्द आता है ।"[२]

`ललनावुन` (लोरी) गीतों का प्रभाव भी उनकी रचनाओं पर पड़ा है । इन लोक-गीतों के आधार पर `महजूर` ने अनेक विप्रलम्भ-शृंगार-प्रधान रचनायें लिखी हैं । शुद्ध रूप से इन्हें लोरी-गीत नहीं कहा जा सकता है परन्तु `महजूर` के इन गीतों में लोरी का सा ही आनन्द आता है क्योंकि आधार लोरी-लोक-गीतों का ही है :-

"मैं तुझे अपनी गोद में (`गूरि`-`गूरि`) प्यार करूँगी । मोती के दाने के समान सुन्दर मेरे प्रिय ! मुझसे दूर मत हो जा । जब मुझे तेरे सौन्दर्य का ज्ञान हुआ तो मेरा हृदय पागल हो उठा और मैं पागलों की तरह तेरे पास

---

१. क० म० ८ , पृष्ठ ४ ।

२. प्रो० `राही` से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात (१-७-१९६७) ।

आ गई अब मुझसे दूर मत जाओ, मैं तुझे गोद में लेकर प्यार करूँगी ।"[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४६१)

आरम्भ में 'महजूर' ने हब्बाखातून के ही एक लोकगीत के आधार पर अपनी प्रथम कश्मीरी-कविता लिखी । लोकगीतों से ही उन्हें काव्य-सृजन की प्रेरणा मिली । विवाह के समय कश्मीर में जो गीत गाये जाते हैं उन्हें 'वनवुन' कहा जाता है । 'वनवुन' लोक-गीतों का प्रभाव भी 'महजूर' पर पड़ा था और उनकी कई रचनाओं को वनवुन के रूप में गाया जाता है । मैंने स्वयं देखा है कि मुसलमानों में जब विवाह-संस्कार होता है तो 'महजूर' की 'ग्रीसकूर' कविता को बड़े चाव से 'वनवुन' के रूप में गाया जाता है । श्री पद्मनाथ गुँजू ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया – " 'महजूर' को संगीत से बड़ा प्रेम था और संगीत उसकी नस-नस में बसा हुआ था । वे महम्मूद शहरी (उस समय का एक प्रसिद्ध गायक) के मधुर कंठ से अपनी कविताओं को जनता के सम्मुख प्रस्तुत करते थे । संगीत निस्सन्देह उनकी आत्मा में घुल-मिल गया था ।"[२] 'महजूर' ने अपनी रचनाओं के द्वारा मधुर संगीत की भी सृष्टि की । 'लो-लो' गीत - (लोल ग्यवुन) कश्मीर का प्रसिद्ध लोकगीत है । 'महजूर' ने 'ग्रीसकूरि' (किसान लड़की) के प्राकृतिक सौन्दर्य की अभिव्यक्ति करते समय तथा शृंगारिक-रचनाओं में इस लोकगीत को आधार बनाया है :-

" खेत के ऊपर तुझे आस्तीन चढ़ाए देखा । 'लो-लो' गुनगुना रही थी। अरे सुन्दर लोलरी (लोकगीतों की प्रसिद्ध नायिका) तेरी बाहें गोड़ी करते-करते थक कर चूर हो गईं । अरे किसान लड़की । इठलाने (नाज़नीन) वाली सुन्दरी ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६२)

---

१. क० म० १, पृष्ठ ३ ।
२. डा० पद्मनाथ गुँजू से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात - ३०-५-१९६५ ।
३. क० म० ३, पृष्ठ १६ ।

कश्मीर में फसल काटते समय या लवाई करते समय भी किसान मिलकर गीत गाते हैं। खेत में काम भी करते हैं और श्रम-परिहरण के लिये साथ-साथ गाते भी जाते हैं। इन लोकगीतों को `नयन्दि ति लोननिकग्यवन` कहा जाता है। `महजूर` के काव्य पर इन लोकगीतों का प्रभाव भी पड़ा है। उनके कई गीतों को आजकल किसान खेतों में काम करते समय, फसल काटते समय या कोई अन्य (सामूहिक रूप से) श्रम करते समय श्रम-परिहरण के हेतु गाते हैं। उनके गाने से वातावरण गूँज उठता है। हृदय में गुदगुदी सी होती है, वह दृश्य आह्लादक एवं संगीतमय हो उठता है :-

`क्या कूरूँ सखि, भाग्य की विडम्बना है! प्रियतम को मुझसे प्यार नहीं। मेरे यौवन-साथी को मुझसे प्यार नहीं, कितना `बेपरवाह` है - मेरे प्रति! पागल लल्ला ( लल्लेश्वरी ) जब मैं बाज़ार से निकली तो शाहहमदान ने मुझे दूर से देखा। पुरुष के सम्मुख मैं पर्दा धारण करके आई। मेरे यौवन-साथी! मेरे जीवन-साथी को मुझसे प्यार नहीं।`[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६३)

श्री मुहम्मद यूसुफ-टेंग ने लिखा है - `महजूर की एक बहुत बड़ी विशेषता है कि उन्होंने लोक-धुनों के आधार पर अपनी अधिकांश गज़लें लिखी हैं। इस प्रकार कश्मीरी-कविता और कश्मीरी-संगीत के मध्य गहरी खाई को पाटने का सरसक प्रयत्न किया। यही कारण है कि `महजूर` की रचनायें कश्मीरी जनता के हृदय-तारों को छोड़ देती है।`[२] `महजूर` एक चित्रकार थे। ध्वनि-चित्रों एवं शब्द चित्रों के द्वारा वे भावाभिव्यक्ति में सफल हुये हैं। जीवन का अधिकांश समय उन्होंने ग्रामीण-जनता के साथ व्यतीत किया। स्वयं ग्रामनिवासी थे अत: देहाती-गीतों (लोकगीतों) का प्रभाव उन पर अत्यधिक पड़ा। ये गीत

---

१. प० म० ३, पृष्ठ ५।
२. तामीर-`महजूर` - अंक - `कलामे - महजूर` - `कश्मीर-साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि में` - मुहम्मद यूसुफ- टेंग, पृ० ३४।

कश्मीरी-साहित्य की अमूल्य निधि समझी जाती है। 'महजूर' ने सदा कोमल-काव्योचित-संगीतमय शब्दों का प्रयोग किया। उनकी रचनायें संगीतमय हैं,उनकी रचनाओं में संगीत वैसे ही फूट रहा है जैसे बच्चे को देखकर माँ के स्तन से दूधकी धारा फूटती है। उनके गीत स्वाभाविक हैं, सरलता में पले हैं। संगीत उनका एक शाश्वत गुण है। धमनियों में रक्त-संचार की भाँति संगीत उनके काव्य में माधुर्य का संचार करती है। संगीत से उन्हें अनुराग था जिसकी साक्षी उनकी कलाकृतियाँ आज भी दे रही हैं और सदा देती रहेंगी।

अलंकारिकता :

अलंकारों में अलंकरण की प्रवृत्ति निहित रहती है। अभिव्यक्ति को अधिक सुन्दर बनाने के लिये 'काव्य की शोभा करने वाले धर्मों'[१] को अलंकार कहते हैं। अलंकार अभिव्यक्ति को मार्मिक बनाने के साधन हैं। अलंकार कविता का सर्वस्व नहीं है।[२] ये साधन हैं, साध्य नहीं। अलंकारों के प्रमुख दो भेद हैं – शब्दालंकार एवं अर्थालंकार। शब्दालंकारों में चमत्कार या सौन्दर्य शब्द में निहित रहता है, जब कि अर्थालंकारों में शब्द के अर्थ में मार्मिकता छिपी रहती है। 'महजूर' ने भी काव्य के इन अस्थिर धर्मों का सुन्दर उपयोग किया है। यह सत्य है कि उन्हें अलंकारों का सम्यक् ज्ञान नहीं था परन्तु कथन को मार्मिक एवं प्रभावोत्पादक ढंग से अभिव्यक्त करने की तीव्र इच्छा उनमें अवश्य थी, इसी इच्छा के परिणाम-स्वरूप उनके काव्य में अनेक अलंकारों का सहज प्रवेश हुआ है। श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है – "'महजूर' अपनी कविता में नये भाव-सौन्दर्य की सृष्टि के लिये अधिकतर उन्हीं उपमाओं और उपमानों,रूपकों और पौराणिक-कथाओं, कवि-प्रसिद्धियों और कल्पना-चित्रों का प्रयोग करते हैं,

---

१. 'काव्यशोभाकरान्धर्मानलंकारान्प्रचक्षते' - (काव्यादर्श,२,१) - दण्डी।
२. 'काव्य-प्रदीप' - पं० रामबहोरी शुक्ल, पृ० १०३।

जो श्रुति-परम्परा और अनुभव के द्वारा अपढ़, अशिक्षित-जनता के मानस में ग्राह्य हो चुकी हैं।[१] शब्द-अलंकारों में अनुप्रास उनका सर्वप्रिय अलंकार रहा है। वर्णों की एक या अनेक बार आवृति से काव्य-पंक्ति की मार्मिकता एवं सुन्दरता कश्मीरी-भाषा में देखते ही बनती है :-

(१) "मत रूठ, मुझसे मत रूठ, क्योंकि मैं विरह सहन नहीं कर सकूँगी।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६५)

(२) "कहाँ जाऊँ, सियाह सर (नारी) हूँ, कुछ पता नहीं, कोई पथ-प्रदर्शक नहीं।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६६)

(३) "यदि वह वाटिका की ओर देख लेगा, फूल नाज़ो-निसार (सर्वस्वनिछावर) करेंगे।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६७)

(४) "काश ! वह मेरा मलाल छोड़ देता और पुरानी बातों को भूल जाता।"[५] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६८)

(५) "जिसको गम् की बीमारी हो उसे (शुभि शरबत शबनमिछ) शबनम का शरबत पीना चाहिए।"[६] (देखिए परि०२, क्रमांक ४६६)

(६) "मैं (पनुन-पान) अपना-शरीर तुम्हारे दरवाजे पर मारके छोड़ दूँगी।"[७] (अर्थात् मैं तुम्हारे दरवाजे पर प्राण त्याग करूँगी) (देखिए परि०२, क्रमांक ४७०)

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८५।
२. क० म० २, पृष्ठ १४।
३. क० म० २, पृष्ठ ६।
४. क० म० ३, पृष्ठ ७।
५. क० म० ३, पृष्ठ ८।
६. क० म० २, पृष्ठ ११।
७. क० म० ४, पृष्ठ १२।

`महजूर` के काव्य में वर्णानुप्रास के उदाहरण ही मिलते हैं, शब्द-अनुप्रास (लटानुप्रास) का प्रयोग कवि महोदय ने नहीं के बराबर किया है। श्लेषालंकार का प्रयोग भी `महजूर` ने अपने काव्य में यत्र-तत्र किया है। `बुलबुल` के दो अर्थ `महजूर` ने लिये हैं - पक्षी विशेष एवं कश्मीरवासी। इसी प्रकार वॉरिल के दो अर्थ - एक पक्षी विशेष और `घातक` या `शोषक` माना जाता है। श्लेष अलंकार के द्वारा `महजूर` ने दोनों शब्दों का कलात्मकता से प्रयोग किया है :-

"बाग के निशानाबाज़ वॉरिल को नष्ट कर देंगे। ओ बुलबुल ! चिन्ता किस बात की ? अपने पर तोल। भविष्य में तेरे ही धर्म का पालन होगा। पर्वत-शिखर जग-मगा उठे हैं।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४७१)

इस प्रकार श्लेषालंकार की सहायता से `महजूर` ने अपने अभीष्ट को अभिव्यक्त किया है। `वुज़मल` कश्मीरी में बिजली को कहते हैं और इसका दूसरा अर्थ सुन्दरी भी है। इस शब्द का प्रयोग भी अलंकारिक रूप में `महजूर` ने किया है :-

"तुम्हारे इस सुन्दर और इठलाते शरीर पर यह लाल-वस्त्र किसने पहनाये। ओ बिजली ! तनिक पूरा मुखड़ा तो दिखाते जाओ।"[२] (देखिए परि०२,क्र०४७२)

भिन्न-भिन्न अर्थों में एक ही शब्द की आवृत्ति में यमक-अलंकार होता है। `महजूर के समस्त कश्मीरी-काव्य में यमक-अलंकार के बहुत कम उदाहरण मिलते हैं। `गॅरि` कश्मीरी में घर को भी कहते हैं और `गॅरि` (दो घड़ी, तीन घड़ी, चार-घड़ी) घड़ी को भी कहते हैं। विरहाकुल नायिका निष्ठुर-

---

१. प० म० ६ , पृष्ठ १३ ।

२. क० म० ८ , पृष्ठ १० ।

नायक से कहती है – "

"मैं तुम्हारे उस पथ पर हाँपती हुई दौड़ी जा रही हूँ, तुम्हारा पता पूछती हूँ, और अब बस गिरी जा रही हूँ। मैं तुम्हारे लिये घर से निकल पड़ी हूँ, कम से कम दो, तीन घड़ी वहीं रुक जा।"[1] (देखिए परि०२,क्रमांक ४७३)

काव्य की सौन्दर्य-वृद्धि के हेतु जहाँ एक ही शब्द का एक से अधिक बार एक ही अर्थ में प्रयोग हो वहाँ पुनरुक्ति-प्रकाश-अलंकार होता है। 'महजूर' के काव्य में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। व्याकुल-नायिका नायक को निकट रहने के लिये आग्रह करती है :-

(१) " 'महजूर' तुम्हारी चाह करता रहा है और तुम्हारे नाज़ों-अदा का खरीदार बन गया है। मेरे यौवन साथी अपने प्रण को निभाओ, मोती के दाने के समान सुन्दर अब दूर-दूर मत जाओ।"[2] (देखिए परि०२,क्रमांक ४७४)

(२) "तुम छिप-छिप कर चले गये, फूलों के मतवाले साजन। जब मैंने दूर-दूर से आते देखा तो सन्न होकर रह गयी और अब (छुरे-छुरे) चोरी छिपे रो रही हूँ। फूलों के मतवाले साजन!"[3] (देखिए परि०२, क्रमांक ४७५)

अर्थालंकारों में 'महजूर' ने उपमा अलंकार का अत्यधिक प्रयोग किया है। इस प्रकार 'महजूर' ने कश्मीरी-भाषा को साहित्यिक-श्रेष्ठत्व प्रदान किया। वस्तु-वर्णन करते समय उसने वस्तु की तुलना अनेक प्रसिद्ध, समान, गुण एवं धर्म वाले वस्तुओं से की है। उसके काव्य-उपमान निजी आविष्कार हैं और कश्मीरी-साहित्य की अमूल्य-निधियाँ हैं। इन उपमानों से भाषा-सौन्दर्य एवं माधुर्य की श्रीवृद्धि हुई है। 'महजूर' जन-कवि थे अत: अधिकांशत: जन-प्रसिद्ध उपमानों को

---

१. क० म० २, पृष्ठ १५।
२. क० म० १, पृष्ठ ४।
३. क० म० १, पृष्ठ ५।

उन्होंने अपने काव्य में अपनाया और इस प्रकार काव्य की लोक-प्रियता में भी उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। विचारों एवं भावों के विकास के साथ-साथ नवीन उपमानों को चुन लिया। इस प्रकार जीवन में सौन्दर्य लाने के साथ-साथ वे काव्य में सुन्दरम् की सृष्टि करने की ओर प्रवृत्त हुए अथवा इस प्रकार जीवन संवारने और सुधारने के साथ-साथ कवि ने काव्य के कला-पक्ष को भी सुधारने का प्रयास किया। वे काव्य में सुन्दरम् की सृष्टि करने की ओर प्रवृत्त हुए :-

(१) "मधु-मक्खी के समान चारों ओर घूम-घूम कर तुम्हारे लिये मैं शहद (मधु) चुन-चुन कर लाया हूँ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४७६)

(२) "मेरा यौवन (उभरता हुआ) आषाढ़ और श्रावण के समान है जो अपना जलवा दिखाकर सारे संसार को आकृष्ट करता है।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ४७७)

(३) "मेरा बालपन जंगल में देवदार-वृक्ष के समान था जो नदियों के किनारे प्रकृति का सौन्दर्य-पान कर रहा था।"[३] (देखिए परि०२,क्रमांक ४७८)

उपमेय पर उपमान का आरोप भी कवि ने किया है, इसे हिन्दी में रूपक कहते हैं। इस अलंकार का सुन्दर प्रयोग 'महजूर' ने यत्र-तत्र अपने काव्य में किया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :-

(१) "स्वर्ग की अप्सरा सज-धज्ज के निकली है, मेरे मोती के दाने प्रिय! अब दूर मत जाओ।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ४७६)

---

१. क० म० १, पृष्ठ १६।
२. क० म० २, पृष्ठ ४।
३. क० म० २, पृष्ठ ४।
४. क० म० १, पृष्ठ ४।

(२) 'एक नज़र से आशिक (प्रिय) घायल हो गया, मानो आकाश से गिर पड़ा। प्रेम-अग्नि ने उसके शरीर को भस्म कर डाला।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ४८०)

सावयव-रूपक में अंगों सहित उपमान का उपमेय पर आरोप किया जाता है। 'महजूर' के काव्य में सांग-रूपक-अलंकार के भी उदाहरण मिलते हैं, जिनमें प्रेमिका के शारीरिक सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया है :-

(१) 'तुम्हारे दाँत नबात के टुकड़े के समान हैं, दो होंठ शक्करपारे हैं, तुम्हारी भौंए सुरचाप हैं, नाक खंजर है और 'अबरवाल' (बरौनी) नेजे हैं।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४८१)

'तनिक देखो, तुम्हारा शरीर ही तुम्हारा उपवन है, हृदय स्रोत है और दिमाग फव्वारा, आँखें फूल हैं और तुम्हारी ज़बान बुलबुल है। तनिक अपने उपवन से परिचित होने का प्रयास कर लो।'[३] (देखिए परि०२, क्रमांक४८२)

इस प्रकार 'महजूर' ने उपमा और रूपक अलंकार का अपने काव्य में सफल प्रयोग किया है।[४] जहाँ उपमेय में उपमान की कल्पना की जाय वहाँ उत्प्रेक्षा-अलंकार होता है। इसमें केवल सम्भावना रहती है। इस अलंकार का 'महजूर' के काव्य में प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है। वे जीवन को संवारने और सुधारने के

---

१. क० म० १, पृष्ठ ३।

२. क० म० २, पृष्ठ १४।

३. प० म० ४, पृष्ठ ५।

४. 'He has enriched the language by beautiful similies and metaphors.'

'Struggle for Freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz - Page 298.

लिये अनेक सम्भावनायें करने लगे । उन्हें जीवन से प्यार था, मानव से प्यार था और ब्रह्म द्वारा निर्मित इस प्रकृति से प्यार था । उनकी सुन्दर उत्प्रेक्षायें अपनी मौलिकता के कारण उल्लेखनीय है । कश्मीरी-काव्य-कोश की इनके द्वारा काफी श्रीवृद्धि हुई है । ढूँढने पर उनके काव्य में सैकड़ों उत्प्रेक्षायें मिलेगी, कुछ विशेष उल्लेखनीय निम्नलिखित हैं :-

(१) "जब तुमने अपना मुखड़ा दिखाया मानो भागते हुये शिकार को पृथ्वी पर सुला दिया, मानो सख के वृक्ष को काटकर ज़मीन पर गिरा दिया और अपनी प्रतिभा एवं शक्ति (लकड़हारे की शक्ति) का परिचय दिया ।"[१] (देखिए परिशिष्ट २, क्रमांक ४८३)

(२) "जुल्फों (बालों) की ओट में तुम्हारे झुमके शोभा दे रहे हैं एवं चमक रहे हैं मानो सप्त-कृषि चक्कर काट रहे हैं, मानो बादलों के बीच से लाल मोती के दाने चमक रहे हैं, अरे, सुन्दरी ! मेरे हृदय की करुण कथा सुनले ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४८४)

(३) "छिपाने पर भी मेरे हृदय की दशा बाहर व्यक्त हुई, मानों फूलों के वक्ष को चीर कर सुगन्धि बाहर निकली हो ।"[३] (देखिए परि०२,क्रं०४८५)

(४) "प्रेम की अग्नि ने मुझे भस्म कर दिया, चमेली की कली मानो मुर्झा गई ।"[४] (देखिये परि० २, क्रमांक ४८६)

(५) "उसके हाथ नाजुक हैं, मानो गुलदस्ते हैं ।"[५] (देखिए परि०२,क्रं०४८७)

---

१. क० म० २, पृष्ठ १० ।
२. क० म० २, पृष्ठ ११ ।
३. क० म० ६, पृष्ठ १६ ।
४. क० म० १, पृष्ठ ११ ।
५. क० म० १, पृष्ठ १३ ।

उपमेय के सामने उपमान को हीन वर्णित करना प्रतीप अलंकार कहलाता है। कविवर 'महजूर' के काव्य में प्रतीप अलंकार के भी उदाहरण मिलते हैं। नरगिस-पुष्प उपमान के रूप में उन्होंने प्रयुक्त किया है। सुन्दरी की आँखें अपने अपूर्व लावण्य एवं अद्भुत सौन्दर्य से नरगिस फूल को भी लज्जित करती हैं:-

" तुम्हारी आँखों को देखकर मनुष्य भ्रम में पड़ जाता है और नरगिस के फूल भी लज्जित होते हैं।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ४८८)

वास्तव में जिस सभ्यता के पीछे शताब्दियों पुराना इतिहास, साहित्य एवं संस्कृति है उसी को मुखरित करने के लिये 'महजूर' ने अथक प्रयत्न किया है। अलंकारों के द्वारा उनके काव्य में प्रेषणीयता का गुण आ गया है। भावाभिव्यक्ति में उन्हें सफलता मिली है और कविताओं के कला-पक्ष में श्रेष्ठता एवं परिपक्वता आ गई है। उन्होंने समय, परिस्थिति एवं प्रसंगानुकूल सुन्दर अलंकारों का प्रयोग किया है और इस प्रकार काव्य में सरसता एवं अभिव्यक्ति में मार्मिकता आ गई है।

गुण :

रस-काव्य की आत्मा है और आत्मा के उत्कर्ष के लिये गुण अपेक्षित हैं। पण्डित रामबहोरी शुक्ल ने लिखा है – " जिस प्रकार वीरता, उदारता, त्याग आदि गुणों से मनुष्य की आत्मा का उत्कर्ष प्रकट होता है उसी प्रकार माधुर्य, ओज आदि गुणों से काव्य की आत्मा अर्थात् रस का उत्कर्ष होता है। इसी से गुण को रसका धर्म माना जाता है।"[२] गुण तीन माने गये हैं – माधुर्य, ओज एवं प्रसाद। 'महजूर' ने अपने काव्य में तीनों गुणों का समावेश किया है। उनकी आरम्भिक रचनाओं में माधुर्य एवं प्रसाद गुण की विशेषता है और

---

१. क० म० २, पृष्ठ १२।

२. 'काव्य-प्रदीप' - पण्डित रामबहोरी शुक्ल, पृष्ठ ६८।

उनकी विकास-युग की रचनाओं में, (राष्ट्रीय-कविताओं) में ओज की प्रधानता है। माधुर्य-गुण के कारण चित्त आनन्द से द्रवित हो जाता है, हृदय में मधुरिमा एवं आनन्द का स्रोत फूट पड़ता है। प्रधानत: यह गुण शृंगार, करुण तथा शान्त रस में मिलता है। माधुर्य-गुण से कविता में विचित्र आकर्षण उत्पन्न होता है। मधु-संचार सर्वत्र होता है और रचनाओं को पढ़कर पाठक अद्भुत मिठास का अनुभव करता है। 'महजूर' की शृंगारिक-रचनाओं में इस गुण के दर्शन होते हैं। नायिका सखि से वन-गमन के लिये आग्रह करती है :-

"आओ सखि, बन चलें। न जाने किसने उसके कान भर दिये। फूलों के मतवाले साजन को अब मैं न जाने कब देखूँगी।"[१] (देखिए परि०२, क्रं० ४८६)

प्रिय की कठोरता एवं दुर्व्यवहार पर नायिका का विलाप कितना मर्म-स्पर्शी है, जो पाषाण-हृदय को द्रवित करने की क्षमता रखता है :-

"प्रिय के उपेक्षित व्यवहार पर आँसू बहाते-बहाते अब रक्त बह रहा है। मोतियों की माला बिखर गई। तुम्हारी एक दृष्टि से अनेकों रोगी स्वस्थ हो गए, निरोग हो गये परन्तु मेरी बारी आने पर तुम कितने निर्दयी हो गए।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६०)

प्रिय-आगमन की सम्भावना है, नायिका का हृदयोल्लास देखते ही बनता है :-

"प्रियतम ने निमंत्रण स्वीकार किया है, फूलों की मालायें बनवा रही हूँ और प्याले भर-भर के रखती हूँ, शालीमार उपवन के कोने-कोने को सजा रही हूँ। फूलों की मालायें बनवा रहीं हूँ।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ४६१)

---

१. क० म० १, पृष्ठ ६।
२. क० म० २, पृष्ठ ३।
३. क० म० ४, पृष्ठ ४।

इस प्रकार 'महजूर' के समस्त काव्य में माधुर्य-गुण के असंख्य उदाहरण मिलते हैं जिनमें कवि का हृदय बोल उठा है, जो हमारे हृदय को द्रवीभूत करते हैं और वातावरण को मादक एवं प्रभावोत्पादक बना देते हैं। ओज-गुण के द्वारा पाठक के मन में उमंग और उत्साह का संचार होता है, उसकी सुप्त-चेतना जाग्रत हो उठती है। उसकी शिराओं में रक्त-संचार द्रुत-गति से होने लगता है। ओज-गुण के द्वारा पाठक स्थिति-परिवर्तन के लिये उत्तेजित हो जाता है। वीर एवं रौद्र-रस में यह गुण अनिवार्य रूप से पाया जाता है। 'महजूर' की राष्ट्रीय-रचनाओं में ओज-गुण का समावेश स्वयमेव हुआ है। विकट-परिस्थितियों से प्रभावित होकर उसने देश की सुप्त-जनता में नव-जीवन का संचार किया। उनके अद्भुत साहस, वीर्य एवं पराक्रम को ललकारा और 'बागबान' को उपवन सजाने के लिये और उसकी शोभा बढ़ाने के लिये क्रान्ति का सन्देश सुनाने लगे :-

"अरे, ओ बागबान ! अपने उपवन में वसन्त-ऋतु की शान पैदा कर। फूल खिल उठें और बुलबुलें उन पर आसक्त हो जायें, कुछ ऐसा प्रबन्ध कर ले। यदि तुझे इस बस्ती की ओर जाना है तो साज़ बजाना छोड़ दे। भूकम्प ला, आन्धी मचा, गर्जन कर और तूफान पैदा कर।"[१] (देखिए परि०२,क्रं० ४६२)

देश को विदेशी आक्रमण से बचाने के लिये वे जनता को उत्साहित करते हैं, उनके बाहु-बल को ललकारते हैं :-

"दौड़ते हुये जा, बहादुर कश्मीरी ! दौड़ते हुये जा। गाते-गाते और जाम पीते-पीते चल। तुम्हें शत्रु से डर कैसा ! तैय्यार रह। कमर कस ले और विजय-पताका हाथ में लिये चला चल, तेज़ चला जा, तेरा देश स्वर्ग के समान है और शत्रुओं के हृदय का काँटा है, तू इन अशुभ चाहने वालों के पीछे यमराज की तरह दौड़ और इनका रक्त चूसते-चूसते आगे बढ़।"[२] (देखिए परि०२,क्रं०४६३)

---

१. प० म० १, पृष्ठ २।

२. प० म० ६, पृष्ठ ७।

आक्रमणकारियों को पीछे हटाने के लिये 'महजूर' कश्मीरी-वीर-सपूतों को 'फिरण' और 'कांगडी' छोड़कर राइफल तथा मशीनगन अपनाने का सन्देश देते हैं। दिशायें 'महजूर' के सन्देश से गूँज उठती हैं :-

'कश्मीर के वीर सपूतो ! शीघ्र निकल आओ और अपनी वीरता का एक बार फिर प्रदर्शन करो। आगे पर्वत-शिखर तुम्हारा मार्ग अवरुद्ध करेंगे परन्तु तुम सिंह बन कर उनको लांघकर शत्रु के सम्मुख लोहा लेने के लिये खड़े हो जाओ। उन पर्वतों को भी तुम अपने पाँव तले रौंद लो, ताकि तुम्हारे मार्ग की बाधा दूर हो जाये। शत्रु-सेना बहुत निकट आई है। देश बचाने के लिये रण-क्षेत्र में निकल आ। कश्मीरियों का नाम जीवित रखो। 'फिरण' और 'कांगड़ी' छोड़ दो और अपनी बहादुरी का एक बार फिर प्रदर्शन करो।'[१]
(देखिए परि० २, क्रमांक ४६४)

प्रसाद-गुण के कारण किसी रचना का अर्थ-बोध सुविधा के साथ होता है। यदि कवि अपनी रचना ऐसे शब्दों में करे जिनका अर्थ, सुनने के साथ ही, सुनाने वालों की समझ में आ जाये तो उसे 'प्रसाद' गुण से पूर्ण कहा जाता है। जिस प्रकार पके हुये अंगूर का रस बाहर से झलकता है उसी तरह प्रसाद-गुण से परिप्लुप्त कविता का भावार्थ शब्दों से झलकता है।[२] करुणार्द्र-सन्देश और प्रेमातिशय्य द्योतक बातों में यह गुण विशेष रूप से मिलता है।[३] अपने कामदेव के प्रति विरहिणी की अश्रु-सिक्त हृदय-अभिव्यक्ति में 'महजूर' ने इस गुण का समावेश किया है :-

'मेरे पुकारने का तुम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, तुम्हारे मिलन का

---

१. प० म० ६, पृष्ठ १५-१६।
२. 'काव्य-प्रदीप' - पण्डित रामबहोरी शुक्ल, पृ० १००।
३. वही।

क्या उपाय है । मेरे कामदेव ! मैं तुम्हारा वियोग सहन नहीं कर सकती । तनिक यह तो बताओ कि तुम मेरे कैसे हो सकते हो । तुम्हारे लिए मैं ने शृंगार किया । परन्तु तुमने मेरा नाम लेना छोड़ दिया । मेहन्दी से रंगे मेरे नाखून एवं यह दुल्हन की साज-सज्जा अकारण नष्ट हो गयी । हे कामदेव ! मैं तुम्हारा वियोग सहन नहीं कर सकती ।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६५)

प्रिय-आगमन का सन्देश पाकर नायिका का हृदयोल्लास देखते ही बनता है :-

'मेरा हृदय प्रफुल्लित हुआ जब यह सुना कि प्रियतम आ रहे हैं । छैला, अद्भुत सौन्दर्य वाला मेरा हृदयेश्वर मेरे हृदय को शान्ति देने वाला ।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६६)

इस प्रकार 'महजूर' ने माधुर्य ओज एवं प्रसाद-गुण के समावेश से अपने काव्य को उत्कृष्ट बना दिया है । 'महजूर' का काव्य श्रेष्ठ है और प्रत्येक श्रेष्ठ काव्य में यह गुण अन्तर्निहित रहते हैं ।

आत्माभिव्यंजना (यथार्थ-चित्रण):-

'महजूर' के काव्य की एक विशेषता यह भी है कि उन्होंने मानव-जीवन को उसके यथार्थ रूप में अभिव्यक्त किया है । उनका काव्य यथार्थ की भूमि पर स्थित है । 'महजूर' हवाई-महलों में नहीं विचरता, हवाई किले नहीं बनाता, अपनी प्रेयसी के लिये आकाश के तारे तोड़ने का प्रयत्न नहीं करता अपितु जन-मानस का यथा-तथ्य चित्रण करने में सदा संलग्न रहा, जिसमें स्वाभाविकता है, सरसता है और मानव-हृदय को आकर्षित एवं द्रवित करने का

---

१. क० म० ८ , पृ० १५ ।

२. क० म० ७ , पृ० २ ।

गुण है । वे जन-कवि थे अत: जनता की धड़कनों को उसने अपनी लेखनी द्वारा शब्दों के ताने-बाने में प्रस्तुत किया । यही कारण है कि फारसी और उर्दू को छोड़कर उन्होंने जन-भाषा में कवितायें लिखीं और साथ ही कश्मीरी-भाषा को भी साहित्यिक-श्रेष्ठता प्रदान करने का अथक परिश्रम किया । श्री शिवदान सिंह चौहान ने लिखा है :- 'पटवारी' की हैसियत से देहात की जनता से उनका नित्य-प्रति का सम्पर्क रहता था । यह अपढ़ जनता, उनकी फारसी और उर्दू की शायरी को समझ नहीं पाती थी । जिनके बीच में वे रहते थे उनके लिये इनके काव्य-कौशल का कोई मूल्य न था । अत: काव्य के आकाश-महल से उन्हें अपने वतन की ज़मीन पर उतरना पड़ा ।'[१] वे ज़िन्दगी और दुनिया से प्यार करते थे और इसे संवारने और निखारने के लिये सदा प्रयत्न करते रहे । यथार्थ-चित्रण के कारण ही वे कश्मीर के सर्वप्रिय कवि बन गए ।[२] शृंगारिक रचनाओं में 'पोशे मति जानानो' 'महजूर' की एक श्रेष्ठ रचना है जिसमें विरहाकुल प्रेयसी के विरह-दग्ध हृदय की दारुण दशा का स्वाभाविक चित्रण किया गया है :-

'प्रेम ने मुझे बदनाम कर दिया, नगर और गाँव, प्रत्येक स्थान पर इसके चर्चे हो रहे हैं । फूलों के मतवाले साजन ! मुझसे डाह रखने वाली नारियाँ मुझे ताने दे दे कर मेरे हृदय को छलनी कर रही हैं ।'[३] (देखिए परि० २ , क्रमांक ४६७)

प्रो० देवेन्द्र सत्यार्थी ने लिखा है :- 'पोशो मति जानानो' 'महजूर' की मास्टर-पीस (सर्वश्रेष्ठ) कविता है ।'[४] एक परित्यक्ता प्रेमिका के मुख से

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८० ।
२. 'तामीर' - 'महजूर - अंक' - 'कश्मीरी-भाषा का राष्ट्रीय-कवि 'महजूर' - श्री निवास लाहोटी , पृ० २१ ।
३. क० म० १, पृष्ठ ८ ।
४. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग ३, पृ० २२० ।

वह ऐसे भाव प्रकट करता है कि नेत्र अश्रुओं से छल-छलाने लगते हैं। नारी हृदय की अनेक मार्मिक अनुभूतियों को लेखक ने अपनी कविताओं में व्यक्त किया है।[१] 'ग्रीसकूर' कविता में 'महजूर' ने किसान-बालिका के यथार्थ-जीवन का बड़ा ही स्वाभाविक वर्णन किया है। उसके जीवन में, रूप-सौन्दर्य में, हाव-भाव में, कहीं कृत्रिमता नहीं। उसके मुख पर श्रम-कण भी शोभा देते हैं। वह जीवन से, परिस्थितियों से एवं वातावरण से लड़ती, संघर्ष करती आगे बढ़ती है। प्रो० पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने लिखा है - ''ग्रीसकूरि' (किसान-लड़की) में उसने रोमांस के रस से ओत-प्रोत शैली में कर्मठ किसान-कन्या की सहज मधुरता के गीति-चित्र प्रस्तुत किये हैं। इसी कविता के द्वारा 'महजूर' ने महाकवि टैगोर का ध्यान अपनी ओर खींचा था।'[२] उसके सौन्दर्य की एक यथार्थवादी झलक उल्लेखनीय है :-

'आभूषणों के बदले तेरे शरीर पर फूल शोभा दे रहे हैं, न जाने किस सुनहार ने तेरे लिये फूलों के गहने बनाये हैं। उसकी कार्य-कुशलता पर बलिदान हो जाऊँ। ओ किसान-कन्या! चंचल सुन्दरी।'[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ४६८)

'महजूर' ने देशवासियों के दैन्य-जीवन का यथार्थ-चित्रण अपनी रचनाओं में यत्र-तत्र किया है। दीन, दरिद्र एवं असहाय किसान के साथ-साथ उन्होंने दलित, विवश एवं पीड़ित श्रमिक का चित्रण भी अपने काव्य में किया है, जिन्हें दो जून रोटी भी नहीं मिलती है। इस प्रकार काव्य और जन-जीवन का 'महजूर' ने निकट सम्बन्ध स्थापित किया। यहाँ के वर्ग-विभाजित समाज को

---

१. 'योजना' - मार्च १९६२, पृष्ठ २२।
२. 'कश्मीरी भाषा एवं साहित्य' - 'पुष्प' - 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्', पृष्ठ २०।
३. 'महजूर' - श्री पृथ्वीनाथ 'पुष्प' - जम्मू तथा कश्मीर कलचरल अकादमी द्वारा प्रकाशित, पृ० २४।

देखकर उनका हृदय विह्वल हो उठा। शोषक और शोषित के मध्य गहरी खाई पाटने का प्रयत्न उन्होंने किया। श्री अब्दुल अहद 'आज़ाद' ने लिखा है — " किसी को सुख के सब साधन सुलभ हैं, मदिरा-पान करता है, प्रेमिका के साथ विहार में मस्त है पर किसी के पास अधिकार नहीं, उसकी सब इच्छाएँ मनोकामनाएँ अश्रुओं के रूप में बह जाती हैं। कोई बेचारा जीविका-निर्वाह में असफल होकर दर्शन और आध्यात्म का सहारा लेता है।"[१] युगीन-स्थिति का सजीव चित्रण 'महजूर' ने यत्र-तत्र अपनी रचनाओं में किया है। साधन-सम्पन्न एवं साधन-हीन-समाज के इन दो वर्गों पर उनकी दृष्टि सदा रहती थी :-

"दिनभर कठोर परिश्रम करने के पश्चात् मुझे सांय मालिक खाने को आधी ही रोटी देता है। मैं इसी पर संतुष्ट रहती हूँ, काश! वह भी मेरे दुख-दर्द की ओर ध्यान देता। गरीबों के लिये 'एक अनार और सौ बीमार' की स्थिति है पर पूंजीपति के यहाँ 'एक बीमार और सौ अनार' की स्थिति है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ४६६)

इस प्रकार 'महजूर' आत्म-अभिव्यक्ति में पूर्ण रूप से सफल हुए। उन्होंने युग के कटु-सत्य का विष-पान किया था। वे उस युग के महान् विचारक थे। सत्य को उन्होंने विकृत नहीं होने दिया यथार्थ की उन्होंने कहीं अतिरंजना नहीं की। प्रेम-वर्णन में भी उन्होंने स्वाभाविक ढंग से नायक एवं नायिका की प्रेम-क्रीड़ाओं का मनोहारी वर्णन किया है। कहीं अति-शयोक्ति-पूर्ण वर्णन नहीं किया है। उनका काव्य-नायक हमारी ही भाँति हड्डी, मांस का पुरुष है वह कभी प्रेयसी के लिये आकाश के तारे तोड़ने का

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - 'आज़ाद' - भाग १, पृ० १६५-१६६।
२. प० म० ३, पृष्ठ २।

प्रयत्न नहीं करता है। राष्ट्रीय-काव्य में भी उन्होंने परस्पर ऐक्य की भावना एवं मिल-जुल कर रहने के विचार को उभारा है। उन्होंने युग-सत्य के अनेक सुन्दर चित्र अपने काव्य में चित्रित किये हैं, जिनमें वेदना छिपी है, व्यक्तिगत आक्रोश निहित है और प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से जनता के लिये झूझने का सन्देश प्रतिध्वनित होता है।

प्रकृति-चित्रण :

'महजूर' के काव्य में प्रकृति-चित्रण विविध रूप में मिलता है। प्रकृति उनकी सहचरी रही है। प्रकृति सौन्दर्य से अभिभूत कवि-हृदय विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हुआ है। आधुनिक युग में प्रेम और प्रकृति का जितना सुन्दर चित्रण 'महजूर' के काव्य में मिलता है उतना अन्यत्र पाना दुर्लभ है। उन्होंने अपनी कविताओं में प्रकृति और मानव के अनेक भावपूर्ण और वास्तविक चित्र अंकित किये हैं। इनका सौन्दर्य मानव-हृदय के प्रत्येक कोने में छा जाता है। इन कविताओं में पुष्पों की सुगन्ध है, भ्रमरों की गुँजार है एवं पक्षियों का कलरव मुखरित होता है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि पन्त के समान ही इन्हें प्रकृति के रम्य दृश्यों ने आकर्षित किया है। सुश्री कृष्णा कौल ने लिखा है :- 'इसके काव्य में हम प्रकृति के कण-कण का स्थान पाते हैं। यही प्रकृति-प्रेम उनकी अन्तिम कविताओं में मानव-प्रेम और देश-प्रेम के रूप में परवर्तित हुआ।'[१] यही कारण है कि महाकवि टैगोर ने 'महजूर' की कविताओं का अनुवाद पढ़कर उन्हें कश्मीर का 'वर्डस्वर्थ' कहा।[२] 'महजूर' ने प्रकृति के साथ अपनी हृदय-

---

१. 'योजना' - मार्च १९६२ - ''महजूर--एक अध्ययन' - सुश्री कृष्णा कौल, पृष्ठ २३।

२. 'तामीर' - 'महजूर अंक - कश्मीरी भाषा का राष्ट्रीय कवि' - श्रीनिवास लाहौरी, पृ० १८।

स्थित भावनाओं का तादात्म्य किया । कहीं वह मानव-हृदय की विभिन्न भावनाओं की अभिव्यक्ति के रूप में सहायक सिद्ध हुई है और कहीं स्वतंत्र रूप से उसका वर्णन कवि ने किया है । उन्होंने प्रकृति को अनेक दृष्टियों से देखा, परखा, अनुभव किया और तत्पश्चात् अपने काव्य में अभिव्यक्त किया । आलम्बन रूप में उन्होंने प्रकृति का सजीव चित्रण किया है । इस रूप में प्रकृति कवि के लिये साध्य बन गई है । प्रकृति में उनका मन रम गया है और स्वतंत्र रूप से उन्होंने प्रकृति के सूक्ष्म तत्वों का संश्लिष्ट वर्णन किया है । 'संगरमालन प्युव प्रागाश' कविता में 'महजूर' ने आरम्भ में प्रकृति का चित्रण आलम्बन रूप में किया है । प्रात: काल सूर्योदय का दृश्य और पुष्पों का प्रस्फुटित सौन्दर्य देखते ही बनता है :-

"अन्धकार दूर हुआ, प्रकाश सर्वत्र छा गया, सूर्योदय हुआ । पर्वत शृंखलायें जगमगा उठीं । पर्वतों की चोटियाँ, पहाड़ और ऊँचे पहाड़ियाँ, सर्वत्र प्रकाश फैल गया । 'गुलि-लाला' प्रेम की ज्योति लिए खिल उठेगा और उस प्रकाश से आकाश का हर एक कोना रोशन होगा । यासमीन-पुष्प अपनी पंखुड़ी रूपी प्यालों में ओस रूप मदिरा उँडेल देंगे । पर्वत-शृंखलायें जगमगा उठी हैं ।"[१] (देखिए परि० २ , क्रमांक ५०६)

प्राकृतिक-सुषमा के कारण ही कश्मीर को नंदनबन कहा जाता है और बसंतागमन पर तो इस बन का नव-शृंगार हो जाता है । बसंतागमन पर पक्षियों के हृदयोल्लास की एक झलक देखने योग्य है :-

"बुलबुल पक्षी प्रसन्न है क्योंकि चैत्र-मास व्यतीत हुआ अब बसन्त ऋतु शीघ्र ही आरम्भ होगी । बसन्त की वायु इठला रही है क्योंकि किसी के

---

१. क० म० ६ , पृष्ठ १३ ।

आने की सम्भावना है ।[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५१०)

'बहारों' कविता में 'महजूर' ने आरम्भ से लेकर अन्त तक बसन्त-ऋतु की सौन्दर्य-सुषमा का वर्णन किया है :-

'हमारे हृदय लालायित करते हुये तथा अपना रूप दिखाते हुये बहार का आगमन हुआ । जिन बातों को हम भूल गये थे , वे पुन: याद आ गईं । नरगिस का फूल मानो रुग्ण हो गया था, धूल में मिल गया था परन्तु उसके लिये जीवन-मदिरा बाँटते हुये बहार का आगमन हुआ ।[२] (देखिए परि०२,क्रं०५११)

बसन्त के रहस्य से 'महजूर' भली-भाँति परिचित हैं । अत: वे लिखते हैं :-

'तुम्हारे साथ अनेकों रंग आ जाते हैं परन्तु स्वयं तुम्हारा कोई रंग नहीं है । विभिन्न रंगों से पुष्प - वाटिकाओं को रंगते हुये तुम्हारा आगमन हुआ ।[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५१२)

बुलबुल एवं पुष्प के परस्पर वार्तालाप द्वारा 'महजूर' अपनी पुष्प - वाटिका रूपी देश के प्राकृतिक-सौन्दर्य का वर्णन करते हैं :-

'बुलबुल फूल से कहता है – 'हमारा देश एक पुष्प-वाटिका है ।' इसके चारों ओर संगमरमर की सुदृढ़ दीवार है (चारों ओर हिम-आच्छादित पर्वत शृंखलाएँ हैं ।) और उनके बीच घाटी सब्ज़ रंग के मोती के समान शोभा देती है ।[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ५१३)

---

१. क० म० ६, पृष्ठ १५ ।
२. क० म० ८, पृष्ठ १,२ ।
३. क० म० ८, पृष्ठ ३ ।
४. प० म० १, पृष्ठ ११ ।

मन्द-मन्द गति से चलने वाली प्रात: कालीन बयार के विषय में 'महजूर' लिखते हैं :-

'प्रात:कालीन वायु प्रेम-सन्देश लेकर फुलवारी में प्रविष्ट हुआ और कलियों ने शीश नवाकर उसके प्यार को स्वीकार किया।'[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ५१४)

'महजूर' ने उद्दीपन रूप में प्रकृति का वर्णन यत्र-तत्र किया है। प्रकृति में भाव-उद्दीपन की प्रबल शक्ति पाई जाती है। चिरकाल से कवियों ने प्रकृति की इस शक्ति का सुन्दर उपयोग किया है। संयोग में प्रकृति आनन्द भाव को उद्दीप्त करने का माध्यम बनती है और वियोग में विरह-वेदना को और भी विषम बना देती है। यहाँ प्रकृति का वर्णन साधन रूप में किया जाता है। प्रियतम से पुन: लौट आने के लिये प्रेयसी आग्रह करती है, यह समय बिछुड़े रहने का नहीं है ; क्योंकि प्रकृति के रूप-यौवन को देखकर वियोग-व्यथा असहनीय है:-

'सोम्बल, नरगिस, गुलाब एवं अनार के फूल खिल उठे हैं। इनकी शोभा अकथनीय है।फूलों का यह अम्बार कितना हृदयाकर्षक है। मेरे बुलबुल। इन फूलों को देखने के लिये ही तनिक आ जाओ।'[२] (देखिए परि०२,क्रं० ५१५)

प्रकृति का उद्दीपन रूप यौवन-विरहिणी के लिये दु:ख-दायक है। खिले हुये पुष्पों को देखकर उसकी आँखें भर आती हैं, उसे ऐसा प्रतीत होता है मानो फूलों को भी किसी की प्रतीक्षा है :-

---

१. क० म० ८ , पृष्ठ ६ ।

२. क० म० ३ , पृष्ठ ६ ।

'फूलों को किसकी प्रतीक्षा है, किसके लिये वाटिका सजाई जा रही है। लताओं पर फूल किसी की प्रतीक्षा में खिन्न दीख पड़ते हैं। मेरे बुलबुल। इन फूलों को देखने के लिये तनिक आ जाओ।'[१] (देखिए परि०२, क्रं० ५१६)

उसे ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो फूल भी मदिरा-कलश लिये अपने प्रिय की प्रतीक्षा में है :-

'फुलवारी में फूल प्रतीक्षारत हैं, न जाने कब प्रिय मदिरा पीकर आ जाएगा। नरगिस के फूल भी हाथ में जाम भर-भर कर उसकी प्रतीक्षा में हैं। न जाने वह कब आयेगा ?'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५१७).

श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने लिखा है :- 'यदि हम कश्मीर को पृथ्वी का स्वर्ग कहें, तो कश्मीरी जनता के सरल स्वाभाविक गीतों को हमें 'सुरपुर का संगीत' या 'जन्नत के तराने' कहना पड़ेगा।'[३] इस भू-स्वर्ग के अनेक सुन्दर चित्र 'महजूर' ने अपनी लेखनी द्वारा चित्रित किये हैं। 'महजूर' के काव्य में पृष्ठभूमि के रूप में भी प्रकृति-चित्रण मिलता है। यह चित्रण सप्रयोजन है और मानवीय भावों की छाया इसमें प्रधान रूप से मिलती है। भावाभिव्यक्ति के हेतु यह चित्रण पृष्ठ-भूमि के रूप में किया गया है। लोग डल-सैर को जा रहे हैं परन्तु विरहिणी एकांत में जुदाई की घड़ियाँ गिन रही है। अंत में वह विलाप करती है :-

'डल-सैर के लिये तुम निकल जाओ, मैं तुम्हारे पथ में अपनी आँखें बिछाऊँगी। निशात बाग और शालिमार में मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी।

---

१. क० म० ३, पृष्ठ १०।

२. 'क० म० २, पृष्ठ ८।

३. 'बेला फूली आधी रात' - देवेन्द्र सत्यार्थी, पृष्ठ १४३।

तुम नाव में बैठ कर शीघ्र चले आओ ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ५१८)

एक पंक्ति में 'महजूर' ने प्रकृति के उद्दीपन रूप का जितना मर्मस्पर्शी वर्णन किया है , वह देखने योग्य है । विरहिणी केवल यह शब्द कह कर ही मूक रह जाती है । शेष कहने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती :-

"अनार के फूल खिल उठे और वाटिका लाल हो गई ।"[२] (देखिए परि० २ , क्रमांक ५१६)

प्रिय-वियुक्ता नायिका प्रकृति के नाना उपकरणों के द्वारा अपने हृदय की परम-अभिलाषा व्यक्त करती है :-

"वाटिका के फूल, नरगिस, सुम्बुल तथा बुलबुल सब तुम पर बलिहारी हैं । फूल अपनी मनोकामनाओं की सिद्धि के सुन्दर स्वप्न लेकर आया तथा बुलबुल हृदय का अनुराग लेकर आया । उपवन में अपनी सारी तैय्यारी करके वे प्रविष्ट हुए ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२०)

भौंरे की गुँजार का पृष्ठ-भूमि के रूप में वर्णन दर्शनीय है :-

"प्रेम का मतवाला भौंरा वाटिका में प्यार का राग बजाता हुआ आया । उसकी ओर नरगिस ने उन्मत्त नेत्रों से देखा और वह प्रेम का रोगी हो गया ।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२१)

---

१. क० म० ३, पृष्ठ ३ ।

२. क० म० ७, पृष्ठ ६ ।

३. क० म० ५, पृष्ठ ~~ ~~ + गज़ल नं० ३२ ।

४. क० म० ५, गज़ल नं० ३३ ।

दूती के रूप में भी 'महजूर' ने प्रकृति का प्रयोग अपने काव्य में किया है। प्रकृति के उपादानों से उन्होंने सन्देशवाहक का काम लिया है। संस्कृत एवं हिन्दी में ऐसे वर्णन प्रचुर मात्रा में हुये हैं। आधुनिक युग में कश्मीरी - साहित्य में 'महजूर' ने सर्वप्रथम प्रकृति को दूतिका का रूप दिया :-

"बसन्त की बयार फूलों की पंखुड़ियों को सर्वत्र बिखेर रही है। काम-देव प्रिय सायंकाल में घूमने आ रहा है और उसके आने की खबर ये पुष्प-पंखुडियाँ दे रही हैं।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२२)

'नरगिस' का फूल अपने को बसन्त का सन्देशवाहक बताता है :-

"बसन्त ने मुझे सन्देश देकर भेजा और मैं पथ की अनेक बाधाओं को पार करके आ गई। बसन्त भी अधिक समय तक नहीं रहने वाला है और आषाढ़ और श्रावण से क्या कहूँ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२३)

अलंकार प्रदर्शन के लिये भी 'महजूर' ने प्रकृति का सहयोग प्राप्त किया है। प्रकृति के विविध अंगों पर आरोप करके या समता प्रदर्शन के द्वारा उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति को मार्मिक एवं सुन्दर बना दिया है। मानव-सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिये उन्होंने प्रकृति के उपकरणों का वर्णन किया है, इस प्रकार प्रकृति के प्रति उनके हृदय का निजी उल्लास एवं अनुराग भी व्यक्त हुआ है।

'महजूर' ने प्रकृति का प्रतीकात्मक रूप में भी वर्णन किया है। उसने प्रकृति से अनेक प्रतीकों का चयन किया है। कहीं परम्परागत प्रतीकों को ग्रहण किया है और कहीं अपनी मौलिक प्रतिभा का भी परिचय दिया है। प्रेयसी के

---

१. क० म० ७, पृष्ठ १।

२. क० म० ६, पृष्ठ ६।

लिये 'नरगिस' और प्रियतम के लिये 'भँवरा' प्रतीकात्मक रूप में अत्यन्त सुन्दर प्रयोग बन पड़ा है :-

"नरगिस ने जाम भर-भर कर रखे। हे भ्रमर ! आज हमारे ही अतिथि बनकर रहो। मैं तुम्हारे लिये दृग-कोरों में निवास-स्थान सजा रही हूँ। तनिक बुलबुल के अफसाने सुन ले।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२५)

चमेली के फूल के द्वारा व्याकुल नायिका अपनी करुण-दशा का वर्णन करती है :-

"मैं श्रावण की चमेली वनों में खिल उठी और तुम्हारा मार्ग निहारती रही। तुमने आषाढ़ मास का मेरा जोबन नहीं देखा, अब मैं पतझड़ की क्रूर वायु के झोकों से मुर्झा जाऊँगी।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२६)

कवि ने यासमीन के फूल को प्रिय-विरह-दग्ध-नायिका का प्रतीक माना है :-

"मैं यासमीन की कली हृदय के टुकड़े लेकर आ गई।"[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ५२७)

गुलाब-पुष्प को प्रिय का प्रतीक मानकर उसके प्रति सम्बोधन भी मार्मिक है :-

"मैं मार्गशीर्ष की जून (चन्द्रमा, कश्मीरी में स्त्रीलिंग) बड़े प्यार

---

१. क० म० ४, पृष्ठ ६।
२. क० म० ५, पृष्ठ १।
३. क० म० ५, गज़ल नं० ३४।

से केवल तुम्हारे लिये उदित हुई। परन्तु मेरे गुलाब ! मेरा यौवन तुमने नष्ट कर दिया और आज मेरी ग्रीवा में खम आ गया। तुम्हारे लिये जाम लेकर नरगिस आ गई और अपने रुग्ण नेत्रों से (झुक गई) तुम्हारी ओर देख रही है, मेरे गुलाब !"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२८)

यत्र-तत्र `महजूर` ने प्रकृति का मानवीकरण भी किया है। अमूर्त एवं जड़ प्राकृतिक पदार्थों को मूर्त रूप देकर उनके प्रति सम्बोधन करना `महजूर` के काव्य की एक विशेषता है :-

"अहरबल के सुन्दर झरने ! तुम `माहे-पैकर` हो या तुम स्वर्ग की कोई अप्सरा हो या अप्सराओं के देश की राजकुमारी। तुम्हें ऊपर से नीचे तक किसने मणियों से सजाया है।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५२९)

अपने दार्शनिक एवं रहस्यात्मक विचारों की अभिव्यक्ति भी `महजूर` ने प्राकृतिक उपादानों से की है। बुलबुल और गुल के माध्यम से उन्होंने जीव और ब्रह्म की ओर संकेत किया है :-

"बुलबुल इस पुष्प के प्रति आकर्षित है। गुल भी बुलबुल को स्वयं ढूँढ रहा है। पुष्प उसी को पुकारता है, जिसको ढूँढता है। अतः हे बुलबुल ! तुम गुल के दर्शन कर लो।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५३०)

इस प्रकार `महजूर` के काव्य में विविध रूपों में प्रकृति की सफल अभिव्यक्ति हुई।

---

१. क० म० ६, पृष्ठ १।
२. `तामीर` - `महजूर - अंक` में प्रकाशित कविता से उद्धृत।
३. क० म० ३, पृष्ठ १०।

स्थानीय-प्रभाव :

'महजूर' के काव्य में भू-स्वर्ग कश्मीर का अणु-अणु प्रतिबिम्बित हुआ है। इनसे पूर्व कश्मीरी-साहित्य में स्थानीय प्रभाव बहुत कम देखने को मिलता है क्योंकि काव्य-भाषा तथा काव्य-विषय प्राय: विदेशी होते थे। कई कवियों की भाषा यहाँ के वातावरण के अनुकूल नहीं थी। इस भाषा पर विदेशी प्रभाव ऐसे ही छा गया था जैसे आकाश पर बादल छा जाते हैं।[१] आलोच्य-कवि ने इस विदेशी दासत्व को आँखें मूँद कर स्वीकार नहीं किया अपितु इसके विपरीत कश्मीरी काव्य एवं भाषा पर स्थानीय एवं स्वदेशीय रंग चढ़ा दिया। श्री 'पुष्प' ने लिखा है :- "'महजूर' ही पहले कश्मीरी कवि हैं जिन्होंने अपनी जन्मभूमि के सौन्दर्य और प्रेम के तराने गाये हैं। 'महजूर' ने ही सर्वप्रथम यह राग अलापा है कि हमारा कश्मीर एक 'गुलशन' है जिससे प्यार न करना सम्भव ही नहीं।"[२] पाम्पोर की हँसती केसर-वाटिकाओं का कश्मीर, मोती बिखेरने वाले जल-प्रपातों का कश्मीर, वेरीनाग, अच्छाबल एवं नील-नाग का कश्मीर, पहलगाम और गुलमर्ग का कश्मीर, सरसब्ज़-घाटियों का कश्मीर उसे सदा अपनी ओर आकर्षित करता रहा।[३] कश्मीर के प्राकृतिक लावण्य ने उन्हें लेखनी उठाने के लिये प्रेरित किया। वे बहुत समय तक इस अपूर्व सुषमा का पान एकान्त में करते रहे और जब उनका हृदय इस सौन्दर्य से सरा-बोर हो गया तो रस के छींटे उनके काव्य में बिखर गये। श्री शिवदान सिंह चौहान ने लिखा है :- " वे कश्मीर के बनों और घाटियों में घूमे हैं। इन

---

१. 'कश्मीरी भाषा एवं काव्य' - भाग १, 'आज़ाद', पृ० १०८।
२. 'महजूर की कविता में 'नया कश्मीर' - 'ग्रंथ-प्रवेशिका' — 'पुष्प', पृष्ठ १५१।
३. वही वही ।

लोगों के हर्षोल्लास, वेदना-व्यथा, आशा-निराशा का उन्होंने निकट से अनुभव किया है, उनकी सुप्त चेतना में जीवनाकाँक्षा, आत्म-विश्वास, मुक्ति-कामना, उन्नति-विकास की आशा के कणों को जीवन की सर्वग्राही विडम्बनाओं की राख में मुख दबाये पड़ा पाया है।"[१]

'महजूर' अपनी-काव्य-नायिका एवं नायक को कश्मीर के प्रत्येक कोने में, प्रत्येक सौन्दर्य स्थल पर ले जाता है। प्रेयसी उस सैलानी-प्रिय के लिये डोंगे का प्रबन्ध करती है :-

'सैलानी-प्रिय के लिये मैं डोंगा सजाऊँगी और मेला दिखाने के लिये अच्छाबल ले जाऊँगी। प्रेम-मदिरा के प्याले भर-भर कर रखूँगी और अपना शीश उनके चरणों में नवाऊँगी। यूसमर्ग की शस्य-श्यामला भूमि का सौन्दर्य दिखाऊँगी और सब्ज़ घास रूपी मखमल बिछाऊँगी। नीलनाग में 'गिल' (एक पक्षी विशेष) के गाने सुनाऊँगी और अपना शीश उनके चरणों में नवाऊँगी।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५३१)

मानस बल कश्मीर की एक सुन्दर झील है जहाँ अस्त्य पर्यंटक घूमने जाते हैं। नायिका मानसबल में नौका में बैठकर अपने प्रिय की प्रतीक्षा करने का निश्चय करती है :-

'सिन्धु के किनारे-किनारे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मुरली बजाते-बजाते उसको पुकारूँगी और मानसबल में नौका लेकर जाऊँगी। वहाँ उसे अभिसार की उन मीठी-मीठी बातों की याद दिलाऊँगी और अपना शीश उनके चरणों में नवाऊँगी।"[३]
(देखिए परि० २, क्रमांक ५३२)

---

१. 'साहित्यालोचन' - शिवदानसिंह चौहान, पृष्ठ ११७।
२. क० म० ६, पृष्ठ ६।
३. क० म० ६, पृष्ठ १०।

'फील-डल' कश्मीर में मीठे पानी की एक प्रसिद्ध फील है। इसकी प्रसिद्धि भारत के अतिरिक्त संसार के अन्य देशों में भी फैली हुई है। इस फील की लावण्य-छटा दर्शकों के हृदय को आह्लादित करती है। यह फील आठ मील तक फैली है और प्रमुख रूप से इसके दो भाग माने जाते हैं – (१) 'बोड़-डल' अर्थात् बड़ा डल। (२) 'लोकुट डल' अर्थात् छोटा डल। मुगल राजाओं द्वारा निर्मित प्रसिद्ध शालमार, निशात और चश्माशाही इस फील के तट पर स्थित हैं। चश्माशाही के निकट 'परी-महल' एक खण्डहर है जिसके विषय में बताया जाता है कि मुगल राजाओं के प्रभुत्व-काल में यहाँ एक पुस्तकालय था। नायिका अपने प्रिय को परी-महल में ढूँढने जाती है :-

"मुझे धोखा देकर वह छैला चुपचाप भाग गया। अब मैं उसे ढूँढने परी-महल जाऊँगी। न जाने कहाँ बड़े-डल में, तेल-बल में या शालिमार बाग में होगा। मैं रो रही हूँ, मेरा हृदय दग्ध हो उठा है और शरीर विरहाग्नि से भस्म हो गया है। प्रंग (तहसील गान्दरबल में एक रम्य स्थान) में द्रंग, प्रंग या कुटुहार (तहसील अनन्तनाग में प्रसिद्ध स्थान) में, न जाने कहाँ पर प्रियतम का मन रम गया है।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५३३)

प्रेयसी प्रियतम को मनाती है और आग्रह करती है कि :-

"डल-सैर का मज़ा तो लो और निशात बाग तथा शालिमार बाग के सौन्दर्यपूर्ण दृश्य देखकर आनन्दित हो जाओ। मैं उस पथ पर अपनी दोनों आँखें बिछाऊँगी, तनिक नैया में बैठकर शीघ्र चले आओ।"[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ५३४)

---

१. क० म० १० , पृष्ठ २।

२. क० म० ३ , पृष्ठ ३।

श्री शिवदानसिंह चौहान ने लिखा है – 'कश्मीर संसार के सबसे सुन्दर देशों में से है। प्रकृति ने अपना वैभव जितना कश्मीर में बिखेरा उतना अन्यत्र कहीं नहीं। देश-विदेश के असंख्य यात्री प्रकृति के इस वैभव की अनुपम सुषमा और वैविध्य का साक्षात्कार करने जाते हैं और जैसे सम्मोहित होकर लौटते हैं।'[१]

'महजूर' भी इस स्वर्गिक-विभूति से अभिभूत हुआ था और परिणाम-स्वरूप 'गुलशन वतन कु सोनुई' कविता के द्वारा उनकी भावनाओं का प्रस्फुरण हुआ :-

'पाम्पोर में केसर-वाटिका पूरे यौवन पर है मानो पाम्पोर की भूमि हँस रही है। वहाँ जाकर तुम स्वस्थ हो जाओगे और तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। हमारा देश फूलों की एक सुन्दर वाटिका है। वेरीनाग, डूरू और अच्छाबल में तोते और जल-पक्षी अपने मधुर कंठ में बोल रहे हैं (प्रकृति के भाट हैं जो उसके सौन्दर्य का बखान करते हैं) उनकी उस ध्वनि को सुनने शीघ्र आ जाओ, हमारा देश फूलों की एक सुन्दर वाटिका है। जाकर अहरबल के जल-प्रपात की सौन्दर्य सुषमा को देखो। क्या प्राकृतिक दृश्य है ? वहाँ जल कण मोती के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। हमारा देश फूलों की एक सुन्दर वाटिका है।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५३५)

गुलमर्ग और औलि पत्थर का सौन्दर्य भी देखते ही बनता है :-

'गुलमर्ग, औलिपत्थर, नीलनाग एवं गोगजी पत्थर में बसंत ने मखमल के समान घास बिछादी। हमारा देश एक फुलवारी के समान है।'[३] (देखिए परि०२, क्रमांक ५३६।

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृष्ठ १६६।
२. प० म० १., पृ० १४।
३. वही , पृ० १५।

डा० पद्मनाथ गैंज़ू ने लिखा है – 'महजूर ने इस नन्दन बन के अनेक सौन्दर्य-चित्र प्रस्तुत किये हैं। अहराबल, आरिबल, कौंगिबटन, यूस, सोकनाग, नीलनाग आदि स्थानों के सुन्दर प्राकृतिक दृश्य 'महजूर' के काव्य में सुरक्षित है।'[१]

'बागि निशात के गुलो' 'महजूर' की एक सुन्दर रचना है जिसमें निशातबाग के फूलों के प्रति उसका भावुक हृदय पुकार उठा है। कविता में आरम्भ से लेकर अन्त तक स्थानीय रंग दिखाई देता है और अप्रत्यक्ष रूप से निशात के सौन्दर्य का बखान भी किया गया है। कश्मीर के चारों ओर पर्वत शृंखलाएँ प्राकृतिक दीवार की तरह खड़ी हैं जिन पर बर्फ पड़ी रहती है और ऐसा प्रतीत होता है कि दीवार पर बर्फ की सफेदी को गई है, वे शैलमालाएँ रवि की रश्मियों से इतनी आभा विकीर्ण करती हैं कि संगमरमर जैसी लगती हैं :-

'चारों ओर से श्वेताम्बरधारी पर्वत शृंखलायें हैं मानो संगमरमर की दीवारें हैं और बीच में सब्ज़ जौहर सजा हुआ है।'[२] (देखिए परि०२,क्रमांक ५३७)

श्री चौहान ने लिखा है – 'ऐसा गुलशन जहाँ गुलेलाला और सदा-बहार और श्याम सुन्दरी के फूल अपनी सौन्दर्य-छटा एवं सौरभ बिखेरते हों, सूरज की किरणें पहाड़ की ऊँची चोटियों को जगमगाती हों। - - - - प्रकृति के मुक्तोल्लास के ऐसे चित्र जनता के लिये अनुभूत हैं।'[३] लेखपाल होने के

---

१. 'महजूर' - 'तामीर-अंक' - 'महजूर के काव्य की कलात्मक उपलब्धियाँ' – डा० गैंज़ू, पृ० ३४।
२. 'महजूर' - 'पुष्प', पृ० ४८।
३. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८६।

कारण `महजूर` देश के चप्पे-चप्पे से परिचित थे । अत: `आँखिन देखी` घटनाओं एवं दृश्यों के वर्णन के कारण उनकी कविता में सजीवता आ गई है । `नया-कश्मीर` उस समय एक राष्ट्र-स्वप्न था जिसका सजीव-वर्णन सर्वप्रथम `महजूर` की कविता में मिलता है । `नया-कश्मीर` के महान् आदर्श की साहित्यिक अभिव्यक्ति तथा जनता के सुख-स्वप्न का साकार रूप `महजूर` ने हमारे सामने रखा ।[१] कश्मीर के भविष्य के स्वर्णिम-चित्र `नया-कश्मीर` के महान लक्ष्य की सफलता के द्योतक होंगे –

`तारसर और मारसर अमृत-सर के समान हो जायेंगे (जैसे औद्योगिक केन्द्र अमृतसर है वैसे ही तारसर और मारसर भी औद्योगिक उत्पादन के केन्द्र बन जायेंगे)। ~~उत्पादन का एक केन्द्र~~ और `तोसमदान` सूरत बन्दरगाह के समान बन जायेगा ( काफी चहल-पहल और उसकी रौनक बढ़ जायेगी ) कॉगिवटन में एक कारखाना खोला जाएगा ।`[२] (देखिए परि०२, क्रमांक ५३८)

आकाश में घनघोर घटा छाई है, बिजलियाँ कड़क रही हैं मानो आकाश का वक्षस्थल फटा जा रहा है । अहरबल (जल प्रपात) में बिजली के कड़कने से कवि-हृदय में भी एक विचित्र बिजली कड़कती है :-

`प्रकाश पुंज बिजुली ! जब तुम अहरबल के ऊपर से चमकती हो तो नगर और गाँव में उसका प्रकाश फैल जाता है । मैंने तुझे सन्नाबल (अनन्तनाग)

---

१. 'The back-ground to the New Kashmir idea is clearly mirrored by the Kashmiri Poets of the Period and Mahjoor, the foremost among them, waxed eloquent over the theme'. 'Kashmir today' - September 1957 - 'The New Kashmir in Kashmiri verse. I. P.N. Pushp. Page 1.

२. प० म० ३, पृष्ठ ११ ।

में प्रेम-रस बाँटते हुये देखा । तनिक अपना पूरा स्वरूप तो दिखा दो ।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५३६)

इस प्रकार भू-स्वर्ग कश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य तथा यहाँ के विभिन्न स्थानों का उल्लेख कहीं पृष्ठभूमि के रूप में तो कहीं उद्दीपन के रूप में ~~तो कहीं उद्दीपन के रूप में~~ और कहीं आलम्बन के रूप में हुआ है । श्री 'पुष्प' ने लिखा है – "उनके काव्य के बाह्य पक्ष तथा आन्तरिक-पक्ष दोनों पर स्थानीय रंग निखरता ही गया ।"[२]

प्रतीकात्मकता :

`महजूर` की काव्य-कला की सफलता का रहस्य उसकी प्रतीकात्मकता में निहित है । प्रतीकों के माध्यम से वे विषय की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते हैं । इस प्रतीकात्मकता के कारण उनके काव्य में मार्मिकता आ गई है, अभिव्यक्ति सजीव ढंग से हुई है और काव्य की कलात्मकता में निखार आ गया है । परम्परागत संकेतों को उन्होंने नवीन अर्थ में ग्रहण किया । गुल और बुलबुल की ओट में उन्होंने कश्मीर की राजनीतिक-क्रान्ति में सहयोग दिया है । नरगिस और भ्रमर की ओट में प्रेमी और प्रेमिका के प्रेम-विह्वल हृदयों को मिलाया है । वास्तव में वह एक ऐसा युग था जिसमें विचार-स्वातंत्र्य पर शक्ती-राज्य की लगाम लगी थी । वातावरण कुछ विषैला था अत: `महजूर` की वाणी स्पष्ट न होकर संकेतात्मक बन गई । काव्य में संकेतात्मक अभिव्यक्ति कला की एक महान् विशेषता मानी जाती है । संकेतों के प्रयोग से `महजूर` के दोनों उद्देश्य पूर्ण हुये हैं । अमूर्त में मूर्त और कहीं मूर्त में अमूर्त का संकेत करके उनकी कल्पना सजीव बन पड़ी है । जनता की भावनाओं

---

१. क० म० ८ , पृष्ठ १० ।
२. `महजूर` - `पुष्प` , पृ० १४ ।

को उभारने में इनके प्रतीकात्मक काव्य का काफी योगदान रहा है। (भ्रमर) 'बोम्बुर' और 'यम्बिरज़' (नरगिस) के द्वारा 'महजूर' ने प्रिय और प्रेयसी की प्रेम-लीलाओं की ओर सुन्दर संकेत किये हैं। प्रेमिका अपने प्रिय के साथ रहकर नन्दन-बन का सुख-प्राप्त करती है जहाँ 'बोम्बुर' भी है और 'यम्बिरज़ल' भी। इसी प्रकार 'हीमाल' और 'नागराय' के द्वारा उन्होंने अपनी काव्य-नायिका और नायक की ओर संकेत किया है :-

'काश ! नागिराय आ जाते और दर्शन सुख से लाभान्वित करते और हीमाल उसे अपनी कथा सुनाती।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४०)

पतझड़ में फूल डालियों पर ही मुरझा जाते हैं, लेकिन पतझड़ में मुरझाये हुये फूल ही बसन्त में विकसित होते हैं। पतझड़ के तूफान को फूल मूक रूप से सहन करते हैं। शोषकों के शोषण की ओर संकेत कितना मार्मिक एवं काव्यमय है :-

'पतझड़ के तूफान को फूलों की कलियाँ मूक रूप से सहन करेंगी और बसन्त एक दिन आकर पुकारना आरम्भ करेगा। वही खिल उठेगा जो अपना शीश खंजरों के आगे कर देगा। पर्वत शृंखलाओं की चोटियाँ जगमगा उठी।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४१)

'महजूर' सदा एक उपवन के नव-निर्माण में व्यस्त रहते हैं। 'बाग सजाने और बनाने' की बात उनकी काव्य-साधना के अन्तिम चरण में अधिक मुखरित हो उठी है। श्री चौहान ने लिखा है – 'वे हमेशा एक नया बाग लगाने की बात करते हैं जिसमें बुलबुल को ताजदारी हासिल हो, उसी के मज़हब

---

१. क० म० ३, पृष्ठ १२।

२. क० म० ६, पृष्ठ १४।

की पैरवी हो, जहाँ गुलेलाला अगुरु जलाते हों, सूरजमुखी सोने की अशर्फियों के थाल भरती हो, भौंरे नरगिस के फूल पर मस्त होकर मँडराते हों, पोशि-नूल (बसन्त का मधुर-भाषी पक्षी) मीठा संगीत सुनाता हो, कँटीली आरावल की झाड़ी में भी देवदार के पैवन्द लगते हों - - - - - - - ऐसा गुलशन जहाँ गुलेलाला और सदाबहार और श्यामसुन्दरी के फूल अपनी सौन्दर्य-छटा एवं सौरभ बिखेरते हों, सूरज की किरणें पहाड़ की ऊँची चोटियों को जगमगाती हों।"[१] वे माली को बसन्तागमन पर उपवन की शोभा में वृद्धि करने के लिये उत्साहित करते हैं।[२] क्योंकि उनका दृढ़ विश्वास है :-

"घातक पक्षी धीरे-धीरे नष्ट हो जायेंगे। बुलबुल और कोस्तूर प्रसन्न-चित् गीत गायेंगे। हमारे उपवन की तुलना नन्दनबन से होगी। केवल तुम अपने उपवन से परिचित हो जाओ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४२)

'कृष्णपक्ष' शब्द का प्रयोग करके 'महजूर' ने सुन्दर संकेत किया है :-

"अब दिन बहुत ही निकट आ रहे हैं। कृष्ण-पक्ष समाप्त होगा और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का उदय होगा, सर्वत्र प्रकाश फैल जायेगा।"[४] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४३)

---

१. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान, पृ० १८६।

२. 'It implored the 'gardner' to bring about the glory of a new Spring and to battle against the foes of the gardner - the cold winter and the killing frost'.
'Kashmir' - May 1958 'Singer of Kashmir's Freedom' - Farooq, A. Qureshi.

३. प० म० ४, पृष्ठ ७।

४. प० म० ४, पृष्ठ १०।

उपवन में कलियाँ अर्द्धमृत अवस्था में दम तोड़ रही हैं, क्योंकि उनके जीवन-स्रोत सूख गये हैं। माली की प्रशंसा करते हुये कवि ने लिखा है :-

'उपवन की कलियाँ मुरझा गई हैं क्योंकि चश्मे का पानी सूख गया है। अब बादल बनकर मुझे आकाश पर चढ़ना है और वर्षा का रूप धारण करना है।'[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४४)

विदेशी-आतंक से जनता काँप उठी है। कवि युग-नेता के रूप में जनता को मृत्यु से खेलने के लिये आमंत्रित करते हैं, उन्हें आवागमन पर विश्वास है। बसंत और पतझड़ के द्वारा इस तथ्य की ओर संकेत किया गया है :-

'कलियाँ पतझड़ में मुझा जाती हैं और बसन्तागमन के अवसर पर पुन: उनमें नव-जीवन का संचार होता है। मृत्यु के पश्चात् पुन: किसी रूप में जीव बनना पड़ता है, अत: मृत्यु से डरना क्या! यदि श्रावण की समाप्ति पतझड़ में तेज़ वायु के झोकों से होगी और फूल भी भाग जायेंगे (अर्थात् मुरझायेंगे) परन्तु उस पतझड़ को भी अधिक देर टिकना नहीं है।'[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४५)

श्री पी० एन० 'पुष्प' ने लिखा है - 'कश्मीर के राजनीतिक-जीवन के विषय में पतझड़ और बसंत के संकेत प्रसंगानुकूल, सजीव एवं समर्थ हैं।'[३] 'उपवन' और 'माली' के अतिरिक्त 'गुल' और 'बुलबुल' के संकेत भी 'महजूर' के काव्य में मिलते हैं। उपवन के सौन्दर्य में 'गुल' के खिलने से और बुलबुल के चहकने से चार-चाँद लग जाते हैं। बुलबुलों (देशवासियों) के अनेक प्रकार से शोषण

---

१. प० म० २, पृष्ठ १३।

२. क० म० ६, पृष्ठ १६।

३. 'तामीर' - 'महजूर अंक' - पृ० ११ - 'पुष्प' - 'महजूर मेरी नज़र में'।

हुये हैं जिनकी ओर संकेत करते हुये `महजूर` ने लिखा है :-

"उन बुलबुलों पर बाणों की वर्षा हुई। कठोर-हृदयी आततायियों ने उन्हें अनेक प्रकार से नष्ट करने का प्रयत्न किया। उनके रक्त से सारा उपवन रंगीन हो गया। अनेकों बेज़बान-बुलबुल मृत्यु शय्या पर सुला दिये गये।"[१] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४६)

अत: `महजूर` उस बसन्त के स्वागतार्थ व्याकुल हैं जिसमें गुल और बुलबुल निराशा, निरहीता एवं व्याकुलता के द्योतक न बनकर प्रसन्नता के अग्रदूत बन गये हों। वे माली से उस बसन्त के विषय में कहते हैं :-

"मेरे उपवन के माली ! तनिक उपवन में बसंत का लावण्य एवं सौन्दर्य उत्पन्न तो कर। जब कि फूल खिल जायेंगे, बुलबुलें खुशी से चहक उठेंगीं, तुम तनिक ऐसे उपकरण तो जुटा लो।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४७)

इस युग में `महजूर` के पुष्पों की महक तथा बुलबुल की चहक में प्रणय की भावना न रही, यहाँ उनका बुलबुल स्वतंत्रता का गाहक और बागवान जनता का शुभ-चिन्तक है।[३] उनकी कई कवितायें गुल और बुलबुल से सम्बंधित हैं जिनमें उसका कौतुक, राष्ट्र-सन्देश, व्यापक लक्ष्य एवं महान उद्देश्य की अभिव्यक्ति हुई है। लक्ष्य-प्राप्ति का समय जब समीप आ रहा था तो `महजूर` ने उसकी ओर भी संकेत किया है :-

`प्रभात के समय जब मैं जाग्रत हुआ तो कानों में अबाबील की आवाज़

---

१. प० म० २, पृष्ठ ८।

२. प० म० १, पृष्ठ १।

३. `योजना` - मार्च १९६२ `महजूर एक अध्ययन` - सुश्री कृष्णा कौल, पृ०२४।

सुनाई दी । मैंने जान लिया कि शीत-काल व्यतीत हो रहा है और बसन्त अपने आने की सूचना दे रहा है ।"[१] (देखिए परि०२, क्रमांक ५४८)

वह आज बुलबुल को उपवन में आने का निमंत्रण देता है, क्योंकि :-

"उपवन में नाना रंगों के फूल खिले हैं । मेरे बुलबुल ! तनिक फूलों का दर्शन करने तो आ जाओ । रंगीन-उपवन में फूलों की सभा लगी हुई है । मेरे बुलबुल ! तनिक फूलों का दर्शन करने तो आ जाओ ।"[२] (देखिए परि० २, क्रमांक ५४९)

उनका विश्वास है कि पूंजीपति वर्ग का अंत हो जायेगा और सर्वहारा वर्ग का राज्य स्थापित होने में कोई सन्देह नहीं :-

"उपवन सदा शस्य-श्यामल रहेगा । यहाँ की सादगी ही इसकी सुरक्षा करेगी । पतझड़ की तेज़ वायु के झोकों से पूंजीपति पीले पड़ कर नीचे गिर जायेंगे ।"[३] (देखिए परि० २, क्रमांक ५५०)

इस प्रकार 'महजूर' के काव्य में प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग हुआ है । इन प्रतीकों से उनके काव्य में लाक्षणिकता आ गई है और कथन भी मार्मिक बन पड़ा है ।

निष्कर्ष :

'महजूर' ने शोक-गीत तथा चतुर्दशपदी गीत (Sonnet) नहीं लिखे

---

१. क० म० १०, पृष्ठ १६ ।
२. क० म० ३ , पृष्ठ ६ ।
३. क० म० ७ , पृष्ठ २ ।

हैं और नहीं उन्होंने अनुकान्त कवितायें लिखीं । कश्मीरी-साहित्य में वे सूर्य के समान हैं जिसके प्रकाश से अज्ञान रूपी अन्धकार के घने बादल छंट गये और साहित्य ने एक नवीन करवट ली । वे आज हमारे बीच में नहीं हैं परन्तु उनका काव्य हमारे साहित्य की अमर निधि है ।[१] श्री गुलाम मुहीद्दीन `मजबूर` ने लिखा है – `महजूर मरा नहीं, ज़िन्दा है क्योंकि उसने जिन कविताओं का सृजन किया और जिन गीतों का दीपक राग गाया वे उस समय तक जीवित रहेंगे जिस समय तक मानव हृदय में जीवन के प्रति प्रेम एवं सौन्दर्य के प्रति आसक्ति की भावना रहेगी ।`[२] `महजूर` कश्मीरी-साहित्य में प्राचीन और नवीन के मध्य की कड़ी है । वे सन्धि-काल में अवतरित हुये । आरम्भ में उन्होंने फारसी और उर्दू भाषा को अपनाया परन्तु शीघ्र ही वे इस मोह से मुक्त हुये और फारसी और उर्दू को छोड़कर , केवल कश्मीरी-भाषा में कवितायें लिखने लगे । एक चौथाई शताब्दी तक वे हमारे साहित्य पर छाये रहे और उन्होंने कश्मीरी-साहित्य में गीत और गज़ल की स्वस्थ, सुदृढ़ एवं पक्की नींव डाल दी । स्वतंत्रता के पश्चात् अस्वस्थ रहने के कारण `महजूर` अधिक न लिख सके । अनेक नव-युवक कवियों को उन्होंने प्रेरणा दी और परिस्थितियों के अनुकूल उनका नेतृत्व भी किया । भाव और भाषा दोनों क्षेत्रों में `महजूर` ने नवीन मूल्यों की स्थापना की । उन्होंने प्राचीन-परंपरा

---

१. 'The poet is now dead. We mourn his departure but the world he left us, the world of his mind, is permanently with us and our children.'

'Kashmir' - May, 1958. 'Singer of Kashmir's Freedom' - Farooq A. Qureshi - Page 146.

२. `तामीर` - `महजूर-अंक` - `महजूर का आखिरी सफर` - गुलाम-महीउद्दीन `मजबूर` , पृ० ५५ ।

का अन्धानुकरण नहीं किया । स्वामीभक्ति के हेतु उन्होंने प्रशंसापूर्ण पदावलियाँ नहीं लिखीं और धर्मान्धता के कारण फारसी भाषा को भाव-अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बनाया । प्रो० मुहम्मद यूसुफ ने लिखा है:- 'कलामे-महजूर एक तस्वीरखाना (चित्र-गृह) है जिसमें रंग-रंग की तस्वीरें नज़र आती हैं । 'महजूर' ने जड़ को चेतन और निराकार को साकार रूप देकर काव्य में चित्रित किया उन्होंने इन चित्रों को गोश्त-पोस्त (मांस-त्वचा) देकर इनमें गहरे रंग भर दिए ।'[१] जन-सामान्य के हृदय में 'महजूर' ने अपने लिये एक विशिष्ट स्थान बना दिया था और राष्ट्रीय-नेताओं द्वारा भी उनका उचित सम्मान होता था ।[२] उन्होंने 'कला को कला के लिये' नहीं अपितु 'जीवन के लिये' अपनाया है । उनका समस्त काव्य ठीक एक दर्पण के समान है जिसमें कश्मीर-वासियों का मानस-प्रतिबिम्बित है । 'महजूर' को नये-युग का पथ-प्रदर्शक भी कहा जाता है । पथ-भ्रष्ट जनता को उन्होंने एक नवीन दिशा की ओर मोड़ दिया । उन्होंने यथार्थ-जीवन का चित्रण किया है और भौतिक-जीवन के दु:ख सुख, आशा-निराशा, वेदना को काव्य-वाणी प्रदान की । प्रो० रहमान 'राही' ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया– ''महजूर' के काव्य के दो प्रमुख युग या रंग माने जा सकते हैं । एक युग वह है जब केवल रोमांस का आधिक्य है । प्रत्येक काव्य-पंक्ति से रोमांस छलकता है , दूसरा

---

१. 'तामीर' - 'महजूर - अंक' - 'महजूर के काव्य के शाश्वत गुण' - 'प्रो० मुहम्मद यूसुफ , पृ० ५१ ।

२. 'Mahijoor was held in high esteem by the nationalists and he too was their great admirer.'
'Struggle fof freedom in Kashmir' - P.N. Bazaz - Page 298.

युग वह है जब इस रोमांस की कविता पर यथार्थ की परिछाइयाँ पड़ने लगीं। दोनों रंग अपनी-अपनी जगह सुन्दर हैं और इन दोनों युगों में 'महजूर' ने सुन्दर कवितायें लिखीं हैं।"[१] अपने पूर्ववर्ती कवियों की तुलना में 'महजूर' की भाषा शुद्ध है और भाव भी अपने मौलिक हैं, उन पर फारसी मसनवियों के शृंगारवर्णन या जंगनामों का प्रभाव नहीं पड़ा है और नहीं 'महजूर' ने कवितायें लिखते समय उनकी ओर देखा। वास्तव में 'महजूर' के काव्य में भाव और भाषा का जो सुव्यवस्थित एवं प्रौढ़ स्वरूप मिलता है वह कश्मीरी साहित्य में अद्वितीय है। वे एक श्रेष्ठ-कलाकार थे। गम्भीर-व्यक्तित्व से सुशोभित 'महजूर' सरस्वती के धनी थे। श्री 'पुष्प' ने लिखा है - 'कश्मीरी-साहित्य के इतिहास में उनका नाम सदा अमर रहेगा।"[२]

साहित्य में उनकी देन महान है।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के काव्य की कलात्मक-उपलब्धियाँ :

स्वर्गीय 'नवीन' के काव्य के भाव-पक्ष का विशद विवेचन करने के उपरान्त यह परमावश्यक है कि उनके काव्य की कलात्मक उपलब्धियों पर भी सम्यक् प्रकाश डाला जाय। उनकी भावधारा जहाँ उत्कृष्ट एवं व्यवस्थित है वहाँ कलापक्ष भी स्वस्थ एवं परिपक्व है। यह सत्य है कि कहीं-कहीं पर कविता कामिनी को सजाने एवं संवारने की ओर उन्होंने अधिक ध्यान नहीं दिया है परन्तु इसका अभिप्राय कदापि यह नहीं है कि उनका अभिव्यक्ति-पक्ष निर्बल एवं शिथिल है। वे अपनी कविताओं के कलात्मक सौन्दर्य के प्रति सचेत थे।

---

१. 'राही' साहब से प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात - १-७-१९६७।

२. 'तामीर' - 'महजूर अंक' - 'महजूर-मेरी नज़र में' - 'पुष्प', पृ० ८।

'नवीन' जी प्रतिभा-सम्पन्न कलाकार थे और उनकी प्रतिभा जन्मजात थी।[१] उन्होंने पाण्डित्य-प्रदर्शन के मोह में या अपनी धाक जमाने के लिए कविता नहीं लिखी, हृदय के भीतरी तूफान को वाणी का वरदान देकर वे अभिव्यक्त करना चाहते थे। आन्तरिक पीड़ा को कागज़ पर बहाये बिना उनका जी हल्का हो नहीं होता था। श्री हरिवंश राय 'बच्चन' ने लिखा है - 'उन्होंने कविता केवल इसलिए लिखी कि जग और जीवन के अनुभवों ने उनके हृदय में कुछ ऐसी हलचल मचा दी थी, ऐसा तूफान उठा दिया था, उनके नस-नस में ऐसी टीस भर दी थी, ऐसी ज्वाला जगा दी थी, कि वे लिखने को, अपने को अभिव्यक्ति देने को विवश थे। उन्होंने तभी लिखने के लिए लेखनी उठाई जब जब किसी गहन, गम्भीर, तीव्र, तीक्ष्ण अनुभूति ने उन्हें विचलित कर दिया।[२] इसके अतिरिक्त 'नवीन' जी एक भावुक कलाकार थे। वे बुद्धि को हृदय को दासी बना कर रखते थे अन्य जनों की भाँति हृदय की स्वामिनी बनाकर नहीं।[३] श्री अमृतलाल चतुर्वेदी ने लिखा है - 'जैसे श्रद्धेय पं० पद्मसिंह जी शर्मा प्रोत्साहन देने की साक्षात मूर्ति थे, उसी प्रकार भाई 'नवीन' जी भावुकता की जीती-जागती प्रतिभा थे।[४] भावावेश में कभी-कभी वे अपनी लेखनी पर नियंत्रण नहीं

---

१. 'नवीन' जी प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे। उनकी प्रतिभा में उत्पादा न होकर सहजा थी। वे कवित्व-शक्ति के नैसर्गिक-वरदान से विभूषित थे। वे जन्मत: कवि थे, गढ़े नहीं गये थे।
   - ''नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० ३८५।

२. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३ जुलाई १९६० - 'वह एक योद्धा थे' - 'बच्चन', पृ० ३५।

३. 'युवक' जून १९६० , 'और श्री 'नवीन' चल बसे' - रतनलाल बंसल, पृ० ३।

४. 'जन्मभूमि' - २९ अप्रैल १९६६ ('नवीन' विशेषांक) - 'भावुक 'नवीन' जी' - श्री अमृतलाल चतुर्वेदी, पृ० ११।

कर सके हैं जिस कारण उनका शिल्प-पक्ष आलोचकों को दुर्बल दिखाई देता है। 'नवीन' जी राजनीतिक योद्धा के नाते जीवन-पर्यन्त व्यस्त रहे। काव्य-साधना या साहित्य-सेवा के लिए उन्हें पर्याप्त समय नहीं मिलता था। वे नतमस्तक अपनी अर्चना के पुष्प साहित्य-देवी पर चढ़ाना चाहते थे। कभी राजनीति तो कभी शारीरिक रोग ने उनके मार्ग को अवरुद्ध किया अतः समयाभाव के कारण वे साज-सज्जा की ओर अधिक ध्यान न दे सके। वस्तुतः वे एक शुद्ध कलाकार थे।[१] उनमें अद्भुत कवित्व शक्ति थी[२], कोमल हृदय था एवं उर्वर कल्पना शक्ति थी। श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' ने लिखा है – 'साहित्य में आप की प्रसिद्धि एक ऐसे कवि की प्रसिद्धि रही है जो प्रचारक नहीं, शुद्ध कलाकार है; जो मनुष्यों को सुधारने के लिए नहीं, उन्हें लोकोत्तर आनन्द देने को गान करता है; जिसने शरीर समाज को और मन अपनी कला को दे रखा है।'[३] द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मकता तथा रूढ़ काव्य-शैलियों के प्रति एवं छायावादी युग की वायवी-कल्पना के प्रति उन्होंने विद्रोह किया क्योंकि उनका हृदय जीवन की ठोस अनुभूतियों एवं क्रान्तिकारी विचारों से आन्दोलित हो उठा था।[४] कला और कलाकार के विषय में 'नवीन' जी की अपनी निश्चित् मौलिक धारणाएँ थीं और उन्हीं को अपनाकर जीवन-पर्यन्त वे कविताएँ लिखते थे। स्वयं उन्होंने 'कुंकुम' की भूमिका में लिखा है – 'कला तो एक प्रकार के व्यक्तिगत उन्माद की भावना मूलक, कल्पना सह-गामिनी, सत्-चित्-आनन्दमयी अभिव्यक्ति है। इसे कोई कैसे बाँधे ? वह

---

१. 'बालकृष्ण में कवित्व बड़ा प्रबल है।' – 'आजकल' -अप्रैल १९६४ - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १९।

२. 'तन-मन-प्राण से वह कवि ही था।' - 'नर्मदा' - 'नवीन विशेषांक' १९६३, कविवर नवीन जी - 'बच्चन', पृ० ११४।

३. 'वट-पीपल' - 'दिनकर', पृ० ३१।

४. 'वे द्विवेदी-कालीन और छायायुगीन, दोनों तरह के कवियों से भिन्न थे। वे जीवन की ठोस अनुभूतियों, विदग्ध भावनाओं, क्रान्तिकारी विचारों,

(शेष अगले पृष्ठ पर)

बाँधे भी बँधी न रहेगी ।'[१] जो कुछ 'नवीन' जी ने लिखा उसमें 'पर जन हिताय' की भावनानिहित है, उन्होंने कला को व्यापार की वस्तु नहीं अपितु सत्-चित्-आनन्दमयी जीवन-वरदान के रूप में ग्रहण किया है ।[२] इस प्रकार सत्, चित् और आनन्द का समन्वयात्मक रूप उन्होंने शाश्वत कला का रूप माना है । मानव-कल्याण उनके साहित्य का प्रमुख उद्देश्य रहा है ।[३] एक सफल साहित्य-स्रष्टा के सभी गुण उनमें पाए जाते हैं । सत्-साहित्य के विषय में अपने विचार अभि-व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा है – ' मेरे निकट सत् साहित्य का एक ही मान-दण्ड है : वह यह कि किस सीमा तक कोई साहित्यिक कृति मानव को उच्चतर, सुन्दरतर, अधिक परिष्कृत एवं समर्थ बनाती है । वही साहित्य सत् है, वही

(पिछले पृष्ठ का शेष)

सहज-कल्पनाओं, सरल अभिव्यक्तियों के कवि थे ।उन्हें जीवन के हुल-हुलास ने ही रोने-गाने के लिए विवश किया था ।'

- 'नये पुराने झरोखे' - 'बच्चन' , पृ० २४ ।

१. 'कुंकुम' - भूमिका , पृ० ६ ।

२. 'कुछ अन्य गण्यमान्य कवियों की तरह उन्होंने अपने साहित्य का व्यापार नहीं किया । लाख कष्ट भोगे उन्होंने, लेकिन अपनी साहित्यिक आत्मा का न उन्होंने कभी मोल किया और न उसके बदले कभी किसी के आगे हाथ ही पसारा' ।

– 'सरस्वती' जून १९६०, श्री 'नवीन' का निधन –श्री वेंकटेश नारायण तिवारी ।

३. 'किसी भी साहित्य स्रष्टा की कृतियाँ, यदि वे मानव को ऊँचे उठाने वाली हैं, तो अमर होंगी । अन्यथा वे क्षण-स्थायी होंगी ।'

- 'क्वासि' - भूमिका , पृ० १९ ।

वही साहित्य कल्याणकारी एवं सुन्दर है जो मानव को स्नेहमय, श्रद्धाभरित, विचारवान् तथा चिन्तनशील बनाता है। वही साहित्य सत् है जो मानव में निरलस एवं निस्वार्थ कर्म रति जागृत करता है। वही साहित्य सत् है जो मानव को सर्वभूत-हित की ओर प्रवृत्त करता है।'[१] इस प्रकार 'नवीन' जी ने अपने साहित्य में 'सत्यम्-शिवं-सुन्दरम्' के भारतीय सिद्धान्त का पूर्णरूप से पालन किया है। कविता लिखने के लिए उन्होंने किसी से शिक्षा नहीं ली थी[२] यद्यपि उनके प्रेरणा-स्रोत कई महानुभाव रहे हैं। सशक्त एवं सुन्दर कविता के विषय में उनका विचार है कि ' - - - कविता में प्राण हैं तो वह सिर चढ़े जादू की भाँति बोलती रहेगी - - -।'[३] 'नवीन' जी स्वाधीन प्रकृति के जीव थे। यही कारण है कि वे विचारों की स्वाधीनता के पक्षपाती थे। आज भी उन्हें किसी विशेष खूँटे से बाँधना असम्भव है। श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन ने लिखा है - 'प्रौढ़ता पाकर बालकृष्ण ने शक्तिपूर्ण कविता की।'[४] शक्तिपूर्ण कविता लिखते समय उन्होंने न किसी वाद का समर्थन किया और न किसी का विरोध, न किसी के शत्रु बने और न किसी के मित्र।

---

१. 'रश्मि-रेखा' - 'नवीन' - भूमिका, पृ० ३।

२. 'लेकिन यह बता दूँ कि मैंने कविता के लिए किसी से 'इसलाह' नहीं ली। छन्दों और तुकों का ज्ञान था। संगीत भी मेरे प्राणों में बसा था।'
- 'मैं इन से मिला' - दूसरी किस्त, 'कमलेश', पृ० ४६।

३. 'मैं इन से मिला' - दूसरी किस्त, 'कमलेश', पृ० ५७।

४. 'वीणा' - 'नवीन' स्मृति अंक - सितम्बर १९६० , 'हिन्दी और राष्ट्रीयता का ऊँचा सेवक' - पुरुषोत्तमदास टण्डन, पृ० ४८७।

बालकृष्ण जी २०वीं शताब्दी में हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवियों में से हैं। यह हमारा दुर्भाग्य है कि उनकी कविताओं का प्रचार आज तक भी द्रुत गति से नहीं हो रहा है। हिन्दी पाठकों में उनके साहित्य का उतना प्रचार नहीं हुआ है जितना होना चाहिये था। अब उनका समस्त काव्य-साहित्य प्रकाशित हुआ है। अध्ययन करने पर उनकी रचनाओं में अनमोल रत्न प्राप्त होते हैं। उनकी कलात्मक उपलब्धियाँ अमूल्य हैं जिनका विवेचन क्रम से अगले पृष्ठों में किया जायगा। सचमुच वह एक ऐसा मोती था जो बिना मोल जीवन भर बिकता रहा।

विभिन्न काव्य-प्रयोग एवं गीति-काव्य :—

कविवर 'नवीन' की प्रतिभा बहुमुखी है। उन्होंने अपने जीवन-काल में विभिन्न काव्य-प्रयोग किए हैं। बन्ध के आधार पर उनके समस्त काव्य को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है - प्रबन्ध एवं मुक्तक। प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत उनका एक प्रसिद्ध महाकाव्य 'उर्मिला' एवं दो खण्ड-काव्य 'विनोबा-स्तवन' एवं 'प्राणार्पण' आते हैं एवं मुक्तक काव्य के अन्तर्गत उन की समस्त स्फुट रचनाएँ हैं जिनमें प्रधानता गीत-काव्य की है। उन्होंने आधुनिक युग को महाकाव्यों के सृजन के लिए अनुपयुक्त नहीं माना।[१] उनके विचारानुसार यह युग का दोष नहीं अपितु साहित्यकारों की रुग्ण-रुचि का परिणाम है। वे महाकाव्य को युग की आवश्यकता मानते हैं और इस आवश्यकता को पूरा करने में उन्हें विशेष सफलता मिली है। अपनी इस

---

१. 'सूक्ष्म में मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि मैं वर्तमान युग को विराट् काव्य-कृतियों या महाकाव्यों के सृजन के लिए अनुपयुक्त नहीं मानता।'
- 'उर्मिला' -'श्री लक्ष्मणाचरणार्पणमस्तु' - 'नवीन', पृ०(च)

प्रबन्ध-कृति के प्रबन्ध-निर्वाह में भी उन्होंने अपनी स्वच्छन्द प्रकृति एवं अलमस्त स्वभाव का परिचय दिया है। समस्त प्रबन्ध-कृति ५: सर्गों में विभक्त है और आरम्भ से लेकर अन्त तक उर्मिला की अनुमय जीवन-गाथा इसमें मुखरित हुई है। पंचम-सर्ग दोहा-सोरठा शैली के आधार पर लिखा गया है जिसमें उर्मिला के विरही-जीवन का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। डा० देवेन्द्र कुमार ने लिखा है— 'संस्कृत प्रबन्ध-काव्यों की वर्णन-क्षमता, रीतियुग की दोहा-शैली, द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मकता, छायावाद की गीतमयता और दार्शनिक उड़ान तथा प्रगतिवादियों की विश्व मानवता - एक साथ 'उर्मिला' में तरंगित है।'[१] 'उर्मिला' के लेखन-काल और प्रकाशन-काल में काफी अन्तर है जिस कारण इसका ऐतिहासिक एवं कलात्मक महत्व कुछ घट गया है। परन्तु जब हम इस कृति को उस युग की पृष्ठभूमि पर परखते हैं तो यह अपने में श्रेष्ठ एवं मौलिक प्रतीत होती है। गीति-शैली का इसमें लेखक ने सुन्दर-निर्वाह किया है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने लिखा है — 'मेरी दृष्टि में 'ऊर्म्मिला' हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य की विशिष्ट उपलब्धि है। हिन्दी की रामकाव्य-परम्परा को 'ऊर्म्मिला' काव्य एक मौलिक और नूतन प्रदेय है। वह एक श्रेष्ठ प्रबन्ध-काव्य भी है।'[२] इसके अतिरिक्त 'नवीन' जी ने दो खण्ड-काव्य भी लिखे हैं। 'विनोबा-स्तवन' में सन्त-विनोबा के त्याग तपस्यामय जीवन एवं 'प्राणार्पण' में गणेशशंकर विद्यार्थी के आत्म-बलिदान की करुण एवं रोमांचक कथा पद्य-बद्ध है। कला की दृष्टि से दोनों 'नवीन' जी की सफल कृतियाँ हैं यद्यपि शास्त्रोक्त सिद्धान्तों का अनुसरण दोनों में कम हुआ है।

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३० अप्रैल १९६२ - 'नवीन जी की पलकों में उर्मिला के आँसू' - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० १२।

२. 'जन्म भूमि' - २९ अप्रैल १९६६ - ('नवीन'-विशेषांक), पृ० ३. स्वर्गीय बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी।

मुक्तक-काव्य के अन्तर्गत बालकृष्ण 'नवीन' एक सफल गीतकार के रूप में सर्वाधिक प्रसिद्ध हुए हैं। गेय-मुक्तक के रूप में गीत एक स्वतंत्र साहित्यिक प्रयास है जिसमें कवि की निजी सूक्ष्म अनुभूतियाँ एवं भाव अभिव्यक्त होते हैं। श्रीसद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है - 'गीत एक स्वतंत्र साहित्यिक प्रयास है। वह संगीत और कविता के सुहाग की देन है। - - - (उसमें) मन की नाना मनोरम-वृत्तियों का विस्फोट भी मिल सकता है और उनका सधा हुआ निखरा रूप भी। कोई भी वस्तु, भाव, विचार, प्रवृत्ति और गति गीत का विषय बन सकती है। अभिव्यंजना में संगीत का मार्दव और नाद-सौष्ठव की योजना अनिवार्य है।'[1] भाव की एकता तथा अनुभूति की प्रखरता गीत के लिए नितान्तावश्यक है। संगीत या ज्ञेय-तत्व उसका शाश्वत गुण है। श्रीमती महादेवी वर्मा ने लिखा है - 'साधारणत: गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूति का वह शब्द रूप है जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके।'[2] गीत का एक और गुण संक्षिप्तता है। अनावश्यक विस्तार गीत के लिए अपेक्षित नहीं, तथापि गीत लम्बे और बड़े भी हो सकते हैं जिन में गीतकार अपेक्षाकृत विस्तार के साथ अपने तथ्य का या अनुभूति अथवा विचार का स्पष्टीकरण करता है। अत: संक्षिप्तता का गुण, गीत में, विचार, अनुभूति अथवा विषय पर आधारित होता है।[3] गीत में एक विचार या एक भाव या एक अनुभूति रहती है,

---

१. 'साहित्य तरंग' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १३२।

२. 'महादेवी का विवेचनात्मक गद्य', पृ० १४७।

३. 'गीतों में गेय तत्व को ही प्रधानता होनी चाहिए। उसमें संक्षिप्त करने की कला अपेक्षित नहीं है। तथ्य के आकार का छोटा होना दूसरी बात है और बड़े तथ्य को छोटे करने का प्रयास करना दूसरी बात है। गीत लम्बे और बड़े भी हो सकते हैं। - - - परन्तु गीत एक सीमा से बड़े नहीं हो सकते। संगीत के अंक में बँधा हुआ तथ्य उतने काल तक मन पर प्रभाव डाले रह सकता है जितने समय तक श्रोता संगीतमय रह सके और तथ्य उचट न जाय।'
- 'साहित्य तरंग' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १२८.

उसमें एक ही रस होता है। कभी-कभी एक ही मनस्थिति का चित्रण भी गीत बन जाता है। गीत का आधुनिक विकसित रूप प्रगीत है।[१] सामान्य रूप से दोनों में कोई विशेष अन्तर नहीं परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर इनका पारस्परिक अन्तर स्पष्ट होता है। प्रगीत में गीति-काव्य के सभी तत्व अन्तर्भूत रहते हैं। प्रगीत में गीत की अपेक्षा कवि का आत्म-प्रकाशन प्रधान रूप से होता है। गीतकार प्रगीत लेखक की अपेक्षा अपने सामाजिक-दायित्व के प्रति सचेत रहता है।[२] श्री शम्भूनाथ सिंह ने लिखा है – "गीत-काव्य की परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से संगीत की अपेक्षा रहती है। किन्तु प्रगीत-मुक्तकों में गेयता का कोई बन्धन नहीं रहता है। प्रगीत मुक्तक और गीत में स्वर या अर्थ की मात्रा के अनुपात के अनुसार भिन्नता आ जाती है।"[३] इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि प्रगीत एक प्रकार की विषयी प्रधान कविता होती है। कवि की आत्मानुभूति को शब्द और अर्थ के माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती है। गीत 'प्रगीत' का ही एक प्रकार है जिसमें प्रगीत की अन्य सब विशेषताओं के साथ-साथ गीति-तत्व अधिक मात्रा में होता है।[४]

'नवीन' जी के गीतों में उनका हृदय प्रतिबिम्बित हुआ है। गीतों के माध्यम से उन्होंने अपनी कोमल तथा सूक्ष्म अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया।

---

१. 'प्रगीत-शैली आज की अन्तिम उपलब्धि है।'
'हिन्दी कविता में युगान्तर' - सुधीन्द्र, पृ० ३२४.

२. 'आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य-सिद्धान्त' -डा०सुरेशचन्द्र गुप्त, पृ० ३३२।

३. 'छायावाद-युग' - शम्भूनाथ सिंह, पृ० २१२।

४. "'नवीन' और उनकी कविता' - कृष्णा चतुर्वेदी - (दिल्ली विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध)- सन् १९६०, पृ० ६८।

साहित्य-संसार में इन्हीं असंख्य गीतों के कारण 'नवीन' जी अमर हुए हैं। यह गीत उनकी ख्याति के शाश्वत प्रतीक एवं उनकी कीर्ति के स्मारक स्तम्भ हैं।[१] उन्होंने अनेक प्रकार के गीत लिखे हैं जिनमें भाव एवं भाषा की विविधता दर्शनीय है। उन्होंने शृंगार-गीत, वीर-गीत, राष्ट्रीय-गीत, प्रकृति सम्बन्धी गीत एवं दार्शनिक गीत लिखे हैं, इनके अतिरिक्त मृत्यु-सम्बन्धी कुछ शोक-गीत भी लिखे हैं। उनके कई गीतों पर लोक-गीत शैली का प्रभाव दर्शनीय है :-

" हमरे बलम कौं कोउ न जगइयो, कोउ जनि गाइयो मलार, रे,
कंगनन को खन-खन जनि करियो, ना पायल झनकार, रे ।
हम अनगिनत बलैयाँ लै कैं आई हैं पौढ़ाय, रे ;
तनक खनक सौं सजन जगैं हैं, है सुकुमार सुभाय, रे ;
सोए हैं पिय गहन तिमिर की कारी चादर ओढ़, रे ;
रंग महल के दीप बुझे हैं, बलम रहे हैं पौढ़ , रे ;
को उन फैंकियो इतै हँसी की मृदु किरणैं दै-चार, रे ;
हमरे पिया को कोउ न जगइयो, कोउ जनि गइयो मलार, रे ।"[२]

'नवीन' के गीति-काव्य की एक और विशेषता यह है कि इनमें उनका रस-सिक्त हृदय अभिव्यक्त हुआ है। उन्होंने अपने मन के क्रन्दन एवं गायन को ही इन गीतों में अभिव्यक्त किया है। इन गीतों में यत्र-तत्र उनकी सूक्ष्म-आत्मानुभूति देखने योग्य है :-

---

१. 'कविता के द्वारा हिन्दी कविता को प्रगीत शैली का जो प्रसाद मिला और जिसने छायावाद के युग में ही अपनी विशिष्ट ऐतिहासिक स्थिति बनाई उसके प्रवर्तकों में पं० माखनलाल चतुर्वेदी और पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का नाम प्रमुख है।' — 'जन्मभूमि' २६ अप्रैल १९६६ 'त्यागी, देशभक्त और सहृदय' - चतुर्वेदी (नरेशचन्द्र), पृ० ५.

२. 'क्वासि', पृ० ८२ ।

"कौन साध है अब मम हिय में, प्रियतम, तुमको क्या बतलाऊँ ?
केवल यह कि तुम्हें बिठला कर सम्मुख, मैं निज गीत सुनाऊँ !
बन कर गायन-छन्द और ध्वनि, प्रिय मैं तव सम्मुख मँडराऊँ।
इतना तो तुम भी जानो हो कि हे-प्रेरणा, सजन, तुम्हारी; -
जो कि हृदय में मेरे क्षण-२ छलक रही है रस की झारी !
वरना, तुम परवश का क्या बस ! क्या मेरी कविता बेचारी ?
छोड़ तुम्हारा अनुकम्पाश्रय, बोलो आज किधर मैं जाऊँ ?
आओ, मेरे सम्मुख, प्रियतम, मैं तुम को कुछ गीत सुनाऊँ ।"[१]

श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है - "गीत में एक तथ्य के साथ-साथ एक ही निवेदन, एक ही रस, एक ही परिपाटी होती है। उसका प्रवेश भी एक ही प्रकार का होता है। - - - बस गीत की व्याख्या भी उतनी ही होनी चाहिए जितनी उसकी रमण-उपयोगिता है।"[२] 'नवीन' जी के गीतों की एक विशेषता यह है कि उनमें आरम्भ से लेकर अन्त तक एक ही भाव रहता है। भावान्विति का गुण उनमें सर्वत्र विद्यमान है। इसके अतिरिक्त अनुभूति की गहराई भी सर्वत्र देखने को मिलती है। कवि का कोमल-हृदय यत्र-तत्र अपनी मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त हुआ है :-

"प्राण, तुम मेरे हृदय दुलार ; अमिय-मय मेरे करुणागार ;
प्राण, तुम मेरे हृदय दुलार !
तुम मेरे दिवसों के उपम , मम निशीथ के स्वप्न ,
तुम मेरे जीवन - विहान को नव-अरुणा छवि-सार ;
प्राण , तुम मेरे हृदय दुलार !"[३]

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'मैं तुमको निज गीत सुनाऊँ' , पृ० ७६ ।
२. 'रश्मि रेखा' - 'गीत काव्य और बालकृष्ण शर्मा नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी , पृ० ४ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'प्राण, तुम मेरे हृदय-दुलार' , पृ० १७ ।

संक्षिप्तता 'नवीन' जी के गीतों की एक और विशेषता है। कहीं-कहीं पर उनके गीत लम्बे भी हो गए हैं, परन्तु उनका सौन्दर्य नष्ट नहीं हुआ है।[१] उन के अधिकांश गीत अपने संक्षिप्त-कलेवर के कारण मार्मिक बन पड़े हैं। बालकृष्ण के गीतों की एक और विशेषता यह है कि उनके गीत सरल, सहज एवं बोधगम्य हैं। जो कुछ वे कहना चाहते थे उसे स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया है। उसे अपनी अनुभूति से किसी प्रकार का कपट नहीं था अत: निश्छलता का व्यवहार उसने सर्वत्र बरता है।[२] उनके सहज-हृदय के बोल देखते ही बनते हैं :-

" कभी सँवारे थे हमने भी उनके कुन्तल-पुंज ,
वे संस्मरण आज आये हैं बनकर काले नाग,
कहो ? अब क्या होली ? क्या फाग ?"[३]

स्वत: स्फूर्ति अथवा सहज अंत: प्रेरणा गीत का एक और आवश्यक तत्व है। 'नवीन' जी के अधिकांश गीत उनके जीवन के दुख-सुख और उतार-चढ़ाव से सम्बन्धित हैं। वे एकदम उनके मन से निसृत हुए हैं।[४] कहीं उनका व्याकुल हृदय झलक पड़ता है तो कहीं क्रोधित एवं क्षुब्ध होकर हुँकार उठता है। कहीं उनके गीतों से करुण रस की धारायें फूट पड़ती हैं तो कहीं शृंगार-रस के स्रोत उमड़ आते हैं :-

---

१. 'क्योंकि 'नवीन' जी के गीत संवेदनात्मक हैं, कथात्मक नहीं, एक तो इसलिए उनमें संक्षिप्तता है और दूसरे वे एक ही भाव को लेकर चलते हैं इसलिए भी उनमें संक्षिप्तता है।'
—'नवीन' और उनका काव्य - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० २०७.

२. 'अर्थ और भाव चाहे कितनी कोठरियों में बन्द क्यों न हो, उसका सूत्र द्वार पर ही मिलना चाहिए जिसके सहारे अथवा झटके से सारी ध्वनि सनक में आ जाय। यह बड़ी सराहना की बात है कि बालकृष्ण के गीत दुरूह और अस्पष्ट नहीं है।' - 'रश्मिरेखा' - 'गीतकाव्य और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० ११.

३. 'रश्मिरेखा' - 'महारी क्या होली ? क्या फाग ?', पृ० ८६।

४. 'नवीन' और उनका काव्य - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० २०७।

"क्या रोऊँ अब तक की अपनी असफलता की गाथा ?
उसके अमित भार से मेरा झुका हुआ है माथा ।
तुम से छुपा नहीं है मेरा लम्बा-चौड़ा खाता ;
बीत चले हैं मम जीवन के यों बेकार पहर दो !
प्रियतम , अब अन्तरतर भर दो ।
प्रियतम , आज एक वर दो ।"[१]

'नवीन'जी के गीतों में अपूर्णता का दोष नहीं है । पूर्णता के अभाव में गीत अपने उद्देश्य में असफल होता है । वह मात्र उक्ति-वैचित्र्य या विशृंखलित-भाव-खण्ड बन जाता है । गीत के लिए आरम्भ की पंक्ति से ही परिस्थिति को संगीत के सहारे क्रम-क्रम से ऊपर चढ़ने के लिए एक भाव-सोपान मिलना चाहिए जिसमें लचक का सौन्दर्य और झूला चाहे हो परन्तु उखड़ी सीढ़ियों पर कूदने की आवश्यकता न पड़े ।[२] 'नवीन'जी के गीत इस दोष से भी पूर्णतः मुक्त हैं । उन्होंने अपनी मर्म-वेदना के गीत बड़ी तन्मयता से गाए हैं । उन्होंने गीत रूपी कली को अश्रुओं से सींच-सींच कर अपने हृदय-उपवन में पाला है :-

"मेरे प्रिय, मेरे हिय कौन हूक जागी यह ?
तुमने क्या छेड़ दिया ? कैसी लौ लागी यह ?
मेरी सुध-बुध सलज्ज, तव रति-रस पागी यह,
आह - घूम्र-यान चढ़ी डोल रही जग भर में
चमके तव अरुण, करुण नयन स्मरण अंबर में ।"[३]

---

१. 'अपलक' - '४र्थे वर्षान्त के दिन' , पृ० १६ ।
२. 'साहित्य तरंग' - सद्गुरु शरण अवस्थी, पृ० १३४ ।
३. 'रश्मि रेखा' - 'नयन स्मरण-अम्बर में' , पृ० ६ ।

श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है – ' बालकृष्ण के गीतों में मांसल भावुकता है, अभिव्यंजन की तिलमिलाहट है। प्रिय का रूप चिरन्तन आलम्बन है। अतीत के सम्पर्क स्मृति संचारी का काम देते हैं। रसराज शृंगार उनके गीतों का मर्म है।'[१] अपने गीतों में इस प्रेम-पुजारी ने विद्रोही बनकर अंगारे भी उगल दिए हैं।[२] छायावादी कवियों से उन्होंने अपने गीतों के लिए सौन्दर्य - भावना को अपना लिया। प्रकृति का माधुर्य भी उनके गीतों में यथासमय विद्यमान रहता है। 'नवीन' जी ने कुछ गीत पत्रोत्तर-शैली में और कुछ प्रश्नोत्तर-शैली में भी लिखे हैं। प्रश्नोत्तर-शैली का एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

प्रश्न : क्या गुनगुना रहे हो, कवि, ?
उत्तर : जीवन की टूटी तान।
विस्मृत-घटिकाओं के सपने का मीठा-सा गान,
आज गुनगुनाता हूँ अपने गत जीवन का राग,
याद नहीं पड़ते भूले स्वर, मिटे पुराने दाग।'[३]

'नवीन' जी ने मृत्यु-सम्बन्धी कुछ शोक-गीत भी लिखे हैं जिनमें रहस्यात्मक रूप से मृत्यु को काव्य का विषय बनाया गया है। इन शोक गीतों में दुःख एवं करुणा का साम्राज्य सर्वत्र व्याप्त है :-

---

१. 'साहित्य तरंग' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १३५।
२. 'उनके कुछ गीत तो अपने समय के अत्यन्त प्रसिद्ध गीतों में हैं तो मातृभूमि के उपासकों के लिए प्रेरणा-यन्त्र का कार्य किया है।'
– 'जन्मभूमि' - ६ मई १९६६ - 'राष्ट्रीय चेतना का सन्दर्भ तथा कवि 'नवीन' - श्याम बिहारी राय, पृ० ६।
३. 'हम विषपायी जन्म के' -'स्वागत', पृ० २५६।

"जीवन की गोदी में जब तक मृत्यु-प्रिया ने विराजे,
तब तक कैसे सृजन - लास्य हो ? कैसे डमरू बाजे ?
कैसे नव चेतन - शंख - ध्वनि तब तक गूँजे , गाजे ?
जब तक चेतन की ग्रीवा में हो न मरण की गाँसी ,
ऐसी महामृत्यु की फाँसी !"[१]

मृत्यु-धाम के विषय में 'नवीन' जी की उत्सुकता दर्शनीय है :-

"क्या तुम कह सकते हो कैसा है मृत्यु-धाम ?
देखा है क्या तुम ने वह गृह नयनाभिराम ?
कहाँ बना मृत्यु - धाम ?"[२]

'नवीन' जी ने सम्बोधन-गीत भी लिखे हैं जिनमें उनकी हृदय-स्थित जिज्ञासा, कौतूहल वृत्ति तथा पैनी दृष्टि का परिचय मिलता है :-

"अरी मानस की मदिर हिलोर !
मत बह, मत उठ, मत लहरा तू तेरा ओर न छोर ;
अरी मानस की मदिर हिलोर !"[३]

'नवीन' जी के गीतों की कुछ अन्य विशेषताओं (अलंकार, गुण, प्रकृति-चित्रण, भाषा, नाद-सौन्दर्य) पर अगले पृष्ठों में अलग से सविस्तार प्रकाश डाला जाएगा । यहाँ केवल इतना कहना आवश्यक है कि इन गीतों में कला सम्बन्धी कुछ दोष अवश्य हैं, जैसे भाषा का ऊबड़-खाबड़ रूप, कहीं-कहीं

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'जग में महामृत्यु की फांसी', पृ० ६२०।
२. वही 'कैसा है मृत्यु-धाम', पृ० ६१३ ।
३. 'रश्मि-रेखा' - 'अरी मानस की मदिर हिलोर', पृ० ५१ ।

पर विचारों की दुरूहता, अतिशय दार्शनिकता आदि परन्तु कुल मिलाकर यह गीत अपने में बेजोड़ है। श्री कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा ने लिखा है – "नवीन जी के काव्य के लिए पर्वतीय नदी की उपमा सार्थक पूर्ण उपमा है। कारण कि उनके गीतों में पर्वतीय नदी का-सा रोर है, कलकल भी है और सहजता भी है। साथ ही पत्थरों से पटराने का शब्द भी है।"[१]

'नवीन' जी ने कुछ वर्णनात्मक कविताएँ भी लिखी हैं जिनमें उनके वर्णन-चातुर्य की छटा दर्शनीय है। इन वर्णन-प्रधान कविताओं का आकार सामान्य कविताओं से कुछ बड़ा है और आकार की विशालता के साथ-साथ इनमें अनेक विचारों, अनुभूतियों एवं भावनाओं का समावेश हुआ है। इन कविताओं में विचार और विश्लेषण की प्रधानता है। 'कस्त्वं ? कोऽहं ?' 'निज ललाट की रेखा', 'सिरजन कोलाहल मेरी' आदि इस प्रकार की वर्णन प्रधान कविताएँ हैं। इसके अतिरिक्त 'नवीन' जी ने दोहा एवं सोरठा काव्य-शैलियों का भी उपयोग किया है। 'उर्मिला' के पंचम सर्ग में तथा 'हम विषपायी जन्म के' काव्य पुस्तक में 'नवीन' जी का समस्त दोहा-साहित्य सुरक्षित है। 'उर्मिला' के पंचम-सर्ग में ७०० से अधिक दोहे मिलते हैं जिनके बीच-बीच में सोरठे भी अपनी छटा बिखेर देते हैं। श्री उदयशंकर भट्ट ने लिखा है – 'इधर बिहारी की अनुकृति पर और भी बहुत से लोगों ने लिखा है। उसे सुना और पढ़ा भी, किन्तु ऊर्म्मिला के दोहे तो 'घाव करैं गम्भीर' थे।'[२] दो काव्य पंक्तियों में अपने भाव को समाहित करने की क्षमता 'नवीन' जी में देखने योग्य है :-

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १० जुलाई १९६० - 'नवीन जी की काव्य प्रतिभा पर एक समीक्षात्मक दृष्टि' - कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा, पृ०२७।

२. 'आजकल' - अक्टूबर १९५८ - 'ऊर्म्मिला काव्य' - उदयशंकर भट्ट, पृ०५३।

"गिरत परत उठि-२ चलत, गूंधत बीच सनेह ,
ढूँढ़ि रही इत-उत तुम्हें, प्रिय-वेदना अदेह ।"[१]

श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है -- "कवि की सबसे बड़ी कला यह है कि एक या अनेक चित्र अथवा व्यापार, दो पंक्तियों में इस प्रकार भर दें कि सम्मिश्रित बिम्बों की स्पष्टता भी नष्ट न हो और अकेला भाव, विचार और चित्र अलग चमकता रहे ।"[२] दोहों में 'नवीन' जी की चित्रण-शक्ति श्रेष्ठ है:-

"गंग-जमुन ज्यों मिलत हैं, श्री प्रयाग में आय ,
त्यों अँखियन की दोउ नदी, अंक मध्य मिलि जायँ ।"[३]

यह दोहे विभिन्न विषयों पर लिखे गए हैं जिनमें प्रधानता शृंगार (विप्रलम्भ) की है । 'हम विषपायी जनम के' शीर्षक काव्य-ग्रन्थ में 'नवीन' जी के २५६ दोहे संग्रहीत हैं । 'नवीन दोहावली' के माध्यम से 'नवीन' जी का एक ऐसा रूप सामने आता है जो अभी तक हिन्दी जगत् को ज्ञात नहीं था । २० शीर्षकों के अन्तर्गत यह दोहे एकत्रित किए गए हैं । यह दोहे ब्रज एवं खड़ी बोली दोनों में हैं । इन दोहों के माध्यम से 'नवीन' जी ने अपनी कल्पना-शक्ति, चित्रण-शक्ति एवं समाहार-शक्ति का सुन्दर परिचय दिया है । अनेक दोहों में सुन्दर शब्द-चित्र प्रस्तुत किए गए हैं , कहीं-कहीं खिचड़ी भाषा का प्रयोग भी हुआ है :-

" प्यारी इन अँखियान की बड़ी अटपटी नेह ,

---

१. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग, पृ० ४०५ ।
२. 'रश्मिरेखा' - गीत-काव्य और बालकृष्ण शर्मा , पृ०७-८ ।
३. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग, पृ० ४०६ ।

कबहूँ चमकत बीजुरी , कबहूँ बरसत मेह ।"[१]

अथवा

"जब हम माँगत अधर-रस, तबहीं तुम मुसकात,
फिर , नाहीं करिदेत हो, कहहु कौन यह बात ?"[२]

डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है – "'नवीन' जी के दोहों पर रीतिकालीन-काव्य का पर्याप्त प्रभाव है ।"[३] रीतिकालीन प्रभाव (भाव और शैली पर) उनके कई दोहो में अवश्य मिलता है जिन में भौतिक-प्रेम की गन्ध अथवा विलास की गन्ध भी मिलती है । माधुर्य गुण ऐसे दोहों का विशेष आभूषण है :-

" निशि तें दूनी प्रात में, बढ़त विरह की पीर ,
दिन ते दूनी रात में, जियरा होत अधीर ।"[४]

मुक्तक रचना की एक पद्धति के रूप में 'नवीन' जी के काव्य में सोरठा का प्रयोग भी मिलता है । दोहों के मध्य सोरठा का प्रयोग 'नवीन' जी ने उर्मिला महाकाव्य के पंचम सर्ग में किया है :-

" द्रुम - वल्लरी अधीर, वन्यों निराश्रित हृदय मम,
निरलम्ब की पीर, आश्रय दै, हरि लेहु , पिय ।"[५]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'नवीन दोहावली', पृ० २२७ ।
२. वही वही , पृ० २३१ ।
३. "'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य" - डा० दुबे , पृ० ३८६ ।
४. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग, पृ० ४२२ ।
५. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग, पृ० ४६३ ।

इस प्रकार यह तथ्य स्पष्ट होता है कि 'नवीन' जी ने विभिन्न काव्य-शैलियों का प्रयोग करके अपनी बहुमुखी प्रतिभा का सुन्दर परिचय दिया है। उनके काव्य में भावों एवं विचारों की विविधता के साथ-साथ भाषा एवं शैली की भी विविधता है। डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने लिखा है – " कवि की काव्य-शैलियाँ उस के विषयानुरूप हैं। उनमें मुक्तक-गीतों को ही, अनुपात एवं गुण के दृष्टिकोण से सर्वोपरि महत्व प्राप्त हुआ है।"[१]

काव्य-भाषा :

सचमुच 'नवीन' जी भाषा के धनी थे। उन्होंने हिन्दी भाषा में कविताएँ लिखी क्योंकि वे हिन्दी के घोर समर्थक थे। उन्होंने 'हिन्दी' शब्द को संकुचित अर्थ में नहीं अपितु व्यापक एवं विस्तृत अर्थ में ग्रहण किया और उसी अर्थ में उसका प्रयोग अपनी रचनाओं में करते रहे। वे हिन्दी भाषा की गरीबी से परिचित थे परन्तु वह इस भाषा को सदा अकिंचन ही नहीं अपने अपितु समृद्धशाली रूप में देखना चाहते थे। हिन्दी के लिए उन्हें जीवन में महान् त्याग करने पड़े। गान्धी और नेहरू से मतभेद हो गया।[२] शर्मा जी हिन्दी भाषा के सुकवि और सुलेखक ही नहीं थे, वे हिन्दी के उन्नयन में राजर्षि श्रीयुत पुरुषोत्तमदास जी टंडन के साथ थे।[३] उनका स्व-भाषा प्रेम अपरिमित

---

१. "'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य" - डा० दुबे, पृ० ३६६।

२. 'हिन्दी के राष्ट्रभाषा प्रश्न पर 'नवीन' जी का गांधी जी और श्री जवाहर लाल नेहरू से गहरा मतभेद हो गया था। महात्मा गांधी 'हिन्दुस्तानी' को राष्ट्रभाषा बनाना चाहते थे जिसे नवीन जी ने कभी भाषा के रूप में भी स्वीकार नहीं किया।'
– 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १२ दिसम्बर १९६५ - "'नवीन' जी की राष्ट्रभाषा-सेवा' - डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, पृ० १३।

३. 'सरस्वती' जून १९६० , 'त्याग का दूसरा नाम बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' , पं० माखनलाल चतुर्वेदी, पृ० ३८१।

था।[१] वे हिन्दी भाषा के सच्चे कवि थे और हिन्दी भाषा में नव-प्राण-प्रतिष्ठा करने वालों में अग्रगण्य थे। श्री शम्भूनाथसिंह ने लिखा है – 'भाषा का व्यवहार यों तो सभी करते हैं पर सच्चा कवि उसे अपनी वश-वर्तिनी बना कर रखता है। वह शब्द-शिल्प और भाषा की प्रकृति से पूर्ण परिचित होता है। भाषा की प्रकृति से परिचित होने के कारण वह उसकी लय को पकड़ कर अपनी कविता को प्रेषणीय बनाता है। शब्द-शिल्पी होने के कारण वह काव्य-भाषा में आकर्षण और सौन्दर्य उत्पन्न करके उसे उत्कृष्ट बनाता है।'[२] निस्सन्देह 'नवीन' जी में यह सभी गुण वर्तमान थे। सचमुच वे भाषा के निर्माता और प्रयोक्ता दोनों थे। अपनी भाषा का निर्माण उन्होंने स्वयं किया और तत्पश्चात् उसका प्रयोग अन्तिम समय तक करते रहे। उनका निजी विचार था कि अभिव्यक्ति कभी दुरूह नहीं होनी चाहिये। 'कुंकुम' की भूमिका में उन्होंने लिखा है – 'हमें इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि हम अपनी अभिव्यक्ति में दुरूह न हो जायँ। यदि हमारी अनुभूति में कोई विडम्बना नहीं है तो हमारा वर्णन भी स्वच्छ एवं निर्धूम होगा। अतः हमारे कविगणों को स्पष्टता की ओर ध्यान देना होगा।'[३] हिन्दी भाषा की उन्नति, उत्थान एवं भविष्य को ध्यान में रखकर वे इसके प्रयोग के विषय में अधिकतर स्वच्छन्द ही रहे हैं। उन्होंने शुद्ध खड़ी बोली, संस्कृत गर्भित हिन्दी, ब्रज मिश्रित खड़ी-

---

१. 'उनका राष्ट्र-प्रेम और स्वभाषा-प्रेम केवल साहित्य तक सीमित नहीं था। अपने आदर्श को प्रत्यक्ष जीवन के आचार व्यवहार में लाने का प्रामाणिक यत्न करने वालों में से वे एक थे और इस काम में बड़े दक्ष रहते थे।'
- 'राष्ट्रवाणी' - जून १९६० - 'स्वर्गीय नवीन जी', गो०प०नेने, पृष्ठ ६।

२. 'छायावाद - युग' - श्री शम्भूनाथसिंह, पृ० ३२७।

३. 'कुंकुम' - भूमिका, पृ० १७।

बोली, शुद्ध ब्रजभाषा, देशज-शब्द प्रधान खड़ी बोली एवं विदेशी शब्द-मिश्रित खड़ी बोली का प्रयोग किया है। इस प्रकार उनकी भाषा में विविधता आ गयी है। कहीं ग्रामीण-प्रयोग मिल हैं, कहीं अप्रचलित शब्द-प्रयोग एवं विचित्र-शब्द-प्रयोग मिल हैं और कहीं उर्दू-शायरी से प्रभावित होकर शब्दों को तोड़-मरोड़ कर प्रयोग में लाया है। श्री गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' ने लिखा है - "श्री 'नवीन' जी का मत था कि जनपदीय-भाषाओं को अपनाकर उनके शब्दों को अधिक से अधिक व्यवहृत किया जाय, जिससे राष्ट्रभाषा हिन्दी बलवती बनकर सर्वप्रियता प्राप्त कर सके।"[१] इस प्रकार खड़ी बोली हिन्दी को सुष्ठु अभिव्यंजना का अतीव मधुर एवं प्रांजल रूप उनके द्वारा प्राप्त हुआ है। शुद्ध खड़ी बोली में उन्होंने अनेकों रचनाएँ लिखी हैं जिनमें उनका कला-सौष्ठव, शब्द-लालित्य एवं भाव-प्रेषणीयता की शक्ति अनुपम है :-

"हैं जग के नागरिक सभी हम, सब जगभर यह अपना है,
सीमित देश - विदेश-कल्पना, मिथ्या भ्रम का सपना है,
देश-काल का अतिक्रमण कर बनना है हमको विजयी,
फिर क्यों खींचे हम अपनी यह सीमा-रेखा नयी-नयी ?"[२]

एक अन्य उदाहरण देखने योग्य है जिसमें कवि ने प्रश्नों की झड़ी सी लगा दी है :-

"स्मरणों से कब तक, प्रिय, रीता हिय फुसलाऊँ ?
कल्पना-हिंडोले पर कब तक मन दुलराऊँ ?

---

१. 'नर्मदा' - (नवीन-विशेषांक)- १९६३ - 'विलक्षण साधक श्री 'नवीन' — गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', पृ० ६६।

२. 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५५८।

कब तक स्मृति के बल पर अपने को हुलसाऊँ ?
कब तक पहनूँ प्रिय, तव कल्पित भुज-माल गले ?
दिन पर दिन बीत चले ।"[१]

आरम्भ में 'नवीन' जी ने बड़ी उदारता के साथ विदेशी भाषाओं के शब्दों का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया है, विशेष कर उर्दू, फारसी एवं अरबी भाषाओं के शब्दों, पदों एवं कहीं-कहीं पर वाक्यों का खुल कर प्रयोग 'नवीन' जी ने किया है। इन शब्दों का उन्होंने बड़ी कुशलता के साथ व्यवहार किया है। ऊपरी सजावट को न दर्शा कर यह शब्द आन्तरिक तथ्य का उद्घाटन करते हैं। विदेशी भाषाओं से उन्होंने अधिकतर उन्हीं जन-प्रचलित शब्दों को ही अपनाया जिन्होंने भारतीय आत्मा में प्रवेश किया है। इन शब्दों के प्रयोग से कहीं भाषा शिथिल बन पड़ी है[२] और कहीं अभिव्यक्ति दोषपूर्ण भी हो गई है परन्तु अधिकांशत: इनके प्रयोग से काव्य-सौन्दर्य (अभिव्यक्ति पक्ष) में वृद्धि हुई है। कहीं-कहीं उन्होंने उर्दू शब्दों का प्रयोग बड़े प्रवाह-पूर्ण ढंग से किया है। निस्सन्देह उनमें, विदेशी शब्दों को अपनी रचनाओं में फिट (fit) करने की अद्भुत शक्ति थी। यह उनके उदार दृष्टिकोण के भी परिचायक हैं। उर्दू, फारसी के शब्दों के प्रयोग के कुछ उदाहरण देखने योग्य हैं :-

(१) 'पर मेरे सँकरे अँगना क्यों आने लगे हुजूर ?

-- -- --

सब जग से बोली हो, हम से इतनी ख़फ़गी? हाय ?"[३]

---

१. 'क्वासि' - 'दिन पर दिन बीत चले', पृ० ३२।
२. 'भाषा की दृष्टि से 'नवीन' जी की कविताओं की भाषा सरल, सुबोध खड़ीबोली है। भाषा में नित्य-प्रति के व्यवहार में आने वाले उर्दू शब्दों का भी खुलकर प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं वाक्य भी शिथिल हो गए हैं।
- 'कवि-समीक्षा' - प्रो० श्यामलाकान्त वर्मा, पृ० २२६.
३. 'कुंकुम' - 'दो-पत्र', पृ० ८६-६०।

(२) 'आओ, क्या कातने लगीं तुम, इतने पतले तार सखी ?
इन तारों से चादर का बुनना होगा दुश्वार, सखी !'[१]

(३) 'कौन गीत गाऊँ मैं ? कहिये, सरकार, ज़रा ?'[२]

(४) 'कब पहना मुसाफिरी बाना ! हमने न अभी तक यह जाना ।'[३]

(५) 'ग़ाफ़िल , किस बीहड़ में भटका ? रे, ग़ाफ़िल, किस बीहड़ में भटका?'[४]

(६) 'साक़ी ! मन-घन-गन घिर आये, उमड़ी-२ श्याम मेघ-माला'[५]

(७) 'मत मुँह मोड़, अरे बेदरदी, काँटे तनिक निकाले जा'[६]

(८) 'हम कई दिनों से सुनते थे : होने को हैं दंगे-फिसाद ;
हम घृणित साम्प्रदायिकता का सुनने आये थे मत नाद ;
शाहन्शाही से लड़ने में जब एक ओर था राष्ट्र मगन
तब पैदा करने जाते थे कुछ लोग साम्प्रदायिक उलझन ;
ले अलम दीन औ' ईमाँ का चल पड़े अलम्बरदार कई ,
विष-बेलि सींचने को आये मज़हब के खिदमतगार कई ।'[७]

---

१. `कुंकुम` - `सखी` , पृ० ४५ ।
२. `अपलक` - `सुन लो प्रिय मधुर गान` , पृ० ५४ ।
३. `प्रवाहिनी` - सम्पादक प्रो० काशीनाथ दर - `थकित` कविता से उद्धृत ।
४. `क्वासि` - `दिग्-भ्रम` , पृ० ७१ ।
५. `रश्मि रेखा` - `साक़ी !!!` - पृ० ७३ ।
६. `रश्मि रेखा` - `मत मुँह मोड़, अरे बेदरदी` , पृ० ६१ ।
७. `प्राणार्पण` , पृ० १३ ।

(९) 'एक क़रिश्मा-सा होता है जग-जन की आँखों के आगे'।[१]

(१०) 'ख़ूब हुक्म देते हो स्वामी, भले बने तुम शाहंशाह ;
जब जो जी में आया वही कहोगे, तुम को क्या परवाह ?'[२]

इसके अतिरिक्त ख़ून, मिज़राबें, फ़ुर्सत , तपिश, बेहोशी, हिसाब, बेहाल, साया, नादानी, बेघर, मुसाफ़िर, फ़कीराना, तूफ़ान आदि शब्दों का प्रयोग भी 'नवीन' जी ने खुल कर अपनी कविताओं में किया है। उर्दू के प्रभाव वश उनके काव्य में कहीं-कहीं बड़ी सुन्दर अभिव्यक्तियाँ मिलती हैं। यहाँ उन्होंने उर्दू पदावली का बड़ी सुविधा के साथ सहर्ष प्रयोग किया है जिससे अभिव्यक्ति मार्मिक, मर्मस्पर्शी एवं पैनी बन पड़ी है :-

(१) 'सिसकने में ही मज़ा मिलता रहा ;
कसक की उस वेदना की आह से -
हम विपन्नों का कमल खिलता रहा।
दर्द को दिल से लगाया चाह से !!'[३]

(२) 'फिर से क्या आफ़त आयी।
दिल कहाँ गया वह अपना ?
है अजब हाल इस मन का
देखें हैं दिन में सपना।'[४]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'सिरजन की ललकारें मेरी !', पृ० ८०।
२. वही - 'असमर्थ', पृ० २४१।
३. 'कुंकुम', पृ० ११।
४. 'हम विषपायी जन्म के', पृ० ३६२।

(३) 'बिना पिये मानता नहीं वह, बिगड़ गयी है कुछ ऐसी आदत ;
कहाँ के रोजे , कहाँ की पूजा ? छुटी परस्तिश, मिटी इबादत ।
है ध्या उसको तो और ही कुछ, धरम-करम से उसे न राहत ;
वह छोड़ बैठा है सारे झंझट, हुई है बर्षों य' जब से आफ़त ।
इधर-उधर तैरती हैं आँखें - य' सुर्ख डोरे पड़े हुए हैं ;
सरूर छाया है लोचनों में, - तुम्हारे दर पे अड़े हुए हैं ।' [१]

(४) 'हो जाने दे ग़र्क़ नशे में ,
मत आने दें फ़र्क़ नशे में ;
ज्ञान - ध्यान-पूजा पोथी के-
फट जाने दे वर्क़ नशे में !
ऐसी पिला कि विश्व हो उठे एक बार तो मतवाला ।
साक़ी, अब कैसा विलम्ब ? भर-भर ला तन्मयता हाला ।' [२]

संस्कृत भाषा से 'नवीन' जी को विशेष अनुराग था । उन्हें संस्कृत का विधिवत् ज्ञान प्राप्त हुआ था और वे संस्कृत गर्भित हिन्दी को ही राष्ट्र भाषा एवं काव्य-भाषा के उपयुक्त समझते थे । उन्होंने अपनी रचनाओं में यत्र-तत्र संस्कृत शब्दों, पदों एवं कहीं-कहीं वाक्यों का भी प्रयोग किया है । [३] प्रधानत: 'नवीन' जी ने संस्कृत-निष्ठ भाषा अपनाई । इस दृष्टि से वे महादेवी

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' , पृ० ४०० ।
२. 'रश्मिरेखा' , पृ० ७४ ।
३. 'नवीन' जी ने एक ओर भाषा में सारल्य-विधान के लिए संस्कृत-शब्दों के प्रयोग का परामर्श दिया है और दूसरी ओर महाकाव्य में प्राचीन विषयों को नवीन रूप में ग्रहण करने की सम्भावना पर प्रकाश डाला है । प्रयोग-पक्ष की दृष्टि से उन्होंने अपनी कविताओं में 'अपनुर्भव', 'हेत्वाभास', 'विगतावलोकम', 'स्मरणांगन', 'शून्यार्णव', आदि तत्सम संस्कृत-शब्दों का व्यापक प्रयोग किया है ।
—'आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त'-डा०सुरेशचन्द्र गुप्त, पृ० ३३७।

वर्मा एवं जयशंकर प्रसाद के पथ के पथिक हैं ।[१] संस्कृत-प्रियता के कारण कहीं-कहीं भाषा क्लिष्ट हो गई है । कहीं कठिन समासों और कहीं संस्कृत की विभक्तियों-सहित शब्दों के प्रयोग के कारण उनकी अभिव्यक्ति दुरूह बन पड़ी है । ऐसे अवसरों पर 'नवीन' जी के भाव-पक्ष को समझना साधारण पाठक के लिए टेढ़ी-खीर है । पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने लिखा है – 'लेकिन बालकृष्ण की संस्कृतमयी हिन्दी लिखने और काव्य तथा साहित्य सम्बन्धी प्रतिभा प्रारम्भ में ही हम लोगों पर प्रकट हो गई थी ।'[२] संस्कृत-पदावली से युक्त उनके काव्य के कुछ उदाहरण देखने योग्य हैं :-

(१) 'नित्य सनातन, नित्य पुरातन ,
अति करुणायन , नित्य नवीन,
'दानं सम विभाजनं' - उसका
यह अद्भुत सन्देश अदीन ।'[३]

(२) 'नित एकत्व भाव धारा के चिर वाहक जो राम स्वयं,
'भुंजीथा: त्यक्तेन' मन्त्र के चिर साधक जो राम स्वयं ।'[४]

(३) 'माम् विद्धित्वम् जनक नन्दिनी, रामं विद्धि दशरथं त्वम् ,
विद्ध्यटवीं - त्वमयोध्या नगरीं गच्छ वनं त्वम् तथा सुखम् ।'[५]

---

१. ''नवीन' और उनकी कविता' - कृष्णा चतुर्वेदी , पृ० ७३ ।
२. 'युवक' - जून १९६० - 'भाई बालकृष्ण' - पं० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, पृष्ठ १७ ।
३. 'विनोबा -स्तवन', पृ० ६ ।
४. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २४१ ।
५. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २३७ ।

इसके अतिरिक्त तत्सम शब्दों के प्रयोग में उन्होंने अपने कला-नैपुण्य का सुन्दर परिचय दिया है। तत्सम शब्दों का प्रयोग उनके काव्य में यत्र-तत्र मिलता है। एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

(१) 'बनना है हमको निज स्वामी ;
ऊर्ध्व-वृत्ति, सत् - चित् - अनुगामी ;
वसुधा, सुधा-सिंचिता करके, हमें अमर फल खाना है ;
जो कि देव दुर्लभ है उसको इस धरती पर लाना है।'[१]

यत्र-तत्र 'नवीन' जी ने अपनी रचनाओं में तद्भव, देशज एवं ग्रामीण-शब्दों का भी प्रयोग किया है। श्री नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने लिखा है – 'कविता में वे किसी बन्धन के कायल नहीं हैं। भावों को प्रकट करने में संगीत में सुख्द लगने वाले शब्दों का मनमाने ढंग से प्रयोग करने में उन्होंने बहुत स्वतंत्रता ली है। - - - - वस्तुत: नवीन जी अपने भाव-भाषा और अभिव्यक्ति-प्रणाली में प्राचीनता से प्रभावित हो कर भी नवीनता को ढालने में सफल हुए हैं।'[२] अपने फक्कड़ स्वभाव का परिचय उन्होंने अपनी भाषा के प्रयोग में भी दिया है।[३] इस प्रकार बोलचाल की भाषा के प्रयोग से उनकी रचनाएँ सर्वग्राह्य बन

---

१. 'विनोबा-स्तवन', पृ० ३१।

२. 'हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर' - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ३४५-४६।

३. 'उनकी काव्य रचना में एक अपनापन है ; उनकी भाषा की अनगढ़, अटपटी अपनी शैली है ; यह रंग ही नया है। कूचा ही दूसरा है।" यह व्यक्तित्व का खरापन, यह अक्खड़पन और सहजता उनकी कविता में एक नया ही स्वर भर देती है।'

-'व्यक्ति और वांग्मय' - प्रभाकर माचवे, पृ० १००

पड़ी हैं। लल्ला, लीक, बरजना, ऊबड़-खाबड़ मारग, बरसों, बेर-बेर, निबाह, कागद, लुकटी, पाती, डगरी, बाट जोहना, मूरख, बीजुरी, चमाचम, आपुन, हमरे, जनाई आदि शब्द उनके काव्य में यत्र-तत्र प्रयुक्त हुए हैं जिनमें एक स्वदेशीपन है, अपनापन है और शैली का अटपटा-रूप-निखरता है। `चंगा` शब्द का प्रयोग बड़ा सुन्दर बन पड़ा है :-

कल तक जो सूखे-साखे थे, थे नंगे, भिखमंगे,
निरे ठिठरियों से लगते थे, दिखते थे बेढंगे,
थे जो ठूँठ, मूँठ मारे, वे आज हो गए चंगे; [१]

अंग्रेज़ी शब्दों का तद्भव रूप हिन्दी की अपनी मौलिक सम्पत्ति है जिसका यथासमय सदुपयोग `नवीन` जी ने भी किया है :-

(१) `वह देखो, खन्दक में सिकुड़ी - सिकुड़ाई बैठी है पल्टन ;` [२]

(२) `बैठ वायुयानों पर अपने वह बरसाता है ऐसे बम।` [३]

`नवीन` जी ने शुद्ध अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग भी एक आध स्थान पर अपनी कविताओं में किया है :-

(१) वह देखो, खन्दक में सिकुड़ी-सिकुड़ाई बैठी है पल्टन;
धरती माता की छाती पर मृत्यु उगलती है मशीनगन ; [४]

---

१. `रश्मि-रेखा` `तरुवर आज हुए अनुरागी` , पृ० ६६।
२. `हम विषपायी जन्म के` - `सिरजन की ललकारें मेरी !` , पृ० ४८।
३. वही वही , पृ० ५४।
४. वही वही , पृ० ४८।

(२) 'कैसे तुम्हें मैं पुकारूँ कहो, प्रेम,
जिस से इधर तुम ढुलो आज बेटेम ?'[१]

श्री कान्तिचन्द्र सोनरेक्सा ने लिखा है – ''नवीन' जी की काव्य-शैली को यह देशज-मिश्रित भाषा ही विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करती है।'[२]

ब्रजभाषा पर 'नवीन' जी को असाधारण अधिकार था। कहीं उन्होंने शुद्ध ब्रज का प्रयोग किया है, कहीं बुन्देली मिश्रित ब्रज को अपनाया और कहीं कानपुर के आसपास बोली जाने वाली ब्रजभाषा का प्रयोग किया। ब्रजभाषा में उन्होंने कुछ गीत भी लिखे हैं परन्तु अधिकांशत: ब्रज का प्रयोग उन्होंने दोहा-सोरठा के लिए ही किया है। ब्रज भाषा के द्वारा उनके गीतों में माधुर्य-गुण का समावेश हुआ है। श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है – 'ब्रजभाषा के ऐसे शब्दों का प्रयोग विरल नहीं है। यहाँ-वहाँ सभी दूर ये प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। ऐसे प्रयोगों के तीन कारण हैं – मात्रापूर्ति, माधुर्य-सृष्टि तथा तुकों का आग्रह।'[३] ब्रज-भाषा-काव्य में 'नवीन' जी का माधुर्य-रस-छलकाता हृदय उमड़ पड़ा है :-

(१) 'जब तैं सुरति सम्हारी तब तैं निरख्यौ तिमिर अपार,
कबहुँ न दामिनि रेख निहारी; लख्यौ न शशि सुकुमार ;
कब लौं वहन करैगौ हिय या अन्धकार कौ भार ?
कब चमकौगे बाल अरुण-सम, पिय, तुम ह्वैत, सिहात ?

---

१. 'अपलक' , पृ० ५८ ।
२. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १० जुलाई १९६० - ''नवीन' जी की काव्य-प्रतिभा पर एक समीक्षात्मक दृष्टि' - कान्ति चन्द्र सोनरेक्सा, पृष्ठ २७ ।
३. 'नवीन' और उनका काव्य' - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १९४ ।

बिथा या हिय की बरनि न जात,
छिन-छिन गिनत कलप शत बीते, अजहुं न होत प्रभात ;'[१]

(२) 'रस फुहियाँ झगरीं, गुजरिया, रस फुहियाँ झगरीं,
मेरे लगन-गगन में बरबस लरि-लरि उमरि परीं,
गुजरिया, रस फुहियाँ झगरीं ।'[२]

'नवीन' जी द्वारा ब्रजभाषा में दोहा-शैली का प्रयोग बड़ा सफल बन पड़ा है । यहाँ कवि कौशल एवं नैपुण्य दर्शनीय है । ब्रजभाषा विरह-व्यंजना में अवरोध पैदा न कर उसे सरसता प्रदान करती हुई सूर और बिहारी के अभिव्यंजना कौशल का स्मरण कराती है । काव्य की दृष्टि से उर्मिला में ब्रजभाषा के दोहों वाला पंचम सर्ग सर्वश्रेष्ठ है ।[३] अपनी कला कुशलता का प्रमाण कवि महोदय ने इन दोहों से दिया है :-

'मो अँगना फुलियाँ बरसि, सुख्याँ - सो चुमि जाँय ,
घन - बहियाँ, बहियाँ पकरि, लाइ निरह बुलाय ।'[४]

'प्राण पिरीते , तुम बिना सूनो भयो दिगन्त,
उदित होहु मन - गगन में, भरहु प्रकाश अनंत ।'[५]

'चले जाहु मोरे सजन , अनबोले, सकुचात ,
हिय की हिय में रहि गई, नेकु न निकसी बात ।'[६]

---

१. 'रश्मि रेखा' - 'बिथा याहिय की बरनि न जात', पृ० १०७ ।
२. 'रश्मि रेखा' - रस-फुहियाँ , पृ० ४६ ।
३. 'कल्पना' - जून १९६० - उर्मिला- देवीशंकर अवस्थी, पृ० ६३ ।
४. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग , पृ० ४०४ ।
५. वही वही , पृ० ४१५ ।
६. वही वही , पृ० ३९९ ।

श्री रामनारायण अग्रवाल ने लिखा है – 'उन्होंने संस्कृत निष्ठ ब्रज-भाषा में अपने हृदय का सत्य इन दोहों में संजोया है। यह ठीक है कि इन दोहों में वैयक्तिक अनुभूति की तीव्रता है, परन्तु इस तीव्रता ने ही इन दोहों का काव्यात्मक शृंगार भी किया है।'[१] समय तथा परिस्थितियों की मांग को पूरा करते हुए उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी का ही अधिक प्रयोग किया है और यह उन की काव्य-कला की एक विशेषता है कि उन्होंने खड़ी बोली को भी ब्रजभाषा की सरसता प्रदान की।

'नवीन' जी ने अपनी कविताओं में कुछ विशिष्ट शब्दों का प्रयोग किया है और उन्हें विशिष्ट अर्थ में ग्रहण भी किया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :-

(१) 'मैं कर पाया प्राण-स्फुरण कब अपने अभिव्यंजन-वाहन में।'[२]

(अभिव्यंजन-वाहन = शब्द)

(२) 'जब उठा आनद्ध लय का, मन्द ध्वनि गूँजी गगन में।'[३]

(आनद्ध = ढोल या मृदंग)

(३) 'जिस की ऊष्मा से है कुसुमित उपकरण-नीप',[४]

(उपकरण -नीप = इन्द्रिय रूपी कदम्ब वृक्ष)

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १६ दिसम्बर १९५६ - 'श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का ब्रजभाषा काव्य' - श्री रामनारायण अग्रवाल।

२. 'क्वासि', पृ० १७।

३. वही , पृ० २०।

४. 'रश्मिरेखा', पृ० ११।

(४) `तुम मम विद्रुम-लतिका, तुम मम मंदार-सुमन`[१]

(मंदार-सुमन = प्रवाल पुष्प अथवा स्वर्ग-सुमन)

(५) `मम अपूर्ण चाहों के तुम ही हो इच्छा-द्रुम`[२]

(इच्छा-द्रुम = कल्प-वृक्ष)

(६) `मानव की छाती पर मण्डित हैं अरूष-चिह्न ।`[३]

(अरूष् अर्थात् घाव, अरूष-चिह्न अर्थात् घावों के निशान)

(७) ` छाई जंजीरों की झन-झन ;
डंडा बेड़ी की यह घन-घन ;
गर्रे का अर्राटा फैला ,
यहाँ कहाँ पनघट की खन-खन ।`[४]

(गर्रा - बन्दी - गण बैल के सदृश जुतकर जिस यंत्र से कुएँ से पानी खींचते हैं, उसे गर्रा कहते हैं)

कहीं-कहीं शब्दों को तोड़-मरोड़ कर भी `नवीन` जी ने प्रयोग किया है । श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है – `कहीं शब्दों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके उनका रूप बदल दिया गया है । अलकाजोगी, संध्या-काले , सुखिया, अथोर, हरिमा, दोने, विकराली, बेतेल, मधुरा-पीट, अवलोका ,

---

१. `रश्मिरेखा` , पृ० २८ ।
२. वही , पृ० २९ ।
३. `क्वासि` , पृ० ५३ ।
४. `क्वासि` , पृ० ६७ ।

हिये , निराशी, अमापा, ज़हरी, आदि ऐसे शब्द हैं ।'[१]

'नवीन' जी ने व्याकरण के नियमों का भी एक आध स्थान पर उल्लंघन किया है ।[२] कहीं नायिका के लिए पिटे-पिटाये सम्बोधनों का प्रयोग किया है[३] और कहीं अपनी सूझबूझ से नाविक उक्तियाँ लिखने में सफल भी हुए हैं ।[४] निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'नवीन' जी के काव्य में भाषा के विविध रूप मिलते हैं । कहीं ऊबड़-खाबड़ स्वरूप मिलता है, कहीं संस्कृत गर्भित पाण्डित्य पूर्ण भाषा मिलती है , कहीं उनकी भाषा ब्रज-लोक की स्मृति दिलाती है और कहीं ठेठ हिन्दी बोली के दर्शन होते हैं । शब्द-निर्माण में वे बड़े कुशल थे । उनके शब्द ध्वनि-व्यंजक एवं अर्थप्रधान हैं । प्रो०दुर्गादत्त शास्त्री ने लिखा है – 'कभी शुद्ध संस्कृतमयी भाषा होती है, कभी ब्रजभाषा के शब्दों

---

१. 'नवीन' और उनका काव्य' - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १६६-१६७।

२. 'बहुत हुआ, इतना वय बीता, अब कुछ तो उत्तर दो ।
प्रियतम, अब अन्तर तर भर दो ।'
(वय पुंल्लिग नहीं अपितु स्त्रीलिंग है, अतः प्रयोग अशुद्ध है)
– 'अपलक' , पृ० १७.

३. 'गजगामिनी मन मानिनी, निरखो लागी आग हिये,
क्षार हो रहा सदन तुम्हारा, यह विपदा लखिये ,
सुनयने मेरी प्राण - प्रिये ।
– 'अपलक' , पृ० २३-।

४. 'प्रीतम के इस बिछुड़न को, वेदना बड़ी गहरी है ;
स्वप्निल अतीत की संस्मृति, आकर्षक है, जहरी है ।'
– 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग , पृ० ३४७.

से खेलते और कभी स्थानीय उक्तियों के शब्दों का प्रयोग स्वच्छन्दता के साथ करने लगते हैं।[१] उनकी शब्द-चयन-शक्ति प्रशंसनीय है। यह सत्य है कि भाषा की ओर, भाव की अपेक्षा उन्होंने अधिक ध्यान नहीं दिया परन्तु वे इसके प्रति उपेक्षाशील नहीं थे। उन्होंने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रख कर एक समन्वयकारी लेखक का उत्तरदायित्व निभाया। श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है -- 'बालकृष्ण में न तो भाषा सम्बन्धी झंझलाहट है और न शैली का अनगुस्सीपन। वह प्रखर और वेग-सम्पन्न है।'[२] खड़ी बोली हिन्दी को साहित्यिक रूप देने में उनका योगदान स्वर्ण अक्षरों से लिखने के योग्य है। भाषा-शैली के दृष्टिकोण से 'नवीन' जी का काव्य-साहित्य एक प्रयोगशाला है जिसमें स्वयं कवि ने अन्वेषक के रूप में विचित्र प्रयोग किए हैं, कहीं उन्हें आशातीत सफलता प्राप्त हुई है और कहीं उनके प्रयोग असफल भी हुए हैं।[३] उनकी काव्य-भाषा सशक्त है, अर्थ-सम्प्रेषण में समर्थ है, विविध है एवं ध्वनि-व्यंजक है। हिन्दी शब्द-कोष उनके योग-दान से धन्य हुआ है।

---

१. 'कल्लोल' - सम्पादक - प्रो० दुर्गादत्त शास्त्री, पृ० ११३।

२. 'आजकल' - अप्रैल १९६४ - 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० २१।

३. 'उनकी भाषा परिष्कृत है और भाव-सम्प्रेषण में वह अग्रगण्य हैं। शब्दों के मन माने प्रयोग उनकी कविताओं में भी मिलेंगे और लेखों में भी।
-- 'जन्मभूमि' - २९ अप्रैल १९६६, पृ० ५
'त्यागी, सहृदय और देशभक्त' - नरेश चन्द्र चतुर्वेदी।

संगीतात्मकता :

गीत-काव्य की प्रमुख विशेषता गेयत्व है । 'नवीन' जी के सभी गीतों में यह विशेषता मिलती है । संगीत से उन्हें विशेष अनुराग था । हिन्दी गीत काव्य को अत्यधिक रसमय एवं संगीतमय बनाने में जिन प्रमुख कवियों ने योग दिया उनमें 'नवीन' जी का महत्वपूर्ण स्थान है ।[१] अपनी एक भेंट में स्वयं 'नवीन' जी ने 'कमलेश' जी से कहा था - 'संगीत भी मेरे प्राणों में बसा था, क्योंकि माताजी बचपन में भजनों को कभी 'सारंग' में, कभी 'कान्हडा' में और कभी 'अवसारी' में गाती थी ।'[२] अत: यह बात स्पष्ट है कि संगीत का आरम्भिक ज्ञान उन्हें अपनी माता से प्राप्त हुआ था । और उनकी रुचि भी दिन प्रति दिन संगीत के प्रति बढ़ने लगी थी । उनके संगीत-प्रेम का परिचय निम्नलिखित काव्य-पंक्तियों से मिलता है :-

जब मधुर-मधुर , धीमे - धीमे ,
तुम आये मनहर , करुणायन ;
गूँजी विभास की स्वर - लहरी
चरणाभरणों की रुन-झुन से ,
मम मन-गगनांगन मगन हुआ
स-रे-ग-म-प-ध-नि-स की गुनगुन से ;'[३]

---

१. 'हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर' - नरेश चन्द्र चतुर्वेदी , पृष्ठ ३३६ ।
२. 'मैं इन से मिला' - (२) - 'कमलेश' , पृ० ४६ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तुम मेरी आँखों की पुतली' , पृ० ५६७ ।

'नवीन' जी का कंठ भी बड़ा मधुर था।[१] वे प्राय: सस्वर कविता-पाठ करते थे और श्रोताओं को अपने कंठ के माधुर्य से रसाभोर करते थे। उनकी कविताओं में कहीं-कहीं पर राग-रागिनियों के नाम भी दिए हैं। श्री 'बच्चन' ने लिखा है -- 'आवाज़ ऊंची और भारी, शब्द-शब्द का उच्चारण अलग-अलग, साफ़-साफ़, पूर्ण-अभिव्यंजना राग से ऐसी सधी, जैसे कोई पक्का गायक कविता सुना रहा है। - - - मेरे मुहल्ले में एक गवैया उस्ताद रहा करते थे, वे कहा करते थे, 'आठ बरद बर पावे, तब भैरव राग उठावे' - यानी आठ बैल का बल गले में हो तब भैरव राग गाया जा सकता है। - - -'नवीन' जी का गला भैरव राग गाने के लिए बना था। - - - उनकी कविताओं में कहीं कहीं रागों के नाम दिए हैं। मैं यह भी नहीं कह सकता कि जब वे काव्य-गान करते थे तब वह संगीत शुद्ध होता था या नहीं, पर उनकी वाणी की ओजस्विता, रस-सिक्तता और उनका स्वर-संयम किसी को प्रभावित किए बगैर नहीं रह सकता था।[२] पीलू-राग के आधार पर लिखी कविता 'प्राणधन, यह मदमत्त बयार' अनेकों संगीत-प्रेमियों के आकर्षण का केन्द्र बन गयी है :-

सुरभित बही बयार, प्राणधन, मादक बही बयार,
अठखेलियाँ द्रुमों से करती रुक-झुक बारंबार ;
प्राण घन, बही विमुक्त बयार।
वल्लरियों को नाच नचाती, करती लास्य - प्रसार,
पहनाती नव किसलय - दल को, मधुमर स्वर-हार,
प्राणधन, मादक बही बयार।[३]

---

१. 'मालवा का कंठ कितना मधुर है। हिन्दी के कितने सुकंठ कवि- बालकृष्ण, प्रदीप, गिरिजाकुमार, नीलकंठ तिवारी आदि - मालवा के हैं। बालकृष्ण में मालवा के माधुर्य और उत्तर-प्रदेश के पुंसत्व का अद्भुत मेल हुआ था। पदों को जब वे गाते तब भावविभोर हो उठते।'
-'सरस्वती' - जून १९६०- 'नवीन जी की कविताएँ', पृ० ३९५.

२. 'नये-पुराने-झरोखे' - 'बच्चन', पृ० २३।

३. 'रश्मि-रेखा', पृ० ३७।

इसी प्रकार 'बिहाग' और 'कलिंगड़ा' रागों के आधार पर भी 'नवीन' जी ने गीत लिखे हैं। 'बिहाग' राग का उदाहरण दर्शनीय है:-

'मत ठुकराओ मुझे, सलोनी, मैं हूँ प्रथम प्यार का चुम्बन।
मुझे न हँस-हँस टालो, मैं हूँ मधुरी स्मृतियों का अवलम्बन।'[१]

कलिंगड़ा-राग में 'माघ-मेघ' उनकी एक प्रसिद्ध रचना है :-

'अपर निशि काल में माघ के मेघ ये
निराहूत अतिथि-से आ गए री ;
उमड़ घन घोर जल धार बरसा रहे ;
गा रहे अटपटा राग ये री — ।'[२] (अपर०।)

इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि 'नवीन' जी को शास्त्रीय-संगीत का ज्ञान था और वे इसका अभ्यास भी करते थे।[३] रुग्न अवस्था में भी वे

---

१. 'रश्मि-रेखा' - 'प्रथम प्यार का चुम्बन', पृ० ४६।
२. 'रश्मि-रेखा', पृ० १०६।
३. 'शास्त्रीय संगीत से उन्हें हार्दिक अनुराग था। इसीलिए अत्यन्त व्यस्त दिनचर्या में से भी समय निकाल कर 'सरस्वती-समाज' तथा बाद में 'गांधर्व महाविधालय' का अध्यक्ष होना उन्होंने स्वीकार किया। - - - - - आकाशवाणी द्वारा आयोजित एक कवि सम्मेलन की अध्यक्षता उन्हें करनी थी। उसे एक दिन पूर्व वे विधालय आये। पर्याप्त समय लगाकर उन्होंने स्वर सहित काव्य-गायन का अभ्यास किया। अगले दिन देशराग में तानपूरे साथ ओजस्वी कंठ स्वर युक्त कवि-पाठ से उन्होंने सभी को मन्त्र मुग्ध कर दिया।'
— 'जन्मभूमि' - २६ अप्रेल १९६६ 'संगीत प्रेमी 'नवीन' जी' - आचार्य विनयचन्द्र मौद्गल्य, पृ० १४-१५.

संगीत-सम्मेलनों में उपस्थित रहते थे । श्री विनयचन्द्र मौद्गल्य ने लिखा है - 'वे कहते थे कि दवा से बढ़कर संगीत से मुझे लाभ होगा ।'[१] उन के गीतों में स्वर तथा लय का अद्भुत सामंजस्य रहता था । एक संगीतज्ञ होने के कारण उनकी कविताओं में यह गुण स्वयमेव समा गया है । संगीतात्मकता के प्रवाह में उनका भावुक हृदय भी अश्रुओं के रूप में बह गया है । स्वयं सस्वर कविता पाठ करते समय या किसी अन्य संगीतज्ञ के कवितापाठ को सुनते समय वे अपने अश्रुओं को निरन्तर बहाते रहते थे । सचमुच भगवान ने उन्हें वाणी का विलास दिया था ।[२] प्रसाद एवं माधुर्य-गुण सम्पन्नता के कारण संगीत-तत्व की रक्षा उन की कविताओं में विशेष रूप से हुई है । भैरवी-तिताला एवं सोरठ-देश रागिनों में भी उन्होंने अपनी कोमल भावनाओं को अभिव्यक्त किया है :-

'रस फुहियाँ झगरीं , गुजरिया, रस फुहियाँ झगरी ;
मेरे लगन-गगन में बरबस लरि-लरि उमरि परीं ;
गुजरिया , रस फुहियाँ झगरीं ।'[३]

सोरठ-देश का उदाहरण दृष्टव्य है :-

'आज मम हिय-अजिर में मन-भावनी क्रीड़ा करो तो ,

---

१. 'जन्मभूमि' - २६ अप्रैल १९६६ - 'संगीत प्रेमी 'नवीन'जी' - आचार्य विनय चन्द्र मौद्गल्य , पृ० १५ ।

२. 'संगीत का विधिवत् अभ्यास उन्होंने किया, पर उनके कंठ में स्वरों का स्वाभाविक आरोह-अवरोह और ध्वनि का सहज कम्पन है, जिसके कारण वे बहुत सुन्दर गा लेते हैं ।'
- 'मैं इन से मिला'(२) - 'कमलेश' , पृ० ५६.

३. 'रश्मि-रेखा' - 'रस-फुहियाँ' , पृ० ४६ ।

दरस-रस-कसकनमयी तुम लगन-मधु पीड़ा भरो तो ;
यह खड़ी है दरस-आशा एक कोने में लजीली ,
परस-उत्कण्ठा उठी है झूमती-सी यह नशीली ,
आज मिलने में कहो क्यों कर रह हो हठ हठीली ?
मन-हरण गज-गमन -गति से चरण मन-मन्दिर धरो तो ;
आज मम हिय - अजिर में
मन - भावनी क्रीड़ा करो तो ;[१]

जोगिया-तिताल में उन्होंने `जाह्नवी के प्रति` शीर्षक कविता लिखी है जिस में गंगा के प्रति सम्बोधन बड़ा मार्मिक बन पड़ा है :-

` गंगे, क्यों उमड़ी जाती हो ?
निशि दिन किस अद्भुत-गायन की
कौन कड़ी गाती हो ?
गंगे, क्यों उमड़ी जाती हो ?`[२]

श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने `नवीन` जी के गीतों के विषय में लिखा है — `इन गीतों की सबसे बड़ी विशेषता उनका संगीत मार्दव है । पंक्तियों का उद्देश्य मूर्तिमान चित्रों द्वारा दृष्टि अनुरंजन उतना नहीं है जितना कि वातावरण के संकुल स्वरूप में परिस्थितियों के रूप-व्यापारों को श्रवण-चित्रों में उपस्थित करना है ।`[३] वास्तव में संगीत कवि के तन्तु-तन्तु में परिव्याप्त था।[४]

---

१. `हम विषपायी जन्म के` - `गीत` , पृ० ३०२ ।
२. `कुंकुम` , पृ० २५ ।
३. `रश्मिरेखा` - `गीत काव्य और बालकृष्ण शर्मा` - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृष्ठ १६ ।
४. `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य , डा० दुबे , पृ० ३६३ ।

इसके अतिरिक्त उनकी कई रचनाओं पर लोक-गीतोंका भी प्रभाव पड़ा है। लोक-गीतों की धुन एवं लय के आधार पर उन्होंने कुछ कविताएँ लिखीं हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

> " हमरे बलम कौं कोउ न जगइयो, कोउ जनि गइयो मलार, रे,
> कँगनन की खन-खन जनि करियो, ना पायल झनकार, रे ।"[१]

डूबा देने वाले संगीत के नाद से उन्होंने सर्वत्र मादक वातावरण की सृष्टि की है। उनका काव्य नीरस तुक-बन्दी मात्र नहीं, उसमें संगीत एवं भाव का अपूर्व समन्वय है। निस्सन्देह संगीतात्मकता का गुण उनके काव्य की विशेष-उपलब्धि है।

अलंकारों का प्रयोग :

'नवीन' जी ने यत्र-तत्र अपने रचनाओं में अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया है। उन्होंने ने अलंकारों को काव्य की शोभा के साधन-मात्र माना है। उनके विचारानुसार अलंकार भाषा में 'अलंकरण' के साधन हैं। अलंकारों का प्रयोजन भाव (अर्थ) व्यंजन में शोभा की सिद्धि करना है।[२] काव्य की आत्मा उन्होंने रस को माना है और रस-निष्पति में सहायक स्वरूप अलंकारों को अपनाया है। अत: रसभावादि को प्रधान तथा अलंकारों को गौण-स्थान दिया है। अलंकारों की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए उन्होंने उनका प्रयोग बाधक रूप में नहीं किया। साध्य तक पहुँचने के लिए वे पथ के साधन हैं। अलंकारों के प्रयोग से काव्य में प्रेषणीयता का गुण आता है और कथन में मार्मिकता एवं अनूठापन का समावेश हो जाता है। अलंकार काव्य में सुन्दरता

---

१. 'क्वासि' , पृ० ८२।
२. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - श्री सुधीन्द्र, पृ० ३४३।

लाने के साधन हैं। `नवीन` जी ने शब्दालंकारों तथा अर्थालंकारों दोनों का प्रयोग बड़ी सुविधा के साथ अपनी रचनाओं में किया है। शब्दालंकारों में अनुप्रास, श्लेष, पुनरुक्ति प्रकाश तथा अर्थालंकारों में उपमा, रूपक, व्यतिरेक, सांगरूपक, उत्प्रेक्षा, सन्देह, उदाहरण, विरोधाभास आदि अलंकारों का `नवीन` जी ने सौन्दर्य-वृद्धि के हेतु प्रयोग किया है। निरर्थक अथवा सार्थक वर्णों की आवृत्ति में अनुप्रासालंकार होता है। इस अलंकार का प्रयोग `नवीन` जी ने अधिकांशत: अपनी रचनाओं में किया है :-

छेकानुप्रास :(१)मेरे प्राण खिलौने से रह जाएँगे इस बार ,
तार तोड़ती , तुम क्यों निर्गुण वीणा बन जाती हो ?
गंगे , क्यों उमड़ी जाती हो ?[१]

(२) अधर लालिमा से रंजित ये मोती मटक रहे हैं ,[२]

(३) प्रबल प्रतापी राजकुँवर वह आर्य्य मुकुट का मणि था।[३]

(४) चलित चरणों की जगह अब कब मिलेंगे ध्रुव चरण वे ?[४]

वृत्यानुप्रास: (१) इस सेवक को ज़रा बता दो -
वह सुन्दर सुरम्य सुस्थल ,[५]

(२) बाल-क्रीड़ा-मय भवन है, सौख्य-सौन्दर्य-सिक्त,[६]

---

१. `कुंकुम` - `जाह्नवी के प्रति` , पृ० २८।
२. `उर्मिला` - प्रथम सर्ग , पृ० २६।
३. वही -वही , पृ० ३६।
४. `क्वासि` - `कब मिलेंगे ध्रुव चरण वे ?` , पृ० १।
५. `कुंकुम` - `बेबसी` , पृ० ४६।
६. `उर्मिला` - प्रथम सर्ग , पृ० ३५।

अन्त्यानुप्रास : प्राची को पश्चिम करने की, क्यों यह मन में ठानी ?
ऊषा को सन्ध्या करने की यह कैसी मन-मानी ?
उदयाचल अस्ताचल में मत परिवर्तित कर डालो ,
कुछ दाग तो मेरे सुहाग का कुंकुम तनिक सँभालो ।[१]

'नवीन' जी ने श्लेष का प्रयोग बड़ी कुशलता से अपनी रचनाओं में किया है । 'नवीन' की कविताओं से कुछ उदाहरण दृष्टव्य है :-

(१) आर्यों के ये सुखद गृह हैं स्वच्छता के सुधाम ।[२]
(आर्य - सभ्यजन, जन-पुर निवासी)

(२) मिथिला-सर से युगल मछलियाँ आ पहुँची हैं गँसी हुईं ;[३]

(३) डोला लिये चलो तुम फटपट, छोड़ो अटपट चाल, रे ,
सजन-भवन पहुँचा दो हमको , मन का हाल-बिहाल, रे ;[४]

पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार का भी प्रयोग 'नवीन' जी ने अपनी रचनाओं में किया है।यहाँ ‡ काव्य की सौन्दर्य वृद्धि के हेतु एक ही शब्द, एक ही अर्थ में एक से अधिक बार प्रयोग में लाया जाता है :-

(१) 'सिहर, सिहर उठता है स्पर्श-स्मृति में शरीर ,
रोम-रोम मेरे , प्रिय, हो उठते हैं अधीर ।'[५]

---

१. 'अपलक' - 'तुम बिन सूना होगा जीवन' , पृ० ३८ ।
२. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग , पृ० १८ ।
३. वही - द्वितीय सर्ग , पृ० ८६ ।
४. 'क्वासि' - 'डोले वालो' , पृ० ४७ ।
५. 'अपलक' - 'सुन लो प्रिय, मधुर गान', पृ० ५४ ।

(२) 'झाँकी कर लेने दो, वरना ये लोचन बेचैन,
तड़प, तड़प कर बन जाएँगे सूरदास के नैन ।'[१]

शब्दालंकारों की अपेक्षा 'नवीन' जी ने अर्थालंकारों का प्रयोग अधिकतर किया है। यहाँ काव्य-चमत्कार शब्दों के प्रयोग पर निर्भर न रहकर उनके द्वारा ध्वनित अर्थ पर निर्भर रहता है। अर्थ की रमणीयता एवं मनोहरता इनका मूलोद्देश्य होता है। यह सब अलंकार काव्य में निहित रस एवं भाव के आश्रित हैं। उपमा ने यत्र-तत्र-सर्वत्र 'नवीन' जी द्वारा दुलार पाया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :-

'आज नींद के श्यामल घर में, -
मूर्छा के उस अन्तर - तर में, -
मृदुल किरण-सी, नव-केतन-सी,-
सहसा तुम आईं कम्पन-सी ,'[२]

मालोपमा का एक उदाहरण 'नवीन' जी के वचन-चातुर्य पर सम्यक् प्रकाश डालता है :-

'कुछ गीला-सा, कुछ सीला-सा अतिथि-भवन जर्जर-सा,
आँगन में पतझर के सूखे पत्तों का मर्मर-सा ,
आतिथेय के रुद्ध कण्ठ में स्वागत का घर्घर-सा,
यह स्थिति लखकर अकुलाहट हो क्यों न अतिथि के मन में ?
प्राणों के पाहुन आए औ' लौट चले इक क्षण में ।'[३]

---

१. 'कुंकुम' - 'दो पत्र' , पृ० ६० ।
२. 'कुंकुम' - 'अंचल का छोर' , पृ० ५१ ।
३. 'क्वासि' - 'प्राणों के पाहुन' , पृ० २४ ।

प्रतीप अलंकार का प्रयोग भी `नवीन` जी ने अपनी रचनाओं में किया है:-

`देख खंजनों को, क्यों प्रिय के लोचन की सुधि हिय में जागे ?
ये चंचल क्या टिक पाएँगे उनके उननयनों के आगे ?`[१]

`नवीन` के समस्त काव्य-साहित्य में रूपक अलंकार के असंख्य उदाहरण मिलते हैं। कुछ उद्धृत किए जाते हैं :-

(१) `दीप रहित जीवन-रजनी में,
भटक रहा कब से, सजनी में ,`[२]

(२) `आँखों के ये स्वांति-मेघ बरसाते हैं फुहियाँ-सी,`[३]

(३) `मेरी पूजा के भाव-विहग गा उठे ललित स्वागत-गायन,
जब मधुर-मधुर, धीमे-धीमे , तुम आये मनहर, करुणायन ;`[४]

(४) `अर्पित करने कंचन-काया, मैं आयी हूँ लख तम-छाया ,`[५]

सांगरूपक का भी `नवीन` जी ने कहीं - कहीं पर प्रयोग किया है :-

(१) `मन-चकोर कल्पना-गगन में ढूँढेगा अब किस को ?
अब क्या वह निज प्राण-चन्द्रमा मानेगा जिस-तिस को ?
अभिनव मेघ-खण्ड से घिर जब मेरा चन्दा हुलसे ,`

---

१. `क्वासि` - `मेरे आँगन संजन आए` , पृ० ८६ ।
२. `कुंकुम` - `अंचल का छोर` , पृ० ५२ ।
३. `कुंकुम` - `जाह्नवी के प्रति` , पृ० २५ ।
४. `हम विषपायी जन्म के` - `तुम मेरी आँखों की पुतली` , पृ० ५६७ ।
५. `हम विषपायी जन्म के` - `प्रिय , मैं आज भरी फाल्गुनी-सी` , पृ० ५८० ।

मन-चकोर तब किसे निहारे निज दृग स्नेहाकुल से ?
क्यों न तिमिर-सागर में पंक्षी डूबे औ' उतराये ?
साजन अब हो गये पराये।' [१]

(२) स्नेह-अम्बुधि में नव वियोग की भड़की बड़वानल-ज्वाला,
खल-भल, खल-भल अतल - जल हुआ, उठी वेदना विकराला;
तड़पे प्राण-मीन, अकुलाए - हिय-मन्थर, मन मथित हुआ;
प्यार-प्रशान्त-महासागर का विकल-विकल जल व्यथित हुआ;
वीचि-विलास-लास्य की समगति असम, विषम, सम-हीन हुई ;
रति-जल-राशि बाष्प बन आई , संशय-सम्भ्रम-लीन हुई ।
मानस-क्षितिज वियोग-मेघ से आच्छादित हो गया घना,
यह सुख भरा संजोग बन रहा क्षण-भंगुर जीवन-सपना ; [२]

जब उपमेय में उपमान से भिन्नता जानते हुए भी उस (उपमान) की सम्भावना की जाती है , तब उत्प्रेक्षा अलंकार होता है । [३] 'नवीन' जी ने इस अलंकार का प्रयोग निस्संकोच यत्र-तत्र किया है । कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :-

(१) 'साँझ हुई, मानों तब कृष्णा, घन के सावलियाँ लहराईं';
कमल मुँदे, मानो मद भीनी तव एणी(मृगी)-अखियाँ अलसाईं;
आई ऊषा, मानो तव मृदु मन्द-२ स्मिति-किरणें आईं ;
यों त्वम्-मय है मेरा अग-जग, यों त्वम्-मय-मम जीवन-धारा ।
मैं क्यों लिखूँ तुम्हें पाती , प्रिय, अब क्या लूँ मैं शब्द-सहारा ? [४]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तुम हो गये पराये' , पृ० ६०४ ।
२. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० १७७-१७८ ।
३. 'काव्य-प्रदीप' - पण्डित रामबहोरी शुक्ल, पृ० १८७ ।
४. 'क्वासि' - 'पाती' , पृ० १०४ ।

(२) 'लम्बी-सी सुडौल नासा में मुक्ता लटक रहे हैं ,
अधर लालिमा से रंजित ये मोती मटक रहे हैं ,
मानो मानसरोवर- तीरे राजहंस - हंसिनियाँ -
मुदित पान करती हैं सुन्दर मुक्त प्रेम की कणियाँ ।'[१]

उदाहरणालंकार का एक सुन्दर प्रयोग बड़ा मार्मिक बन पड़ा है :-

'तव ढिंग ही मँडराया करता है मेरा मन ।
जैसे मँडराते हैं जल जों के ढिंग अलिगण ।'[२]

सन्देहालंकार का प्रयोग देखते ही बनता है :-

'एक ओर प्रासाद कक्ष में लक्ष्मण-प्रिया विराज रही है,
अथवा फलकासन पर सस्मित कुसुम - राशि मृदु भ्राज रही है ।'[३]

इस प्रकार अर्थ का सौन्दर्य प्रदान करने के लिए 'नवीन' जी ने अनेक अर्थालंकारों का प्रयोग किया है । इन अलंकारों से कवि की उर्वरा कल्पना-शक्ति एवं सूक्ष्म अवलोकन दृष्टि तथा मार्मिक शब्द-चयन का परिचय मिलता है । उनके काव्य में प्रस्तुत और अप्रस्तुत-विधान भी प्राणवान है । इस दृष्टि से निम्न उदाहरण अवलोकनीय है :-

'एक हाथ से खींच हृदय से लिपटाया सीता को यों,
सन्ध्या ने अपने हिय में हो खींचा दोपहरी को ज्यों ।'[४]

---

१. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० २६ ।
२. 'रश्मिरेखा' - 'मेरा मन' , पृ० ३५ ।
३. 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० ६४ ।
४. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग , पृ० ३०५ ।

आधुनिक युग में मानवीकरण का प्रयोग, हिन्दी काव्य में द्रुतगति से हो रहा है। डा० श्रीकृष्णलाल ने लिखा है – 'रीतिकाल में मानवीकरण कोई अलंकार नहीं समझा जाता था। आधुनिक काल में पश्चिम के प्रभाव से मानवीकरण एक प्रधान अलंकार समझा जाने लगा और इसके फलस्वरूप इसका प्रयोग भी बहुत बढ़ गया।'[१] अमूर्त का मूर्तीकरण करने में 'नवीन' जी भी सिद्धहस्त थे। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है :-

(१) 'आकांक्षा, इतनी उद्विग्ना होकर किसको ध्याओगी ?
किसके चरणों में रत होकर, किस से मन अरुझाओगी ?
आज बतादो इतनी व्याकुल, व्याकुल-सी क्यों फिरती हो ?
यहाँ, वहाँ, उस ओर उधर को जा-जा कर क्यों गिरती हो ?'[२]

(२) 'इतने दिन बीत गए, फिर भी स्मृति प्यारी-सी,-
आजाती है सम्मुख, सिन्धु-स्नात क्वाँरी-सी,
टपकाती केशों से जल-बूँदें खारी-सी।'[३]

(३) 'अम्बर से अवनी तक लहरी अरुणा की सतरंगी सारी ;
गगन-अटा से हँस-मुसकाती उतरी नव-बाला सुकुमारी।'[४]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि महोदय को अलंकारों के प्रयोग में असाधारण सफलता प्राप्त हुई है। उनमें प्राचीनता के प्रति मोह था परन्तु

---

१. 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' डॉ० श्री कृष्णलाल, पृ० १४३।
२. 'कुंकुम' - 'आकांक्षा', पृ० १५।
३. 'क्वासि' - 'दूभर-सा करता है तुम बिन जीवन, प्रियतम', पृ० ३७।
४. 'रश्मिरेखा' - 'आई यह अरुणा सुकुमारी', पृ० २।

नवीनता के प्रति किसी प्रकार का द्रोह नहीं था। भावनाओं की सफल अभिव्यंजना में अलंकारों ने प्रशंसनीय योगदान प्रदान किया है। अलंकारों के प्रयोग से चित्रमयता, ध्वनि-व्यंजना एवं भाव-व्यंजना में काफी वृद्धि हुई है। उन के समस्त काव्य में अलंकारों का अपना विशिष्ट स्थान है।

गुण :

'नवीन' जी के काव्य में भावों की विविधता है जिस कारण विभिन्न गुणों का समावेश स्वयमेव उनके काव्य में हुआ है। गुण को रस का धर्म माना जाता है।[१] स्वाभाविक रूप से विभिन्न गुणों का समावेश उनके काव्य में हुआ है।[२] उनके काव्य में तीनों गुणों – ओज, माधुर्य एवं प्रसाद - का समावेश हुआ है। 'नवीन' ने प्रकट मानव का रूप धारण कर जब प्रेम की रागिनी छेड़ी या विद्रोह का शंख फूँका तो वह महाभारत के श्री कृष्ण की भाँति नर और नारायण की एकात्मता पा गये। इसी कारण नवीन हुँकार और माधुर्य के कवि माने गए हैं।[३] उन्होंने राष्ट्रीय कविताओं में ओज गुण तथा प्रेम-मूलक कविताओं में माधुर्य गुण का समावेश कर अपनी अभिव्यक्ति को सफल बनाया है।[४] ओज गुण के द्वारा मन में उमंग, उत्साह आदि का संचार

---

१. 'काव्य-प्रदीप' - पण्डित रामबहोरी शुक्ल, पृ० ६८।

२. 'नवीन' जी ने नियमों का पोषण नहीं किया। स्वाभाविक रूप से जो गुण या वृत्ति उनके काव्य में आ गई, वही उनका शृंगार बनी। वे इस दिशा में कदापि चेष्टाशील नहीं रहे।'
– ''नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ०४१३।

३. 'राष्ट्रवाणी' - जून १९६० - सम्पादकीय, पृ० ३।

४. 'काव्य की जो प्रतिभा 'नवीन' जी में थी, उसके जोड़ की प्रतिभा हमारे सीमित अनुभव में एक ही दो व्यक्तियों में और देखने को मिली।
– 'सरस्वती' - मई १९६० - सम्पादकीय, पृ० ३०४।

होता है।[१] वीर, रौद्र, भयानक एवं बीभत्स रस में ओज गुण देखने को मिलता है। श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है - 'नवीन में बहुत बड़ी प्रतिभा थी, पर उस प्रतिभा में ओजस्विता थी जो उन्हें बरबस राजनीति की ओर खींच ले गई। यह ओजस्विता और प्रखरता भावना की थी, बौद्धिक न थी, और उनकी ओजस्विता और प्रतिभा से प्रभावित होकर ही स्वर्गीय गणेश-शंकर विद्यार्थी ने उन्हें मध्य भारत से कानपुर बुलाया था।'[२] देश की दीन-हीन दशा देख कर, शताब्दियों की दासता से क्षुब्ध होकर वे हुँकार उठे थे। उनके भीतर उबलता रक्त ठाठें मारने लगा, फलतः राष्ट्रीय कविताओं ने जन्म लिया और परिणामस्वरूप ओज गुण को उनकी रचनाओं में यथेष्ट स्थान मिला। अपने साहित्य में ओजगुण के अभाव पर वे क्षुब्ध हो उठे थे। स्वयं उन्होंने लिखा है - 'दूसरी बात जो मुझे खटकती है यह है कि हमारी कविताओं में जीवन की, यौवन की, शक्ति की और ओज की कमी है। हम अत्यधिक कल्पनामूलक अथवा बुद्धि प्रधान होते चले जा रहे हैं। हृदय के उष्ण-रक्त का समागम जब तक हमारी कृतियों के साथ न होगा तब तक उसमें जीवन और ओज कहाँ से आएगा? हमें अपने काव्य-साहित्य को वीर्यवान एवं जीवन-शक्ति-सम्पन्न बनाये रखने का उद्योग करते रहना चाहिए।'[३] उनके समस्त काव्य-साहित्य से कुछ उदाहरण नीचे दिए जाते हैं जिनमें ओज-गुण की प्रधानता है :-

'शोलों के फूलों से सज्जित सुख-शय्या हो जाने दे,
भर ले अंगारे करवट में, हूक-लूक उठ जाने दे;

---

१. 'काव्य-प्रदीप' - पण्डित रामबहोरी शुक्ल, पृ० ६६।
२. 'आजकल' दिसम्बर १६५७ - 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' -श्रीभगवतीचरण वर्मा, पृष्ठ ८।
३. 'कुंकुम' - भूमिका, पृ० १८।

अरे, अकर्मण्यता शिथिलता भस्मसात हो जाने दे ;
अग्नि चिता में विजित भाव को तू अब तो सो जाने दे;
त्राहि ? त्राहि ? रे, त्राण कौन-सा? आज प्राण की होली है ?
तेरी दासक स्वर-लपटों में स्वयं त्राण की होली है ।।'[१]

(२) 'जागो, एक क़तार बनालो , जीभ खींच लो इस शोषण की,
तोड़ो डाढ़ें , करो इतिश्री तुम मिलकर निज उच्छोषण की;
करो सृजन अभिनव जगती का नव-नव सामाजिक संहति का;
मानव हो विमुक्त , ऐसा हो शुद्ध प्रयोग तुम्हारी मति का ।'[२]

(३) 'ओ भिखमंगे, अरे पराजित, ओ मज़लूम, अरे चिर द्रोहित,
तू अखण्ड भाण्डार शक्ति का ; जाग, अरे निद्रा-सम्मोहित ,
प्राणों को तड़पाने वाली हुंकारों से जल-थल भर दे ,
अनाचार के अम्बारों में अपना ज्वलित फ़लीता धर दे ।'[३]

(४) 'क्रान्ति ? क्रान्ति ? मेरे आँगन में यह कैसा हुंकार मचा ?
बोलो तो यह किसने अपने श्वासों का फुँकार रचा ?
फंकारों, धनु टंकारों का यह चिर परिचित स्वर छाया ;
रण-भेरी का यह भैरव-रव, कहो कहाँ से घिर आया ?
क्या सचमुच ही महाप्रलय की आंधी उठ आयी त्राण में ?
ऐं ?! क्या महाक्रान्ति मतवाली आयी मेरे प्रांगण में ?'[४]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'तू विद्रोह रूप, प्रलयंकर' , पृ० ४१४ ।
२. वही 'आज क्रान्ति का-शंख बज रहा', पृ० ४७८ ।
३. वही 'जूठे पत्ते' , पृ० ४६४ ।
४. वही 'क्रान्ति ?', पृ० ४४० ।

श्री ठाकुर प्रसाद सिंह ने लिखा है – 'क्रान्ति और कविता - नवीन जी ने इन दोनों को पर्याय समझा था , इसलिये कानपुर में असहयोग आन्दोलन की विशाल सभाओं में उन्होंने ललकार भरी कविताएँ पढ़ीं और कवि-सम्मेलनों में क्रान्ति के राग अलापे । वे जिस पीढ़ी में जीवित थे उसकी रगों में खून की जगह पिघला हुआ रोष प्रवाहित होता था, सांसों की जगह उद्वेग तपता था, आँखों में पुतलियों की जगह सपने लगे हुए थे । इस पीढ़ी के सच्चे प्रतिनिधि नवीन जी थे ।'[१]

माधुर्य गुण के द्वारा चित आनन्द से द्रवित हो उठता है । लावण्यमय वातावरण की सृष्टि होती है । कोमल अनुभूतियों, मार्मिक उक्तियों एवं मधु-सिक्त वचनों से माधुर्य गुण की सृष्टि होती है । माधुर्य गुण शृंगार-परक रचनाओं का शृंगार है । श्री जगदीश गोयल ने लिखा है – 'कटुता के घूँट बराबर गले से उतारते हुए भी वह मृदुता और माधुर्य के अवतार थे ।'[२] माधुर्य-गुण-सम्पन्न रचनाओं में से कुछ उदाहरण नीचे उद्धृत हैं :-

(१) 'क्या कह तुम्हें करूँ सम्बोधित ? लिखते लगती लाज ,
'प्या - - -'' लिखते ही क़लम निगोड़ी काँप जाती है आज ।
एक यही आखर लिख-लिख कर क़ाग़द करे ख़राब ,
यही लेखनी ढीठ है नेक न सहती मेरी दाब ।
यह तो मचल-मचल पड़ती है कैसे समझे ? हाय ।
पत्र पढ़ा लिखने को , मैं तो आज हुई निरुपाय ।'[३]

---

१. 'नर्मदा' -'नवीन'-विशेषांक - १९६३ - 'क्योंकि तुम जो कह गये हो तुम हरो गे रात का भय' - ठाकुर प्रसादसिंह, पृ० १०९ ।

२. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १५ जुलाई १९६० - 'जीता-जागता पौरुष या सांसों की घोंकनी ।' - जगदीश गोयल , पृ० ५ ।

३. 'कुंकुम' - दो पत्र , पृ० ६१ ।

(२) `ऊर्म्मिले`, यह अलसाने बैन सुलक्ष्मण बोल उठे तत्काल,
`उर्मिले` तुम हो मेरा धनुष, तुम्हीं हो मेरी असि विकराल,
तुम्हीं तो खींच रही हो मुझे नींद के रंगमहल में आज ;
तनिक मुसका दो` रानी, और, जागरण की तुम रखलो लाज ;[१]

(३) ` मेरे जीवन के तरुवर की ओ कलिके सुकुमार,
यौवन डाली पर हँस झूलो करो ज़रा ऋतु-रार,
आज, सखि, नवल बसन्त बहार, कर रही मदिर-भाव-संचार ।
सदा बसन्त हमारे हिय में पलकों में मधु-भार,
नयनों में है स्वप्न मिलन की सुरली और खुमार
आज, सखि, नवल बसन्त बहार, कर रही मदिर-भाव संचार ।`[२]

(४) ` क्या है अदा तुम्हारी, क्या है शगुल तुम्हारा ।
दिन रात खोजते हो जीवन का इक सहारा ।
नत ग्रीव क्यों हुए हो ? लोचन उठा के देखो,
अब ढल चुका है सूरज, है शून्य पन्थ सारा ।`[३]

जिस गुण के कारण किसी रचना का अर्थ तुरन्त समझ में आजाय, उस का पूरा प्रभाव चित पर पड़ जाय, उसे प्रसाद गुण कहते हैं। यदि कवि अपनी रचना ऐसे शब्दों में करे जिनका अर्थ, सुनने के साथ ही, सुनने वालों की समझ में आ जाय तो उसे `प्रसाद` गुण से पूर्ण कहा जाता है।[४] सरलता,

---

१. `उर्मिला` - द्वितीय सर्ग, पृ० १३० ।
२. `हम विषपायी जन्म के` - `बसन्त बहार`, पृ० ३१३-३१४ ।
३. ` वही ` - `व्याकुल`, पृ० ३६६ ।
४. `काव्य-प्रदीप` - `रामबहारी शुक्ल`, पृ० १०० ।

स्पष्टता आदि के रूप में यह गुण सभी प्रकार के उत्कृष्ट काव्यों का आभूषण होता है। अत्यन्त स्निग्ध एवं कोमल कान्त पदावली में 'नवीन' जी ने यत्र-तत्र अपने भावों की अभिव्यंजना की है। डा० सुरेशचन्द्र गुप्त ने लिखा है - 'पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने श्रीधर पाठक, 'हरिऔध' मैथिलीशरण गुप्त और देवीप्रसाद 'पूर्ण' की भाँति काव्य में प्रसादत्व की योजना के लिए संस्कृत निष्ठ शब्दावली को प्रयुक्त करने पर बल दिया है।'[१] प्रसाद-गुण-सम्पन्न उनके काव्य के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :-

(१) 'मम उमंग आशाएँ तुम बिन सब रीती हैं,
स्वप्निल हैं वृत्तियाँ, जो मेरी मन चीती हैं,
तुम बिन जागृत घड़ियाँ तन्द्रिल-सी बीती हैं,
मैं तो तब जागूँ जब, तुम भी मम हिय जागो,
आजाओ, हृदय लगो।'[२]

(२) 'अलमस्त हुई मन झूम उठा, चिड़ियाँ चहकीं डरियाँ-डरियाँ ;
चुनली सुकुमार कली बिखरी मृदु, गूँथ उठी लरियाँ-लरियाँ ;
किसकी प्रतिमा हिय में रखके नव आरति करूँ घरियाँ-घरियाँ ?
किस ग्रीवा में हाय य' डाल सखी बस रो दूँलगें फरियाँ-फरियाँ ?'[३]

(३) 'मेरे प्रात समीरण की तुम शीतल, मन्द सुगन्ध ,
तुम मेरी धूमिल सन्ध्या के नूतन ज्योति-प्रसाद ।
प्राण तुम मेरे हृदय-दुलार ।

---

१. 'हिन्दी-कवियों के काव्य-सिद्धान्त' - डा० सुरेशचन्द्र गुप्त, पृ० ३३३ ।
२. 'अपलक' - 'आओ, प्रिय हृदय लगो' , पृ० ८५ ।
३. 'हम बिसपायी जन्म के' - 'मनोरथ', पृ० ३४३ ।

मेरे धूल भरे माथे की तुमहो कुंकुम-रेख ,
तुम मेरे सुहाग की बिन्दी, तुम मम प्राणाधार,
प्राण, तुम मेरे हृदय-दुलार ।'[१]

इस प्रकार विविध-गुणों से युक्त 'नवीन' जी की कविता अत्यन्त मर्मस्पर्शी बन पड़ी है । निस्सन्देह सूर का माधुर्य एवं भूषण का शौर्य एकत्रित होकर नये रूप में 'नवीन' जी के काव्य में उपस्थित हुआ है ।

रस :—

रस एक आनन्दपूर्ण मानसिक अवस्था है जिसे ब्रह्मानन्द सहोदर की संज्ञा भी दी गयी है । यह एक विशेष प्रकार का काव्यानन्द है, एक विशेष प्रकार की मानसिक स्थिति है जिस में 'तेरे और मेरे की भावना' का परिहार हो जाता है । हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है ।[२] रस एक ऐसा तत्व है जिसकी काव्य में उपेक्षा नहीं की जा सकती है । रस का बीज 'भाव' है ।[३] 'नवीन' जी ने रस को काव्य का अन्ततंत्व (आत्मा) स्वीकार किया है । उन्होंने 'उर्मिला' में लिखा है :-

'बनो रस-सिक्त सुनाओ अखिल विश्व को निज रस-सिक्ता तान ।'[४]

---

१. 'रश्मिरेखा' - 'प्राण, तुम मेरे हृदय-दुलार' , पृ० १८ ।

२. 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है । हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है , उसे कविता कहते हैं ।'

--'चिन्तामणि' - आचार्य शुक्ल, भाग १, पृ० १४१.

३. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र , पृ० ३३३ ।

४. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० २ ।

'नवीन' जी स्वयं रस के पारावार थे। डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'उनका काव्य सहज रसमय काव्य था - कोरा सिद्धान्तवाद नहीं।'[१] उनकी कविता उनके रस-सिक्त हृदय का प्रतिबिम्ब है। प्रत्येक रचना रस से ओत-प्रोत है। साहित्य में नौ रस[२] सर्वमान्य हैं और इसके अतिरिक्त कुछ लोग वात्सल्य नामक दसवाँ रस भी मानते हैं।[३] इनमें से 'नवीन' जी के काव्य में शृंगार, करुण, वीर, रौद्र, बीभत्स एवं भयानक रस की ही प्रधानता है। श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी ने लिखा है – 'नवीन' जी अत्यधिक संवेदनशील प्राणी थे, अतएव, कोई भी रसोद्वेग उनमें चरम सीमा पर था – अतिकरुणा, अति शृंगार, अति ओज, जिधर ढुल गये, उधर ढुल गये।'[४] शृंगार रस का सुन्दर परिपाक 'नवीन' जी की प्रेममूलक रचनाओं में हुआ है। उन्होंने शृंगार के दोनों पक्षों-संयोग एवं विप्रलम्भ (वियोग) - का सुन्दर चित्रण अपनी रचनाओं में किया है। शृंगार रस का स्थायी भाव रति है। श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है – 'रसराज शृंगार उनके गीतों का मर्म है। संयोग और वियोग दोनों पक्षों के दर्शन होते हैं।'[५] उनके प्रेमालापपूर्ण जीवन की रसानुभूति का परिचय निम्नलिखित उद्धरणों से पर्याप्त रूप में होता है :-

(१) 'मेरे साजन आज पधारे -
सहसा आए मेरे द्वारे,
हुए सफल मम लोचन-तारे,
मैं जीती, पिय हारे, हारे।

---

१. 'आजकल' - मार्च १९६१, 'दादा: बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'', डा०नगेन्द्र, पृष्ठ ८।
२. 'शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, शान्त और अद्भुत'।
३. 'कल्पना' - सितम्बर १९६० - 'द्युतात्मा' -श्रीशान्ति प्रिय द्विवेदी, पृ०२७।
४. 'रश्मिरेखा' - 'गीत-काव्य और बालकृष्ण शर्मा', पृ० ११।

ओ दल बादल के अम्बर ! मूसलाधार गिराओ, हाँ
मेघा, आओ मोरे अँगना, दुन्दुभि आज बजाओ, हाँ ।'[१]

(२) 'रखा लक्ष्मण ने मस्तक आन-ऊर्म्मिला की जंघा पर । और -
मूँद कर नेत्र बढ़ा दीं भुजा , प्रियतमा की ग्रीवा की ओर ;
डोर अलकों क्रीड़ा की । रम्य-रमण के सुरझ गए सब तार,
थकित क्रीड़ा ऐसे झुक रही - मेघ ज्यों झुक आयें दो - चार ।'[२]

'नवीन' जी का समस्त राष्ट्रीय काव्य वीररस से ओत-प्रोत है । उत्साह इस रस का स्थायी भाव है । इसमें पुरुषार्थ-प्रदर्शन -हेतु अथवा क्रियाशील बनने के लिए ललकार की ध्वनि गूँज उठती है । मेरे विचार से वीर-रस उनके काव्य का एक प्रधान रस है । उनकी वीर-रस-परक रचनाओं को राष्ट्रीय-सांस्कृतिक-आन्दोलन के सन्दर्भ में परखना अधिक श्रेयस्कर होगा । देश की वर्तमान दीन-दशा पर ग्लानि, अमर्ष, बलि के पथ पर बढ़ने वालों को देख कर हर्ष, गर्व तथा उनका ही अनुकरण करने की अभिलाषा आदि संचारियों से पुष्ट होकर जागरण, आन्दोलन, जेल-गमन आदि क्रियाओं में व्यक्त हुआ वह आधुनिक उत्साह वीर-रस की दशा को प्राप्त होता है ।[३] 'नवीन' जी की वीर-रस-प्रधान रचनाओं में से कुछ उद्धरण नीचे उद्धृत हैं:-

(१) 'देखें कौन वीर सुनता है गरलपान के इस गर्जन को,
नीलकंठ के भव-भय-हारी चिर मंगलकर इस तर्जन को,
चिर जीवन के औघड़ दानी आज दे रहे मरण-सन्देसा ,
सर्व प्राप्ति के इच्छुक होतो ग्रहण करो यह हरण-संदेसा ।

---

१. 'रश्मिरेखा' - 'पावस-पीड़ा' , पृ० ५७ ।
२. 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० १२६ ।
३. 'श्रीमाखनलाल चतुर्वेदी' - एक अध्ययन -श्रीरामाधार शर्मा, पृ० १३८ ।

सुनो: बजा डिम-डिम-डिम-डमरू, बोला निपट दिगम्बर गान्धी,
अरे मरण भी जीवन क्रम है। कैसा प्रलय ? कहाँ की आँधी ?'[१]

(२) 'बढ़ चल, बढ़-चल, थक मत रे तू बलिदानों के पुंज;
देख कहीं न लुभावे तुझको यह जीवन की कुंज ;
मधुर मृत्यु का नृत्य देख तू देने लग जा ताल,
अपना सीस पिरो कर करदे पूरी माँ की माल ,
है जीवन अनित्य , कर जाने दे तू मोक्ष बन्ध ,
कर दे पूरा आज मरण का तू अपना सुप्रबन्ध।'[२]

(३) 'मेरे साथी, ओ तुम मेरे सह-सैनिक नित धीर ,-
बाणों की वर्षा में भी तुम अडिग, अचल, ओ वीर,-
ताल ठोंक कर किया निमन्त्रित रण में तुमने काल।
कब विचलित कर सकी तुम्हें यह कारा की प्राचीर ?'[३]

डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'मैं उनके काव्य से प्रभावित था - उसमें अभिव्यक्त तारुण्य का प्रवेग - शृंगार और वीर दोनों-रूपों में - मुझे सहज-आकृष्ट करता था।'[४] 'नवीन' जी के काव्य में करुण-रस का उद्रेक भी यत्र-तत्र हुआ है। उर्मिला महाकाव्य में भी करुण रस की प्रधानता है। उन्होंने इस महाकाव्य के आरम्भ में स्वयं लिखा है :-

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'गरल पियो तुम। गरल पियो तुम ।।' पृष्ठ ४१५-४१६।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'शिखर-पर' , पृ० ४२६।
३. वही - 'ओ तुम अविचल वीर' , पृ० ४६६।
४. 'आजकल' - मार्च १६६१ - 'दादा: बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - डा० नगेन्द्र , पृ० ८।

`शुष्क कागद के कोनों बीच, हो उठे नव करुणा का नृत्य ।
-- -- --
ऊर्म्मिला की आहों को सुना करुण रस में कर दो कुछ क्रान्ति ।`[१]

इस रस का स्थायी भाव शोक है । करुण-रस-प्रधान रचनाओं में सर्वत्र `नवीन` जी ने अश्रुओं का व्यापार किया है । प्रत्येक रस-सिक्त पंक्ति का मूल्य स्वयं वे अनमोल अश्रु बहा कर चुकाते थे । कुछ उदाहरण दर्शनीय हैं:-

(१) `मथित हिचकियाँ, वचन-दीनता -
का, कुछ संग देने आईं -
निपट-धीरता ने, संयम ने अपनी सुध-बुध बिसराईं ,
मन-मानस की मदिर हिलोरें उमड़-२ बढ़-२ आईं ?
कढ़ आईं आहें बरबस-सी, करुणा-सरिता चढ़ धाईं ।`[२]

(२) `मेरी करुणामयी सुमित्रा-माँ रोएँगी, रोने दे ,
ओ मेरे आखेटक, अपने-ही मन की तुम होने दे ,
मैं ? मैं इन अपनी आँखों को फोड़ूँगी , यदि ये रावें,
देखूँगी कि कहीं न तुम्हारे पथ की बाधाएँ होवें ।`[३]

रौद्र-रस का निर्वाह भी `नवीन` जी ने अपनी रचनाओं में किया है । रौद्र का स्थायीभाव क्रोध है । किसी अनीति, अपमान, अपकार, अत्याचार या अपराध के कारण क्रोध उत्पन्न होता है और काव्य में जब इस का चित्रण हो तो रौद्र-रस का संचार होता है :-

---

१. `उर्मिला` - प्रथम सर्ग, पृ ०२ ।
२. वही - तृतीय सर्ग,पृ० १७६ ।
३. वही - वही ,पृ० २३५ ।

(१) `वंचक ! सावधान !! पुण्यस्थल है यह, हृदय टटोलो तुम,
राष्ट्रों के जीवन में होता है न कहीं कुत्सित व्यापार !
-- -- --
हे ठग ! उसी पुण्य सर को तुम करो न परिणत अबमल में,
निश्चेष्टता तथा निर्बलता का न करोगे क्या अवशेष ?`[१]

(२) `कवि कुछ ऐसी तान, सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये,
एक हिलोर इधर से आये एक हिलोर उधर से आये ,
प्राणों के लाले पड़ जायें, त्राहि-त्राहि स्वर नभ में छाये,
नाश और सत्यानाशों का धुँआ धार जग में छा जाये ,
बरसे आग, जलद जल जायें, भस्मसात् भूधर हो जायें,
पाप पुण्य सद्-सद् भावों की धूल उड़-उठे दायें-बायें ,
नभ का वक्षस्थल फट जाये , तारे टूक-टूक हो जायें ,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ ? जिससे उथल-पुथल मच जाये ,`[२]

भयानक-रस के दर्शन भी हमें `नवीन` जी के काव्य में यत्र-तत्र होते हैं । इस रस का स्थायी भावभय है । किसी भयंकर दृश्य या घटना या स्थिति के परिणाम स्वरूप ही इस रस का उद्रेक होता है :-

` लपटों की जिह्वाएँ लपकीं लप-लप-लप करती अम्बर तक,
घू-घू करती `ओं` बल खाती फैलीं धूम्र शिखाएँ नभ तक,
नभ की प्रज्वलित विभीषिका, दहक उठे अंगारे धक-धक ;
ऐसे समय राक्षसी गर्जन , कर उट्ठी मानव की बोली ,
वह थी एक भयानक होली ।`[३]

---

१. `कुंकुम` - `सावधान` , पृ० ३-४ ।
२. `हम विषपायी जन्म के` - `विप्लव-गायन` , पृ० ४२६ ।
३. `प्राणार्पण` , पृ० २ ।

इसी प्रकार से बीभत्स-रस की उपलब्धि भी `नवीन` जी की कई रचनाओं से होती है। इस रस का स्थायी भाव घृणा है और घृणा उत्पन्न करने वाली वस्तुओं, दृश्यों, घटनाओं एवं स्थितियों के कारण इस रस की प्राप्ति होती है :-

(१) `वे केश रक्त में लथ-पथ थे, दीवारें थीं शोणित-रंजित,
कोई कोना भी उस घर का था नहीं दुष्ट-कृति से वंचित,
थी पड़ीं रक्त में सनी हुई बिखरी बिखरी चूड़ियाँ वहाँ,
बालों वाली थी बहिन कहाँ ? चूड़ी वाली माँ गयी जहाँ।
आँगन में एक कुआँ भी था उसमें दुर्गन्ध भभकती थी,
जो दानवता की घृणित कथा कहते न तनिक भी थकती थी।`[१]

(२) `क्या देखा है तुम ने नर को नर के आगे हाथ पसारे ?
क्या देखा है तुमने उसकी आँखों में खारे फ़व्वारे ?
देखे हैं ? फिर भी कहते हो कि तुम नहीं हो विप्लवकारी ?
तब तो तुम हिंजड़े हो, या हो महा भयंकर अत्याचारी ?
अरे चाटते जूठे पत्ते जिस दिन मैंने देखा नर को
उस दिन सोचा : क्यों न लगा दूँ आज आग इस दुनिया-भर को ?`[२]

वात्सल्य-रस का भी सुन्दर परिपाक `नवीन` जी की रचनाओं में हुआ है। इस रस का स्थायी भाव स्नेह है और ममता इसका मूल कारण है। उर्मिला महाकाव्य में विशेष रूप से हमें इस रस के उदाहरण मिलते हैं :-

(१) ` माताएँ हो मुदित शिशु के खेल को जोहती हैं,

---

१. `प्राणार्पण`, पृ० ८।
२. `हम विषपायी जन्म के`- `जूठे पत्ते`, पृ० ४६३।

मीठी-मीठी सरस बतियाँ चित्त को मोहती हैं;
बाल क्रीड़ा-मय भवन हैं, सौख्य-सौन्दर्य-सिक्त ,
आयुर्यों के हैं सदन शिरसा बाल-शोभाभिषिक्त ।'[१]

(२) 'राम सुमित्रा के वक्षस्थल पर शिर रख यों व्यक्त हुए -
मानों लघु चापल्य-भाव सब वत्सलता अनुरक्त हुए ।'[२]

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि 'नवीन' जी का समस्त साहित्य रस सिक्त है । कहीं रस की बूँदें टप-टप टपकती हैं और कहीं निरन्तर रस की धारा बहती प्रतीत होती है । श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने लिखा है - ''नवीन' जी उन-अमर वरद् पुत्रों में थे जिनकी रस सिद्ध तप: पूत आत्मा को मृत्यु स्पर्श नहीं कर सकती ।'[३] उनकी कविताओं में प्रवाह, रस परिपाक, सरलता और सब से बढ़कर स्वाभाविकता है, जो जन-जन के हृदय को तुरन्त ही स्पर्श कर लेती है ।[४]

प्रकृति-चित्रण :

साहित्य में प्रकृति का प्रधान स्थान है । प्रकृति में सौन्दर्य है और सौन्दर्य साहित्य का प्रधान गुण है , इसलिए साहित्य में सौन्दर्य लाने के लिए प्रकृति-चित्रण अत्यन्तावश्यक है ।[५] मानव और प्रकृति का परस्पर

---

१. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग , पृ० २० ।
२. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग , पृ० ३०५ ।
३. 'कृति' - मई १९६० - 'स्वर्गीय नवीन जी' - श्री सुमित्रानंदन पंत, पृष्ठ ५२ ।
४. 'निर्मदा' (नवीन-विशेषांक) १९६३- विलक्षण साधक श्री 'नवीन' - गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', पृ० ६९ ।
५. 'प्रबन्ध-सागर' - यज्ञदत्त शर्मा - 'हिन्दी साहित्य में प्रकृति-चित्रण, पृ० २४० ।

घनिष्ठ सम्बन्ध है, यही कारण है कि साहित्य में प्रकृति का चित्रण स्वतंत्र रूप से और मानव जीवन के साथ-साथ हुआ है। काव्य के विषय की दृष्टि से भी मानव के पश्चात् प्रकृति का स्थान है।[१] - डा० केसरी नारायण शुक्ल ने लिखा है - `वर्तमान युग के कवियों में प्रकृति के प्रति अगाध प्रेम लक्षित होता है। - - - इस समय की प्रकृति-सम्बन्धी कविता अधिक मनोरम और आकर्षक है। प्रकृति के प्रति कवियों के संकेत भावपूर्ण और रोचक हैं।`[२] आधुनिक युग में प्रकृति के प्रति कवियों के दृष्टिकोण में पूर्ण क्रान्ति उपस्थित हुई है। आज न केवल उद्दीपन-रूप में ही प्रकृति चित्रण होता है अपितु अनेक रूपों में उसके अंग-प्रतिअंग पर कविताएँ लिखी जाती हैं। आजकल संसार और मानव जीवन में प्रकृति का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। बालकृष्ण शर्मा `नवीन` प्रकृति के परम पुजारी थे, उन्हें प्रकृति के विभिन्न रूपों से असाधारण लगाव था। प्रकृति ने उन्हें अपनी ओर पूर्णरूपेण आकृष्ट किया था। अपने काव्य-जीवन में उन्होंने समय-समय पर प्रकृति-देवी पर अपनी अर्चना के पुष्प चढ़ाए हैं। श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है - `बालकृष्ण प्रकृति का सुन्दर चित्रण समक्ष रखने में बड़े निपुण हैं। उनका रूप-प्रदर्शन संकुल और बिम्ब-प्रतिबिम्ब होता है। प्रकृति को निज के राग-द्वेष से स्वतंत्र भी देखने और दिखाने की क्षमता उनमें है।`[३] उन्होंने परम्परागत रूप में भी प्रकृति-चित्रण किया है और युग तथा परिस्थितियों के अनुकूल, नवीन ढंग से भी प्रकृति पर सोचने-समझने तथा लिखने का प्रयत्न किया है। इस दिशा में भी उन्होंने एक सफल समन्वयकारी का कर्त्तव्य निभाया। उनके काव्य में प्रकृति-चित्रण की

---

१. `आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास` - डा० श्रीकृष्णलाल, पृ० ६८।
२. `आधुनिक काव्य धारा` - डा० केसरी नारायण शुक्ल - `प्रकृति-चित्रण`, पृ० ३०६।
३. `साहित्य तरंग` - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ० १३८।

विविधता है। प्रकृति-देवी अपनी सुषमा एवं सुगन्धि लिए उनके काव्य को सौन्दर्य प्रदान कर रही है। उन्होंने प्रकृति चित्रण की विविध शैलियों का बड़ी स्वतंत्रता के साथ चित्रण किया है। प्रकृति-चित्रण में भी उन्होंने अपनी स्वच्छन्द-प्रकृति का परिचय दिया है। उनके काव्य में आलम्बन रूप में प्रकृति-चित्रण यत्र-तत्र हुआ है। यहाँ कवि ने स्वतंत्र रूप से प्रकृति-सुषमा के गीत गाए हैं। डा० किरण कुमारी गुप्ता ने लिखा है – 'आलम्बन के रूप में प्रकृति कवि के लिये साधन न बनकर साध्य बन जाती है। कवि प्रकृति का निरीक्षण करता और उसके सूक्ष्मतम तत्वों के प्रति आकर्षित होता है। - - - - उसका मन प्रकृति-दर्शन में रम जाता है, वह आत्म-विभोर हो उठता है और अपनी तल्लीनता में हृदय की मुक्तावस्था को प्राप्त होता है।'[१] 'नवीन' जी का अरुणा का चित्रण आलम्बन रूप में बड़ा मार्मिक बन पड़ा है :-

'रुन-झुन , गुन-गुन, रुन-झुन, गुन-गुन, भ्रमरी-पाँजनियाँ गुंजारीं,
तन-मन-प्राण - श्रवण ध्वनि-नन्दित, आईं यह अरुणा सुकुमारी।
जलज खिले , मानो अरुणा ने अपनी अँखियाँ सलज उघारीं ।
बजी भृंग-पाँजनियाँ, आईं ठुमुक - ठुमुक अरुणा सुकुमारी ।।
किरण-मार्जनी से मृदुला ने दूर किया वह दुर्दम तम घन ;
अरुण-अरुण निज कोमल कर से चमकाया अम्बर का आँगन ;
लुप्त हो चले गृह, तारक-गण ;
विहँसी सकल दिशाएँ मुद मन ।'[२]

'बसन्त' प्रकृति-सुन्दरी के यौवन-विकास का मादक रूप प्रस्तुत करता है।

---

१. 'हिन्दी काव्य में प्रकृति-चित्रण' - डा० किरण कुमारी गुप्ता, पृ०२७ ।
२. 'रश्मि रेखा' - 'आईं यह अरुणा , सुकुमारी', पृ० १-२ ।

उसके आगमन का स्वागत गीत दर्शनीय है :-

` आज सखि नवल बसन्त-बहार
कर रही मदिर भाव संचार
आज सखि नवल बसन्त-बहार ।`[१]

उषा-सुन्दरी का चित्रण `नवीन` जी ने बड़ी कुशलता से किया है :-

` उषा के मंजुल घाण में कौतुक मय करुणा झलकी,
प्रिय-दर्शन की उत्कंठा मानों नयनों से ढलकी ,
लाली सी फैल गई कुछ , कुछ उजियाली-सी छाई ,
ज्यों शुभ्र वस्त्र पर, हिय ने - आरक्त फुई बरसाई ।`[२]

सन्ध्या-रानी का चित्रण भी `नवीन` जी द्वारा बड़ा सुन्दर बन पड़ा है । प्रकृति के कोमल-कान्त सुकुमार रूप पर कवि-हृदय रीझ उठा है । उसकी सौम्य एवं सुन्दर रूप छटा उनके काव्य में सर्वत्र बिखरी है । प्रकृति के संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत करने में वे सिद्धहस्त थे । इन कविताओं में उन का प्रकृति के प्रति अनुराग लक्षित होता है । सचमुच प्रकृति के सहज-सौन्दर्य पर `नवीन` जी अनुरक्त थे :-

` ओ सन्ध्ये, ओ दूर क्षितिज में,
कुछ कुंकुम - रक्ते सन्ध्ये ,
वृक्षों के मिस उद्‌ग्रीवित-सी
उत्सुक आसक्ते सन्ध्ये ,
श्यामा विन्ध्य-शृंखलाओं के

---

१. `रश्मिरेखा` - `बसन्त बहार` , पृ० १३० ।
२. `उर्मिला` - चतुर्थ सर्ग , पृ० ३६८ ।

केश-पाश वाली सन्ध्ये ,
ओ रंजिता मेघ माला के,
फुल्ल हास वाली सन्ध्ये,'[१]

उद्दीपन रूप में प्रकृति-चित्रण की परिपाटी बहुत प्राचीन है जिसका उपयोग 'नवीन' जी ने-सहर्ष किया है। उद्दीपन रूप में प्रकृति भाव-उद्दीपन का कारण बन जाती है। यहाँ प्रकृति-चित्रण भावनाओं के अधीन रहता है। उद्दीपन रूप में प्रकृति को शृंगार-वर्णन के संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों में वर्णित किया जाता है। संयोग में प्रकृति का मादक वातावरण भावोद्दीपन का प्रमुख कारण बन जाता है :-

'गा उठे पक्षी स्वागत गीत, छिटक जाए स्वागत का रंग,
ऊर्म्मिल - लक्ष्मण का नव मोद, देख लज्जित हो उठे अनंग।
कुरंगम कूदो, खेलो खेल , हरिणियो, नाचो अपना नाच ;
देखती हो क्या कौतुक भरी - ऊर्म्मिला के लोचन नाराच ?'[२]

वियोग में प्रकृति की समस्त चेष्टाएँ विरही जनों को उन्मत्त बना देती हैं:-

'ओस-बिन्दु ने नभ से आकर चूमे शत दल,
दूर देस के अलिगण उन पर झूमे पल-पल,
और, एक तुम हो , जो मुझ को भूले , चंचल,
आएँ हैं शुभ क्षण अब, विरति रंग तुम न पगो,
आओ , प्रिय हृदय लगो।'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' , पृ० ३०६।
२. 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० १२०।
३. 'अपलक' - 'आओ, प्रिय हृदय लगो' , पृ० ८४।

घन-गर्जन के समय जगती का प्रत्येक कण उल्लसित है, परन्तु विरहिणी पागल होकर अपने प्रिय के प्रति विलाप करती है :-

`आए मेघ घने ; सजन, ये आए मेघ घने ,
आज श्याम - चादर के चँदुए अम्बर बीच तने ,
सजन, ये आए मेघ घने ।
अब मत छिटको दूर , प्राण-घन ;
देखो , होता है घन-गर्जन ;
हुलसा है जगती का कण-कण ;
वसुधा देख रही है छिन-छिन, नवल-नवल सपने,
सजन, ये आए मेघ घने ।`[१]

विरहिणी के लिए प्रकृति वैरिन् बन गई है। प्रकृति के मादक वातावरण से क्षुब्ध नायिका, अपनी हृदय-दग्ध अवस्था पर विह्वल हो उठती है । उसे प्रकृति का यह रूप दुख-प्रद प्रतीत होता है :-

`आम , नीम, जामुन, पीपल की शाखें झूल रही हैं झूला ;
मानो फागुन में ही आया वह सावन पथ भूला - भूला ।
आई वर्षा यहाँ शिशिर में, पावस में किंशुक - वन फूला ।।
आज प्रकृति वैरिन् ने यह ऋतु - रार मचाई मेरे मन में ,
इस फागुन में ही घिर आए काले घोले मेघ गगन में ।`[२]

कोकिल कहीं अपने हृदयोल्लास को व्यक्त कर रही है । उसके कूकने से नायिका के हृदय में झुँझलाहट होती है । कोयल के कूजने से उसकी विरह-

---

१. `क्वासि` - `मेघ - आगमन` , पृ० १८ ।
२. `रश्मिरेखा` - `फागुन में सावन` , पृ० २३ ।

अग्नि प्रज्वलित हो जाती है । वह खीज कर बोल उठती है :-

`कह दो इस बैरिन कोकिल से कि वह रहे चुप साध ;
वरना गूँज उठेगा हिय में उनका पंचम - राग ;
अरे , क्या होली ? कैसा फाग ?`[१]

कहीं-कहीं आलंकारिक रूप में प्रकृति-चित्रण उनके काव्य में बड़ा सुन्दर बन पड़ा है । सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति के लिए `नवीन` जी को अलंकारों की आवश्यकता पड़ी । इन अलंकारों के प्रयोग से उन्होंने प्रकृति-सौन्दर्य में चार-चाँद लगा दिये । आलंकारिक रूप में प्रकृति-चित्रण के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं:-

(१) `चुराकर, चुपके - चुपके , लखन-नेत्र-षटपद् मँडराने लगे ,
ऊर्म्मिला के कपोल-अरविन्द , मन्दगति से इतराने लगे ।`[२]

(२) `गूँजी चेतन-वीणा, प्रकृति नटी नाच उठी ;
सूने दिक्-काल झुके , सिरजन की आँच उठी,
अपनी इतिहास-कथा सकल सृष्टि बाँच उठी
अणु-अणु में , किरणों में रहे मधुर स्वर विराज
रोम- रोम स्वनित आज ।`[३]

`नवीन` जी ने यत्र-तत्र प्रकृति पर चेतन मानव-सत्ता का आरोप किया है । प्रकृति पर चेतन व्यक्तित्व का आरोप ही मानवीकरण है । कवि ने अपनी विविध मानसिक प्रवृत्तियों के साथ प्रकृति के विस्तृत प्रांगण में प्रवेश किया । अपनी चितवृत्ति के अनुसार ही उन्होंने प्रकृति को अनेक रूपों में मूर्तिमान

---

१. `रश्मिरेखा` - `हमारी क्या होली, क्या फाग ?` , पृ० ८५ ।
२. `उर्मिला` - द्वितीय सर्ग, पृ० ११८ ।
३. `क्वासि` -`चेतन-वीणा`, पृ० ११ ।

किया । डा० किरणकुमारी गुप्ता ने लिखा है – ' प्रकृति में मानवीकरण की भावना एक प्रकार से छायावाद के ही युग की देन है पूर्ववर्ती काव्य में इस प्रकार के प्रयोग नहीं मिलते हैं, यदि किसी ने कहीं मानवीकरण किया भी है तो उसमें आधुनिक काल की सी सजीवता, सुन्दरता, सरसता और माधुर्य नहीं है ।'[१]
'नवीन' जी के काव्य में मानवीकरण के रूप में प्रकृति-चित्रण अवलोकनीय है:-

(१) ' गंगे, क्यों उमड़ी जाती हो ?
निशि-दिन किस अद्भुत गायन की
कौन कड़ी गाती हो ?
गंगे , क्यों उमड़ी जाती हो ?
अपने सरल शुभ्र अंचल में
चुपा रखी निधि कौन ?
ज़रा दिखा दो, ठहरो तो , क्यों
इतनी इठलाती हो ?
गंगे , क्यों उमड़ी जाती हो ?'[२]

(२) ' रुन-झुन, गुन-गुन, रुन-झुन, गुन-गुन, भ्रमरी-पाँजनियाँ गुंजारीं;
तन-मन-प्राण-श्रवण ध्वनि नन्दित, आई यह अरुणा सुकुमारी ।'[३]

(३) ' ओ सन्ध्ये, ओ दूर क्षितिज में, कुछ कुंकुम रखो सन्ध्ये,
वृक्षों के मिस उद्ग्रीवित-सी, उत्सुक आसक्ते सन्ध्ये,
श्यामा विन्ध्य-शृंखलाओं के केश-पाश वाली सन्ध्ये ,
ओ रंजिता मेघ माला के , फुल्लहास वाली सन्ध्ये ।'[४]

---

१. 'हिन्दी काव्य में प्रकृति-चित्रण' - डा० किरण कुमारी गुप्ता, पृ० ५८ ।
२. 'कुंकुम' - 'जाह्नवी के प्रति' , पृ० २५-२६ ।
३. 'रश्मिरेखा' - 'आई यह अरुणा सुकुमारी' , पृ० १ ।
४. 'हम विषपायी जन्म के' - 'स्मरण-नोदना' , पृ० ३०६ ।

कहीं-कहीं पर `नवीन` जी ने प्रकृति का पृष्ठभूमि के रूप में चित्रण किया है। यह चित्रण उनके काव्य में अल्प है और इस प्रकार का चित्रण करने में उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली है। `ओ हिरनी की आँखों वाली।` कविता में पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृति चित्रण हुआ है :-

` उस दिन चला आ रहा था मैं, अपने ढोर लिये जंगल से,
डूब चला था सूरज, मुझको तपा - नचाकर अपने बल से;
बढ़े जा रहे थे सब कवे, तोते , करने रैन बसेरा ,
चह - चह करता चला जा रहा था एक दिश चिड़ियों का घेरा;
आसमान में फैल चुकी थी सुघड़ साँझ किरनों की लाली ,
उसी समय दिखलाई दी तू , ओ हिरनी की आँखों वाली ?` [१]

प्रकृति के माध्यम से परोक्ष सत्ता का आभास भी `नवीन` जी ने कहीं-कहीं पर दिया है। अपने दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति में उन्होंने प्रकृति से सहायता ली है। ऐसी अवस्था में प्रकृति चित्रण भी गूढ़, गम्भीर चिन्तन प्रधान और दुरूह तक हो जाता है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :-

(१) ` इस नभ-गंगा के भी ऊपर, उन तारक वृन्दों के ऊपर ;
देशकाल के परे , अरे, था वह सत्-चित्-सुन्दर तेरा घर ।।
जब तू गिरा वहाँ से नीचे करता सन-सन-सन-सन-सन-सन,
तब अचरज से लगे निरखने तुझ को ये असंख्य तारागण ।
अरे, कभी था तव चरणों के नीचे यह दिक्-काल-कमण्डल ।।
यह ब्रह्माण्ड विसर्ग महत्तम, यह अनन्त सा सकल समण्डल ।। ` [२]

---

१. `हम विषपायी जन्म के` -`ओ हिरनी की आँखों वाली ?`, पृ० ५७३ ।
२. वही -`विनिपात` , पृ० ११६ ।

(२) `लीलामयी प्रकृति मानव से खेल रही है आँख-मिचौनी,
ओ` मानव-हे अधिहित लोचन, जड़-गुण-बद्ध, स्तब्ध अति मौनी ।
-- -- --
कभी कुहुक आयी अम्बर से `ढूँढ़ो ।` यों बोलो सब उडु गण;
मानव ने उद्ग्रीवा होकर उधर उठाये अपने लोचन ।`[१]

स्मृति-संचारी के रूप में भी `नवीन` जी ने प्रकृति-चित्रण किया है।[२] कलियों की मादक मुसकान को देखकर विरहिणी के हृदय में प्रिय की स्मिति की स्मृति जाग्रत हो उठती है। परिमल के मिस सुगन्धित तन-सुवास की स्मृति बरबस हृदय में जाग पड़ती है :-

`निरख-२ कलियों की मादक मुसकान अमल ,
बलि जाऊँ ! आई है तव स्मिति की स्मृति विह्वल ।
मम मन - सर में विकसित हैं तव युग-नयन - कमल ;
परिमल मिस आई है तव तन - सुवास सिहर-सिहर,
ओ , मेरे मधुराधर ।`[३]

षट्ऋतुओं का वर्णन भी `नवीन` जी ने सीमित रूप से `उर्मिला` महाकाव्य में किया है। डा० दुबे ने उन्हें हिन्दी का ऋतु-राज कहा है।[४] परन्तु

---

१. `हम विषपायी जन्म के` - `यह रहस्य उद्घाटन रत जन`, पृ० ६२ ।
२. `तुम्हें याद है : घन-गर्जन-क्षण नित नूतन परिरम्भण मय हैं ;
ये अटपटे हवा के झोंके बने स्मरण - अवलम्बन मय हैं ;
पर ये मेरे लिए यहाँ तो आज बन गये क्रन्दन मय हैं ;
ये सब , सज धज कर आये हैं अपने ही में मुझे डुबाने ,
- `रश्मिरेखा` - `वर्षालोके` , पृ० ६.
३. `रश्मिरेखा` - `ओ मेरे मधुराधर` , पृ० १३ ।
४. `साप्ताहिक हिन्दुस्तान` - २ फरवरी १९६४ -काव्य के ऋतुराज `नवीन` डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, पृ० १४ ।

इस प्राचीन परिपाटी के प्रति उनमें विशेष मोह नहीं था जिस कारण सीमित रूप से संकेत मात्र करके वे मौन रहे हैं :-

'विप्रयोग ग्रीष्म भयो, आँसू-पावस पीर,
नित निम्र-विश्वास की, महँ शरद् ऋतु धीर ।
निपट निराशा को शिशिर , संशय को हेमन्त,
चिर आशा को बनि गयो, कुसुमित वरद बसन्त ।'[१]

चरित्रों की मानसिक स्थितियों के साथ प्रकृति का समन्वय करने में कवि ने अपने अद्भुत कला-चातुर्य का सुन्दर परिचय दिया है । उर्मिला की दग्ध अवस्था पर प्रकृति भी अश्रु बहा रही है :-

'कलियाँ रोती टहनी पे , रोते प्रसून डाली पे , -
पत्तियाँ बिलखती हैं ये बेलों की प्रति जाली पे ;
लतिकाएँ रो-रो गिरतीं विटपों के वक्षस्थल पर,
झर रहे ओस के आँसू वन - उपवन में छल-२ कर;'[२]

इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि 'नवीन' जी ने प्रकृति-वर्णन की अनेक शैलियाँ अपनाई हैं । उनके काव्य में प्रकृति विविध रंगों में वर्णित है । कहीं ये रंग मधुर-मादक हैं, कहीं गूढ़ गम्भीर और कहीं सूक्ष्म एवं संवेदनात्मक हैं । प्रकृति उनकी चिरसंगिनी बन कर रही है । वे प्रकृति के प्रकृत-सौन्दर्य पर अनुरक्त थे, यह सौन्दर्य उनके लिए अनेक स्थलों पर प्रेरणा-स्रोत बनकर सम्मुख उपस्थित हुआ । उन्होंने प्रकृति के नये रंगों , रूपों एवं दृश्यों की अनेक मौलिक योजनाएँ की हैं । प्रकृति-चित्रण से उनके काव्य में एक विशिष्ट सुकुमारता एवं माधुर्य का समावेश हुआ है ।

---

१. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग , पृ० ४३६ ।

२. 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग , पृ० ३५१ ।

प्रतीक-योजना :

'नवीन' जी के काव्य में प्रतीकों की सफल योजना हुई है। कवि भावाभिव्यंजना के क्षेत्र में इन की महत्ता को अच्छी तरह समझते थे। वे जानते थे कि साधारण वक्तव्य की अपेक्षा प्रतीकों के द्वारा सत्य को अधिक प्रभावोत्पादक, मार्मिक और संक्षिप्त रूप में प्रकट किया जा सकता है। डा० केसरीनारायण शुक्ल ने लिखा है – 'इनका उद्देश्य सत्य को सौन्दर्य से समन्वित करना है। - - - काव्य में प्रतीकों का उद्देश्य केवल सजावट नहीं है, प्रत्युत ये आधारभूत अंग हैं।'[१] इन प्रतीकों का देश, काल और परिस्थितियों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। उन्होंने अपनी रचनाओं में नये प्रतीकों की उद्भावना भी की है। प्राय: प्रतीक रूढ़िगत होकर प्रभावहीन बन जाता है।[२] अत: 'नवीन' जी वहीं प्राचीन-परम्परागत प्रतीकों को नवीन अर्थ में ग्रहण किया और कहीं मौलिक रूप से नवीन प्रतीकों को जन्म भी दिया है। 'नवीन' जी ने दीपक को प्रतीकात्मक रूप में ग्रहण किया है।[३] आलोक-दाता दीपक महापुरुषों का परिचायक है :-

' ध्यान में वह सिद्ध बैठा यों कि जैसे लौ -
हो अकम्पित, बात के आघात सहसा-सी;

---

१. 'आधुनिक काव्यधारा' - केसरी नारायण शुक्ल, पृ० २१७।

२. 'काव्य के प्रतीकों के विषय में एक बात आवश्यक है। नवीनता और प्रभाव के लिए नए-नए प्रतीकों की उद्भावना अत्यंत अपेक्षित है, नहीं तो ये प्रतीक रूढ़िगत होकर प्रभावहीन हो जाते हैं।'
--'आधुनिक काव्यधारा' - केसरीनारायण शुक्ल, पृ०२२०।

३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १७ दिसम्बर १९६३ - 'कविवर 'नवीन' के काव्य में दीप-माला' - डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, पृ० ८।

पवन-पीड़ित , किन्तु स्थिर, हिम गिरि सदृश हो जो,-
इंद्रियोंके फकोरों से चलित क्यों हो ?
हो चुकी पूरी पराजय ध्वान्त तामस की ,
जग चुकी है वर्तिका स्थिर काय-तापस की ।'[१]

डा० दुबे ने लिखा है - 'इन पंक्तियों में कवि ने भूदान-यज्ञ के पुरोधा आचार्य विनोबा भावे की साधना-निरत वर्तिका की उपासना की है ।'[२] दीप-बाती के माध्यम से कवि ने स्वर्गीय गणेश शंकर विद्यार्थी के महामय जीवन को अंकित किया है :-

'घोर अन्धकार में जगायी आत्म-दीप-बाती,
दिशाएँ सँजोयी , किया आलोकित आसमान ;
विस्मृत, विकृत जग - मग जग-मग हुआ ;
भ्रमित समाज को मिला ज्वलन्त दीप-दान ;'[३]

इस प्रकार राष्ट्रीय काव्य में उनकी प्रतीक-योजना नवीन रूप में प्रस्तुत हुई है । शकटार और नन्द-वंश ऐतिहासिक पात्र एवं जाति के आधार पर उन्होंने विदेशी सत्ताधारियों की वास्तविक कलई खोल दी है :-

'ताला, कुंजी, लालटेन, जँगला , कैदी, ऐसब है ठीक ।
पर नौकरशाही निज सर्वनाश की खींच चुकी है लीक ।
'चक्कर' से रोटी आएगी , 'डब्बू' भर आयेगी दाल ,
तू शकटार बना है - पापी नन्दवंश का जीवित काल ।

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - १७ दिसम्बर १९६३ - 'कविवर 'नवीन' के काव्य में दीप-माला' - डा० लक्ष्मीनारायण दुबे , पृ० ८ ।
२. 'प्राणार्पण' , पृ० ४५ ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' -(गणेश जी के द्वितीय बार जेल जाने पर), पृ० २८६

तेरी चक्की के गेहूँ पिस जायेंगे, पिस जाने दे ।
विश्व पीसने वालों को तू मिट्टी में मिल जाने दे ।।"[१]

बन्दी-जनों के लिए बालगोपाल अथवा मोहनलाल शब्द कितना मार्मिक बन पड़ा है । दोनों शब्दों का प्रयोग निम्नलिखित काव्य पंक्तियों में प्रतीकात्मक रूप में किया है :-

" देखा बेड़ी पहने मैंने अपना मृदु गोपाल ,
अपना मृदु गोपाल, सलोना वह मन-मोहनलाल ।
वह इठलाता, मृदु मुसकाता,
खनन-खनन करता मदमाता ,
इधर-उधर से आता - जाता,
नूपुर के स्वन को शरमाता
कुलिश बेड़ियाँ झनकाता वह चलता मादक चाल,
सलोना वह मन मोहन लाल ।"[२]

राष्ट्रीय योद्धाओं के लिए 'पीने वाले' तथा विदेशी सत्ताधारियों के अकथनीय शोषणों को 'हालाहल के प्याले' कहकर 'नवीन' जी ने राष्ट्रीय-वीरों को उत्साहित किया है । वह भारत-माँ के सपूतों को बलिवेदी पर चढ़ने के लिए आवाहन करता है । उनके पौरुष एवं आत्म-सम्मान को ललकारता है:-

'तुम कैसे नवीन मतवाले ? तुम कैसे पीने वाले ?
फेर रहे हो अपना मुँह तुम देख हलाहल के प्याले ?
विकट नाम पीने वालों का, तुम न लजाओ उसे, अरे,

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - (गणेश जी के द्वितीय बार जेल जाने पर) पृष्ठ २८६ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'अपना मृदुगोपाल' , पृ० ४६३ ।

हँसते-२, हाथ बढ़ा यों, ले लो प्याले गरल-भरे ।
अब विष की बारी आयी, ओ, मधुरामृत पीने वाले;
फेर रहे हो क्यों अपना मुख देख हलाहल के प्याले ,'[१]

'नवीन' जी के प्रेम-काव्य में उनकी प्रतीक-योजना चरम-सीमा पर पहुँच गयी है । विरहिणी अपने को राधा कह कर मदान्त कृष्ण को मर्मस्पर्शी शब्दों में पुकार रही है :-

' अँखियन नीर भरे, राधा नयनन पीर भरे,
कई युगों से टेर रही है तुमको 'हरे! हरे!!'
राधिका का नयनन नीर भरे
तुम ने छोड़े ग्वाल गोप जब, कैसे काज सरे ?
गोकुल छोड़ चले मथुरा तुम नागर भेस धरे ,
राधिका नयनन नीर भरे ।'[२]

विरहिणी दग्ध-हृदय होकर अपने मुरलीधर को लौट आने का नम्र निवेदन करती है । 'मुरली वाले' अथवा 'लकुटी-कामलिया वाले' शब्दों का प्रयोग प्रतीकात्मक रूप में साजन के लिए किया गया है :-

'ओ मुरली वाले, ओ लकुटी-कामलिया वाले, आओ
आ जाओ इस देस, छबीले, मन्द-मन्द मुसका जाओ,
कब से खड़ी गोपियाँ मग में सब नेह नवनीत लिये ,
वृषभानुजा खड़ी है कब से हिय में प्रीति अतीत लिये
बीते दिवस , महीने बीते, बरसें बीतीं , युग बीते ,
निरखो, निठुर पड़े हैं कब से ये सब मन-मन्दिर रीते ;'[३]

---

१. 'हम विषपायी जन्म के' - 'विषपान' , पृ० ४५६-४५७ ।
२. 'अपलक' - 'नयनन नीर भरे' , पृ० १०० ।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'ओ मुरली वाले', पृ० ३४१ ।

खंजन-पक्षी प्रिय के लोचनों की स्मृति दिलाता है। 'खंजन' एक परम्परागत प्रतीक है जिसको उसी अर्थ में 'नवीन' जी ने अपनी रचनाओं में प्रयुक्त किया है :-

' मेरे आँगन खंजन आए ,
चटुल, चपल, प्रतिपल-पल चलते ये चंचल दृग-रंजन आए;
मेरे आँगन खंजन आए ।
कौन सँदेसा लाए हैं ये ? लाए किन की ~~सन्ति~~ स्मृति दीवानी?
मेरे आँगन आए हैं क्या ये करने अपनी मनमानी ?
आज, किन्हीं नयनों की सुधि क्या कर देगी हिय पानी-२ ?
इसीलिए क्या इस निर्जन में खंजन बन स्मृति-अंजन आए ?
मेरे आँगन खंजन आए ।'[१]

'नौका' शब्द का प्रयोग प्रतीकात्मक रूप में जीवन के लिए 'नवीन' जी ने किया है। 'नवीन - दोहावली' से एक उदाहरण दृष्टव्य है :-

' आके तो देखो तनिक कैसा हाल-बिहाल ?
डगमग-डगमग हो रही इस नौका की चाल ।'[२]

'कली' को आशा का प्रतीक स्वीकार करते हुए कवि महोदय ने लिखा है :-

' मेरी अर्ध मुकुलित कलि के, तुम चिर काल हँसो, फूलो ,
मेरी सूखी-सी डाली पर तुम सन्तत फूला फूलो ;
तुम चिरकाल हँसो , फूलो ।'[३]

---

१. 'क्वासि' - 'मेरे आँगन खंजन आए', पृ० ८८-८९ ।
२. 'हम विषपायी जन्म के' - 'नवीन दोहावली', पृ० २२५ ।
३. 'रश्मिरेखा' - 'तुम चिरकाल हँसो, फूलो' , पृ० १०२ ।

'कुबजा' को पर-नायिका का प्रतीक मान कर विरहिणी नायिका नायक पर व्यंग्य-बाणों की वर्षा करती है। उसका उल्लेखना परम्परागत होते हुए भी मार्मिक एवं सुन्दर बन पड़ा है :-

'तुमने कुबजा में रस देखा, तुम उस पर बिखरे ;
उसकी उस कूबड़ से बोलो , क्या रस बिन्दु झरे ?
राधिका नयनन नीर-भरे ।'[१]

'प्राण' शब्द को प्रिय के लिए प्रतीकात्मक रूप में 'नवीन' जी ने ग्रहण किया है। प्रयोग देखने योग्य है :-

'लज्जा है कि उपेक्षा ? मुझको ज़रा बतादो , प्राण !
चरणों के नख से ही लिख दो कुछ धीरे से आन ;'[२]

इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि 'नवीन' जी की प्रतीक-योजना अपने में सफल एवं सशक्त है। राष्ट्रीय-प्रतीक-योजना के साथ-साथ उन्होंने शृंगार-परक रचनाओं में कोमल, हृदयाकर्षक एवं मार्मिक प्रतीकों का प्रयोग किया है। परन्तु एक बात उल्लेखनीय है कि उनके समस्त काव्य में ऐसे प्रयोग अल्प संख्या में ही मिलते हैं।

नाद-सौन्दर्य एवं चित्रमयता :

नाद-सौन्दर्य 'नवीन' जी के काव्य की एक और विशेषता है। यहाँ कवि इस प्रकार के शब्द चुनता है और उनको इस प्रकार क्रमबद्ध करता है कि पदों का अर्थ शब्दों के नाद से ही प्रतिध्वनित हो जाता है।[३] 'नवीन' जी ने असंख्य

---

१. 'अपलक' - 'नयनन नीर भरे' , पृ० १०१।
२. 'कुंकुम' - 'दो -पत्र' , पृ० ८६।
३. 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास' - डा० श्रीकृष्णलाल, पृ० १०६।

ध्वनि-व्यंजक शब्दों का प्रयोग अपनी कविताओं में किया है। ऐसे शब्दों के प्रयोग से काव्य-पंक्तियाँ सजीव एवं मार्मिक बन पड़ी हैं और उनके द्वारा एक दृश्य या चित्र साकार रूप में उपस्थित हुआ है। इन ध्वनि-चित्रों से श्रोताओं एवं पाठकों को श्रवण-सुख की उपलब्धि होती है। श्री भारतभूषण अग्रवाल ने लिखा है – 'नूपुरों की जितनी झुनझुनाहट 'नवीन' की कविता में है उतनी बाक़ी सारे हिन्दी साहित्य में नहीं है।'[१] दिशाएँ उनकी ध्वनि-व्यंजक रचनाओं से गूँज उठती हैं :-

'रुन-झुन, गुन-गुन, रुन-झुन , गुन-गुन, भ्रमरी पाँजनियाँ गुंजारी
तन-मन-प्राण-श्रवण ध्वनि नन्दित, आई यह अरुणा सुकुमारी।'[२]

लालन के पाँजनियों की ध्वनि कवि के हृदय को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर रही है। पाँजनियों के 'रुनुन-झुनुन-झुन' ध्वनि को सुनकर वह अधीर हो उठता है :-

'रुन-झुन-झुन-झुन-रुनुन-झुनुन-झुन-रुनुन-झुनुन-झुन -
रुनुन- झुनुन ।
मेरे लालन की पाँजनियाँ -
झुनुक रही मेरी आँगनियाँ ;
ओचक आकर, धीरे - धीरे
सुन ले तू, मेरी साजनियाँ ;'[३]

---

१. 'माध्यम' - जनवरी १९६५ - 'हम विषपायी जन्म के' – भारतभूषण अग्रवाल , पृ० ९१।
२. 'रश्मिरेखा' - 'आई यह अरुणा सुकुमारी', पृ० १।
३. वही - 'रुन-झुन-झुन' , पृ० ६७।

वसंतागमन पर प्रकृति में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित होता है। मन्द समीर चारों ओर मानो वसंतागमन के सूचना-पत्र बाँट रहा है। द्रुम - वल्लरियों के काँपने की ध्वनि हृदय में एक विचित्र कम्पन उत्पन्न करती है:-

`हहर-हहर फर सिहर सिहर कर,
काँप रहीं द्रुम-वल्लरियाँ ;
सर-सर खर-खर मर्मर कर ,
नीरस-पत्रावलियाँ झरियाँ।`[१]

मधु समीर बह रही है, पक्षी पंख फड़ फड़ा रहे हैं और कवि-महोदय की लेखनी भी ध्वनि-चित्र उपस्थित करने में तत्पर है :-

`सर-सर-सर-सर करता नाच उठा मधु समीर ,
फर-फर-फर-फर करती आईं विहग-भीर,
जीवन का जय-निनाद उमड़ा है गगन-चीर ,
लहर उठी नभ-सर में बाल अरुण-किरण-लहर
ओ , मेरे मधुराधार।`[२]

विरहिणी-नायिका के लिए यह समय बड़ा दुखदायक है। वह वायु से नम्र निवेदन करती है। कवि-महोदय की यह सब से बड़ी विशेषता है कि उसने यहाँ भी वायु की ध्वनि को शब्दबद्ध किया है :-

` सर-सर हहर-हहर करती मत आ कुटिया के बीच।
री बावरी, जाग उठेगा यह सोया मम संसार ।
न बह, री, तू अरपती बयार।`[३]

---

१. `ला विषपायी जन्म के` - `वसन्त` , पृ० ३३३।
२. `रश्मिरेखा` - ` ओ मेरे मधुराधर` , पृ० १३।
३. `क्वासि` - `वायु से` , पृ० ६६-७०।

~~न बह , री, तू अटपटी बयार ।~~

आकाश में घन-गरजना हो रही है[१] और कुछ ही समय के पश्चात् जल-कण टपकने लगे । इस ध्वनि को 'नवीन' जी ने नवीन रूप से प्रस्तुत किया है :-

'बूँदें टप-टिपिर-टिपिर टपकीं दल-बादल से ,
धाराएँ घिर घहरीं नभ के वक्षास्थल से ,
सिहर उठा मलयानल, हम सिहरे बेकल से,
काँपा मन, उमड़ा हिय, नयन झरे झर-झर, पिय ,'[२]

अब वर्षा बहुत ज़ोर से होने लगी । तरु-तृण सर्वत्र सिहर उठे हैं । झींगुरों की क्षीण ध्वनि, तेज़ वायु की भयानक ध्वनि एवं वर्षा की झर-झर ध्वनि तीनों मिलकर मादक वातावरण उपस्थित करते हैं :-

'झर-झर-झर बरसे करुणा-घन; सर-सर-सर सिहरे तृण-तरु-तन,
सन-सन-सनन समीरन-रिंगन, झींगुर-झंकृति किंकिणि-सिंजन ,
करवन-उपवन-राजि प्रमन्थन, हहरा हर-हर-हहर-प्रभंजन ,
झर-झर-झर बरसे करुणा-घन, सर-सर-सर सिहरे तृण-तरु-तन ।'[३]

श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है - ' नादों को शब्दों की व्यवस्था देना, ध्वनियों के धागों का ऐसा सुलझा रूप कानों तक पहुँचा देना कि

---

१. 'सखि, वन-वन घन गरजे ;
श्रवण निनाद-मगन, मन उन्मन, प्राण-पवन-कण लरजे,
री सखी, वन-वन घन-गन गरजे ।'
- 'अपलक' - 'सखि,वन-वन घन गरजे' , पृ० ६४ ।

२. 'क्वासि' - 'फिर गूँजे नव स्वर, प्रिय' , पृ० ४५ ।

३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'करुणा-घन', पृ० ३६-३७ ।

श्रवण-भाव दृष्टि-भाव से अधिक चिंतन बना रहे, बड़े कुशल कलाकार का काम है।"[१] पक्षियों की ध्वनियों ने भी 'नवीन' जी को विशेष रूप से आकृष्ट किया है। इन ध्वनियों को शब्द-रूप देने में उन्होंने विशेष सावधानी से काम लिया है। उनके काव्य में नाद-सौन्दर्य के ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण अल्प-संख्या में ही मिलते हैं :-

'किर-किर-किर, चिंवँ-चिंवँ-चिंवँ बोल रहे शैल-विहग,
ध्वनित-नन्दित अन्तर तर, गान निरत मम-मन- खग।'[२]

उनके राष्ट्रीय-काव्य में भी नाद-सौन्दर्य के कुछ उदाहरण प्राप्त होते हैं। डंडा-बेड़ी, ज़ंजीरों एवं गरों[३] की ध्वनि को 'नवीन' जी ने बड़ी कुशलता से व्यक्त किया है :-

' छाई ज़ंजीरों की झन-झन ;
डंडा बेड़ी की यह घन-घन ;
गरों का आर्टा फैला ;
यहाँ कहाँ पनघट की खन खन ?
कैसे तुझ को यहाँ मिलेगा होली का आभास,
अरे, हुरियारे फागुन मास।'[४]

---

१. 'रश्मिरेखा' - 'गीत काव्य और बालकृष्ण शर्मा', पृ० १७।
२. 'क्वासि' - 'गान-निरत मम मन-खग', पृ० ११६।
३. 'गरों' - बन्दी-गण बैल के सदृश जुतकर जिस यंत्र से कुँए से पानी खींचते हैं, उसे गरों कहते हैं। कारागार की भाषा में इस प्रकार जल-खींचने वाली टोली को 'गरों कमान' कहा जाता है।'
- 'क्वासि', पृ० ६७।
४. 'क्वासि' - 'फागुन', पृ० ६७।

'नवीन' जी ने प्राय: भाव के अनुकूल शब्दावली का प्रयोग किया है। अर्थ ध्वनिकारी शब्द उसके भावों को सजीवता प्रदान करते हैं और इन ध्वनि-व्यंजक शब्दों से भावों की तीव्रता भी व्यक्त होती है। श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है - 'ध्वन्यात्मकता तथा नाद-सौन्दर्य के उदाहरण भी 'नवीन' जी की कविता में कहीं-कहीं पर देखने को मिलते हैं। इनसे गीतों में एक प्रकार की प्रभविष्णुता तथा सौन्दर्य की उत्पत्ति हो जाती है।'[१]*

चित्रमयता 'नवीन' जी के काव्य की एक और विशेषता है। कुशल चित्रकार की भाँति उन्होंने अपनी तूलिका से सूक्ष्म शब्द-चित्र प्रस्तुत किए हैं। परिमित शब्दों के योग से उन्होंने अपनी रचनाओं में सजीव चित्र प्रस्तुत किए हैं। उन की मनोहारी चित्र-कल्पना निम्नलिखित उद्धरण में दर्शनीय है। यहाँ भावों को चित्रों के द्वारा प्रदर्शित किया गया है :-

'यह नहीं कि हाथ कँपते हैं, हिय भी कँपता आज,
पूरन कैसे होगा पतिया-लेखन का यह काज ?
बड़े जतन से, हिम्मत करके, लिखने बैठा पत्र,
पर ना जानूँ कैसे यह हो-गया आर्द्र सर्वत्र।
हिय घड़के, युग हस्त कँपे, चिट्ठी का ओर न छोर,
थोड़े में समझाना बहुत तुम हे प्राणों की डोर !'[२]

'उर्मिला' महाकाव्य में जनकपुरी का वर्णन करते समय कवि की चित्रण-शक्ति दर्शनीय है :-

---

१. ''नवीन' और उनका काव्य' श्रीजगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० २०८।
(* पाठक भाव की ओर ध्यान न देकर लयात्मक-संकृति का ही आनन्द लेता हुआ आगे बढ़ता है।)
२. 'कुंकुम' - 'दो-पत्र', पृ० ८७-८८।

`नगर चहुँ ओर सुन्दर क्षेत्र सारे, मनोहर हरित-सा परिधान धारे ,
पवन संग कर रहे हैं नृत्य प्यारे, कि मानो जलधि कल्लोलित हुआ,रे ।
कहीं बैठे मुदित हैं भूमि - स्वामी, कहीं वे हो रहे वृषभान गामी,
कहीं गाएँ चराते हैं अकामी ; मधुर यह स्थान `गोपुर-धाम`नामी ।`[१]

अत: यह तथ्य स्पष्ट होता है कि `नवीन` जी के काव्य में नाद-सौन्दर्य अपनी चरम-सीमा पर है और उनकी चित्रण-शक्ति एक कुशल कलाकार की चित्रण-शक्ति से कुछ कम नहीं है । उनकी कल्पना शक्ति प्रखर एवं प्रबल थी जिसके आधार पर वे सूक्ष्म एवं मनोहारी शब्द-चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं ।

निष्कर्ष :

कई विद्वानों का विचार है कि `नवीन` की कविताओं का कला-पक्ष सबल नहीं है । वे अपनी रचनाओं को यथोचित कलात्मक उत्कर्ष एवं परिष्कार नहीं कर सके ।[२] वे भाव-पक्ष एवं कलापक्ष में सामंजस्य स्थापित करने में अधिक सफल नहीं हुए हैं ।[३] परन्तु व्यक्तिगत रूप से मैं इन लेखकों से सहमत नहीं हूँ । यह सत्य है कि उनकी कविताओं में कला सम्बन्धी दोष हैं[४] और काफी संख्या

---

१. `उर्मिला` - प्रथम सर्ग , पृ० ११ ।
२. `काव्य-साधना के अभाव में उनका वांग्मय यथोचित रूप में कलात्मक-उत्कर्ष एवं परिष्कार प्राप्त नहीं कर सका ।`
- ``नवीन`: व्यक्ति एवं काव्य` - डा० दुबे, पृ० ३८७.
३. `शर्मा जी की भावुकता और उनकी काव्य-शक्ति के बीच उच्च कोटि का सामंजस्य थोड़ी ही रचनाओं में मिलता है ।`
-`हिन्दी साहित्य-बीसवीं शताब्दी`-आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी,पृ०३.
४. `उनके काव्य में जो शिल्प-सम्बन्धी दोष हैं उसका कारण यह है कि उनकी कल्पना मीरा की भाँति मुक्त नृत्य करने की अभिलाषी रही है ।`
-`नवीन` और उनकी कविता - कृष्णा चतुर्वेदी, पृ० १५२ ।

में हैं परन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो संसार के महान से महान कवियों में भी ऐसे दोष मिलते हैं। 'नवीन' जी जीवन-पर्यन्त राजनीति में व्यस्त रहे। वे सदा सर कटाने के लिए तत्पर रहे और जूझना तथा संघर्ष करना ही उनके जीवन का प्रधान उद्देश्य रहा। ऐसे व्यस्त-जीवन में वे कविता लिखते थे और यदि उसकी सजावट में कहीं कोई कमी रही तो वह क्षम्य है। उनकी भाषा में कुछ दोष हैं, परन्तु यह दोष उनके नहीं। हमारी भाषा उस समय अर्ध मृतावस्था में दारिद्रिय का जीवन व्यतीत कर रही थी उसके पास स्वयं अपना कुछ नहीं था यही कारण है कि भाषा के भविष्य को ध्यान में रखकर उन्होंने खिचड़ी-भाषा का प्रयोग किया तथा कहीं-कहीं अप्रचलित एवं नवीन प्रयोग भी किए। वे मस्त-मौला थे। उनकी मस्ती, अक्खड़ स्वभाव एवं अल्हड़ व्यक्तित्व का प्रभाव उनकी काव्य-प्रतिभा पर भी पड़ा है जिस कारण उनके काव्य में एक प्रकार का खुरदरापन पाया जाता है, सूक्ष्म लालित्य एवं सौन्दर्य कम ही मिलता है। श्री भारतभूषण अग्रवाल ने लिखा है —'उनकी कविता बिना छने हुए पानी (अनफ़िल्टर्ड वाटर) की भाँति है, जिसमें मरे हुए मेढ़क, सड़ी हुई पत्तियाँ, कूड़ा-कचरा सभी कुछ पूरी गतिमयता से चला आता है।'[१] अग्रवाल जी का यह कथन भी 'नवीन' की समस्त कविताओं पर खरा नहीं उतरता। यह वास्तव में उनकी कविताओं के साथ अग्रवाल जी की लेखनी ने अन्याय किया है। पूर्व-अध्ययन, विवेचन एवं विश्लेषण के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि उनके काव्य का कलापक्ष निर्बल नहीं है- भले ही उसमें कुछ दोष हों। श्री भगवतीचरण वर्मा के शब्दों में 'नवीन' कवि नहीं, स्वयं मूर्तिमती कविता थे।[२] वे मूलत: काव्य के कमल थे। 'नवीन' जी

---

१. 'माध्यम' - जनवरी १९६५ - 'हम विषपायी जन्म के' -श्री भारतभूषण अग्रवाल, पृ० ६७।

२. 'कादम्बिनी' - नवम्बर १९६० - 'नवीन' -श्री भगवतीचरण वर्मा, पृ० १८।

एक ऐसे हीरे थे, जो ज़िन्दगी भर बिना मोल ही बिकते रहे ।[१] श्री श्रीप्रकाश ने लिखा है – `हिन्दी के वह बहुत बड़े कवि थे ।`[२] उनकी अभिव्यक्ति-धारा बड़ी ही बलवती एवं वेगवती है । उनकी कृतियाँ हिन्दी साहित्य की अनमोल निधि हैं । श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा है – ` काव्य क्षेत्र में भी श्री शर्मा जी की अनन्य सेवाओं की समता नहीं की जा सकती । तथा उनके निधन से जो क्षति हुई, वह अधिक काल तक सहज पूरी न हो सकेगी ।`[३] उन्होंने धनार्जन के हेतु साहित्य-सृजन नहीं किया । श्री सद्गुरु शरण अवस्थी ने लिखा है – ` बालकृष्ण शर्मा उन साहित्य कुबेरों में हैं, जो अपना स्वरस्वती कोष बिखेर देना जानते थे, उसका उपयोग करना नहीं जानते ।`[४] एक चित्र-कार के रूप में, एक संगीतज्ञ के रूप में, एक गीतकार के रूप में एवं हिन्दी भाषा के एक प्रतिष्ठापक के रूप में उनका नाम साहित्य के इतिहास में स्वर्ण-अक्षरों से लिखा जाएगा । सचमुच वे मर कर भी अमर हैं बल्कि मर कर ही अमर हुए हैं । श्री `बच्चन` ने लिखा है – `इक़बाल ने कहीं कहा है कि बहुत से कवि अपनी मृत्यु के बाद ही जन्म लेते हैं । राजनीतिक `नवीन` के क्षीण अथवा मृत होने से उसकी मृत्यु हो गई थी, पर कवि `नवीन` मर कर अमर होगया है । - - - मेरा विश्वास है कि `नवीन` जी ने अपने जीवन का प्रमुख ,

---

१. `धर्मयुग` - ५ जुलाई १९६४ - `हम विषपायी जन्म के` - ग्रन्थ विमोचन समारोह - डा० हरिवंशराय `बच्चन` , पृ० १३ ।

२. `साप्ताहिक हिन्दुस्तान` - ३ जुलाई १९६० - `वह अपूर्व साक्षी थे` - श्रीप्रकाश (भूतपूर्व राज्यपाल, महाराष्ट्र), पृ० ४ ।

३. `सरस्वती` - जून १९६० - `त्याग का दूसरा नाम `नवीन` - माखनलाल चतुर्वेदी , पृ० ३८० ।

४. `आजकल` - अप्रैल १९६४ - `नवीन` - सद्गुरुशरण अवस्थी, पृ०१९ ।

स्थायी और महत्वपूर्ण कार्य राजनीति के क्षेत्र में नहीं किया था, साहित्य के क्षेत्र में किया था।'[१] उन्होंने हमारी काव्यात्मक-अभिव्यक्ति में नवीन प्रयोगों के अनेक द्वार खोले हैं। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० स्स० राधाकृष्णन् ने लिखा है - 'हिन्दी साहित्य में श्री बालकृष्ण शर्मा की देन विशिष्ट है।'[२] कला की दृष्टि से उन के काव्य में नवीनता एवं मौलिकता दो गुण पाए जाते हैं। निस्सन्देह उनके काव्य में कलात्मक उपलब्धियाँ महान हैं। परलोक-गमन करके वे अपनी ही काव्य-पंक्तियाँ चरितार्थ कर गये :-

'पाहुन सम तुम करि गये छिन में महाप्रयान,
ता दिन तें जीवन-कुटी भयी निपट सुनसान।'[३]

तुलनात्मक निष्कर्ष :

दोनों महाकवियों के काव्य के कला-पक्ष का सम्यक् विवेचन करने के पश्चात् अब तुलनात्मक दृष्टिकोण से उनकी उपलब्धियों पर प्रकाश डाला जायेगा। 'महजूर' ने अपने युग का सफल नेतृत्व किया और युग-कलाकार के रूप में उन्होंने अज्ञान के अथाह अन्धकार में भटकती हुई जनता का पथ-प्रदर्शन किया। उनकी रचनाओं का स्वागत देश के कोने-कोने में हुआ और अनेकों उभरते साहित्यकारों को उनसे प्रेरणा मिली। 'नवीन' की काव्य-वाणी भी अमर है। उनमें अद्भुत कवित्व-शक्ति थी और अपनी उर्वरा कल्पना-शक्ति के द्वारा उन्होंने अपने काव्य में सत्यम्-शिवं-सुन्दरम् की प्रतिष्ठा की। मानव कल्याण उनके साहित्य

---

१. 'नर्मदा' - 'नवीन'-विशेषांक - १९६३, कविवर नवीन जी - 'बच्चन' पृष्ठ ११५।
२. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३ जुलाई १९६० - 'प्रभावशाली व्यक्तित्व' - डा० स्स० राधाकृष्णन्, पृ० ४।
३. 'हम विषपायी जन्म के' - 'नवीन' - 'नवीन दोहावली', पृ० २३७।

का प्रमुख उद्देश्य रहा है। दोनों कवियों ने धनार्जन के हेतु साहित्य-सृजन नहीं किया अपितु उनके भीतर भावनाओं का इतना तूफान आ गया था कि वे अपने को अभिव्यक्त किए बिना नहीं रह सके। सचमुच उनके काव्य में जन-मानस प्रतिबिम्बित हुआ है।

नवीन जी की प्रतिभा `महजूर` की अपेक्षा बहुमुखी है। जहाँ `महजूर` ने केवल गीत और गज़लों के द्वारा अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त किया वहाँ `नवीन` ने मुक्तक काव्य के अतिरिक्त महाकाव्य एवं खण्ड-काव्य भी लिखे हैं। इस प्रकार `नवीन` का काव्य-क्षेत्र `महजूर` की अपेक्षा विस्तृत है। कश्मीरी-गज़ल को `महजूर` के करकमलों द्वारा एक नवीन दिशा प्राप्त हुई और उस का स्वरूप भी स्थिर होगया। `महजूर` की गज़लों में दैनिक जीवन की बातें कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त हुई हैं और इन गज़लों में जनता की हृदय-धड़कनों को झंकृत करने की शक्ति है। इसके अतिरिक्त `महजूर` ने अनेक सुन्दर गीत भी लिखे हैं जिनमें सौन्दर्य, लालित्य एवं माधुर्य का विचित्र संगम है। ठीक इसी प्रकार गीतकार 'नवीन' हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। इन गीतों के माध्यम से उन्होंने अपनी कोमल और सूक्ष्म अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है। `महजूर` की अपेक्षा `नवीन` के गीतों में विविधता है। `महजूर` ने शोक-गीत नहीं लिखे हैं जब कि `नवीन` के साहित्य में इसके उदाहरण पर्याप्त रूप में मिलते हैं। लोक-गीतों का प्रभाव `नवीन` की अपेक्षा `महजूर` के गीतों में अधिक परिलक्षित होता है। लोक-मानस द्वारा `महजूर` विशेष रूप से प्रभावित हुए थे और काव्य लिखने की प्रेरणा भी उन्हें इन्हीं गीतों से मिली थी। संक्षिप्तता दोनों कलाकारों के गीतों की एक प्रमुख विशेषता है यद्यपि `नवीन` जी के गीत कहीं-कहीं पर लम्बे भी बन पड़े हैं। `नवीन` के गीतों में `महजूर` की अपेक्षा अधिक मांसल भावुकता है। इसके अतिरिक्त `नवीन` एक प्रबन्ध काव्यकार के रूप में भी सफल हुए हैं। इस क्षेत्र में वे `महजूर` से एक पग आगे बढ़े हैं। `नवीन` जी का दोहा-साहित्य भी उनकी अक्ल कीर्ति का स्मारक-

स्तम्भ है। `उर्मिला` में ही उन्होंने ७०० से अधिक दोहे लिखे हैं और इस क्षेत्र में भी `महजूर` उनसे पीछे रह गया है, वैसे कश्मीरी में दोहे लिखने की कोई परिपाटी नहीं है।

भाषा के क्षेत्र में दोनों महाकवियों की अपनी अपनी निजी विशेषताएँ हैं। `महजूर` ने कश्मीरी-भाषा का पुनरुद्धार किया। कश्मीरी भाषा को साहित्यिक रूप देने में `महजूर` का योगदान सदा प्रशंसनीय रहेगा। उन्होंने फारसी या संस्कृत के मोह में पड़ कर अपनी काव्य-भाषा को विकृत नहीं किया अपितु शुद्ध ठेठ-कश्मीरी भाषा का प्रयोग करके इसे साहित्यिक श्रेष्ठत्व प्रदान किया। `महजूर` ने भाषा के क्षेत्र-में भी अपनी स्वतंत्र प्रकृति का परिचय दिया। दासता की ज़ंजीरों को वह सदा के लिए तोड़ कर फेंक देना चाहते थे जिस कारण उन्होंने विदेशी भाषा (फारसी) में काव्य साधना न करके अपनी भाषा को अपनाया और इस अर्धमृत भाषा में नवीन प्राणों का संचार किया। `महजूर` की भाषा में एक अद्भुत गाम्भीर्य है। भाषा भावों के अनुरूप प्रयुक्त हुई है। उन की भाषा विचारों की अनुगामिनी है। इसमें क्लिष्टता नहीं, दुरूहता नहीं और न ही अस्पष्टता का ही दोष है। अपने पूर्ववर्ती कवियों की अपेक्षा `महजूर` की भाषा सरल, सशक्त, स्वच्छ एवं स्वदेशी है। उन्होंने यत्र-तत्र बड़ी सुविधा के साथ अरबी, फारसी, उर्दू एवं हिन्दी के शब्दों का प्रयोग तत्सम एवं तद्भव रूप में किया है। कहीं-कहीं एक आध अंग्रेज़ी भाषा के-शब्द भी उनकी कविताओं में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त देशज एवं ग्रामीण शब्दों का प्रयोग भी उन्होंने किया है। `नवीन` जी भी सचमुच भाषा के धनी थे। वे-हिन्दी के प्रबल समर्थक थे और इस भाषा की उन्नति एवं विकास के लिए जीवन-पर्यन्त भरसक प्रयत्नशील रहे। वे संस्कृत-गर्भित भाषा के समर्थक थे, यद्यपि उन्होंने भी `महजूर` के समान ही अरबी, फारसी, उर्दू, अंग्रेज़ी एवं देशज तथा ग्रामीण शब्दों का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया है। खड़ी बोली हिन्दी को सुष्ठ अभिव्यंजना का अतीव मधुर एवं प्रांजल रूप

उनके द्वारा प्राप्त हुआ। खड़ी बोली हिन्दी के अतिरिक्त उन्होंने ब्रजभाषा में भी कविताएँ लिखीं हैं। यहाँ एक बात स्पष्ट कर देना परमावश्यक है कि `महजूर` की अपेक्षा `नवीन` जी को अधिक भाषाओं का ज्ञान था। `महजूर` फारसी, अरबी, कश्मीरी, उर्दू एवं कुछ कुछ हिन्दी भाषा से परिचित थे जब कि `नवीन` हिन्दी एवं अंग्रेज़ी के अच्छे वक्ता एवं लेखक होने के साथ-साथ बुन्देली, अवधी, ब्रज, उर्दू एवं संस्कृत के पूर्ण पण्डित थे। उन्होंने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर एक समन्वयकारी लेखक का उत्तरदायित्व निभाया। इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि कश्मीरी भाषा को काव्य के उपयुक्त बनाने में `महजूर` तथा खड़ी बोली हिन्दी को साहित्यिक-श्रेष्ठत्व प्रदान करने में `नवीन` का नाम सदा अमर रहेगा। दोनों कवियों का शब्द-भण्डार विविधता से पूर्ण, भावाभिव्यक्ति में समर्थ एवं ध्वनि-व्यंजक है।

संगीतात्मकता का गुण दोनों के काव्य में समान रूप से मिलता है परन्तु अन्तर केवल इतना है कि `महजूर` ने लोक-संगीत और `नवीन` जी ने लोक-संगीत तथा शास्त्री संगीत दोनों का आश्रय लिया है। `महजूर` ने कश्मीर की अनेक प्रसिद्ध लोक-धुनों के आधार पर अपने गीतों और गज़लों का निर्माण किया है। लोक-संगीत ने उनके काव्य को अधिक लोकप्रिय एवं लोक-ग्राह्य बना दिया है। कश्मीरी कविता और संगीत के मध्य गहरी खाई को पाटने का प्रयत्न उन्होंने किया है। यही कारण है कि `महजूर` की रचनाएँ कश्मीरी जनता के हृदय-तारों को छेड़ती हैं। उन्होंने सर्वत्र कोमल-काव्योचित-संगीतमय शब्दावली का प्रयोग किया। संगीत उनके काव्य का एक शाश्वत गुण है। धमनियों में रक्त-संचार की भाँति संगीत उनके काव्य में माधुर्य का संचार करता है। संगीत से उन्हें विशेष अनुराग था और यही अनुराग हमें `नवीन` जी में भी उपलब्ध होता है जिसने उन्हें गीत लिखने की ओर प्रेरित किया। `नवीन` जी की एक विशेषता यह है कि वे स्वयं बहुत ही अच्छा गाते थे ; यह गुण `महजूर` में नहीं था। `नवीन` जी कवि-सम्मेलनों में जब कविता-पाठ करते थे तो वातावरण

उनके मधुर-कंठ से गूँज उठता था। उन्होंने कई भारतीय राग-रागिनियों के आधार पर रचनाएँ लिखी हैं जिनमें पीलू, भैरवी, सोरठ देश एवं कलिंगड़ा उल्लेखनीय हैं। डुबा देने वाले संगीत के नाद से उन्होंने सर्वत्र मादक वातावरण की सृष्टि की है। उनका काव्य नीरस तुकबन्दी मात्र नहीं, उसमें संगीत एवं भाव का अपूर्व समन्वय है। वास्तव में दोनों कलाकार संगीत के प्रेमी थे।

दोनों कलाकारों ने अलंकारों को काव्य के अस्थिर धर्म के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने अलंकारों को काव्य की आत्मा नहीं माना अपितु साध्य तक पहुँचने के लिए साधक स्वरूप अपनाया है। `महजूर` को अलंकारों का शास्त्रीय ज्ञान नहीं था परन्तु कथन को मार्मिक एवं प्रभावोत्पादक ढंग से अभिव्यक्त करने की तीव्र इच्छा उनमें थी। इसी इच्छा के परिणामस्वरूप उनके काव्य में अनेक अलंकारों का समावेश स्वयमेव हुआ है। इसके विपरीत 'नवीन' जी भारतीय काव्य-शास्त्र के ज्ञाता थे। उन्हें प्रत्येक अलंकार की आत्मा का पूरा ज्ञान था अत: अलंकारों के प्रयोग में जो कला-कुशलता एवं निपुणता हमें `नवीन` के काव्य में मिलती है उसका अभाव `महजूर` के काव्य में अवश्य खटकता है। `नवीन` जी ने समय, परिस्थिति एवं प्रसंगानुकूल अलंकारों का प्रयोग किया है। शब्दालंकारों की अपेक्षा दोनों महानुभावों के काव्य में अर्थालंकारों की छटा अधिक दर्शनीय है। मानवीकरण का प्रयोग `नवीन` के काव्य में बड़ा सुन्दर बन पड़ा है। प्रस्तुत - अप्रस्तुत योजना भी उनके काव्य में कलात्मक रूप से सम्पन्न हुई है। इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि `नवीन` को अलंकारों के प्रयोग में जो असाधारण सफलता प्राप्त हुई है वह `महजूर` के काव्य में नहीं मिलती है। परन्तु इसका अभिप्राय कदापि यह नहीं है कि वे अलंकारों का प्रयोग करने में विफल हुए हैं। अपनी सीमा और शक्ति के अनुसार उनके काव्य में अलंकारों का सफल एवं सहज प्रयोग हुआ है। अलंकारों के प्रयोग से दोनों के काव्य में ध्वनि-व्यंजना एवं भाव-व्यंजना सुन्दर रूप से हुई है। दोनों के काव्य में अलंकारों का अपना विशिष्ट स्थान है।

दोनों कलाकारों के काव्य में क्योंकि भावों की विविधता है , इस कारण विभिन्न गुणों का समावेश स्वयमेव उनकी रचनाओं में हुआ है। दोनों कवियों ने राष्ट्रीय एवं देश-प्रेम सम्बन्धी रचनाएँ लिखीं हैं, जिस कारण ओज-गुण समान रूप से दोनों के काव्य में मिलता है। दोनों कवियों ने शृंगार-परक एवं प्रकृति-प्रेम सम्बन्धी रचनाएँ लिखी हैं जिस कारण माधुर्य गुण उनके काव्य का समान रूप से आभूषण बना है। यत्र-तत्र प्रसाद गुण के दर्शन भी `महजूर` की अपेक्षा `नवीन` के काव्य में अधिक होते हैं। `नवीन` को हुंकार और माधुर्य का कवि कहा गया है और यह उक्ति `महजूर` पर भी समान रूप से चरितार्थ होती है। इन गुणों के समावेश से उनका काव्य उत्कृष्ट बन पड़ा है। वैसे महजूर में माधुर्य की अपेक्षा हुंकार कम है।

दोनों कवियों ने रस को काव्य की आत्मा स्वीकार किया है। यह एक विशेष प्रकार की आनन्दमय मानसिक अवस्था है जिसकी प्राप्ति काव्य के अध्ययन से होती है। रस का सीधा सम्बन्ध भावों से है। यहाँ यह बात स्पष्ट कर देना नितान्तावश्यक है कि `महजूर` को रस के शास्त्रीय लक्षणों का या शास्त्रीय विवेचन का कोई ज्ञान नहीं था। क्योंकि उन्होंने अपना हृदय चीर का कागज़ पर रखा है अर्थात् अपने दग्ध-हृदय को यत्र-तत्र अभिव्यक्ति दी, इस कारण विभिन्न रसों का समावेश उनके काव्य में स्वयमेव हुआ है। शृंगार, वीर, भयानक एवं करुण रस की प्रधानता उनके काव्य में है विशेष कर शृंगार और वीर-रस का परिपाक उनकी रचनाओं में सुन्दर ढंग से हुआ है। `नवीन` जी रस की आत्मा से पूर्णरूपेण परिचित थे। उन के काव्य में नौ रसों का सुन्दर समावेश हुआ है यद्यपि प्रधानता वीर, शृंगार, भयानक, रौद्र , बीभत्स एवं करुण रस की है। `नवीन` जी का समस्त साहित्य रस सिक्त है। रस-परिपाक में `महजूर` की अपेक्षा `नवीन` जी को विशेष सफलता मिली है।

दोनों महानुभावों के काव्य में प्रकृति का अपना विशिष्ट स्थान है और

प्रकृति के प्रति उऋण होने के लिए दोनों कवियों ने भरसक प्रयत्न किया है। प्रकृति दोनों कलाकारों की सहचरी रही है। प्रकृति-सौन्दर्य से अभिभूत उनके कवि-हृदय विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हुए हैं। यहाँ यह तथ्य स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि `नवीन` की अपेक्षा `महजूर` का प्रकृति चित्रण अधिक मार्मिक, अधिक सुन्दर एवं अधिक प्रभविष्णु है। प्रेम और प्रकृति का जितना सुन्दर चित्रण `महजूर` के काव्य में मिलता है उतना अन्यत्र पाना दुर्लभ है। उनकी रचनाओं में पुष्पों की सुगन्ध, भ्रमरों की गुंजार एवं पक्षियों का कलरव मुखरित हो उठा है। प्रकृति-चित्रण में उनकी तुलना हिन्दी के प्रसिद्ध कवि सुमित्रानन्दन पन्त से की जा सकती है। उन्होंने आलम्बन रूप में प्रकृति-चित्रण मुक्त-कंठ से किया है और इसके अतिरिक्त उद्दीपन रूप में, आलंकारिक रूप में, मानवीकरण के रूप में, प्रतीकात्मक रूप में और कहीं पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया है। `नवीन` जी ने भी प्रकृति-देवी पर अपनी अर्चना के पुष्प विविध रूप से चढ़ाए हैं। उन्होंने परम्परागत रूप में भी प्रकृति-चित्रण किया है और युग तथा परिस्थितियों के अनुकूल, नवीन ढंग से भी प्रकृति पर सोचने-समझने तथा कुछ लिखने का प्रयत्न किया है। दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति में उन्होंने `महजूर` से कहीं अधिक आगे बढ़ कर प्रकृति की शरण ली है, यहाँ प्रकृति-चित्रण अधिकतर पृष्ठभूमि के रूप में हुआ है। स्मृति-संचारी के रूप में `नवीन` जी ने जो प्रकृति-चित्रण किया है उसका `महजूर` के काव्य में प्राय: अभाव ही है।

`नवीन` जी ने जो षट-ऋतु वर्णन किया है, वह भी `महजूर` के काव्य में नहीं मिलता। परन्तु इतना होने पर भी `महजूर` के प्रकृति-चित्रण में जो सहज-सौन्दर्य है, लावण्य है, माधुर्य है एवं आकर्षित करने की शक्ति है उसके सामने `नवीन` जी का प्रकृति-चित्रण कुछ फीका पड़ जाता है। `महजूर` को प्रकृति के रम्य-आंगन में विचरने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। प्रकृति के रहस्य एवं सौन्दर्य को निकट से देखने, अनुभव करने, एवं निरीक्षण करने का अवसर भी

उन्हें मिला था, इस कारण उनका प्रकृति-चित्रण अधिक मार्मिक बन पड़ा है। यद्यपि दोनों कलाकार प्रकृति के पुजारी थे, प्रकृति दोनों की चिरसंगिनी रही है तथापि 'महजूर' इस क्षेत्र में 'नवीन' से कुछ आगे ही दीख पड़ते हैं।

'महजूर' के काव्य की अपनी एक और विशेषता है और वह है उसका स्थानीय रंग। 'महजूर' ही कश्मीरी भाषा का पहला कवि है जिसने अपनी 'जन्मभूमि' के प्राकृतिक सौन्दर्य के गाने गाये हैं। कश्मीर के प्राकृतिक-लावण्य ने उन्हें लेखनी उठाने के लिए प्रेरित किया था। पाम्पोर की हँसती केसर वाटिकाओं का कश्मीर, मोती बिखेरने वाले जल-प्रपातों का कश्मीर, वेरी-नाग अच्छा बल एवं नीलनाग का कश्मीर, पहलगाम और गुलमर्ग का कश्मीर, सरसब्ज़ घाटियों का कश्मीर, उसे सदा अपनी ओर आकर्षित करता रहा। कश्मीर की प्राकृतिक झीलों, जल-स्रोतों, मुगल बागों, हिमाच्छादित पर्वत-शृंखलाओं, झर-झर करते झरनों एवं हृदयाकर्षक घाटियों ने उन्हें लेखनी उठाने के लिए विवश किया था। इस प्रकार उनके काव्य में जो स्थानीय रंग मिलता है, वह उनकी निजी विशेषता है। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य तथा विभिन्न स्थानों का उल्लेख उन्होंने कहीं पृष्ठभूमि के रूप में, कहीं आलम्बन के रूप में और कहीं उद्दीपन के रूप में किया है। इस क्षेत्र में बालकृष्ण जी 'महजूर' से बहुत पीछे रह गए हैं।

दोनों के काव्य में प्रतीकों की योजना सफल रूप से हुई है। परन्तु 'महजूर' ने 'नवीन' की अपेक्षा प्रतीकों का प्रयोग अधिक किया है। उन्होंने परम्परागत- प्रतीकों को कहीं नवीन अर्थ में ग्रहण किया है और कहीं नवीन प्रतीकों को भी जन्म दिया है। 'गुल' और 'बुलबुल' की ओट में उन्होंने कश्मीर की राजनीतिक क्रान्ति में सहयोग दिया है। नरगिस और भ्रमर का प्रयोग उनके शृंगारिक काव्य में अधिकतर हुआ है। इसी प्रकार 'फाकड़', 'कृष्ण पदा', 'बाग', 'बागबान', 'कली', 'बसन्त', 'पुष्प' आदि

शब्दों का प्रतीकात्मक रूप से उनके काव्य में प्रयोग हुआ है। 'नवीन' जी ने भी यथासमय प्रतीकों का प्रयोग किया है। वे जानते थे कि साधारण वक्तव्य की अपेक्षा प्रतीकों के द्वारा सत्य को या भाव को अधिक प्रभावोत्पादक, मार्मिक एवं संक्षिप्त रूप से प्रकट किया जा सकता है। 'वर्तिका', 'दीप-बाती', 'नन्द वंश', 'शकटकार', 'गोपाल', 'मोहनलाल', 'हलाहल', 'राधा', 'गोकुल', 'मथुरा', 'कुब्जा', 'खंजन', 'प्राण' एवं 'कलिका' शब्दों का प्रयोग 'नवीन' जी ने प्रतीकात्मक रूप में किया है। दोनों कलाकारों ने राष्ट्रीय-प्रतीक-योजना के साथ-साथ शृंगारपरक रचनाओं में कोमल, मार्मिक एवं हृदयाकर्षक प्रतीकों का प्रयोग किया है। 'नवीन' के काव्य में प्रतीकात्मक-प्रयोग अल्प-संख्या में मिलते हैं।

बालकृष्ण जी के काव्य में जो नाद-सौन्दर्य मिलता है उसका प्राय: 'महजूर' के काव्य में अभाव है। 'महजूर' इस क्षेत्र में 'नवीन' से बहुत पीछे रह गये हैं। 'नवीन' जी ने यत्र-तत्र नाद-सौन्दर्य उत्पन्न करने के हेतु ध्वनि-व्यंजक शब्दों का प्रयोग किया है, और शब्दों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया है कि पदों का अर्थ शब्दों के नाद से ही प्रतिध्वनित हो जाता है। अर्थ ध्वनि-कारी शब्द उसके भावों को सजीवता प्रदान करते हैं। 'नवीन' के काव्य में नाद-सौन्दर्य निस्सन्देह अपनी चरम-सीमा पर है।

चित्रण-शक्ति का गुण दोनों कवियों में समान रूप से मिलता है। मार्मिक शब्द-चित्र प्रस्तुत करने में दोनों कलाकार सिद्धहस्त थे। दोनों की कल्पना-शक्ति प्रखर एवं प्रबल थी जिसके आधार पर वे सूक्ष्म एवं मनोहारी शब्द-चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं। इस क्षेत्र में दोनों कुशल चित्र-कार सिद्ध हुए हैं।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि कला के क्षेत्र में दोनों की अपनी अपनी निजी विशेषताएँ हैं जिनमें कहीं साम्य है और कहीं वैषम्य। 'महजूर' के

काव्य में भाव और भाषा का जो प्रौढ़ रूप मिलता है वह अपने में अनन्य है। 'नवीन' के साहित्य में हिन्दी-भाषा और काव्य का जो परिष्कृत परिमार्जित एवं श्रेष्ठ रूप मिलता है वह कई युगों तक हिन्दी-पाठकों के लिए ज्योति-स्तम्भ का काम देता रहेगा। दोनों श्रेष्ठ कलाकार थे, दोनों सरस्वती के धनी थे और दोनों की देन साहित्य के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगी।

--

परिशिष्ट - १

'ऊर्मिला' - एक अध्ययन

परिशिष्ट - १.

'उर्मिला' — एक विवेचन

'उर्मिला' पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की बहुचर्चित सफल प्रबन्ध कृति है जिस में उन्होंने युग-युग से उपेक्षित उर्मिला के त्यागमय जीवन का मौलिक वर्णन किया है। इस कृति का अपना एक विचित्र इतिहास है जिस का ज्ञान प्राप्त करना नितान्तावश्यक है। विस्मृता उर्मिला के उज्ज्वल चरित्र एवं महिमा मण्डित जीवन पर कुछ लिखने की प्रेरणा 'नवीन' जी को अपने गुरुजनों से प्राप्त हुई। रवि बाबू की 'काव्येर उपेक्षिता' शीर्षक चुनौती ने उनका ध्यान उपेक्षिता उर्मिला के प्रति आकृष्ट किया।[१] आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' निबन्ध से भी वे प्रभावित हुए थे।[२] इसके अतिरिक्त स्वर्गीय मैथिलीशरण गुप्त के अप्रकाशित 'उर्मिला' काव्य ने भी उन्हें इस विषय में कुछ लिखने के लिए प्रेरित किया।[३] भारत में रामायण-साहित्य के

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३० अप्रैल १९६१ - 'नवीन' जी की पलकों में उर्मिला के आँसू' - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० ११।

२. पण्डित श्रीराम शर्मा से प्रत्यक्ष भेंट (७-२-१९६५ द्वारा ज्ञात।

३. 'मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य' - डा० कमलाकान्त पाठक, पृ० ३९४।

प्राचीन इतिहास को देखकर वे खिन्न हो उठे थे , क्योंकि कोई भी कलाकार उर्मिला के साथ न्याय करने में सफल नहीं हुआ था।[१] संस्कृत तथा हिन्दी के राम-कवियों ने कहीं-कहीं पर मात्र उल्लेख करके ही उर्मिला को अन्धकार में छोड़ दिया। इस प्रकार उसके त्याग तपस्यामय जीवन पर उपेक्षा रूपी गहरी काई छा गई। इस काई की गहरी लीक को हटाने के लिए सर्वप्रथम गुप्त जी ने 'साकेत' को लिखना आरम्भ किया और उनके साथ ही 'नवीन' जी ने कारागृह का नवीन जीवन-यापन करते हुए, नवीन प्रसंगोद्भावना करके, उर्मिला के अनुनय जीवन की गाथा लिपिबद्ध की। गुप्त जी ने 'साकेत' को सन् १९१४ में लिखना आरम्भ किया तथा सन् १९३१ में उन्होंने इसको समाप्त किया। 'नवीन' जी ने अपने काव्य-ग्रन्थ का आरम्भ सन् १९२२ में किया स्वयं उन्होंने 'उर्मिला' की भूमिका में लिखा है - 'मैंने १९२२ ई० के नवम्बर के अन्त में या दिसम्बर के आरम्भ में ऊर्मिला लिखनी आरम्भ की। प्रथम सर्ग लखनऊ कारावास में, प्राय: एक सवा मास में, लिखा गया। जनवरी सन् १९२३ के अन्त में हमलोग कारागृह-मुक्त हुए। उसके उपरान्त बाहर के झंझट में फंसा और ऐसा फंसा कि ऊर्मिला को फिर से प्रारम्भ करने का अवकाश ही न मिला। सन् १९३० में दो बार ६: ६: मास का कारावास दण्ड मिला। तब लिखने का विचार आया। पर उस वर्ष कारागार में भी

---

१. 'आश्चर्य है कि परम कारुणिक महर्षि वाल्मीकि जो बहेलिए द्वारा एक क्रौंच पक्षी को आहत देखकर करुणा से विगलित होकर श्लोक रूप में अपने भावोच्छ्वासों को रोक न सके थे, अपनी रामायण में उर्मिला के जीवन चरित को सर्वथा उपेक्षा कर गये। गोस्वामी तुलसीदास ने भी अपने रामचरित मानस में उर्मिला के चरित्र की इसी प्रकार उपेक्षा की है।
-'आदर्श' (सितम्बर १९६१) - 'काव्य उपेक्षिता उर्मिला' - गिरीशचन्द्र वर्मा , पृ० ४१।

नेतागीरी ने मेरा पिण्ड न छोड़ा । ऊर्म्मिला लेखन का विचार यों ही विफल रहा । इसके उपरान्त सन् १९३१ के दिसम्बर मास में मैं फिर पकड़ लिया गया । इस बार मुझे ढाई वर्ष का कारावास दण्ड मिला । इस बार मैंने दृढ़ विचार कर लिया कि इस कारावास की अवधि में 'ऊर्म्मिला' समाप्त करनी है । - - - सन् १९३४ के फ़रवरी मास में मैं जब बाहर निकला तो ऊर्म्मिला समाप्त कर चुका था ।'[१] १२ वर्ष की इस दीर्घ अवधि में उन्होंने केवल साढ़े चार मास 'उर्मिला' लिखने का पुनीत कार्य किया है ।[२] सन् १९३२ में 'साकेत' ग्रन्थ प्रकाशित हुआ परन्तु उर्मिला का प्रकाशन सन् १९५७ में हुआ ।[३] 'नवीन' जी नेअपनी इस महान कृति के साथ यह सब से बड़ा अन्याय किया कि सन् १९३४ में समाप्त करके सन् १९५७ में वर्षों बाद प्रकाशित कराया । बाद में इस कृति का वह महत्व न रहा , वह लोकप्रियता

---

१. 'उर्मिला' - 'नवीन' , भूमिका, पृ० (ख-ग) ।

२. 'एक बार मैंने पाण्डुलिपि से सब तिथियों को जोड़ कर यह जानना चाहा कि अन्ततः मुझे इसके लेखन में कितना समय लगा । मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब मैंने यह देखा कि इस सम्पूर्ण ग्रन्थ को लिखने में मैंने सवा चार साढ़े चार मास से अधिक समय नहीं लिया ।'

-'उर्मिला' - 'नवीन', भूमिका, पृ० (ग) ।

३. 'सन् १९५७ में उन्होंने अपना 'ऊर्म्मिला' प्रबन्ध काव्य प्रकाशित किया, जो लगभग पच्चीस वर्ष पूर्व समाप्त हो गया था और पाण्डु-लिपि रूप में उनके पास पड़ा था ।'

-'नये पुराने झरोखे' - 'बच्चन' , पृ० ३१.

न रही , जो कि लेखन-युग में इस से प्राप्त होती यदि इसे उस समय प्रकाशित किया जाता । उपेक्षित उर्मिला के प्रति कवि महोदय की इस उपेक्षा का उत्तरदायित्व स्वयं उन्होंने अपने ऊपर लिया है ।[१] उन पर व्यंग्य-बाणों की वर्षा करते हुए श्री उदयशंकर भट्ट ने लिखा है - 'यदि प्रयागनारायण त्रिपाठी जैसे हनुमान न मिलते तो कदाचित इस काव्य-सीता का पता हिन्दी पाठकों को न लग पाता ।'[२] इस प्रकार युग-युग से उपेक्षिता उर्मिला की चरित्रगत विशेषताओं को प्रकाश में लाने तथा उसे एक महाकाव्य में प्रधान चरित्र के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास गुप्त जी के पश्चात् 'उर्मिला' में श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने किया है ।[३] उन्होंने अपनी कृति में परम्परा-गत रामकथा का यत्र-तत्र आश्रय लिया है क्योंकि रामकथा में उर्मिला का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है और रामकथा के सन्दर्भ के बिना उसका मूल्यांकन कठिन ही नहीं, असम्भव भी है । उन्होंने रामकथा के केवल उन्हीं अंशों को अपने काव्य में लिया है जिनका प्रत्यक्ष या परोक्ष सम्बन्ध उनकी काव्य नायिका या काव्य-नायक से है । 'साकेत' में उर्मिला के प्रति उपेक्षा का निराकरण तो अवश्य मिलता है परन्तु वहाँ उर्मिला-चरित्र पर राम-कथा हावी हो गई

---

१. 'यह उर्मिला है, यह ग्रन्थ, वर्षों के उपरान्त अब प्रकाशित हो रहा है । इस विलम्ब को मैं क्या कहूँ ? अपनी बहुधन्धोपन ? अपना प्रमाद? प्रकाशन के प्रति मेरा अपना विराग ? मेरा नैष्कर्म्य-भाव ? - - - समाप्त तो यह ग्रन्थ सन् १९३४ में हो चुका था । पर, प्रकाशित अब हो रहा है । प्रशंसा कीजिये यह है मेरा योग: कर्मसु कौशलम् ।'

'उर्मिला' - 'नवीन' , भूमिका , पृ० (क,ग)

२. 'आजकल' - अक्टूबर १९५८ - 'ऊर्म्मिला' काव्य- उदयशंकर भट्ट, पृ०५३-५४।

३. 'आधुनिक महाकाव्य' - डा० गोविन्दराम शर्मा- 'उर्मिला', पृ०४३५ ।

है । रामकथा के सन्दर्भ में उर्मिला का चित्रण हुआ है परन्तु 'उर्मिला' में 'साकेत' की अपेक्षा उर्मिला का विशद वर्णन है । यहाँ पर राम-कथा गौण रूप से पृष्ठभूमि में आ गई है । वाल्मीकि, कालिदास[१] एवं तुलसीदास[२] से यह ग्रन्थ अवश्य अनुप्रेरित है परन्तु कहीं भी लेखक महोदय ने उनका अन्ध-भक्त बनकर अन्धानुकरण नहीं किया है । उर्मिला को जनक-नन्दनी स्वीकार करने में बाल्मीकि का अनुसरण किया गया है । इसी प्रकार उर्मिला को करुण मूर्ति बनाने के लिए भवभूति की करुण-रस की सर्वव्यापकता का प्रभाव है ।

परम्परागत राम-काव्य से अनुप्रेरित होते हुए भी 'उर्मिला' 'नवीन' की सर्वथा स्वतंत्र सृष्टि है । यह उनकी नवीन मानसिक उद्भावना है । इसमें कवि का दृष्टिकोण एकदम मौलिक है क्योंकि इस रचना के प्रेरक बिन्दु दो हैं — एक है, उर्मिला के उपेक्षित चरित्र को सम्पूर्ण अवतारणा, और दूसरा है, रामकथा की नई सांस्कृतिक व्याख्या । रामायणी कथा को दोहराना उनका उद्देश्य नहीं रहा है ।[३] उर्मिला के जीवन को प्रकाश में लाने

---

१. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० ७० ।
२. वही वही , पृ० ३ ।
३. 'मेरी इस 'ऊर्म्मिला' में पाठकों को रामायणी कथा नहीं मिलेगी । रामायणी कथा से मेरा अर्थ है क्रम से राम-लक्ष्मण-जन्म से लगाकर रावण-विजय और फिर अयोध्या-आगमन तक की घटनाओं का वर्णन । ये घटनाएँ भारतवर्ष में इतनी अधिक सुपरिचित हैं कि इनका वर्णन करना मैंने उचित नहीं समझा । इस ग्रन्थ को मैंने विशेष कर मनः स्तर पर होने वाली क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं का दर्पण बनाने का प्रयास किया है । रामायणीय घटनाओं का राम, सीता, सुमित्रा, कौशल्या और विशेषकर लक्ष्मण और ऊर्म्मिला के मनों पर क्या प्रभाव पड़ा, वे उन घटनाओं के प्रति किस प्रकार प्रतिकृत हुए, आदि का वर्णन ही इस ग्रन्थ का विषय बन गया है ।' - 'उर्मिला' - 'नवीन', भूमिका, पृ० (च-छ)

की उन्हें तीव्र अभिलाषा थी । स्वयं उन्होंने लिखा है - 'ऊर्मिला के स्तवन की लालसा और उस स्तवन को प्रकाश में लाने की इच्छा - चाहे वह इच्छा बाँझ ही क्यों न हो - मेरी जीवन-संगिनी रही है ।'[१] इस प्रकार प्राचीन पौराणिक-ऐतिहासिक तथ्य की उन्होंने नवीन व्याख्या करके नवीन दृष्टिकोण से देखने का प्रयत्न किया है । डा० दुबे ने लिखा है - 'यह काव्य उनकी गहरी अनुभूति, नवल कथा-योजना, मौलिक कल्पना-सृष्टि और तीव्र मनोवृत्तियों की शाश्वत निधि है ।'[२] इस कृति का मूल्यांकन इसके रचयिता के युग को देखकर करना अधिक संगत है । इस प्रबन्ध कृति के कथावस्तुके निर्माण में कवि महोदय ने अपनी अद्भुत सूझ एवं कल्पना-शक्ति का सुन्दर परिचय दिया है । अन्य रामकाव्यों के समान ही 'नवीन' जी ने अयोध्या नगरी से काव्य-कथा को आरम्भ नहीं किया अपितु उर्मिला के बाल-जीवन की मनोहर छवि दिखाने के लिए उन्होंने जनकपुरी के वैभवशाली राज प्रासादों का उल्लेख किया है । समस्त कथानक छः सर्गों में विभक्त है । इस प्रकार छः सर्गों में विभक्त इस बृहदाकार कला कृति में सभी प्रसंग उर्मिला से सम्बद्ध हैं । यह कथानक परम्परागत रामकथा से कुछ भिन्न है, अतः मौलिक भी है । क्योंकि लेखक का उद्देश्य रामकथा को दोहराना नहीं था ।[३] उर्मिला का विशद चित्रण करते समय रामकथा पृष्ठभूमि में अवश्य रही है । इस ग्रन्थ का कथानक उत्पाद्य है । यहाँ रामकथा के सन्दर्भ में उर्मिला का चित्रण नहीं अपितु उर्मिला के सन्दर्भ में रामकथा का चित्रण है । लेखक ने उस प्राचीन क्षीण कथासूत्र को लेकर उसमें एक नवीन क्रान्ति उपस्थित की, एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया ।

---

१. 'उर्मिला' - 'नवीन' - भूमिका, पृ० (क) ।
२. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० लक्ष्मी नारायण दुबे, पृ० २६६ ।
३. 'उर्मिला' - भूमिका , पृ० (च) ।

प्रथम सर्ग में लेखक ने जनकपुर का रंगीन चित्र प्रस्तुत किया है[१] साथ ही जनक-दुलिताओं की बालावस्था का मनोहारी वर्णन हुआ है।[२] उर्मिला अपनी बहन के साथ क्रीड़ारत है, वह नटखट है, शरीर है जो उसके बालरूप के अनुकूल है। इस प्रकार जनक के प्रासाद प्रांगण में बाल केलि-निरत सीता

---

१. 'नगर चहुँ ओर सुन्दर क्षेत्र सारे, मनोहर हरित-सा परिधान धारे,
पवन सँग कर कर रहे हैं नृत्य प्यार,
कि मानों जलधि कल्लोलित हुआ रे,

\+ \+

ज्ञान-शानी जनकपुर की युद्ध सी मेखला है ?
या नारी की मृदुल कटि की धर्म की शृंखला है ?
किंवा माला जनक-यश की शुभ्र पुष्पों नयी है ?
या लोगों के विमल हिय से गान-धारा बही है ?

— 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० ११,१३.

'रम्योद्यानों मय यह पुरी शोभित यों अनूपा,
मानो कोई नवल तरुणी मोद-मुग्धा, सरूपा,

— 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० १५.

२. रुन-झुन, रुन-झुन, नन्हीं-नन्हीं पैजनियाँ झंकारें,
चरण-चलन की प्रांगण भर में फैल रही गुंजारें ;
किलक-किलक मधु स्रोत बहाती हैं विदेह की ललियाँ,
प्रात पवन में निरखी हैं दो छोटी-छोटी कलियाँ ।

— 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० २४.

और ऊर्म्मिला के बाल्यकाल का वर्णन कवि की अपनी सूझ है।[१] जनक के उपवन में दोनों बहनें जो कथाएँ कहती हैं वे उनके भावी जीवन से सम्बन्धित हैं। सीता की कथा एक गांधार-नरेश तथा उसकी सुपुत्री से सम्बन्धित है। सीता की कथा एक गन्धार-नरेश तथा-उसकी-सुपुत्री से सम्बन्धित है और ऊर्म्मिला की कथा एककपोत और कपोती से जिसमें कपोती अपने प्रिय कपोत के विरह में अपनी जीवन-निधि खो बैठती है।[२] ये कथाएँ दोनों के चरित्र के भावी-विकास का पूर्वाभास करा देती हैं। श्री उदयशंकर भट्ट ने लिखा है — 'प्रथम सर्ग में दो सौ चालीस छन्दों द्वारा सीता और उर्मिला के बालपन का बड़ा सरस और हृदयग्राही चित्रण है। यहाँ आकर मालूम होता है, कि कवि ने जो कल्पना को पुकारा है, उसमें वह वर्णन करते-करते इतना तन्मय हो गया है, कि पूरा सर्ग इन दोनों 'लल्यिों' के हृदयग्राही बालसुलभ सौन्दर्य में ही समाप्त हो जाता है।'[३]

द्वितीय सर्ग में नववधू उर्मिला अयोध्या के राजमहल में अपनी अपूर्व आभा से सबको मोहित कर रही है।[४] देवर, ननद तथा भाभी के हास-

---

१. 'आधुनिक महाकाव्य' - डा० गोविन्दराम शर्मा, पृ० ४३५।

२. 'पर उसके जीवन में धक - धक-धक जलती थी ज्वाला,
एक धुआँ मँडराया करता था वह काला-काला,
एक दिवस जब अस्ताचल से रवि की किरणें आईं,
तब उन किरणों ने कबूतरी प्राणहीन थी पाईं।
— 'उर्मिला' - प्रथमसर्ग, पृ० ५२.

३. 'आजकल' - अक्टूबर १९५८ - 'ऊर्म्मिला काव्य' -उदयशंकर भट्ट, पृ०५४।

४. 'प्राची-दिशा बधूटी के सम्मुख ऊर्म्मिला वधू के लोचन, -
कुछ-कुछ उन्मीलित हैं; उनमें छाए हैं लक्ष्मण-रवि-रोचन;
अभी आँख के ओझल हैं वे, यथा प्रात से पूर्व दिवाकर,
आ पहुँचा आलोक ऊर्म्मिला के कपोल के फुल्ल कमल-सर।'
-'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० ६७.

परिहासमय-संवादों की सृष्टि कवि ने अपनी उर्वरा कल्पना के आधार पर की है।[१] इन नोंक-झोंकों में कथा अग्रसर होती रहती है।[२] 'मुकुलित-कुसुम-दर्शन' के हेतु उर्मिला और लक्ष्मण का वन-भ्रमण प्रणय-दृश्यों का अभिराम चित्रण है। उर्मिला और लक्ष्मण के प्रेमालाप एवं संभोग चित्रण अपने में पूर्ण, सशक्त, रसयुक्त एवं मांसल हैं :-

'विजृम्भण से लक्ष्मण का वदन हुआ धीरे से पुलकित। अहा -
कहा अँगड़ाई ने, "उर्म्मिले" नींद का नूपुर यह बज रहा।'
रखा लक्ष्मण ने मस्तक आन - ऊर्म्मिला की जंघा पर। और-
मूँद कर नेत्र बढ़ादीं भुजा, प्रियतमा की ग्रीवा की ओर ;

\+ \+ \+

ऊर्म्मिला ने धीरे से कहा - 'आ रहा है निंदिया का सैन्य
विजित करने, अपराजित, तुम्हें, दिखाओ हो क्यों अपना दैन्य'?[३]

द्वितीय सर्ग में कहीं-कहीं पर 'नवीन' जी ने अपने दार्शनिक सिद्धान्तों, आत्म -

---

१. 'इतने ही में सस्मित - वदना शान्तादेवी भीतर आईं,
रिपुसूदन को देख उर्म्मिला-चरणों में शुद्ध समझ न पाईं;
बोलीं - 'जाने क्या जादू है इन बालाओं में मिथिला की ?
रघुकुल के लालों को घाण में बाँध, बुद्धि उनकी शिथिला की ?'

-'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० १०५.

२. 'नवीन: व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० १०५।

३. 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० १२६।

चिन्तन एवं अलौकिक प्रेम की भी अभिव्यक्ति की है ।[१]

तृतीय सर्ग से ही लेखक ने अश्रुओं का व्यापार आरम्भ किया ।[२] सीता-राम-लक्ष्मण के वन-गमन की तैयारियाँ हो रही हैं, उर्मिला के हृदय पर बरछियाँ चल रही हैं । लक्ष्मण उर्मिला को वन-गमन के कारणों का उल्लेख करते हुए समझाते हैं :-

> `आर्य सभ्यता, आर्य ज्ञान औ` - आर्यों की संस्कृत वाणी,
> परा-अपरा विद्या का वैभव, वेद भारती कल्याणी ,
> आर्यों की यह सब विभूतियाँ वन में प्रसारित होंगी ,
> जटिल कुटिल अज्ञान-भावना - निश्चय पराजिता होगी ।`[३]

इस प्रकार `नवीन` जी ने एक नवीन दृष्टिकोण को जनता के सम्मुख उपस्थित किया । भौतिक अन्धकार को दूर करने के लिए एवं आध्यात्मिक प्रकाश के प्रसार हेतु लक्ष्मण अपने अग्रज के साथ वन जा रहे हैं । उर्मिला का विद्रोही

---

१. `लखन के धन्वा की टंकार - ऊर्म्मिला की नूपुर-झंकार ,
अवश्य उत्कम्पित करने लगी - चिरन्तन `एकोऽहं` के तार ।
चरमता में है निर्गुण सत्य विविधता का न वहाँ लवलेश ,
एक है, वाँ अनेकता नहीं, नहीं है काल, नहीं है देश ;
-`उर्मिला` - द्वितीय सर्ग, पृ० १४८-१४९.

२. `ओ आँसू, तुम बरस पड़ो, यह - प्यासा है कागद मेरा ,
प्यासी कलम , हृदय प्यासा है, प्यासों का है यह डेरा ;
-`उर्मिला` - तृतीय सर्ग, पृ० १७०.

३. `उर्मिला` - तृतीय सर्ग, पृ० १९८ ।

रूप भी यहीं पर प्रकट होता है। एक भारतीय ललना के समान वह अन्याय एवं अत्याचार को चुनौती देती है। डा० देवेन्द्र कुमार ने लिखा है - 'लक्ष्मण राम के साथ वन जाने के लिए कृत संकल्प हैं। उर्मिला भी उनके काम में बाधक बनना नहीं चाहती। फिर भी, वह किसी भी दशा में कैकेयी का अन्याय सहन करने को प्रस्तुत नहीं। - - - तीसरा सर्ग, एक विदा समारोह ही समझिए।'[१] इसी सर्ग में कवि ने वन-गमन की घटना के प्रति प्रमुख पात्रों की मानसिक प्रतिक्रियाओं का विशद् विवेचन किया है।[२] वन-गमन के समय सीता और उर्मिला का मिलन बड़ा कारुणिक बन पड़ा है।[३] सीता उर्मिला के महान त्याग की प्रशंसा मुक्त कण्ठ से करती है।[४]

चौथे सर्ग में विरह की मीमांसा की गई है। श्री उदयशंकर भट्ट ने लिखा है - 'इसमें विरह की अपेक्षा जीवन में निराशा का जो पद-पद पर

---

१. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३० अप्रैल १९६१ - 'नवीन जी की पलकों में उर्मिला के आँसू' - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० ११।

२. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० ३२७।

३. 'सीता और ऊर्म्मिला दोनों भुज भर ऐसे चिपट गईं', -
जैसे आशा और निराशा रीझ परस्पर लिपट गईं,
फिर धीरे से विमल ऊर्म्मिला बोली छाती किए कड़ी,
'जीजी हृदय मसोस रहा है, ना जानूँ क्यों, घड़ी-घड़ी।'
- 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २७५.

४. 'यह महान् बलिदान तुम्हारा, यह स्वाहा, यह न्योछावर,
कहाँ मिलेगा ? यहाँ भरा है - तुम ने गागर में सागर ;
- 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २७७.

दर्शन होता है, उसकी व्याख्या है ।[१] पंचम सर्ग में दोहा-सोरठा शैली में 'नवीन' जी ने विरह की विभिन्न अवस्थाओं का सजीव एवं मर्मस्पर्शी चित्रण किया है । उर्मिला का विरह-निवेदन इस सर्ग का प्रधान लक्ष्य लेखक के लिए रहा है । षष्ठ सर्ग अर्थात् अन्तिम सर्ग का आरम्भ रावण-वध के पश्चात् राम द्वारा विभीषण को लंका का राज्य दिए जाने से होता है ।[२] पुष्पक विमान में बैठे, राम-सीता-लक्ष्मण अयोध्या को चल पड़ते हैं । अन्त पर लक्ष्मण-उर्मिला के पुनर्मिलन की दिव्य छटा दिखा कर महाकाव्य अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल होता है । इस सर्ग में लेखक ने राम द्वारा रावण पर विजय को आत्मवाद द्वारा साम्राज्यवाद पर विजय के रूप में दिखाया है ।[३] अपने दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति भी इस सर्ग में लेखक ने बड़ी स्वतंत्रता के साथ की है :-

'अब कैसी परिधियाँ संकुचित ? अब कैसा सीमित घेरा ?
मुक्त आत्मा-विस्तार हुआ है अब कैसा तेरा- मेरा ?
सब मेरा - तेरा है , तेरा - मेरा , मैं तू, तू मैं हूँ ,
तू सुख में , तब मैं सुख में हूँ, तू दुख में, मैं दुख में हूँ ।'[४]

---

१. 'आजकल' - (अक्टूबर १९५८), पृ० ५५ - 'ऊर्म्मिला काव्य' -उदयशंकर भट्ट ।

२. घोर नगाड़ों से, दुन्दुभि से, घन निनाद की धार बही ,
गोमुख, शृंग, शंख बजते हैं - अम्बर में ध्वनि गूँज रही ,
आज लंक - राजेश्वर होंगे नृपति विभीषण विज्ञानी ,
अभिषेकोत्सव के कारण है सज्जित लंक राजधानी ।'
-'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५२९.

३. 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५४१ ।

४. वही वही , पृ० ५६३ ।

कथानक निर्माण में नवीन जी ने अनेक नवीन उद्भावनाएँ की हैं । इसमें कुछ ऐसे नवीन प्रसंग हैं जो अन्य राम-काव्य में संसर्गित नहीं किये गये । जनक-पत्नि का व्यक्तित्व, पारिवारिक वर्णन, भवन-वातावरण आदि का वर्णन अपने में पूर्ण रूपेण मौलिक है । जनक-प्रांगण में सीता-उर्मिला की बाल-क्रीड़ाएँ एवं सीता-उर्मिला द्वारा वर्णित कल्पित कथाओं द्वारा भावी कथा-सूत्र की सूचना, देवर-भाभी, ननद आदि का व्यंग्य विनोद , एवं उर्मिला लक्ष्मण का रेल-पर्यटन अपने में सर्वथा मौलिक है । इसके अतिरिक्त राम वन-गमन द्वारा आर्य संस्कृति का प्रसार एवं राम-रावण युद्ध को आर्य-अनार्य का युद्ध मान कर नैतिकता पर आध्यात्मिकता की विजय दिखाकर लेखक ने अपनी अनुपम कल्पना शक्ति का सजीव परिचय दिया है । डा० दुबे ने लिखा है — 'इस प्रकार हम देखते हैं कि वाल्मीकि तथा तुलसी ने जिन प्रसंगों तथा चरित्रों की उपेक्षा की है, 'नवीन' जी ने उन्हें 'उर्मिला' में मौलिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । इन मौलिक उद्भावनाओं में कवि की नूतन विचार-वीथिका, युगानुरूप विश्लेषण, मानवतादर्श, मनोवैज्ञानिक अध्ययन आदि घटक प्राप्त होते हैं ।'[१] इस प्रबन्ध-कृति की कथावस्तु सूक्ष्मातिसूक्ष्म है । घटना के बदले इसमें विचारों को प्रमुखता दी गयी है । अनुभूति-प्रधान कथावस्तु अपनी समस्त बारीकियों के साथ इस कृति में वर्णित है । मानव मनोवृत्तियों की गहराइयों तक पैठने में समर्थ कवि प्रतिभा की यह रम्य सृष्टि सचमुच उनकी अपनी देन है । कहानी भी सर्ग से सर्ग तक चंचला सी छिटक छूटती है ।[२] इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि इस महाकाव्य का कथानक अपने विषय

---

१. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे , पृ० ३३३ ।

२. 'हिन्दी और कन्नड़ में उर्मिला - साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' - मे० राजेश्वरय्या - 'स्व० 'नवीन' जी की उर्मिला' , पृ० १२६ ।

से सम्बद्ध पूर्ववर्ती काव्य-ग्रन्थों से बहुत कुछ भिन्न है । इसमें कथा लक्ष्मण और उर्मिला की है , और उन्हीं के सन्दर्भ में लेखक ने राम, सीता, भरत, सुमित्रा तथा अन्य पात्रों एवं उनकी जीवन गाथाओं पर प्रकाश डाला है । 'उर्मिला' की अकथित कहानी को मुखरित करने में ये सब साधन हैं । चरित्र-चित्रण की दृष्टि से इस महाकाव्य में 'नवीन'जी को विशेष सफलता मिली है । धूल भरे हीरों को पोंछने का काम उन्होंने बड़ी कुशलता से किया है । यह एक नायिका-प्रधान महाकाव्य है । इसमें उर्मिला के जीवन का सर्वांगीण चित्र प्रस्तुत किया गया है, इस प्रकार उसके अक्षुण्य मूक जीवन को वाणी मिली है । महाकाव्य की नायिका उर्मिला है । निर्विवाद रूप से उन्होंने उर्मिला को जनक-पुत्री के रूप में स्वीकार किया है ।[१] कवि ने उर्मिला को विभिन्न रूपों में चित्रित किया है । आरम्भ में एक नटखट बालिका के रूप में सीता के साथ क्रीड़ारत रहती है । कहानी सुनने और सुनाने की उसकी तीव्र रुचि है ।[२] कपोत -

---

१. 'मैंने ऊर्म्मिला को 'जनकनंदिनी' कहा है । कुछ मित्रों ने मुझे बताया कि ऊर्म्मिला जनकदेव की अनुज सांकाश्या के राजा कुशध्वज की पुत्री थीं । इसके सम्बन्ध में मैंने वाल्मीकि रामायण देखी । उससे मुझे ज्ञात हुआ कि सीता और ऊर्म्मिला - दोनों जनकदेव की ही पुत्री थीं ।'

- 'उर्मिला' - भूमिका , पृ० (छ).

२. 'सीता, श्री ऊर्म्मिला बहन के डाल गले में बहियाँ,
पुलकित हो बोली, मानो नवरस की बरसी पुरियाँ,
'प्यारी बहन ऊर्म्मिले, तुम हो मेरी अच्छी रानी,
आज सुनाओ तुम अच्छी सी मुझको एक कहानी ।
'सीता जीजी, तुम्हीं कहो कुछ पहले नई कहानी,
देखो , आंख मींच कर बैठी हूँ मैं बनकर ज्ञानी -
जैसे तात बैठते सुनने पूत वेद की गाथा ,
वैसे ही बैठी हूँ सुनने आज तुम्हारी बाता ।'

-'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० २८ ।

कपोती की करुणा प्लावित कहानी सुनाकर अपने भावी जीवन की त्याग-मयी प्रधान प्रवृत्ति का परिचय देती है। वह अति वाचाल एवं वाक् पटु है। बचपन में माँ के पास बैठकर कहानियाँ सुनने वाली उर्मिला में कहानी का कौतूहल मात्र नहीं, भावुक हृदय भी था। कथा के चरित्रों को कहीं मुश्किलों में फँसते, दुःख दर्दों का अनुभव करते, आह भरते देखकर उर्मिला का अबोध हृदय विचलित हो उठता था।[१] उर्मिला का वधू के रूप में चित्रण 'नवीन' जी ने बड़ी सूक्ष्मता से किया है। अपने गुणों से वह सबको मोह लेती है।[२] उर्मिला और लक्ष्मण का प्रेम पार्थिव और वासनामय नहीं अपितु उसमें संयम एवं औचित्य का सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है।[३] संयोग वर्णन में उर्मिला के संतुष्ट हृदय एवं आदर्शवादी रूप का भव्य चित्र प्रस्तुत किया गया है। विवाह के उपरान्त

---

१. 'किन्तु कहानी सुन कर मन में तुम दुख क्यों करती हो ?
बातों से प्रेरित होकर क्यों आहें तुम भरती हो ?
आर्य बालिका है वह ही जो दुख के आ जाने पर -
पर्वत तुल्य अचल रहती है, घोर घटा छाने पर।'
- 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० ५५.

२. 'वह लज्जा की मूर्ति, ऊर्म्मिला बहू सौम्य-सुठि की प्रतिमा,
आत्म निवेदन की ओटी से मूरत है वह गुण गरिमा ;
- 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० ८६।

३. 'ऊर्म्मिला के हिय लक्ष्मन बसे, लखन के हिय ऊर्म्मिला-निवास;
रंग यह अब चोखा चढ़ गया, तनिक देखें उनका उल्लास,
वासना का न कहीं है लेश, न रहा कदापि कलह का क्लेश,
जब कभी बाकी जोड़ी गई, रह गया सदा नेह अवशेष।'
- 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० ११२.

अयोध्या के राजकुल की प्यारी बहू बन कर उसने घर को स्वर्ग बना दिया। परिवार के अन्य सदस्यों के साथ उसका व्यवहार, प्रियजनों के साथ उसका परिहास, बड़ों से उसका आदरपूर्वक व्यवहार, सबको प्रभावित कर रहा है।[१] उर्मिला को 'नवीन'जी ने एक सरल हृदया, भावुक अबला के रूप में ही नहीं, बुद्धिमती वीर विद्रोहिनी नारी के रूप में भी चित्रित किया है। वह दशरथ की राम-वन-गमन नीति का खुलकर विरोध करती है।[२] इस प्रकार उसकी विवेक बुद्धि का सुन्दर परिचय पाठकों को प्राप्त होता है :-

तुम कहते हो वन-जन-मन में होगा ज्ञान-विकास नया,
मैं कहती हूँ प्रथम अवध में करो अधर्म-विनाश नया,
कह दो आज पिता दशरथ से कि यह अधर्म नहीं होगा,
कह दो, लक्ष्मण के रहते यह यह घोर कुकर्म नहीं होगा;
राज नहीं कैकेयी का यह, दशरथ का न स्वराज यहाँ,
जन-गण-मन-रंजन कर्ता ही होता है अधिराज यहाँ।[३]

उर्मिला के चरित्र में अनेकों गुणों का सामंजस्य कवि ने दिखाया है। जीवन में महान त्याग करके उसने अपने चरित्र को उज्ज्वल बना दिया है। उसमें अपार सहनशक्ति है।[४] सहिष्णुता, कर्तव्य निष्ठा, धैर्य, त्याग एवं बलिदान की

---

१. 'हिन्दी और कन्नड़ में उर्मिला-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' - मे० राजेश्वरय्या, पृ० १३०।

२. 'हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य' - डा० गोविन्दराम शर्मा -उर्मिला, पृ० ४३५।

३. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २४३-२४४।

४. 'तुम जाओ, सुखेन जाओ ; हम दोनों को कुछ बात नहीं,
हमें चलित कर दे, यह चौदह वर्षों की न बिसात कहीं।
हम नारी हैं चिर प्रतीक्षिका, हम हैं चिर परीक्षितारें,
चिर वियोग यज्ञाहुति से हम सन्तत हुई दीक्षितारें,
- 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २३७.

वह साक्षात मूर्ति है। विद्रोह एवं करुणा के तत्वों से विधाता ने उसका निर्माण किया है।[१] अपने सुहाग की सुरक्षा के लिए वह सदा चिन्तित रहती है, इस प्रकार भारतीय नारी के आदर्श रूप की वीर, गम्भीर एवं त्यागपूर्ण छटा देखने को मिलती है। चौदह वर्षों की लम्बी अवधि से उसके विरही जीवन की अश्रुमय कहानी है। अन्त में प्रियतम से मिलन की अवस्था में महाकाव्य का अन्त और उसकी कहानी की समाप्ति हो जाती है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि समूची प्रबन्ध-कल्पना का केन्द्र-बिन्दु 'उर्मिला' का चरित्र है।[२] अभी तक उर्मिला के चरित्र को केवल वियोग के सन्दर्भ में ही देखा जाता था पर 'नवीन' जी ने उसे एक समग्र जीवन के सन्दर्भ में देखा है।[३] सुश्री कृष्णा चतुर्वेदी ने लिखा है - 'उर्मिला के चरित्रांकन में भी 'नवीन' जी ने मौलिकता का प्रश्रय लिया है। उसके शैशव की झांकी दिखलाकर कवि ने उसके व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान की है।'[४]

---

१. 'जीजी, कभी-कभी घन वन में स्मरण मुझे भी कर लेना,
कभी-कभी अपने देवर के हिय में मम स्मृति भर देना ;
आर्य राम के श्री चरणों में करना नित मेरा वंदन,
तनिक सम्हाले रखना, हैं अति उग्र सुमित्रा के नन्दन ;
'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २८४.

२. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३० अप्रैल १९६१ - 'नवीन जी की पलकों में उर्मिला के आँसू' - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० ११।

३. 'सम्मेलन-पत्रिका' (त्रैमासिक) - आश्विन - मार्ग-शीर्ष शक १८८२ - 'कवि नवीन और उनकी उर्मिला' - डा० देवेन्द्र कुमार जैन, पृ० १३०।

४. 'नवीन' और उनकी कविता' - कृष्णा चतुर्वेदी - 'दिल्ली विश्वविद्यालय की एम०ए० परीक्षा के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध - सन् १९६०, पृ० ३२।

लक्ष्मण के चरित्र-चित्रण में भी कवि ने अपनी विलक्षण बुद्धि का अद्भुत परिचय दिया है। यहाँ लक्ष्मण सर्वप्रथम एक आदर्श प्रेमी के रूप में प्रस्तुत किया गया है।[१] वह एक आदर्श पति है, अपनी अर्द्धांगिनी के प्रति उनके प्रेम तथा कर्त्तव्य की अभिव्यंजना महाकाव्य में सुन्दर बन पड़ी है। श्री जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है :- 'लक्ष्मण धीरोदात्त नायक हैं, वे एक आदर्श प्रेमी व आदर्श पति हैं। उर्मिला से उनका प्रेम साधारण प्रेम नहीं है। यह वह प्रेम है जो पार्थिवता की चाह से ऊपर है।'[२] इसके अतिरिक्त लक्ष्मण हमारे सामने चिन्तक एवं राम-भक्त के रूप में भी आते हैं। जहाँ लक्ष्मण वन-गमन से पूर्व उर्मिला को सारी परिस्थिति से परिचित कराते हैं और उनकी अनुमति पाकर ही वन को प्रस्थान करना उचित समझते हैं,[३] वहाँ माँ के सामने इस बात की भी प्रतिज्ञा करते हैं :-

'माँ, देखोगी : दूध तुम्हारा नहीं लजाएगा लक्ष्मण,
देकर अपना प्राण करेगा वह आदर्शों का रक्षण
जिसके बन्धु राम हों, जिसकी पूज्य सुमित्रा महतारी,
धिक है वह, यदि प्राण-मोह में पड़, बन जाए अविचारी;'[४]

---

१. 'तुम मेरा साहस, बल, वैभव, तुम मम हास-विलास, प्रिये,
तुम मन नेह सरणि, तुम मेरा - नव सन्देशोल्लास-प्रिये,
तुम मन व्यथा-कथा, तुम मेरी निवासिनी अन्तस्तल की,
- 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २२५.

२. 'नवीन' और उनका काव्य' - श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ०११२।

३. 'बस, इतना ही कहो, सलोनी, फिर मैं सब कुछ कर लूँगा,
फिर तो वनका घोर तिमिर-दुख मैं क्षण-भर में हर लूँगा;
मुझे और कुछ नहीं चाहिये, मैं हूँ एक सुभट प्रहरी,
बस मुझको दे दो तुम अपनी स्मिति-रेखा यह अश्रु-भरी;
- उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २२४.

४. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० ३३६।

इस प्रकार कर्तव्य परायण पुत्र, आज्ञाकारी अनुज, जिम्मेदारा एवं विश्वसनीय देवर एवं शत्रु के लिए काल रूप - वीर लक्ष्मण अपने अलौकिक चरित्र से महाकाव्य में नायक के श्रेष्ठ पद को निर्विवाद रूप से ग्रहण करता है । डा०गोविन्दराम शर्मा ने लिखा है — `उर्मिला में कवि का ध्यान नायिका उर्मिला और नायक लक्ष्मण की ओर अधिक रहा है । इसलिए राम और सीता के चरित्र का क्रमिक विकास इस रचना में नहीं दिखाया जा सका है । उर्मिला के चरित्र की महानता के समक्ष राम और सीता दोनों नतमस्तक हो जाते हैं ।`[१]

सीता के चरित्र में पूर्णरूपेण मर्यादा का पालन हुआ है ।[२] उसके चित्रांकन में कोई विशेष मौलिक उद्भावना नहीं की गयी है । महाकाव्य में उसके गम्भीर एवं भव्य रूप का चित्र कलाकार ने अपनी तूलिका से खींचा है । उसके आदर्श नारीत्व, उसके देवी स्वरूप तथा उसके श्रद्धामय रूप का महिमागान विभीषण द्वारा महाकाव्य के अन्तिम सर्ग में हुआ है ।[३]

---

१. `हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य` - डा० गोविन्दराम शर्मा, पृ० ४३५ ।

२. `पति परायणा, पतित पावना, भक्ति भावना मृदुतम हो,
स्नेहमयी, वात्सल्यमयी, श्री - राम - कामना मृदु तुम हो,
तुम नारी हो, तुम नारी की हृदय -व्यथा से परिचित हो ,
तुम हो करुणामयी, बहू, तुम समवेदना अपरिमित हो ।`
-`उर्मिला` - तृतीय सर्ग, पृ० ३२७.

३. `शुद्ध धर्म की, सत्य स्नेह की तुमने खींची परिसीमा,
श्रद्धा-ज्योति-प्रकाश तुम्हारा, हुआ न रंच कभी धीमा,
कुहू निराश के क्षण में भी राम-चरण-रति रही भली,
हार गया शतशः प्रयत्न कर, रावणत्व की नहीं चली ।`
- `उर्मिला` - षष्ठ सर्ग , पृ० ५७७.

'नवीन' जी का उद्देश्य सीता का चित्रांकन करना तथा अपितु उर्मिला के जीवन का भव्य रूप उपस्थित करने के लिए प्रसंगवश सीता का उल्लेख भी हुआ है। अपनी बहन के महान त्याग की प्रशंसा करके स्वयं सीता अपने आदर्श चरित्र का परिचय देती है।[१]

राम का चरित्र भी मर्यादापूर्ण और आदर्शोन्मुख है। श्री जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है - "चरित्र अधिक प्रकाश में नहीं आता फिर भी कुल मिलाकर पूरे काव्य में कथानक की गति में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में उनका प्रमुख भाग है। वे आर्य संस्कृति के प्रसार हेतु बन जाते हैं और कर्तव्य की पूर्णाहुति पर ही घर लौटते हैं।"[२] उनके चरित्र-चित्रण में भी 'नवीन' जी ने प्राचीन परिपाटी का यथानुसरण किया है। वे उनके लोकरंजक, प्रजारक्षक एवं जनपालक रूप पर ही अधिक रीझे हैं। उनके चित्रांकन में 'नवीन' जी के भक्त हृदय की तन्मयता स्पष्ट झलकती है :-

'आर्य राम के एक चरण नख पर त्रैलोक्य निछावर है,
उनका ही तो है इस जग में जो जंगम है, स्थावर है।
नित एकत्व भावधारा के चिर वाहक जो राम स्वयं -
'मुंजो था: त्यक्तेन' मन्त्र के चिर साधक जो राम स्वयं।'[३]

---

१. 'नैकली माँ ने हृदय दे दिया, तुमने दे डाला जीवन,
वह जीवन-धन, न्योछावर तुम जिस पर होती हो क्षण-क्षण;
मैं लज्जा से गड़ जाती हूँ, देख तुम्हारा यह बलिदान,
कितना आत्म-निमज्जन गहरा! क्या ऊँचा बलिदान-विधान!
-'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २७८.

२. 'नवीन' और उनका काव्य - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० ११५।

३. 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २४१।

उन्हें राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप पर अटल विश्वास है।[१] 'नवीन' जी ने राम को सत्य, शिव, सुन्दरम की भव्य झाँकी माना है।[२] उन्हें विश्व-विजय की चाह नहीं अपितु असंस्कृत एवं असभ्य प्रदेश में वे आर्य संस्कृति का अग्रदूत एवं सन्देशवाहक बनकर अपने उद्देश्य को प्रकट करते हैं।[३]

महाकाव्य के अन्य पात्रों में सुमित्रा का चरित्र-चित्रण लेखक ने नवीनता के साथ किया है। दशरथ की रानियों में सबसेअधिक ध्यान उन्होंने सुमित्रा की

---

१. 'केवल राम सपथ कर सकते
हैं इस अपथ विपिन-मगको,
—'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २६२.

२. 'राम,— श्याम तन, निर्नन्द घन, जन-गण-मन-रंजनकारी,
राम,— मगन - मन-गगन-विहारी भव-भय-दुख-भंजनकारी,
+ + +
राम,— सत्य, शिव, सुन्दर भावों - की कल्याणमयी झाँकी,
राम,— सच्चिदानंद - भाव की छवि नयनाभिराम, बाँकी ,
—'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० २६५.

३. 'विश्व -विजय की चाह नहीं थी, और न रक्त-पिपासा थी,
केवल कुछ सेवा करने की उत्कण्ठित अभिलाषा थी ,
इतना था विश्वास कि हम हैं लोकोत्तर धन के स्वामी ,
लोक हिताय बाँटना जिसका, धर्म हमारा निष्कामी ।
--'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५३६.

ओर दिया है।[१] सुमित्रा के चरित्र में एक भारतीय आर्य-ललना के गुण चित्रित हैं।[२] उसके रूप में दशरथ की तीनों रानियों का चित्रण हो गया है। क्योंकि उसका एक ही रूप है – माता का।[३] उसका भव्य, ममतापूर्ण, स्नेहिल एवं सौम्य रूप प्रत्येक सहृदय को अपनी ओर आकर्षित करता है। वह अपने पुत्र को कर्त्तव्य-पथ पर अटल-प्रहरी के समान डटे रहने की शिक्षा देती है।प्राणों की बाज़ी लगाकर सीता की रक्षा के लिए उद्यत रहने के लिए वह अपने पुत्र में नव-स्फूर्ति का संचार करती है :-

'स्मरण रखो सीता है रघुकुल की लज्जा, गौरव गरिमा,
और मातृ-शक्ति है तुम्हारे लिए वत्स, सीता महिमा,
यदि सीता को, प्राण तुम्हारे रहते, आँच लगी कुछ भी,
तो तुमको कपूत समझूँगी मुख देखूँगी मैं न कभी।'[४]

---

१. 'आज सुमित्रा माँ का मानस-दिग-मंडल गत-शोक हुआ है,
छाया, धूप, वायु, बादल, सब शान्त हुए। आलोक हुआ है।
उनकी प्राची दिशि में दो-दो चन्द्र उदित हैं आज सुखारे,
जिनकी विमल चन्द्रिकाएँ ये हटती हैं उनके दुख सारे।'
–'उर्मिला', द्वितीय सर्ग, पृ० ६५.

२. 'तुमने मुझे निहाल कर दिया, मेरे लाल, राम मेरे।
सूने मानस-नभ-मंडल के, तुम नव मेघ-श्याम मेरे।
धन्य हुई पाकर मैं इतना - यह विश्वास तुम्हारा लाल।
–'उर्मिला', तृतीय सर्ग, पृ० ३१७.

३. 'नवीन' और उनका काव्य' - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० ११६।

४. 'उर्मिला', तृतीय सर्ग, पृ० ३३८।

इसके अतिरिक्त सुनयना, मन्दोदरी, शान्ता, रिपुसूदन, भरत, दशरथ, राजा जनक, विभीषण, हनुमान तथा माण्डवी एवं श्रुतिकीर्ति अन्य उल्लेखनीय पात्र हैं जिन का प्रासंगिक रूप से चरित्र-चित्रण महाकाव्य में हुआ है। परन्तु इन पात्रों का महत्व गौण है और उन का चित्रण वहीं तक किया गया है जहाँ तक वे उर्मिला-कथा में सहायक सिद्ध हुए हैं।

'उर्मिला' में उर्मिला का विरह-वर्णन 'नवीन' जी ने बड़ी सूक्ष्मता से किया है। यह एक विरह-प्रधान काव्य है जिसमें गायन की अपेक्षा रुदन तथा संयोग की अपेक्षा विप्रलम्भ को महत्व दिया गया है। अश्रु-व्यापार में 'नवीन' जी सिद्धहस्त थे, इसीलिए उर्मिला के मोतियों का महत्व उन्होंने बड़ी कुशलता से आंका है। डा० नगेन्द्र ने लिखा है – 'विरह प्रेम का तप्त स्वर्ण है। वेदना की अग्नि में तपकर प्रेम की मलिनता गल जाती है और जो कुछ शेष रह जाता है वह एकान्त शुद्ध और निर्मल होता है। विरह में मिलन से अधिक गाम्भीर्य और स्थिरता होती है और प्रतीक्षा की अथवा अतृप्ति की उत्सुकता के कारण रसानुभूति की मात्रा भी अधिक रहती है।'[१] उर्मिला के जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना है, चौदह वर्षों का रुदन।[२] उसने चौदह वर्ष तक विरह-वेदना में जलकर हिन्दू संस्कृति की रक्षा के लिए अपना जीवन होम कर दिया। दशरथ सत्य का आलम्बन लेते हैं, कौशल्या ने मातृ-आदर्श को पकड़ा है। सीता पतिपरायणता का सम्बल ग्रहण करती है, किन्तु उर्मिला को किस का आलम्ब है? केवल आँसुओं का, केवल वियोग का।[३] अकस्मात् उसके जीवन में विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ता है और वह हृदय

---

१. 'साकेत' - एक अध्ययन - डा० नगेन्द्र, पृ० ४१।
२. 'नवीन' और उनका काव्य' - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० ११७।
३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - २६ दिसम्बर १९६३ - 'उर्मिला पर फिल्म बननी चाहिए' - रामनाथ वर्मा, पृ० १३।

मसोस कर रह जाती है। लक्ष्मण-वन-गमन का समाचार सुनकर उर्मिला विह्वल हो उठती है।[१] वह अनेक तर्क प्रस्तुत करती है[२], यहाँ तक कि कैकेयी का कटु विरोध भी करती है[३] परन्तु अन्त में विवश होकर वह प्रिय को वन-गमन की अनुमति देती है और स्वयं व्यथा और वेदना के अथाह सागर में डूब जाती है :-

सुख्यौं-सुख्यौं सी चुभ गख्यौं, मेरे ही-तल में, जीजी ;
रम्य रमण-काण गए , वेदना-व्यथा आज मुझ पर रीझी ।[४]

---

१. `लक्ष्मण के दक्षिण स्कन्ध पर वाम कपोल धरे मृदुला ,-
दक्षिण कर ग्रीवा में डाले, सिसक रही ऊर्म्मिलाऽकुला ;
+ + +
उन नैनों में कहाँ इशारे ? संकेतों का होश कहाँ ?
जोश कहाँ ? हिय-दोष वहाँ , चित रोष वहाँ, संतोष कहाँ ?`
-`उर्मिला`- तृतीय सर्ग, पृ० १८४.

२. `तुम कहते हो वन-जन-मन में होगा ज्ञान विकास नया,
मैं कहती हूँ प्रथम अवध में करो अधर्म-विनाश नया ,
-`उर्मिला` - तृतीय सर्ग , पृ० २४३.

३. `यह कैकेयी कौन, कि जो श्री रामचन्द्र को भेजे वन ?
यह कैकेयी कौन ? उजाड़े जो सीता का सुख्द सदन ?
यह कैकेयी कौन ? ऊर्म्मिला का उपवन जो करे दलन ?
कैकेयी ? लूट ले सुमित्रा माता की गोदी का धन ?
-`उर्मिला` - तृतीय सर्ग, पृ० २३७.

४. `उर्मिला` तृतीय सर्ग, पृ० २८३ ।

लक्ष्मण के चले जाने पर उर्मिला की वास्तविक जीवन-परीक्षा आरम्भ होती है। एक लम्बी अवधि के लिए वह अवध में अकेली रह जाती है। पति-वियोग में वह तड़प तड़प कर रह जाती है।[१] विरह की भयानक अग्नि ने उसके जीवन में विष घोल दिया। 'नवीन' जी ने विप्रलम्भ-शृंगार के विस्तृत प्रांगण में अनेक नवीन उद्भावनाएँ की और साथ ही परम्परागत वियोग-वर्णन का भी यत्र-तत्र सहारा लिया है। उर्मिला के लिए उज्ज्वल अतीत स्मृति-संचारी बन कर विरह-अग्नि को अत्यधिक प्रज्ज्वलित करता है :-

'पीतम के इस बिछुड़न की, वेदना बड़ी गहरी है ;
स्वप्निल अतीत की संस्मृति, आकर्षक है, जहरी है।'[२]

आज उसे सृष्टि के कण-कण में विरह की ज्वाला दिखाई देती है। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा है, मानो प्रकृति उसकी चिरसंगिनी बनकर उसके दुख में दु:खी है, व्यथा रूपी जल-प्लावन ने समस्त प्रकृति को आक्रान्त किया है। विरह में बावली होकर ही टहनी पर कलियाँ रोती हैं, प्रसून रोते हैं।[३] संसार की

---

१. 'आँसू से सींच रहा है, जीवन का पादप कोई,
पत्तियाँ मनोरथ की ये सिहरी हैं धोई-धोई,
जीवन-ऋतुओं को हिय ने पावसमय बना दिया है,
सब आशाओं को इसने क्या ही अनमना किया है?
- 'उर्मिला'-चतुर्थ सर्ग, पृ० ३७३.

२. 'उर्मिला'-चतुर्थ सर्ग, पृ० ३४७।

३. 'कलियाँ रोती टहनी पे, रोते प्रसून डाली पे,
पत्तियाँ बिलखती हैं ये बेलों की प्रति जाली पे;
लतिकाएँ रो-रो गिरतीं विटपों के वक्षस्थल पर,
झर रहे ओस के आँसू वन-उपवन में छल-छल कर,
करुणा जल सिंचा हुआ है जग की क्यारी-२ में,
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३५१.

क्यारी-क्यारी में करुणा का जल भरा हुआ है। कोयलिया कुहू-कुहू के मिस आकाश में विष घोलती है। यह कोमल अन्तस्तल की ज्वाला से ही काली पड़ गई है, उसके कंठ से पिय-मिलन-व्यथा ही उमड़ती है।[१] इसी प्रकार काग भी विरह के कारण रो-रो कर बिलख रहा है।[२] इस प्रकार उर्मिला के स्वर से स्वर मिलाकर समस्त प्रकृति विरहमय हो गई है। 'नवीन' जी ने विप्रलम्भ-शृंगार-वर्णन की प्राचीन पद्धति के आधार पर षट्-ऋतु वर्णन भी किया है। डा० दुबे ने लिखा है - 'उर्मिला की व्यथा-वेदना पर ऋतुओं के परिवर्तन का भी गहन प्रभाव पड़ा है। षट्-ऋतुएँ उसके जीवन में विकट धूम मचाती हैं।'[३] यह ऋतुएँ विरहिणी के लिए कष्टदायक हैं क्योंकि प्रिय की अनुपस्थिति में इनका वैभव, सौन्दर्य एवं उल्लास निष्प्रयोजन है। यह ऋतुएँ अग्नि में घृत का कार्य करती हैं और इस प्रकार विरहिणी की उन्मत्तावस्था को और बढ़ा देती हैं :-

---

१. 'कोयलिया विरह-भरी-सी विष बुझे बोल बोले है,
वह कुऊ कुऊ के मिस से नभ में करुणा घोले है,
अन्तस्थल की ज्वाला से पड़ गई कोकिला काली,
उस कूक-हूक से काँपी सब आमों की हरियाली।'
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३५५.

२. 'रो-रो कर बिलख रहा है यह काग दरद-दीवाना,
का-ओ कां हो! तुम निष्ठुर, यह भेद नेक बतलाना,'
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३५६.

३. 'नवीन' - व्यक्ति एवं काव्य', डा० दुबे, पृ० ३५५।

`ग्रीष्म , वर्षा, शरद् मुद, शिशिर, मधुर हेमन्त,
अन्तवन्त अनुराग मय, मंजुल मदिर बसन्त ।
पारी - पारी सों सकल , ऋतु वैभव मिलि जात,
पै एकाकी पथिक को, हृदय और अकुलात ।
विप्रयोग ग्रीष्म भयो , आँसू-पावस - पीर ,
नित निरभ्र विश्वासकी , महँ शरद् ऋतु धीर ।
निपट निराशा को शिशिर , संशय को हेमन्त ,
चिर आशा को बनि गयो, कुसुमित वरद बसन्त ।`[१]

प्रोषित् पतिका के रूप में भी उर्मिला का वर्णन आभान्वित है ।[२] उसे विरह-आधिक्य से टीस, कसक, छटपटाहट, उद्विग्नता और निशा के भयानक मेघखण्ड आच्छन्न किये हैं तथा कभी-कभी उनके मध्य से चमचमाती चपला उसके हृदय को आलोड़ित-विलोड़ित कर देती है । नेत्रों से अश्रुधारा बह रही है, संयम का बाँध टूटा जा रहा है । हृदय विचलित है, नयन विगलित हैं ।[३] नींद ने उसका साथ छोड़ दिया अत: निशा के सूने अन्धकार में वह अधिक विचलित हो उठती है:-

---

१. `उर्मिला` - पंचम सर्ग, पृ० ४३६ ।

२. `प्रिय-पथ बुहारती रहतीं दृग पद्म सुसम्मार्जनियाँ ,
आँखें बरसाती रहतीं क्षण-२ में जल की कणियाँ ,
पीतम आवें रिमझिम में, इस आशा से झर-झर के,
ढर कीं रस की धाराएँ , नयनांजलियाँ भर-भर के ।`
- `उर्मिला` - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३७६.

३. अतल, वितल, पाताल लौं, सकल खंडल लोक,
ढूँढि रहे , पिय न मिले, मिट्यो न हिय को शोक ।
विचलित हिय, विगलित नयन, दलित भाव सुकुमार ,
खण्ड-खण्ड अस्तित्व को करत वियोग- कुठार ।
- `उर्मिला` - पंचम सर्ग, पृ० ४११.

नींद निगोड़ी छाँडि के दृग को निकर देस ,
चली गई वा पार, पिय, कहूँ दूर परदेश ।
निशि के सूने छिनन में हिय में खुट-खुट होय ,
लघु आशा घन तिमिर में, ठाढ़ी-ठाढ़ी रोय ।[१]

उर्मिला का आलम्बन ही उसका विरह है, उसका विरह ही उसका आलम्बन है । उर्मिला ने लक्ष्मण से बढ़कर लक्ष्मण के विरह का वरण किया है । जो स्त्री पति का वरण करती है, वह वास्तव में धन्य हो उठती है, क्योंकि यही वरण उसके नारी जीवन की सार्थकता है । किन्तु जो स्त्री पति से अधिक पति-विरह का वरण करती है, उसकी सार्थता का तो केवल अनुभव ही किया जा सकता है ।[२] उर्मिला के इस विस्तृत वियोग-वर्णन में प्रेम का सच्चा स्वरूप चित्रित है । उसे प्रिय-वियोग में समस्त संसार सूना-सूना सा लगता है । उसके आंगन में करुणा, हृदय में अग्नि और नयनों में सावन ने अपना निवास-स्थान बनाया है ।[३] निगोड़ी पवन की सन-सन ध्वनि से वह खीझ उठती है ।[४] उसके हिय की हिय में ही रह गई और समस्त जीवन बीहड़ कानन

---

१. 'उर्मिला' - पंचम सर्ग, पृ० ४११ ।

२. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - २६ दिसम्बर १९६३ - 'उर्मिला पर फिल्म बननी चाहिए' - रामनाथ वर्मा, पृ० १३ ।

३. 'यों उमड़ रही है करुणा ऊर्म्मिला बहू के आँगन,
हिय में निदाघ रहता है, नयनों में बसता सावन ।'
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३८७.

४. 'निशि-दिन यह पवन निगोड़ी, सन-सन करती बहती है,
छिन-छिन टल्ला दे-दे के अपनी कहती रहती है ;'
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३८७.

के समान बन गया।[१] विरहाग्नि से उसका समस्त हृदय झुलस जाता है। वह प्रिय से शीघ्र लौट आने की विनती करती है।[२] उसका अंग-अंग प्रिय के संग बिक गया है[३] और वह पिया के देश की बाट सदा जोहती रहती है। सोने का मूल्य अधिक होता है, लेकिन वही सोना जब तपाया जाता है तब उसका मूल्य और अधिक बढ़ जाता है। उर्मिला का विरह प्रेम का तप्त स्वर्ण है। यह भारतीय नारी के भीतर व्याप्त शौर्य का भावुक उदाहरण है।[४] विरहिणी के हृदय का लेखक ने मर्मस्पर्शी चित्र यहाँ अंकित किया है :-

`भर-भर कर ढरकाती है वेदना नयन-गगरी को,
पंकिल कर-कर देती है लघु आशा की डगरी को।

---

१. `चले जादु मोरे सजन, अनबोले, सकुचात,
हिय की हिय में रहि गई, नैंकु न निकसी बात।
बीहड़ कानन सम भयो, जीवन-वन एकान्त,
सघन विरह-पल्लवन सों, भयो प्रपूर्ण दिनान्त।`
— `उर्मिला` - पंचम सर्ग, पृ० ३६६-४००.

२. `प्रारा पिरीते, तुम बिना सूनो भयो दिगन्त,
उदित होहु मन-गगन में, भरहु प्रकाश अनंत।
— `उर्मिला` - पंचम सर्ग, पृ० ४१५.

३. `श्रवण, नयन, मुख, नासिका, मन, शरीर, अँग-अँग,
ना जाने कब के बिके, अपने पिय के संग।`
— `उर्मिला` - पंचम सर्ग, पृ० ४४६.

४. `साप्ताहिक हिन्दुस्तान` - २६ दिसम्बर १६६३ - `उर्मिला पर फिल्म बननी चाहिए` - रामनाथ वर्मा, पृ० १३।

मग जोह रही है कब से प्यासी आँखें अकुलानी ,
अन्तर्ज्वाला बह निकली हो करके पानी-पानी ।'[१]

विरह-वर्णन में 'नवीन' जी ने अपने आध्यात्मिक दृष्टिकोण की भी अभिव्यक्ति की है, कहीं-कहीं पर उर्मिला का करुण-क्रन्दन, ससीम का असीम के प्रति दैन्य -अभिव्यक्ति का रूप धारण करता है ।[२] चौदह वर्षों की दीर्घ अवधि को उन्होंने साधक की साधना के लिए अर्थात् तपस्या के लिए वरदान स्वरूप ग्रहण किया । उन्होंने प्रेम-योग को सर्वश्रेष्ठ माना है ।[३] डा० दुबे ने लिखा है — 'कवि ने उर्मिला के वियोग को अनेक मुखी दृष्टिकोणों से देखा-परखा है । साथ ही उसने मौलिक संस्पर्श भी प्रदान किये हैं । वियोग को रहस्यवादी एवं आध्यात्मपरक मानवतादर्श की धरातल पर तौलने की कल्पना कवि की अपनी सूझ है ।'[४] योग साधना में रत योगिनी अपने कर्तव्य-पथ पर अटल है :-

योगिनी सतत जपती है अपने योगी की माला,
आँसू से बुझा रही है वह अन्तरतर की ज्वाला ।[५]

---

१. 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३७३-३७४ ।
२. 'वह कब मिलने वाला है अहमस्मि-रूप-ज्योत्स्ना में ?
वह तो छिटके गा आके सोऽहं - अनूप - ज्योत्स्ना में ।'
— 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३६६.
३. 'राजयोग, हठयोग तें, प्रेम-योग बड़ होय ,
प्रेमेश्वर - प्रणिधान में, जात विकलता खोय ।'
— 'उर्मिला' - पंचम सर्ग, पृ० ४५५ ।
४. 'नवीन : व्यक्ति एवं काव्य'- डा० दुबे, पृ० ३५६ ।
५. 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३८६ ।

इस प्रकार विरहिणी के हृदय में तप की साधना जाग उठी । विरह की अवधि ने उनके प्रेम के शारीरिक स्पर्श को मिटा दिया, दिव्य स्वरूप प्राप्त करने में मदद दी । उर्मिला को सिद्धि शिखर तक ले जाने के लिए विरह की अवधि का एक-एक वर्ष आरोहण का एक-एक सोपान बन जाता है ।[१] इस प्रकार परमप्रिय के दर्शनार्थ विरहिणी उर्मिला अपने हृदय को चीर उसकी करुण कथा का अक्षुमय गायन करती है ।

यह विरह-वर्णन `नवीन` जी ने अपने महाकाव्य के चतुर्थ एवं पंचम सर्ग में विशद् रूप से किया है । चतुर्थ सर्ग का नाम ही `विरह-मीमांसा` है । सुश्री कृष्णा चतुर्वेदी ने लिखा है - `ऊर्म्मिला का चतुर्थ सर्ग - `विरह - मीमांसा` विशेष अवेक्षणीय है । इस प्रकार के अमूर्त भावों की व्याख्या `कामायनी` का स्मरण दिलाती है । यह सर्ग कथा-प्रवाह में बाधक होने पर भी `उर्मिला` में उतना ही महत्वपूर्ण है जितना `कामायनी` में लज्जा सर्ग और `साकेत` में `नवम` सर्ग ।`[२] पंचम सर्ग में `नवीन` जी[३] ने दोहा-सोरठा शैली में उर्मिला के करुण-हृदय को वाणी प्रदान की । इस प्रकार

---

१. `हिन्दी और कन्नड़ में उर्मिला साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन` - मे० राजेश्वरय्या , पृ० १२८ ।

२. `नवीन` और उनकी कविता - कृष्णा चतुर्वेदी, पृ० ३३ । (दिल्ली विश्वविद्यालय की एम०ए०परीक्षा के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध), सन् १९६०.

३. `१९२२-२३ के आसपास असहयोग आन्दोलन के दिनों में कानपुर के प्रताप प्रेस में एक रात ऊर्म्मिला का कुछ अंश श्री `नवीन` से सुनने का अवसर मिला था । - - - थोड़ी ही देर में ऊर्म्मिला काव्य के द्वारा उन्होंने अपना हृदय खोल कर रख दिया । पांचवे सर्ग में आये ब्रजभाषा के दोहे थे । स्वर सहित दोहों का पाठ सुनकर मुझे लगा जैसे कोई `अभिनव बिहारी` वियोग शृंगार का वर्णन कर रहा है ।`
- `आजकल` अक्टूबर १९५८ - `ऊर्म्मिला महाकाव्य`-उदयशंकर भट्ट, पृ० ५३.

`नवीन` जी ने `ऊर्म्मिला` की `अकथित करुण कथा` कही है और इसमें उन्हें आशातीत सफलता मिली है।

इस महाकाव्य में `नवीन` जी की अपनी मान्यताएँ भी प्रकाश में आयी हैं। उन्होंने राम-कथा को एक नवीन रूप में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। इस विषय में डा० दुबे ने लिखा है - ` `उर्मिला` में नव-युग की भावना के सहज ही दर्शन किये जा सकते हैं। उसमें आधुनिकता के अनेक अंश समाविष्ट किए गये हैं। युग की राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक भावनाओं ने इस काव्य पर अपने चिन्ह अंकित किये हैं। इस दिशा में वह राष्ट्रीय आन्दोलन, गान्धीवादी युग-चेतना, आर्य-समाज, सांस्कृतिक पुनरुत्थान, बुद्धिवाद, नारी-उत्थान आदि घटकों से प्रभावित हुआ है।`[१] `उर्मिला` की कथावस्तु को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। पहले भाग में कवि ने उर्मिला के चरित्र का क्रमिक विकास प्रस्तुत किया है और दूसरे भाग में, रामकथा की प्रमुखतम घटना `वन-गमन` की नई सांस्कृतिक व्याख्या प्रस्तुत की गई है।[२] इस नई व्याख्या के अनुसार राम की वन-यात्रा, कौटुम्बिक कलह का परिणाम नहीं थी।[३] वस्तुत: यह यात्रा दक्षिण में आर्य-संस्कृति

---

१. `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य` - डा० दुबे, पृ० २६२।

२. ` मैंने राम वन-गमन को एक विशेष रूप में देखने और उपस्थित करने का साहस किया है। राम की वन-यात्रा, मेरी दृष्टि में एक महान् अर्थपूर्ण आर्य-संस्कृति-प्रसार-यात्रा थी।` - `उर्मिला` -भूमिका, पृ०-क्ष.

३. `तुम मत समझो इसको केवल कौटुम्बिक विवाद, रानी,
तनिक पुराण-मयी आँखों से इसको देखो, कल्याणी,
आज नवल इतिहास - पृष्ठ का अभिनव श्रीगणेश होगा,—
उस पुराण का, जिसका नायक सीता-पति रमेश होगा;
- `उर्मिला` - तृतीय सर्ग, पृ० २६३.

के प्रचार के लिए योजित की गई थी । कैकेयी की वह एक कूटनीतिक चाल थी ।[१] इस प्रकार वन-गमन के मूल में कैकेयी के स्वार्थ को नहीं, आर्य-संस्कृति प्रसार-विषयक दूरदर्शिता को ही देखते हैं ।[२] दक्षिणापथ के तिमिर अन्धकार के हरण हेतु , शुद्ध एवं सात्त्विक विचारों के प्रसार हेतु एवं भौतिकवाद पर आध्यात्मवाद की विजयहेतु राम वन को जाते हैं । उन्हें महान आर्य-संस्कृति की जलती हुई मशाल से दक्षिण के अन्धकार को सदा सर्वदा के लिए मिटाना है । उन्होंने संस्कृति को भव्य रूप में ही ग्रहण किया है :-

शुद्ध विचार-प्रौढ़ता ही है भित्ति सभ्यता संस्कृति की,
सदाचरण शीलता मात्र है, धौतक संस्कृति,मति,धृति की,[३]

इस नवीन उद्भावना से कवि ने एक साथ दो कार्य साधे हैं । एक तो उन्होंने

---

१. `कैकेयी माँ दूर देश की हैं, वे हैं अनुभव शीला ;

\+ + +

आर्य्याओं के उत्तरपथ-आगत वैभव से वे परिचित हैं,
किन्तु आर्य-विस्तार विन्ध्य की ओर बहुत ही परिमित है;
रह-रह कर कैकेयी को यह दक्षिण पथ ललचाता है
बहुत दिनों से विन्ध्य-विजय का सपना उन्हें सताता है,
इसीलिए, रानी, उनने यह ऐसी युक्ति मिलाई है,
निज सपना सच्चा करने की घटिका वे ले आई हैं ।`

\- `उर्मिला` - सर्ग ३, पृ० २६१-२६२.

२. `हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य` - डा० गोविन्दराम शर्मा,पृ० ४३५ ।

३. `उर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ५५४ ।

राम की वन-यात्रा की पौराणिक घटना को आज के युग में सर्वथा ग्राह्य बना दिया है, क्योंकि आज के बौद्धिक युग में वरदान और शाप की बात पर अधिक विश्वास नहीं किया जाता, इसके विपरीत अपनी सभ्यता और संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार के हेतु युद्ध का विचार तर्क-संगत प्रतीत होता है।[१] इसके अतिरिक्त रामकथा की कटुता कम हो गयी और कैकेयी के चरित्र का उदात्तीकरण भी हो गया। भारतीय संस्कृति में त्याग, तपस्या एवं बलिदान का विशेष महत्व है। सतत तपस्या और त्याग में ही जीवन का उन्नयन है। तप द्वारा ही इस सृष्टि का रूप अस्तित्व में आया है।[२] जीवन में असत् की पराजय और सत् की विजय अनिवार्य है इसी कारण सत् राम असत् रावण पर विजय प्राप्त करते हैं।[३] और सत्-संस्कृति का प्रसार[४] अवधपुरी से दक्षिणा-पथ तक एक समान होता है :-

---

१. 'नवीन' और उनकी कविता' - सुश्री कृष्णा चतुर्वेदी, पृ० ३१ - 'दिल्ली विश्वविद्यालय की एम०ए० परीक्षा के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध'।

२. 'यह ब्रह्माण्ड तपस्या के बल, गतिमय, प्रतिमय, चलित हुआ,
अणु-२ में, कण-२ में सन्तत प्रथम तपोबल ज्वलित हुआ,
सतत तपस्या, त्याग निरन्तर, बहिरन्तर तपमय, राजन,
तप से क्षण में ही मिट जाता - है यह उद्भव-भय, राजन!'
- 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५४६.

३. 'सत्य-विचार हुए हैं विजयी, असुर-भाव-अपहरण हुआ,
मैं प्रसन्न हूँ, आज लंक में - सद्भावों का वरण हुआ।'
- 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५५१.

४. 'आर्य राम की विजय नहीं यह, है प्रचार सत्-संस्कृति का,
अतः लंक में नहीं रहा भय, विजय गर्व की दुष्कृति का;
- 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५२३।

`अवधपुरी से लंका तक जो, बनी एक पथ की रेखा ,
जिससे होकर आर्य-सभ्यता ने दक्षिण जन-पद देखा,
जिस रेखा ने, किरण जाल बन, किया प्रकाशित अन्ध विजन,
उसका मंडित होना ही है अवधि-काल का चलन-कलन ',[१]

इस प्रकार भौतिकता के तमिस्र अन्धकार में आध्यात्मिकता की शुभ्र किरण फूट पड़ती है । मूढ़ वनवासियों को नवीन जीवन सन्देश सुनाने के लिए ही राम-लक्ष्मण वन जाते हैं और आर्य-सांस्कृतिक-विजय-पताका फहरा कर लौट आते हैं । अपने महत उद्देश्य का स्पष्टीकरण लक्ष्मण आरम्भ में ही अपनी प्राण-प्रिया के सम्मुख इन शब्दों में करते हैं :-

`आर्य सांस्कृतिक-विजय-पताका घन वन में फहरायेगी,
देखो तो यह ज्ञान ध्वजा अब कहाँ-कहाँ लहरायेगी ;
नग्न ज्ञान-शून्यता पहन कर आएगी सु-ज्ञान भूषा ,
नव विचार-मणि-भरिता होगी - रिक्त हृदय की मंजूषा;
अँधियाला उजियाला होगा रात्रि दिवस बन जाएगी ;
उदित ज्ञान रवि की किरणें घन-वन में छन-छन आएंगी ।`[२]

आर्य-संस्कृति के साथ-साथ आर्य धर्म के प्रचार एवं प्रसार हेतु भी वे सतत् प्रयत्न-शील रहने की दृढ़ प्रतिज्ञा करते हैं । उन्होंने अपने धर्म की व्यापक परिभाषा

---

१. `उर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ५२० ।

२. `उर्मिला` - तृतीय सर्ग, पृ० १९९,२०३ ।

देते हुए[१] भोगवाद की कटु आलोचना की ।[२] साम्राज्यवाद का विस्तार करना आर्य धर्म का उद्देश्य नहीं । रावण इसी साम्राज्यवाद का पोषक होने के कारण पतनोन्मुखी है ।[३] आत्मदान और सेवा भाव मनुष्य की आहुति है, एक यज्ञ है और शुद्ध यज्ञ ही सर्वभूत-हिताय होता है । आन्तरिक कपाटों के उद्घाटित होने पर 'मैं' और 'तू' की संकीर्णता तिरोहित हो जाती है और सात्विक भावों की उज्ज्वल ज्योति विकीर्ण हो जाती है ।[४] भारतीय संस्कृति में नारी को भी सम्पूज्य एवं आदरणीय माना गया है । वह सर्वाधिक गौरवमयी, महिमामयी, कर्तव्यशीला एवं सु-पथ गामिनी मानी जाती है । नारी जीवन-दायिनी, पोषण-कर्त्री एवं बाधा-हर्त्री है :-

---

१. 'आर्य धर्म के आचार्यों ने सृष्टि तत्व है खोज निकाला ,
एक सूत्र में उनने गूँथा है सुगूढ़ वह तत्व निराला :
मैं हूँ एक , किन्तु प्रजनन के हेतु अनेकों रूप बना हूँ ,
अमित विरोधाभासों का मैं अद्भुत पंज अनूप बना हूँ ।
- 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० १०५.

२. 'भौतिकवाद, शुष्क तर्कों को ले, दिन रात मचलता है,
प्रत्यक्षता-वाद के पीछे-पीछे निशि-दिन चलता है ,
अन्ध शक्ति एवं पदार्थ जड़, ये दो उसके स्तम्भ बड़े ,
भौतिकतावादी चलते हैं - दोनों को पकड़े - पकड़े ,
पर इन दो से विश्व-पहेली नहीं सुलझती है, राजन,
इनके पीछे चलने से वह - और उलझती है, राजन !
- 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५४७.

३. 'है साम्राज्यवाद का नाशक, दशरथ-नन्दन राम सदा,
है भौतिकतावाद विनाशक, जन-मन-रंजन राम सदा ,
- 'उर्मिला'- षष्ठ सर्ग, पृ० ५५५.

४. 'सब मेरा-तेरा है, तेरा- मेरा, मैं तू, तू मैं हूँ ,
तू सुख में, तब मैं सुख में हूँ, तू दुख में, मैं दुख में हूँ -
-'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५६३.

` नारी के ही हाड़-माँस से उनका यह अस्तित्व बना
रग-२ में हो रहा प्रवाहित नारी ही का रुधिर घना,
नारी उनकी पोषण-कत्री, नारी नेह-नीर-मत्री ,
नर - नारायण तप साधन की नारी ही बाधा-हत्री ,
हम नारी-सुत, नारी तो है - हृदयवल्लभा जीवन की ,
क्यों न समझ पाएँगे बातें सब हम नारी के मन की ?` [१]

इस प्रकार 'नवीन' जी ने राम-कथा को भारतीय सांस्कृतिक-परिप्रेक्ष्य में अवलोका है । [२] उन्होंने आर्य-अनार्य, सभ्य-असभ्य, अंधकारमय एवं प्रकाशमय, भौतिक तथा आध्यात्मिक, सत् एवं असत् तथा धर्म एवं अधर्म के प्रश्नों को ही इस महाकाव्य में प्रमुखता प्रदान की । आसुरी-वृत्तियों पर विजय-प्राप्ति के हेतु त्याग, बलिदान, तपस्या, निस्वार्थ सेवा एवं ज्ञान के प्रकाश को आवश्यक माना है और यही तत्व हमारी भारतीय संस्कृति के आधार-स्तम्भ हैं ।

आधुनिक युग एवं समकालीन परिस्थितियों की छाप भी इस महा-काव्य में दर्शनीय है । गान्धीवाद के हृदय परिवर्तन-सिद्धान्त अहिंसावादी दृष्टिकोण, एवं शुद्ध मानवतावादी दृष्टिकोण को उन्होंने अपने काव्य में यत्र-तत्र अभिव्यक्ति की है ।

श्री देवीशंकर अवस्थी ने लिखा है - ``साकेत` और `ऊर्मिला` दोनों का सृजनकाल लगभग एक ही है - जब कि राजनीति में गान्धी और साहित्य में छायावाद का बोलबाला था । अत: दोनों ही ग्रन्थों में कुछ विचित्र समानताएँ भी हैं । नारी-जागरण, राष्ट्रीय आन्दोलन एवं गांधीवाद

---

१. `उर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ६१० ।
२. `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य` - डा० दुबे , पृ० ३५१ ।

का दोनों में प्रबल स्वर है। भौतिकता का विरोध एवं आत्मिक उन्नति पर दोनों ही बल देते हैं।[१] राम-रावण युद्ध को उन्होंने आत्मवाद और साम्राज्यवाद का परस्पर भयानक संघर्ष माना है जिसमें अन्त पर आत्मवाद की विजय-पताका सर्वत्र फहराने लगती है।[२] गान्धीवादी विचारधारा का `नवीन` जी पर अमिट प्रभाव पड़ा है, क्योंकि वे अपने को गान्धी का परम भक्त मानते थे। इन सिद्धान्तों का (विशेष कर अहिंसावाद) इस महाकाव्य पर भी अमिट प्रभाव पड़ा है।[३] राम का मुख्योद्देश्य रावणत्व के साथ-साथ रावण के मन को भी जीतना था - यहाँ गान्धीवादी हृदय परिवर्तन वाला सिद्धान्त अवश्य विद्यमान है।[४] श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है - `इस काव्य का प्रणयन उस समय हुआ जब भारत परतंत्र था। कवि स्वयं महान देश प्रेमी और स्वतंत्रता संग्राम का अग्रिम सेनानी रहा है,

---

१. `कल्पना` - जून १९६० , पृ० ६३ - `उर्मिला` - देवीशंकर अवस्थी ।

२. `महामहिम रावण का, मेरा, नहीं व्यक्तिगत था झगड़ा,
आत्मवाद, साम्राज्यवाद का वह था अमिल भेद बड़ा ।`
- `उर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ५४१.

३. `शुद्ध विचार-प्रौढ़ता ही है, भित्ति सभ्यता संस्कृति की,
सदाचरण शीलता मात्र है, द्योतक संस्कृति, मति, धृति की,
-`उर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ५५४.

४. `यही दुख है कि मैं वीर वर रावण-हृदय न जीत सका ,
इतना भर ही नहीं रह गया , दशरथ नन्दन के वश का ।`
- `उर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ५४२.

अत: इस काव्य में राष्ट्र-प्रेम के स्वरों का मुखरित होना स्वाभाविक है।[१] यह उनके लिए स्वाभाविक भी था, उन्होंने महाकाव्य के आरम्भ में ही जन्म-भूमि की हीनावस्था की ओर संकेत किया है :-

`स्वर्गादपि गरीयसी प्यारी, जन्मभूमि का पल्ला -
खींचा है दुष्टों ने, बोला है स्वदेश पर हल्ला ,
कौन हृदय है जो कि न उबले निज समाज की छाति में?
कौन आँख है देख सके जो माँ को इस दुर्गति में ?`[२]

डा० देवेन्द्र कुमार ने लिखा है – `छठे सर्ग में, नवीन की चेतना शुद्ध आधुनिक धरातल पर आ जाती है। इसमें लंकाविजय के उपरान्त राम, अपनी लंका-यात्रा और जीवन के `मिशन` का विस्तार से उल्लेख करते हैं। इसमें राम विश्व-मानवतावादी है।`[३] देश-विदेश की संकुचित भावना का परिहार करने के उपरान्त ही मानव हृदय स्वच्छ, निर्मल एवं निश्छल बन सकता है।[४] `नवीन` जी ~~आर्थिक विकास~~ अर्थ-संचय के भी कट्टर विरोधी थे। उनके

---

१. `नवीन` और उनका काव्य` - जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १२८।
२. `उर्मिला` - प्रथम सर्ग, पृ० ४१।
३. `साप्ताहिक हिन्दुस्तान` - ३० अप्रैल १९६१ - `नवीन` जी की पलकों में उर्मिला के आँसू` - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० ११।
४. `देश विदेश, संकुचित जनका, है अनुचित संकुचित विचार,
है मनीषियों का सन्देश वह, जहाँ सत्य-शिव का विस्तार।
है जग के नागरिक सभी हम, सब जग भर यह अपना है ,
सीमित देश-विदेश-कल्पना, मिथ्या भ्रम का सपना है ,
देश-काल का अतिक्रमन कर बनना है हम को विजयी ,
फिर क्यों खींचें हम अपनी यह सीमा-रेखा नयी-नयी ?`
-`ऊर्मिला` - षष्ठ सर्ग, पृ० ५५८.

विचारानुसार 'अर्थ' ही मानव-प्रगति का मानदण्ड नहीं है :-

'अर्थ-वाद ही प्रगति-चिह्न है, यों विचार कर, वे मन में ,
येन-केन - प्रकारेण अर्थ का संचय करते क्षण-क्षण में ,
न्याय और अन्याय तथा सत् असत् विचार छोड़ करके ,
प्रचुर अर्थ - संचय करते हैं, जड़ता-वादी जी-भर के ,
नहीं जानते वे कि अन्ततः ये विचार भ्रम मूलक हैं -
प्रगति-चिह्न ये नहीं, अपितु ये सत् - संस्कृति-उन्मूलक हैं
अर्थ प्रगति का चिह्न नहीं है , वह है प्रगति-नदी का फेन ;[१]

श्री जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है - 'बीसवीं शताब्दि में आकर, पाश्चात्य समाज-दर्शन के सम्पर्क में आने से नारी ने अत्याचारों के विरुद्ध मुक्ति के प्रयत्न किए । इसी समय चेतना की लहर उठी, क्रान्ति के स्वर गूँजे और दासी नारी अब पुरुष के समान ही अधिकार प्राप्त करने का उद्योग करने लगी । साहित्य ने उसे पर्याप्त प्रोत्साहन दिया । - - - - इसमें यत्र-तत्र नारी जागृति के स्वर मुखर हुए हैं ।'[२] नारी अपने सम्मान की रक्षा के लिए, स्वत्व प्राप्ति के हेतु रण-चण्डी का रूप धारण करती है ।[३] शत्रु के ध्वंस के

---

१. 'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५५२-५५३ ।
२. 'नवीन' और उनका काव्य' - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १२७-१२८ ।
३. 'आज आग लग जाए ऐसी, धुआँ उठे चहुँ ओर ।
आर्य पुत्रियाँ, रणचण्डी बन थामें निज धनु-डोर ।
अरि के कलुषित हृदय-देश को बेधें, करदें क्षीण ।
आज दिखा दें वे अपने असि-धनु के हाथ प्रवीण ।'
- 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० ४०.

हेतु मानो `नवीन` जी अपने समय की भारतीय ललनाओं को ललकार रहे हैं:-

> `कहे न कोई - आर्य-देश की ललनाएँ कायर हैं ,
> दिखला दो तुम : हृदय तुम्हारे मृदु हैं पर पत्थर हैं ।
> कसलो वेणी, कटि-पट बांधो, लेलो धन्वा,भाले ,
> चलो, करो ऐसे प्रहार जो अरि के हिय में शाले ।`[१]

इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि `नवीन` जी की `उर्मिला` एक साहित्यिक-सांस्कृतिक महाकाव्य है जिसमें भारत का अतीत और वर्तमान एक साथ मुखरित हो उठा है ।

`ऊर्म्मिला` में `नवीन` जी ने ब्रज और खड़ी बोली - दो प्रकार की भाषाओं को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है । ब्रजभाषा के जिस रूप का प्रयोग कवि ने किया है वह शुद्ध ब्रज न होकर बुन्देली मिश्रित ब्रज है । इसके अतिरिक्त कानपुर के आसपास बोली जाने वाली ब्रज का भी उस पर प्रभाव दृष्टिगोचर होता है ।[२] शैली के विचार से इसमें प्रबन्ध और गीति-शैली का सुन्दर सामंजस्य मिलता है । पहले तीन सर्गों में प्रबन्ध-पटुता और चतुर्थ एवं पंचम सर्ग में गीति-तत्व के दर्शन होते हैं । पंचम सर्ग में दोहा-सोरठा शैली का सुन्दर प्रयोग हुआ है और इसी सर्ग में ब्रजभाषा का माधुर्य एवं लालित्य देखने को मिलता है । यहाँ कवि-कौशल एवं नैपुण्य दर्शनीय हुआ है । ब्रजभाषा विरह-व्यंजना में अवरोध उत्पन्न न कर उसे सरसता प्रदान

---

१. `उर्मिला` - प्रथम सर्ग, पृ० ४० ।
२. `नवीन` और उनकी कविता - सुश्री कृष्णा चतुर्वेदी , पृ० ७० ।
`दिल्ली विश्वविद्यालय की एम०ए० परीक्षा के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध`
(सन् १९६०) ।

करती हुई सूर और बिहारी के अभिव्यंजना-कौशल का स्मरण कराती है। श्री जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ने लिखा है :- 'ब्रजभाषा में रचित दोहों वाला सर्ग सिद्ध करता है कि कवि का ब्रजभाषा पर उतना ही अधिकार है, जितना हिन्दी पर।'[१] ब्रजभाषा के प्रयोग से जहाँ प्रबन्ध-काव्य के तारतम्य में कुछ बाधा उपस्थित हुई है, वहाँ विरह-वर्णन में कवि को आशातीत सफलता मिली है। दोहा 'नवीन' जी से अवश्य दुलार पा गया और दुलार भी पूरे पाँचवे सर्ग में।[२] ब्रजभाषा के अतिरिक्त 'नवीन' जी ने खड़ी बोली का प्रयोग किया है। पंचम् सर्ग को छोड़ कर शेष सर्गों का माध्यम खड़ी बोली है। खड़ी-बोली पर 'नवीन' जी को असाधारण अधिकार था। उनकी भाषा प्रौढ़, प्रांजल परिमार्जित, साहित्यिक एवं संस्कृत गर्भित है। संस्कृत के प्रति उनका असाधारण मोह ~~प्रत्यक्ष~~ यत्र-तत्र महाकाव्य में दिखाई देता है। संस्कृत भाषा के प्रेम के कारण ही कहीं कठिन समासों को जन्म मिला है तो कहीं संस्कृत की विभक्तियों सहित शब्दों का प्रयोग मिलता है। क्वसि, यः कश्चित, अच्छेद, भुंजो थाः, त्यक्तेन, यांचाऽमोघा, भवतु सच्चिदानन्द स्वरूपं इदंमनः आदि अप्रचलित शब्दों का प्रयोग कुछ खटकता भी है।[३] कहीं-कहीं पूरी पंक्ति और छन्द तक संस्कृत भाषा में ही उच्चरित है।[४] संस्कृत के इस आग्रह के

---

१. 'नवीन' और उनका काव्य' - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव, पृ० १३०।

२. साप्ताहिक हिन्दुस्तान - ३० अप्रैल १९३१ - 'नवीन' जी के पलकों में उर्मिला के आँसू - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० ११।

३. 'कहीं लिखा है 'रामो जयति, भवतु चिरजीवी विभीषणः,
कहीं लिखा है - - 'भवतु सच्चिदानन्द स्वरूपं इदंमनः,
-'उर्मिला' - षष्ठ सर्ग, पृ० ५२६।

४. 'ये वे हैं जो सतत रत हैं - पुण्य सेवी बने हैं,
वृक्षों, पुष्पों सदृशनित सेवा-रसों में सने हैं,
देते हैं वे सकल जग को गूढ़ शिक्षा सुरम्य ;
'सेवा धर्मः परम गहनो योगिनामप्यगम्यः'।
-'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० १९.

कारण एकाध स्थलों पर भाषा व्यवहार से दूर भी जा पड़ी है तथा हिन्दी का अपना स्वरूप सर्वथा लुप्त हो गया है।[१] भाषा-सौन्दर्य की दृष्टि से महाकाव्य का तृतीय एवं चतुर्थ सर्ग उल्लेखनीय है। कहीं-कहीं पर 'नवीन' जी ने देशज, ग्रामीण एवं साधारण व्यवहारिक शब्दों का प्रयोग भी किया है जो कि साहित्यिक हिन्दी में अवश्य खटकते हैं। श्री देवीशंकर अवस्थी ने लिखा है - "'नवीन' जी की बड़ी बोली एकाधिक स्तरों की है। कभी वह हरिऔध जी की याद दिलाती है तो कभी गुप्त जी एवं प्रसाद जी की। बीच-बीच में ऐसे प्रयोग बहुलता से मिलते हैं जो बड़ी बोली के 'स्टेण्डर्ड' प्रयोग में बुरी तरह खटकते हैं। 'जानू हूँ सोचू हूँ', 'परौं पाई', 'नवीं', 'उमड़ाया हिय', जैसे प्रयोग विरल नहीं हैं। 'नवीन' जी जैसे कवि की ऐसी भूलें बहुत क्षम्य भी नहीं हैं।"[२] महाकाव्य में उन्होंने उर्दू शब्दावली का भी यत्र-तत्र प्रयोग किया है। 'मस्ताना', 'सरकार' आदि शब्द उर्दू भाषा के हैं।

अलंकारों का भी 'नवीन' जी ने सुन्दर प्रयोग किया है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के अनेकों सुन्दर उदाहरण इस महाकाव्य में देखने को मिलते हैं। कवि का सर्वप्रिय अलंकार उपमा है।[३] रूपकों के प्रयोग

---

१. 'माम् विद्धि त्वम् जनकनन्दिनी,
राम विद्धि दशरथं त्वम्;
विद्धि यदवो - त्वमयोध्यानगरीं,
गच्छ वनं त्वम् यथा सुखम्।'
-'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० ३३७.

२. 'कल्पना' - जून १९६० - 'ऊर्म्मिला' - देवीशंकर अवस्थी, पृ० ६४।

३. (i) 'यही भाव, यह अपने पन का अति विशुद्धतम रूप निहार -
सब पागल - सी हो जाती हैं देख सुमित्रा की मनुहार;
-'उर्मिला' -द्वितीय सर्ग, पृ०८६.

(ii) 'भोली-सी यह चार अँखड़ियाँ डोल रही आँगन में,
फूली-फूली आनन्दित हैं फिरती इस प्रांगण में।
-'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ०२६.

का कौशल भी दर्शनीय है[१] तथा उत्प्रेक्षाओं की कल्पना में भी वे सिद्धहस्त थे:-

'राज्य-श्री को निरत चित से गोपते हैं सुमन्त्र,
निस्वार्थी हैं नित यह चलाते अहो राजतन्त्र -
मानो विश्वम्भर सजग हो पोषते हैं सुविश्व -
श्री लक्ष्मी से सतत नित संतोषते हैं सुविश्व ।'[२]

सुडौल नासिका के विषय में एक और उत्प्रेक्षा सजीव बन पड़ी है :-

'लम्बी-सी सुडौल नास में मुक्ता लटक रहे हैं ,
अधर लालिमा से रंजित ये मोती मटक रहे हैं,
मानो मानसरोवर-तीरे राजहंस-हंसिनियाँ -
मुदित पान करती हैं सुन्दर मुक्त प्रेम की कणियाँ ।'[३]

शब्दालंकारों में कवि ने विशेष कर अनुप्रास का आश्रय लिया है :-

(१) 'प्रबल-प्रतापी राजकुंवर वह आर्य्य मुकुट का मणि था ।'[४]

---

१. 'अस्तित्व, - तक्र, हिय,-मटुकी, वेदना, - रई गति चलिता,
आकर्षण, - रज्जु बना है, छलकी बूँदें रस गलिता ;
मथ सृष्टि - तत्व को किसने करुणा-नवनीत निकाला ?
किसने रस-दान दिया यह नित नया, अतीत, निराला ।'
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३४४.

२. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० २२ ।

३. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० २६ ।

४. 'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० ३६ ।

(२) `क्षुद्रता का उस में न विकार, न संशय का उसमें कुछ लेश,
न क्लेश, न लेष, न ठेस अशेष, मिले हृदयेष प्रेमेश ।`[१]

छायावादी काव्य-प्रवृत्ति से प्रभावित होकर कवि ने अचेतन पर चेतन का आरोप एवं अमूर्त का मूर्तिकरण भी किया है।[२] इसी प्रकार चित्रात्मकता का गुण भी प्रचुर मात्रा में इस काव्य कृति में मिलता है। `नवीन` जी ने अनेक सजीव शब्द-चित्र प्रस्तुत किए हैं और अपनी कुशल लेखनी रूपी तुलिका की सूक्ष्म रेखाओं से हृदयाकर्षक शब्द चित्र प्रस्तुत किए हैं :-

`ऊषा के मंजुल प्राण में कौतुकमय करुणा छलकी ,
प्रिय-दर्शन की उत्कंठा मानो नयनों से ढलकी ,
लाली सी फैल गई कुछ, कुछ उजियाली-सी छाई,
ज्यों शुभ्र वस्त्र पर, हिय ने - आरक्त फुई बरसाई ।`[३]

इस प्रकार यह बात स्पष्ट होती है कि कवि की भाषा प्रकृत, प्राणवत, अलंकृत एवं प्रभविष्णु है। उनकी भाषा शैली में अवश्य कुछ दोष हैं परन्तु सामूहिक रूप से देखने पर वे दोष बिल्कुल साधारण प्रतीत होते हैं। डा० गोविन्दराम शर्मा ने लिखा है - ``नवीन` जी ने `उर्मिला` में प्रौढ, भावपूर्ण

---

१. `उर्मिला` - द्वितीय सर्ग, पृ० १५५ ।
२. `चलो, हे मेरी टूटी कलम, चलो उस ओर, किसी के पास ;
छोड़ दो कलियुग की मसि यहीं, करो त्रेता युग में कुछ बास;
किसी के हृदय खण्ड की व्यथा, सुनो ; कर दो न्योछावर प्राण;
किसी की धीमी-धीमी आह करे तुमको कुछ-कुछ प्रियमाण ;
-`उर्मिला` - प्रथम सर्ग, पृ० १.
३. `उर्मिला` - चतुर्थ सर्ग, पृ० ३६८ ।

और अलंकृत भाषा को स्थान दिया है। प्रसाद गुण-प्रधान होकर उनकी भाषा भाव-व्यंजना में समर्थ दीख पड़ती है।'[१] प्रसाद गुणमयी सशक्त भाषा के अनेक उदाहरण इस महाकाव्य में मिलते हैं।[२] डा० देवेन्द्र कुमार ने लिखा है - 'अभिव्यक्ति की स्वच्छता और प्रसादगुण युक्त भाषा, 'नवीन'जी की निजी विशेषताएँ हैं। 'नवीन' का कवि जीवन और भावना का कवि है, बोझिल प्रतीकों और रूढ़ दार्शनिक आस्थाओं का नहीं। वह हंसता है जीने के लिए और रोता है तो जीने के लिए।'[३]

'ऊर्म्मिला' में 'नवीन' जी ने प्रकृति का भी सुन्दर चित्रण किया है। 'नवीन' के साथ इस ग्रन्थ के लिखने में प्रकृति चिरसंगिनी बन कर सदा उपस्थित रही है, प्राय: उन्होंने अपने काव्य-उपकरण प्रकृति से ही जुटाये हैं। विरहवर्णन में प्रकृति का षट्-ऋतु वर्णन कवि ने अपनी मौलिक सूझ-बूझ के साथ किया है। उर्मिला के करुण जीवन से खिन्न प्रकृति विगलित होकर अश्रुपात करती है।[४] चरित्रों के साथ प्रकृति का समन्वय करने में कवि ने जो

---

१. 'हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य' - डा० गोविन्द राम शर्मा, पृ० ४४२।

२. 'झिल-मिल झिल-मिल सकल जग लगा, तिरता-सा संसार लगा;
कुछ कम्पित-सी हुईं पुतलियाँ, अस्थिर सब व्यापार लगा ;
धुआँ-धुआँ-सा कुछ उठ आया, कुछ मोती-से बिखर-पड़े ,
कुछ आ पहुँचा युग कपोल तक, कुछ नयनों के द्वार अड़े।'
- 'उर्मिला' - तृतीय सर्ग, पृ० १८१.

३. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' - ३० अप्रैल १९६१ - 'नवीन जी की पलकों में उर्मिला के आँसू' - डा० देवेन्द्र कुमार , पृ० ११।

४. 'कुसुमों के फूले हिय से आँसू झर रहे व्यथा के,
कुछ अकथ कथा कहते हैं , आडोलित पर्ण लता के ;
है चिर वियोग दुख अंकित द्रुमकी पत्ती-पत्ती में ,
है भरी व्यथा फूलों की रज की रत्ती-रत्ती में।'
- 'उर्मिला' - चतुर्थ सर्ग , पृ० ३५३.

कुशलता दिखाई है वह सचमुच प्रशंसनीय है। अरुणोदय का वर्णन अपने में मौलिक एवं अलौकिक है।[१] 'उर्मिला' में प्रकृति वर्णन विभिन्न रूपों में हुआ- भावोद्दीपन के लिए, आलंकारिक रूप में, पृष्ठभूमि के रूप में एवं स्वतंत्र रूप से आलम्बन के रूप में भी प्रकृति-वर्णन हुआ है। सीता और उर्मिला की अलौकिक छबि का वर्णन करते हुए प्रकृति-चित्रण पृष्ठभूमि के रूप में कवि ने बड़ी कुशलता से किया है।[२] उद्दीपन रूप में प्रकृति वर्णन का यह उदाहरण वास्तव में कवि की अद्भुत कल्पना शक्ति का परिचायक है :-

'चन्द्र को, रवि ने निज रथ रोक, किया आमंत्रित अपने पास;
दिशाएँ ताली दे दे उठीं काँपने लगा शुभ्र आकाश ;
गगन ने नीली चादर बिछा, सजाया रंगमंच को खूब;
चांद सूरज का हुआ सुनृत्य, एक में एक गए वे डूब ;'[३]

---

१. 'प्राची-दिशा वधूटी के सम श्री ऊर्म्मिला बधू के लोचन, -
कुछ-२ उन्मीलित है ; उनमें छाए हैं लक्ष्मण रवि-रोचन;
अभी आँख के ओझल हैं वे, यथा प्रात से पूर्व दिवाकर
आ पहुँचा आलोक ऊर्म्मिला के कपोल के फुल्ल कमल-सर।'
-'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० ६७.

२. 'कहने लगा गुलाब, - 'गुलाबीपन ? यह तो मेरा है',
बोला कमल - 'नेत्र-विस्फारण , क्या यह भी तेरा है ?'
जुही चहकने लगी - 'अहो, यह कोमलता किसकी है ?'
पारिजात बोला - 'स्वर्णिया रेखा यह जिसकी है।'
-'उर्मिला' - प्रथम सर्ग, पृ० ३१.

३. 'उर्मिला' - द्वितीय सर्ग, पृ० १२२।

`नवीन` ने स्वतंत्र रूप से भी प्रकृति चित्रण किया है,[१] जिसमें वर्णनात्मक शैली को अपनाकर अनेक मनोहारी चित्र प्रस्तुत किए गए हैं। `उर्मिला` के महाकाव्यत्व पर काफी वाद-विवाद उपस्थित हुआ है। आलोचकों का एक दल अपने सैद्धान्तिक चश्मे से देखकर इस कृति को महाकाव्य मानने के लिए तैयार नहीं हैं। श्री देवीशंकर अवस्थी इसे `महाकाय` काव्य-ग्रन्थ मानते हैं।[२] डा० गोविन्दराम शर्मा भी इसके कथानक को प्रबन्ध काव्योचित नहीं मानते हैं।[३]

---

१. `क्यारी-२ मधुरस भरी यों सुहाती सलौनी ,
ज्यों होली के नवल दिन में रंजिता, रंगलौनी,-
भ्रान्ता कान्ता, मधुरस भरी, हो सुहाती सुरम्या,
भू की भव्या सरस सुषमा डोलती हो अगम्या ।`

- `उर्मिला` - प्रथम सर्ग, पृ० १६.

२. `नवीन जी द्वारा रचित यह महाकाय काव्य ग्रन्थ है।- - - - प्रबन्ध में जिस बन्ध की आवश्यकता होती है, घटनाओं, परिस्थितियों एवं मनःस्थितियों के जिस क्रम अथवा शृंखला की आवश्यकता होती है, उसका प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रयोग कम से कम हुआ है। - - - मेरा स्पष्ट विचार है कि यह ग्रन्थ उस गरिमा से युक्त नहीं है, जिससे महाकाव्य सम्पन्न होता है।`

- `कल्पना` - जून १९६० - `ऊर्म्मिला` - देवीशंकर अवस्थी, पृ० ६२.

३. `जहाँ तक कथावस्तु के विकास का सम्बन्ध है, `उर्मिला` की कथावस्तु में प्रबन्ध काव्योचित घटना-विस्तार, विविध प्रसंगों में सम्बन्ध निर्वाह और कथानक में धारावाहिकता नहीं पाई जाती।`

- `आधुनिक महाकाव्य` - डा० गोविन्दराम शर्मा , पृ० ४३६.

यह सत्य है कि काव्य-शास्त्र के पण्डितों ने महाकाव्य विषयक जो रूढ़ धारणाएँ बनाई हैं उन पर 'नवीन' जी की 'उर्मिला' खरी नहीं उतरती । उसके कथानक के तारतम्य में, घटनाओं के संयोजन में एवं कथा के विकास में कुछ दोष हैं परन्तु इन्हीं के आधार पर हम इस कृति को महाकाव्य के गौरवशाली पद से वंचित नहीं कर सकते । यह परम्परा एवं रूढ़ि की दासता है । नवीन-युग एवं नवीन मान्यताओं से विमुख होकर वे परम्परागत सिद्धान्तों का अन्धानुकरण नहीं करना चाहते थे । सबसे पहली बात यह है कि उनका उद्देश्य ही प्रबन्ध काव्य लिखने का था जिसकी ओर उन्होंने स्वयं भूमिका में संकेत किया है – 'जब मैंने अपने एक मित्र को यह सूचना दी कि मैं ऊर्मिला समाप्त कर चुका हूँ , तो वे सूखे से मुँह से बोले - हूँ ! फिर थोड़ी देर के पश्चात् बोले– यह तुमने क्या किया ? ऊर्मिला पर काव्य ग्रन्थ क्यों लिखा ? वही पुरानी बात । यदि प्रबन्ध काव्य ही लिखना था तो कुछ और विषय चुनते ।'[१] वास्तव में प्रबन्धकाव्य के विषय में उनकी कुछ मौलिक धारणाएँ हैं । वे महाकाव्य को युग की आवश्यकता मानते हैं, अत: आधुनिक युग में महाकाव्य रचना की ओर कवियों की विशेष प्रवृत्ति न देखकर उन्होंने प्रथमत: यह प्रतिपादित किया है कि उन्हें इस ओर से विमुख नहीं होना चाहिये । उनके विचारानुसार महाकाव्य मन में उठने वाली महत् प्रेरणा का फल है ।[२] उनकी धारणा थी कि पुराने विषयों पर नवीन मानसिक उद्भावनाओं के द्वारा सुन्दर प्रबन्ध कृतियाँ लिखी जा सकती हैं ।[३] और उन्होंने वर्तमान युग को महाकाव्य या विराट-

---

१. 'उर्मिला' - भूमिका, पृ० ग ।

२. 'सरस्वती संवाद' - महाकाव्य विशेषांक -(लेख)- 'आधुनिक हिन्दी कवियों की महाकाव्य सम्बन्धी धारणाएँ' - प्रो० सुरेशचन्द्र गुप्त ।

३. 'उर्मिला' - भूमिका , पृ० (ग-घ) ।

काव्य के अनुपयुक्त नहीं माना है।[१] इस प्रकारयह स्पष्ट है कि प्रतिभाशील कवि शक्ति और अनुभूति के आधार पर एक परम्परागत विषय को भी नूतन अभिव्यक्ति प्रदान कर सकता है। ठीक यही नूतन अभिव्यक्ति 'नवीन' जी ने 'उर्मिला' को प्रदान की है। प्रबन्धात्मकता की दृष्टि से इस काव्य कृति का पंचम सर्ग अनुपादेय है। परन्तु उर्मिला के विरही जीवन का मर्मस्पर्शी चित्रण करने में इसकी उपादेयता अनुपम है। कृति सर्ग-बद्ध है। नामकरण की दृष्टि से भी यह प्रबन्ध कृति कसौटी पर खरी उतरती है। शृंगार रस इसमें प्रधान है विशेषकर विप्रलम्भ शृंगार का वर्णन महान बन पड़ा है। मंगलाचरण के रूप में उर्मिला की चरण वन्दना कवि ने की है[२]। अन्त पर फल की प्राप्ति भी लक्ष्मण-उर्मिला के मिलन की रूप में दिखाई गयी है। डा० दुबे ने लिखा है — " कथानक इस का अत्यंत सूक्ष्म है जिसकारण इसके प्रबन्ध काव्यत्व पर आरोप किया गया है। परन्तु आज के बुद्धिवादी युग में प्रबन्ध काव्य में

---

१. 'उर्मिला' - भूमिका, पृ० (ड., च)।

२. 'देवि, ऊर्म्मिले, तेरी अकथित गाथा गाता हूँ मैं ;
किंवा तव चरिताम्बुधि-मज्जन के हित आता हूँ मैं ;
अति अगम्य बलवती लहर है, थाह न पाता हूँ मैं;
हृदय-शिला पर तव चरणों को, देवि, बिठाता हूँ मैं।
सती, मुझे वर दो कि भारती मेरी हो कल्याणी ;
मैं लघु शिशु हूँ , बुद्धिहीन हूँ और निपट अज्ञानी ;
वैयाकरणी मैं न , असंस्कृत है यह मेरी वाणी ;
किन्तु कृपा की भीख माँगता हूँ , हे लक्ष्मण रानी ।'
- 'ऊर्म्मिला' - सर्ग १ , पृ० ५.

घटना की अपेक्षा विचारों को प्रमुखता देना उचित प्रतीत होता है। इसीलिए कवि ने मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक धरातल पर राम-कथा को निखारा-परखा है।[१] निस्सन्देह उर्मिला एक महाकाव्य है जिस का परीक्षण प्राचीन कसौटी पर नहीं अपितु नव-युग के नूतन दृष्टिकोण के आधार पर सम्भव हो सकता है। आचार्य विनयमोहन शर्मा ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया - 'यह एक सशक्त प्रबन्ध रचना है। कोई भी महाकाव्य ऐसा नहीं जिसमें दोष न हों। वास्तव में हमें उस कसौटी को देखना है जिस पर हम महाकाव्य परखते हैं।'[२] पण्डित श्रीराम शर्मा ने भी इसे महाकाव्य स्वीकार किया है।[३] डा० देवेन्द्र कुमार के अनुसार 'उर्मिला' सम्पूर्ण चित्र है, खण्डित नहीं।[४] निस्सन्देह यह हिन्दी प्रबन्ध काव्य परम्परा की महत्वपूर्ण कड़ी है।

सब मिलाकर 'उर्मिला' एक सफल काव्य कृति है परन्तु आज तक इस कृति को वह महत्व नहीं मिला जो कि साकेत को मिला है, इसका उत्तरदायित्व सब से अधिक 'नवीन' जी पर ही है। एक वाक्य में कहा जा सकता है कि इसके दोषी वे स्वयं हैं कोई आलोचक या पाठक नहीं। इस ग्रन्थ का साहित्यिक मूल्यांकन करते समय आवश्यकता इस बात की है कि इसे तीस वर्ष पूर्व के ऐतिहासिक परिदृश्य में रखकर पढ़ा जाए।[५] अस्तु, अपने समग्र रूप में

---

१. 'नवीन' : व्यक्ति एवं काव्य' - डा० दुबे, पृ० ३३०।
२. आचार्य विनयमोहन शर्मा से (२०-७-१९६६) को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात।
३. पण्डित श्रीराम शर्मा से (७-२-१९६५) को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात।
४. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' (३० अप्रैल १९६१) - 'नवीन जी की पलकों में उर्मिला के आँसू' - डा० देवेन्द्र कुमार, पृ० ११।
५. 'कल्पना' - जून १९६७ - 'ऊर्म्मिला' - देवीशंकर अवस्थी, पृ० ६४।

`उर्मिला` एक सशक्त कृति है। प्रबन्धात्मक तन्तुओं में कुछ ढीलापन अवश्य है, लेकिन उसका महत्व स्वच्छन्दतावादी शैली में है, उसकी मधुसिक्त शैली अपने में श्रेष्ठ एवं आदर्शनीय है ~~मीरा~~ का अभिव्यक्ति कौशल अपने में अनुपम है। डा० लक्ष्मी नारायण दुबे ने लिखा है - ` कवि `नवीन` के जीवन-सार, नवनीत-काव्योत्कर्ष तथा समवेत साहित्यिक उपलब्धि की `उर्मिला` परिचायिका है। इसमें भोग पर त्याग, आसक्ति पर तपस्या, आत्म-मोह पर आत्मोत्सर्ग तथा व्यष्टि पर समष्टि की विजय निरूपित की गई है।`[१] आचार्य विनयमोहन शर्मा ने अपनी एक भेंट में मुझे बताया - `यह एक सशक्त काव्य-रचना है।`[२] इस कृति में कहीं `नवीन` का रस-सिक्त हृदय बोल उठा है, कहीं दग्ध-हृदय अश्रु बहा रहा है, कहीं चिन्तक मन विचार मग्न है और कहीं सौन्दर्य-प्रेमी नवीन सौन्दर्य-अन्वेषण में व्यस्त है। `उर्मिला` `नवीन` जी के हृदय-मंथन का नवनीत है। इसमें कहीं राष्ट्रीय स्वर का उद्घोष है, कहीं जन्म-भूमि की अभ्यर्थना है, कहीं आत्मवाद की पुकार है और कहीं सत् असत् तथा आर्य-अनार्य का परस्पर संघर्ष है। इस में गान्धी को आन्धी के तेज़ झोंके कहीं दिखाई देते हैं और कहीं साम्राज्यवाद की दानव-लीलाएँ चित्रित हैं। उर्मिला के जीवन के परिप्रेक्ष्य में इन समस्त सूत्रों को क्रमबद्ध 'नवीन' जी ने किया है और अपनी अद्भुत कल्पनाशक्ति, सूक्ष्म अवलोकनीय दृष्टि, भावुक हृदय एवं मननशील व्यक्तित्व के सहारे इसमें युग एवं परिस्थितियों के अनुकूल जीवन-रस घोल दिया।

--

---

१. `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य` - डा० दुबे, पृ० ३८२।

२. आचार्य विनय मोहन शर्मा से (२०-७-१९६६) को प्रत्यक्ष भेंट द्वारा ज्ञात।

परिशिष्ट-२.

`कश्मीरी काव्य — मूल-रूप`

परिशिष्ट - २.

`कश्मीरी काव्य – मूल-रूप`

१. गोश्त मंज़ हा वथरावे - वल्लो म्यानि पोशे मदनो ।

२. चलुहमा रोशे रोशे - पोशे मेति जानानो,
वुछ मखा दूरे दूरे - सन् गोम् सोरगिचि हूरे
छस वदान चूरे चूरे - वलो म्यानि मति जानानो ।

३. `महजूर` मोतस क्या छु खोचुन मोत छुइं मेहराज ।
मरि मरि छि फेरान ज़िन्दगी वसवास मोतुक त्राव ।।

४. पोशि मंअत परवाज़ फरमोव वख़्तिकार
पोश नेवि ह्यथ याम वनि आयोव् बहार
पोश अनिम्स नज़रि प्रयथ् शरस् अन्दर
अज़ करन मुल पोश `महजूरन` मज़ार
पोशि मोत् `महजूर` ख़ वासिल़ बहक
हाय कश्मीरुक सुखनदान ।

५. नोन ख़ आलव - `महजूर` कोंत ख़ - `महजूर` कोंत ख़ ।
पोंत फीरित् आव् आलव वापस्
यंति छुइं - कोंत ख़ ?
यंति छुइं - कोंत ख़ ?

`महजूर` ज़िन्दी छुइं - ज़िन्दगी मेरि क्या ?
गोनिमातस् मोतुक शर करि क्या ?

६. छि महजूरि सिन्द अस् ति `महजूर` सोनुइं
आह । क्या नुन्द बोनुइं
छि ललद्यद रसूलमीर महमूद गामी
ति गोनिमात नामी
यिहिन्द् असि छि वारिस
छु असि ज़िन्दगी सोन गलन, जुव वन्दुन
कांफलिस गत कलन, कांफलिस सूत्यि पकुन
ताज़ि लोलाह बलन
बोज़ु नावुन ग्यवुन
बोज़ुनावुन ग्यवुन बन्द असिकान्ह करियि ज़ांह
ति शायिर मरया ज़ांह ?

७. शोकलं कारिथ् वनुवुन ह्योतमय,
शुभ फल दिति म्य मांजि क्यानिये
वसुदीव राज़न्यव वनुवुन ह्योतुये
शुभ फल दिनिस मांजि शारिकांयि ।
अस्सि केरि कंमि प्रीक्षि मोरस,
तीयि आव परमीश्वरस् ख्वश ।
मरनावनस ज़ंगि कुस ओयय्
मंगलादेवी ति नन्द किशोर.

८. खान्ह मांजि कूर छम, पनिनी कुठय नुयन्द्रे
वन्य कंमी होनरे बुज़ह नावन ।

९. ओश मंनै हारतम क्वाले क्वाले
कांसि ने अन्द लोग् मालिनुये ।

१०. तंति दराव सुलि तै वति ब्यूठ् कथिनी
यंति छिस प्यालि ह्यथ् अथिनी क्यथ् ।

११. गूरि गूरि कंरयो कनिक्यु दूरो, कनिक्यु दूरो
दिलि हिन्दि शाहज़ादि आखा लोहूरो , आखा लोहूरो
सियुन क्या रंनियो ठूलि ज़म्बूरो, ठूलि ज़म्बूरो ।

१२. हालिको मालिको
शाबाश मालिको
ज़ोर कंरि मालिको ।

१३. ताज़ह - ताज़ह म्यति अनिमै डलि है ,
है, वोलै है, वोलै है, वोलै है,
फूल्ह वांगन ति पांरिमि अलिस है
है, वोलै है, वोलै है, वोलै है ।

१४. यितो म्यानि यावन चूरो लो लो,
करियो घूंरति घूरै लो लो ,
हा पानि क्या कल्थ कारबार
नाहकै गोख मुलक्स मंज़ बज़ार
राव ख्थ टोठ संसार
वातान कु मलकि मोत ज़ोरावार
सु कुति मानान ज़ारं तिपार
सु कु करान् नारह खोतह नार गुफतार,
मोत करान बखतस लुरूह पार,

सु कु करान यावनस ति सूरो लो लो ,
यितो म्यानि यावन् चूरो लो लो ।

१५. कुनथ रोन्यि मंजलिस , कॅरे घूरि-घूर
शान्द दिमे शान्द गुण्ड ति मखमलचि वूरि
निक्ह लालि ज़ामे अरद्ह रातन
ज़ातुक ल्यूखनस भगवानस्
ज़ातकस लीखित क्हसि उमर पूर
कुनथ रोन्यि मंज़लिसे , कॅरे घूरि-घूर

१६. कॅति फोलहम लो गुलाबो लो
वारि म्याने लो गुलाबो लो
शेरि लागत बो गुलाबो लो
कारि थदे लो गुलाबो लो
तारि कॅरिथस बो गुलाबो लो
वॅति क्हारे बो गुलाबो लो
पॅति लारे बो गुलाबो लो

१७. कॅरि बॉलिये यावनस रोवुये लो लो
यि कु दुनिया नॅवि खॅति नोवुये लो लो ।

१८. यार गो मेयि पॉपुरि वॅते,
कॉग पोशव रोट नालि मॅते,
सु कु तॅति च्छ क्हस् यॅते ,
बार साहिबो करनाच्छ ज़ॉरी

१९. हा म्यानि मदनो, छि कंत्यू व्यूठुक
रावुरथम् सोख सोन्दरे
वीरिह हुन्द नारह छोख क्वो द्युतुथम,
दोख प्योम् चालुन म्यु बाले
वन्दियो जू जान हावतम मो रूख
रावुरयोम स्वोख सोन्दरे ।

२०. मोरस प्रिछाम सासि लटे
यस् नि क्यँह वनान तस क्यानाव
प्रिछान् प्रिछान थंचिस् ति लूसिस
क्यँह नंसि निशे क्याह थाम दराव्

२१. शिव छुइँ थंलि थंलि रोज़ान
मो ज़ान ह्युन्द तं मुसलमान
त्रुक अयि छुक ति पान परज़िनाव
सोयि छेयि साहिबस ज़ानी ज़ान

२२. कुस मंरि ति कंसू मारन
मंरि कुस ति मारन कंस्
युस हंरि हंरि त्रोविथ गंरि-२ करे
अंदि सुइँ मंरे ति मारन तस्

२३. मोरन वंनुनम् कुनुइँ वछ्
न्यबरि दोपनम् अन्दर अछ्
सुइँ ख्व लंलि म्यु वाक् ति वछ्
तवे म्य ह्योतुम नंगे नछ् ।

२४. मिथ्या कपट असत् त्रोवुम्
मनस् कल्म सुइं वपदेश
ज़नस् अन्दर कीवल ज़ोनुम्
अनस् ख्यनस् कुस् कुम द्वेष ।

२५. गगन छ्यं भूतल छ्यं
छ्यं छुक दयन पवन ति रात
अगं , चन्दुन पोश पोन्य छ्यं
छ्यं छुक सोल्यं ति लागे ज़ि क्या ।

२६. क़ालुन छु वुज़मलि ति त्रेटे
क़ालुन छु मन्द्यन गटिकार
क़ालुन छु पान पनुन् कडुन गटे
ह्यति मालि सन्तोष, वाती पाने ।

२७. मुछस् ग्यानिच कथ नो वनिज़िहे खरस मोर दिनि राविथि दोह
सकि शाठस फल नो वविज़े कोमयाजन राविरिज़िनि तील

२८. अविचारी हा मालि छी पोथि परान्
थिथि तोति परान राम पिंजरस मंज़्
गीता परान् होथा लबान
परिम् गीता ति परान् छसि

२९. परिवुन्यो लूकल छुकि परान
पानस छ्यं नि गछान कनन्
थिथि पठि पुज़् छ्यं नाटिकिनान
पानस नि पोशान पकि मण्डि ति कनि ।

३०. नफसी मोल्स ति वाय
खटित रूदुम् गंटे
अथि यि यिहम ति क्याथि
करतल छिन्हस हंटे

३१. क़ाजाम अन भवनन् तिबंथि दंशि दीशन्
नेब ति निशान लोबमस नि कुने
प्रकाम सादन ति बंथि तं पर्यंशन
तिम ति बुज़िथ् लंगि वंदने ।
दब यंलि द्युतुम रागन ति देश्यन
अदि सुइं म्यु लोबुम् पानस् निशे ।

३२. आगंन नाद करान हूनुइं
वंव् बा वंव् ति लोन् बा लोन्
यं मि यं ति वंवु तं मि तंती लूनुइं
हून छुइं दपान् वंव् बा वंव्

३३. पंर ति पान् युस ह्युवुइं व्यंदे
सुइं भव स्यन्दे तंरिथ् आव

३४. खोंरि रोस्तुइं जहाज़ि तोल्म , मोल्म मद, लुभ ति मोह

३५. सोंर ति ज़ुवो घरि पंनुन् सोंरति ज़ुवो घरि पंनुन्
वंथु गिन्दिथ् घर गंक्व वंथु गिन्दिथ घर गंक्व

३६. छि कुस, च्वह कुस , कौंह व्यक्षारा
अदिन्न धारा सुइं चौन् रूप ।

३७. आदनि यिखना क्रेमि लादन तं सर हो वन्दे पादन
मंदनि आसिस चानि वदनितं अज़ वात तम् दादन
यि दोदि नंरयन बंयि मावन तं क्षिमगछान भ्रांन्ति नादन ।

३८. कंसि वंनि म्यु चैव अशकुनशराब
मस्तानि मस्त ख्व दरखराब
केछ्न प्यंमिछ अशक्ति तंबर
क्यूँह वाज़ख्वान रूदि बे खबर
आंनु कंवा ज़ानि ज़ग तं प्रानु
अंनिस किथु आसुन पंनुन
नाके थ्यकान म्यति वुछ नवाब
मस्तानि मस्त ख्वं दरखराब
करि क्या मोजूर कुस नु शऊर
किथि तंरि सोदरस सुमि अपोर
शमस फकीरन वंनु नंन्यर
क्वि ज़ानि दंरयावुक संन्यर

३९. गिन्दुना कु ज़िन्दि मरून् सहज़ विछार करुण
पानि रूसि पान सोरून सहज़ विछार करुण

४०. शक्त वोनुल्स ति शिवै, ज़ावक्स ति आव क्वैं
न्यश ति द्यन शंशि ति रवैं

४१. मायायि सूत्यन छि शायि शायि आसानि कायाधि मंज़ नि -
व्योनि रोज़ानो
सिरियिकि आसनि क़ायि छंयि बासनि च्यत् वयमरशि दिफित-
मानि भगवानो ।

४२. कर्म भूमि काय्यि दिज़ि धर्मुक बल, सन्तोषि व्यालि व्वावि - आनन्द फल ।

४३. शिव छुय केशव ति केशव छुय शिव
थ्रनि आंसि अदि प्यास ग्रवुय नाव
निराकार सुन्द् रूप त्रिभुवन ख़
सर्वाकारन् हो वि विश्वरूप

४४. तंति वुछ म्य अंक्सी सजदि करान ह्यिन्द ति मुसलमान
अंमि खोति/व्वु क्या लोलिचे शहरिच खबर वंने ।

४५. रावुन छु लबुन् यामज़ोनुम् राम सपनुम दिल ।

४६. व्वु छंसि यंति ति छि छुहम दूरे
दोशवइं द्राये जांनी जान
म्य नो ज़ान्याव लोदमुत लूरे
कांसि मो रांविन् शूरे पान

४७. रंछि रंछि रतिकोल छुन् सोरांनी
बंरि मा गछन अछिपोश
कुनि हिति बुलबुलि यिति अकि आनंद
छाव म्यांनि दानंद पोश

४८. मदनवारो बदन ज़ोलथम्
मोछुहमा म्य आदन छी
बादम चंशमो खून छंसिया हारान
छुय किहो गंयी म्यंनि दियी

४९. गॅछि कुट्ठिनुइं थावे वंथ् रां विथ्
लंछिनाव्यो मन्दोरि सानि व्युह
अछि दां रि ज़न् रोज़इं पां रां विथ्
ज़ोलि छॅमि नॅयि सोन्दरे सोन्दरे

५०. लां नि क़ूरन लां जिसदावस बाल बावस लां निन् न्याथि
मुश्क कांफूर तन व्युह नावस तन नां वित हावस पान
रंगिरिवनस्त प्रगं पां रावस शेरां विथ थावस पान
हंगि तू मां रि दूर आं लिरावस बाल बावस लां निन् न्याथि
छॅत्रि बोन्यन तल वंथरावस छुम यि हावस बॅयि अरमान
नॅरि आलवस लॅरि पान सावस बाल बाब्स लां निन् न्याथि

५१. वेसिये गुलन आवे बहार अज़साल अन्तन बाल्यार
वॅलि वॅलि अनुन फोलि लालिज़ार अज़ साल अन्तन बाल्यार
तंसकुन म्यु कल छॅमि रात द्यन छॅसि तम्बलेमिछ कंरवुछन
यिमछस पॅति पॅति छुमनिवार अज़साल अन्तन बाल्यार
लंगु सॅरि डल फोलि शालिमार अज़ साल अन्तन बाल्यार

५२. ताबान व्युख चोन माह मशां ली लुबान दिल सोन बां लिये
शुबान नौडिने तल छी वांलीय तु बोज़ सोन्दर मां लिये
आं लि तं नाबद बादम खां ली व्यथि कंथि छुइं मॅलि बां लिये
यिखना मॅलि व्युख सोज़इं डां ली ती बोज़ सोन्दर मां लिये
नां गीरायिन हाहीमां ली मजलून खानिन बां लिये
शालिमार प्रारान लालि सवां ली ती बोज़ सोन्दर मां लिये

५३. हांरिये थावकना कंनि ति लोलो ज़ार म्यंनि तोत्स वंनि ति लालो
मदनस वनतसे अन्तस् आर वदनरु छुमनि ज़ॉह छ़ंन ति लालो

५४. मीरिसुन्द प्रॉन मस लोदु नंव्यन बानन
ती कुनुन ओव म्यु खानन् मंज़
महज़ूरि बांगराव बंरि छ़ी प्युमानन्

५५. कौसल्या हिंदि मोबरो कंरोयो मूरि गूरं
कंतू मोहम छ़ि आंवित् कंसू ह्यंकि हाल बांवित्
नंरहा बाज़ांरी हंडनम लूक सांरी
म्यु दप्योम रामिराजे ख्वश आवनि वोरि माजिये
म्यु कंमू शाप आंसी तिम् ति नो कांसी कांसी
छ्य फीरिथम भुज़ि जामें छ्य छ़ारत मामि मामें
पंरयो रामि रामें कंरोयो गूरि गूरं

५६. राधाय्यि पंति पंति पाद आय्यि वुछ़ानि नाद आय्यिमुरली बोज़ानो
छ़ारान लोलि हंछ़ि नंछ़ि गेयी देवानि ख्वोरि फेलि ज़ि आयाक लोलानो
छ़ोपांरि फीरि फीरि कोनि छ़ंसि लबान मोरली आंछ़ दूरि -
बोज़ानो

५७. राधाय्यि तन्हा नित् आंसि वंनानि
कूरि छ़ंमि म्यु कोरि रंछ़ि तुलानो
तानि ह्यति नंति मोल क्या कंडी तानि-तानि

५८. शुरा ज़ांनिथ छ्य शुरयन् अन्दर गिन्दान छ्य सूत्यि असि सायें
शुराहा सिंगार पंरिथ् छ़ंयि सोन्दरं

५६. आरस मंज़ अछ्वेयि विगन्ये ज़न नछ्वेयि
लागोस पोश पूज़े कृष्णाज़ न्यछ्रि वुज़े
बपरस कस पछ्वेयि विगन्ये ज़न नछ्वेयि
लाजिल्स तनि तनुइं शहल्यरव हनि हेनं

६०. लेलि वोन छु लेलि वुनुइं
बालि गूरुपाल कुनुइं
वनितो छुकनि ओनुइं

६१. पम्पोशि बागस मंज़ वथरावे बावे पनिन्यी मोसित् गम
ज़ानि हिन्दि ज़ल सुत्यि थल रूविनावे सरि ज़न पम्पोश मन -
फुलिहम्
मन म्योन मंजुलति लोतु लोतु अलिरावे बावे पनिन्यी गोसि - -
शंचि म्यनि नीतोस बुलबुल कावे अछ्वलि बागस मंज़ थियिहम
लेछि नावि गंछि डेबि मंज़ वथरावे बावे पनिन्यी मोसित् गम

६२. दया चानि आय अज़ तानि थ्यंकन यथमंज़िल सलूक पक्कन गयि
छम्बस प्यठ् छुक म्यु छ्लान सावित क्सगोक त्रावि थ् ही शम्भू ।

६३. यछि चानि दानि दानि वछि सोनि शीनि मानि हा गोसानि -
सानि सरतलि कर सोन
नंगि छुस लोगमुत मंज़ प्यविवुन शानि जंगि छमनि किथि पंठि पंकि -
मंज़लँस
अंगि हीनस म्यु ज़ान करनाव गंगिवानि

६४. बालि कृष्णास् छस व्यु प्रारान छालि मारान यीना

६५. मुरली शब्द ग्व असि कतन् वनन् छी राधा कृष्णा आव
न्यथि नंनि दराय असि मंज़ आँगनन् मुरली शब्द याम कतन् छाव
न्यदरि हक़न वठु कंड मनन् वनन् छी राधा कृष्णा आव

६६. संमिव करव अथ वास पंकिव रास गिन्दन्ये
शुय रयथ् सां प्नि कुनीरात गोपीनाथ नचिनी लुंग
वंहर दोह ग्व पंहर मास पंकिव रास गिन्दन्ये
सुरयन बाक़न लंभिकुन थां विथ् वछि तल त्रां विध न्यखना
सूत्यि ह्यथ मंनि पोफा मां जि मास पंकिवरास गिन्दन्ये
असि कमि बाधत करव त्याग असि गछि आसुन कृष्णुन राग
सुइँ ग्व तप ज़प ति योग्यभ्यास पंकिव रास गिन्दन्ये

६७. टोठान चि छुक भक्तिभावस
श्यामि रूपि लग्यो रामनावस्

६८. रामि लग्यो रामि नावस
कामि दीबि श्यामि सोन्दरो

६९. परमब्रह्मा पनुन दरशुन म्यु हावुम सदा सन्तोषव्रतम्यु पोशिनावुन
अक़्न दिम गाश क़्त आकाश वक़्नस स्वस्थ प्रकाश तथ् ह्यम आश वुक़्नस
म्यु सुइँ मोख हावयुस भक्तन क़्य होवुथ गंटे अन्दरुइँ तिमन प्रागाश-
त्रोवुथ् ।

७०. मंर तबि बंडि छुक सानि सरदारे हंकि सिन्दि यारे वंन्दहे पान
दिल छुम चश्मि ते चश्मि फवँवारह मंमि चानि दम ह्यथ ओश हारान
नज़रा करतम् छुस व्ख लाचारा हकि सिन्दि यारे वंन्दहे पान

७१. हज़रत नबियस लंगवे नावस वाक्स अथि वंनिनावस ज़ार
सवाल पावस कोछु चुकावस वावस अथि वंनिनावस ज़ार
गरम आमि अशि के खोर ज़ि नावस् चशमि ज़ि ति वन्दहस -
थाविहमे सार
खोशिकलंमि सुत्थि अदि पाद वधरावस वावस अथि वंनिनावस ज़ार

७२. छुम गोमुत गालिब मज़ कंरत मदफा या मुहम्मद मुस्तफा बख शुम -
शफा
तंगदस्ती नातवानी छंमि स्यठाह या ,, ,, ,,
काँह ति मोकलन पाय छुमनि छंयि सिवा ,, ,, ,,
हर खराबी कास्तम कंरतम बजा ,, ,, ,,

७३. अज़ म्यु दादयन कर दवा या मुहम्मद मुस्तफा
छुस ख्यु आमुत बाउम्मेद मंति कारतम ना उम्मेद
बोज़तम् लोलिक सदा या मुहम्मद मुस्तफा

७४. साहिबा संथ् छम् म्यु चानी वंथ् म्यु असलिच हावतम्
कूत कालाह रोज़ि बेज़ान ज़ान्य हुन्द मसचावतम्
बोज़तम फंरयाद ज़ारी सोज़तम दादयन दवा
रोज़तम हरदम मेहरबान ज़ाँह ति पंरि मति पावतम्
शंकलि छुस इंसान मगर इन सानियत निश बेखबर
ह्यावतम मति इम्तिहान ग्यंमि शकलि मंति मन्द छावतम्

७५. जू फिदा कंरिहा वंतन चान्यन मगर तोत वाति कंर
दूरिरन् बेताब कोरनस होलि तब छुम लोल आमह
लारि हा पै छारहा वंति गारहा तंति प्रारहा

७६. पर्वति तंलि चन्दरमि दरावहे संतिये माश आविये
राजि दशरथ बरनि चावहे कौशाल्याथि रामजु जाविये
असि लोग तार तंमसिन्दि नावे सतिये माश आविये
सोन्दरु ति विगन्यव बोरहं चावे वन्दुक गोसि मंम दराविये

७७. मुकंरर यी सपुद गंछि राम वनवास
वोलुन तंम्य बुज़ि त्रोवुन खासि अंतुलास
अन्यिख कीकी ति पारंन्यख बुज़िजामह
परिनि लोग शहर सोरुं रामु रामह ।
सती सीता पंकन गयी पान मारन्
वदन् अंसि खुन न्यत्रव आंसि हारन

७८. कोसल्याथि हिन्दि गोबरो करंयो गूरि गूरं
लंगंयो पोत छाये ही कारथस खु ज़ाये
नारस वंठ् खु लाये करंयो गूरि गूरं
लोल चोने वंन्य म्यु आमो छारथो शहर मामो
व्यथि मंछ् हम छ्य रामो करंयो गूरि गूरं
छ्य फिरथम् भुज़ि जामे खु छारथ मापि मामे

७९. कुनि जाथि सीतामि आंसीनु डेशान
त्रेशिदादि यंच तिथ आंस्य कुठ फेशान
दिलरेश त्रेश छिनु कुनि डेशनम ।

जय जय जय दशुरथ नन्दनय ।।

८०. गॅटि मंज़ माश आव चाने ज्यॅनं जय-२-२ देवकी नन्दनं
गूरि बाय़ि पोत्रि ज़ाय़ि यशोदाय़ि आये डीश डीश दोपह्स -
कृष्णास आय
व्यॅसि त्रॅवासि यॅछ आसि नॅरनं जय-२-२ देवकी नन्दनं
ब्रोद हाँछ लाँजी यशोदाय़ि माजे ज़ोनुन नि आमुत छु ज़ूगि हुन्द राजे
शूमि मोख हावथस अदि त्रोभुवनि जय-२-२ देवकी नन्दनं

८१. सुदामा जी ओसयार भगवानस बालि भाव क्या ति लोकचार भगवानस
कुनिइँ पानवाँनि वॅन्य नि जुइँ ब्योनुइँ ,, ,, ,,
शुरि भावि जिरि मोछि खॅटि खॅटि धावान छापान पानि वाँन्यति
आषरावान
खयन्स नि दुरयरज़ि मशिहय्क स्यनियी ,, ,, ,,

८२. शुरि कॅस ति बॅछि कॅस द्यन कॅस ति राँछुइँ सोरल्या गॅयि यिछ -
आरि काँछी
पानि वाँन्य त्रिमनि ज़ाँह शयचि प्रिछनी ,, ,,
व्यपि ताय़ि राँटिमित ति कॅठ कॅडनकतं मॅठ मॅयि तथि मंज़ छॅटि -
कॅडनकतं
छट आँसि दीवान ति क्युँह नि छोटनियी ,, ,,

८३. वॅनुस ती तॅमि सोरल्यार पतिव्रता सती बाँरियाये
ओश तस छालिछालि ओस छलनियी ,, ,,
गछिहक तॅस निशति व्यपता सोरे दारे व्ययिति क्युँह ति पानि होरये
डूरिस तस कुनि ज़ाँह सोरनियी ,, ,, ,,

८४. रटान ज़ोरि तिम अख अक्सि ज़ंग आंसी
बुं मरदी दिवान अख अक्सि ढंग आंसी
गराह अख अक्सि आंस गदैन रटान
लूति ज़ारि सूत्यन ज़मीनस छटान
बुं सीन्यु दिवान अख अक्सि क़ुंजि आंसि
बुं सदज़ोर शानन् दिवान क़ुंजि आंसि
करान ओस शहज़ादि हर चन्द ज़ोर
दिवान पेच शहमारि ज़न ओर योर
मगर रोटु शहन अज़ कमर बन्द तंग
ज़ंगन ह्न कोल्न तस बन्द सरि ढंग
कलस् प्यठ् तुलन थोदु सु अल्लाह परिथ्
दितुन सुइं नखि प्यठि कनी ज़न दरिथ्
सपिन्यु रे ज़ि रेज़ि तमिस उस्तरवानन्
अकी ज़बं सूत्यन सु ख्यु नीमजान

८५. म्यानि बवनुक म्यानि घरि योद आसिहे कांह हन्तिज़ाम
फेरिहन मा वन्दि राक्न दरबदर बेकार म्यनि
क्या वनै वरियस्त जक्सि ज़ीनित् ख्यु रूदुस फाकि होतु
व्याज़ख़ु वान्यव ति सोनखु गंबि करि अम्बार म्यनि
म्यनि न्यथि नंनि बचि रूज़ी वाति नावान प्रथ अक्सि
अथदारान छी गरीबन रात दोह ज़रदार म्यनि

८६. हा मजूरो ग्रस्तियो अथवास्त था विव् पानिवन्य
हक पनुन् हा सिल करिव त्रा विवु करन वन्य ज़ारपार
युथ् नि बुज़िव ज़ात कुरात खानदान मिलत ति कोम
कुहं मजूरन ह्युन्द कुनुहं अख कोम वन्य सपनान शुमार
संत् वरियी ब्रोहं वोन यि 'महजूरन' ति ती गछि पूरि वन्य
वा वि हर दिनि ज़रद गछि गछि प्यन पथर सरमायिदार

८७. - - - - - - - - - -
दिमागस पनुन हसि नि थावान गुलामी
- - - -
ज़िन्दे मोति चे न्यन्द्रि सावान गुलामी
- - - -
सोनस वारि सरतल बनावान गुलामी
यिमन शुभिहे प्यालि ह्येथ् सोरगि हूरा
तिमन खूनि दिल चावनावान् गुलामी ।

८८. ज़िन्दगी क्या इन्कलाबन हिंजु किताब
इंकलाबो इंकलाबो इंकलाब
इन्कलाबो पदि कर मज़हब ति दीन
इंकलाबो कोस शक हावुक यकीन
वाय ! मजबूरी गुलामी बन्दगी
बेकरारी बेकसी शरमन्दिगी

८९. अवलाद बड़शा हस ह्युहं रछियित छि यमि कोछि मंज़
बोछि सूत्य मरान वतन प्यठ् त हन्दी अयाल आस्या
गैरत दिवान छु गरन अबरत स्यवान छु आलम
सख्ती करान सिहन प्यठ् हं - हं यि शाल आस्या

६०. मलव वाइज़व मोकदमो ज़ेलदारो शरारत पसन्दो ति सरमायि दारो
संमिथ् जुलुम करि सारि वुहं जुलुमागरव ज़बं खु लगान ज़ख मुकुहं गुल
फोलान खु
मगर कारवान् सोन ब्रोंह-२ पकान खु

६१. छि नार कुक अलाव कुक छि यावनुकजलाव कुक
अगर छि सोन्ति वावकुक्
मे रोज़ ओबरू तल संदित छि न्यंरि कोहति वन छंदित
तु फानतुल तुफानबन
छि मीर कारवानबन
कंशीरि पास्पानबन

६२. वलो तारको वोज़ म्यंनि आह वज़ारी वलो वुछछि म्यंनि -
बेकसी बेकरारी
व्व वंनिहा पंनुन हाल व अहवाल वंनिकस व्व कंदस अन्दर म्यंनि-
शुंगमित छि सारी
लोगुस बूसुफा वोरि बायिन अथनमंज़ म्यं छिम् रामि हूनि -
रांछि अन्दि-२ क्रो पारी
वलो दोस्तो वत नि के नवजवानो व्व कुस लोसि वुन् बोज़ -
म्यंनि विलि - ज़ारी
छि मण्डह्यमतुक होल बचावुन वतन कुहं तमी सूत्यि संसि रंथि म्यंनि
जान निसारी

९३. यार गोमे बाग़ि मंज़ि नीरिथ् पोश लागरु गांन्दिरे गांन्दिरे
क्यिंह नि मंगस् यियम ना फीरिथ् ज्वलि क्रमनि स्वन्दिरे स्वन्दिरे

९४. यथ् दर्द सोज़स् परद तुलिथ् ग्व सु रसूल मीर
'महजूर' लांगिथ आव बंयि दुबारि अति रोज़

९५. मीरि सुन्द प्रारोन मस लोद् नवयुल बानन् ली कुनुन त्रोव म्युं -
सानन मंज़
'महजूर' बंगराव फिर छि पेमानन जाय तंमि रंटि परेस्तानन मंज़

९६. पोशि ख्वति क्रुम ज़्यादि आंव्युल जानि ख्वति यक्क मलोल

९७. आशक् क्रु सुहं युस ज़िन्दगी गुज़राव नारस मंज़

९८. बंडि सोति वाराह् बंदु वुक्रुम् दरबार मोहक्त

९९. लोलि साज़स ताज़ि लै ह्यथ आयि 'महजूरिन' गज़ल

१००. यपारि ब्वसरि तारि गंभिक्क वाव वुछिथ् नाव
तूफानि मंज़ अंथ नावि बपोर तारि मोहक्त ।
प्रज़िलोव लोलन सोर क्रुहं आलम पनिनी परतव सूत्य
वुज़ि मंलि हिन्दि सांति तेज़ क्रुहं रफतार मोहक्त ।

१०१. दूरि यीवान वुक्क म्यु दिलबर त्रांठ पकनस् क्रमनि वार
क्रूरि क्रूरि वारह वुक्कहंन क्या करम् ठहरा विना ।
लालि यीना सालि रटहन नालि वनस्स हालि दिल
बोज़िना करि चारि म्योनुहं सोज़िदिल शहलाविना ।।

१०१ अ. हुस्निकि शहरिच् छकि महारानी नाज़नीन गुल बन्दानिये
बुज़िथ् कथि चानि दिल छु तम्बलानी होश छुनि डंजि रोज़नीये
कमि कमि गाटिल अथि पुरानी सुज़ि दिल बोज़ दुरदानिये
डीशिथ् वेशमि चानि भ्रम कुलारानी यम्बरज़ल छि मन्दिछनिये

१०१ आ. जामि वोज़िली कामदीव लोगिथ् दराव,
शामि छ़ाये रोगि - रोगिबागस च़ाव
पोशि चमनन् मुशक खु जारिये सोज़ि दिल म्योन -
बोज़ वनहारिये ।
छिस अवेज़ान त्रावमुति जुलफुकि ज़ाल,
गुलाब थरि वोलुमुत सोम्बलवनाल
मारि कीति अमि कालि शहमारिये सोज़ि दिल म्योन -
बोज़ वनहारिये ।

१०१ इ. तलि टारे वुछन् बुछस खु गीर कोरथस् मोर शीकारोहो
तीर लोयिथम् भुनि चारि चारिये सोज़ि दिल म्योन -
बोज़ वनहारिये ।
अथि नाज़ुक ज़न् छिस पोशिदस्ते कथि बोज़मस् मोदरि ति -
आहस्तए
दादि लदनि बलि बेमारिये सोजि दिल म्योन बोज़ -
वनहारिये ।

१०१ ई. यि कद चोनि ज़न छु पोशे कुल फुले बरजस्ति छस बिल्कुल ।

१०१ उ. काम्दीव सामानि पीरिथ् नेरि बा नाज़ो अदा ,
होश डलिना, अकिल नशिना आशकन दिल राविना ।

१०१ ऊ. पोशिमाल रोशि छसि पान पारावान मुशकि सुत्य होय -
तन नावान छस्
यारि सुन्दि मारि मोत सार छुमनि धावान यारस लरि पान -
सावान छस्
काम्दीव यार छुनि जामि मुशिरावान पोशनमालि करिनावान छस्

१०१ ए. मनि मंज़ गनेयम् राय चानी हाय मदनो,
छमिहा तम्बिलावान ग्राय चानो हाय मदनो,
हा लोलि चूरो दोलि वुछन् वानि न्यूनन होश ,
म्यति नो मंशी ज़ांह मायि चानी हाय मदनो ।

१०२. मसवल क्यु आयस टुकरि जिगरिक पेश कशी ह्यथ्

१०३. बे पै गोक नीरिथ् पानस बाल त्रो वथस् मंज़ मंदानस
हीय तन क्वा कैरथम हाये - पायि बंडि म्यानि यावन राये ।

१०४. हकीम यस् छि आसक् तंमिस् मोत करि क्या
सु बेमार ज़ाहं नो बलान ठाठि यारो

१०५. मंरि मन्दि क्रम चांन लोलि बेमरी
लगयो बाल् पंरि पंरिये
सुमि बालि लौसम् गुम् गोम जेरी यारस पंति लंरि लंरिये
रोज़ि ना साथा बोज़ि म्येन ज़ांरी
लगयो बाल् पंरि पंरिये

१०६. दिलदार वुक्रु आंदी बंविस् म्य दिलिक दंदी
तंनि क्रम म्य दिलस शांदी गम गुसह क्रलिम सांदी

१०७. यारस कद मन वन्दवो जू तं जान

१०८. अथि नाजुक ज़न् छिस पोशि दस्ते कंथि बोजुमस मोदरे तं आहिस्ते
दांद लदिने बंलि बेमंरिये
सोज़ि दिल म्योन् बोज़ि बन हांरिये

१०९. जुलफन क्रायि यिम् दुर तांबनी संति रंशि मंति मारां निये
बबुरि लंलि छिछि ज़न ज़िछि त्रावां नी सोज़ि दिल बोज़ दुरि
दांनिये ।

११०. गुम् शबनम् गुल-रोय बस ज़न छि अरक-दानि तस्
जूनि प्यठ तारक पकान कारि वंगिन दूरदान ।

१११. बूज़िथ कथि चानि दिल कु तम्बलानी होश कुनि डंजि रोज़ानिये
कम कम गाटिल अथि मूरानी सो ज़ि दिलबोज़ दुरि दानिये ।

११२. रोज़ू रोज़ू बोज़ू म्यनि ज़ार मदनो लोलि चानि क्षया बेमार मदनो
काछि ज़ून गा जिथस सफरस लो जिथस क्षोरमसा गाम शहारि मदनो
यारि द्रोद कुरुठ् प्योम शुरि पान ज़ायि मोम क़ुयि पति रोवुम् -
लो कचार मदनो ।

११३. दिलदारि दमाह् रोज़ ब्व अशकिन सफर वने
नंनि पंठि वने साफ वने सरबसर वने ।

११४. मंति रोज़ दमाह रोज़ि दरिम् चानि लोलेरे
श्रनि दार स्वनि सिंज़ि बिनगरि गरियम् चानि लोलेरे
ब्व हाल् वने बोज़ कने यारि मसं रोश
म्यु अछि पोशन मालि करियम् चानि लोलेरे

११५. रोय नाज़ होवुथ् दिल तम्बलोवुथ्
लंलि मिर जाने दिलबर म्याने ।

११६. यारि गंकु कनि दूरनुइं गोकनु लंदित यि लूरि नुइं
सोज़ यि महजूर नुइं रोज़ परान परान वलो

११७. दोनि दोनि ज़न शिनि मनि गजिस चानि अमारे ।

११८. शर हो क़ुलि ह्यम् पान्स् बेह्तो डबि डालान्स्
लंगयो सोरि सामान्स्
पोशे मति जानानो ।

११९. यलि चानि हुसनुक् शोहरि प्यव् बूज़ित् यि दिल देवालि गोव्
लारान व्व आयिसे दरहजूर्
दुरदान् मो ह्यम् दूर् दूर्
आकि नज़रि आशक् मारि व्व बेचार् ज़न् असमान् प्युव्
लोल् नर् वदनस्न् कोरसु सूर्
दुरदान् मो ह्यम् दूर् दूर् ।

१२०. क्वो रिन्दो क्यु कोश्थम् क़ल वलो मो चल् वलो मोचल
व्व कोरनस मारि अंशकन चंनि व्व कंरिनस खार करम् लंनि
प्यु गंयिमो यारि चंनी कल वलो मो चल् वलो मो चल्
अशे कनि खूनहारान क़ंसि मस खंसि बरिथ् परारान क़ंस्
क़सां मो खास यम्बर ज़ल वलो मो चल् वलो मो चल्

१२१. क्य ति ख्वजिबायन क़ा बराबंरिये क़ागुलन सूत्य दिलबंरिये
ख्वजि बायि त्रवपरित् दारि तं बंरिये ग्रीस कूरि नाज़नीन सोन्दंरिये

१२२. गंहनि कनि पोश् क़ी तनि जंरि जंरिये गंरिमित कंमि ज़रगंरिये
पां री लगिज़ि अथ कां रीगंरिये ग्रीस कूरि राज़नीन सोन्दंरिये

१२३. होश डलिना अकल नशिना आशिकन दिल राविना ।

१२४. लोलु क्रूरो म्योन दिल छ्रिं जान छ्रिं जानानिछ्रिं
राहज़न् छ्रिं , राहनुमा छ्रिं राब्तुक् सामानि छ्रिं

१२५. शोकि चानि पान्स कंरियोम पराव मदनो अदिनो ह्युतुथम नाव
ज़ाय्यि गंयि मंज़िनम तं माहरयनि तोन व्यु नो ज़रि मदनो दूरयर-
वोन ।

१२६. दिलदारि चोनुइं कुम् ह्वस् क्स मंसतसर वंन ।

१२७. वंति प्यठ क्लुहम् त्रंविथ जिगरस् आमताव् थंविथ
यिम् दंदि कंसु ह्युकि बंविथ्
पोंशे मति जानानो ।

१२८. जलव हंविथ् तंम्बि लंविथ् दूरि त्रंविथ् क्लुहमो
आरि रस्ते यारि लगयो खारि थंविथ् क्लुहमो
कोलं रसत्यो दोलि वंक्नन् चां न् कोरनम् होल मे
सं ति वंरिशे लोलि वंलिंजि कति रां विथ् क्लुहमो

१२९. खून गोम जां दी ओश हंरि हां री फलि फलि गोमा मंसतिहार
मदनो
नज़रे चानि सूत्य बेमार बलियि कूत्य प्यानि विज़ि लोगुथ बेजार-
मदनो ।

१३०. बंदरद जफा कारो बेआरि सितम गारो
पथ फेरू दिलाज़ारो मो कर छि दिला ज़ा री
कोति नेरि स्याह सर क्स बे पं बे रहबर क्स
अन्दरि ह्यथ व्यु शर क्स लोलिव क्स बंमारी

१३१. गोसि क्या गोहं रसि दसि ह्योथुथम् दूर चेनि दूरिरन वदनस -
कोरनम सूर
कंति लांजियो क्यु दिलस ग्राय् मदनो वंलि करयो लोलु मंति लाय-
मदनो ।
पोशि बागस दोह तारि मारयोम क्होह पोश बंरि गंम् हारस -
सपनुम् थोह
सांरी अरमान म्यतिनो दराय मदनो वेलि करयो लोलु मंति लाय-
मदनो ।

१३२. छि क्षायि स्दुक व्व ज़ायि कंरथस रटुथ मलाले वनुहं क्यु कंमिक्या
व्व दंयरि क्यि थंथ् करान गदांहं व्व नो जुदांहं ज़ंरे हो लालो ।।

१३३. सोज़ बोज़िनी पानि यियीहा बोज़िहा म्यनी वदाक
शोकि सान दिलकिस रबाबस तारि लो लिव चारिहा
वदनि सूत्य तेसीर गछ़िहा योद तंमिस् संगीन दिलस
रात दोह पनिन्यव आक्ख् किन खूनि बारान हारिहा
लोलि सांखुनन क्या सना दिन् तोरि `महजूर स` जवाब
रोज़िहा व्वति इन्तिज़ारस बोज़िहा क्न दारहा

१३४. दूरयर यारि सुन्दकुम वंदि नावान बुकि बुकि आबज़न त्रावान क्ख् ।
लुकि पामि बदनस ज़ंदि करिनावान पोशन मालि करिनावानं क्ख् ।

१३५. अशकन करिस बदनामो करयख् गंयि शहरि तं गाखो
पितरयनि क्ख् दिवान पामो
पोशे मति जानानो

१३६. छि कंम्यो स्वनि म्यानि म्रमदिथ् न्यूनसो
छ्यु कि होज़ि गयी म्यंनि दिहं ।

१३७. खबर छा दुश्मनो क्या क्या वंनुहं म्योन
दिलस मंज़ पंदि कंरि हे बदगुमां नी
यिमे असि म्येन दुश्मन चंनि बदख्वाह
बनेमित आज़ तिमे चंनि यारि जां नी

१३८. क्वो छुक् छि त्रां विथ् छलान् टाठि यारो
क्वो छुक् छि वादस् डलान् टाठि यारो ।

१३९. म्यु लियि लोसम् वुछान वते सु कस पते गोम
तंमि गरखि - दरियाव करस्स ब्व ते सुकस पते गोम

१४०. तहराज करिथ् मुलिकि दिलस गोख खानी
कह म्यानि लसुनुक चारि ब्व को तु लारि अतीरोज़

१४१. त्यखि त्यखि ग्रांव हा सोज़े हा ब्व नो यिम बहान् बोज़े
दंवार गीर हा रोज़े
पोशे मति जानानो ।

१४२. दां दि अन्दरिम बावि कस ब्व, पारि छिम मां मित दिलस
की नि छलिस्स पानि बुछना सीनि म्योन मुछि रावि ना
सोज़ि अज़ 'महजूर' यारस नामि लीखि खूनि सूत्य
थावि ना कन वाति दादस लोलि न्याय अंज़रा विना

१४३. हा गुलो तोहि मा सं वुक्वोन यार म्योन
बुलबुलो तोहि क्रांरितोन दिलदार म्योन
वंनि दिवान पोशन प्रिक्रोम यम्बिर ज़लन
आव मा तोहि कुन सु जादूगार म्योन

१४४. बाज़रन क्रांजोम स्यठाहन व्यथि प्रिक्रोम सोदागरन
उलफतुक सोदा कुनुन हारन तं दयारन आसिमा

१४५. फीरिस् जंगलन कोहबेबालन हैरान गयस् बेरानन मंज़
क्या-२ व्यतिरोव यंमि म्यंनि पानन जाय तंमि रंटि परिस्तानन मंज़

१४६. लांनि न्यक्रिंतिरे सात वुक्नोवुम करसनाम्यति तस् गक्रि मिलिक्रार
बुल गव ज्योतिशिस हिसाब रोवुम कंमि रोशनोवुम पोशि मोतयार

१४७. यारि दादि वंक्रिस् निशि मस्तानन् दशि म्यु गंजम अस्तानन् मंज़
नेह गटि क्रोरूम पीरिस्तानन् जाय तंमि रंटि परिस्तानन मंज़

१४८. क्या सना यीना सु दिलबर रोयं ज़ेबा हाविना ।
सीनि ज़ोलुम लोलि नारन कीनि म्योनुइं त्राविना ।।

१४९. तस पति लारान लूसिम पाद खसिवुन यावुन गोम बरबाद
संगदिल यार बेवार कोतुइं गोम दिल करार ठोठ मदनवार -
कोतुइं गोम

१५०. यंमिस लोलि शमशीरि कर पारिपारं सुदिलचाख बरखाक
त्रावुन खा क्रा

१५१. खटित रुदुक मदनवारा बदन् म्यु ज़ोलथम् नारा
वदन क्रस् चानि अमारा यि दिल कर शहले बोम्बुरो

१५२. `महजूर` वंनि दिवान यारस् बेवफा बज़ी गारस्
दंपि तोस कूत् काल परारस् पोशे मंति जानानो ।

१५३. वलो लो लि ज़खमन म्यु कुम खून जा री
रठिथ नालि मति खून मटि खारि नावे ।

१५४. दूरि हाव् कूरि नूराने त् लोलो - जान क्या कुक किं जानाने त् - लोलो
बरतल् रसूलमीर रूज़िथ् मुन्तिज़र - रोज़तस् मेहरबाने त् लोलो ।

१५५. गछि कुठिनुहँ थावे वथरा विथ् लछि नाव्यो मन्दोरि सानि व्यह
अछि दरि ज़न रोज़े परा विथ ज़ोलि कम नि सोन्दरे सोन्दरे
लालि गोमे बागि मंज़ि नीरिथ् पोश लागस् गोन्दरे गोन्दरे
क्यिहँ नि मंगस यियम्ना फीरिथ् ज़ोलि कम् नि सोन्दरे सोन्दरे

१५६. दूरि रूज़ित कूरि कंमि न्यू म्योन दिल
थूरि व्ययि अनितोन म्योन नुन्दह बोन दिल

१५७. बहाना कांह् तंमिस वनिहा मगर पनिनिस दिलस वंनि क्या

१५८. लंलि मंज़ व्ख करे गूर् गूर्
दुरेदान् मो ह्यम् दूर दूर
पोत जूनि दरायक यार् बल हुसनिच् कमन्द् ह्यथ् दरबगल्
फन्द् अकि बन्द गोव् लोल् कूर्
दुरदान् मो ह्यम् दूर दूर

१५९. अछ् म्यु लोसम वति वुछानी यक्काल मोम प्रारनिये
अशि कनि कुस व्य सून हारनी सो ज़ि दिल बोज़ दुरिदानि ये

१६०. डीशिथ्ं चशमि चानि प्रम कु लारानी यम्बर ज़ल छि मन्दछानि ये
गटि मज़ गाशहाव फेरि जिन्दगानी सोज़ि दिल बोज़ दुरिदानिये

१६१. नुन्दबानि दिलबर म्यानि व जिथस माथि वने क्या
हीमाल के रथस ज़ामि नगिराय वने क्या ।
कुम आरि वलि हिन्द पठि गोमुत् पारि बदनस
का स्तूरि रूदुक दूरि वनन छ्रायि वने क्या ।
दानि दानि ज़न शीनि मनि गाजिस चानि अमारे ।

१६२. दूरथर क़ालुन नारिपान ज़ालुन
कुम ड्यकि लाने दिलबर म्याने

१६३. वुछुमखा दूरे दूरे सन गोम् स्वरगिचि हूरे
छ्स्वदान् छूरे छूरे पोशे मति जानानो

१६४. अति रोज़ू कथा बोज़ू मदनवारि अति रोज़
दिलदरि म्यु कुम् सारि वुछ्रत वारि अतीरोज़
मो रोश म्यु मो रोश व्य नो क़ालि जुदाई
करि जान फिदा पान पनुनई मारि अती रोज़

१६५. करायो मंज़ जिगरस् जाय् म्यु नो माय् मंशनी
बदन म्योन् अश किन क्राय तथ् मंज़ वन्दि तु लिथ म्यु
दूदुम सीनि कलम नि वाय म्यु नो माय मंशनी

यि कंमि यॉरि देवी राय रटुथ च्योन मलाले
लंगिने कमि रंशुन आय च्यु नो माय मंशनी

१६६. कुम जंरि यिवान पानस लारे पति जानानस
क़ारन प्रथ दूकानस तेरस् मंज़ बाज़ॉरी

१६७. द्रंपमस दमाह कि रोज़ुम कथि तारि वारि बोज़ुम्
द्रंप नम च्यु बोज़ि कोथाह गावन शुमार आस्या

१६८. बालियार नीरिथ गोम बॉलि बॉली
क्सी हावि यावुन बॉलिये
करि क्या बालिपान कोरनम कोसम वुबॉली
क्सी हावि यावुन बॉलिये

१६९. व्यसिये आदिनुक् यार कोतुहं गोम् दिलकरार ठोठ् मदनवार -
कोतहं गोम्
पोखति कार यार मोखति हार कोतुहं गोम दिलकरार ठोठ् मदनवार
कोतुहं गोम्
तेज़ पंकि पंकि क्या हॉसिल आम मंज़िलस वातिने सपनुम शाम
चिकि चाव रोवुम लॅ कुचार् कोतुहं गोम दिल करार ठोठ् मदनवार
कोतुहं गोम ।

१७०. बॉलिये ह्यस् त् होश ह्युं रोवुम कंमि रोशनोवुम पोशिमोतयार
कंमि नशिरोवुम् कंमि वरगिलोवुम कंमि रोशनोवुम पोशिमोत यार

१७१. वॉले व्यसि गक़ावे कामे यर् ह्युं कंरनस थामे

गांजनस् तिलांजनस् पामे पोशे मति जानानो
वांले व्यसि गछ्वें वन तें तस् करि बयनमकनूत्
करसना व्यथि डेशन तें पोशे मति जानानो

१७२. कति लंगु करार यारस कर यियी सु पथ शहारस
रोज़ स छ्व इन्तिज़ारस सोज़स सलाम यियी कर
भ्रम दिथ् छ्लुम सुहांछ्ल करनस बर् यम्बरज़ल
कंति व्यूठ् कंमि कड्सकल कति छ्वस् मुकाम यियी कर
वंनि छ्वस दिवान छ्वंपरी यियी ना सना यांपेरी
कदमन लंगस्त छ्व पंरि सु छु दूरि गाम यियी कर

१७३. व्यसिये क्या मला लि ल्ट जानानन् जाय तंमि रंटि परिस्तानन् मंज़
दिलि कुइं हाल क्या भाव् गंरज़ानन् जाय तंमि रंटि परिस्तानन् मंज़

१७४. करि क्या व्यसिये लांनिनिस् न्यायस् यावन रायस् छंनि म्यंनि माय
यावन रायस् बेपरवायस यावन रायास छंनि म्यंनि माय

१७५. बंलि वनतस् नेरि संरस फेरि बज़ म्यान्यन् वतन्
तंलि यिया यलि आसि खाक्स् मंज़ रलेमिछ म्यंनि तन्
रावस छ्व छारयम कपांरिये नावस छ्व लग्सि पंरि पंरिये

१७६. म्योन करि यियी सालि चश्मन मंज़ कंरस् व्यहनुक् मुकाम्
शूमि दरश्न दारि प्यठ् शहानि तंमि सुन्द इन्तिज़ाम
हावस पंनिन खानि दांरिये नावस छ्व लग्सि पंरि पंरिये

१७७. राज़दार नाज़बरदार कोतुइं गोम् छिलकरार ठोठ मदनवार कोतुइं गोम्

१७८. वनति व्यसिये कोरकुन लागोन दिल
दुंप म्य यारस म्योन् दिल करतन कबूल
तोरि दुंपनम लोलि होत कुनि चोन दिल
यारि दादे दिल कु तड़पान दम-ब-दम
लोलि क्सि सीनस अन्दर ललि बोन दिल

१७९. वनति ह्ये व्यसि बेवफाइं शेवये दिलदार का
नाज़नीनन् महजबीनन् कतलगारत कार का

१८०. व्यसिये सु म्योन दिलबर शीरीं कलाम यियी कर
यस कुन वंछित क़ुलान शर सुइं गुलि अन्दाम यियी कर
यियी ना सु यार म्योनुइं क़लि ह्यु म्य जूनि ग्रोह नूइं
वन्दस्स कबोलि क्रोनुइं रोज़स गुलाम यियी कर

१८१. लोलु नार पानस गोन्डुनम ह्यरिव्वन् अमि नारि सरतलि -
सपनुम् स्वन्
व्यसि क्याज़ि आसम व्यसि रावान् मारिमति वारिवति लाग -
म्योन पान

१८२. यनि रूशिथ् वपरन निश गोछम तनि व्यसि तं सोन्दरि गेलान छस्
लुकि पामन थावथम जाय मदनो वलि करयो लोलु मति लाय मदनो

१८३. रंगि रंगि छख ति दंदि क़ालान आयस लोलस छस करान लोलु मति-
लाय्
`महजूर` सुन्दि पंठि नादालायस यावन रायस छनि म्यनि माय ।

१८४. दावस व्ह लांजिस् बालि मांरिये नावस् व्ह लग्गिसे पंरि पंरिये
थावस व्ह प्यालि बंरि बंरिये नावस् व्ह लग्गिसे पंरि पंरिये

१८५. व्यसिये व्ह वंजिनस माये लोल आम्यियम् नाये
कंस् बावि तस् क्या गयी वनन् अहवाल कंरितोसे कनन्
सोन्दर व्ह करिनस् ज़ाये लोल आम् यियम् नाये
कंमि स्वनि द्रप नस् दाये लोल आम् यियम् नाये
मोह नारि वुहंवुहिन ज़ाजिनस खामन व्ह पामन लांजिनस्
कोत गोम् बेपर वाये लोल आम् यियम् नाये

१८६. ओश गोम जांरी याम क्यतस पियोम् सु जानान
व्यूठ् नावि अन्दर पानि म्य संहलाब अनिथ व्ह ।
भ्रम दिथ् म्य न्यूनम सबर तं आराम दिलो जान
कथ जायि थोवुन क्या सना कंमि वानि किनिथ गोव् ।

१८७. आदनिचि कथि याद पावान पावान दिल म्योन रावान् रावान्
गोव्
लोलु संर वनन् कन थावान् थावान दिल म्योन रावान् रावान्
गोव् ।

१८८. क्यतस् पाव आदनिक् तिम् वंदि सांरी
तिम् आंस्या वादि किनि आंस किसि ख्वानी
व्ह क्स् दोह सोति दोह सपनान् पामाल
यि क्स् अमि लोलिचानिच् महर बांनी

१८९. फना क्यु पथ कंरिम म्य ज़िन्दगानी
म्य दोस्त सांनि बन्दूकन तं तोपन
क्यु मा रुजुह क्यतस् म्यनि जानफिशांनी

१६०. बेमार पेयस् मारि गेयस् नारि दज़िम तन
ज़ांह नो क्यह् वोनुथम क्या गक्वी बेमारि अतीरोज़

१६१. नज़रे रोज़स् त्यखि त्यखि सोज़स् पैगाम अथि कावस्
तेमि कामि दीवन ज़ांजिनम लोलि तन दोह अकि याद पावस्

१६२. यारि सिंज़ि कथि क्वस् वारि याद थावन द्न् बुठन जांहति कर -
बावान क्वसि

१६३. गंजिम् वारि हन् हन् स्य अमारि चाने
मगर लोलु नो कुम् गलान ठाठि यारो

१६४. योद यारि खाक्स अन्दर रोज़क यिवान बराबर
अदि चानि दूरि क्वक ज़र संन्दारि वारि वारे

१६५. पूशीदि थांवि थांवि दराव फटिथ म्योन अन्देरि महाल
यिथि पठि पोश्स सीनि क्वटिथ मुश्क न्युबर दराव

१६६. योद सोरि श्रावुन वावि हरदिनि पोश त्रावन रव
हर दस ति यति क्वनि पायिदारी वारि क्यतस थाव

१६७. सोम्बुलन हिंज़ याविगी यम्बरज़लन हिंज़ नाज़की
बुलबुलन हिन्द मीठि आलव तस् मदन वारस निसार

१६८. हर दिक बावन डोलुम होश कलि गई कोस्तूर बरि गई पोश
फलुवुन हार नवबहार कोतुह गोम दिलकरार टोठ मदनवार कोतुह
गोम

१६६. आव लोलु श्यचि ह्यथ् वाव् सुबहुक क्वाव चमनन् मंज़
कोक पोशि लंजव ल्वुन नमित इकरार मोहक्त

२००. दिल तंम्बिलावान जल्वि हावान् आसा बहारों ।
मशि राविमछि क्लहि याद पावान् आसा बहारो ।।

२०१. बुलबुल लांगिथ् अछु लोलु बागस् छावान लोलुक बहार
लोलुक सबज़ार लोलुक आबशार लोलुक वथान फंव्वार
लोलि कुल्यन प्यठ् लोलि सान बोलान लोलुक जानावार
लो लिच् आवाज़ लोलुक परवाज़ लोलस पथ करान निसार

२०२. कंमि लोलि दरायस शोलि मारान कारतिकिच जून
यावुन हा कोरथम ज़ायि खम् छाम कारि गुलाबो
मस खंसि हुयि हुयि मायि चाने आयि यम्बिरज़ल
बेमार चशमो छुय वुछान तंलिटारि गुलाबो
अमारि चाने फिर म्य वरख लोलि किताबन
बंरि बंरि हा थांव्यिम् सीनिच्य अलमारि गुलाबो

२०३. यम्बिर ज़ल लांजिनस दावस गुस हैरान छु कस वनि क्या
दयान छस सुबहिकिस वावस बहारस शबनमस वंनि क्या
बहारन सूज़नस श्यछि हयथ् दवान मंज़िल छ टिथ आयस्
बहारस छुम नि यंति रोज़ुन छु हारस श्रावनस वंनि क्या

२०४. सुलि बाग वंस वुछ होशिसान- पैराव कुस् पोशन करान्
फंलिमित छि पंतिमे प्यारि गुल - कर बुलबुलो दीदारि गुल
पोशन छु कंमि सुन्द इन्तिज़ार - कस क्युत चमन सपदान तैयार
थंरि प्यठ् छि गंमित तारिगुल - कर बुलबुलो दीदारि गुल

२०५. बागस् अन्दर वनान छस् अहवालि दिल गुलालस
कंवि ज़ानि रो बरोतस वनिनस म्य वार आस्या

२०६. सोम्बुल यम्बरज़ल तुं गुलाब दोन् पोश शूबान बाहिसाब
क्या खुशनमा तुमारि गुल - क बुलबुलो दीदारि गुल

२०७. यम्बर ज़लि बरि बरि थावि पेमान् बोम्बरो सानि महमान् रोज़
दीदन मंज़ कसे जाय शेरान् - - -

२०८. रोशि रोशि दरायक बागि बन्दरिये पोशो कनकुय माबरिये
बुलबुल करिथक कलि तुं ज़रिये ग्रीस कूरि नाज़नीन सोन्दरिये
गहनि कनि पोश की तनि जेरि जरिये गरिमुत कमि ज़र गरिये
पारी लगज़ि अथ कारी गरिये ग्रीस कूरि नाज़नीन सोन्दरिये
दजि प्यठ् बुकमख थोदतुलिथ नरिये लो-लो करान लोलरिये
नरि मा लोस कूर करि करिये ग्रीस कूरि नाज़नीन सोन्दरिये ।

२०९. शबनमन मसतिहार व्येरि वानि कोर त्यार
कमि शोकिश्यानें - दिलबर म्याने

२१०. प्रारस पोल्स् ति मागस् चमनस अन्दर व्य ज़ागस
द्यवि गुल फलन म्य बागस दुबारि वारि वारे

२११. पोशिनूल पोशि वारि मंज़ व्यहनोवुम् होशि सानकोर तमि हाल - हज़हार
पोशि वथिरन प्यठ् ती त्य सुनोवुम् कमि रोशिनोवुम् पोशिमोत मार्

२१२. लोलि तमसिन्दि बाग शूकम थाविमस बरि बरि चमन
नाज़ परवर बाज़ यीना हीय तुं मसवल छाविना ।

२१३. बुलबुल कु बरान चाव किथिर दराव बहार आव
तोशान कु सोन्तुक वाव कमिस्तानि कु आव आव

२१४. सलि मति सिहं हुँगि पारावस् मलि वुछन्ये निमन् अछिबल्
लोलु मस् खसि बरि बरि थावस् सर त्रावस् पादन तल्
यूस मरगिहुन्द सबज़ार हावस् वथरावस् फर्श मखमल्
नीलि नागिचि गिलि बोलि नावस्त सर त्रावस् पादन तल्
पान क़ादरि चशमि अथि त्रावस् मंशिरावस निशात अहरिबल
व्यथि क्या कुम् तीथ्यकिनावस् - सर त्रावस् पादन तल

२१५. संयन्दि बठि बठि ने वायि नावस् नाव क़ानस मानस बल
वदि आदनिक तंति याद पावस् सर त्रावस् पादन तल
आंरिगामक्षि आरि हवावस् 'महजूर न्यन्' बोन्यन् तल
थियी दिलबर हीय व्व वथिरावस् सर त्रावस पादन तल ।

२१६. कामि दीव करि संरिडल बूजुम शब्स गंछि तेल-बल
दरशनस आब्स अन्दर पम्पोश लांगिथ परारहा

२१७. संरि डलुक कु. वुछ बहार बागि निशात् व शालमार
चशमि जु. थाव है त्यार तारि तरान तरान वलो

२१८. छल करित् चुल छूरि हांछल वनि दिमस्त परिये-महल
बडि-डल् छा तेल-बल् छा बागि-शालामार छा
छस् वदन् ज़लिथ् बदन रोवुम् मदन चुल सरहदन्
परंग् छा या दरंग् छा या बरंग् छा कुटिहार् छा

२१९. लालि म्योन मंज़ शालिमारन सूत्थि यारन आसिमा
जलवि हावान सबज़िज़ारन आबशारन आसिमा

२२०. हा गुलो तोहि मा सं वुछुन् यार म्योन
बुलबुलो तोहि छांडितोन् दिलदार म्योन

वंनि दिवान् पोशन प्रिक़ोम् यम्बरज़लन
आव मा तोंहि कुन सु जादूमार म्योन

२२१. आमुत कुंडल बरजोश फोलिमित छिस् पम्पोश
ज़ीठि यांरि रटहै नाव गुप कारि दरशुन हाव

२२२. अंजि रंछि व्व गरे दरायस वंनि दिनि नंगीरायस्
लंनि ज़ालं बलंने आयस्
पोशे मति जानानो

२२३. यीना नांगिराय दरशन दीना- हीमाल हाल बावस

२२४. तमना चानि दीदारूक न्यु कुस् यम्बरज़ले बोम्बुरो
फोजिस् यामत लंजिस् वुक्ने गजिस् चाने कले बोम्बुरो ।

२२५. रूशिथ् हा रूदुक् आफताबो क़ायि अबरस तल
बुज़िमल हा दज़िस् वारि लो लिकि नारि अती रोज़

२२६. क़ुलुहमा रोंगे रोंगे सन्यास लागे जोंगे
मांस् हा व्व चानि होंगे
पोशे मति जानानो

२२७. क़ाक मेनिस् लोलि बागस्त दराख तहराजा करिथ्
होश न्यूथम रोशि रोशे पोश क़ोविथ क़ुलुहमो
हियिथरि ज़न् बरि करथस् लोलि नरि ज़ जथस्
सोसि नांविथ अन्द मज़ा रस् वाति नविथ् क़ुलुहमो

२२८. रंगि रंगि फोलिमित वारि गुल - कर बुलबुलो दीदारि गुल
रंगि वारि लोंग दरबारि गुल - कर बुलबुलो दीदारि गुल

२२६. चमनस् अन्दर क़ुटिल पर त्राविथ क़्लुम् सित्मगर
यिथि पठि खस्ति गोमुत कांह जानवार आस्या

२३०. पान ज़िन्दे ज़ालनुक् वोत् पोन्परिस् परवानि चोन

२३१. गुलव म्यानि अशि वानि करि जामि रंगीन
रंगक जामि कमि वानि योदवे ब्रु रावे

२३२. ग्रावि करिहा सोन्त क्सि् वावस यिनिचानि फोल होलमुत उल
चारि करिज़िहे म्यनिस आमतावस् सर त्रावस पादन तल्

२३३. क्स् जुलेखाँ वति प्यठ लांगित माय शाहयूसुफ यथिना यावन राय
ब्ययी वकि लटि गछि मिलि क्षारो नव बहारो म्यानि लकुचारो

२३४. तुलरे हिन्द पठि फीरिस क्षमरी व्यूर म्यु अनुमे क्षुरि क्षरिये
सालि यिति ब्रु करे प्यालि बरदारी लगयो बालपरि परिये

२३५. योद सु दिलबर मरशि त्रावित स्योद म्यु कुन करिहि नज़र
श्रावनस् ज़न हीय ब्रु फलुहा यावनस क्षोह मारहा

२३६. मो गछ् छि खामन पथ् जुति न्यन छि मोमार गथ्
शमहस् छि लोलु बंगराव पोखति कारि दरशुन हाव

२३७. बागि निशाति के गुलो नाज़ करान-२ वलो
खन्दि करान करान वलो मंखति हरान-२ वलो

२३८. प्रक्षारान चमन छि गुल हयथ् कर यियी सु लालिमस चथ्
यम्बरज़ल अथन क्यथ् बरि बरि छि जाम यियी करे

२३९. छिनि रेशि मत्यन् सूत्य रलान दादि लद गमगीन
मंज़ पोशि चमनन् रटि नं तवे जाय गुलाल्न

२४०. संगदिला सित्मगरा रहम क्यु कुहंना अक् ज़रा
ज़ायि गंयस व्य सोन्दरा माइं बरान बरान वलो

२४१. मंन्दि क्यांविथ् अन्दि त्रांविथ् पाम्नि थांविथ् क्यलुहमो

२४२. खंटित पान थोवुथ क्यंटित् परदि नेरे
बरस तल पनुन पान मांरित व्य त्रावे

२४३. कशि सान लोयुथ नेज़ि म्यु गयी रेज़ि जिगांरस
बे आरि कीना वारि दिलाज़ारि अती रोज़

२४४. रंटुनम बहानि तुं हिथ पंतु जूनि गोम नीरिथ्
होवुन नुं रोय फीरिथ न्यूनम् अराम् यियी कर

२४५. म्योन बालि पान खसिवुन यावुन् म्योन तम्ब्लावुन ति आदि -
मशिरावुन चोन
कोना क्युइं दानि म्यनि माय मदनो वला करियो लोलु मंति लाय
मदनो

२४६. खानि म्योन बरबाद व्य आबाद आंसिन खानि चोन

२४७. मारि मंति आवारि करिथस चारि म्योनुइं कं राज़िहे
रोशि यिज़हे उलफतुक मस लोलि खास्यन बंरज़िहे
खस्ति दिल म्योन बूस्ति गोमुत लोलु किस ज़ालस अन्दर
क्या तमाशा वुछिनि यिज़हे अक्ख दमाह राविर ज़िहे ।

२४८. क्युदुम नि पानस पंठि इखतियार तस पंति दिल गोमयुस कुबेवार
ज़ोरावार म्योम अज़िले लोन व्य नो ज़ंरि मदनो दूरियर चोन

२४६. लोगमुत तमिस् कु परमस् क्या ताम म्योन वनुह्स्
नति वनति बे सबब तस् चशमन सुम्मार आस्या

२५०. कम्यु स्वनि दपुनै दाये पथ् वनि रठथम् जाये
रूज़यी ना दान् म्यन् माये पोशे मति जानानो

२५१. ज़ालिथ् म्यु बदन गोक द्यपुथ् कांसि म्वन हाल
बेवायि बेपरवायि यावन रायि वने क्या
कमि म्यानि पित्रिनि कन क्यु बरि म्यनि मठी माय
प्रथ साति पोकुक लूकि हिंज़े राय बने क्या

२५२. छि म्यान्यन बदखाहन सूत्य् जोरिमारान्
ख्व क्स् लल्विान वनितिम् ज़ख्म् प्रानी
रात्र नालान मंत्र सारी परेशान
शुब्या येक् लोलि शहरस हुक मरानी

२५३. छि यारन सूत्य् क्होह मारान ख्व तनहा सूनिदिल हारान
दोहस कोत नरि क्स थहरान् वनि क्वांडत रातले बोम्बरो
क्यु क्स् सूत्यि गयी साज़िश दोयिम् क्वा ब्याक कन्हा म्यु हिश्
छि म्याने रशकि पानस निश रटुक कमि मसवले बोम्बरो ।

२५४. पनिन्यन् क्यु थोवुथ् वदि ब्यूठुक ज्यादि परद्यन मंज़्
वन तो छि कोकुन त्राय चानी हाय मदनो

२५५. दूरवर् यारि सुन्द कुम बदिनावान बुकि बुकि आबज़न त्रावान क्स्
लुकि पामि बदनस ज़ादि करनावान पोशन माल्लि करनावान क्स्

२५६. तस कोनि दिलस नमी यत्नपथ म्यु तुजिम ख्वारी

२५७. सादि आंसिस वंदि हुय म्य उलफतुक सोदा करम्
राज़ थांवित् बाज़ ख्यांवित गाटि पांवित क्लुहमो

२५८. म्यानि कुनि कथि कुइं नं बावर रहमि निशि क्लु बेनियाज़

२५९. लालि यियी सालि क्लस् प्यालि बरनावान पोशन मालि करनावान क्लस
शालमार गोशन क्लस वथरावान- पोशन मालि करना वाने क्लस्

२६०. शाद सपनुम दिल म्य बुज़ुम सालि यियी अज़ बालियार
मारि मंतु खुमारि हंतु सुइं म्योन दिलबर दिलकरार
वाव सोन्तुक पोश वथुरन बागि क्यन क्करान क्लपरि
कामि दीव यियी शामि पंति सुलि बंगिरांवित इशतिहार

२६१. नेह गटि गोस बेदार् कनन् कंतिजि बोलुन गोम
ज़ोनमु म्य वंन्दि सोरयोव परतव त्रोव सोन्तकालन

२६२. बालि यारस गाश वन्दिनावस् सर त्रावस् पादन तंल्
वछि वंलिंजि हालि दिल बावस सर त्रावस् पादन तंल्

२६३. क्लय क्लसु आरि-वलि दोह गुज़ोलम कण्डयन प्यठ्

२६४. कन्दं तंय नाबद अंलि सुपारी थावस् चन्दि बंरि बांरिये
यियि ना व्लु करस् बन्दि बरदांरी लग्यो बालु पंरि पंरिये
'महजूर' कूत् काल करि इन्तिज़ारी यक्काल गोस प्रांरि प्रंरिये
बेआर लोगुस तम् मदन वेरी लगयो बालु पंरि पंरिये

२६५. बालु प्युठ् बालु क्लस् प्रहारान् अशि कनि खूनक्लस् हारान्
यारस मार मटि खारान् पोशे मति जानानो

२६६. योदि यियी बालयार व्लु करस जु निसार ब्दुमुत सी निहावस ।

२६७. लॅल्विन म्यु छुम चोन लोलु छ्क् मंस् हावतो मारे मत्यो
यिनि चानि छ्लिनम गम ति दंख रूख हाव तो मारे मत्यो
दिल म्योन गंडि भ्रमरो वथन पति क्याज़ि दावस लोगथन
वंदि आदनिक लोलिक सोंखन याद पावतो मारे मत्यो

२६८. आलवन म्यान्यन छुनि तोंसीर चानि मिलि छ्रूक क्या छु तदबीर
वन्तो छि किथि पंठि सपनक् म्योन् व्य नोज़रि मदनो दूरथर चोन

२६९. वलो लालि रोयो दिलुक दाग हावे
वलो सालि मस प्यालि बंरि बंरि व्य थावे
वलो वंदि कंरि कंरि करिथ बेवफाइँ
मोठुइँ आदुनिक सिर व्यन क्या याद पावे

२७०. मलालि त्रा विथ् छ्यु सालि यिखना व्य प्यालि मसि की बरे हालालो
खयालि च्याने म्यु दिल छु लोशान व्य मालि पोशन करे हालालो
नसीमि बूजुम छ्यु बालदामन कमन्द ह्यथ छुक शिकार छ्रारान
व्य शोकि चाने शिकारि अन्दर् पनुन यि सर ह्यथ तरे हा लालो

२७१. ज़ार वनह्स् आर अनह्स् यार यीना बरकरम्
माथि बरिना रहम् करिना बख शिना गुज़रा विना ।

२७२. कूरू चारि वंलि वंलि मारि मत्यो म्यानि जनूनुक्

२७३. बावि कंमिस व्य यिम सितम मारिमत्यो छि बोज़ तम्
होलि गजिस् व्य दम-बदम् लोल हरान हरान वलो

२७४. यि खना हालि दिल बावे ह्दुमुत् सीन् हा हावे
त्यलि यिख यंलि व्य रावे पोशे मति जानानो

बालु प्यठ् लाये नादो । पथ फेरु, हा शहज़ादो
मो क़ल् ग्वडु पाल वादो पोशे मति जानानो

२७५. अंति अंति रोज़तो जुइं कथि बोज़तो बालि कुम चोन हावस

२७६. राधा म्यु निश बरखना साथा छि रावरावना
ज्यकि मिछ्रिथ करखना कंथि तारि वारि वारे

२७७. लंलि नावुन क़ायि थावुन ज़ाहँति कर त्रावुन थिलोल
पोशि खोति कुम ज़यादि आंव्युल जानि खोति यक्क मलोल

२७८. लोलि नार किस दज़ि बुनिस अलावस खसि आशक त् दज़ितस मल

२७९. यारि सुन्द् मारि मोल् सार कुमनि थावान
मारस लंरि पान सावान छ्स्
कामि दीव यार कुनि जामि मंछ्रिरावान
पोशन मालि करनावान छ्स्

२८०. छि बागस् जानवर बोलान् मगर आवाज़ छ्कि व्योन व्योनि
यिहिन्दिस् आलवस् यारब अस्सर यक्सान् प्यंदा कंरि

२८१. छि हस्ती पोशिवुनि मस्ती खराबी बेखुदी पस्ती
खुदी हिंज़ तोप लांयिथ् बेखुदी हियुन्द किलि पावुन कुम
अमीरस अंशि त् शांदी गरीबस खानि बरबांदी
मिथिस् मगरूर आसन वांलिसुन्द नावुइं मिटावुन कुम

२८२. दुबारह आलमस मंज़ कांशिरिण हुन्द् नाव गछि रोशन
छि लत्तादत त् तांज़ी बट्ट मुबारक खान प्यंदा कंरि

२८३. धर्म तुं मज़हब ईमानदारी पथ् कालि आंसि यंति जारिय
तथ बदल अज़ छि यंति ज़ोरावारी काढ़ि जूनि बोज़ प्यनि ज़ारिये

२८४. कांशीरि हिंज़ बहादुरी ताज़िबट्टिन सिपाहगरी
शिकस्त फोज अक्बरी याद यिवान यिवान गंछि

२८५. कारू बटस पथ् जूव फिदा कुदि गोजिवारि
अज़ तिमे कंथि याद पाविनपानि वेनि

२८६. रंछि सिरिज काकान मुसलमान गंबरि ग़ज़
दिल तंती प्यठि मिलि नांविवुइं पानि वानि

२८६. व्वति युथुइं ओसुस न् ओसुस वखति अकि बाइखतियार
वंनि ग्वाही प्यानि कंनि यिम् प्रति कंनि देवार प्यनि

२८७. बियन् मुलकन अन्दर आंदि गाट्टि जारुक सिक्क् व्यहनावक
छि यथ् मुलकस् अन्दर नन्दिराम ह्योइं दीवान प्यंदा कंरि
कंरत् सर खम छ्यु कुन अहलि अदब हंरान वशीराजुक
गनी ह्योइं व्याक् कांह् जादुबयान इनसान प्यंदा कंरि

२८८. अवलाद बंडशहस् हयुइं रंकुमुत कु यंमि कोछि मज़
बोछि सूत्यि मरान वतन प्यठ् तिहिन्दी अयाल आस्या
कलहन गनी तुं सरफी संराब कंरि यंमि आबन
सुइं आब सानिबापत ज़हरे हिलाल आस्या

२८६. असिवुन ज़मीन छि पान्पर गछि वुछि छ्यु मंगि वुडरि
तंति दिल बंलि छली शर् गुलशन वतन कु सोनुइं
वंरि-नाग डुरि अक्कल बोलान छि तोति तुं जल
सुइं सोज़ बोज़ जल जल गुलशन वतन कु सोनुइं

हरगाह वुछ्नु छि बरगाह प्यठि संगरन कु सगाँह
लोग यूसि खाम्नि खरगाह गुलशन वतन कु सोनुहँ
गुलमरगि वंलि पथरे नीलि-नाग ग्वगजि पथरे
मखमल बहार वथरे गुलशन वतन कु सोनुहँ

२६०. तंथ आलमस मंज़ आंस खामोशी गंमि निश ओस मोकजार
दाग़िक अस्बाब तंति आंसि नायाब लंति ओस सोस त् करार ।

२६१. याद थाव् 'महजूरि' सुहँ बंनि दुन्याल्स मंज़ बाकमाल
ज़िन्दगी गुज़रा विहि युसि शोक्स् नि अरमानस् अन्दर

२६२. बोज़ यथ् बागस अन्दर क्या क्या म्यु वुछ पेनिन्यव वंछव
ऐश अशरत् कम् मगर गम ज़्यादि सख्ती जान जान
तीरि बाराँ बुलबुलन प्यठ् कर तिम्मे संगीन दिलों
खूनि सूत्यि ख़ बाग रंगीन तीति मांरिख बेज़बान

२६३. इनसान चवान त्रेशि कंनि इंसानि सुन्दनुहँ ख़ून
इंसानियत कुनि रूज़ना इंसान कलन मंज़
'महजूर' सिज़ि कथि बोज़ लब्क् मंरिफतुक् पेयि
पोज़ ज्ञान या इरफान कुनि मोरन तं मलन मंज़

२६४. तंति तीछा नादार मुजरिम् गुनाहगार बेवता छा यि ज़रदार
तंतितीछा कमज़ोर बेपछ् तं अपिज्योर पेज़ियोर यि ज़ोरावार
तंति तीछा तस् थवान पिंजरस अन्दर पोज़ येछि आंसि गुफतार
तंति ती छा ज़्यवि ज़्यीठि बंति साज़न्दर दोखान मोटर कार

२६५. आलमिक बंमार गंरि म्योन आयि वापस गयी बंलिथ्
त्रेशि हंति पंमित् वतन प्यठ् जूव दिवान बंमार म्यनि

बाग़ि मंज़ि मंक़ि तुल ज़रा आहस्ति ब्वन् कुन कर नज़र
सुत्यि अथ् मंक़ि कुइं रलेमित् अडि फलि गुलनार म्यंनि

२६६. स्वनि तं रूफ हुथ् दरास बाज़र तोरि दिक़्हमचाय नास
संरि सपनिम् वारि परदारक क़ि यिम् बाज़ार म्यंनि

२६७. धर्म त् मज़हब ईमानदारी पथ कालि अंसि यंति जारिये
तथ बदल अज़् क़ि यंति ज़ोरावारी काक़ जून बोज़ म्यंनि ज़ारिये
ज़िठि संनि वखतिक पोखति शिकारी मतलविच क़ंकि कमाल-दारिये
कमज़ोर दिलन प्यठ करान चान्दमारी काक़ जून बोज़ म्यंनि ज़ारिये

२६८. पोशिवारे म्यानि अन्दर वांति वारिलि पुशि तं ब्रारि
गुल अगर ब्यथि यिन तं बुलबुल डेशिहक पाने गलान
क़ाय पुशि लोलपंठि बागस न्यायिफल कुकरुक क़ंपारि
असि कुवान रूदि पान वानि तिम् पोश क़ंटि-२ गंयि निवान

२६६. म्यानि लसनुक चारि करहन क़ंकनि फुरसत क्या करन
घर तनाज़स कुन क़ि लगमित वुन्य क्यनस् अखबार म्यंनि

३००. तंति तीक्षा कंट्रोल हन्तिज़ाम गोल मोल तंति तीक्षा चोर बाज़ार
तति तीक्षा राथि राथि ख्यन्-च्यन् बागिरान तति तीक्षा यिथि -
खानदार

३०१. नाज़ुक वालिंजि कंशि वारदातन वातिमोवुइं क्यु आज़ार

३०२. लुकन मातम गरन अन्दर बिहित महराज़ि ही हांकिम्

३०३. क्या हंद क्या दंशिहार तिमन नेजि यिमन आथि
१० गिरबाल कंरिथ तीर तं अहरोज़ि यिमन दराहं

कंमि हालि गंरे फाकि फंरे नालि दिवान दराहं
क्यंह आवि रन्यन् वांति क्यंह अन्द मज़ारन क्राहं

३०४. संमिल आयि पांक्लि ग्रद्ध आदम साद
क्षिनिक बेगुनाह आन्ति रसि मांरि मांरी
वतन म्योनि जनत जहनुम बनोवुख
वतन म्योनि गुलश्न वन्य् कंरह्स वुजांरी

३०५. हा मनुष्यो पोशन क्या क्रुकि वुक्षान पंदि कंरि पनिने बागिच ज़ान
क्री क्रुकि बाग तें क्री बागवान पंदि कंरि पनिने बागिच ज़ान

३०६. शिकंजन अन्दर नवजवानन् क्सान ग्रु
सितम् सोन डीशित सु ज़ालिम असान ग्रु
मगर कारवाँ सोन ब्रोहं ब्रोहं पकान ग्रु

३०७. बाग यंलि बरबाद ग्रु अदि दरायि तिम् ज़ांलिम शिकांरि
सांनि गरि वांलिख तें खांलिख पनिनी मुलकिक थंदि मकान

३०८. दरदि सूत्यि 'महजूर' योद वनि कांह ख्याला ज़्यादि नोनि
युथि नि ज़ांह अथ् प्यठ गक्न् ओज़ूरदि देसिक् यार म्येनि

३०९. मुहब्बत् पनिनी वतनुक् पूरि शुबि इनसानस्
क्रुय यिहं मान मंज़िलस् वातक युथुहं हंमान प्यंदा कंरि

३१०. बुलबुल वनान् क्रु पोशन् गुलशन वतन क्रु सोनुहं
सोनुहं वतन क्रु गुलशन गुलशन वतन क्रु सोनुहं
अंन्दि अंन्दि सफेद संगर देवारि संगि मरमर
मंज़ बाग सब्ज़ गोहर गुलशन वतन क्रु सोनुहं
मंज़ बाग कोहसारन् रटि जाय नवबहारन्

फ़्वलि लालि शा लं मारन् गुलशन वतन कु सोनुहँ
लंजिपिक्र फुले क्रि पोशन बागन बनन् तं गोशन
बुलबुल बुद्धिथ् क्रि तोशन गुलशन वतन कु सोनुहँ

३११. वतन चोन बहिशस्त ज़न सारि अम्युक् कु दुशमनन्
क्रि लार यिमन् बदसहन् रवून चवान् चवान् गंक्रि
क्रयु क्या कु दुशमनि सुन्दगम रोज़ त्यार दम-ब-दम
क्रि गण्ड कमर तं तुल अलम तेज़ सान सान् गंक्रि

३१२. बूजुम् कु सांकी बांगिरावान पंनिनी वतनुक मंस्
तंमि शोंकि नंवि सुसि नंवि बानि बनांविम्

३१३. यंलि खंसि नंवि समसारूक रव गंडि पंयि चानी डंबिपरतव
अदि गंक्रि रोशन बाकी जहान पंदि कंरि पनिने बागिच ज़ान
थंज़ रस प्यठ शूबान चोनुहँ मकान - बालस प्यठ गुलालि ज़न ताबान
पादन तंल क्रयु कुहँ हिन्दुस्तान - पंदि कंरि पनिने बागिच ज़ान

३१४. गंरज़ि पनिने यिम् क्रि वाज़ादी मुलकिव् बरखलाफ़
वक़्त् यंलि सांबित कंरख् पनिन्यन शुरयन क्या दिन् जवाब
यरव् तंरफ रोज़ त्राविम् अे दुश्मन गुलज़ार कोम्
क्रयु कुल्यन् संगि वाति नावुन् सानि कोलि व्यथि फियूर आब्

३१५. ग्रेस्त्यन माथि चानि दिलकु लूबांनी कंमि शोंकि क्रीक्रयु लेलिवांनिये
तालि प्यठ क्रयु किकु जाय शहरां नी मांरि मंजि सां नि जलबांनिये
'महजूर' गडु प्यठि वारि पंठि ज़ांनी क्रयु सुत्थि ओसि आसंनिये
चानि इकबालिच तस क्रि शादमांनी मांरि मंज़ि सांनि जलबांनिये

३१६. आज़ाद रूज़िय् कंम खयोन् कु बेहतर
पोशन क्रराव कंरि क्राव गुलज़ार

३१७. सा़नि वतनुक कुस् कु दुश्मन कुस् कु दोस्त
जहल त्रावि़थ गंज़िरा विव् पा़निवान्य्
ज़ात कुरात कांशिरयन हिंज़ क्यु कुनी
ख्वामखाह दूरयर मे़ पांविव् पा़नि वान्य
दूध कु मुसलिम हियुन्द कु शक्कर साफ-साफ
दूध ते़ शक्कर मिलिनांविव् पानिवान्य
हिन्द् रतन नम सूर वायन अहलिदीन
नाव यमि मुलकिच चलांविव् पानिवान्य

३१८. बुलबुलस हांसिल बनी ताजदारी, वारिल रोज़नस ताबे सारी
शाहपंज़ि आसियस डीडवाना, थावकनह मति लालो लोलुक वंने
अफसाना

३१९. क्यति क्याज़ि गोयि गरतुक नारो हो
गफ़्ता बेदार हा वतन दारो हो
कुकि दव्योमुत खोफि चि रबि अन्दर
बुमि सिनि सुन्दि पंठि क्यु त्रावमिफ़ लर
लहरि मारान नल शहमारो - गफ़्ता बेदार हा वतन दारो हो

३२०. बांयि सुन्द बांयिस शुम्या थावुन मलाल
गण्ड दिलन हिन्द मुफ़िरां विव् पा़नि वान्य
ह्यफ़ि नावुखि ख्त पकुन नादान बांयि
अक् अकिस हिम्मत बढांविव् पानिवान्य

३२१. रोज़ि बागस वारि सबज़ी रांफ़ि कसि स्योद सादगी
वावि हरदिनि ज़रद गफ़ि गफ़ि प्यन् पथर सरमायिदार्

३२२. गछ़ अहरिबल क़लीशर वुछ कोदर तुक सु मंज़र
आब्स बनान कु गोवहर गुलशन वतन कु सोनुइं
सोखनाग तोसि मादान तति वुछ म्य पानि भगवान्
बगतन कु जलवि हावान् गुलशन वतन कु सोनुइं

३२३. वलो दोस्तो वतनिक् नवजवानो
व्व कुस् लोसुवुन बोज़ म्यमि विलिज़ारी
क़्य गण्ड ह्यमतुक होल बचावुन वतन कुइं
तमी सूत्थि खसि रथि म्यनि जान निसारी

३२४. कर दुआ महजूरि पतिवथ् फल्लिवुन रूज़िन मिबाग
बागवान रूज़िन सलामत ताज़गी पोशन गुलन्

३२५. बुलबुल करान गुलन गथि बोम्बुर यम्बिरज़लन पथि
कोशुर कु मस्त मसचथि गुलशन वतन कु सोनुइं
महजूरि देश कु सोनुइं बागाह कु नुन्द बोनुइं
अथि लोलि गछ़ि बरोनुइं गुलशन वतन कु सोनुइं

३२६. आसि असि यि ज़मीन कमिनावान दाहवय् बछ़ि आसि क़टान जूज़ान
न्रेशि चयि चयि करान आबादी असि वुछव जल्दी आज़ादी
हदिं आसि फलि-२ निवान ज़ोरवार ज़ालिम ति जाबिर व्ययि-
चखदार
कोसि कर वुछ़ि सनि बरबादी असि वुछव जल्दी आज़ादी

३२७. रूदुइं क़्य वन्दि अन्दि राछ़ि कमन् तापिक्रायन मंज़
पोश, त्यूरि, गुपुन् वाति नावि युथ नि क़्य आज़ार
तस् हाम पेमिछ़ आवि क़्ये मिछ़ बुसि आमिछ़ तन
ज़्यनि साति प्यठ अज़ताम रूदुइं युस क़्य सोद मलगार

दोख सूत्यि बुथ् छुस ज़रद् गोमुत गरद् पंमिछ छेसि
पाहि पंठि दिज़ि हंसि पनिनी रोयुक अक् ज़रा वंज़िजार

३२८. कुनि नातवानन् कांह् ति वातान छ दादु फंरियादस्
कंनि कोनु थावान बुल बुलस गुल आलवन् नालन्
छिनि रशिमंत्यन सूत्यि रलान दांदि लद गमगीन
मंज़ पोशि चमनन् रंटिनि तंवयी जाय गुलालन्

३२९. म्यानि बचनुक म्यानि गंरि योद आसिहुयं कंहा इन्तिज़ाम्
फरिहन मुं बन्दिरो छुन दरबदर बेकार म्यंनि
क्या वनय वंरियस जंखित ज़ीनित त्वछ दुस् फाकि हेतु

३३०. कुस् मंगान यारब अमीरन ज्यादि दोल्य् कंरि अता
अथ बदल कांछान् तबाही म्यंनि दुनियादार म्यंनि
म्यंनि न्यथिनंनि बंचि रूज़ी वातिनावान प्रंथ अकिस्
अथि दाहरान छी गरीबा राति दोह ज़रदार म्यंनि

३३१. अखाह् कु तंखतस बिहित शहनशाह
जंरिथ जवाहिर बंरिथ् खज़ाना
कु ब्याख फेरान वानि वान्
बनान ब्यंकुनु सुम तंमिस् नि बाना
अमीर डुयूटुम् गरीब माज़स्
दोहंय् बनावान वाज़िवाना

३३२. मलों वांयिज़ो मोकदमों ज़लदारों
शरारत फसन्दो तं सरमायिदारों
संमित् ज़ुलुम कंरि सारिवुहं ज़ुलुमगारों
ज़रब ख़ लगान ज़क्मुकुहं गुल फंवलान ख़
मगर कारवाँ सोंन ब्रोंह ब्रोंह फकान ख़

३३३. आलमिक बेमार गरि म्योनि आयि वापस गयि बलिथ्
त्रेशि हेति पमित् वतन प्यठ जू. दिवान बेमार म्यनि ।

३३४. तति ती छा मिसकीन मोरतद ति बेदीन- दीनदार दुन्यादार
तति ती छा बेज़र ति बे ज़बान नादान-गाटुल यि सरमायिदार
तति ती छा ज़मीन्दार काशस्तकार नानगार तेतिती छा बंडि चसदार
तति ती छा आलछ्युन रंगि रंगि न मछि कमिल्यन लगान बतिमार

३३५. फाकि फेरि शोंगि मति मजूरो त्राव गफलत गछ हुश्यार
वथ् सपन् इस्तादि जुलमन कुकि छ्यु कोरमुत नाछ्कार
वथ् गरीबी मोरमुत कुक् होश कर सम्बाल दम
वथ् वनि कोताह काल रोजख् जुलम व सख्ती हयुन्द शिकार

३३६. हा मजूरो ग्रेसत्यो अथिवास थांविवु थोद् वथिव्
हक पनुन हासिल करिवु त्रावि क कन वनि ज़ारपार
दुन्यहिच् दोल्त् छि तुहिंज़ी कुलि तु हिन्द तुहिंज़ी ज़मीन
राज़ तुहिन्दुइं ताज तुहिन्दुइं बाजदार खु ताजदार

३३७. बंडयन् हिन्दयन गरन अन्दर कु जानुक डरति मालुक ज़र
छि हिमत तं दिलेरी मुकलिसन् हिन्दयन् गरन अन्दर
कु अक्सर पाक सीरत दूरि रोज़ान् क्यि लुको निश्
तं वे लो बकुन छि रंटमिक जाय पम्पोशव् सरन अन्दर

३३८. वनि कोताह काल कमज़ोरन करन् पामाल ज़ोरवार
यिमन कमज़ोर हंसानन ति दिल हुश्यार आसुन गछु.
दोल्स जू जान कंटिथ् शामस बंडी कोट कुमदिवान मालिक
कमल राज़ी व्यव सुत्यि म्यनिस गमल तनदार आसुन गछु.

३३६. त्रावान गुलन आंरिवलन हाय गरीबी
गाश्स् छि करान गंटि तापस क्राहं गरीबी

३४०. कुनि नातिवानन् कांह ति वातान दादु फरियादस

३४१. कुहं क्यु नोवुहुनिया क्रावुन करिह् सामानुक तलाश
अथ् नांविस् दोरस अन्दर सोरवुहं कुचोनुहं कारूबार

३४२. युथि नं बूज़िव ज़ात बुतिरात खान्दान मिलत्ति कोम्
कुवि मज़ूरन हिन्दु कुनुहं अक् कोम् वन्यसपनान शुमार
३४३. लूकि बंहु ति कमज़ोर ब्यंयि ज़ोरावार रोज़िनि काँह गछ्न सांरी-
बराबर
आदमी बंनि हंसाना - - - - -

३४४. मोकलि वेनि जुलमुकति लूटुक दोर वडदार ति चखदार गछ्न कमज़ोर
खोश खबर बूज़ि असि गंयि शांदी असि वुछ्व जल्दी आज़ादी
वंनि थि कमि नावव् तीरोज़ि पानस नुक्सान वातिनि अकिस् दानस

३४५. न्याय वतनिक अंज़िरांविव् पानिवन्य्
अक् अकिस प्यठ् युथनि जांह वांछ्व बंन्दी
युथिनि ज़ांह राव-रांविव् पानि वन्य्
योद धांविव् अथिवास् तोहि पोशव निकांहं
पानि वांन्य यिनि अक् अकिस दुश्मन बंनियिव
फितनि यिनि ज़ांहं वुज़ि नांविव् पानि वांन्य्

३४६. वलो हा बागबानो नव बहारूक शान प्यंदा करि
फुवलन गुल गंथ् करन् बुलबुल तिथुहं सामान प्यंदा करि
चमन वीरान् रिवान् शबनम् क्रंटिथ् जामं परेशान गुल
गुलन तं बुलबुलन अन्दर दुबारह जान प्यंदा करि

३४७. कॅरी कुस् बुलबुला आज़ाद पिंजरस् मंज़ छि नालान कुक्
छि पॅनिने दस्ति पॅनिन्यन मुशकिलन आसान प्यॅदा कॅरि

३४८. प्रथ बहारस् यॅति यिवान अॅसि गॅरि मुलकी जानवर
नगमि हॉविथ् पोश छॉविथ् हरदि ब्रोंह बापस गछ्वान
मथ ज़मानस मंज़् यिमन सॅलान्यन बदिल्यॅथि राय
आविरा विख बाग वॅनि कुस् म्योन् यॅति आसुन खरान
ओलु म्योन नहना विनुक सामानि कुक कॅरमुत त्यार
अज़ छि पॅछि रेखसत् करान यॅति खानिदारन लॅरिसान्

३४९. हुयॅरि वॉरिलु ब्रोरि ब्वनि ज़ागान यथ् म्यॅनिस् जुवस
पोशि लंजन छ्यि थॅवि थॅवि कूत काल बॅचिराव्वि पान
रॉयलन् बोन्यन् थॅज़न प्यठ् आलि मीरिख जान जान
कुस ब्व तॅनि पॅनुनुइं हक़र हुयथ् अन्दि रूज़िथ मन्दिछान

३५०. ब्व कॅरिहा कॅसि हिन्दिस कोलिसुइं पथ् जू पनुन् कुरबान
मगर तथ अहदु पेमानस दिलुक इकरार आसुन गछु

३५१. नोवुइं गुल तॅ नोवुइं बुलबुल नोवुइं गुलज़ार आसुन गछु
नोवुइं मस तॅ नोवुइं साकी नोवुइं खुम्मार आसुन गछु
नोवुइं छुरात नोवुइं असमान नोवुइं रव तॅ नोवुइं परतब
नोवुइं सुबाह नोवुइं शामा नोवुइं संसार आसुन गछु

३५२. छि होछिमुछ पोशि थॅरि बागस कंमी आबस गमिछ नागस
खसुन कुम अंबुरि लॉगिथ् आसमान बारान त्रावुन कुस्

३५३. कुक् गुलन वुछि वुछि क्यु तोशान क्यू नि जंजामिच खबर
हां सिल्स् अंमि बाग्किस प्रारान सोदागार कुहं
कुक् नि क्यु बागरु अन्दर तन्हा कुल्यन् खंसि-२ रिवान
सूत्यि कुहं 'महजूर' नालान तसति सुहं बाज़ार कुहं

३५४. बाग्कि रींज़िल् वांरिल्यन् गालन बुलबुलि गमत्राव कड पखन वाश्
यंति योर चोनुहं मज़हब पालन संगर मालन प्यव् प्रागाश
हरदुक् तूफान पोशि थंरि क्वालन् सोन्त यियी दोहि अंकि तुलि-
पारवाश
सुहं फंलि तन युसि दियि जंजालन संमर मालन प्यव् प्रागाश
गुलालि लोलिच् मशालि ज़ालन तंमि नूरि रोशन गंछि आकाश
मसवल शबनमुक् मस् फिरि प्यालन संगरमालन प्यव प्रगाश
मानि क्वार 'महजूरि' सिंज़न मिसालन् नंनि-रिथ् वंनिहय् सिर गछि-
फाश्
दाना बोज़न त् नादान टालन संगर-मालन प्युव प्रगाश ।

३५५. नेह गंटि गोस् बेदार कंलन् कंतिजि बोलुन गोम्
ज़ोनुम् म्र वंन्दि सोरयोव परतव् त्रोव सोन्तकालन

३५६. योद सोरि श्रावुन वावि हरदिनि पोश त्रावन रव
हरदस ति क्वनि यंति पायिदारी वारि क्वतस् थाव

३५७. रयति कोल वांतिन मूलि मांजि व्यसिरन
तुलि कांतरिच मन्दोरे
शीनि क्यन बालन क्वलि क्वलि वालन
सोन्त का लिचि गंगिराये

३५८. पोश्शारयन फ़ेरि सब्ज़ी नेरी सोरवुइं आमितव
होशि डलिमित सम्बुल बमार गोमित् दिल बलन

३५९. ज़ोर सलाबुक कु वलुरस् खतरि विजिवावुक ति कुस्
घाह कुइं वन्य् दूर वाराह वाव् वुद्धि वुछि त्राव नाव्

३६०. बुलबुल कु बरान चाव छिथिर दराव बहार आव
तोशान कु सोन्तुक वाव कामिसतानि कु आव आव
गुल हरदि हरान सोन्ति ब्ययि दुबारि करान दोर
मेरि मेरि छि फेरान ज़िन्दगी वसवास मरनुक त्राव

३६१. छाव सुबहुक वाव् बागस् सूत्यि पानस् क्या अनुन्
बुल बुलन कितु रश वराहत राति-मोगलन कितु अज़ाब्

३६२. फीरि येलि बागस हना सब्ज़ी गुलव हयोत ब्ययि असुन
वाति हालव आन्ति रसि बागस वुछुम ब्ययि छूहि वधान

३६३. त्रेटि हिन्द पेठि प्यति अरखलिनुइं प्यठ्
पोशि वनिनुइं छ़लि खारि खारि हो
गछ़ता बेदार हा वतन दारो हो

३६४. महज़ूरि लोलुक् साजथ्व तेयार वेन्दि छ़लि शीन् गलि
ब्ययि यियी बहार

३६५. स्यठाह् प्रान्योव् रसम हुक मरानी यथ् जहानस मंज़
नोवुइं कानून नोवुइं दफतर नोवुइं दरबार आसुन गछ़ु

३६६. वुछ्यक क्यु कम् कम् बालि हज़ारी अन्दमा वाछ़िक सूबेदारिये
हसित्यन खसिथ् वसि गयि ननि वारी काछ़ जून बोज़म्यनि ज़ारिये

३६७. तॅति ती छा हंसान मारिनि बापत हंसान गरान हथियार
तॅति ती छा ज़नानन मसूम बचन प्यठ् हंसान करान बम्बार
तॅति ती छा मुलज़िमस वॅसतिक हंसाफ यार बॅयि हुयथ् करान खॉर
तॅति ती छा अज़ाबस लागिनि यिवान् बेगुन्नाह सुन्दरिश्तिदार
तॅति ती छा ज़ॉलिम् शिकजस् मज़बरान मज़लूमि सुन्दइ तरफदार
तॅति ती छा वॅसतिक ज़ेरक ति गाट्टिल ज़ॉलिमस वनान दिलदार

३६८. रूदि कियहँ ज़ंडन दोसन् तल छाथि कियहं क़ुलि पथ वनन्
कुस् व्व तिति मुवुहं मंजि अखाह तॅमि कारवानुक अक् निशान
खून हॉरिथ् जानवर मॉरिथ् कोरस वीरान बाग
बुलबुलन हियुँद ऑलि ज़ॉलिख् पोशि प्रॉटिस मूलिसान

३६९. दुशमन गिराविथ् शो-3-रू पॉविथ् ज़ोर परखॉ विथ्
वरवतुक पहलवान रूस्तम-ए-दोरान बनखना
महजूरि सोरवुहं क्यहँ छि बनक पनिनी कूशिशी सूत्यि
यिम चीज़ त्रॉविथ् यख तरफ हंसान बखना

३७०. पनिन्यन कु अरमान गॅरि तॅ बेगानि छावान बाग
मन खोश छि थावान् तन छि नावान स्यन्दि ज़लन मंज़

३७१. `महजूर` छि बन सोन्तुक वाव रोशि रोशि बागस कुन कदम त्राव,
छि ति गछि न्यन्दि हॅति वुज़िनावान मारि मॅति वारि वॅति -
लाग म्योन पान

३७२. त्राव फेरन सिपाह बन तुल छि रफल मशीन गन
ज़िन्दि करून पनुन् वतन नावथवान् थवान् गछि

३७३. यि केंछाह मंशित कुनि राज़स गोमुत ओस

अगर कंमि तिमव ख़ून नाहक चोमुत ब्रोस
हतस वंरियस क्युहँ हिसाब्स पमुत ब्रोस
क्सर जुल मुचि सुहँ बराबर कड़ान ग्व
मगर कारवाँ सोन ब्रोहँ-२ पकान ग्व
हंडर ज़न ज़मीनस फंटिथ दरायि ज़ालिम
सितम गर हलाकू ति चंगीज़ सालिम
रल्यायि क्यँह यिमन सूत्यि हाकिम ति आलिम्
सितम ग्व हुरान रथ रगन् मज़ ग्रकान ग्व
मगर कारवाँ सोन ब्रोहँ-२ पकान ग्व

३७४. महजूरि मोतस क्या कु खोकुन मोत कुहँ मेहराज

३७५. रवतम् गंछि चंगेजखानी शोर शर
रोज़ि कायिम् ताबद शीराज़ म्योन्
राति मोगलस ज़िरवि कुस् चमनस् अन्दर
पंजि दिथ् तस लंजि कंडि शहबाज़ म्योन्

३७६. ग्व साफ साबित आलमस मंज़ जुलुम कु ला मज़हब

३७७. सथ् वही ब्रोहं वनुयि महजूरन ति ती गछी पूरि वन्य्
वावि हरदिनि ज़रद गंछि गंछि प्यन् पत्थर सरमायिदार

३७८. सोनस वारि सरतल बनावान गुलामी
यिमन शूबिहंयि जाय थाविन ख्बरनतल
कलस प्यठ् तिमन् सारिनावान गुलामी
यिमन शूबिहंयि प्यालि हयथ् स्वर्गि हूरा
तिमन खूनि दिल चावनावान गुलामी

३७९. यि आलव काशिरनि हिन्दनि कतन् मंज़ वातिनावुन कुस्

३८०. नरू नरू कॉशिरियो हाव पनिन्य् बहादुरी
नरू नरू शशिदरो हावपनिन्य् बहादुरी
दिलावरो बहादुरो हाव पनिन्य् बहादुरी
ब्रोंठि यिन्य् कोह तिबाल शरि बनिथ् खार क्राल
कोह ति कल्ख पायिमाल युथ नि क्युं कांह हरिजकदी

३८१. गैरतस् सानिस् करिव् तोहि कूत काला इमतिहान्
असि मरव् गैरस् खोरन तल ज़ांह ति नोमुरावव् नं सर

३८२. देरदुक नार युस लोलि मंज ललिवान
रोज़ि नि परदयन क्राये
तीरन ति नेज़न सीनि युस दारान
खोक़ि नि ग्रकि वुनि क्राये

३८३. हमलि करि यमराज़ ह्योव् दुशमन अगर
पथ् कोहन तस् लार करि कमराज़ म्योन

३८४. यि ग्व बुलबुलन प्यठ् करून तीरि बारान्
यि गयि शीशि खानस् करिनि संग बारी
क्युं नयि बेसिलाह आसिहक मारिही कुस्
यिमन खेलिनावान क्षि चनि नाबिकारी

३८५. दुशमनि सुन्द फोजआव नेरि पनुन् वतन बचाव
कॉशिरयन् हियुन्द नावथाव त्राव् फेरन् ति कांगिरी
हाव पनिम्य बहादुरी
तज़ि तज़ि तुल कदम थुव क्युं खयालदम-ब-दम
सूत्थि क्युं यि पनिन्य् अलम क्रार अमिच क्युं बज़ारी
हाव पनिन्य् बहादरी

३८६. छि कुक कांशीरि हियुन्द जवान तुलुन क्यु कुर्ह आलुक निशान
वुछान क्यु कुन कु दुस जहान्
छि गण्ड कमर ति तुल कमन्द सिताि्र म्योन कर बुलन्द
कांशीरि हुन्द छि शान बन
छि मीर कारवान बन्
कांशीरि पासवान बन्

३८७. अह जूरनुहं तराि्न पर शोकहुरी दरी जिगर
छि ति रल फोजस अन्दर बांति ग्युवान ग्युवान गछि

३८८. दवान गछि टिकान गछि बहादुरो दवान गछि
मस्त चवान चवान गछि बांति ग्युवान ग्युवान गछि
छि न्यरि पहलवान बन रुस्तुमि दास्तान बन
श्युरि न्यिस्तान बन् क्रालि निवान-२ गछि

३८९. 'महजूर' यलि आज़ाद गछि नेरि बागस कुन
पोशिनूल वायन बाजि ज़ालन पोश मशाल्यन्

३९०. बाियि म्याुनि गम् त्राव मनाव शादी असि वुछ्व् जल्दी आज़ादी
आज़ादी क्यु सनि आबादी असि वुछ्व् जल्दी आज़ादी
सोलसान जिन्दगी गुज़ि रावव् जान् जान् माल व्यथि नोवुरावव्
काँह ति वाति नावि नि असि दादी असि वुछ्व् जल्दी आज़ादी
सुलि कुर्ह क्रनिवुनि दिवान 'महजूर' ज़ल्दी गाश यियी गटि गछी दूर
पोज़ वनि वनन् वालि उस्तादी असि वुछ्व् जल्दी आज़ादी

३९१. ढद कु मुस्लिम ह्युन्द कु शक्कर साफ साफ
ढद ति व्ययि शक्कर रला विवुहं पानि वनि
ह्येन्दि रहन नम् खुर वायन अहलि दीन
नाव यमि मुलकिच चला विवुहं पानि वनि

३६२. पसती मंज़ि खार पान बसती लागु थंज़रस प्यठ
गंडु आफताबुक गाह कु प्यवान संगरन बालन्

३६३. क़ारान ओसुस पगहुक खदाद बाग म्योन करि गंछि जुल मिनिश
आज़ाद
बोज़िहा तिछ ज़नवाना - थाव तोकन हा मतिलालो लोलुक वनै -
अफसाना

३६४. थंज़रस् अकिस प्यठ लेरि पान त्रोवुम सोवुम तन ति मन बेदार थोवुम
बूजुम अक् नोवुहं तराना - थावतो कन हा मति लालो लोलुक वनै -
अफसाना
सुबहुक वाव ओस बागस् कुनि वनान पगहिन् खबर बोज़ पंदि संपनी -
ज़ान
गुलशन बनि वराना - थावतो कनहा मति लालो लोलुक् वनै अफसाना

३६५. गुल मोलिनावन पानै पानस बुलबुल फीस ह्यन् चननिस तरानस
जल्दी आसि त्युथ् ज़माना- थाव तो कन हो मति लालो लोलुक-
वनै अफसाना
कंडि करन बागिच चूकी दारी - नंज़ि हुयथ् रोज़न हस्तादि सारी
पोशन युथनि छुटि नादाना - थाव तो कन हामि तिलालो -
लोलुक वनै अफसाना ।
डलि मंज़ि डूंगल खालन जवाहिर - वलरिकि सोदर निशि मसति -
गछि ज़ाहिर
क़ारिनि यियी अक् जहाना - थावतो कन हा मति लालो लोलुक
वनै अफसाना ।
तारसर मारसर बनि अमृतसर तोसि-मंदान बनि सूरत बन्दर
कोंगि-वटन तंछि कारखाना - थाव तो कन हामति लालो लोलुक-
वनै अफसाना ।

३९६. बलेकिन छु यलि वख़्त वातान बराबर
पनुन् नाव पान्यु मिटाबान गुलामी
छु आसिर फल्यन् संगरन तु कोहन सूत्थि
पनुन् वख़्त वो तित् लड़ावान गुलामी

३९७. छु कश्मीर असि पूरि जन्नत बनावुन
गुलामी हिन्दुहँ दाग लानत मिटावुन
छु ज़ालिम् असे मोतिच् न्यनद्रि सावुन
पज़ियुक ताफ प्युव बातिलुक यख गलान ख्व
मगर कारवाँ सोन ब्रोहँ - २ पकान ख्व

३९८. दुश्मनस् संगीन सज़ाह दिनु बदलि ह्योन् छुनि कांह कमाल
तिथु सलूखा करि छि तस् युथि लोलुसान हयिचोन नाव
दरायि वारिल बागि मंज़ि जानावरन् फीरि ज़िन्दगी
छि ति अगर वारिल बनख् पस ख्व बराबर आवजाव्

३९९. व्यथि मूद मत्यन् ज़िन्दगी हियुन्द जामिवलान आरव्
व्यथि दोदिलदन सम्बिलावान् आख बहारो

४००. 'महजूर' यलि आज़ाद गछ्त नेरि बागसकुन
पोशिनूल वायन बाजि ज़ालन पोश मशाल्यन्

४०१. आयि दोह नज़दीक जुल्दुहँ नेरि गटिपछ फेरि नूर
जूनि हियुन्द पठि द्रंठियन वन्य दूरि कोह तु धार म्यनि

४०२. सना सादी परिव् सान्यन् गरन मंज़ क्रायि आज़ादी
स्यठाह यछि कालि असिकुन जलवि हावान आयि आज़ादी

४०३. वथ् नज़र करि गाश आव सोति इंकलाबुक आफताब

चोन ब्रदुमुत् बाग फलि पेगाम् ह्युथ् आव नव बहार
वथ् रिवाजन आदतन हिंज् प्रांनि पिम् ज़ंजीर क्रिठि
नेरि मंदानस अन्दर डर त्राव छि ति बन् शाह सवार

४०४. मंगि नुक् त् ज़ारिपाल्क वक़्त् ग्व नोवु दोर आव्
यस् मक़्न् मंज़ ज़ोर आसन् रोज़ि सूइं वनि काम्याब्
वलवला जो शाह हुबाबा इज़्तेराबा हिमन्ताह
पदि गछि यामत दिलन् अन्दर ति सुइं ग्व इंकलाब

४०५. वनि कूति काला रोज़ख वटिथ् पर, कंड पखन वाश नेरि वुछि संसार
आज़ाद चशिमव कर गुलन् कुन नज़र पोशन कराव करि क्राव गुलज़ार
महजूरि मुक़राव बन्दगी हियुन्द कमर यति योर वनि कुक् छि -
खोदमुख्तार
दिल घुइं हाकिम ति ज़्यव क्रसि नोकर पोशन कराव करि क्राव गुलज़ार

४०५. स्यठाह प्रान्योव रसिय हुक्मरानी यथ जहानस मूज़
नोवुइं कानून , नोवुइं दफतर, नोवुइं दरबार आसुन गोछि

४०६. वारि वारि वारिल गक़्न नाबूद बुलबुलति कस्तूर वामन सरूद
बाग करि स्वर्गस् मूत्थि मान मान पदि करि पनिने बागिच ज़ान

४०७. वज़्नि लोगु ब्यथि ज़िन्दगी हुन्द साज़ म्योन्
साज़ म्योन इज़िहार करि वनि राज़ म्योन
बाग म्योनुइं गुलति म्योन सुम्बुल तिम्योन
बोलि वुन बुलबुल कुं खोश आवाज़ म्योन

४०८. चमन वीरान रिवान् शबनम् क्रिथ् जामे परेशान गुल
गुलन त् बुलबुलन अन्दर दुबाला जान म्यंदा करि

अगर वुज़िनावहन् बस्ती गुलन् हिंज़ त्राव् ज़ंरांब्म्
बुन्युल कंरि वाव्रि कंरि गंगिराय कंरि तूफान् प्यंदा कंरि

४०६. याद थाव य्यिम् म्यंनि मुफलिस् फाकि फंरि योदथोंव् वंथन
दोलंतिक मंलिक बनन् वांखिर यिमुय नादार म्यंनि

४१०. पिंजरस मंज़ ज़ाख अथ् मंज़ वांसि गुज़रावान् आख्
खुलि फि ज़ाख्स् मंज़ वुफुन हंछि वाश कंडि वसवास त्राव

४११. वाव असि नावान गुलन् 'महजूर' वुज़िनावान दिलन्

४१२. अक् ति मारयिस व्याक् हारयिस दारि खून
क़ावलिस् तीरस हयुइं पुजि राम्नि हून
खूनि मरदम थोवु कोनून् हलाल
रंथ् चवान पादिर सहन कमज़ात शाल
वायि । मजबूरी, गुलामी बन्दगी
बेकरारी, बेकसी, शरमन्दिगी
पर दि क़ुटि दिल क्युन हुबाबन तुल निकाब
इंकलाब् अनि इंकलाब् अनि इंकलाब

४१३. छि तांव 'महजूरि' कांयिम् शान खोदंदारी ज़मान समंज़
योहयि जांवहर कु अज़नायाब सान्यन् शांयिरन अन्दर

४१४. म्यछि तल व्यहि वांजि मंज़ नंति पर गंछित संसि आसमान
यिम जि ताक्त कोदरतन थांविमित छि इन्सानस अन्दर

४१५. ब्रांठि यिन्य् क्युं शेरिनर हमलि कंरुस छि प्यन् पत्थर
लारि रटुस क्टुस जिगर युथि नि करन सितमगंरी
हाव पंनिन्य् बहादुरी

४१६. नोवुइ शोराह कु वुन्य क्युन बाग़ि क्युन जानावरन अन्दर
नोवुइ सोज़ाह कु तुलमुत् पोशिनुलो पिंजरन अन्दर
ठिपिस् मंज़ ज़िन्दगी हिन्द् ज़्यादि दोह योदवयी च्यु गुज़रावि्म्
कु बाकी कुवत् परवाज़ वुनि म्यान्यन परन् अन्दर

४१७. वखति मुशकिल हमतो समतो करिवुइ
अक् अकिस् अथि शहला विवुइ पानि वनि
जात कुरात् काशरनि हिंज़ कुइ कुनिइ
खामखाह दूरयर म् पाविवुइ पानिवनि
यिम् गरीब आसन तिमन अथि रूट करिव
बाथि बाथि छिव रक्षि रावविवुइ पानि वनि
मिलिक़ारूक दियुत यि महजूर न सब्क
याद थावविवुइ बीज़िनावविवुइ पानिवनि

४१८. मशीदन मन्दरन गिरजन धर्मसालन ति अस्तानन्
यिमन् यीत्यन् गरन अकुनुक अकुइ दरवाज़ि थावुन कुम्

४१९. क्तिाबी मज़हबुक मिलिक़ार ज़्यवि हियुन्द कोल ग्व प्रानान
दिलन अन्दर नोवुइ लोलाह नोवुइ समक़ार आसुन गोछि

४२०. बुलबुला आज़ाद गंकनस् चाव बरि पोशन कराव करिछाव गुलज़र
पिंजरस सलाम करि नेरि अमिनिश न्यबर पोशन कराव करि छाव-
गुलज़ार

बोलान ओसुस पिंजरस अन्दर खूछि -२ ओसुख करान गुफ्तार
हालिदिल साफ़ वनि कोहुन्द कुइ क्यु डर-पोशन कराव करि छाव-
गुलज़ार

४२१. वॅनि कु इनसाफुक ति पज़रूक ज़ोर जुलमुक दोढ़ ख़
प्रोन हुन्या ख़ फना वॅनि कॅरि छि नाव हुन्या तेयार
कुहॅ क्यु नावु हुन्या बसावुन कॅरि छि सामानुक तलाश
अथ् नॅविस् दोरस अन्दर सोरवुहॅ कु चोनुहॅ कारूबार

४२२. गरीबी, मुफलिसी, बेबूज सूत्यि ह्यथ् खानि वॅरांनी
अमि रिछि त्रायि असि प्यठ् आयि त्रावान् साय़ि आज़ादी
यि आज़ादी छि सोरगिव हूर फॅरिया खानि पॅति खान्
फक्त कॅकुन् गरन अन्दर छि मारान ग्रायि आज़ादी
यि आज़ादी दयान सरमायिदारी छॅमि नि कुनि थाविन्
वन्यु पॅतिन्यन निश् छि सोम्बरावान ह्यवान सरमायि आज़ादी ।
लूकन प्यठ् गॅयि यि आज़ादी स्यठाह गोब हारिपवॅत ज़न्
छि कॅकुन सोश नसीबन पोशि तुलि जुहॅ डायि आज़ादी

४२३. गरीबन वॅरसी करिहन मगर छॅनिहॅ किमन फुरसत्
तिमव लॅबि मोटरन अन्दर दवान थॅदि पायि आज़ादी
गॅमित दम फुटि छि सॅरी बर करारी ह्वॅकि दिलन अन्दर
दयान वनिहव पनुन् अहवाल आसि मा लायि आज़ादी

४२४. 'महजूर' चॅनी यॅक्बरान नाज़न खरीदॅरी करान
आदन बाजि कर वॅदि पूर हुबदानि मोह्यम दूर-दूर

४२५. 'महजूर' वॅनि दिवान यारस बे-फा बाज़ी-गारस

४२६. सादि आसिस् वॅदि ह्यथ् म्यु उलफतुक सोदा कोरम
राज़ थॅविथ् बाज़ ख्ये विथ् गाटि पॅविथ् क्होलुहमो

४२७. छि यारन सूत्यि क्होह मारान ख्व तनहा खूनिदिल हारान

४२८. म्यु दोस्म सीनि बन्दूकन ति तोफन
क्यु मारूज़ियी क्यतस म्येनि जानफि शानी
खबर क्या दुश्मनव क्या-२ वोनुइं म्योनि
दिलस मंज़ पदि करिहे बदगुमानी

४२९. यार द्राव फेरिनि मंज़ मदानन
पोशव रंग रोट आनन् फानन्

४३०. क्रोलहमा रागे-२ सन्यास लागे जोगे
मारिस हा ख्व चानि हागे पोशे मति जानानो

४३१. कामि दीवो नामि सूज़िथ् पामि लक्खितम तथ् अन्दर

४३२. स्योद सादि जामि कुइं श्यामि सोन्दरिये

४३३. यपारि भवसरि तारि क्रामिक़ बाव वुछिथ् नाव
तूफानि मंज़ि वथ् नावि अपोर तारि मोहब्बत

४३४. प्रेम रस बागि रावान वक्कि खनि बलिये
नूरि वुज़्म लिये पूरि हाव पान

४३५. साथा चि खोर ठक्षाव दिलदारि दरशुन हाव

४३६. सोखि-नागि तोसि-मदान - तति वुछ म्यु पानि भगवान
भमतन कु जलवि हावान - गुलशन वतन कु सोनुइं

४३७. संगदिला सित्मगरा रहम क्यु कुइं ना अखज़रा
ज़ायि गयस्त ख्व सोन्दरा मायि बरान-२ वलो

४३८. शत्र नालान मथिर सारी परेशान
शुब्या यिक़ लोलि शहरिच हुकुमरानी

४३९. त्राव फिरन सिपाह बन तुल ृचि रफल मशीनगन

४४०. रूशिथ हारूदुक आफताबो क़ायि ओबरसतल
वुज़मल हा दॅज़िस वारि लोलिकि नारिअती रोज़

४४१. गंह नि कंनि पोश ही तंनि जंरि जंरिये गंरिमुत कंपि ज़रगंरिये
पॅरी लॅागिज़ि अथ् कॅाडी गंरिये ग्रीस कूरि नाज़ नीन सुन्दॅरिये ।

४४२. आमुत बुडल बरजोश - फोलिमुत छिस पम्पोश
ज़ीठि यारि रॅटि हे नाव - मुपि कारि दरशुन हाव

४४३. कामि दीव सामानि पीरिथ् नंरि बानाज़ो अदा
होश डंलिना, अकिल नशिना, आशकन दिल रांविना ।

४४४. अज़ रोज़ू साने दिलबर म्यांने
बोज़ नुन्दबाने दिलबर म्यांने
लोलि ह्यात म्योनिपान योद गछि पराराम
लोल मा पराने दिलबर म्यांने

४४५. दूरयर छालुन नारिपान ज़ालुन
कुम ह्यकि लाने दिलबर म्यांने

४४६. बागन कोलन ति आरन जोयन ति आबशारन
दियुत सोज़ नव-बहारन-गुलशन वतन कु सोनुइ

४४७. यारि सिंज़ि कंथि छुस वारि याद थावान ज़न वुठन ज़ांह तिकर -
बावान छुसि

४४८. लोलि बाज़ारस छ्सलाल मोलिनावान वानि-२ पान परखावान छ्सि
रूमि छि अथ् लालस मोलि छुनि पावान - - - - - - - - - -

४४९. यीछ् कीछि दुशमन दारिये

४५०. म्यानिविजि लागुथ् बेजार मदनो

४५१. खोश छु दुनिया खोश अगर थावोन दिल

४५२. गोछुमदरदिला हालिदिल बावि हातस्

४५३. यस आसि बेमारी गमिच् तस शुमि शरबत शबनिच

४५४. नेनि पठि वनै, साफ वनै, सरकार वनै

४५५. गुल वोनि बुलबुलस बोज़ि क्या बागबान

४५६. लालि म्योन मंज़ शालिमारन सूत्यिपारन आसिमा
जलवि हावान सबज़ ज़ारण आब शारण आसिमा
व्यचिनां विध हाल वनिश छुन् दिलस अन्दिर ह्रास
हिति गोर ज़ागान हितन ? नक्तन इशारन आसिमा ।

४५७. रोशि रोशि छुक चुलान पायि करू म्योन छ्व नोज़रि मदनो दूरियर चोन
आलिवन म्यान्यन छुनि तासीर चानि मिलिचारुक क्या छु तदबीर
वनतो चि किथि पठि रूपनक म्योन् छ्व नो ज़रि मदनो दूरियर चोन

४५८. छोल हमा रोशे रोशेर पोसे मति जानानो
अति अति रोज़तो यारो कोतु छोलुक जोदुगारो
गोडि करू म्योनुइं चारो पोशे मति जानानो

४५९. अज़ रोज़ु साने दिलबर म्याने, दिलबर म्याने
बोज़ु नुन्नि बाने दिलबर म्याने , दिलबर म्याने
खान्नि पारांबिम खांसि बरनां विन्
हावसि चाने दिलबर म्याने , दिलबर म्याने

४६०. शंरि गंजथस् कर म्योन पायि मदनो
वंलि करयो लोलु मंतिलाय मदनो
दोन दीदन मंज़ करे जाय मदनो -
वंलि करयो लोलु मंतिलाय मदनो
गोसि क्या कोइं रेसि-२ ह्योतुथपदूर -
चांनि दूरिरन बदनस कोरनम सूर
कत्यि लंजियो छ्यु दिल समाय मदनो -
वंलि करयो लोलु मंतिलाय मदनो

४६१. लोलि मंज़ व्यु कंरय गूरि गूरि दुरदानि मोछ्यम दूरि दूरि
यंलि चानि छ्यनुक शोहरि प्युव बूज़िथ् यि दिल दीवानि ख
लारान व्यु आसंदर-हज़ूर दुरदानि मोछ्यन दूरि दूर

४६२. दंजि प्यठ् वुछ्मख थोद तुलिथ नंरिये लोलो करान लोलंरिये
नंरि मा लोसे छ्यु कंरि करिये ग्रीस कूरि नाज़नीन सुन्दंरिये

४६३. छ्योलहमा रोशे-२ पोशे मंति जानानो
अंति अंति राज़तो यारो - कोतु छ्युक जादूगारो
गंडि करु म्योतुइं चारो - पोशे मंति जानानो ।

४६४. क्या करि व्यसिये लांनि निस न्यायस यावनरायस छ्नि म्यनि मायि
यावन रायस बे परवायस - धावन रायस छ्नि म्यनि मायि

लॅलि मॅछि यॅलि मंज़बाज़र द्रायस शाहहमदानन् वुछ म्यॅनि छायि
मरदस ब्रोंठि कॅनि परदि सान आयस यावन रायस छॅनि म्यॅनि माय़ि।

४६५. मो रोश मे मो रोश च्छ नो छालि जुदाई

४६६. कोति नॅरि सियाह सर छॅसि बे पे बे रहबर छ्स्

४६७. योदि नज़र करि पोशि बागस गुल करन नाज़ो निसार

४६८. त्राविना मयोनुइं मलाला प्रानि कॅथि मॅशिरोविना

४६९. यरू आसि बेमोही गमिच्
तस शुमि शरबत शबनमिच

४७०. बरसतल पॅनुन पान मॅारिथ् च्छ त्रावे

४७१. बाग़िक रींज़िल वारिल्यन गालन बुलबुल गन त्राव कॅड़ि पखन वाश
यॅति योर चोनुइं मज़हब पालन रंगर मालन प्युव प्रागाश

४७२. नाज़ि तॅनि यिम वॅज़िल जामि कॅमि वॅलिये
नूरि बुज़ि मॅलिये पुरि हाव पान

४७३. वॅति चानि दोरान पेह्युवान वॅसि वॅसि हा प्यिवान छ्स्
गॅरि बाल दरायस छि पॅति गॅरि तारि अती रोज़

४७४. 'महजूर' चॅनी यछ बरान नाज़न खरीदॅारी करान
आदन बाज़ि कर वादि पुर दुरदानि मोह्युन दूरि-दूरि

४७५. क़ोलुहमा राशे-राशे पोशे मॅति जानानो
वुछमखा दूरे-दूरे सन् गोन सो[illegible]रि चिहूरे

छस वदान चूरे - चूरे पोशे मति जानानो

४७६. तुलरि ह्यन्दि पठि फीरिस छोपांदो व्युर च्यु अनुमे छांरि छांरिये

४७७. च्योन यावुन ज़सवुन हार त्रावुन जलवि हावुन ति आलम तांम्बिलावुन ।

४७८. च्योन लोकिचार वनि कुइं ओस दीवदार लंबिदरिया छावान -
ताज़ि सबज़ार ।

४७९. पीरिथ् छिछामिछ् सोरगि-हूर
दुरदानि मोछ्यन् दुर-दुरि

४८०. अंकि नज़रि आशक नारि खु बेचारि ज़न ज़मानि प्युव
लोलि-नारिं बदनस कोछस सुर दुरदानि मोछ्युम दुरि-दुरि

४८१. दनदि कंन्दि फंलि ति वुट ज़ि शक्कर पारि अती रोज़
बुमि नाज़ि कमान नस्ति खंजर नेज़ि अंछर वाल

४८२. संरि कंरि पनु नुइं पान कुइं बनस दिल कुइं नाग तं फंव्वार दिमाग
चंशमि छेयि पोश तं बुलबुल ज़बान पंदि कर पंनिने बागिच ज़ान

४८३. यंलि जलवि पनुन् होवुन छेलि वुनशिकार पोवुन
ज़न् सरवि पंथर पोवुन हांवुन हातबरदारी

४८४. जुलफन छायि यि मदूरि ताबांनी संति कृष्ण गंति मारां निये
ओबरि तेलि छिछि ज़न ज़िछि त्रावानो, सोज़ि दिल बोज़ि दुर दांनिये ।

४८५. पु शीदि थांवि थावि दराव फंथिथ् च्योन अन्दरिमहाल
यिथि पंठि पोशस सीनि छंटिथ् मुशिक न्यबर दराव

४८६. हीय थ्रि ज़न् बरि कॅरथस् लोलि नारॅ ज़ाञ्जिस

४८७. अथि नाज़ुक ज़न छिस् पोशि दस्तॅ

४८८. छीशिथ् चशमि चानि प्रमछुलारॅनी ।
यॅमम्बिर ज़ल छि मन्दि छॅनिये ।।

४८९. वलॅ व्यसि गछिलॅ वन तॅ तस् कॅमि बॅरिनभ कॅन् तॅ
करसन्ना व्ययि डेशन तॅ पोशे मॅति जानानो

४९०. छून गोम जॅरी ओशु हॅरि हॅरी फॅलि फॅलि गोम मोखतिहार मदनो
नज़रे चानि सूत्थि बेमार बॅली कीति म्यानि विज़ि लोगुथ बेआर मदनो

४९१. लालि यियी सालि छस् प्यालि बरनावन पोशन मालि करिनावन छस्
शालिमार पोशन छस् वधरावन् पोशन मालि करिनावान छस्

४९२. वलो हाबागबानो नव-बहारुक शान पॅदाकर
फोलन गुल गथ कॅरन बुलबुल तिथुइ सामान पॅदाकर
अगर वुज़ि नावहन बस्ती गुलन ह्यिंज़ त्राव ज़ेरोबन
बुन्युल कर वाव कर गॅगराय कर तूफान पॅदाकर

४९३. दवान गछ टिकान गछ बहादुरो दवान गछि
मस चवान चवान गछ बॅथि ग्युवान ग्युवान गछि
छि क्या छु दुशानन सुन्दगम रोज़ तॅयार दम-ब-दम
छि गण्ड कमर ति तुल अलम तेज़ खान-खान गछि
वतन चोन बिहिश्त ज़न खारि अॅम्युकछु दुशमनन्
छि लार छिमन बदखहन छून चवान चवान गछि ।।

४९४. नेरू नेरू कॉशिर्यो हाव पनुनि बहादुरी
ब्रोंठि यिन्य कोह ति बाल शेर बनिथ् खार छाल
कोहति कल्क पाइमाल युथनि ति कांह हराज करी
दुशमन सुन्द फोज आव नेरि पनुन् वतन बचाव
कॉशिर्यन ह्युन्द नावधाव त्राव फेरिन ति कॉगरी
हाव पनिन बहादुरी ।

४९५. आल वन म्यान्यन छुना तॉसीर चानि मिलि छाल्क क्या छु तदबीर
वन तो ति किथि पठि स्पनक म्योन छ्र नो ज़रि मदनो दुरियर चीन
शोकि चानि पानस के ह्योम पॉराव मदनो अरिनो ह्योतथम नाव
ज़ायि गेयि मॉज़िनम ति माहरेनि तोन छु नो ज़रि मदनो दुरिय चोन

४९६. शाद स्पनुन दिल मु बुज़ुम सालि यियी अज़ बालियार
मारि मोत खमारि होत सुई म्योन दिलबर दिल करार

४९७. औशक्न केरिस बदनामो करयुख गेयि शहरि ति गामो
पितर्युनि छेमि दीवान पामो पोशे मति जानानो

४९८. गहनि केनि पोश छी तेनि जेरि जेरिये गेरिमुत केमि ज़रगेरिये
पॉरी लोगज़ो अथ् कारीगेरिये ग्रीस कुरि नाज़नीन सुन्देरिये

४९९. दोख्स ज़ु जान छेरित शामस अेड़ी छोट छुम दीवान मालिक
कमरु रोज़ी छु सुति म्यानिस गमस तनदार आसुन गोछ
गरीबन क्युत छु यक अनार व सद बीमार मुशकिलि सान
दपान ज़रदार अख बेमार ह्य अनार आसुन गोछ

५००. अमीरन आशि ते शादी गरीबन खानि बुरबादी

यिथिस मगरूर आसन वॉलि सुन्द नावुइ मिटावुन छुम
मशीदन मन्दरन गिरजन धर्मशालन ति अस्तानन्
यिमन यीत्यन गरन अछ्नुक अछुइ दरवाज़ि धावुनछुम

५०१. म्यॅनि न्यथि नॅनि बॅचि रूज़िइ वातिनावान प्रथ अकिस्
अधदारान छी गरीबन रातदाह ज़रदार म्यॅनि

५०२. इन्सान चवान त्रेशि कॅनि इंसान सुन्दुइ छुन
इन्सॉनियत कुनि रूज़नो इंसान कलन मंज़

५०३. करी कुस बुलबुला आज़ाद पिंजरस मंज़ चि नालान छुक
चि पॅनि ने दस्ति पॅनि न्यन मुश्किलन आसान पेदाकर
हकूमत माल दॉलत नाज़ि न्यॅमत् ब्यॅयि शहनशॉही
यि सोरुइ कुइ च्यु निशपानस चि अमिची ज़ान पेदाकर

५०४. न्यॅयि त्रॉविव मॅयि थॉविव् पॅनि वॅनो
पोज़ मुहब्बत बॉग रॉविव पॅनि वॅनी
साफ थॉविसीनि मॉशिरॉविव फसाद
कीनि त्रॉविव दॉदि बॉविव् पॅनि वॅनि

५०५. 'महजूरि' सिंज़ि कॅथि बोज़ लब्क मॅरिफतुक पॅयि
पोज़ ग्यान या इरफान छुनि गोरन ति मलन मंज़

५०६. बाग यॅलि बरबाद ग्व अदि द्रॅयि तिमि ज़ॉलिम शिकॉरि ।
सॉनि गॅरि वॉलिख ति खॉलिख पैनिनी मुलकिक थॅदि मकान
ओल म्योन नहना वनोवुक सामानि छुक कोरमुत तॅय्यार
अज़ छि पॅछि रोख्सत करान यॅति खानि दारन खैरिसान

५०७. रूज़िय बागस्त अन्दर क्या-२ स्यु वुछ पनिन्यव अछ्व
रेश अशरत कम मगर गम ज्यादि सख्ती जान-जान

५०८. बुलबुलस हांसिल बनि ताजदारी वारिल राज़नस ताबे सारी
शाह पाज़ आस्यस डीढ़वाना थावतो कन हामति लालो लोलुक वने-
अफसाना

५०९ गटि चजि गाश आव गाह त्रोव लालन, संगरमालन प्युव प्रागाश
संगरमालन कोहन ति बालन संगरमालन प्युव प्रागाश
गुलालि लोलिच् मशाल ज़ालन तमि नूरि रोशन गछि आकाश
मसवल शबन मुक मसफिरि प्यालन संगर माल्न प्युव प्रागाश

५१०. बुलबुल छुबरान चाव चिथिर द्राव बहार आव
तोशान छु सोन्तुक वाव कमिस्तानि छुआव-आव

५११. दिल तम्बलावान जलवि हावान आसा बहारो
मेशि राविमचि कथियाद पावान आस बहारो
बीमार गमिछ गरदि स्थे मिच आसि यम्बरज़ल
मस खासि तस किति बागरावान आसा बहारो

५१२. छी रंग पानस सूत्थि वाराह पानि छुक बेरंग
रंगि रंगि चमन रंगि नावान आसा बहारो

५१३. बुलबुल वनान छु पोशन गुलशन वतन छु सोनुई
सोनुई वतन छु गुलशन गुलशन वतन छु सोनुई
अन्दि अन्दि सफेद संगर दीवारि संग-मर-मर
नज़ बाग सबज़ गोहर गुलशन वतन छु सोनुई ।

५१४. आव लोलि श्यछि ह्यथ् वाव सुबहुक चाव चमनन् मंज़्
कोरु पोशि लंजव बोन नेमित इकरारि मुहब्बत

५१५. सोम्बुल यम्बिरज़ल ते गुलाब दोनि पोश शबान बाख्शाब
क्या खुशनुमा तुमारि गुल कु बुलबुलो दीदारि मुल

५१६. पोशन छु कमि सुन्द इन्तिज़ार क्यसक्युत चमन सपनान तैयार
थरि प्यठ् छि गमित् तारिगुल कु बुलबुलो दीदारि मुल

५१७. प्रारान चमन छि गुल ह्यथ् कर यियो सु लालि नसचथ्
यम्बिरज़लन अथन क्यथ् बरि बरि छि जाम यियो कर

५१८. सरि डलुक चि वुछ बहार बागि निशात व शालिमार
चशमि ज़ि थाविमे तैयार तारि तरान-२ वलो

५१९. दोनि पोशव जोश दयुथ् वजु.लोव बाग

५२०. वारि हिन्द पोश, यम्बिरज़ल, गुलति सोम्बुल नसवल ।
वारि पथ् वारि लगान छी छु पारि पारी
नाज़ ह्यथ आव यिनुल , सोज़ि जिगर ह्यथ बुलबुल ।
चायि दर बाग कारिथ् वारि तैय्यारी सारी ।

५२१. लोलि बोम्बुर जोस मंज़ लोलि चनन् वायान लोलिचार
तसकुन यम्बिर ज़लि वुछ लोलि चशिमव लोलन कोरु सु बेमार

५२२. वाव सोन्तुक पोशिवधरन बागिक्युन छेरान छपारि
कामि दीव यियी शामि पति सुलि बागरावान इशतिहार

५२३. बहारन सूज़नस श्यछ ह्यथ् दबान मंज़िल छटिथ आयस् ।
बहारस छुमनि यति रोज़ुन छु हारस नावनस वनि क्या ।।

५२४. योद सु दिलबर मरिश त्रोविध् स्योद च्यु कुन करिहे नज़र
आवनस ज़न हीय च्यु फलिहे यावनस छोह मारिहा

५२५. यम्बरज़लि बरि बरि थावि पेमाने बोम्बरो सानि महमाने रोज़
दीदन मंज़ छसे जाय शेराने बुलबुल सुन्दि अफसाने बोज़

५२६. च्यु आवनिच हीय फोजिस् वनन् मंज़् वुछान छज़िस च्यु नेबि चांनी ।
वुछुत निहालक बहार च्योनुय वनि वावि हरदिनि हरे हा लालो ।

५२७. मसवल च्यु आयस टुकरि जिगरिक पेशकशी ह्यथ्

५२८. कंमि लोलु द्रायस शोलि मारान कारतिकिच जून ,
यावुन हाकोस्थम ज़ायि खम छाम कारि गुलाबो ।
मस खंसि ह्यु हंयि नायि चानि आयि यम्बरज़ल ,
बीमार चंरमो छ वुछान तलि टारि गुलाबो ।।

५२९. अहरिबलिच नाज़नीन माह पोकरी, पाँचादरो
हूर सोरगिच या परिस्तानिच् परी, पाँचादरो

-- -- --

ह्यरि बोनि पानस जोहर कंमि जरो, पाँचादरो

५३०. मुश्ताक बुलबुल अथ गुलस गुल पानि छारान बुलबुलस
तस गारि गुल यस छारि गुल कर बुलबुलो दीदारि गुल

५३१. संलि मति सुइं डुंगि पारावस मलि वुछने निमन जछबल
लोलि मस-खांसि बरि-बरि धावस सर त्रावस पादन तल
यूस मरगि ह्युन्द सबज़ार हावस वथरावस फर्श मखमल
निलि नागिच गिलि (जानवर विशेष) बोलि नावस सरत्रावस -
पादनतल ।

५३२. स्यन्दि बंठि बंठि ने वायिनावस नाव चानस मानसबल
वांदि आदनिक तंति याद मावस सरत्रावस पादन तल

५३३. छल करिथ् चोल छूरि हाँछल वनि दिमस परिये महल
बंडि उलछा तंलि बल छा बागि शालिमार छा
छुस वदान ज़ालिथ् बदन द्रुम मदन छोल सरहदन
प्रगंछा , या द्रंग छा या प्रंगछा कुटिहार छा

५३४. संरि डलुक च्यु वुछ बहार बागि निशात व शालिमार
चंशमि ज़ि धाव हे तेय्यार तारि तरान-२ वलो

५३५. असुवुनि ज़मीन छिपाँम्पर गंछ वुछचि कांगिवुडर
तंति दिल बली चली शर गुलशन वतन छु सोनुर्
वेरि नागि डूरि अछबल बोलान छि तोति तं जल
सुर्ं सोज़ बाज़ जल-जल गुलशन वतन छु सोनुर्
गंछ अहरिबल चलियी शर वुछ कोदरेतुक चि मंज़र
आबस बनान छु गोहर गुलशन वतन छु सोनुर्

५३६. गुलमरगि आंलिपधरे नीलि नागि गोगजि पथिरे
मखमल बहार वंधिरे गुलशन वतन छु सोनुर्

५३७. अंन्दि अंन्दि स्फेद संगर देबार संगि मरमर
मंज़ बाग सब्ज़ गवहर गुलशन वतन छु सोनुर्

५३८. तारसर मारसर बंनि अमृतसर तोसि मंदान बंनि सुरत बन्दर
कांगि वंटन लांगि कारखाना - धावतोकन हा मति लालो लोलुक वंनें -
अफसाना ।

५३९. जलवा होवुथ प्यठ् अहरि बॅलिये शहरि ति गामि ख़ शोर-फ़ुसान ।
प्रेमरस बॉगिरावान वॅछ्क खॅनि बॉलिये-नूरि वुज़मॅलिये पूरिहाव पान ।।

५४०. यीना नॉगिराय दरशुन दीना हीमाल हाल बावस

५४१. हरदुक तूफ़ान पोशिथॅरि क़ालन सोन्त यियी दोहअकि तुलिफुरखाश
सुर्ख़ फोलि तन युस दिह् ज़ंजालन - संगर मालन प्युव प्रागाश

५४२. वारि-वारि वॅरिल गछ्न नाबुद बुलबुल ति करतूर वामन सरूद
बाग कॅरि सोरगस सूत्थि मान-मान पॅदि कॅरि पॅनिने बाशि ज़ान

५४३. आयि दोह नज़दीक जल्दियी नॅरि गॅटि पॅछ फॅरिनूर

५४४. छि होचिनुछि पोशि थॅरि बागस कमो आब्स गॅमिछ नागस
ब्सुन छुम ओबुर लॉगिथ् आसमान बारान त्रावुन छुन

५४५. गुल हरदि हरान सोन्ति व्यथि दुबारि करान दोर
मॅरि मॅरि छि फेरान ज़िन्दगी वसवास मरनुक त्राव
योद सोरि आवुरा वाविहरदिनि पोश त्रावन रव
हरदस ति छुनि यॅति पाई दॉरी वारि छ्युतस धाव

५४६. तीरि बारान बुलबुलन् प्यठ् कोरू तिमव संगीन दिलव
छुन सूत्थि ख़ बाग रंगीन तीति मॉरिख बेज़बान

५४७. वॅलो हा बागवानो नुव बहारुक शान पॅदाकर
फोलन गुल गथ् करन बुलबुल तिथुइ सामान पॅदा कर

५४८. नेहि गॅटि गोस बेदार कॅनन् कॅतिजी जालव गोम
ज़ोनुस् प्यु वॅन्दि सोरियाव परतव त्रोव सोन्त कालन

५४९. रंगि रंगि फोलिमुत वारिगुल कर बुलबुलो दीदारि मुल
रंगि वारि लोग दरबारि गुल कर बुलबुलो दीदारि मुल

५५०. रोज़ि बागस वारि सबज़ी रोश्ह ह्स स्योद सादगी
वावि हरदिनी ज़रद् गोश्ह गोश्ह प्यन पथर सरभायिदार

५५१. अथ दरदि सूरिश्ह परदि तुलिथ ग्व सु रसूलमीर
महज़ूर लागिथ आव ब्यूयि दुबारि अती रोज़

५५२. खटित ह्दुक मदनवारा बदन म्यु ज़ोलथम नारा
वदन ह्स वानि अमारा यि दिल कर शहले बोम्बरो ।

५५३. अती रोज़ कथा बोज़ मदन वारि अती रोज़ ।
दिलदारि म्यु छुम खारि वुछन वारि अती रोज़ ।।

५५४. क्या सना यिनासु दिलबर रोयि ज़ेबा हाविना
सीनि ज़ोलुन् लोलि नारन कोनि म्योनुश् त्राविना

५५५. मारि मत्यो जावारि कारथस् वारि म्योनुश् करिज़िहे
रोशि यिज़िहे उलफतुक मस लोलि खास्यन बरिज़िहे

५५६. बेखबर पठि आम खबेर लोलु तब छुम क्या वनस्
अख दमाह ठहराव करिहा दुखविज़रा सन्दारिहा

५५७. खस्ति दिल म्योन बस्ति गोमुत लोलि किस ज़ालस अन्दर
क्या तमाशा वुछनियि ज़हे , अख दमाह रावि रज़िहे

५५८. ओश गोम जारी याम छ्युतस प्योम सु जानान
ब्यूठ नावि अन्दर पानि म्यु सैलाब अनिध् ग्व

५५६. जंगि मंज़ि मनुक छि हुआ लोलस अन्दर हरदम मंत्न
जंगि खोति ज्यादि द्रोग प्युव आरक्तन यारानि चोन

५६०. हीय थंरि ज़न बंरि कोंरिथस लोलि नारे ज़ांजयस
सोसि नोवथस अन्दनज़ारस वाति नोविथ क्षोल हमो

५६१. कंति लोग करार यारस कंर यियी सु यथ् शहारस
रोज़स्त्र छु इन्तिज़ारस सोज़स सलाम यियी कर

५६२. यिखना हालि दिल बावे दोदुमुत सीनि हा हावे
तंलि यिरवा यंलि छु रावे पोशे मंति जानानो

५६३. कावि निखना ग्रावि तस बेआरस क्या सेंद खबरा ह्युज़िहे बंमारस
यीक्ष कींचा दुरमन दोंरिये सोज़ि दिल म्योन बोज़िवन हंरिये

५६४. क्षोलहमा रोशे रोशे पोशे मंति जानानो
अंति अंति रोज़तो यारो कोत क्षोलुक जंदुगारो
गोंडि कंरि म्योनुई चारो पोशे मंति जानानो

५६५. बागि निशात के गुलो नाज़ करान-२ वंलो
खंदि करान-२ वलो मोरिलहरान - २ वंलो

५६६. तंमि कामि दोवन ज़ांजिनम लोलितन दोह अकियाद पावस

५६७. पंनिन्यन छु आरमान गंरि तें बेगानि क्षावान बाग
मन खोश छि थावान तन छि नावान स्यन्दि ज़लन मंज़

५६८. चायि पोशु लोत पांछि बागस न्यायि फुल क्षोकस्क चांपारि
अंसि चुवान स्दि पानि वांनि तिम पोश चंटि चंटि गयि तिवान

--

परिशिष्ट नं० ३.

सहायक ग्रन्थ - सूची

(क) काश्मीरी कवि `महजूर` के काव्य का अध्ययन करने के लिए सहायक ग्रंथ :

१. `अब्दुल अहद `नादिम` ; ( काव्य संकलन ) मीर गुलाम रसूल `नाज़िकी` जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, सन् १९५९ ।

२. `आज़ाद` ; प्रकाशक जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, सन् १९५९ ।

३. `इनसाइड कश्मीर`; - प्रेमनाथ बज़ाज़ ।

४. `ए हिस्ट्री आफ कश्मीर` ; पृथ्वीनाथ कौल `बामज़ई` ।

५. `ए हिस्ट्री आफ कश्मीरी पण्डित्ज़; जियालाल कयलम् ।

६. `ए मॉनिवल आफ कश्मीरी लॅग्वेज` - जी० ए० ग्रियर्सन, सन् १९११ ।

७. `कलाम-ए-महजूर` भाग १ से ११ ।

८. `केटॉलाग आफ पोरशन मेनसक्रिप्ट्स` - येथे ; भाग १ ।

९. `केटॉलाग आफ पोरशन मेनसक्रिप्ट्स` (इन दि ब्रिटिश म्युज़ियम) चार्ल्स रियो ; भाग २ ।

१०. `कश्मीर : इट्स कलचरल हेरिटेज` ; कोमदो , सन् १९५२ ।

११. `कश्मीर : ट्रोह दि एजिज़` ; ग्वाशिलाल कौल ।

१२. `कश्मीर थिकानोपिक्स` ; एस० एन० कौल (नार्मल प्रेस प्रकाशन) १९५४ ।

१३. `कश्मीर देश व संस्कृति` ; शिवदानसिंह चौहान ।

१४. `कश्मीर - अदब और सकाफत`;- सलीम खाँ गेमी (प्रकाशन गृह - पाकिस्तान, जून १९६३) ।

१५. `कश्मीरी लिट्रेचर`;- पो० एन० `पुष्प` ।

१६. `कश्मीरी ज़बान और शायिरी (उर्दू) भाग १ - अब्दुल अहद `आज़ाद`

१७. 'कश्मीरी ज़बान और शायिरी (उर्दू) भाग २ - अब्दुल अहद 'आज़ाद'।
१८. 'कश्मीरी ज़बान और शायिरी (उर्दू) भाग ३ - अब्दुल अहद 'आज़ाद'।
१९. 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' - प्रोफेसर 'पुष्प' (बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद् प्रकाशन)।
२०. 'कश्मीरी लिरिक्स' - जे० एल० कौल।
२१. 'कश्मीरी शैविज़्म' - जगदीशचन्द्र चटर्जी (जम्मू कश्मीर अनुसन्धान विभाग, १९१४)।
२२. 'कौशियर शायिरी' महीउद्दीन 'हाजिनी'।
२३. 'कौज़-टु-कश्मीर' लाला रूख पबलिकेशन्ज़, श्रीनगर १९५३।
२४. 'क्याबा-न-पाक' पाकिस्तान कराची प्रकाशन, अगस्त १९५६।
२५. 'गाये जा कश्मीर' कौमी कलचरल महाज़ कश्मीर प्रकाशन, अप्रैल सन् १९४८।
२६. 'डाटर्स आफ वितस्ता' (कश्मीरी नारियों का इतिहास) प्रेमनाथ बज़ाज़, पम्पोश प्रकाशन, नई दिल्ली, १९५९।
२७. 'तवारीख अक्वाम कश्मीर' - 'फाक' - ज़फर बरादर्स लाहौर प्रकाशन, १९३४।
२८. 'दि वौली आफ कश्मीर' - वाल्टर आर० लारिन्स, केसर प्रकाशन, श्रीनगर १९६७।
२९. 'दि कश्मीरी रामायणा' - दिवाकर प्रकाश भट्ट (अंग्रेज़ी सम्पादन एवं अनुवाद) सरजार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, सन् १९३०)।
३०. 'धीरेहो गंगा' - देवेन्द्र सत्यार्थी।
३१. 'प्याम-ए-महजूर' - भाग १ - ६।
३२. 'परमानन्द' - जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी प्रकाशन, श्रीनगर, सन् १९६०।
३३. 'प्रगतिवाद' - शिवदानसिंह चौहान।
३४. 'बेला फूले आधी रात' - देवेन्द्र सत्यार्थी।
३५. 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' - डा० सत्येन्द्र।

३६. `महजूर` जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी प्रकाशन, श्रीनगर, सन् १९६०।
३७. `मकबूल क्रालवारी` एच० यू० `हामिदी` (जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, १९५९(सन्) ।
३८. `महमूद गामी` - गुलाम नबी `ख्याल` (जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, १९६४ (सन्) ।
३९. `रसूल मीर` - जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी श्रीनगर, सन् १९६० ।
४०. `लल-वाख` - जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, श्रीनगर, सन् १९६१ ।
४१. `लिंगविस्टिक सर्वे आफ इण्डिया` - सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, खण्ड ८ , भाग २ ।
४२. `वतन हुं नाद लायान` (राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह) (जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, सन् १९६३) ।
४३. `वतन की पुकार` जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी ।
४४. `सलाम-ए-महजूर` नं० १ ।
४५. `साहित्यअनुशीलन` - शिवदानसिंह चौहान ।
४६. `सिट्रगल फार फ्रीडम इन कश्मीर` - प्रेमनाथ बज़ाज ।
४७. `सुमरन` - मास्टर जिन्दा कौल (लालारुख प्रकाशन, १९५५) ।
४८. `हब्बाखातून` - जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी, श्रीनगर सन् १९५९ ।
४९. `हमारा साहित्य` - सम्पादक नरेन्द्र खजूरिया (ललित कला अकादमी जम्मू कश्मीर, जम्मू, सन् १९६४)।
५०. `हिन्दी गद्य-प्रवेशिका` - सम्पादक श्री पी० एन० `पुष्प` ।
५१. `हिन्दी भाषा का इतिहास` - धीरेन्द्र वर्मा ।

(ख) कविवर `नवीन` के काव्य का अध्ययन करने के लिए सहायक ग्रन्थ :

१. `अपलक` - बालकृष्ण शर्मा `नवीन` ।
२. `आधुनिक काव्यधारा` - डा० केसरीनारायण शुक्ल ।

३. `आधुनिक कवि` भाग-२ , सुमित्रानन्दन पन्त ।
४. `आधुनिक कवि` - महादेवी वर्मा ।
५. `आधुनिक साहित्य` - नन्ददुलारे वाजपेयी ।
६. `आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार-विधान` - डा० जगदीश नारायण त्रिपाठी ।
७. `आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य - सिद्धान्त` - डा० सुरेशचन्द्र गुप्त।
८. `आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा` - डा० त्रिभुवन सिंह ।
९. `आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ` - डा० नगेन्द्र ।
१०. `आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य` - रामेश्वरलाल खण्डेलवाल `तरुण` ।
११. `आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य` - डा० रांगेयराघव ।
१२. `आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प` - कैलाश वाजपेयी ।
१३. `आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास` - डा० श्रीकृष्णलाल ।
१४. `आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका` - डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ।
१५. `ऊर्म्मिला` - बालकृष्ण शर्मा `नवीन` ।
१६. `उर्मिला` - मै० राजेश्वरय्या ।
१७. `एन इन्ट्रोडक्शन टु दि हिस्टरी आफ लिट्रेचर` - डब्ल्यू० एच० हडसन ।
१८. `कल्लोल` -(सम्पादक) श्री माधव एवं प्रो० दुर्गादत्त शास्त्री ।
१९. `कांग्रेस का इतिहास` - डा० वी० पट्टाभिसीतारामय्या ।
२०. `काव्य के रूप` - गुलाबराय ।
२१. `काव्य-प्रदीप` - पण्डित राम बहोरी शुक्ल ।
२२. `काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध` - जयशंकर प्रसाद ।
२३. `कामायनी` - जयशंकर प्रसाद ।
२४. `कवि-समीक्षा` - प्रो० श्यामलाकान्त वर्मा ।
२५. `कुंकुम` - बालकृष्ण शर्मा `नवीन` ।

२६. `क्वासि` - बालकृष्ण शर्मा `नवीन` ।
२७. `खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास` - ब्रजरत्नदास ।
२८. `गणेशशंकर विद्यार्थी` - देवव्रत शास्त्री ।
२९. `गीति काव्य` - रामखेलावन पाण्डेय ।
३०. `चिन्तामणि` - भाग १ , रामचन्द्र शुक्ल ।
३१. `छायावाद` - नामवरसिंह ।
३२. `छायावाद युग` - डा० शम्भुनाथ सिंह ।
३३. `छायावाद के गौरव चिह्न` - प्रो० फोम ।
३४. `जजमेंट इन लिट्रेचर` - डब्ल्यु बेसिल वर्सफोल्ड ।
३५. `डा० नगेन्द्र के श्रेष्ठ निबन्ध` (सम्पादक) श्री भारतभूषण अग्रवाल ।
३६. `दि कलचरल हेरिटेज़ आफ इण्डिया` - एस० एन० गुप्ता ।
३७. `नयी-कविता` - विश्वम्भर मानव ।
३८. `नये पुराने झरोखे` - हरिवंशराय `बच्चन` ।
३९. ``नवीन` और उनका काव्य` - जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव ।
४०. ``नवीन`- दर्शन` - प्रो० केशवदेव उपाध्याय ।
४१. ``नवीन` और उनकी कविता` (अप्रकाशित)- कृष्णा चतुर्वेदी
(उ-२३७, दिल्ली विश्वविद्यालय को एम०ए० परीक्षा के लिए
प्रस्तुत प्रबन्ध, सन् १९६० ।)
४२. `निबन्ध-प्रभाकर` - डा० भोलानाथ तिवारी ।
४३. `नेचर आफ इंग्लिश पोयिट्री` - एल० एच० हेरिस ।
४४. `पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धान्त` - लीलाधर गुप्त ।
४५. `प्रगतिवाद की रूपरेखा` - मन्मथनाथ गुप्त ।
४६. `प्रकृति और काव्य` - रघुवंश ।
४७. `प्रबन्ध-प्रबोध` - फूलचन्द जैन `सारंग` ।
४८. `प्रबन्ध-सागर` - यज्ञदत्त शर्मा ।

४९. `प्राणार्पण` - बालकृष्ण शर्मा `नवीन` ।
५०. `प्रिय-प्रवास` - अयोध्यासिंह उपाध्याय `हरिऔध` ।
५१. `बालकृष्ण शर्मा `नवीन` : व्यक्ति एवं काव्य` - डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ।
५२. `भारत का राजनीतिक इतिहास` (१७५७-१९६०) - राजकुमार ।
५३. `भारत की संस्कृति का विकास` - मथुरालाल शर्मा ।
५४. `भारत-भारती` - मैथिलीशरण गुप्त ।
५५. `भारतीय काव्य-शास्त्र की परम्परा` - (सम्पादक) डा० नगेन्द्र ।
५६. `भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा` - डा० ज्ञानवती दरबार ।
५७. `मधुशाला` - हरिवंशराय `बच्चन` ।
५८. `महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग` - डा० उदयभानुसिंह ।
५९. `माखनलाल चतुर्वेदी` - रामाधार शर्मा ।
६०. `माखनलाल चतुर्वेदी - (व्यक्ति और काव्य) - डा० रामसिंगावन तिवारी।
६१. `मेकिंग आफ लिट्रेचर` - सुकाट जेन्ज़ ।
६२. `मैं इन से मिला` (किस्त-२) - डा० पद्मसिंह शर्मा `कमलेश` ।
६३. `युगचरण `दिनकर`` - डा० सावित्री सिन्हा ।
६४. `रश्मि` - महादेवी वर्मा ।
६५. `रश्मि-रेखा` - बालकृष्ण शर्मा `नवीन` ।
६६. `राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास` (तृतीय संस्करण) - मन्मथनाथ गुप्त।
६७. `रीतिकाव्य की भूमिका` - डा० नगेन्द्र ।
६८. `रीतिकाल और आधुनिक हिन्दी कविता` - डा० रमेशकुमार शर्मा ।
६९. `रूपाम्बरा` (संकलनकर्ता) - सच्चिदानन्द वात्स्यायन ।
७०. `रेखा चित्र` - श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ।
७१. `लोकगीतों की सामाजिक व्याख्या` - श्री कृष्णदास ।
७२. `वट-पीपल` - रामधारीसिंह `दिनकर` ।

७३. 'वांग्मय-विमर्श' - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ।
७४. 'विनोबा-स्तवन' - बालकृष्ण-शर्मा 'नवीन' ।
७५. 'विचार और विवेचन' - डा० नगेन्द्र ।
७६. 'व्यक्ति और वांग्मय' - प्रभाकर माचवे ।
७७. 'संस्कृति के चार अध्याय' - 'दिनकर' ।
७८. 'साकेत' - मैथिलीशरण गुप्त ।
७९. 'साहित्य-तरंग' - सद्गुरुशरण अवस्थी ।
८०. 'साहित्य-विवेचन' - सोमचन्द्र 'सुमन' एवं योगेन्द्र मल्लिक ।
८१. 'साहित्यालोचन' - श्यामसुन्दरदास ।
८२. 'साहित्य-चिन्तन' - नरेश चन्द्र चतुर्वेदी ।
८३. 'साहित्यकारों की आत्मकथा' - देवव्रत शास्त्री ।
८४. 'सिद्धान्त और अध्ययन' - गुलाबराय ।
८५. 'सिल्यकटिड़ एसेज़' - टी० एस० इलियट ।
८६. 'स्वाधीनता और राष्ट्रीय साहित्य' - डा० रामविलास शर्मा ।
८७. 'हम विषपायी जन्म के' - (ज्ञान पीठ प्रकाशन) बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ।
८८. 'हमारे प्रमुख साहित्यकार' - श्री रामनारायण मिश्र ।
८९. 'हिन्दी कविता में युगान्तर' - डा० सुधीन्द्र ।
९०. 'हिन्दी काव्य में प्रकृति-चित्रण' - डा० किरणकुमारी गुप्ता ।
९१. 'हिन्दी काव्य और उसका सौन्दर्य' - डा० ओमप्रकाश ।
९२. 'हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय साहित्य का विकास' - शान्तिकुमार ।
९३. 'हिन्दी काव्यधारा में प्रेम-प्रवाह' - परशुराम चतुर्वेदी ।
९४. 'हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य' - डा० गोविन्दराम शर्मा ।
९५. 'हिन्दी गीति-काव्य' - ओम् प्रकाश अग्रवाल ।
९६. 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास' - चतुरसेन शास्त्री ।

९७. `हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास` - अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
९८. `हिन्दी वीर-काव्य` - डॉ० टीकमसिंह तोमर ।
९९. `हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर` - नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ।
१००. `हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा` - रामअवध द्विवेदी ।
१०१. `हिन्दी साहित्य` (बीसवीं शताब्दी) नन्ददुलारे वाजपेयी ।
१०२. `हिन्दी साहित्य का इतिहास` (सं० २०१८ वि०) - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ।
१०३. `हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास` - रामबहोरी शुक्ल एवं भगीरथ मिश्र ।
१०४. `हिन्दी साहित्य` - लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ।
१०५. `हिन्दी साहित्य में विविधवाद` - डा० प्रेमनारायण शुक्ल ।
१०६. `हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ` - प्रो० शिवकुमार शर्मा ।
१०७. `हिन्दी साहित्य संग्रह` भाग १ - अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय प्रकाशन ।
१०८. `हिन्दी साहित्य` - डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ।
१०९. `हिन्दी साहित्य और उसकी प्रगति` - विजयेन्द्र स्नातक एवं सोमचन्द्र `सुमन` ।
११०. `हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष` - शिवदानसिंह चौहान ।
१११. `हिन्दी साहित्य में जनवादी परम्परा` - प्रकाशचन्द्र गुप्त ।
११२. `हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास` - डा० रामकुमार वर्मा ।

--

परिशिष्ट नं० ४.

सहायक पत्र - पत्रिकाएँ

(क) काश्मीरी कवि 'महजूर' के काव्य का अध्ययन करने के लिए सहायक पत्र-पत्रिकाएँ :-

१. 'काश्मीर' (सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार) अक्टूबर १९५३ , दिसम्बर १९५३ , फरवरी १९५४, अक्टूबर १९५६, जून १९५७, नवम्बर १९५७ , फरवरी १९५८, मार्च १९५८, मई १९५८, जुलाई १९५८, अक्टूबर १९५८, दिसम्बर १९५८, फरवरी १९५९ ।

२. 'काश्मीर-टु-डे' (लालाऋख प्रकाशन, श्रीनगर) मार्च १९५७, सितम्बर १९५७, मई-जून १९६० ।

३. 'गुलरेज़' - मई १९६१ ।

४. 'तामीर' - (अप्रैल-मई) १९५७ , ('महजूर'-विशेषांक) (अप्रैल-मई-जून) १९६२ , (अप्रैल-मई) १९५८ 'आज़ाद'-विशेषांक ।

५. 'मार्ग-दर्शक' - (जम्मू-कश्मीर विशेषांक) अगस्त १९६२ ।

६. 'योजना' (सूचना विभाग, जम्मू कश्मीर सरकार) जनवरी १९६० (संस्कृति विशेषांक) , फरवरी १९६०, अगस्त-सितम्बर १९६०, अक्टूबर-नवम्बर १९६०, दिसम्बर १९६०, जनवरी १९६१, मार्च १९६२, अगस्त-सितम्बर १९६२(कश्मीर-विशेषांक) अगस्त १९६६ ।

७. 'वितस्ता' (अगस्त १९६६), हिन्दी विभाग, ज०क० विश्वविद्यालय, श्रीनगर (कश्मीर) ।

८. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' (नई दिल्ली) १५ दिसम्बर १९६३, ३१ मई १९६४ ।

९. 'माध्यम' मई १९६७ (हिन्दी सम्मेलन, प्रयाग) ।

(ख) कविवर बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के काव्य का अध्ययन करने के लिए सहायक पत्र-पत्रिकाएँ :-

१. 'आजकल' - जून १९५६, दिसम्बर १९५७, अक्टूबर १९५८, जून १९६०, मार्च १९६१ , सितम्बर १९६२ , अप्रैल १९६४ ।

२. 'आदर्श' - सितम्बर १९६१, दिसम्बर १९६३ ।

३. 'कल्पना' - जून १९६०, सितम्बर १९६० ।

४. 'कादम्बिनी' , नवम्बर १९६० ।

५. 'कृति' - मई १९६०, जून १९६०, अगस्त १९६० ।

६. 'चिड़वा कालेज पत्रिका' - फरवरी १९६३ ।

७. 'जन्मभूमि' - २९ अप्रैल १९६६ ('नवीन' - स्मृति-अंक) ६ मई १९६६, २० मई १९६६, १० अक्टूबर १९६६ ।

८. 'धर्मयुग' - ८ सितम्बर १९६३, ५ जुलाई १९६४, २५ अप्रैल १९६५ ।

९. 'नवनीत' (हिन्दी डाइजेस्ट) अक्टूबर १९६० ।

१०. 'नवभारत टाइम्स' दिल्ली, २४ मार्च १९६८ ।

११. 'नर्मदा' - अक्टूबर १९६१ (गणेशशंकर विद्यार्थी विशेषांक) अगस्त १९६३ ('नवीन'-अंक) ।

१२. 'माध्यम' - जनवरी १९६५ , दिसम्बर १९६५ ।

१३. 'योजना' (सूचना विभाग, जम्मू कश्मीर सरकार) मई १९६२ ।

१४. 'युवक' - जून १९६० ।

१५. 'राष्ट्रवाणी' - जून १९६० ।

१६. 'वीणा' - अगस्त-सितम्बर १९६० ('नवीन' - स्मृतिअंक) ।

१७. 'विशाल भारत' - जनवरी-जून १९६०, अप्रैल १९६२, फरवरी-मार्च १९६२।
१८. 'वितस्ता' (अगस्त १९६६) प्रकाशक, हिन्दी परिषद्, हिन्दी विभाग जम्मू० विश्वविद्यालय, श्रीनगर (कश्मीर)।
१९. 'सम्मेलन-पत्रिका' (त्रैमासिक) आश्विन-मार्गशीर्ष संवत् १९८२।
२०. 'समालोचक' - मई १९५९, अगस्त १९५९।
२१. 'सारस्वती' - मई १९६०, जुलाई १९६०, दिसम्बर १९६०।
२२. 'सारस्वती-संवाद' अगस्त-सितम्बर १९५९ (महाकाव्य विशेषांक) फरवरी १९६१।
२३. 'साहित्य-सन्देश' - जून १९५२, जून १९६०, जुलाई-अगस्त १९६० (शोध-विशेषांक), जनवरी-फरवरी १९६१ (प्रगति-विशेषांक), जून १९६२, अप्रैल १९६३, अक्टूबर १९६३, अप्रैल १९६५।
२४. 'साहित्यालोक' - अप्रैल-मई १९६३।
२५. 'साप्ताहिक-हिन्दुस्तान' - १६ दिसम्बर १९५६, १५ मई १९६०, ३ जुलाई १९६०('नवीन'-विशेषांक), १० जुलाई १९६०, ३० अप्रैल १९६१, ११ मार्च १९६२, १८ मार्च १९६२, २० मई १९६२, १८ जुलाई १९६२, २० अक्टूबर १९६३, १७ नवम्बर १९६३, २९ दिसम्बर १९६३, २ फरवरी १९६४, २९ मार्च १९६४, १२ दिसम्बर १९६५, १६ जनवरी १९६६।
२६. 'सैनिक' (साप्ताहिक परिशिष्टांक) १५ फरवरी सन १९६५।
२७. 'हिन्दुस्तान' (दैनिक) २०-१२-१९५९।
२८. 'ज्ञान पीठ-पत्रिका' - अप्रैल १९६४।

--